

# बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्

श्री० पं० ताराचन्द्र शास्त्रि विरचितया

एव तत्पुत्र

श्री० पं० कामाख्या प्रसाद शर्मणा सम्पादितया

'भावप्रकाशिका—'

हिन्दी टीकया सहितम्

\*\*

संस्करण- सन् १९८९, सवत् २०४६

मूल्य १५० रुपये



सर्वाधिकार  
प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

मुद्रक और प्रकाशक-  
मे० मेमराज श्रीहृषीकेशदास अग्रवाल श्रीविठ्ठलेश्वर  
दे० मे० शर्मा, मैनेजर, द्वारा श्रीविठ्ठलेश्वर प्रेम,

श्रीः  
भूमिका

विफलान्यन्यशास्त्राणि विवादस्तेषु केवलेषु ।  
प्रत्यक्ष ज्योतिष शास्त्र चन्द्राकौ यत्र साक्षिणी ॥

सूर्य, चन्द्र, तारा आदि ज्योतिषिण्डो के विज्ञान का प्रदर्शक होने से इस शास्त्र का नाम 'ज्योतिष'शास्त्र है। सूर्य एव भौमादि ग्रह तथा चन्द्र आदि उपग्रहों की गति, ग्रहण आदि का ज्ञान एव दिन, मास आदि समय का ज्ञान इसी के द्वारा होने से इसकी सार्थकता है (यद्यपि चन्द्रमा को फलित एव गणित ज्योतिष में 'ग्रह' ही कहा गया है 'उपग्रह' नहीं, तथापि आधुनिक विज्ञान द्वारा यह सिद्ध है कि-चन्द्रमा पृथ्वी का 'उपग्रह' है) तथा अमावास्या पूर्णिमा आदि यज्ञ के समय का निर्णायक होने से वैदिक धर्म का अंग है। मनुष्यों के शुभाशुभ का सूचक होने से तो इस शास्त्र की विशेष सार्थकता है तथा मुहूर्तों का निर्णायक होने से भी यह ज्योतिष शास्त्र 'सिद्धान्त, संहिता होरा' इन तीन विभागों में विभक्त है। गणित भाग के प्रदर्शक 'सूर्य सिद्धान्त, मिद्धान्तशिरोमणि' आदि ग्रन्थ सिद्धान्त विषय के ज्ञापक हैं, तथा ग्रह आदि के लक्षण, स्वरूप आदि प्रकीर्ण विषयों के संग्रह ग्रन्थ 'बाराही संहिता' आदि संहिता ग्रन्थ हैं, एव मनुष्यों के शुभाशुभ का परिचायक 'होरा' भाग है, यह 'बृहत्पाराशर होराशास्त्र' ग्रन्थ इस विषय का मूर्द्धन्य है यह विदितप्राय है। 'अहोरात्र' शब्द जो कि 'दिनरात्रि' का अर्थ वाचक है, इसी के आदि और अन्त के लोप से 'होरा' शब्द की उत्पत्ति हुई है, यथा- "होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके बाह्यन्ति पूर्वापर-वर्ण लोपात्" इस शास्त्र के प्रवर्तक सूर्य आदि १८ ऋषि सुने जाते हैं। यथा-

सूर्य, पितामहो ध्यासो वसिष्ठोऽत्रिं पराशरः ।  
कश्यपो नारदो रगो मरीचिर्मनुरगिराः ॥  
लोमश, पौलिशश्चैव स्यवनो यवनो मनुः ।  
शौनकोऽष्टावशश्चैते ज्योतिषशास्त्र प्रवर्तकाः ॥

इस शास्त्र की प्रवर्तन परम्परा भी प्राचीन काल से इस प्रकार सुनी जाती है—

ज्योतिषशास्त्र समग्र प्रथमपुरुषत स्वर्णगर्भाद्विदित्वा  
पूर्वं ब्रह्मा, ततोऽयं निखिलमुनिगण प्रार्थनाद्यन्वकार ।  
तच्चैव सुप्रसन्न मृदुपदनिकरैर्गुह्यमध्यात्मरूपम्  
शश्वद्विभ्र प्रकाशं प्रह्वरितविदां निर्मल ज्ञानचक्षुः ॥

और वर्तमान कलियुगमें तो सर्वमान्य फलानुवाचि होने में पाराशरसंहिता ही सर्वत प्रचलित है.

कृते तु मानवं शास्त्रं प्रेताया दादरापणिः ।  
द्वापरे शक्यलिखितः कत्तो पाराशरौ स्मृता ॥

इस कथन से स्पष्ट बोधित होता है कि वर्तमान समय में यह 'पाराशर होराशास्त्र' ही फलादेश के लिए सर्वोपकारी शास्त्र है इसका प्रकाशन प्रायः सौ वर्ष से श्रीसेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी मालिक-श्रीवेकटेश्वर प्रेस द्वारा होता आया है।

इधर कुछ वर्ष से इस ग्रन्थ का १ संस्करण भापा टीका युक्त काशी से भी प्रकाशित होता है उसके विषय में यहाँ का शब्द लिखना अप्रासंगिक नहीं होगा। यद्यपि मेरा अभिप्राय किसी दुर्भावनामूलक नहीं है मेरा उन टीकाकार महानुभाव से कोई परिचय भी नहीं है तथापि उनकी प्रसार प्रतिभा की प्रशंसा बौन नहीं करेगा, किन्तु बम्बई की प्रकाशित पुस्तक में एक स्थान पर पूर्व प्रकाशित पृ० १३ में प्राणपदसाधन शीर्षक में कुछ भ्रामक पाठ जो कि प्रेस के भूतो की कृपा से असली पाठ छूट कर इधर उधर का छप गया था आपने उसको लेकर तिल का ताड़ बना डाला वहाँ का उद्धरण देकर यहाँ तब लिखने में भी सकोच नहीं किया कि-इष्टशोधन नामकी कोई वस्तु ही नहीं है आदि २। इस पर भी सन्तोष न हुआ तो 'भूमिका' का भी कुछ भाग डगी बात में भर दिया अस्तु वे महामहिमशाली हैं उनको सब शोभा देता है परन्तु इस बार वे इष्टशोधन देखें जो कि, अत्यन्त गवेषणा से प्राप्त करके समुक्त किया गया है और इसी इष्टशोधन का विशेषविस्तार ज्योतिस्तत्व आदि बृहद् ग्रन्थों में देखें कि यह वस्तु होराशास्त्र में है मा नहीं। परन्तु वास्तव में जब मनुष्य दूसरे के दूषण देखने में तल्लीन होता है तब 'आत्मनो वित्त्वमात्राणि पश्यन्प्रपि न पश्यति' यहाँ हमें तत्सम नहीं होना है तथापि पाठकों को मशय न हो इस लिए काशी की प्रकाशित पुस्तक के कुछ भ्रामक स्थलों का दिग्दर्शन कराता है।

१-अन्तर्दशा (विशोत्तरी) प्रकरण में मूर्यान्तर में बुध को त्रिकोण या ६।८ आदि म्यानों में तथा शुक्र को भी ६।८ त्रिकोण आदि म्यान में होना और उनका फल कहा गया है इसी प्रकार बुधान्तर में सूर्य तथा शुक्र एवं शुक्रान्तर में बुध तथा सूर्य का उपर्युक्त म्यानों में होना और उनका शुभाशुभफल भी उन्हीं म्यानों में है और भूमिका में उन्हीं म्यानों में कहा है कि-बहुत वर्षों तक इसको गूढ़ करने में व्यतीत किये एवं अन्य भी महान् २ विद्वानों द्वारा सशोधित कराया गया है तो भी यह अत्यन्त मोटी भून पैम रह गई? क्योंकि-सूर्यमण्डल के अति समीप बुध का परिभ्रमण मार्ग है और बुध के पश्चात् शुक्र का, अतः सूर्य में बुध २८ अंश और शुक्र ४८ अंश में अधिक दूर हो ही नहीं सकते तब सूर्य, बुध और शुक्र ये परस्पर उपर्युक्त म्यानों में हो ही नहीं सकते और वह भी समझ लेना चाहिए कि-बुध और शुक्र भी परस्पर ७५ अंश में अधिक दूर नहीं हो सकते।

२-पृ० १८२ में जो विषय है, वह बम्बई की प्रकाशित पुस्तक के गद्यभाग का सांगण मात्र है।

३-पाराशर मत में चन्द्रमा को मारकता मान्य नहीं है, तो भी पृ० २०२ में मिथुन लग्न में मारक कहा है।

४-पृ० ६५३ में प्रयोगोत्तर में प्रतिमास १ लग्न ही कयनानुसार सभ्य है।

ये केवल दिग्दर्शन मात्र है, मनुष्यसे भूल होना असंभव नहीं कहा जा सकता, फिर किसी एक बात को लेकर इतना बतगड नहीं बनाना चाहिए, प्रत्युत उसका अन्वेषण करके समाधान करना चाहिए। प्रथम भूमिका में तो आप लिखते हैं कि -श्री ५० अमुकजी के पास से दक्षिणा देकर नकल प्राप्त की और अन्त में कुछ और ही लिखते हैं कि-इधर उधर से खण्डश प्राप्त करके और उमका जोड़ तोड़ करके निर्माण किया, सैर जो भी हो प्रयत्न मृत्यु है और मराहनीय है, श्रीमानजी कुछ स्पष्टोक्ति के लिए क्षमा करेंगे।

जन्मेष्ट काल के शोधन के श्लोक हमबो, ज्योति शास्त्र प्रेमी श्रीकुमारसाहब तुपारनाथ मिश्र, सुपुत्र श्रीराजा कन्हैयालालजी बहादुर के प्राचीन ग्रन्थ सप्रहालय में सुरक्षित 'वृ०पा०हो०शा०' वी अति प्राचीन प्रति में मिले, केवल मूल श्लोक थे हमन भाषा टीका तथा उदाहरण सहित इस ग्रन्थ में दयावत् सयुक्त किये हैं। इसके लिए हम कुमार साहब के आभारी हैं। बम्बई में प्रकाशित पुस्तक से अधिक विस्तृत कोई प्रति देखने में नहीं आई। काशी में प्रकाशित पुस्तक में भी आद्यन्त श्लोक स० ४००१ है जब कि-मूलशान्ति आदि अनेक प्रकीर्णक जो कि होराशास्त्र का विषय न होकर संहिता का विषय है, उनका सग्रह किया गया है। क्योंकि-

'ग्रहाणाम्बैव भावाना बलाबल-विवेकत ।

दशादिना फल यत्र होराशास्त्र तदुच्यते ॥'

यद्यपि उन्होंने व्यर्थ का सग्रह करके ९७ अध्याय कर दी है तथापि बम्बई की प्रकाशित पुस्तक में ५७८१ श्लोक है, जो कि-काशी की प्रकाशित से १७८१ श्लोक अधिक है, प्रति पाठ विषय का सर्वोच्च और विस्तार तथा उत्तरखण्ड में अनावश्यक सग्रह प्राप्त दोनों में ही है, विन्तु काशी की में अविषय का सग्रह और बम्बई की पुस्तक में शास्त्रीय विषय का सग्रह है इस होराशास्त्र के ही कारण भारत विचार को तथा गुलिकादि विचार को लेकर जैमिनीय सूत्र की रचना हुई अस्तु यह स्वतन्त्र विवेचना का विषय है। केवल कारण कारण विचार को तथा धनयोगों को लेकर लघु और मध्य पराशरी का निर्माण हुआ। हमबो बम्बई की प्रकाशित पुस्तक में अधिक भाग अब तक नहीं प्राप्त हुआ है, यदि किसी के पास हो तो देने को कृपा करेंगे।

एक विषय विवेचनीय और है, वह है जन्मवालीन मूर्ध के राश्यादि के समान राश्यादि के समय वर्ष गणना की परिपाटी जिसे सवना को लेकर 'ताजिक नीरकण्ठी आदि ग्रन्थ बने, 'इसका विचार होराशास्त्र में नहीं है' यह कहने में भी चर सक्ता है, यद्यपि 'वर्षवर्षा' 'मासवर्षा' में दिग्दर्शन मात्र है तथापि प्रधान तथा जन्मवात को लेकर ही विचार किया गया है। इन विषय का तात्कालिक मूलम विचार साम्प्रतिक पाश्चात्य ज्योतिर्विदों ने दृष्टि योगों (Aspects) के माध्यम से बहुत अच्छा किया है उक्त विषय के जिज्ञामुओं को अभिन्नापूर्ति के निमित्त अंग्रेजी में ही मक्षिन् (उदाहरण महिला) प्रकार आगे दे रहे हैं -

### English Method of Casting Horoscope (with delineations to Hindu Method)

Horoscope-is the position of the planets and signs of the zodiac in relation to a particular place at a particular time. It foretells, after being finally cast, the regular and irregular movements of planets and their good and bad effects on human beings and earth.

In order to prepare the said map, the following should be born in mind -

Planets-		
English Names	Hindi Names	Symbols
Sun	सूर्य	☉
Moon	चन्द्रमा	☾
Mars	मंगल	♂
Mercury	बुध	♃
Jupiter	बृहस्पति	♃
Venus	शुक्र	♀
Saturn	शनि	♄
Dragon's Head	राहु	♁
Dragon's Tail	केतु	♁
Uranus or Hershell	इन्द्र	♅ or ♁
Neptune	शरणा	♆
Pluto	शक्र	♇

The last three planets are newly invented, not given in Hora Shastra

## Signs

English Names	Hindi Names	Symbols
Aries	मेघ	♈
Taurus	वृष	♉
Gemini	मिथुन	♊
Cancer	कर्क	♋
Leo	सिंह	♌
Virgo	कन्या	♍
Libra	तुला	♎
Scorpio	वृश्चिक	♏
Sagittarius	धनु	♐
Capricorn	मकर	♑
Aquarius	कुम्भ	♒
Pisces	मीन	♓

## Aspects

English Names	Hindi Names	Degrees	Symbols
Semi- Sextile	द्विर्दशम योग	30	♁
Semi Square or Semi-Quadrate	अशुभयोग	45	♂
Sextile	त्रिदशम योग	60	♁
Square or Quadrate	चन्द्र योग	90	♁
Trine	चतुर्दशम योग	120	♁
Sesqui-Quadrate	साधुशुभयोग	135	♁
Injunct or Quincunx	पञ्चदशम योग	150	♁ or ♁
Opposition	प्रतियोग या सप्तमदशम योग	180	♁
Conjunction	युति	0	♁
Parallel	जातिमात्र	---	P
Mutual Disposition	पारस्परिकता मात्र	---	M.D.

Aspects are nothing but only the inter-relation of positions and sights of the planets in 12 houses. This has more elaborately been dealt in 'Drishiti Adhyaya' of Parasar Shastra in Hindi. These aspects are only few of them.

Method of casting—Western astronomers adopt the moving zodiac (Sayan system), while the Hindu astronomers go by the fixed zodiac (Nirayan system) for the calculation of the positions of the planets. But the Hindu positions of the planets may be obtained from the Western positions by subtracting the Ayanamsa from the western positions. Similarly, the western positions may be found out by adding Ayanamsa to the Hindu positions of the planets. Here Nirayan method will be taken into consideration. The ephemeris by Mr. N. C. Lahiri, M. A., which is being published in Calcutta, is preferable for the calculation. This ephemeris (Indian Ephemeris) is calculated for the central meridian of India, 5 h 30 m or 82½° E Long.

It will be seen in the ephemeris of any particular year that the sidereal time is given just opposite to the dates. The S. T. of the birth date is to be taken for the calculation and minus or plus in it the number of hours back or advance will bring the exact S. T. at birth. It should not be forgotten that the S. T. is given at 12 h Noon.

After that, from the Ascendant Chart (given in the last pages) take the S. T. at birth from the S. T. Column and see the opposite end column of Ascendant and take the longitude of the ascending sign and prepare the map of Heavens posting the ascending sign in the map. From this chart too, the longitude of the tenth house is ascertained from the column provided for from the same S. T. After preparing Ascendant and the tenth house, the other remaining houses might easily be found out by Hindu method given in Hindi Translation. Thus with the longitude of the ascendant or lagna, the longitude of the different houses are ascertained easily.

In Western method, the map is prepared with the longitude of the houses and no other map (Bhava Chakra) is required. Westerners ascertain from the Tables of Houses with the S. T. at birth, the longitude of the sign in the different six houses (Ascendant, 2nd, 3rd,



10th, 11th and 12th) The other six are very easy to find out by adding 180 degrees to every realised longitude of the signs, or in other words, the opposite signs of those with the same degrees are the other six houses' longitudes

### Longitude of the planets

In the ephemeris, the longitude of the planets are calculated at 5h 30m a m I S T This has to be corrected for the time before or after 5h 30m a m I S T at which the birth took place For the calculation, the daily motion of every planet is to be taken which is given in the middle pages of the ephemeris The motion of the planets should be divided by 24 to get the motion per hour, and this after being multiplied by the number of hours before or after 5h 30m a m I S T at birth The result being added or subtracted to or from the positions at 5h 30m I S T becomes the planets' positions at the time of birth By the use of Diurnal Logarithms, (given in the last pages of the ephemeris) the longitude of the planets might be calculated easily This use reduces the work of elaborate calculations The method of calculations is- Add the logarithm of the planets' motion to the logarithm of the time (before or after 5h 30m a m I S T ) and get the logarithm of the motion for that time, and this being applied to the longitude of the planet at 5h 30m a m I S T will give the true place for the hour and minute required

### Dasha Period or Timing Events

In the middle pages of the ephemeris, the Balance of Vimsottari Dasha Chart is given From this Chart, the balance of Dasha for the particular planet concerned can easily be found out at a glance with the longitude of the moon Take the degrees and minutes at birth and see opposite to that in the column of the sign concerned (the sign of the moon) and the balance of Dasha in years, months and days is ascertained Add this balance to the birth date, month and year, the result is the ending point of the balance of Dasha and the starting point of the next coming Dasha period The other periods and sub-periods can be found out by adding the different days, months and years provided for the different planets This will be clear from the example which is given at the end The Hindu method can be understood from the Hindi translation

Westerners follow the "Directional" system for the timing events. They adopt the rule of "One day for one year". That is to say, they measure one day for one year and the predictions for a day is the predictions for the year. In this way the following formula is to be taken into considerations -

One month is equal to two hours  
 One week is equal to thirty minutes  
 One day is equal to four minutes  
 Six hours is equal to one minute.

From this, weekly and even hourly predictions might be made. But this is possible only if "Progressed Horoscope" is made for each year. Thus the system is progressed direction. Next to progressed direction the influence of transits is to be considered. Direction indicate the general nature of the period and predict the nature and source of good and bad effects in life. Transits define the exact time at which these predictions will come into play. This method is found to be purely imaginary and fictitious and has not been giving such astonishing results as the Indian method is giving. If the exact calculations on correct birth time are made, no doubt, the most astonishing and wonderful results can be had from this Hindu method. Thus it can be said that the Hindu method positively score over the Western method.

#### Example

Baby born on the 13th August, 1957 Tuesday at 9h 10m a.m. I S T in Calcutta, the Long 88 deg 24 ms E and Lat 22 deg 34 ms N

Now, the I S T is 9h 10m a.m.

Calcutta Time is 9h 33m

Cal Mean Time is 9h 25m

12h Noon - 9h 25m a.m. equal to 2h 32m difference

Now, again S T for 13th August, 1957 is 9h 26m 35s

- minus the number of hours back

from Noon up to birth

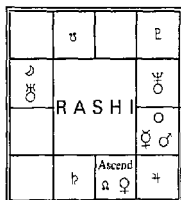
2h 32m 0s

S T at birth 6h 54m 35s

With this S T at birth the longitude of the Ascendant and the tenth house from the ascendant chart in the ephemeris comes as under -

	S	Deg	Ms	Sec
Ascendant	6	16	17	19
Tenth House	3	14	8	25

Taking this Ascendant the map is to be erected as follows

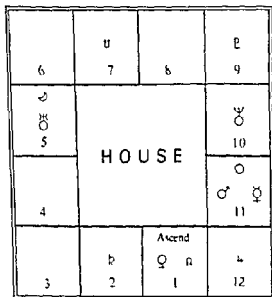


Longitude of Planates

Planets	Signs	Degrees	Minutes	Seconds
Sun	4	23	28	18
Moon	10	26	30	33
Mars	4	27	45	38
Mercury	4	21	34	45
Jupiter	5	13	27	36
Venus	6	1	58	34
Saturn	7	15	5	12
Dragon s Head	6	20	5	15
Dragon s Tail	0	20	5	15
Uranus	10	24	11	20
Neptune	3	24	45	15
Pluto	2	18	36	11

Longitude of Houses

Houses	Signs	Degrees	Minutes	Seconds
1st	6	16	17	19
2nd	7	15	34	21
3rd	8	14	51	23
4th	9	14	8	25
5th	10	14	51	23
6th	11	15	34	21
7th	0	16	17	19
8th	1	15	34	21
9th	2	14	51	23
10th	3	14	8	25
11th	4	14	51	23
12th	5	15	34	21





Some of the aspects calculated approximately-		
U Δ ♀:☉:♂	♀ P, ☉:♂	♂ P ☉:♀
U Ω †	♀ × Ω	♂ † ♀
U ♀ Ω	♀ Δ ☉:♂	♂ † Ω
P × ♀:☉:♂	☉ P ♂:♀	♂ Δ ☉:♂
P Δ Ω	☉ × Ω	† × P
♀ † ♀:☉:♂	☉ Δ †	† Δ ☉:♂
♀ † †		♀ † †
♀ † ♀		♀ † †

The predictions according to the Hindu method (Dasha system) have been given in the Hindi Translation According to the Western method the followings are the rules which should be born in mind before making predictions:-

- 1 Summary of Houses dealing with matters
- 2 Good and bad aspects

### 1. Summary of the Houses dealing with matters:-

First house life, health, character, personality, temperament

Second house wealth and property, death also in number one

Third house valour, neighbour and journey, mental condition

Fourth house pleasure, mother too, inheritance and family

Fifth house children, love matter, contemplation and pleasure

Sixth house enemy, servants, aunts, uncle, death, indication

Seventh house wife, partner, law, death also in number two

Eighth house death in number three, mysticism, partner's death

Ninth house fate and Voyages,  
 religion, science matter too  
 Tenth house honours, professions,  
 employment and morality  
 Eleventh house profits, wishes too,  
 friends and acquaintances  
 Twelfth house expenditure, death,  
 confinement, aunt, uncle too

## 2. Good and bad aspects:-

Good aspects -

- (i) Sextile 60 deg  $\times$
- (ii) Semi-sextile 30 deg  $\sphericalangle$
- (iii) Trine 120 deg  $\Delta$

Bad aspects -

- (i) Opposition 180 deg  $\overset{\circ}{\cap}$
- (ii) Sesqui-Quadrate 135 deg  $\square$
- (iii) Square 90 deg  $\square$
- (iv) Semi-square 45 deg  $\sphericalangle$
- (v) Quincunx 150 deg  $\nabla$

Parallel, conjunction and mutual disposition are neither good nor bad, as these are only positions and not aspects

Now, if the aspects are good good results concerning those houses and if bad, ill results are account for

For timing events, the transits aspects are given in the ephemeris on which the comparison to the progressed horoscope's aspects, the predictions might be given following the formula "one day for one year" which has been clarified before.

By- Pt Kamakhya Prasad Sharma, B Com ,  
 Jyotirbhusan

Son of Sri Pt Tarachand Prasad Shastri, Jyotishacharya

तथा यह भी सूचित कर देते हैं कि-इस ग्रन्थ में अनेक स्थान पर पुराने ही उदाहरण रख दिये गये हैं, वे इस लिए कि-वे मूल्य प्रायः अनुस्यूत और प्रत्यक्ष हैं, किन्तु जिनका व्यवहार नालू है वहां नवीन उदाहरण ही रखे गये हैं।

अन्त मे एक स्थल विवेचनीय और रह जाता है, वह है शनि की महादशा के शुकान्तर मे पद्यसङ्घ-“गुरुचारवशाद् भाग्यं सौख्यं च धनसम्पदः ॥ शनिचारान्मनुष्योऽसौ योगमाप्नोत्यसंशयम् ॥” अध्याय ३८ श्लो० २७/२८ इसका अर्थ काशी की प्रकाशित पुस्तक मे यह किया है-‘उस समय वृहस्पति अनुकूल हो तो भाग्योदय सम्पत्ति की वृद्धि, शनिगोचर से अनुकूल हो तो राजयोग ।’ पृष्ठ ४४५ इसके अर्थ करने मे ‘चार’ का अर्थ ‘अनुकूल’ किस आधार पर किया सो तो वे ही जाने, किन्तु यदि वे थोडा विचार करते तो और अच्छा होता। यह विषय असल मे ‘देवकेरलम्’ तथा नाडी ग्रन्थो का है। चन्द्रकलानाडी मे सूर्यादि ग्रहचार का फल कहते हुए उपर्युक्त श्लोक आया है, यह ग्रन्थ मद्रास सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा एक बार प्रकाशित भी हुआ था, उसका विषय अति गहन एव प्रत्यक्ष फल प्रदर्शक तथा मननीय है, शुभाशुभ फलके घटित होने का समय जानने की सरल मुस्पष्ट रीति है। पाठको के ध्यानार्थ माररूप मे यहाँ लिखते है। जन्म काल के भावस्पष्ट तथा ग्रह स्पष्ट करके चरकारक स्थापित करे, अर्थात् सर्वाधिक अश वाला आत्मकारक, उससे न्यून अश वाला ‘अमात्यकारक’ है उससे कम अशवाला भ्रातृकारक आदि कारक अध्यायोक्त रीति से लिखे और मन्दी=भुलिक लघ भी लिखे नीचे उनकी राशि त्याग कर अशादि लिखे, अब यह चक्र तैयार है, इसमे गुरु का चार=भ्रमण तथा शनि का चार=भ्रमण देखना चाहिए। अर्थात् गुरु और शनि जिस जिस कारक के अशादि पर से जिस जिस मास और तिथ्यादि को संचार करेगा, उस समय उपर्युक्त श्लोकोक्त फल होगा, इस विषय मे विशेष देखना हो तो नाडी ग्रन्थो मे देखना चाहिए, हमने केवल दिग्दर्शन मात्र कर दिया है। भारतव मे उपर्युक्त श्लोक खण्ड किली ने नोटरूप से अपनी पुस्तक मे लिखा होगा और कालान्तर मे सम्मिलित हो गया, नहीं तो ९५ ९ = ८१ अन्तरो मे केवल मात्र शनिदशा के शुकान्तर मे ही ये ग्रह फल देने आये तथा अन्य दशा और अन्तरो मे कही भी दर्शन देने नहीं गये। अन्त मे एक बात और कह कर इस भूमिका को समाप्त करते है। इस ग्रन्थ मे ‘लोभशसहिता’ का एक अध्याय ‘क्षेपक रूप से पूर्वखण्ड मे उसका वास्तविक रहस्य स्पष्ट लिख कर रख दिया है, उसके रहस्य प्रकाशन मे हमारे सेही मित्र ज्योतिर्विदु श्री प० चिरञ्जीवलालजी ने सहायता की है उसके लिये वे धन्यवाद के पात्र है।

शेष मे विद्वद्बरो से यही कहना है कि-इसके अनुवाद मे जो भूल या त्रुटि रही हो उसे सुधार ले और हमे सूचित करे ताकि अगले संस्करण मे सुधार किया जा सके।

इति

ज्योतिर्विदा कुपाभिलाषी

ताराचन्द्र शास्त्री,

ज्योतिषाचार्य

सलकिया (हावडा)

दीपावनी

स० २०१८ वि०



**बृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखंडसारांशस्थ-  
विषयानुक्रमणिका**

प्रतिपाठविषयाः	पृ०स०	प्रतिपाठविषया	पृ०स०
		प्रागपदस्योदाहरणम्	१७
<b>प्रथमोऽध्यायः १</b>		इष्टशोधनम्	१८
स्फुटतमगताचरणम्	१	इष्टशोधनोदाहरणम्	२०
मैत्रेयकृतपराशरस्तुतिपूर्वकज्योति शास्त्र सारप्रदत्त		<b>तृतीयोऽध्यायः ३</b>	
पराशरकृतमगताचरणम्		मेघादिराशिस्वरूपम्	२२
ग्रहाग्रधिवासी		निषेकशोधनम्	२४
ग्रहाग्रधिकारी		अयनाशा	२५
शास्त्रावतीर्ण	२	पलभाजानम्	२६
<b>द्वितीयोऽध्यायः २</b>		सकोटयानुसारेण वा स्वदेशानुसारेण वा लग्नसाधनम्	
नग्नमुण्डलीस्वरूपम्		नतोन्नसाधनम्	
मूर्धादिग्रहाणा स्वरूपम्		चतुर्थदशमसाधनम्	२७
पचागस्थितग्रहेषु धाननम्	८	भाबराधिसाधनम्	"
ग्रहाणा तात्कालिकीचरणम्		शोभ्यकालादल्पटेलशसाधनम्	"
भयातभभोगसाधनम्	९	सारणीप्रवेशश्लोक	२८
चन्द्रस्पर्शिकरणम्	"	लग्नपत्रम्	"
उष्मनीचग्रहा	११	भावपत्रम्	२९
ग्रहाणा मूलनिकोपसाधनम्		लग्नपत्रचक्रम्	३०
मूर्धादिग्रहाणा मित्रादिभेदकपत्रम्	१२	भावपत्रचक्रम्	३२
नैनीचक्राणि	१३	मेघादिनामसज्ञा	३४
अस्योदाहरणम्	"	मेघादिस्वाभिन	३४
शुभाशुभवलचक्रम्	१४	पुनर्मेषादिभ्वाग्नि	
ग्रहाणा बलाणि	१५	गौडशर्वनामसज्ञा	३५
घृणात्प्रकाशग्रहस्पर्शिकरणम्	१५	होरासाधनम्	"
अस्योदाहरणम्	"	अस्योदाहरणम्	३५
धूमादिशेषचक्रम्	"	होराचक्रम्	३५
धूमादिस्पर्शचक्रम्	"	द्रेकाणसाधनम्	३६
किञ्चित्कालविचार	"	अस्योदाहरणम्	"
गुणिकसाधनम्	१६	द्रेकाणचक्रम्	
गुणिकोदाहरणम्		चतुर्थांश	३६
गुणिकाधुवाचचक्रम्	१७	अस्योदाहरणम्	"
प्राणपदसाधनम्	"	चतुर्थांशचक्रम्	३७





प्रतिपाद्यविषया	पृ०स०	प्रतिपाद्यविषया	पृ०स०
<b>पञ्चविंशोऽध्यायः २५</b>		केतुफलम्	२४२
पुना राजयोगादिकलम्	२०९	सर्वभाव	२४४
राजचिह्नयोग	२१२	<b>एकत्रिंशोऽध्यायः ३१</b>	
धीयोगा	२१३	दशाना सप्ता	२४४
मुक्तयोगा		विशोत्तरी दशा	२४५
सेनाधीशयोगा		गोडशोत्तरी दशा	२४७
प्रधानयोगा		अस्या उदाहरणम्	
राजयोगरसायनम्	२१५	अस्याश्रकम्	२४८
<b>षड्विंशोऽध्यायः २६</b>		द्वादशोत्तरी दशा	२४९
धनयोगविचार	२१६	अस्या उदाहरणम्	
<b>सप्तविंशोऽध्यायः २७</b>		अस्याश्रकम्	"
दरिद्रयोग	२१७	अष्टोत्तरी दशा	"
वधनयोगविचार	२१८	अस्या उदाहरणम्	
<b>अष्टविंशोऽध्यायः २८</b>		अस्याश्रकम्	२५१
पूर्वजन्मवर्षनाश्रयाय	२१९	षोडशोत्तरीदशा	
<b>ऊनत्रिंशोऽध्यायः २९</b>		अस्या उदाहरणम्	२५२
मुक्तदु स्त्रादिकथनाध्याय	२२१	अस्याश्रकम्	"
<b>त्रिंशोऽध्यायः ३०</b>		शताब्दिकदशा	
जाश्रदाद्यवस्थाकथनम्	२२८	अस्या उदाहरणम्	"
दोष्ताद्यवस्था		अस्याश्रकम्	
बालाद्यवस्था	२२९	चतुरशीत्यब्दिकादशा	२५३
प्रयासाद्यवस्था	२३०	अस्या उदाहरणम्	
वज्रिताद्यवस्था		अस्याश्रकम्	
शयनाद्यवस्था	२३२	द्विसप्ततिका दशा	२५४
अस्योदाहरणम्		अस्या उदाहरणम्	
स्वराश्रमूर्त्यादिक्षेपाकचक्रे	२३३	अस्याश्रकम्	
दृष्टिभेद	२३३	षट्द्विहायनी दशा	२५४
सूर्यफलम्	२३४	अस्या उदाहरणम्	२५५
चन्द्रफलम्		अस्याश्रकम्	"
भौमफलम्	२३६	षड्विंशतिकादशा	
बुधफलम्	२३७	अस्याश्रकम्	२५६
शुक्रफलम्	२३८	नवमाशनवदशा	"
गुरुफलम्	२३९	अस्या उदाहरणम्	२५७
शनिफलम्	२४०	राश्याशनवदशा	२५८
राहुफलम्	२४१	पालदशा	"
		अस्या उदाहरणम्	"

प्रतिपाद्यविषयः	पृ०स०	प्रतिपाद्यविषयः	पृ०स०
राहुदशा	३००	कुजमध्येगुर्वन्तरम्	३२९
गुरुदशा	३०१	कुजमध्येशन्यतरम्	३३०
शनिदशा	"	कुजमध्येबुधातरम्	३३०
बुधदशा	३०२	कुजमध्येकेत्वतरम्	३३१
केतुदशा	३०३	कुजमध्येगुकातरम्	३३२
शुक्रदशा	३०४	कुजमध्येमूर्धान्तरम्	३३३
द्वादशभाषाधीशदशाफलम्	३०५	कुजमध्येचद्रातरम्	"
<b>त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३</b>		<b>षट्त्रिंशोऽध्यायः ३६</b>	
अतर्दशाप्रकरणम्	३१२	राहुमध्येराहुतरम्	३३४
अस्त्योदाहरणम्	"	राहुमध्येगुर्वन्तरम्	३३५
विशोत्तर्पितर्दशाचक्राणि	३१३	राहुमध्येशन्यतरम्	"
अतर्दशाशुभाशुभविचार	३१४	राहुमध्येबुधातरम्	३३६
द्वादशभाषाधीशशुभाशुभम्	"	राहुमध्येकेत्वतरम्	३३७
रवेरन्तरफलम्	३१५	राहुमध्येगुकातरम्	३३८
रविमध्ये चद्रातरम्	"	राहुमध्येमूर्धान्तरम्	"
रविमध्येभौमातरम्	३१७	राहुमध्येचद्रातरम्	३३९
रविमध्येराहुतरम्	३१७	राहुमध्येकुजातरम्	३४०
रविमध्येगुर्वन्तरम्	३१८	<b>सप्तत्रिंशोऽध्यायः ३७</b>	
रविमध्येशन्यतरम्	३१९	गुरुमध्येगुर्वन्तरम्	३४०
रविमध्येबुधातरम्	"	गुरुमध्येशन्यतरम्	३४१
रविमध्येकेत्वतरम्	३२०	गुरुमध्येबुधातरम्	३४२
रविमध्येगुकातरम्	३२१	गुरुमध्येकेत्वतरम्	३४३
<b>चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ३४</b>		गुरुमध्येगुजातरम्	"
चन्द्रान्तरफलम्	३२२	गुरुमध्येमूर्धान्तरम्	३४४
चद्रमध्ये भौमातरम्	"	गुरुमध्येचद्रातरम्	३४५
चद्रमध्येराहुतरम्	३२३	गुरुमध्येभौमान्तरम्	"
चद्रमध्येगुर्वन्तरम्	३२४	गुरुमध्येराहुतरम्	३४६
चद्रमध्येशन्यतरम्	"	<b>अष्टत्रिंशोऽध्यायः ३८</b>	
चद्रमध्येबुधातरम्	३२५	शनिमध्येशन्यतरम्	३४७
चद्रमध्येकेत्वतरम्	३२६	शनिमध्येबुधातरम्	३४८
चद्रमध्येगुकातरम्	३२६	शनिमध्येकेत्वतरम्	"
चद्रमध्येमूर्धान्तरम्	३२७	शनिमध्येगुजातरम्	३४९
<b>पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ३५</b>		शनिमध्येगुजातरम्	३५०
कुजमध्येबुधान्तरम्	३२८	शनिमध्येचद्रान्तरम्	"
कुजमध्येराहुतरम्	"	शनिमध्येभौमातरम्	३५१
		शनिमध्येराहुतरम्	३५२

प्रतिपाद्यविषया	पृ०स०	प्रतिपाद्यविषया.	पृ०स०
शक्तिमध्येगुर्वन्तरम्	३५२	विशोक्तसुषुप्तशापत्राणि	३७३
<b>ऊनचत्वारिंशोऽध्यायः ३९</b>		विदग्धाफलम्	३९३
बुधमध्येबुधांतरम्	३५४	सूर्यफलम्	३९४
बुधमध्येवैतलतरम्		चंद्रफलम्	
बुधमध्येशुक्रांतरम्	३५५	भौमफलम्	३९५
बुधमध्येसूर्यान्तरम्		राहुफलम्	३९६
बुधमध्येचंद्रांतरम्	३५६	गुरुफलम्	३९७
बुधमध्येकुजांतरम्		शनिफलम्	
बुधमध्येराहूांतरम्	३५७	बुधफलम्	३९८
बुधमध्येगुर्वन्तरम्	३५८	वैतुफलम्	३९९
बुधमध्येशान्यतरम्	३५९	शुक्रफलम्	४००
<b>चत्वारिंशोऽध्यायः ४०</b>		<b>त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ४३</b>	
वैतुमध्येवैतलतरम्	३५९	सूक्ष्मदशानरणम्	४०१
वैतुमध्येशुक्रांतरम्	३६०	अस्याउदाहरणम्	
वैतुमध्येसूर्यान्तरम्	३६१	अस्याश्रमम्	
वैतुमध्येनद्रांतरम्		सूक्ष्मदशाफलम्	४०२
वैतुमध्येकुजांतरम्	३६२	सूर्यफलम्	
वैतुमध्येराहूांतरम्	३६३	चंद्रफलम्	४०३
वैतुमध्येगुर्वन्तरम्	३६३	भौमफलम्	४०४
वैतुमध्येशान्यतरम्	३६४	राहुफलम्	
वैतुमध्येबुधांतरम्	३६५	गुरुफलम्	४०५
<b>एकचत्वारिंशोऽध्यायः ४१</b>		शनिफलम्	४०६
शुक्रमध्येशुक्रांतरम्	३६६	बुधफलम्	४०७
शुक्रमध्येसूर्यान्तरम्		वैतुफलम्	
शुक्रमध्येसूर्यान्तरम्		शुक्रफलम्	४०८
शुक्रमध्येभीमांतरम्	३६८	<b>चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ४४</b>	
शुक्रमध्येराहूांतरम्	३६८	प्राणदशानयनम्	४०९
शुक्रमध्येगुर्वन्तरम्	३६९	अस्या उदाहरणम्	
शुक्रमध्येशान्यतरम्	३७०	अस्याश्रमम्	
शुक्रमध्येबुधांतरम्	३७१	प्राणदशाफलम्	
शुक्रमध्येवैतलतरम्		सूर्यफलम्	४११
<b>द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ४२</b>		चंद्रफलम्	४१२
उपदशानयनम्	३७२	भौमफलम्	४१३
अस्याउदाहरणम्		राहुफलम्	
		गुरुफलम्	४१४

प्रतिपाद्यविषया.	पृ०स०	प्रतिपाद्यविषया	पृ०सं०
शनिफलम्	४१५	शतीना फलानि	४८१
बुधफलम्	४१६	सिंहायनोक्तादिगतिफलम्	"
केतुफलम्	४१७	पुनर्गतिफलम्	४८२
शुक्रफलम्	४१७	महादशाफलम्	४८३
<b>षष्ठचत्वारिंशोऽध्यायः ४५</b>		अथायुर्निर्णय	"
कालचक्रदशानयनम्	४१८	अन्तर्दशाफलम्	४८४
सव्यापसव्यत मेयादिवृद्धिकादशा		नवांशफलम्	४८८
शातव्या	४२०	<b>षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ४६</b>	
अस्या उदाहरणम्		चरदशाफलम्	४९०
कालचक्रसव्यमार्गदशाचक्रम्	४२३	<b>सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ४७</b>	
कालचक्राऽपसव्यमार्गदशाचक्रम्	४२४	दशावाहनफलम्	४९५
कालचक्रसव्याऽपसव्यातरचक्राणि	४२६	मुदर्शनचक्रफलम्	४९६
कालचक्रांशफलम्	४८०	अस्योदाहरणम्	४९७
उदयफलम्	"	राहुदृष्टिकथनम्	४९८
देहजीवफलम्	४८१	ग्रहानामुदयतर्पाणि	"
मतिभेदा			

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखंडस्यविषयानुक्रमणिका समाप्ता

**बृहत्पाराशरहोराशास्त्रजतरखंडसारांशस्य-  
विषयानुक्रमणिका**

प्रतिपाद्यविषय	पृ०स०	प्रतिपाद्यविषय	पृ०स०
<b>प्रथमोऽध्यायः १</b>		<b>तृतीयोऽध्यायः ३</b>	
मैत्रेयमुनिवृत्ता पराशरमहर्षिवेप्रश्ना	४९९	एकाधिपत्यशोधनम्	५२७
पराशरमुने वृत्तप्रश्नाभिनन्दपुर सरो	"	अस्योदाहरणम्	
त्तरदानम्		<b>चतुर्थोऽध्यायः ४</b>	
ज्योति शास्त्रस्य सम्यग्ज्ञानोपाय	५००	पिढोत्पत्ति	५२७
वर्णनम्		ध्रुवाना	५२७
ज्योति शास्त्रस्य वेदसाम्यम्		चक्रे	५२८
शुभाशुभफलवधनरीति		अस्योदाहरणम्	
मूर्धाष्टकवर्गविदुविचार		<b>पचमोऽध्यायः</b>	
चन्द्राष्टकवर्गविदुविचार	५०१	अष्टनवर्गफलानि	५२८
भौमाष्टकवर्गविदुविचार		सूर्यफलम्	५२९
बुधाष्टकवर्गविदुविचार	५०२	चंद्रफलम्	५३१
बृहस्पत्यष्टकवर्गविदुविचार	५०३	शुभफलम्	५३२
शुक्राष्टकवर्गविदुविचार	५०४	गुरुफलम्	५३२
शनिभ्राष्टकवर्गविदुविचार	५०५	शुभफलम्	५३३
अथ रेखाविचार	५०६	शनिफलम्	५३५
मूर्धाष्टकवर्गरेखाविचार	५०६	गुप्त भौमफलम्	५३७
चन्द्राष्टकवर्गरेखाविचार	५०७	शुभाशुभफलम्	
भौमाष्टकवर्गरेखाविचार	५०८	मूर्धाष्टकवर्गफलम्	५३८
बुधाष्टकवर्गरेखाविचार	५०९	भावफलम्	५३९
शुक्राष्टकवर्गरेखाविचार	५१०	राहुयुक्तगुरुफलम्	५४०
शनिभ्राष्टकवर्गरेखाविचार	५११	लघ्रेदुयुतगुरौ विद्यतभेदेऽप्राणफलम्	५४०
तत्रस्य विदुविचार	५१३	निघ्नार्थ	५४०
तत्रस्य रेखाविचार	५१४	अस्योदाहरणम्	
करणस्थाननिवर्चनम्	५१४	निघ्नचक्र	५४१
मूर्धादिषट्त्रिंशद्विंशतिराशिवर्गाणाकवि०	५१४	निघ्ननक्षत्रम्	५४१
करणस्थानषट्त्रिंशद्विंशतिराशिवर्गाणाकवि०		शानुदाषाष्टकवर्गफलम्	५४१
<b>द्वितीयोऽध्यायः २</b>		मासफलम्	५४३
त्रिकोणशोधनम्	५१५	रेखाशानिफलम्	५४४
अथ चक्राणि			
अस्योदाहरणम्	५२६		



प्रतिपाद्यविषयाः	पृ०स०	प्रतिपाद्यविषयाः	पृ०स०
<b>षष्ठोऽध्यायः ६</b>		तथा फलप्रदमानम्	५६४
पह्वलायल	५४५	एतच्छतत्राधिकारीलक्षणम्	"
अपभ्रवसाधनप्रकार	५४६	<b>सप्तमोऽध्यायः ७</b>	
सधिसाधनम्	"	अधोन्वरसम्मानयनविचार	५६४
दृष्टिसाधनम्	"	चेष्टारसम्मानयनसाधनीभूतचेष्टाकेन्द्र- विचार	"
शनिदेवेत्यभौमाना विशेषदृष्टि- सत्कार	"	चेष्टारसिमशुभाशुभरसिमविचार	५६५
उच्चवनसाधनम्	५४८	ग्रहाणामिष्टकष्टविचार	५६५
सूर्योदिरहाथा सप्तवर्गबलविचार	५४८	इष्टकष्टसप्तवर्गेषु स्वोच्चादिम्याजाननि०	"
शुभाशुभबलविचार	५५१	सर्ववर्गोष्टफलमध्ये शुभाशुभविभाग	५६६
केन्द्रादिवलविचार	५५१	शुभाशुभसहितदिक्कालदिनफल- विचार	५६६
ट्रेन्काणबलविचार	५५२	सविस्तरदिवकालदिनफलशुभा- शुभफलविचार	५६७
दिग्बलविचार	५५२	सप्तहारासिफलसाधनम्	"
मनोप्रवृत्तबलविचार	५५३	स्थानकरणविचार	"
पञ्चबलविचार	५५३	<b>अष्टमोऽध्यायः ८</b>	
दिनरात्रिभागबलविचार	५५४	अथ शुभाशुभसूचकलाताशरफल- विचार	५६८
वर्षभासदिनहोरेक्षयबलविचार	५५४	द्रावशुभावविचारिणीयविचार	५६९
अयनबलविचार	५५७	विशेषसत्कारातरेण रसम्मानयनविचार	५६९
चेष्टाबलक्रमप्राप्तभौमादिपह्लुद बलम्	५५७	भूतत्रिकोणादिवक्ष्यनागस्थितविशेष- रश्मिसत्कारातविचार	५७०
गतिबलम्	"	प्रकारातरेण रश्मिविचार	५७१
चेष्टाबलम्	"	मन्त्रातरेण गतिपशादिसिमह्लासवृद्धि- विचार	५७१
नैसर्गिकबलबलविचार	५५८	ग्रहसंज्ञारूपतो रश्मिफलनिर्णय	५७१
उत्कर्षबलबलाना दृष्टिबलेव सत्कार	५५९	योगविशेषेण रश्मिह्लासवृद्धिविचार	५७२
भावबलानयनप्रकार	५६०	उच्चपापरश्मिनिर्णय	"
ग्रहविशेषेण नु कालविशेषेण बलाधि- नयनयनविचार	५६१	राजयोगकारक-रश्मिविचार	"
भावाना दिग्बलम्	५६१	द्विग्रहादियोगे रश्मिफलनिर्णय	"
बलप्रकारगोपसंहार	५६१	रश्मिप्रयोगबलम्	"
ग्रहाभावोभयाना श्रोतग्रहलैख्ये	५६२	एकादिरश्मिसंख्यातारत्तम्येन रसमीना	"
शुभतत्त्वपूर्णबलवर्गियसत्त्वस्या	५६२	शुभ फलम्	"
भवात्तरस्यानादिपञ्चकालाना गृहपत्त- ख्यापरिगणनम्	५६३	चतुर्दशादिरश्मिसंख्यातारत्तम्येन रसमीना शुभ फलम्	५७३
बलानाशुभमपरिज्ञानाय नियतकालक्रम बहुयोगहेतुषु प्राप्तेषु विशेषयोगकर्त्त-			

प्रतिपाद्यविषयाः	पृ०सं०	प्रतिपाद्यविषयाः	पृ०सं०
आरभतो यादद्रश्मिसमापनं सति- विचार	५७४	स्नानविशेषेण रव्यादीनां पाचकादि सज्ञा	५८०
रश्मिवशाद्देर्धर्मविचार	"	स्नानसंबन्धेनपाचकादिग्रहा	५८१
बहुषोषकत्वयोग	"	रव्यादीनां दशागोचारादिफलकात्	५८२
परतो देशाधिपत्ययोग	"	<b>एकादशोऽध्यायः ११</b>	
राजयोग	"	अथ मासचर्यायां शुभाशुभ- विवनं ज्ञानम्	५८३
सार्वभौमपदाप्तियोग	"	<b>द्वादशोऽध्यायः १२</b>	
नरादिषोध्यसस्याविचार	"	पूर्वाध्यायोक्तयोगभगपरपर स्नानविशेषाकरणाधिपसम्भवेन भग	५८३
कत्तौ शूद्राणामेव राजयोगरूपनम्	"	राशमानयनेन भगवत्तन्म	"
भाग्यादिफलानां व्यवस्था	५७५	राशिप्रयोजनम्	५८४
पहलव्यवस्था	"	प्रकारावतरेण भावभग भगयोजना	"
अध्यायोपसंहार	"	<b>त्रयोदशोऽध्यायः १३</b>	
<b>नवमोऽध्यायः ९</b>		अथ द्वादशभावनामानि	५८५
अथ लेशास्थानादिविचारेण शुभाशुभ- फलम्	५७६	रविग्रहविचार	"
भावफलानां बलहानिफलनाशविचार	"	चन्द्रग्रहविचार	"
पूर्वभागोक्तयोगानां व्यवस्था	५७६	मौमविचार	"
भावविचार	"	बुधविचार	"
पितृमात्ररिष्टविचार	"	गुरुविचार	५८६
स्नानकरणतारतम्येन क्रिकोणजोघन- प्रकार	"	शुक्रविचार	"
एकाधिपत्यजोघनप्राप्तरेखाकरणेष्टव्या- नयनम्	५७७	शनिविचार	"
मूर्धतज्ज्वलतुर्धाभ्यामायु कथनम्	"	उक्तानां फलविचार	"
रश्मिविचारेण पितृमात्ररिष्टम्	५७८	<b>चतुर्दशोऽध्यायः १४</b>	
देशस्थाने रेखाभागे आयु कथनम्	"	अथपिडाशवादिभेदवर्णनम्	५८६
करणादिविचारेण भावविचार	"	पिडामुध्रुवावर्णनम्	"
<b>दशमोऽध्यायः १०</b>		ध्रुवायुर्दयध्रुवाकविचार	"
अथाब्दचर्यायां भाग्यादिवर्णनम्	५७९	रश्म्यायुर्दयध्रुवाकविचार	५८७
भावफलज्ञाने कालचर्या	५८०	वर्षमासाद्यायुत्त्वादनप्रकार	"
भावफलज्ञाने शुभग्रहापग्रहभेदेन विशेष	"	नवशिशुस्थापनप्रकार	५८८
कारकसंज्ञाग्रहविचार	"	प्रशन्नानुगतायुर्दयोत्पादनप्रकार	"
भावेषु शुभाशुभग्रहविचार	"	अष्टकवर्गायुर्दयोत्पादनप्रकार	"
दुर्बलसिद्धग्रहव्यवस्था	"	ध्रुवाकमहितनवाणायुर्दयवचनम्	५८९
स्त्रीपुंस्वभावविचार	"		

प्रतिपाद्यविषया-	पृ०स०	प्रतिपाद्यविषया	पृ०स०
नक्षत्रायुर्दाय	५८९	ग्रहत्वारतम्येनाश्रायन्त्यमायुर्दाय	
आयुर्दामकमनहेतूपन्यास	"	ग्रहणम्	५९६
भावायुर्दायवर्णनम्	"	स्वोच्चाद्यधिकारत्वारतम्येन-	
आयुर्दामस्य मुख्यत्वेन पाद्बिध्य-	"	आयुर्दायग्रहणविशेष	"
वर्णनम्	"	लग्नगतबलवद्ग्रहत्वारतम्येना-	
<b>पंचदशोऽध्यायः १५</b>			
अथ भारकयोगविचार	५९०	उच्चाद्यधिकारव्यस्तलग्नतानामायु-	
आयुयोगविचार	"	क्रम द्वादशभावेषु ग्रहाणां मिधा-	
पुरुषधनुकव्योषापुराणम्	५९१	युर्दामग्रहणम्	५९७
दापहरणप्रकार	"	उत्तःपुर्दामगणना	"
व्ययादिहरणप्रकार	"	अमित्रायुर्दामभेदा	५९८
भावाधिगतायुर्हरणम्	"	मित्रायुर्दानदशाग्रहणरीति	"
आयुर्हरणप्रक्रिया	"	नक्षत्राद्यायुर्दायेषु पिडायुर्दाय	
अनेकग्रहयोगे विशेषवर्तव्यम्	"	ग्रहणस्वलाति	"
ग्रहद्वययोगे कर्तव्यम्	"	प्रकारातरेण वैद्यमायुर्ग्रहणम्	"
गुणद्वययोगे विशेष	"	ध्रुवायुर्ग्रहणम्	"
अस्तगतग्रहाणां दापहरणप्रकार	"	योगविशेषेण बलवत्तरसप्तमगृहेषु	
नक्षत्रायुर्दायहरणरीति	"	पृथक्पृथग्दामविशेषग्रहणम्	५९९
नक्षत्रे शूरग्रहयोग आयुर्हरणसंस्कार	५९३	रश्मिवशादायुर्ग्रहणम्	"
सचन्द्रराह्यायुर्दाय	"	अत्रार्थे गर्गवाक्यप्रमाणम्	६००
नक्षत्रसचन्द्रराह्यायुर्दाय	"	<b>सप्तदशोऽध्यायः १७</b>	
द्रेष्माणवशात्स्वानवद्विधायां		अथ नवनव्यवहारमाश्रयोभूत-	
अस्तगतग्रहायुर्दानि		भाग्यादिविचारोपक्रम	६००
शत्रुक्षेत्रगतग्रहायुर्दानि नच मुहूर्त्तम-		भाग्यविचाररीति	"
गतानां विशेष मित्रादीनां		स्वदेशपरदेशभाग्योदयविचार	"
वृद्धि शत्र्वादीनांहरणम्	"	भावाफलनभोपदेश	"
अतर्दीक्षाभागा	"	प्रकारातरेण समाधानयनम्	"
अतर्दीक्षानयनप्रकार	५९४	उच्चादिम्यातविशेषेण म्यादीनां	
समच्छेदाभावस्थानानि	"	फलविशेष	"
अन्तर्दायोपभोक्तृ म	५९५	भाग्यविचारेश्वरफलम्	६०१
पहेम्यो भायम्याश्च द्वादशम्यात-	"	" भौमफलम्	"
भावाशा	"	" बुधफलम्	६०२
अशशित्त्वव्या	"	" गुरुफलम्	"
वाकारपर्याय होतृतापदिहा	"	" शुकफलम्	६०३
<b>षोडशोऽध्यायः १६</b>			
अथ पिडायुर्भेदयनम्	५९६	" शनिफलम्	"
		फलमज्ञानविचार	"
		आवादिमस्याविचार	६०४

विषयविवरण	पृ०सं०	प्रतिपाद्यविषयः	पृ०सं०
<b>विंशोऽध्यायः २०</b>		नक्षत्रतिथिवारेषु दिक्क्रम	६३०
सप्तध्यादिविचारेण भावगतप्रह- स्यनि	६२५	द्वितीयभावाद्यष्टमभावपर्यन्तरस्य मेवादिराशिषु रस्यम	"
सूत्रोपभावलक्षणम्	"	व्याधितस्य प्रश्नकालमरणसूचककाल-	"
विर्दमुखादीनाभावाना बलकथन रिति	"	राहृविशेषयोमातराशि अश्विनीज्जमात्रज्ञेयध्ववपदा	६३१
प्रश्नस्थानाकसख्या	"	प्रष्टुभिह्नज्ञानम्	"
प्रश्नेषु करणसख्या	"	प्रश्नकालीनसङ्घस्यशुभानुमप्रह-	६३१
प्रश्नस्थाना विषयसमसख्याया	"	वितोकनम्	"
गुणानुभवविचार	"	प्रश्नकाले जन्मकाले वाज्यनर्तुज्ञान-	"
सर्वविषयराशिषु स्थानककरणसख्याया साद्विहानि	"	विचार	"
विषयराते स्थानफलम्	"	मासतिथिज्ञानम्	"
कल्पादिहोतरस्येन फलानि	"	प्रश्नतद्वाद्दमोद्वर्षज्ञानम्	"
<b>एकविंशोऽध्यायः २१</b>		तिथिज्ञान दिवाराशिज्ञान च	"
सर्व स्थानसङ्घशातकलानि	६२६	प्राणज्ञानम्	६३०
जन्मसंज्ञोपसहरणम्	"	प्रश्नकालान्मासराशिसङ्घज्ञानम्	"
<b>द्वाविंशोऽध्यायः २२</b>		जन्मसंज्ञानतर्षोभिप्रातिप्रप्रकारा	"
सर्व प्रश्नप्रकरणोपक्रम	६२७	नक्षत्रसंज्ञासंज्ञत्वम्	"
प्रश्नविचारसोपायवर्णनम्	"	ग्रहाणा दृष्टि	६३३
शतौपायवर्णनम्	"	ग्रहाणा स्थानबल विगल च	६३३
सर्वप्रश्ना ऋष्यादिस्मरण विना	६२८	अपनबलम्	"
निष्पन्नभाववर्णनम्	"	पञ्चवेष्टादिवाराशिप्रतिपरिवलम्	"
प्रश्नप्रकार	"	दशपर्यवलयम्	"
पर्यायविचार	"	प्रश्नतद्वाद्दन्मन्त्रम्	"
संज्ञानक्षयम्	"	अध्यायोपमाहार	"
दिव्यवर्तत्यम्	"	<b>त्रयोविंशोऽध्यायः २३</b>	६३४
संज्ञानक्षयप्रणतप्रायुर्निर्णय द्रेष्यान्-	६२९	पूर्वाशौताऽध्यायानुक्रम	"
सर्व च	"	उत्तराशौताऽध्यायानुक्रम	"
सूत्रोपप्रकार	"	<b>चतुर्विंशोऽध्यायः २४</b>	६३५
सूत्रकालयोगज्ञानम्	"	शास्त्रप्रणयनप्रणम्	"
		स्योनि शास्त्रप्रणयन	"

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रउत्तरखण्डस्यविषयानुक्रमणिका समाप्ता



श्रीः

# बृहत्-पाराशर-होरा-शास्त्रम्

## पूर्वखण्डम्

अथेकदा मुनिश्रेष्ठं त्रिकालज्ञं पराशरम् ॥ पप्रच्छोपेत्य मैत्रेयः प्रणिपत्य यथाविधि ॥१॥  
मैत्रेय उवाच-नमस्तस्मै भगवते बोधरूपाय सर्वदा ॥ परमानन्दकन्दाय गुरवेऽज्ञान ध्वंसिने  
॥२॥ इति स्तुत्या मुसंहृष्टो मुनिस्तत्त्वविदाम्बरः ॥ अयादिदेश सच्छास्त्रं सारं यज्ज्योतिषां  
शुभम् ॥३॥ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शुक्लाम्बरधरां गिरम् ॥ प्रणम्य, पाञ्चजन्यञ्च धीणां घाम्यां  
धृतं द्वयम् ॥४॥ सूर्यं नत्वा गृहपतिं जगदुत्पत्तिकारणम् ॥ वक्ष्यामि वेदनयनं यथा  
ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम् ॥५॥

सुमंगलानां कर्तारं हर्तारं निखिलापदा, वन्दे बुद्धिप्रदातार गणानाम्पतिमोश्वरम् ॥१॥  
होराशास्त्रेऽतिगम्भीरे भावार्थख्यापनाय वै, शारदे त्वां प्रपन्नोऽस्मि भव 'भावप्रकाशिका' ॥२॥

एक समय त्रिकालज्ञ मुनिवर पराशरजी के पास आकर यथाविधि प्रणाम करके मैत्रेयजी ने पूछा ॥१॥ मैत्रेय ने कहा-अज्ञान का नाश करनेवाले आनन्दकन्द ज्ञानस्वरूप भगवान् पराशर को प्रणाम करता हूँ ॥२॥ तत्त्वज्ञानियो ने खेळ भगवान् पराशरमुनि, मैत्रेय पर प्रसन्न होकर ज्योतिष शास्त्र के साररूप इस शास्त्र का उपदेश करने लगे ॥३॥ पराशरजी ने कहा-सात्त्विकज्ञानरूप शुक्ल अम्बरधारी विष्णु तथा तद्रूपा धीसरस्वती को प्रणाम करता हू, जिन्होंने पाञ्चजन्य शस्त्र और धीणा धारण की है ॥४॥ जगत् को उत्पत्ति करनेवाले सूर्य तथा गणपति को नमस्कार करके ब्रह्मा से गुने हुए वेद के नयनरूप इस ज्योतिष शास्त्र को यथावत् कहता हूँ ॥५॥

शान्ताय गुरुभक्ताय च जवेर्चितस्वामिने ॥ आस्तिकाय प्रदातयं ततः श्रेयो ह्यवाप्स्यति ॥६॥  
न देयं परमिष्याय नास्तिकाय शठाय च ॥ बले प्रतिदिनं दुःखं जायते नात्र संग्रहः ॥७॥ एको  
व्यक्तात्मको विष्णुरनादिः प्रभुरीश्वरः ॥ गुह्यसत्त्वो जगत्स्वामी निर्गुणस्त्रिगुणान्वितः ॥८॥  
संसारकारकः श्रीमाश्रिमितात्मा प्रतापवान् ॥ एकाशेन जगत्तर्कं सृजत्यर्वात् सीलया ॥९॥

### उपदेश योग्य शिष्य का लक्षण

जो सरल तथा शान्तस्वभाव, ईश्वर तथा धर्म में विश्वास रखनेवाला, गुरु का भक्त तथा गुरु की सेवा-पूजा की हो ऐसे श्रेष्ठ शिष्य को इस शास्त्र का उपदेश करना चाहिये, तभी मंगल होता है॥६॥ इसके विपरीत जो नास्तिक, जठमति तथा दूसरे का शिष्य हो उमको उपदेश देने से दैनन्दिन क्लेश होता है, यह निश्चित है॥७॥

### श्रुति के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति

“एको व्यक्ता०” इत्यादि—

एक=अद्वितीय, अनाद्यनन्त, सर्वेश्वर्यविशिष्ट, चराचरजगत् का स्वामी, शुद्धसत्वगुणप्रधान माया का अधीश्वर, अव्यक्तरूप से निर्गुण ब्रह्म तथा व्यक्तरूप से त्रिगुणमयी प्रकृति का स्वामी भगवान् विष्णु॥८॥ पद्विध ऐश्वर्यरूपा लक्ष्मी के पति, वन्दनीय तेजोरूप वह विष्णु ही व्यापक होने से इस ससार का निमित्त रूप से (अथवा अभिन्न-निमित्तोपादानरूप से) उत्पत्तिस्थितिलय का कारण है। वह विष्णु ही अपने एक अंग से, इस ससार को उत्पन्न करके नीलामात्र से पालन करता है॥९॥ (पुरूप सूक्त=वेद के अनुसार उत्पत्ति दिखाकर ‘लोकवत्तु नीलाकैवल्यम्’ ब्र० सूत्रानुसार उत्पत्त्यादि वर्णन की है)

त्रिपाद तस्य देवस्य ह्यमृत तत्त्वदर्शिनः ॥ विदति तत्प्रमाणं च सप्रधान तथैकपात् ॥१०॥  
व्यक्ताव्यक्तात्मको विष्णुर्वासुदेवस्तु गीयते ॥ यदव्यक्तात्मको विष्णुः शक्तिद्वयसमन्वितः ॥११॥  
व्यक्तात्मकस्त्रिशक्तीभिः सप्तोऽनतशक्तिमान् ॥ सत्वप्रधाना श्रीशक्तिर्भूराक्तिश्च रजोगुणा ॥१२॥ शक्तिस्तृतीया या प्रोक्ता नीलाख्या ध्वांतरूपिणी ॥ वामुदेवश्चतुर्थोऽभूच्छ्री शक्त्या प्रेरितो यदा ॥१३॥ सकर्षणश्च प्रद्युम्नोऽनिरुद्ध इति मूर्तिधृक् ॥ तमशक्त्याऽन्वितो विष्णुर्देवः सकर्षणाभिधः ॥१४॥

“पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृत दिवि। इत्यादि श्रुति तथा ‘विष्टम्याऽहमिदं बृहन्मेकाग्रं स्थितो जगत् ।’ आदि स्मृति तात्पर्यानुसार कहते हैं—त्रिगुणात्मक प्रधान माया का अधीश्वर होने से वह देव=दिव्यरूप है, उसके तीन पाद तो अमृतरूप से स्थित है, जिसको तत्वदर्शी जानते हैं, (मायाहीन निर्द्विकार ब्रह्मरूप से वर्तमान हैं) और एक पाद=विष्णुरूप से त्रिगुणात्मक प्रधान का स्वामी वेद में कहा गया है॥१०॥ इस प्रकार व्यक्त तथा अव्यक्तरूप से विष्णु अभयस्वरूप है, और वामुदेव कहे जाते हैं। और जो अव्यक्तस्वरूप विष्णु है, वे दो शक्ति से युक्त है॥११॥ व्यक्तरूप भगवान् सर्वव्यापक विष्णु सत्व, रजस् तथा तमस् इन तीन गुणों से युक्त है, एव इनकी शक्ति अनन्त है। इन तीन गुणों में सत्वगुणप्रधाना ‘श्रीशक्ति’ रजोगुणप्रधाना ‘भूशक्ति’॥१२॥ तथा तमोगुणप्रधाना ‘नीलाशक्ति’ है। श्रीशक्ति की प्रेरणा से विष्णु के चार रूप हुए॥१३॥ वामुदेव (पूर्वानुवृत्त) सकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये चार रूप हुए। इनमें वामुदेव तो आदि विष्णु स्वरूप ही है, इनसे तमोगुणप्रधान नीला शक्तियुक्त ‘सकर्षण’ का आविर्भाव हुआ॥१४॥

प्रद्युम्नो रजसा शक्त्या निरुद्धः सत्त्वया युतः॥महान्तर्कर्पणाज्जातः प्रद्युम्नाद्यदहंकृतिः ॥१५॥  
 अनिरुद्धात्स्वयं जातो ब्रह्माहंकारमूर्तिर्घृष् ॥ सर्वेषु सर्वशक्तिञ्च स्वशक्त्याऽधिक्या युतः  
 ॥१६॥ अहंकारस्त्रिधा भूत्वा सर्वमेतदविस्तरात् ॥ सात्त्विको राजसञ्चैव तामसश्चेदहंकृतिः  
 ॥१७॥ वेवा चकारिकाज्जातास्तैजसादिन्द्रियाणि च ॥ तामसाञ्चैव भूतानि लावीनि  
 स्वस्वशक्तिभिः ॥१८॥ श्रीशक्त्या सहितो विष्णुः सदा पाति जगत्त्रयम् ॥ भूशक्त्या सृजते  
 विष्णुर्नीलशक्त्या युतोऽति हि ॥१९॥

एव रज=शक्तियुक्त, 'प्रद्युम्न' तथा सत्त्वशक्ति से युक्त 'अनिरुद्ध' का आविर्भाव हुआ। (इस प्रकार श्रुति, स्मृति, भूत (वेदान्त) सिद्धान्त से पाशुपत-पञ्चरात्र आदि शास्त्र सिद्धान्त का समन्वय करते हुए साख्य सिद्धान्त से समन्वय करते हैं) सकर्षण से महत् तत्त्व की उत्पत्ति हुई, प्रद्युम्न से अहंकार की उत्पत्ति हुई॥१५॥ अहंकार के मूर्तरूप में स्वयं ब्रह्मा 'अनिरुद्ध' से प्रकट हुए। वैसे तो सकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध इन तीनों में तीनों शक्तिया (सात्त्विकी, राजसी, तामसी) हैं तथापि प्रत्येक में अपनी शक्ति प्रधानरूप से तथा अन्यशक्ति गौणरूप से स्थित है॥१६॥ पश्चात् अहंकार तत्त्व के तीन भेद हुए 'सात्त्विक, राजस, तामस' बाद प्रथम संक्षिप्तमृष्टि हुई अर्थात् पूर्वोक्त तीन रूपों में अहंकार आविर्भूत हुआ॥१७॥ सात्त्विक अहंकार से देवता, तैजस अहंकार से इन्द्रिया एव तामस अहंकार से आकाशादिक पञ्चभूत हुए॥१८॥ इस प्रकार उत्पन्न हुए ससार को श्रीशक्तियुक्त विष्णु पालन करते हैं, भूशक्तियुक्त विष्णु उत्पन्न करते हैं तथा नील=तम शक्तियुक्त होकर संहार करते हैं॥१९॥

(यहां क्रम विवक्षित नहीं है)

सर्वेषु चैव जीवेषु परमात्मा वीराजते ॥ सर्वं हि तदिदं ब्रह्मन् स्थितं हि परमात्मनि ॥२०॥  
 सर्वेषु चैव जीवेषु स्थितं ह्यशद्वयं क्वचित् ॥ जीवाशमधिकं तद्वत्परमात्माशकः क्लिप्त ॥२१॥  
 सूर्योऽप्यो ग्रहाः सर्वे ब्रह्मकामद्विषादयः ॥ एते चान्ये च बहवः परमात्मांशकाधिकाः ॥२२॥  
 शक्तयश्च तर्पतेयामधिकांशाः शिष्यादयः ॥ अन्यासु स्वस्वशक्तीषु ज्ञेया  
 जीवांशकाधिकाः॥२३॥

मैत्रेय उवाच-

रामकृष्णादयो मे च ह्यवतारा रमापते॥तोऽपि जीवांशसयुक्ताः किं वा ब्रूहि मुनीश्वर ॥२४॥

हे मैत्रेय ! इस प्रकार सम्पूर्ण जीवों में परमात्मा हैं, और चराचर मारा मसार परमात्मा में स्थित है॥२०॥ सम्पूर्ण जीवों में दो अंश (जीवांश और परमात्मांश भेद से) हैं, उनमें से किसी में जीवांश और किसी में परमात्मांश अधिक होता है॥२१॥ सूर्य आदि ग्रह तथा ब्रह्मा और कामारि=महादेव आदि देवता तथा अन्यो में भी परमात्मांश अधिक है॥२२॥ तथा श्री, लक्ष्मी, दुर्गा आदि शक्तियों में भी परमात्मांश अधिक है, अन्य सासारिक जीवों में जीवांश अधिक है॥२३॥

मैत्रेय जी बोले- (इस ससार में आविर्भूत होने वाले) रामचन्द्र, धीकृष्ण आदि जो विष्णु के अवतार शास्त्रों में कहे गये हैं, क्या वे भी जीवांश में युक्त हैं ? ॥२४॥



पराशर उवाच—

रामकृष्णश्च भो विप्र नृसिंह सूकरस्तथा ॥ एते पूर्णावताराश्च ह्यन्ये जीवाशकान्विता ॥२५॥  
 अवताराण्यनेकानि ह्यजस्य परमात्मन ॥ जीवानां कर्मफलदो ग्रहहृषी जर्नादिन ॥२६॥ दैत्यानां  
 बलनाशाय देवानां बलबृद्धये ॥ धर्मसंस्थापनार्थाय प्रहा जाता शुभा क्रमात् ॥२७॥ रामोऽवतार  
 सूर्यस्य चंद्रस्य यदुनायक ॥ नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्ध सोमसुतस्य च ॥२८॥ वामनो विबुधेज्यस्य  
 भार्गवो भागवस्य च ॥ क्रूरो भास्करपुत्रस्य सिंहकेयस्य सूकर ॥२९॥ केतोर्मानावतारश्च ये चान्ये  
 तेऽपि श्रेष्ठजा ॥ परमात्मारामधिकं येषु ते श्रेचराभिधा ॥३०॥ जीवाशमधिकं येषु जीवास्ते वै  
 प्रकीर्तिता ॥ सूर्यादिभ्यो ग्रहेभ्यश्च परमात्माशानि मृता ॥३१॥ रामकृष्णादथ सर्वे ह्यवतारा  
 भवति वै ॥ तत्रैव ते विलीयते पुन कार्षोत्तरे सदा ॥३२॥

पराशरजी ने कहा—इन अवतारों में राम कृष्ण नृसिंह तथा सूकर अवतार तो सम्पूर्ण रूप से परमात्मारूप है अन्य अवतारों में कलारूप से जीवाश भी है ॥२५॥ यद्यपि (विवक्षित विषय का अवतरण) अजन्मा वागुदेव के अनेक अवतार हैं तथापि जीवों के कर्मफल के देनेवाले ग्रहरूप अवतार मुख्य हैं ॥२६॥ क्योंकि—धर्मद्वेषी दैत्यों के बल के नाश तथा देवताओं के बल की वृद्धि एवं धर्म का संस्थापन करने के लिये ही इन भगवन्मय ग्रहों से ही अवतारों का आविर्भाव हुआ है ॥२७॥ सो इस क्रम से हुआ—सूर्य से रामावतार चन्द्रमा से कृष्णावतार मंगल से नृसिंह, बुध से यौद्धावतार ॥२८॥ बृहस्पति से वामन शुक्र से परशुराम शनि से क्रूर राहु से वाराह ॥२९॥ केतु से मत्स्यावतार का आविर्भाव हुआ इसी प्रकार अन्य अवतार भी इन्हीं सूर्यादिग्रहों से ही आविर्भूत हुए हैं। परमात्माश के प्राबल्य से ही इन ग्रहों की श्रेचर सजा है ॥३०॥ जिसमें जीवाश की अधिकता होती है वे जीव कहलाते हैं (अर्थात् अवतार नहीं), परमात्माश और जीवाशरूप उभयशक्ति संपन्न सूर्यादि ग्रहों के परमात्माश के आधिक्य से आविर्भूत ॥३१॥ राम कृष्ण आदि अवतार अपना अपना अवतार कार्य करके ग्रहों में ही लीन हो जाते हैं और सृष्टि के प्रलयकाल में वे ग्रह भी अपने कारण रूप अव्यक्त में लीन हो जाते हैं ॥३२॥

जीवाशानि मृतास्तेषां तेभ्यो जाता नरादयः ॥ तेऽपि तत्रैव लीयते तेऽव्यक्ते समयति हि ॥३३॥  
 इदं ते कथितं विप्र सर्वं यस्मिन्भवेदिति ॥ भूतान्यपि भविष्यति तत्तत्सर्वज्ञतामियात् ॥३४॥  
 बिना सज्ज्योतिष नान्यो ज्ञातु शक्नोति कर्हिचित् ॥ तस्मादवश्यमध्येयं ब्राह्मणैश्च विशेषतः ॥३५॥  
 यो नर शास्त्रमज्ञात्वा ज्योतिषं सतु निन्दति ॥ रौरव नरकं भुक्त्वा चाधत्वा चान्यजन्मनि ॥३६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखण्डे शास्त्रावतारण नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

ग्रहों के जीवाशाधिक्य से मन्वादि सृष्टि हुई और उसके बाद मनुष्य पशु पक्षी आदि की सृष्टि हुई। प्रलयकाल में वे सब भी उन्हीं में लीन होते हैं और वे ग्रह भी अव्यक्त में लीन होते हैं ॥३३॥ हे मैत्रेय ! जिज्ञा अव्यक्त तत्त्व से यह सर्ग उत्पन्न होता है वह सब विज्ञान हमने

तुमसे कहा है, इस विज्ञान को जानने से भूत तथा भविष्यत् सर्ग का ज्ञान प्राप्त कर सकता है॥३४॥ कोई भी विज्ञानी बिना ज्योतिषज्ञान के इसका रहस्य नहीं जान सकता। इसलिये सबको और विशेष करके ब्राह्मणों को अवश्य ज्योतिषशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये॥३५॥ जो मनुष्य ज्योतिषशास्त्र के रहस्य को न जानकर इसकी निन्दा करता है वह मरने के बाद रावर नरक भोग कर इस ससार में अन्धा होकर जन्म लेता है॥३६॥

इति श्रीबृहत्पाराशर होरासाराशे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया  
शास्त्रावतरण नाम प्रथमोऽध्याय ॥१॥

पराशर उवाच—

तिर्यक्पांच तथोर्ध्वगात्र लिखिता रेखात्र राश्यात्मकं चक्रं स्यात्पुरुहूतदिग्रहमुखा  
लग्नादिराशिग्रहाः॥ सलेख्योदयचंद्रकारकपदास्त्वात्महोराघटी वर्गाणां च दशोक्तप्रपवशात्त-  
त्तफलं वक्ष्यति ॥१॥

भावफल विचाररीति

तिरछी पांच और सीधी पांच रेखा करने से राशिचक्र होता है, इस राशिचक्र के पूर्वदिशा के कोष्ठक से आरंभ करके जन्म समय के लग्न आदि १२ भावों की राशि और ग्रह लिखकर, लग्न, चन्द्रमा तथा कारक, पद, उपपद, आरूढ, और भाव, होरा, प्रकरण में कहे अनुसार लग्न तथा लग्नेश, भावेश एवं दायेश के द्वारा शुभाशुभ फल कहा जायगा॥१॥

पराशर उवाच

कालात्मात्र दिवानायो मनः कुमुदबांधवः ॥ सत्त्वं कुजो विजानीयाद्बुधो वाणीप्रदायकः  
॥२॥ देवेज्यो ज्ञानमुत्तदोमृगुर्वीर्यप्रदायकः ॥ विचार्यतामिदं सर्वं छायासुनुश्च दुःखदः ॥३॥  
राजानी भानुहिमग्नू नेता ज्ञेयो धरात्मजः ॥ बुधो राजकुमारश्च सचिवो गुरुभार्गवो ॥४॥  
प्रेष्यको रविपुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकी ॥ एवं क्रमेण वै विप्र सूर्यादीनि विचिन्तयेत् ॥५॥  
रक्तश्यामो दिवाधीशो गौरगात्रो निशाकरः ॥ अत्युच्चवांगो रक्तभौमो दूर्याश्यामो बुधस्तथा  
॥६॥ गौरगात्रो गुरुर्जैः शुक्रः श्यामस्तर्षेव च ॥ कृष्णदेहो रवेः पुत्रो ज्ञायते द्विजसत्तम ॥७॥  
बह्वर्धुयुगिशिक्षिकाविष्णुविडो जसचिका द्विज ॥ सूर्यादीनां स्नानानां च तथा ज्ञेयाः क्रमेण च  
॥८॥ क्लीबो द्वौ सौम्यसौरी च युवतीदुभ्रू द्विज ॥ नराः शेषाश्च विज्ञेया भानुभौमो गुरुस्तथा  
॥९॥ अग्निभूमिभस्तोयवायवः क्रमतो द्विजाः। भौमादीनां प्रहाणां च तत्त्वाभ्रामी प्रकीर्तिताः।  
॥१०॥

ग्रह तथा राशियों के स्वरूप

पराशरजी ने कहा—सूर्य समय का रूप है, चन्द्रमा, मन तथा मंगल को वज्र का रूप जानना, बुध, वाणी का देनेवाला॥२॥ बृहस्पति, ज्ञान और सुसं का देनेवाला, शुक्र, वीर्य का

दाता है। शनि, दुःख देनेवाला है, यह सब लग्न से विचार करना चाहिये॥३॥ सूर्य, चन्द्रमा, राजा है। मंगल नेता है, बुध राजकुमार है, गुरु, शुक्र दोनो मन्त्री है॥४॥ शनि दूत है। राहु, केतु सेनारूप मे है। हे मैत्रेय । इस प्रकार से इन ग्रहो मे राजा आदि भाव की नैसर्गिक स्थिति है॥५॥ सूर्य रक्तश्याम वर्ण है, चन्द्रमा गौरवर्ण है, मंगल अति उच्च अगवाला रक्त वर्ण है, बुध हरितवर्ण है॥६॥ बृहस्पति गौरवर्ण है। शुक्र श्याम वर्ण है, शनि कृष्ण वर्ण है॥७॥ अब देवता कहते है—अग्नि, जल, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, इन्द्राणी क्रम से सूर्यादि ग्रहो के देवता है॥८॥ बुध और शनि नपुंसक, चन्द्रमा, शुक्र ये स्त्री तथा सूर्य, मंगल और गुरु पुरुष है॥९॥ अब तत्त्व सुनिये—अग्नि, भूमि, आकाश, जल वायु ये तत्त्व क्रम से मंगल आदि ग्रहो के जानना॥१०॥

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णां बुजाकां अत्रियौ द्विज । शशिनीम्यौ वैश्यवर्णौ शनिःशूद्रो द्विजोत्तम ॥११॥  
 ध्रुवसूर्यगुरुश्रीम्या भृग्वारशनयो द्विज ॥ सत्त्व रजस्तम इति स्वभावो ज्ञायते क्रमात् ॥१२॥  
 मधुपिगलदृक्सूर्यश्रुतुरखः शुचिर्द्विज ॥ पित्तप्रकृतिको धीमान्पुमानल्पकचो द्विज ॥१३॥  
 बृहवातकफप्रज्ञाश्रद्धो वृत्ततनुर्द्विज ॥ शुभदृग्मधुवाक्यश्च चचलो मदानतुरः॥१४॥ क्रूररक्ता-  
 रणो भौमश्रपलो—दारमूर्तिक ॥ पित्तप्रकृतिकक्रोधी कृशमध्यतनुर्द्विज ॥१५॥ वपुश्रेष्ठो  
 क्लिष्टवाक्च ह्यतिहास्यरुचिर्बुध ॥ पित्तवान्कफवान्विप्र मास्तप्रकृतिस्तथा॥१६॥ बृहद्गात्रो  
 गुरुश्चैव पिगलो मूर्द्धजेक्षणः ॥ कफप्रकृतिको धीमान् सर्वशास्त्रविशारदः ॥१७॥

वर्ण=गुरु, शुक्र, विप्रवर्ण, सूर्य मंगल क्षत्री तथा चन्द्र, बुध, वैश्यवर्ण एव शनि शूद्रवर्ण है॥११॥ चन्द्र, सूर्य, गुरु, बुध, शुक्र, मंगल तथा शनि ये क्रमशः सत्त्व, रजस् तथा तमस् स्वभाव वाले है॥१२॥ (अब ग्रहो की प्रकृति आदि भिन्न भिन्न कहते है।) सूर्य—मधुभापी, पिगल दृष्टि, चौकोर, पवित्र स्वभाव पित्तप्रकृतिवाला, बुद्धिमान्, पुण्य, अल्पकेशी है॥१३॥ चन्द्रमा=वायु तथा कफ प्रकृति वाला, बुद्धिमान् गोल आकृतिवाला, सौम्यदृष्टि, मनोहर वाणी वाला, चंचल तथा कामी है॥१४॥ मंगल=क्रूरस्वभाव, रक्तवर्ण, अरुणदेह, चंचल, उदार हृदयवाला, पित्तप्रकृति, क्रोधी, कृश, अगवाला, मैत्रोला कदवाला है॥१५॥ बुध=मुन्दर शरीर, कम बोलनेवाला, बहुत हैसोड स्वभाव, पित्त तथा कफ प्रकृति, वायुस्वभाव वाला है॥१६॥ बृहस्पति=बृहत् शरीर पिगल दृष्टि, और उठे केशवाला कफ प्रकृति, सर्वविद्याविशारद और बुद्धिमान् है॥१७॥

सुखी कातवपुः श्रेष्ठः सुलोचनो भृगोःसुतः ॥ काव्यकर्ता कफाधिक्यानितात्मा बरुमूर्धनः ॥१८॥ कृशदीर्घतनु शौरिः पिगदृष्टधनिलात्मकः ॥ स्थूलदतो लसत्पुग खररोमकचो द्विज ॥१९॥ भ्रूत्राकारो नीलतनुर्वनस्पोऽपि भयकरः ॥ वातप्रकृतिको धीमान् स्वर्त्मानुप्रतिमः शिखी ॥२०॥ अस्थिररक्तस्तथा मज्जा त्वक्चर्म वीर्यघ्रायकः ॥ तासामीशाःकमेणोक्ता ज्ञेयाः सूर्यादयो द्विज ॥२१॥ देवालयजल बह्निक्कीडादीना तथैव च ॥ कोशशाव्यां शुल्कारणामीशाः सूर्यादियः क्रमात् ॥२२॥ अयनक्षणवारतुमातपक्षसमा द्विज ॥ सूर्यादीना क्रमाज्ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥२३॥ कटुलवणतिक्तमिष्टमधुरेसुकयापकाः ॥ क्रमेण सर्वे विज्ञेयाः सूर्यादीनां

द्विजोत्तम ॥२४॥ बुधेऽप्यौ बलिनीं पूर्वं रविमौमौ च दक्षिणे ॥ वारुणः सूर्यपुत्रश्च सितचंद्रौ  
तथोत्तरे ॥२५॥ निशायां बलिनश्चंद्रकुजसौरा भवति हि ॥ सर्वदाज्ञो बलीज्ञेयो दिनशेया  
द्विजोत्तम ॥२६॥ कृष्णे च बलिनः क्रूराः सौम्या वीर्यपुताः सिते ॥ सौम्यापने सौम्यखेटो बली  
याम्यापनेऽपरः ॥२७॥

शुक्र=मुखी, सुन्दर, श्रेष्ठ, मुलोचन, कवि, वाफ यात प्रकृति तथा कुचित केशवाला  
है ॥१८॥ शनि=कृश और लम्बा कद, पिगलदृष्टि, वायुप्रकृति, स्थूल दांतवाला, शोभित  
पुरुषाकृति तथा कडे केश और रोमवाला है ॥१९॥ राहु तथा केतु=धूम्र, नीलवर्ण, बनचारी,  
भयकर रूप तथा वातप्रकृति वाले हैं ॥२०॥ सूर्यादि ग्रहों के स्थान-देवमन्दिर, जलागार,  
अग्निस्थान, खेलने का स्थान, कोशागार, शय्या, कूडा घर ये क्रमशः जानना ॥२२॥ इसी  
प्रकार समय-अयन, मूर्द्धा, वार, ऋतु, मास, पक्ष तथा वर्ष ये क्रमशः सूर्य आदि ग्रहों के  
निश्चित हैं ॥२३॥ रस क्रमशः-कटु, लवण, तिक्त, मीठा, मधुर, ईश, कषाय, ये सूर्य आदि ग्रहों  
के रस हैं ॥२४॥ दिशा-बुध तथा गुरु पूर्वबली, सूर्य मगल, दक्षिण बली, शनि पश्चिम बली  
तथा शुक्र चन्द्रमा उत्तर बली हैं ॥२५॥ समय बल-चन्द्रमा, मगल, शनि ये रात्रि में बलवान्  
हैं, बुध सर्वकाल में बली है, सूर्य, गुरु, शुक्र ये दिन में बली हैं ॥२६॥ अयन तथा पक्ष  
बल-क्रूरग्रह कृष्णपक्ष में और सौम्यग्रह शुक्लपक्ष में बली है। इसी प्रकार उत्तरायण में  
सौम्यग्रह और दक्षिणायन में क्रूरग्रह बली है ॥२७॥

स्वविवसमहोरासात्पर्वःकालवीर्यकम् ॥ शक्रुबुधुचराद्या वृद्धितो वीर्यवतराः ॥२८॥  
स्थूलाश्च जनयति सूर्यो दुर्भागान्सूर्यपुत्रकः ॥ क्षीरोपेतास्तथा चन्द्रः कटुकाद्यान्धरासुतः ॥२९॥  
गुरुज्ञौ सफलात्विप्र पुष्यवृक्षान् मृगोः सुतः ॥ नीरसान्सूर्यपुत्रश्च एव ज्ञेयाःखगा द्विज ॥३०॥  
राहुश्चांडालजातिश्च केतुर्जात्यंतरस्तथा ॥ शिखिस्वर्मानुमदानां यत्मीकं स्थानमुच्यते ॥३१॥  
चित्रकंठ्य फणींद्रस्य केतोश्छिद्रपुत्रो द्विज ॥ सोस राहोर्नीलमणिः केतोर्ज्ञेयो द्विजोत्तम ॥३२॥  
गुरोः पीतांबरं विप्र मृगोः क्षीमं तथैव च ॥ रक्त क्षीम भास्करस्यद्वंदोः क्षीम सितं द्विज ॥३३॥  
बुधस्य तु कृष्णक्षीमं रक्तचित्रं कुजस्य च ॥ यस्त्रं चित्र शनेर्विप्र पट्टवस्त्र तथैव च ॥३४॥  
मृगोर्भ्रतुर्विंशतश्च कुजभान्वोश्च प्रीष्मकः ॥ चंद्रस्य वर्षा विज्ञेया शरच्छैवतया विदः ॥३५॥  
हेमतोऽपि गुरोर्ज्ञेयःशनेस्तुशिशिरो द्विज ॥ अप्टौ मासाश्च स्वर्मानोः केतोर्मासत्रय द्विज ॥३६॥  
राह्वारपंगुचन्द्राश्च विज्ञेया धातुसेचराः ॥ मूलग्रहौ सूर्यगुज्ञौ अपरा जीयसतकाः ॥३७॥ ग्रहेषु मंदो  
वृद्धोऽस्ति आपुर्वृद्धिप्रदायकः ॥ नैसर्गिके बहुसमान्दाति द्विजसत्तम ॥३८॥

अपने दिन, वर्ष, होरा, मास, राशिक्रमण तथा समय में बलवान् होते हुए भी शनि,  
मगल, बुध गुरु शुक्र, चन्द्रमा, राहु तथा सूर्य क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक बली (नैसर्गिक)  
हैं ॥२८॥ बली होने का फल कहते हैं-सूर्य बली हो तो म्यूल-वनस्पति की विशेष उत्पत्ति  
करता है, इसी प्रकार शनि, दुर्भय (कटीनी झाड़ी, शमी आदि) की, चन्द्रमा, दूधवाले (दूध  
के समान रसवाले) वृक्षों की, मगल, कढवे एवं बुध तथा गुरु, फलवाले वृक्षों की तथा शुक्र,  
पुष्यवाले वृक्षों की एवं शनि, नीरस वृक्षों की विशेष वृद्धि करता है ॥३०॥ ग्रहों की

जाति—राहु चाण्डाल, केतु वर्णसन्तर, राहु, केतु तथा शनि का बल्मीक स्थान कहा है॥३१॥

वस्त्र तथा आभरण—राहु की चित्रविचित्र वन्या (गुदडी) केतु की सछिद्र (फटी हुई) राहु की धातु सीसा तथा केतु का नीलमणि है॥३२॥ हे मैत्रेय ! गुरु का वस्त्र, पीताम्बर, शुक का महीन (फाइन), सूर्य का लाल तथा महीन, चन्द्रमा का श्वेत महीन॥३३॥ इसी प्रकार बुध का काला महीन और मंगल का लाल तथा सचित्र और शनि का रेशमी तथा चित्रित वस्त्र होता है॥३४॥ ग्रहो की ऋतु—शुक की वसन्त ऋतु, मंगल और सूर्य की ग्रीष्म तथा चन्द्रमा की वर्षा और शरद् ऋतु है॥३५॥ बृहस्पति की हेमन्त तथा शनि की शिशिर ऋतु है। राहु अपना प्रभाव ८ मास तक और केतु ३ मास तक करता है॥३६॥ ग्रहो की धातु—राहु, मंगल, शनि, चन्द्रमा ये धातु के स्वामी है, सूर्य तथा शुक मूल के तथा बुध गुरु केतु ये जीव सजक है॥३७॥ ग्रहो मे शनि वृद्ध अर्थात् निर्बल है परन्तु नैसर्गिक दशा मे यह शनि बहुत वर्ष तक आयुर्दाय प्रदाता है॥३८॥

यहां ग्रहो का स्वभाव आदि वर्णन समाप्त हुआ

### अथ पचांगस्थितग्रहेषु चालनमाह

स्वेष्टादये भवेत्पक्ति पक्तौ स्वेष्ट विशोधयेत् ॥ स्वेष्टात् पृष्ठे भवेत्पक्ति स्वेष्टे पक्ति विशोधयेत् ॥ ऋण धन तथा ज्ञेय चालने विधिरेव हि ॥३९॥

### अथ ग्रहाणां तात्कालिकीकरणमाह

गतगम्यविनाहतद्युमुक्ते सरसाप्तशविषुग्यतो ग्रह स्यात् ॥ तात्कालमवस्तया घटिघ्ना सरसैर्लब्धकलोनस्युत स्यात् ॥४०॥

दृष्टकालिक ग्रह स्पष्ट करने के लिये पचांग स्थित ग्रहस्पष्ट मे 'चालन'

अपने दृष्टकाल से आगे की पक्ति हो तो पक्ति मे दृष्ट (बार घटी पल) घटाना चाहिये। एव अपने दृष्टकाल से पीछे की पक्ति हो तो दृष्ट मे पक्ति घटाने से जो ज्ञेय अक रहता है वह (बार, घटी, पलात्मक) चालन होता है और अम से प्रथम ऋण तथा दूसरा धन चालन होता है॥३९॥

ग्रहो का तात्कालिक स्पष्ट करना

ऋण तथा धन चालन से ग्रह की दैनिक गति को गुणा करके ६० वा भाग देकर लब्ध, अश, घटी, पल अक को पक्ति के ग्रहस्पष्ट मे चालन ऋण हो तो घटावे और धन हो तो जोड़ने से दृष्ट दिन वा ग्रहस्पष्ट होगा। इसी प्रकार चालन के घटी, पल अक से ग्रह गति गुणित बार उपर्युक्त रीति से सस्कार करने पर तात्कालिक अर्थात् दृष्टकाल का स्पष्ट ग्रह होता है॥४०॥

### अथ भयातभभोगसाधनम्

इष्टमधिक नक्षत्रन्यून तदा इष्टादित्यनेन ज्ञेयम् । इष्टाद्विहीन च दिनर्क्षनाडी भयातसत्ता  
भवतीह तस्य । दिनर्क्षनाडी खरसेषु शुद्धा निजर्क्षयुक्त सहिते भभोग ॥४१॥ इष्ट न्यून  
नक्षत्रमधिक तदा गतर्क्षनाड्येति ज्ञेयम् ॥ गतर्क्षनाडी खरसेषुशुद्धा सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ता  
॥ भयातसत्ता भवतीह तस्य निजर्क्षनाडीसहिते भभोग ॥४२॥

### अथ चंद्रस्पष्टमाह

गतर्क्षं पष्टिगुणित भभोगेन च भाजितम् ॥ दशादिपष्टिगुणितैर्लब्ध तत्र सुयोजयेत् ॥४३॥  
तच्चापि द्विगुण कृत्वा ह्येकेन विभजेत्सु म ॥ मृगाकलव्यमशादीन्सुसाध्य द्विनोत्तम ॥४४॥  
सप्तगुण्वाष्टवेदेन गतिर्भभोगभाजिता ॥ एव चद्रस्य विज्ञेया रीति स्पष्टतरा  
बुधे ॥४५॥

### भयात-भभोग साधन

यदि इष्ट अधिक और नक्षत्र कम हो तो-

इष्टमें से दिन नक्षत्र की घटीपल घटाने से 'भयात' होता है और दिन नक्षत्र की घटी पलको  
को ६० में से घटा कर वर्तमान नक्षत्र की अर्थात् अगले दिननक्षत्रकी घटी पर जोड़ने से  
भभोग होता है ॥४१॥

यदि इष्ट कम और नक्षत्र अधिक हो तो-

दिन नक्षत्र की घटी पल को ६० में घटा कर इष्ट में जोड़ने में भयात हाता है और  
इष्टवाचिक नक्षत्र की घटी-पल जोड़ने से भभोग होता है ॥४२॥

### चन्द्र स्पष्ट करना

'भयात' को ६० में गुणा करके 'भभोग' का भाग देकर जो अंक प्राप्त हो उसमें गत  
अश्विनी आदि नक्षत्र सख्या को ६० में गुणा कर जोड़े ॥४३॥ और अत्र इम गति को २ में  
गुणा कर ९ का भाग देने में (ऊपर के अंक में ३० का भाग देने पर) जो अंक प्राप्त होगा  
वह गति, अज, वना, विक्रान्तात्यक चन्द्रस्पष्ट होगा ॥४४॥

### चन्द्रमा की गति का स्पष्ट

चन्द्रगति स्पष्ट करने के लिये चन्द्रमा की मध्यम गति ४८००० में भभोग की सख्या का  
भाग देने में चन्द्रमा की इष्ट दिन की गति स्पष्ट होती है ॥४५॥

यह होगाम्भ्र मनुष्यों के शुभागुण पल का प्रदर्शक है। इस पन्नापत्र निर्णय के उपकरण  
यह स्पष्ट और भावस्पष्ट है, यह मिथ्या (करण) शक्तियों का विषय होने में इनके माधन की  
गति भगवान् पराशरजी ने नहीं कही है। तथापि पञ्चागमिद ग्रहस्पष्टों में इष्ट दिन और

ममय का चालन देकर ग्रह और भावस्पष्ट की रीति अन्य ग्रन्थों से लेकर आवश्यक प्रक्रिया मूल में ही सगृहीत कर दी गई है, तथा कुछ अन्य आवश्यक अपनाश आदि भी शेषकर्म से लिखे गये हैं। यद्यपि भारत में वेधसिद्ध पचागो का अभाव है, तथापि वर्तमान में 'जन्मभूमि, मदेश, विज्जुद्ध सिद्धान्त पञ्जिका, इण्डियन एफेमेरी, सरस्वती तथा काशी से निकलनेवाले अनेक पञ्चाग ऐसे उपलब्ध हैं, जिनमें दैनिक ग्रह स्पष्ट रहते हैं, उनसे केवल इष्ट मात्र का चालन देना होगा, यदि दैनिक स्पष्ट प्राप्त न हो तो साप्ताहिक पक्ति से चालन करके ग्रह स्पष्ट करना चाहिए। ग्रह स्पष्ट करने में दैनिक प्रातः कालिक या जिस इष्ट के ग्रह स्पष्ट हो उससे अथवा साप्ताहिक समीप की इष्ट से आगे या पीछे की पक्ति से उपर्युक्त नियमानुसार चालक करके तब इस चालक से ग्रह गति को गुणा करना चाहिए। इस गुणन में प्रायः चालक में घटी, पल अथवा दिन, घटी, पल, अक, सख्या रहती है, यह गुणक सख्या है, तथा ग्रह गति भी घटी पल ये दो सख्या रहती हैं। अतः भिन्न जातीय सख्या के गुणन में या तो एक जाति करके गुणन होता है, जिसमें अक पात बहुत होता है, अतः सरल रीति 'गोमूत्रिका' रीति है और यही प्रचलित भी है। इस रीति से 'गुणक' सख्या के अको को ऊपर कोष्ठको में क्रमशः रखा जाता है और ग्रह गति के घटी, पल जो कि 'गुण्य' है वे प्रत्येक अक के नीचे रखे जाते हैं। जैसे—

गुणक- चालक-	दिन	घटी	पल
	घटी	घटी	घटी
गुण्य- ग्रहगति	पल	पल	पल

इस प्रकार सन्निवेशित करके ऊपर के प्रत्येक गुणकाक से नीचे की घटी पल गुणित कर पल में ६० का भाग देकर अपने ऊपर की घटी सख्या में युक्त करें। पश्चात् गुणक पल गुणित गुण्य की घटी राशि को गुणक घटी के पलाक में युक्त कर ६० का भाग देकर ऊपर युक्त करके उसको भी गुणक दिनाक की पलसख्या में युक्त कर ६० का भाग देकर लब्ध सख्या को घटी सख्या में जोड़े, ६० से अधिक होने पर ६० का भाग देने से अशः स्थानी सख्या होती है। इस प्रकार आये हुए अशः, घटी, पल को पक्ति के ग्रहस्पष्ट में, 'चालक' ऋण हो तो घटावे और 'धन' हो तो जोड़े। वकी ग्रह में ऋण हो तो जोड़े और धन हो तो घटावे तथा राहु केतु में सदा विपरीत के ही समान करें तो इष्टकाल का ग्रह स्पष्ट होता है।

उदाहरण—

श्री स० २०१४ भाद्रपद वृष्णपक्ष ३ भौमवासरे दिने ९/१० (६० स्टे० टा०) समये (कलकत्ता नगरे) कस्तुरिज्जन्म । अक्षांश २२।३४ पलभा ४/५९ । अयनांश २३ । दिनमान ३२। ४०।। यद्वा 'सरस्वती' पञ्चाग में समीप की गत पक्ति थावण शुक्ल १५

शनिवार इष्ट २५/३४ है। प्रथम जन्मकाल का इष्ट हुआ— (दिने ९।१०+०।२३=९।३३  
 वेदान्तर = ०।५=९।२८ का घट्यादि इष्ट—) १०।०० इसमें पक्ति का इष्टकाल घटाया तो  
 २।४५।०२ दिनादि धन चालक प्राप्त हुआ। इस चालक से सूर्य गति ५।८।१२ को गोमूत्रिका  
 न्याय से गुणा किया तो २।४०।५ दिनादि फल प्राप्त हुआ। इसको पक्तिस्थ सूर्य  
 ४।२०।४८।१३ में युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ सूर्य स्पष्ट हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों  
 को स्पष्ट किया तो—म ४।२७।४५।३८ म० ३९।२६, बु० ४।२१।३४।४५ म० ९९।४८  
 वक्र वृ० ५।१३।२७।३६ म० १३।१८ शु० ६।१।५।८।३४ म० ७।१।२२ म० ७।१।५  
 ०।५।१२ म० २/४२ रा० ६।२०।०।५।१५ म० ३।१।१ ॥ अब चन्द्रस्पष्ट के लिए भोग्य  
 ६६।१ भयात् ३०।१ से उपर्युक्त रीति से प्राप्त स्पष्ट चन्द्र १०।२६।३०।३३ । म० ७२।७।५०  
 इस प्रकार ९ ग्रह स्पष्ट हुए—

सू०	च०	म०	बु०	शु०	गु०	म०	रा०	के०
४	१०	४	४	५	६	७	६	९
२३	२६	२७	२१	१३	१	१५	२०	२०
२८	३०	४५	३४	२७	५८	०५	०५	०५
१८	३३	३८	४५	३६	३४	१२	१५	१५
म०	म०	म०	म०	म०	म०	म०	म०	म०
५७	७२७	३९	९९	१३	७१	२	३	३
२२	५०	३६	४८	१८	२२	४२	११	११

### अथोच्चनीचग्रहा

अज्ञो द्यौः मृग कन्या कुतोरज्ञपतीतिका ॥ घूर्णविना क्रमावेतास्तुमसन्ना प्रकीर्तिता ॥  
 नीचास्तत्तप्तमा ज्ञेया ग्रहा नीचा विनिश्चिता ॥४६॥ सूर्यस्य भागे दशमे तृतीये चद्रस्य  
 जीवस्य तु पचमेऽज्ञे ॥ सौरस्य विशेषे त्वधिस्तप्त केतोर्विद्याद्मृगो पचदशे बुधस्य ॥४७॥  
 भौमस्य विशेषेऽष्टपुते परोच्चैर्विशल्लवे सूर्यसूतस्य नीचा ॥४८॥

### अथ मूलत्रिकोणमाह

विशतिरशा सिंहेत्रिकोणमपरेस्वभवतर्भक्तस्य ॥ उच्च भागत्रितय द्युमिदोः स्थात्रिकोणमप-  
 रेणा ॥४९॥ द्वादश भागा मेघे त्रिकोणमपरे स्वभे तु भौमस्य ॥ उच्चफल कन्याया बुधस्य  
 तिथ्यशा के सदा चित्तम् ॥५०॥ परतस्त्रिकोणजाते पवभिरदौस्वराशिज परत ॥  
 दशभिर्भागैर्जीवत्रिकोणफल स्वम पर चापे ॥५१॥ शुक्रस्य तु तिथयोऽज्ञास्त्रिकोणमपरे तुते  
 स्वराशिश्च ॥ कुम्भे त्रिकोणनिजभे रविजस्य रविर्ध्या सिंहे ॥५२॥

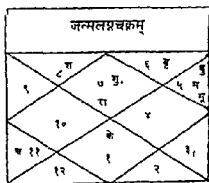
ग्रहों का 'उच्च' तथा 'नीच'

मृगादि ग्रहों की क्रम से मेघ वृष मकर कन्या, बर्क मीन तथा तुला में उच्चराशि है



वे भाव स्थित ग्रह परस्पर शत्रु होते है। तथा मित्र X मित्र=अतिमित्र । मित्र X सम=सम । सम X शत्रु= शत्रु। और शत्रु X शत्रु=अतिशत्रु, यह 'पञ्चधामैत्री' कही जाती है।।५७।।५८।।

निसर्गमैत्रीचक्रम्								तात्कालिकमैत्रीचक्रम्							
सु०	च०	म०	बु०	वृ०	शु०	श०	ग्रह		सू	च	म	बु	वृ	शु	श
व०	सू०	र०	र०	र०	सु०	सु०		मित्र	वृ	शु	श	वृ	वृ	श	श
म०		च०	च०	च०	श०	शु०	मित्र		श	०	०	श	शु	म	वृ
गु०	बु०	सु०	शु०	म०					०		श	शु	म	वृ	शु०
बु०	म०	गु०	म०		म०	०	सम	म	म	म	म	म	व	व	०
	गु०	श०	शु०	श०	शु०			शत्रु	व	वृ	वृ	वृ	०	०	०
शु०	०	बु०	च०	वृ०	र०	र०	शत्रु	मित्र	२,३,४,१०,११,१२						
श०				शु०	च०	म०		शत्रु	१,५,६,७,८,९,						



अथ पंचधामैत्रीचक्रम्							
सू०	च०	म०	कु०	वृ०	शु०	श०	ग्रह
वृ	०	वृ	शु	सू म	शु श	सु० शु	ऽति० मि०
०	श०	श शु	वृ श	०	म वृ सू	वृ	मि०
व श म शु	सु० सू	सू व	सू	वृ शु व	०	सू च म	सम०
वृ	म वृ शु	०	म	०	०	०	शत्रु
०	०	वृ	व	०	व	०	ऽति० शत्रु

अथ शुभफलचक्रम्						
उच्च०	मूल	स्व०	मित्र	सम	नीच	शत्रु
१	०	०	०	०	०	०
०	४५	३०	१५	७	०	०
०	०	०	०	३०	०	०
०	०	०	०	०	०	०

अथशुभफलचक्रम्						
उच्च०	मूल	स्व०	मित्र	सम	नीच	शत्रु
०	०	०	०	०	१	१
०	७	४५	३०	४५	०	०
०	३०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०

## अथ ग्रहाणां बलमाह

स्वीच्चे शुभं बलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम् ॥ स्वर्से दलं मित्रमेहे पादमात्रं प्रकीर्तितम् ॥५९॥  
पादार्यं समभे प्रोक्तं व्यर्थं नीचास्तशत्रुो ॥ तद्दृष्टवल ब्रूयाद्ब्रह्मचर्येण विचक्षणः ॥६०॥

## अथ धूमाद्यप्रकाशग्रहस्पष्टीकरणम्

लग्ने चन्द्रो वापि वशापुनर्नानाशनम् । इति धूमादिदोषाणां फल पचासनोदितम् ॥६१॥

### ग्रहो क्व बलपरिमाण

शुभग्रह च०, बु० पु० शु० का बल उच्चराशि का होने से पूर्ण तथा मूलत्रिकोण में तीनपाद और मित्रराशि में एकपाद, अपनी राशि में आधा समराशि में पादार्यतया नीच, अस्त और शत्रु राशि में बलशून्य होता है। इसी प्रकार पाप ग्रह इससे विपरीत बल पाते हैं ॥५९॥६०॥

### धूमादि अप्रकाशग्रह फल तथा स्पष्टीकरण

आगे कहे गये धूमादि अप्रकाशग्रह, लग्न अथवा चन्द्रमा के साथ हों तो वश, आयु और ज्ञान का नाश करते हैं। यह फल पूर्वकाल में ब्रह्मा ने कहा था ॥६१॥

चत्वारो राशयो भानौ युक्तभागात्प्रयोदश ॥ धूमो नाममहादोषः सर्वकर्मविनाशकः ॥६२॥  
धूमो मङ्गलतः शुद्धी व्यतीपातत्रे दोषदः ॥ स पदमेव व्यतीपाते परिवेषस्तु दोषकृत् ॥६३॥  
परिवेषश्च्युतश्चक्रादिद्रवापञ्च दोषदः ॥ अत्यष्टयंशयुते चापे केतुष्वेष्टः परो विपम् ॥६४॥  
एकराशियुते केतौ सूर्यः स्यात्पूर्ववत्समः ॥ अप्रकाशग्रहाश्चैते दोषाः पापग्रहाः स्मृताः ॥६५॥

### स्पष्टीकरण रीति

तात्कालिकस्पष्टसूर्य में ४।१३।२० जोड़ने में 'धूम' नाम का महादोष होता है, जो सब कार्य का नाश करने वाला है ॥६२॥ इस धूम को १२ राशि में वश राशि में 'व्यतीपात' दोष (नाम) होता है। इसमें ६ राशि योग करने में 'परिवेष' नामक दोष होता है ॥६३॥ परिवेष को १२ राशि में घटाने से 'इन्द्रचाप' नाम का दोष है। इन्द्रचाप में १६ अ० ४० क० योग करने में 'केतु' होता है ॥६४॥ केतु में १ राशि योग करने में पूर्वोक्त स्पष्टसूर्य के समान अंक होता है। इस प्रकार ये ५ अप्रकाश ग्रह स्पष्ट होते हैं ॥६५॥

### उदाहरण—(बाल्यनिबं)

जन्मवालीनसूर्यस्पष्ट २।४।०८।१ इममें ४।१३।००। योग किया तो 'धूम' ६।१७।४८।१ हुआ।  
१२ राशि में घटाया तो 'व्यतीपात' ५।१०।११।५९ हुआ। ६ राशि युक्त किया तो  
१।१।०।१।१।५९ यह 'परिवेष' हुआ, पुन १० में घटाया, १।७।४८।१ तो इन्द्रचाप हुआ,  
१६।४० योग किया तो 'केतु' १।४।०६।१ हुआ। इममें १ राशि युक्त की तो पूर्वोक्त  
०।४।०८।१ सूर्य हुआ वश

अप्रकाशिकक्षेपकाः स्युः					अप्रकाशिकग्रहाः स्पष्टाः स्युः						
धूमः	शनीयान	परिषेव	इन्द्रायु	ध्वज	धूम	व्यतापान	परिषेव	इन्द्रायु	ध्वज	गुनिक	प्राणपर
रा १४	१२	६	१२	०	६	५	११	०	१	५	३
मंग १३	०	०	०	१५	१७	१२	१२	१७	४	६	४
क २०	०	०	०	४०	४८	११	११	४८	२८	०	०
					१	५५	५५	१	१	०	०

### अथ जन्मकाले गुलिकसाधनमाह

रविवारादि शन्यत गुलिकादि निरूप्यते ॥६६॥ दिवसानष्टधा कृत्वा वारेशाद्गणपेत्क्रमात् ॥६७॥ अष्टमाशो निरीश स्याच्छन्यशो गुलिक स्मृत ॥ रात्रिरप्यष्टधा भक्ता वारेशात्पचमादित ॥६८॥ गणपेदष्टम खडो निष्पत्ति परिकीर्तित ॥ शन्यशे गुलिक प्रोक्तो गुर्वशे यमघटक ॥६९॥ भौमाशे मृत्युरादिष्टो रव्यशे कालसजक ॥ सौम्याशेऽर्द्धप्रहरक स्पष्टकर्मप्रदेशक ॥७०॥

### गुलिक साधन

रविवार आदि से शनिवार तक के गुलिक आदि योग कहते हैं। दिनमान में ८ का भाग देकर प्राप्त अष्टमाश को प्रथम भाग और द्विगुण द्वितीय भाग इसी प्रकार ८ भाग कल्पना करे और वार के स्वामी से क्रम से सातों ग्रहों के सात काल जाने। आठवा भाग निरीश अर्थात् अधिपति रहित होता है। इन भागों में शनि वा भाग गुलिक कहा जाता है। इसी प्रकार रात्रि के भी ८ भाग करके वारेण से पाँचवे ग्रह से आरंभ करके सातों ग्रहों के भाग समझे। आठवा भाग निरीश है। इन सातों भागों में शनि का भाग गुलिक है और गुरु का भाग यमघटक है। मंगल का भाग मृत्यु सजक है। सूर्य का भाग कालवेला और बुध वा भाग अर्धयाम होता है। ये योग अपने नामानुसार कर्म के निर्देशक हैं।

(श्लोक स० ६६ स ७० तक)

उदाहरण—शी० स० २०१४ भाद्र० कृ० ३ भौमे—दिनमान ३२।४ म ८ का भाग दिया लब्ध ४।५ यहा वारेण मंगल है अतः मंगल से गणना किया—तो प्रथम मंगल का सूर्योदय म ४।५ (घटी पल तक) मृत्युयोग । बाद ८।१० तक अर्धयामा बाद १२।१५ तक यमघटक इसके बाद शुक्र का भाग त्यागकर १६।२० से २०।२५ तक गुलिक योग है। इसमें गुलिकारंभ म दृष्ट १६।२१ पर पूर्वोक्त रीति से लग्नस्पष्ट करने से। ७।२१।४०।२० यह गुलिक लग्न स्पष्ट

गुलिकगुणकध्रुवांकाः स्युः							
रवि	शुक्र	मंगल	बुध	शुभ	शुक्र	शनि	ग्रहा
७	६	५	४	३	२	१	दिव्य
३	२	१	७	६	५	४	रात्रि

### गुलिक लग्न साधन

गुलिकारम्भसमयात् लग्न सप्ताधयेद् बुध । तत्त्वग्र च तत सर्व जातकस्य फल भवेत् ॥७१॥

दिन के ८ भागों में से 'गुलिक' भाग आरम्भ के इष्ट पर लग्न स्पष्ट करो। उसका नाम 'गुलिकलग्न' है। उससे आगे कहे अनुसार जातक का शुभाशुभ फल जाने ॥७१॥

### अथ प्राणपदसाधनमाह

घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्या १५ ज्ञेयं पर्लुता ॥ दिनकरेणापहत शेष प्राणपद स्मृतम् ॥७२॥  
 शेषात्पलाताद्द्विगुणीविधाय राश्यशसूर्यक्षितिपोजिताय ॥ तत्रापि तद्वाशिवरान् क्रमेण  
 तत्राशप्राणारापदैक्यता स्यात् ॥७३ पुन—स्वेष्टकालपत्नीकृत्य तिथ्यान्त भादिक च यत् ॥७४॥  
 चराणद्विभगे भाने भानी युद्धनमवे सुते ॥ स्फुट प्राणपद तस्मात्पूर्ववज्जोधयेत्तनु ॥७५॥

इति श्री बृ० प० होरासाराशे पूर्वखण्डे ग्रह-गुण-स्वरूपादिकवचनो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

### प्राणपदसंसाधन

जन्म इष्ट घटी को ४ से गुणा करके पृथक् स्थापन करे तथा पल यदि १५ में अधिक हो तो १५ का भाग देकर तत्र चतुर्गुणित घटी में योग करे, यह राशि है अतः १० से अधिक हो तो १० का भाग देकर शेष अंक ले। अथवा इष्ट घटी पल को पलात्मक (घटी को ६० से गुण कर पलात्मक योग) करे, १५ का भाग दे, तत्र अंक राशि और शेष को द्विगुणित करे, यह अंक है। अब इस अंक को सूर्य, चर राशि में हो तो राशि आदि में योग करे और स्थिर राशि में सूर्य हो तो राशि में ८ जोड़कर एवं द्विस्वभाव राशि में सूर्य हो तो ४ जोड़कर पूर्वोक्त राशि अंक का योग करे तो शुद्ध 'प्राणपद लग्न' स्पष्ट होता है। इसका फलाफल आगे ६७ अध्याय के अन्त में कहा गया है ॥श्लो० ७० में ७५ तक॥

### प्राणपदलग्न का उदाहरण-

इष्ट ६।४३ सूर्यस्पष्ट २।२।१।२७ है।

यहा पर इष्ट घटी ६ को ४ से गुणा लिया तो २४ हुआ, इसको अलग रखा तथा पल ४३

में १५ का भाग दिया तो २ लब्ध हुआ, इसको पूर्व प्राप्त २४ में युक्त किया तो २६ हुआ, शेष १३ को ६० से गुणा करके ३० का भाग देने से अथवा पलाक १३ को द्विगुण करने से २६ अंश प्राप्त हुआ तो २६।२६ हुआ, राशि में १२ का भाग दिया तो २।२६ हुआ। यहाँ सूर्य द्विस्वभाव राशि में है अतः २।२६ में ४ राशि जोड़ा तो ६।२६ हुआ, इसको स्पष्टसूर्य २।३।१२७ में जोड़ने से ८।२९।१।२७ यह प्राणपद लग्नस्पष्ट हुआ।

इति श्री० बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया ग्रहगुणस्वरूपादिकथन  
नाम द्वितीयोऽध्याय ॥२॥

### अथ इष्टशोधनमाह

पराशर उवाच—यदेतज्जन्मलग्न वै तन्निपेकस्य चन्द्रमा ॥ जन्मचन्द्रस्य राश्यादि तल्लग्न वै  
निपेकजम् ॥१॥ इति सिद्धविज्ञानीयात्पथा शभुप्रणोदितम् । जन्मलग्नस्य घटिका भक्ता वसुशतै-  
रिह ॥२॥ लब्धमाधानगतमजन्मपूर्वकमासकम् । शिष्टा सख्या तु विप्रेन्द्र खरसघ्ना तु भाजिता  
॥३॥ खगून्य वसुभिश्चैव आधानसमकालभम् । यस्मिन् काले भभुक्त तत् मध्यमेष्ट तदेव हि ॥  
तस्मात् प्रसाधयेत् सूर्यं भोग्यकाल ततो नयेत् । जन्मचन्द्रस्य भुक्त वै कालमानीय यत्नत ॥  
जन्मकालीन चन्द्रस्तु गर्भलग्न विदुर्बुधा । तत्सर्वं साधयेद्धीमान् साधनाच्चन्द्र सूर्यभात् ॥

पराशरजी ने कहा—जो यह जन्मलग्न है उसी के समान गर्भाधान समय का चन्द्र स्पष्ट होता है। इसी प्रकार जन्म समय का जो चन्द्रस्पष्ट है उसीके आसन्न (आसपास) आधानकाल के लग्न का राशि अंश होता है। ऐसा इष्टशोधन में स्वपसिद्ध नियम है यह भगवान् शंकर ने कहा है। राश्यादि जन्मलग्न को घटघात्मक करके ८०० आठ सौ का भाग देने से लब्ध सख्या गर्भाधान के गतनक्षत्र की होती है शेष को भी ६० से गुणा कर ८०० का भाग देने से आधान काल के वर्तमान नक्षत्र का भयात होता है और इसकी जन्म से नौ मास पूर्व देखना चाहिए वह भयात जिस दिन जिस इष्ट में प्राप्त हो वह आधान काल का मध्यम इष्ट है। उस मध्यम इष्ट पर सूर्यस्पष्ट करके उसका (सूर्य का) भोग्य काल लेना और जन्मकालीन चन्द्रस्पष्ट का भुक्तकाल लेना। जन्मकाल का चन्द्रस्पष्ट ही आधानकाल का लग्नस्पष्ट है यह होरा शास्त्रज्ञों ने कहा है चन्द्र तथा सूर्य स्पष्ट से होने वाली सब क्रिया अयनाश युक्त करके सावधानता से गणित करनी।

भोग्य भुक्त सुतेयोज्य मध्योदयसमन्वितम् । खरसाप्त तत कुर्यात् निपेकेष्ट सुमध्यमम् ॥  
लग्नस्पष्ट तत कुर्यात् सुविचार्य तपोधन । अस्य लग्नस्य राश्यादि जन्मेन्दोश्च तथैव च ॥  
मेधेय । सुमहाप्राज्ञ । समासप्रगत भवेत् । एतयोरन्तर कार्य लग्नोदय हत तथा ॥ अष्टादश  
शतेनान्त फल घटघादि जायते गर्भलग्ने जन्मचन्द्रात् अल्पे चैवाधिके तथा ॥ पूर्वागत धनर्ण  
स्यात् घटघातेव निपेकजे । मध्येष्टे तु, तत्तत्रन्द स त्याज्जन्मोदयामित ॥ अस्य चन्द्रस्य  
भुक्तश्च जन्मसूर्यस्य भोग्यकम् । योज्य मध्योदयैश्चैव जननेष्ट स्फुट भवेत् ॥

## पूर्वकाण्डे तृतीयोऽध्यायः

इस प्रकार सूर्य का भोग्यकाल तथा चन्द्रमा का भुक्तकाल जोड़ना और उसमें मध्यगत राशियों के उदय पल जोड़ना, इस सख्या में ६० का भाग देना तो आधान काल का मध्यम इष्ट होता है। हे तपोधन! इस इष्ट से लग्नस्पष्ट करना तो इस स्पष्ट किये हुए लग्न की राशि यदि तथा जन्मकाल के चन्द्रमा की राश्यादि परस्पर आसपास होंगी। इस आधान लग्न और जन्मचन्द्र की राश्यादि का परस्पर अन्तर करे और उस अन्तर को लग्न के स्वोदय से गुणा करके १८०० अठारह सौ का भाग दे, जो लब्ध हो वह घट्यादि अक होगा।

जन्मकाल के चन्द्रस्पष्ट से आधानकाल का लग्नस्पष्ट कम हो अथवा अधिक हो, तो यह आया हुआ घट्यादि, आधानकाल के मध्यम इष्ट में क्रमशः घन या ऋण करना, पश्चात् उससे चन्द्रस्पष्ट करना, तो यह चन्द्रस्पष्ट जन्मकाल के लग्न स्पष्ट के आसन्न (आसपास) होगा। बाद इस आधान चन्द्र का भुक्तकाल और जन्मकाल के सूर्यस्पष्ट का भोग्यकाल युक्त करना और इन दोनों के मध्य की राशियों के पलात्मक माग युक्त करना, ६० का भाग देना तो जन्म काल मध्यम 'इष्ट' होता है।

चन्द्रमाधानलग्नन्तु कल्पयित्वा ततो द्विज । जननार्कस्य भोग्यश्च भुक्तमेतस्य योजयेत् ।  
मध्योदया सुतपोज्या हरसान्त सुनिश्चेत् । इष्टमेतत् मध्यमन्तु तस्माल्लग्न मुसाधयेत् ।  
लग्न चन्द्रमसश्चैव साध्य वै द्विजसतम् । आधानचन्द्रस्पष्टञ्च जन्मलग्नसम भवेत् ।  
एव ससाधनीयश्च गर्भजन्मभव फलम् । यावत् साम्य भवेदेतत् तावत् कुर्यात् अतन्द्रित ।  
इष्टशोधन मेतत्तु यथा शम्भुप्रणोदितम् । साधारण सुसप्रोक्त ज्ञेय विस्तर मन्यत ।

इसी को पुन स्पष्ट करते हैं कि चन्द्रमा को आधान लग्न कल्पना करे तथा जन्म कालिक सूर्य के भोग्य काल में कल्पित लग्न का भुक्तकाल युक्त करे और मध्य के 'उदयकाल' युक्त करे। ६० का भाग दे तो मध्यम जन्मेष्टकाल होता है। इस मध्यम जन्म इष्ट से लग्न तथा चन्द्र स्पष्ट करे।

एन चन्द्रमत चैव आधानोदयकल्पनम् । तद्भुक्तकालमादाय आधानेनस्य भोग्यकम् । योज्य  
मध्योदयश्चैव पष्टिभक्तन्तयैवा च । आधानकालीनमिष्ट स्यात्तस्माल्लग्नप्रमातयेत् । तत्लग्नस्य तु  
राश्यादि जन्म चन्द्रसम भवेत् । एव निपेकचन्द्रस्य जन्मलग्न सम भवेत् ।  
निपेकलग्नराश्यादि जन्मचन्द्रमतस्यता । अनयोर्न्तर कार्यं तेन घट्यादि साधयेत् । तेन  
सचासयेच्चैव जन्मेन्दु गर्भलग्नकम् । तथैव जन्मलग्नस्य गर्भचन्द्रमसस्तया । अन्तरेण चासयेच्च लग्न  
चन्द्र तथैव हि । एव मुहुर्मुहुः कार्यं यावन समता बजेत् । इष्टशोधनकः चेत्तत् भाषित शम्भुना पुरा।

इन जन्मकालीन स्पष्टचन्द्र को 'आधानलग्न मानपर भुक्तकाल स्पष्ट करे, तथा आधान कालीन सूर्य का भोग्यकाल स्पष्ट करे। इन दोनों का योग करे तथा इसमें मध्य के उदयकाल युक्त करे। ६० का भाग दे तो आधानकाल का इष्ट होता है, पश्चात् इससे लग्नस्पष्ट करे तो इस लग्न के राश्यादि तथा जन्मचन्द्र के राश्यादि ममान होते हैं। इसी प्रकार आधान चन्द्र

और जन्मलग्न के राश्यादि समान होते हैं। आधान लग्न के राश्यादि तथा जन्म चन्द्र के राश्यादिका (विशेष अन्तर हो तो) परस्पर अन्तर करे, उस अन्तर की घटघादि करे, उस घटघादि से जन्मचन्द्र और आधान लग्न को चालित करे, इसी प्रकार जन्मलग्न और गर्भचन्द्र के अन्तर की घटी पल से जन्मलग्न और गर्भचालित करे। जब तक पूर्वोक्त प्रकार से परस्पर राश्यादि समान न हों। यह 'इष्टशोधन' प्रक्रिया भगवान् शशु ने वर्णन की है। समान होने पर इष्ट शुद्ध जाने।

### इष्टशोधन के मुख्य नियम

स्वयं सिद्ध—जन्मलग्न के समान आधानचन्द्र तथा जन्मचन्द्र के समान आधानलग्न ।

१—जन्मलग्न को घटघात्मक करके ८०० का भाग दे, लब्धगत 'नद्यत्र' हैं। और शेष को ६० से गुणा कर ८०० का भाग देने पर भयात् होता है।

२—आगत भयात् ९ मास पूर्व जिस दिन, जिस इष्ट पर मिले वह आधानकाल (मध्यम इष्ट) होता है।

३—इस इष्ट पर सूर्यस्पष्ट करके, इसका भोग्यकाल और जन्मचन्द्र स्पष्ट का भुक्त काल मध्य राशियो के उदय सहित करने से आधान काल का गणितागत मध्यम इष्ट होता है।

४—इस इष्ट पर लग्न स्पष्ट करना । इस लग्न जन्मचन्द्र की राश्यादि आसन्न (आसपास) होगी।

५—आधानलग्न और जन्म चन्द्र की राश्यादि के अन्तर को स्वोदय से गुणा करके १८०० का भाग दे, लब्ध घटघादि अक को जन्मचन्द्र से आधानलग्न कम हो तो मध्यम इष्ट में जोड़े एवं अधिक हो तो घटावे ।

६—उस मध्यम इष्ट से चन्द्रस्पष्ट करे तो वह जन्मलग्न के आसन्न होगा।

७—बाद आधान चन्द्र का भुक्तकाल और जन्मसूर्य का भोग्यकाल तथा मध्योदय (बीच की राशियो के उदय) सहित (सब का योग) में ६० का भाग देने से जन्म समय का मध्यम इष्टकाल होता है।

८—इस मध्यम जन्म इष्ट से लग्न तथा चन्द्रस्पष्ट करे।

९—इस चन्द्र का भुक्तकाल तथा आधानसूर्य का भोग्यकाल मध्योदयो सहित, आधान कालिक इष्ट होता है।

१०—इस इष्ट से लग्नस्पष्ट करे तो वह जन्मचन्द्र के समान होता है।

११—यदि इस लग्नस्पष्ट के राश्यादि और जन्मचन्द्र के राश्यादि में विशेष अन्तर हो तो, उनका अन्तर करके, अन्तर की घटघादि से जन्मचन्द्र और आधान लग्न को चालित करे तथा आधान चन्द्र और जन्म लग्न में यही रास्कार करे, जब तक कि राश्यादि में समानता न हो, तब तक करे। समान होने पर इष्ट शुद्ध हुआ जाने।

### इष्टशोधन का उदाहरण

श्रीशुभसम्बत् २०१८ द्वितीय ज्येष्ठ शुदी ५ रविवार प्रात ७।२५ (इ० स्टे० टा०) काल में कलकत्ता में जन्म हुआ, (कल० स्टे० टा० ७।४८ कल० मेन टाइम ७।४९) मध्यम समय



## पूर्वखण्डे तृतीयोऽध्यायः

७।४८ स्पष्ट घटात्मक समय ७।४९ घट्यादि 'इष्ट' ६।४३ लग्नस्पष्ट ३।९।१०।०५ सूर्यस्पष्ट २।३।९।२७ चन्द्रस्पष्ट ३।२७।४२।१० यह है। अब 'इष्टशोधन' के लिये उपर्युक्त क्रिया के अनुसार लग्न ३।९।१०।५ इसकी घटी ५९५० में ८०० का भाग दिया तो लब्धाक ७ यह गत नक्षत्र सख्या प्राप्त हुई, अतः पुनर्वसु, नक्षत्र गत हुआ। शेष ३५० को ६० से गुणा करके ८०० का भाग दिया तो पुष्य नक्षत्र की भुक्त घट्यादि २।८।१५ प्राप्त हुई। इस पर आधान काल ९ मास पूर्व का प्राप्त हुआ—श्री म २०।१७ आश्विन कृ० ११ शुक्रवार । इष्ट २६।०।१ अयनाश २३।० सूर्य स्पष्ट ४।२९।४७।५४ तथा चन्द्रस्पष्ट ३।८।५४।२६ अब आधान काल का सायन सूर्य ५।२२।४७।५४ को लेकर, उसके भोग्य अशादि को कन्या के कलकत्ता के उदय पल ३२९ से गुणा करके ६० का भाग दिया तो लब्ध भोग्यकाल ८६।१५ प्राप्त हुआ। और सायन जन्मचन्द्र ४।२०।४२।१० को लग्न कल्पना करके: "अर्कभोग्यस्तनोभुक्तकालान्वितो भुक्तमध्योदयोभीष्टकालो भवेत्" (ग्रहलाघव) की रीति के भुक्तकाल साधन किया तो १३५।८ हुआ, ये दोनो युक्त किये, तथा इसमें कलकत्ता के (मध्य के) लग्नमान तुला से ३२९।३३९।३३९।३०५।२५९।२२९।२२९।२५९।३०५।३३९ इन सबका योग किया तो ३२५।३।२३ हुआ। इसमें ६० का भाग दिया तो ५४।१३ यह गर्भाधान का मध्यम इष्टकाल हुआ। इस इष्ट पर सूर्यस्पष्ट ५।००।१५।२४ हुआ। इसको सायन किया तो ५।२३।१५।२४ इस सायन सूर्य से "तकालार्कः सायनः स्वोदयघ्नाः ०" इत्यादि ग्रहलाघवोक्त रीति से लग्नस्पष्ट किया तो ३।२६।४०।०० हुआ। इसके राश्यादि, जन्मकालीन चन्द्र के राश्यादि के वासत्र (आसपास) है। अतः इनके अन्तर १।२ को बर्क के स्वोदय ३३९ से गुणा किया ३५०।१८ हुआ। इसमें '१८००' का भाग दिया तो लब्ध ११।५६। हुआ। यह अब घटी आदि है। यहा जन्मचन्द्र से निपेकलग्न अधिक है तो निपेक के मध्यम इष्ट में हीन किया तो ४२।१७ यह मध्यम निपेक इष्ट हुआ। इससे चन्द्रस्पष्ट किया तो ३।१२।१२।४० हुआ। इसका भुक्तकाल ५७ हुआ। जन्मकालिक सूर्य का भोग्यकाल २६४ पल, इन दोनो का योग किया तो ३२१ हुआ। ६० का भाग देने से ६।२१ यह जन्म कालिक इष्ट (शुद्ध) हुआ। इससे सूर्यस्पष्ट २।३।९।७ परमासत्र है, इससे लग्नस्पष्ट किया तो ३।८।१।५ हुआ और चन्द्रस्पष्ट ३।२७।३८।०५ इसको आधान लग्न मान कर अयनाश युक्त करके 'भुक्तकाल' और आधान कालिक सूर्य का भोग्यकाल मध्योदय सहित करने पर परमासत्र अक प्राप्त होते हैं। यहा पर जन्म लग्न और आधान चन्द्र तथा आधानलग्न और जन्मचन्द्र के अशादि परस्पर आसत्र है। और प्राप्त जन्मेष्ट काल भी परमासत्र है। अतः जन्म-इष्ट शुद्ध है, इसके सूर्यादि स्पष्ट—

## जन्मकालिक—

इष्ट	सूर्य	सायन	चन्द्र	सायन	लग्न	सायन
६	२	२	३	४	३	४
४३	३	२६	२७	२०	९	५
०	९	९	४२	४२	१०	१०
०	२७	२७	१०	१०	००	००

पणित्तागत भेद  
पणित्तोदाहरण में देखें।

आधानकालिक-

इष्ट	सूर्य	सायन	शुक्र	सायन	लग्न	} यज्ञितागत भेद उदाहरण में बेटों।
३६	४	५	३	४	९	
०१	२९	२२	८	१	२६	
०	४९	४९	५४	५४	०	
०	५४	५४	२६	२६	०	

उपर्युक्त उदाहरण तथा विवरण निदर्शन मात्र दिखान्या है इसमें सूर्य शुक्र लग्न स्पष्टीकरण में गणित का जटिल भाग छोड़ दिया है कारण नि-वह करण ग्रह का विषय है इस स्थान में उसका विषय उपयोग नहीं है। महा पर मूलग्रह में पाराशरी का इष्टशोधन अथ छपने के समय छूट गया था उसी की खोज करने तथा अथ हस्तलिपियों से मिलान करके इस बार समुक्त किया जा रहा है। जो किसी महानुभाव ने (काशी में मुद्रित) यह कहा है कि 'इष्टशोधन' नाम की कोई वस्तु ही ज्योतिष शास्त्र में नहीं है हम उनका आभार मानते हैं कि जिसके कारण छिपी हुई वस्तु भी खोज हुई है और वह वस्तु सर्वसाधारण के सम्मुख आई।

पराशर उवाच

सेषो वृषश्च मियुन कर्कसिंहकुमारिका ॥ तुलातिथ्यनुषो नक्षे कुम्भमीनास्तत परा ॥१॥  
 अहोरात्राद्यतलोपाद्धोरेति प्रोच्यते बुधे । तस्य हि ज्ञानमात्रेण जातकर्मफल वदेत् ॥२॥  
 पदव्यक्तात्मको विष्णुः कालरूपो जनार्दन ॥ तस्यागानि निबोध त्व क्रमान्मेपादिराशय ॥३॥  
 शीर्षाननी तथा बाहू हृत्कोडकटिबस्तय ॥ गुह्योरप्युगले जानुयुग्मे च जघके तथा ॥४॥  
 चरणौ द्वौ तथा लग्नात् शेषा शीर्षादिय क्रमात् ॥ चरन्धिरद्विस्वभावा कूराकूरी नरस्त्रियौ ॥५॥  
 पितानिलत्रिधात्वैक्य भ्रूमिकाश्च क्रियादयः ॥ रक्तवर्णो बृहद् गात्रश्रतुप्याद्रात्रिविक्रमी ॥६॥  
 पूर्ववासी नृपजाति शैलचारी रजोगुणी ॥ पृष्ठोदयी पावको च मेघराशि क्रुजाधिप ॥७॥  
 श्वेत शुकाधिपो दीर्घश्रतुष्याच्छर्वरीबली ॥ याम्येत् ग्राम्यो वणिग्भूमि रजो पृष्ठोदयो वृष ॥८॥

राशियों के स्वरूप

पराशरजी ने कहा-मेघ वृष मियुन कर्क सिंह बन्धा तुला वृश्चिक धनु मकर कुम्भ तथा मीन ये १२ राशिया हैं॥१॥ अहोरात्र शब्द के आदि अकार और अन्त के व सुप्त होने से होरा शब्द बना है अत एतद्विषयक शास्त्र के ज्ञान ज्ञान से मनुष्य के कर्म का फल कहा जा सकता है॥२॥ अव्यक्त ब्रह्म का एकपादरूप जो व्यक्त स्वरूपात्मन भगवान विष्णु है वही अहोरात्र समय के स्वरूप होने से जनार्दन कालरूप है और उन्हीं के अग्र-य मेघ आदि १२ राशिया हैं॥३॥ य मेपादि द्वादश राशिया ही मनुष्य के जन्मलग्न में विषय प्रवार जानना। जन्मलग्न शिर द्वितीय भाग मुख तृतीय बाहू इसी प्रकार हृदय छाती कटिभाग वस्ति (पेट-पेट का निम्नभाग गुह्यभाग ऊपर की आधी जघाद्वय बाकी आधी जघाद्वय जानुयुगल (गांड=पुटन) तथा चरण (पैर) है। और १२ राशिया क्रम में चरन्धिर द्विस्वभाव (तीन बन्धाओं को चार बार आवृत्ति) है। तथा विषय राशिया क्रूर और मम राशिया मौम्य हैं। एवं विषय राशिया पुन्य और मम राशि स्त्री ममक है॥४॥५॥ तथा पित्त वायु रक्त और श्रे तीव्र बार आवृत्ति करने से एकत्रि राशिया (अथ एक-एक राशि का

पूर्वखण्डे तृतीयोऽध्यायः

पूरा स्वरूप विस्तार से कहते हैं) मेघ राशि का रक्त वर्ण, लम्बा शरीर, चार पैरवाला, रात्रि में बलवान्, पूर्व दिशा का वासी, क्षत्रिय जाति, पर्वतचारी, रजोगुणी, पृष्ठोदयी, अग्नि तत्व है, तथा मंगल इसका स्वामी है ॥६॥७॥ वृष राशि—श्वेत वर्ण शुक्रग्रह स्वामी, लम्बा कद, चतुष्पाद, रात्रिबली, दक्षिणदिशा का स्वामी, ग्रामवासी, वैश्य जाति, भूमिचारी, रजोगुणी, और पृष्ठोदयी ॥८॥

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम् ॥ प्रत्यक्षमी द्विपाद्रात्रिबली ग्राम्यो घनोऽनिली ॥९॥ समगात्रो हरिद्वर्णो मियुनास्थो बुधाधिपः ॥ पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान् ॥१०॥ बहुपदुतरः स्थूलतनुः सत्त्वगुणी जलो ॥ पृष्ठोदयी कर्कराशिर्भृंगोकाशधि-पतिःस्मृतः ॥११॥ सिंहः सूर्याधिपः सत्वी चतुष्पात्क्षत्रियो बली ॥ शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पांडुः पूर्वोद्दुवीर्यवान् ॥१२॥ पार्वतीयाय कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता ॥ शीर्षोदया च मध्यांगा द्विपाद्याम्यचरा च सा ॥१३॥ सा सस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रमंजिनी ॥ कुमारी तमसा पुक्ता बालभावा बुधाधिपः ॥१४॥ शीर्षोदयी द्युवीर्याद्विस्तया कृष्णो रजोगुणी ॥ पंचमोद्भूचरो घाती शूद्रो मध्यतनुर्द्विपात् ॥१५॥ शुक्रोऽधिपोऽय स्वल्पागो बहुपाद्ब्राह्मणो बली ॥ सौम्यस्थो दिनवीर्याद्विचः पिशगो जलमूवहः ॥१६॥ रोमस्वाड्योऽतितोऽक्षांगो वृश्चिकश्च कुजाधिपः ॥ पृष्ठोदयो त्वय धनुर्गुहस्वामी च सात्त्विकः ॥१७॥ पिंगलो निशिबीर्याद्विचः पावकः क्षत्रियो द्विपात् ॥ आदावन्ते चतुष्पादः समगात्रो धनुर्धरः ॥१८॥

मियुन—शीर्षोदय, स्त्रीपुरुष युग, रूप, पुरुष के हाथ में गदा और स्त्री के हाथ में घोणा है, पश्चिम दिशा का स्वामी, दो पैरवाला, रात्रिबली, ग्रामवासी, समूहचारी, वायुप्रकृति ॥९॥ समगात्र, (मझोला कद) हरा रंग तथा बुधग्रह का स्वामी है। कर्क—पाटल रंग, वनचारी, ब्राह्मण वर्ण, रात्रिबली, बहुपाद, स्थूलशरीर, सत्त्वगुणी, जलचारी, पृष्ठोदयी और चन्द्रमा स्वामी है ॥११॥ सिंह—राशि का सूर्य स्वामी है, सत्त्वगुणी, चतुष्पाद, क्षत्रिय जाति, बलशाली, शीर्षोदयी, भारी शरीरवाला, पाण्डु वर्ण, पूर्वदिशा का स्वामी तथा दिन में बली है ॥१२॥ कन्याराशि—पर्वतचारी, दिनबली, शीर्षोदयी, सम शरीर, दो पैरवाली दक्षिण दिशा ॥१३॥ सस्य—अन्न और अग्नि रखनेवाली, वैश्य वर्ण, चित्र विचित्र रंग, वायु तत्व, कुमार अवस्था, तनोगुणी, बाल्य स्वभाव तथा बुध स्वामी है ॥१४॥ तुलाराशि—शीर्षोदयी, दिनबली, कृष्णवर्ण, रजोगुणी, पृथ्वीचारी, हानिकारी स्वभाव, शूद्र वर्ण, दोपाया तथा शुक्रस्वामी, कद मझोला है ॥१५॥ वृश्चिकराशि—स्वल्प अगवाला, बहुपाद, ब्राह्मण वर्ण बलपुक्त तथा उत्तर दिशाचारी, दिन बली, पिशग (हलका पीला), वर्ण, जल तथा पृथ्वीचारी, रोमपुक्त, तीक्ष्ण अगवाला तथा मंगल ग्रह दमका स्वामी है ॥ धनु राशि—पृष्ठोदशी, सत्त्वगुणी, पिंगल वर्ण, रात्रि बली, अग्नि तत्व क्षत्रिय वर्ण, पूर्वार्द्ध में दो पैरवाला, उत्तरार्द्ध में चार पैरवाला, समान शरीर धनुषधारी ॥१८॥

पूर्वस्थो वमुधाचारी तेजस्वान्पृच्छतादृगमा ॥ मदाधिपस्तमी मौमी घाम्येद् च निशि वीर्यवान् ॥१९॥ पृष्ठोदयी बृहद्गात्रः कर्कुरो वनमूचरः ॥ आदो चतुष्पादते तु विपदो जतगो मतः

॥२०॥ कुम्भः कुम्भो नरो बभ्रुर्वर्षमध्यतनुर्द्विपात् ॥ द्युधीर्यो जलमध्यस्यो वातशीर्षोदयी तमः  
 ॥२१॥ शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी देवाकरिः स्मृतः ॥ मीनी पुच्छास्यसलप्रौ मीनराशिर्द्विवा  
 बली ॥२२॥ जलो सत्वगुणाढ्यश्च स्वस्यो जलचरो द्विजः ॥ अपदो मध्यदेही च सौम्यस्यो  
 ह्यभयोदयी ॥२३॥ सुराचार्याधिपश्चास्य राशीनां गवितं मया ॥ त्रिंशद्गुणात्मकः  
 स्थूलसूक्ष्माकरफलाय च ॥२४॥

पूर्वदिशा का स्वामी पृथ्वीचारी, तेजस्वी तथा बृहस्पति इराका स्वामी है। मकर राशि—इस राशि का शनि स्वामी है, तमोगुणी, पृथ्वीचारी, दक्षिण का स्वामी, रात्रिबली, पृष्ठोदयी, भारी शरीर, विचित्र वर्ण, वनचारी, पूर्वार्द्ध चतुष्पाद तथा उत्तरार्द्ध विपद, जलचारी है। २०। कुम्भराशि—रिक्तघटधारी पुरा, यधु वर्ण, मध्यम शरीर, दो पैरवाला दिन में बली, जलचारी, वात प्रकृति, शीर्षोदयी तथा तमोगुणी है। २१। शूद्र वर्ण, शनि स्वामी, पश्चिम दिशा का स्वामी है। मीनराशि दो मछली परस्पर मुख पुच्छ संयुक्त स्वरूप, दिन में बली, जलचारी, सत्वगुणी, पुष्ट शरीर, जल तत्व, ब्राह्मण वर्ण, पदहीन, मध्यम शरीर, उत्तरदिशा का स्वामी उभयोदयी तथा बृहस्पति स्वामी है। इस प्रकार ये चारही राशियों के स्वरूप कहे। भगण के ३६० अंश में से प्रत्येक राशि के ३०-३० अंश है। स्थूल और सूक्ष्म फल विचार इसका प्रयोजन है। २४॥

अथातः सप्रवक्ष्यामि शृणुष्व मुनिपुंगव ॥ जन्मलग्न च सशोध्य निपेक परिशोधयेत् ॥२५॥  
 तदहं सप्रवक्ष्यामि मैत्रेय त्व विद्यारय ॥ जन्मलग्नात् परिज्ञान निपेक सर्वजतु यत् ॥२६॥  
 यस्मिन् भावे स्थितोमन्दस्तस्य मादेर्यदतरम् ॥ सप्रभाग्यातर योज्य यच्च राश्यादि जायते  
 ॥२७॥ मासादिस्तन्मित ज्ञेय जन्मतः प्राक् निपेकजम् ॥ यद्यद्दृश्यदतेगेशस्तदेवोर्भुक्तभाग-  
 युक् ॥२८॥ तत्काले साधयेत्लग्न शोधयेत्पूर्ववत्तनु ॥ तस्माच्छुभाशुभ वाच्य गर्भस्थस्य विशेषतः  
 ॥२९॥ शुभाशुभ वदेत् पित्रोर्जीवन मरण तथा ॥ एव निपेकलग्नेन तस्यैव ज्ञेय स्वकल्पनात्  
 ॥३०॥

### निपेक लग्नज्ञान

हे मैत्रेय! स्पष्ट जन्मलग्न के बाद निपेक—गर्भाधर लग्न की विधि यही जाती है। जिस भाव में शनि हो उस भाव और मान्दी का अन्तर करे, इसमें लग्न तथा नवम् भाव के अन्तर को जोड़े। योगफल के अनुसार जन्मलग्न से पूर्व उतने ही भासादि जानना यदि लग्नेश लग्न से पूर्व ६ राशि में हो तो चन्द्रमा के भुक्त अशादि और जोड़ना चाहिये। योग फल में ब्रह्मण मास, दिन, घटी, पल जन्म समय से पूर्व मानकर, घटी पल में लग्नग्राह्य करे और उसमें गर्भाधर्या वा शुभाशुभ तथा माता पिता वा शुभाशुभ फल कहना चाहिये। २५-३०॥

### निपेक लग्न का उदाहरण—

शनिस्थित भाव ७।१५।०५।१२ तथा मान्दी ७।२१।४०।२० इनका अन्तर किया तो ००।६।५।८ प्राप्त हुआ। इसको लग्नग्राह्य ६।१६।१७।१९ तथा भाग्यभाव स्पष्ट

पूर्वखण्डे तृतीयोऽध्यायः

२।१४।५।१२३ इनका अनन्तर ७।२८।३४।४ मे युक्त किया तो ८।४।३९।१२ हुआ। यहा शुक्र अदृश्य दल मे है, अत चन्द्रमा के भुक्ताश २६।३०।३३ और युक्त किया तो ९।००।०९।४५ यह मारादि इष्ट प्राप्त हुआ। अर्थात् जन्म से ९ मास ० दिन पूर्व ९।४५ इष्ट हुआ, इससे लग्न स्पष्ट किया तो ८।२८।५०।३०, यह आधानलग्न (निवेक) सिद्ध हुआ। अर्थात् स० २०१३ मागशीर्ष कृ० प० मे समझना।

अयनांशसाधनरीति

ग्रहलाघव से 'विदाऽव्यब्धयः खरसहस्रैः शकौऽयनांशाः।' इष्ट शक मे ४४४ घटाकर ६० का भाग दे, लब्धि अश तथा शेष घटी ही 'अयनाश' होते हैं। इसमे सूर्य की प्रति भुक्त राशि ५ पल जोडना।

उदाहरण-शक '१८८३' इसमे ४४४ घटाया तो १४३९ हुआ। ६० का २३ अश और शेष ५९ घटी। यह अयनाश हुआ। विशेष

विक्रम सवत्सर मे १३५ घटाने से 'शक सम्बत्' होता है, शक स० मे ७८ जोडने से 'ईसवी सन्' होता है, ईसवी सन् मे ५८३ घटाने से 'हिजरी सन्' तथा इसमे १ घटाने से 'बंगला सन्' होता है।)

भकरन्धीय अयनांश साधन

भूनयनान्धिरहितः शकः स्वीयदृशांशपुक् ॥ खांगैर्मत्तस्तया त्रिघ्न सार्द्धं सूर्यं पलेषु च ।

इष्ट शक मे ४२१ कम करना, शेष को दो स्थान मे रसकर एक स्थान मे १० दस का भाग देकर लब्ध अक दूसरी सख्या मे कम करना, शेष मे ६० का भाग देना, तथा इसमे मेपादि स्पष्ट सूर्य की राश्यादि अक को त्रिगुणित करके जो अक राश्यादि हो उसका आधा उसी मे युक्त करके पूर्वागत अश तथा घटी अक के नीचे पल मे युक्त करने से अयनाश स्पष्ट होता है।

उदाहरण-शक स० १८८३ द्वि० ज्ये० शु० २ को शक १८८३ मे ४२१ घटाया तो १४६२ शेष रहे, इसको दो जगह रखा, एक जगह दस १० का भाग दिया तो १४६।१२ लब्धाक प्राप्त हुआ, इसको दूसरे मे युक्त किया तो १३१५।४८ हुआ। इसमे प्रातःकालीन सूर्य स्पष्ट २।००।१२।१४ को त्रिगुणित किया तो ६।०।३६।४२ हुए, इसका आधा ३।०।१८।२१ को युक्त किया तो ९।०।५५।०३ इसकी राशि सख्या ९ को पूर्वानित १३१५।४८ मे विकला स्थान मे युक्त किया तो १३१५।५४।९ इसमे ६० का भाग दिया तो २१।५५।५४ 'अयनाश' स्पष्ट हुआ। तथा ६० का भाग देकर भी सूर्यस्पष्ट से प्राप्त अक का योग कर सकते हैं। इस मत मे शाकत० का आरभ मेघ सक्रान्ति के आरभ से माना जाता है। आजकल प्राय चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से जो शकसम्बत् का परिवर्तन लिखने की प्रणाली है, इसके कारण मेघ सक्रमण से प्रथम अयनाश स्पष्ट करने मे पूर्व (गत) शक ग्रहण करना होता है। विस्तार भय से अन्यान्य रीति नहीं लिखी गई।

### अथ पलभाज्ञानं चरखंडसाधनमाह

मेघो रश्मिरयनाशमुतो भवति यद्दिने ॥ शकुच्छायादिनाद्धं तु पलभेत्सुच्यते बुधैः ॥३१॥ स्यान्नत्रये  
च सा स्याप्या गुण्या दिग्यमुपालकं ॥ अते गुणोद्धृते सद्भ्रूरश्ररखण्डः प्रकीर्तित ॥३२॥

### अथ लंकोदयमाह

वसुसागरनेत्राणि पलानि लकोदये मेघराशौ ॥ शकोकनेत्रे वृषभे मियुनेऽग्निपुद्नेत्रसख्यातम्  
॥३३॥ विपर्ययमग्रिमप्रितये पङ्क्तप्रेष्वेवमेव निर्विष्टम् ॥ हीन खडत्रितय युक्तं स्वदेश-  
लप्रोड्यम् ॥३४॥

### अथ लग्नसाधनमाह

यस्मिन्काले लग्न साध्यं च यदा तदा भवेद्विज्ञं ॥ तात्कालिकसूर्यो वै युक्तं कार्योऽथ सायनारोह  
॥३५॥ तद्देशोर्ध्वस्वादेश्य उदयस्तेनाथ भोग्याशा ॥ निधेश्च भागास्त्रिशञ्च्युतास्तथा  
भुक्तभागाश्च गुण्या ॥३६॥ भूताद्यग्न्युद्धतास्ते च ह्यकाग्निभाजिता यदि ॥ भोग्यकालोऽथ  
द्युमणोर्ध्वेयश्च द्विजोत्तम ॥३७॥ इति सायनयाताशेर्भुक्तकालो विधीयते इष्टघटथा पल-  
शोध्यो भोग्यकाल इति स्थिति ॥३८॥ हातव्या राशयुदयकालात्तावत् शोध्येदथ । यच्छेष  
खगुणम् तद्गतमशुद्धोदयेनाथ ॥३९॥ यल्लब्धं च तवाद्य सायनासहीनेर्लग्नस्यात् ॥ जानीहि  
द्विजसत्तम नतोन्नतप्रकारमेवैतत् ॥४०॥

### अथ नतोन्नतसाधनमाह

दिनगतघटीभिर्होन कार्यं मुनिभिश्च दिवसाद्धम् ॥ पूर्वतत तत्रात्रौ लक्षणमेतद्धि विज्ञेयम्  
॥४१॥ यदा दिनार्थादुपरीष्टकालो भगोदयादिष्टघटीयु शोध्यम् ॥ तदा दिनार्थस्य नत पर  
तद्धयम् च सर्वं खलु बोधहेतुम् ॥४२॥ राश्यार्द्धादुपरिचेत्स्यादिष्टकालो विचक्षण ॥  
सूर्यास्तिष्टघटीशुद्धं राश्यार्धं पश्चिम नतम् ॥४३॥

‘पलभा’ तथा ‘चरखंड’ साधन प्रकार—

जिस दिन सायन सूर्य मेघ राशि मे प्रवेश करे उस दिन मध्याह्नकाल मे १२ अंगुल का शकु  
(कील) धूप मे सीधा रख कर उसकी छाया लेनी चाहिये। वही पलभा कहानी है। उस  
पलभा को ३ जगह रख कर १०-८-१० क्रमश इन अको से गुणा करे। अन्त्य के खण्ड मे ३  
का भाग देने से ३ चरखण्ड होते है ॥३२॥

### लकोदयपल

मेघ के लकोदय २७८ । वृष के २९९ । मिथुन के ३२३ है। इनसे अगली तीन राशियो मे यही  
अक विपरीत क्रम से जानना। इसी प्रकार अगली ६ राशियो मे भी जानना। ये ‘लकोदय’ पल  
कहलाते है ॥३३॥ ऊपर बताये हुए चरखण्ड प्रथम तीन राशियो मे घटाना, पश्चात् तीन  
राशियो मे जोड़ना। इसी प्रकार अगली ६ राशियो मे भी करना। इस सस्वार से ‘स्वदेशोदय’  
या ‘स्वीयोदय’ लग्नमान होते है ॥३४॥

## लघुसाधन

जिस समय का लघु स्पष्ट करना हो उस समय का तात्कालिक सूर्य स्पष्ट करके अयनाश जोड़े, पश्चात् राशि का अंक अलग स्थापित कर अश्र, कला, विकला अंक लेकर ३० अश्र में से घटावे तो 'भोग्याश' होते हैं, इनको स्वोदय से गुणा करके ३० का भाग देने से लब्ध अंक 'भोग्यकाल' होगा, इसी प्रकार भुक्ताशो से भुक्तकाल होता है। इस भोग्यकाल को इष्टघटी की पल करके इन पलो में यह 'भोग्यकाल' घटावे (और घटाने के बाद सूर्य के राशि अंक में १ सख्या बढ़ा दे) बाद बची हुई पलराशि में जितने आगामी लग्नमान घटे उतने घटावे (और राशि अंक में उतनी सख्या बढ़ाता जाय) जो स्वोदय नहीं घटे, उसकी 'अशुद्ध' सजा है, अब जेप अंक को ३० से गुणा कर अशुद्ध स्वोदयका भाग देकर लब्ध आदि सूर्यकी बढ़ाई हुई राशि में युक्त करे और अयनाश घटा दे। यह लघुस्पष्ट सिद्ध हुआ ॥३५-४०॥

## नत तथा उन्नत साधन

१-सूर्योदय तथा सूर्यास्त से इष्ट यदि क्रम से दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध से कम हो तो दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध में इष्ट घटाने से 'पूर्व नत' होता है।

२-इसी प्रकार सूर्योदय तथा सूर्यास्त से इष्ट दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध से अधिक हो तो इष्ट में दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध घटाने से 'पर नत' होता है ॥४१-४३॥

## अथ चतुर्थदशमसाधनमाह

एवं संकोदपैर्मुक्तं भोग्यं शोध्यं पत्नीकृतात् ॥ पूर्वपश्चात्प्रतादन्वत्प्राग्वत्तद्दशमं भवेत् ॥४४॥

## अथ भावसंधिमाह

लघुं मुखात्सुखं कामात्कामं सात्त्वं च तन्नतः ॥ अंगमेकं द्विगुणितं पुञ्ज्यात्सुखं विपु क्रमात् ॥४५॥  
पूर्वापरयुतेरर्धं संधिः स्याद्भावयोर्द्वयोः ॥ एवं द्वादशभावाः स्फुर्भवन्ति हि ससंघयः ॥४६॥

## अथ भोग्यकालादल्पेष्टकाले सति लघुसाधनम्

भोग्यतोऽल्पेष्टकालात्स्वराभाहृतात्स्वोदयाप्रागपुम्भास्करः स्यात्तनुः ॥

## अथ लघुपत्रभावपत्रमाह

सूर्यराश्यंशमानेन फलं प्राह्यं च कोष्ठकम् ॥ इष्टघटया समयुक्तं लग्नं तात्कालिकं भवेत् ॥४७॥

## दशम-भाव साधनप्रकार

इस नत को इष्ट मानकर लघुस्पष्टसाधन की प्रक्रिया अनुसार गणित करने से 'दशम भाव स्पष्ट' होता है ॥४४॥

### द्वादश भाव साधन प्रकार

(दशमभाव मे ६ राशि जोडने से चतुर्थ और लग्न मे ६ राशि जोडने से 'सप्तमभावस्पष्ट' होता है)

लग्न को चतुर्थ मे से, चतुर्थ को सप्तमभाव मे से, सप्तम को दशमभाव मे से और दशम को लग्न मे से घटाना चाहिये। जो अक आवे उसके तृतीयाश का (प्रथम पर्याय) लग्न मे योग करने से द्वितीय और द्वितीय मे जोडने से तृतीय भाव स्पष्ट होगा। इसी प्रकार द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पर्याय मे भी करना। दो भावों का जो अन्तर हो उसका अर्द्धभाग सन्धि होगी। इसी तरह सन्धि रहित बारहो भाव स्पष्ट होंगे॥४५॥४६॥

### इष्ट से भोग्यकाल कम होने पर लग्नसाधन

इष्ट से भोग्यकाल कम हो तो भोग्यकाल को ३० से गुणा करके स्वोदय का भाग देकर लग्न अशादि को सूर्य मे योग करने से लग्नस्पष्ट होगा।

### सारिणी से लग्नानयन

सूर्य की राशि, अश से सारिणी के कोष्ठक के अक को इष्ट मे जोडकर जो अक प्राप्त हो, सारिणी मे उसकी राशि और अश ही लग्नस्पष्ट होगा॥४७॥

### लग्नस्पष्ट उदाहरण

स्पष्ट सूर्य ४।२३।२८।१८ मे अयनाश २३।५९ युक्त किया तो ५।१७।२७।१८ सायन सूर्य हुआ। इसके भोग्याश १२।३०।४२ कन्या के कलकत्ता के उदय पल ३२९ से गुणा किया तो ४१२७।१८।१८ हुए। ३० का भाग दिया तो १३७।१७ यह 'भोग्यकाल' हुआ। घटघादि इष्ट १०।०० के पल ६०० मे भोग्यकाल कम किया तो शेष ४६२।४३ और राशि के स्थान मे (६) राशि रखा गया। अब तुला का उदय ३२९ घटाया तो शेष १३३।४३ रहा और राशि के स्थान मे (७) रखा। वृश्चिक राशि के उदय पल ३३९ न घटने से वृश्चिक राशि अशुद्ध है। अतः शेष को ३० से गुणा किया तो ४०११।३० हुआ। वृश्चिक के उदय मे भाग लिया तो १०।१६।१९ अशादि प्राप्त हुए। इसमे ७ राशि मुक्त किया और अयनाश २३।५९ घटाया तो ६।१६।१७।१९ यह स्पष्ट लग्न हुआ।

### दशमभावसाधनोदाहरण

इष्ट १०।०० दिनार्द्ध १६।२० मे कम किया तो ६।२० यह 'पूर्वतत' हुआ। अतः ऋणरीति से स्पष्ट करना चाहिये। इस ६।२० को इष्ट मान कर सायनमूर्य ५।१७।२७।१८ के भुक्ताश १७।२७।१८ है (दशमभाव साधन मे राशियों के उदय मान लवा के लेने चाहिये) अतः लकोदय लिखते हैं। "लकोदया विघटिका गजभानि, गोकदद्या, स्त्रिपलदहनाः क्रमगोक्तमस्याः ।" अर्थात् २७।२९।३२३ इन पलो को श्रम और उत्त्रम से लेने पर १२ राशियों के लकोदय पल होते हैं। यथा—



**पूर्वकुण्डे तृतीयोऽध्यायः**

मे० २७८ मी०, वृ० २९९ कु० मि० ३२३ म० क० ३२३ घ० सि० २९९ वृ०  
क० २७८ तु०

वहा मायन सूर्य के भुताशो को कन्या के लकोदय २७८ से गुणा किया तो ४७२६।७५०६।५००४ प्राप्त हुए। ३० का भाग दिया तो १६१।१२ भुक्तकाल हुआ। इसको पूर्वगत की पल ३८० में घटाया तो शेष २१८।४८ रहे और कन्या के उदयकाल घटन में राशि के स्थान में (५) रखा गया। अब सिंह का उदय २९९ नहीं घटा। अतः सिंह अशुद्ध है अतः शेष २१८।४८ को ३० से गुणा किया तो ६५६४ हुआ, इसमें अशुद्ध २९९ का भाग दिया तो २१।५२।३३ अथादि प्राप्त हुए। इस को सिंह में घटाया तो ४।८।७।२७ हुए। इसमें अयनाश घटाया तो ३।१।८।२५ यह दशम भाव स्पष्ट हुआ।

अब लग्नस्पष्ट ६।१६।१७।१९ तथा दशमस्पष्ट ३।१।८।२५ में ६-६ राशि युक्त की तो सप्तमभाव ००।१६।१७।१९ तथा दशमभाव ३।१।८।२५ हुआ। ऊपर कहे अनुसार चतुर्थ में लग्न, सप्तम में चतुर्थ, दशम में सप्तम, कर्म-दशम को लग्न में घटा कर पष्ठाय लेकर लग्न में योग करके सधि, सधि में युक्त करने से द्वितीय और द्वितीय में युक्त करने से सधि इसी प्रकार तृतीय सधि और चतुर्थ भाव आदि प्राप्त होंगे। अथवा उपर्युक्त रीति से भी वही भाव प्राप्त होते हैं।

**भावस्पष्टचक्र**

त		घ		स		गु		पु		रि	
६	७	७	८	८	९	९	१०	११	११	११	००
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०
जा		मृ		भा		क		ला		घ	
००	१	१	२	२	३	३	४	४	५		००
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०

**जन्मकुण्डली**



## अथ लग्नपत्रमिदमाह

आ	मे१	वृ२	मि३	क४	सि५	क६	गु७	वृ८	घ९	म१०	कु११	मौ१२
१	२ ५४	७ १४	१२ १२	१७ ४१	२३ १४	२८ ३५	३३ ५३	३९ ३१	४४ ५५	५० १२	५४ ५१	५८ ५७
२	३ २	७ २३	१२ २३	१७ ५३	२३ २५	२८ ४६	३४ ४	३९ ३२	४५ ६	५० २३	५५ ०	५९ ४
३	३ १०	७ ३२	१२ ३३	१८ ४	२३ ३४	२८ ५६	३४ १४	३९ ४३	४५ १८	५० ३३	५५ ९	५९ १२
४	३ १८	७ ४१	१२ ४३	१८ १५	२३ ४७	२९ ७	३४ २५	३९ ५४	४५ २९	५० ४३	५५ १८	५९ २०
५	३ २६	७ ४९	१२ ५४	१८ २६	२३ ५८	२९ १८	३४ ३६	४० ५	४५ ४०	५० ५४	५५ २६	५९ २८
६	३ ३४	७ ५८	१३ ४	१८ ३७	२४ ९	२९ २८	३४ ४६	४० १६	४५ ५१	५१ ४	५५ ३५	५९ ३६
७	३ ४२	८ ७	१३ १४	१८ ४९	२४ २०	२९ ३९	३४ ५७	४० २७	४६ ३	५१ १४	५५ ४४	५९ ४४
८	३ ५०	८ १६	१३ २५	१९ ०	२४ ३१	२९ ४९	३५ ७	४० ३८	४६ १४	५१ २४	५५ ५३	५९ ५२
९	३ ५८	८ २५	१३ ३५	१९ ११	२४ ४२	३० ०	३५ १८	४० ४९	४६ २५	५१ ३५	५६ २	६० ०
१०	४ ७	८ ३५	१३ ४६	१९ २२	२४ ५३	३० ११	३५ २९	४१ ०	४६ ३५	५१ ४४	५६ १०	६० ८
११	४ १६	८ ४६	१३ ५७	१९ ३३	२५ ३	३० २१	३५ ४०	४१ ११	४६ ४५	५१ ५३	५६ १८	६० १६
१२	४ २५	८ ५६	१४ ९	१९ ४४	२५ १९	३० ३२	३५ ५१	४१ २३	४६ ५६	५२ २	५६ २६	६० २४

## पूर्वसप्तमे तृतीयोऽध्यायः

१३	४ ३४	९ ६	१४ २०	१९ ५५	२५ २९	३० ४३	३६ २	४१ ३४	४७ ६	५२ ११	५६ ३४	० ३२
१४	४ ४३	९ १७	१४ ३१	२० ६	२५ ३५	३० ५३	३६ १३	४१ ४५	४७ १७	५२ २०	५६ ४२	० ४०
१५	४ ५१	९ २७	१४ ४२	२० १७	२५ ४६	३१ ४	३६ २४	४१ ५६	४७ ५७	५२ २८	५६ ५०	० ४८
१६	५ ०	९ ३७	१४ ५३	२० २८	२५ ५६	३१ १४	३६ ३५	४२ ७	४७ ३७	५२ ३७	५६ ५८	० ५६
१७	५ ९	९ ४८	१५ ५	२० ३९	२६ ७	३१ २५	३६ ४६	४२ १९	४७ ४८	५२ ४६	५७ ५	१ ३
१८	५ १८	९ ५८	१५ १६	२० ५०	२६ १७	३१ ३५	३६ ५७	४२ ३०	४७ ५८	५२ ५५	५७ १३	१ ११
१९	५ २७	९ ८	१५ २७	२१ १	२६ २८	३१ ४६	३७ ८	४२ ४१	४८ ८	५३ ४	५७ २१	१ १९
२०	५ ३६	९ १९	१५ ३८	२१ १२	२६ ३९	३१ ५७	३७ १९	४२ ५२	४८ १९	५३ १३	५७ २९	१ २७
२१	५ ४५	९ २९	१५ ४९	२१ २३	२६ ४९	३२ ७	३७ ३०	४३ ३	४८ २९	५३ २२	५७ ३७	१ ३५
२२	५ ५४	९ ३९	१६ ५	२१ ३४	२७ ०	३२ १८	३७ ४१	४३ १५	४८ ३९	५३ ३१	५७ ४५	१ ४३
२३	६ ३	९ ५०	१६ १२	२१ ४६	२७ १०	३२ २८	३७ ५३	४३ २६	४८ ५०	५३ ४०	५७ ५३	१ ५१
२४	६ १२	९ ०	१६ २३	२१ ५७	२७ २१	३२ ३९	३८ ४	४३ ३७	४९ ०	५३ ४९	५८ १	१ ५९
२५	६ २०	९ १०	१६ ३४	२२ ८	२७ ३२	३२ ५०	३८ १५	४३ ४८	४९ १०	५३ ५७	५८ ९	२ ७
२६	६ २९	९ २१	१६ ४५	२२ १९	२७ ४२	३३ ०	३८ २६	४३ ५९	४९ २१	५४ ६	५८ १७	२ १५

२७	६ ३८	११ ३१	१६ ५७	२२ ३०	२७ ५३	३३ ११	३८ ३७	४४ ११	४९ ३१	५४ १५	५८ २५	० २३
२८	६ ४७	११ ४१	१७ ८	२२ ४१	२८ ३	३३ २१	३८ ४८	४४ २२	४९ ४१	५४ २४	५८ ३३	२ ३१
२९	६ ५६	११ ५२	१७ १९	२२ ५२	२८ १४	३३ ३२	३८ ५९	४४ ३३	४९ ५२	५४ ३३	५८ ४१	२ ३९
३०	७ ५	१२ २	१७ ३०	२३ ३	२८ २५	३३ ४३	३९ १०	४४ ४४	५० २	५४ ४२	५८ ४९	२ ४७

अथ भावपत्रमिदमाह

अश	मे०१	वृ०२	मि०३	क०४	सि०५	क०६	तु०७	वृ०८	घ०९	म०१०	कु११	मी१२
१	३ २४	८ १७	१३ ३४	१८ ५७	२४ २	२८ ४६	३३ २४	३८ १७	४३ ३४	४८ ५७	५४ २	५८ ४६
२	३ ३३	८ २७	१३ ४५	१९ ८	२४ १२	२८ ५५	३३ ३३	३८ २७	४३ ४५	४९ ८	५४ १२	५८ ५५
३	३ ४२	८ ३७	१३ ५५	१९ १८	२४ २२	२९ ४	३३ ४२	३८ ३७	४३ ५५	४९ १८	५४ २२	५९ ४
४	३ ५२	८ ४७	१४ ६	१९ २९	२४ ३२	२९ १४	३३ ५२	३८ ४७	४४ ६	४९ २९	५४ ३२	५९ १४
५	४ १	८ ५७	१४ १७	१९ ४०	२४ ४२	२९ २३	३४ १	३८ ५७	४४ १७	४९ ४०	५४ ४२	५९ २३
६	४ १०	९ ७	१४ २८	१९ ५१	२४ ५२	२९ ३२	३४ १०	३९ ७	४४ २८	४९ ५०	५४ ५२	५९ ३२
७	४ १९	९ १७	१४ ३८	२० १	२५ २	२९ ४१	३४ १९	३९ १७	४४ ३८	४९ १	५४ २	५९ ४१
८	४ २९	९ २७	१४ ४९	२० १२	२५ १२	२९ ५१	३४ २९	३९ २७	४४ ४९	४९ १२	५४ १२	५९ ५१

९	४ ३८	९ ३७	१५ ०	२० २३	२५ २२	३० ०	३४ ३८	३९ ३७	४५ ०	५० २३	५२ २२	० २
१०	४ ४८	९ ४४	१५ ११	२० ३३	२५ ३१	३० ९	३४ ४८	३९ ४८	४५ ११	५० ३३	५२ ३१	० ९
११	४ ५८	९ ५९	१५ २२	२० ४३	२५ ४१	३० १९	३४ ५८	३९ ५९	४५ २२	५० ४३	५५ ४१	० १९
१२	५ ८	१० ९	१५ ३२	२० ५३	२५ ५०	३० २८	३५ ८	४० ९	४५ ३२	५० ५३	५५ ५०	० २८
१३	५ १८	१० २०	१५ ४३	२१ ३	२५ ५९	३० ३७	३५ १८	४० २०	४५ ४३	५१ ३	५५ ५९	० ३७
१४	५ २८	१० ३१	१५ ५४	२१ १३	२६ ८	३० ४६	३५ २८	४० ३१	४५ ५४	५१ १३	५६ ८	० ४६
१५	५ ३८	१० ४२	१६ ५	२१ २३	२६ १८	३० ५६	३५ ३८	४० ४२	४६ ५	५१ २३	५६ १८	० ५६
१६	५ ४८	१० ५२	१६ १५	२१ ३३	२६ २७	३१ ५	३५ ४८	४० ५२	४६ १५	५१ ३३	५६ २७	१ ५
१७	५ ५८	११ ३	१६ २६	२१ ४३	२६ ३६	३१ १४	३५ ५८	४१ ३	४६ २६	५१ ४३	५६ ३६	१ १४
१८	६ ८	११ १४	१६ ३७	२१ ५३	२६ ४५	३१ २३	३६ ८	४१ १४	४६ ३६	५१ ५३	५६ ४१	१ २३
१९	६ १८	११ २५	१६ ४८	२२ ३	२६ ५५	३१ २३	३६ १८	४१ २५	४६ ४८	५२ ३	५६ ५१	१ ३३
२०	६ २८	११ ३५	१६ ५८	२२ १३	२७ ४	३१ ४२	३६ २८	४१ ३५	४६ ५८	५२ १३	५७ ३	१ ४३
२१	६ ३८	११ ४६	१७ ९	२२ २३	२७ १२	३१ ५१	३६ ३८	४१ ४५	४७ ९	५२ २३	५७ १३	१ ५१
२२	६ ४६	११ ५७	१७ २०	२२ ३३	२७ २२	३२ ०	३६ ४८	४१ ५७	४७ २०	५२ ३३	५७ २२	१ ०
२३	६ ५८	१२ ८	१७ ३१	२२ ४३	२७ ३२	३२ १०	३६ ५८	४२ ८	४७ ३१	५२ ४३	५७ ३२	२ १०

२४	७	१२	१७	१२	२७	३२	३७	४२	४७	५२	५७	२
	८	१२	४२	५३	४१	१९	८	१९	४२	५३	४१	१९
२५	७	१२	१७	२३	२७	३२	३७	४२	४७	५३	५७	२
	१७	२९	५२	२	५०	२८	१७	२९	५२	२	५०	२८
२६	७	१२	१८	२३	२८	३२	३७	४२	४८	५३	५८	२
	२७	४०	३	१२	०	३८	२७	४०	३	१२	०	३८
२७	७	१२	१८	२३	२८	३२	३७	४३	४८	५३	५८	२
	३७	५१	१४	२२	९	४७	३७	५१	१४	२२	९	४७
२८	७	१३	१८	२३	२८	३२	३८	४२	४८	५३	५८	२
	४७	२	२५	३२	१८	५६	४८	२	२५	३२	१८	५६
२९	७	१३	१८	२३	२८	३३	३७	४३	४८	५३	५८	३
	५७	१२	३५	४२	२७	५	५७	१२	३५	४२	२८	५
३०	८	१३	१८	२३	२८	३३	३८	४३	४८	५३	५८	३
	८	२३	४६	५२	३७	१५	७	२४	४७	५२	३७	१५

### अथमेषादीना सज्ञामाह

क्रियतावुरिजितुमकुलीरलेयपायोनजूककौर्ष्या ॥ तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चात्यम  
चेत्यम् ॥४८॥

### अथ मेषादिराशीना स्वामिनः

मेषवृश्चिकपोर्भानस्तुलावृषभधर्मृगु ॥ कन्यामिथुनयोर्ज्ञे स्यादनुर्मनाधिपो गुरु ॥४९॥  
शनिर्मकरकुभे च कुलीरस्य तु चन्द्रमा ॥ सिंहस्याधिपतिः सूर्यो राशीनामाधिपा मता ॥५०॥

### पुनः राशीशाः

चद्रस्यशुक्रधूमाकपरिवेपारकामुका ॥ गुरुपात शनि केतुर्गहा स्युर्द्वादिग क्रमात् ॥५१॥

### मेषादि राशियो की सज्ञा

त्रिय, तावुरि, जितुम, कुलीर, लेय, पायोन, जूक, कौर्ष्य, तौक्षिक आकोकेरो, हृद्रोग  
तथा अन्त्य ये सज्ञा है ॥४८॥

### राशियो के स्वामी

मेष, वृश्चिक का मंगल, वृष, तुला का शुक्र, मिथुन, कन्या का बुध, धनु, मीन का गुरु तथा

मकर और कुम्भ राशि का शनि, कर्क राशि का चन्द्रमा और सिंह का सूर्य स्वामी है॥४९॥५०॥

### अप्रकाश ग्रह सहित स्वामी

चन्द्रमा, बुध, शुक्र, धूम, सूर्य, परिवेध, मंगल, इन्द्रचाप, गुह, व्यतीपात, शनि और केतु (ध्वज) ये क्रमशः १२ राशियों के स्वामी हैं॥५१॥

### अथाग्ने षोडशवर्गानाह

वर्गान् षोडशसंख्याकान् ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ तानह संप्रवक्ष्यामि मैत्रेय श्रूयतामिति ॥५२॥  
 क्षेत्र होरा च द्वेष्काणस्तुर्याशः सप्तमांशकः ॥ नवमांशो दशमांशश्च सूर्याशः षोडशांशकः ॥५३॥  
 विंशमांशो वेदवान्हांसो भांशात्पञ्चांशकस्ततः ॥ स्रवेदांशोऽस्रवेदांशःषष्ठ्यंश्च ततः परम् ॥५४॥  
 तत्क्षेत्रं तस्य सेटस्य राशेयौ यस्य नायकः ॥ सूर्येन्दोर्विषमेषु राशौ समे तद्विपरीतकम् ॥५५॥  
 पितरश्चन्द्रहोरेशा देवाः सूर्यस्य कीर्तिताः ॥ राशेरद्वम्भवेद्वोरा ताश्चमुर्विशतिः स्मृताः ॥  
 मेपादि तासां होराणां परिवृत्तिद्वयं भवेत् ॥५६॥

### षोडश वर्ग नाम

हे मैत्रेय! लोकपितामह ब्रह्मा के कहे हुए १६ वर्गों को कहता हूँ, आप सुने ॥५२॥ स्वक्षेत्र १ होरा, २ द्वेष्काण ३ तुर्याश ४ सप्तमांश ५ नवमांश ६ दशमांश ७ द्वादशांश ८ तथा षोडशांश ९ विंशमांश १० चतुर्विंशमांश ११ भाग १२ अंशांश १३ स्रवेदांश १४ अस्रवेदांश १५ षष्ठ्यंश १६ ये १६ वर्ग हैं॥५२॥५३॥५४॥

### स्वक्षेत्र और होरा

१-जिस राशि का जो स्वामी है वह 'स्वक्षेत्र वर्ग' है।  
 २-होरा-विषम राशि में 'प्रथम सूर्य' १५ अंश तक बाद 'चन्द्रमा ३० अंश तक' होरापति है।  
 समराशि में 'प्रथम चन्द्रमा की' बाद 'सूर्य' की होरा है। चन्द्र होरा के स्वामी 'पितर' और सूर्यहोरा के स्वामी देवता हैं। राशि के आधे भाग (१५ अंश) को होरा कहते हैं। वे २४ हैं। राशिचक्र में दो बार आवृत्ति होती है ॥५५॥५६॥

उदाहरण-जब लग्न में विषम राशि हो तब सूर्य से और समराशि हो तो चन्द्रमा से गिना जाता है। जैसे-लग्न ३।८ हो तो सम राशि होने से चन्द्रहोरा (४) है। लग्न २।४ हो तो विषम राशि होने से सूर्य होरा (५) है।

### होराचक्रमिदम्

स्वा०	राशि०	मे०	बु०	शु०	क्र०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
दे०	१५	२०५	४०४	६०५	८०४	१००५	१२०४	१४०५	१६०४	१८०५	२००४	२२०५	२४०४
पितर	३०	५०४	७०५	९०४	११०५	१३०४	१५०५	१७०४	१९०५	२१०४	२३०५	२५०४	

## अथ द्रेष्काणमाह

राशिभिर्भागा द्रेष्काणास्तेषु षट्त्रिंशद्वीरिताः ॥ परिवृत्तित्रयतेषां मेधादेः क्रमशो भवेत् ॥५७॥  
स्वपंचनवमानां च विषमेषु समेषु च ॥ नारदागस्तिदुर्वासा द्रेष्काणेशाश्ररादयः ॥५८॥

३-द्रेष्काण-प्रत्येक राशि के तीसरे भाग को 'द्रेष्काण' कहते हैं। सब द्रेष्काण १२X३=३६ है।  
मेधादि राशियो में तीन आवृत्ति होती है, प्रथम भाग का राशीश ही स्वामी है, दूसरे का  
पञ्चमेश और तीसरे का नवमेश स्वामी होता है। क्रम से नारद, अगस्ति, दुर्वासा देवता  
हैं ॥५७॥५८॥

उदाहरण-राशि के ३० अंश है, उसके ३ भाग करने पर १०-१० अंश का १-१ भाग  
(द्रेष्काण) होता है। उसमें प्रथम भाग का राशिपति ही स्वामी है, दूसरे का पञ्चमाधिपति  
और तीसरे का नवम राशिपति स्वामी होता है। जैसे लग्न ३६ है अतः प्रथम भाग में होने से  
चन्द्रमा की राशि ४ द्रेष्काण लग्न सिद्ध हुआ।

## द्रेष्काणचक्रम्

स्वा०	राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	ति०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मीन	
नारद	अश	१०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
अगस्ति	२०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	
दुर्वासा	३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	

## अथ चतुर्थांशमाह

स्वर्क्षादिकेद्रपतयस्तुयशिराः क्रियादयः ॥ सनकश्च सनदश्च कुमारश्च सनातनः ॥५९॥

## चतुर्थांश वर्ग

राशि के ४ भाग में प्रथम भाग का स्वामी राशिपति है। द्वितीय भाग का चतुर्थ  
भावाधिपति एवं तृतीय का सप्तमेश और चतुर्थे का दशमेश स्वामी होता है। और सनक,  
मनन्दन, सनत्कुमार, सनातन क्रम से देवता हैं ॥५९॥

विबरण-राशि ३० के ४ भाग करने में ७।३० अंश का एक भाग होता है, इसका स्वामी  
राशिपति ही है, दूसरा भाग १५ अंश तक हुआ, इसका स्वामी चतुर्थे और तीसरा भाग  
२२।३० तक हुआ इसका स्वामी सप्तमेश तथा चौथा भाग ३० अंश तक उमका स्वामी  
दशमेश होता है।

उदाहरण-लग्न ३६ है। द्वितीय भाग में होने से शुक्र स्वामी है।



### चतुर्थाशचक्रम्

स्वामी	अक्ष	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
मनक	७ ३०	१ म०	२ शु०	३ बु०	४ च	५ मू०	६ बु०	७ शु०	८ म०	९ बु०	१० म०	११ म०	१२ बु०
सनदन	१५ ०	४ च०	५ मू०	६ बु०	७ शु०	८ म	९ बु०	१० म०	११ म०	१२ बु०	१ म०	२ शु०	३ बु०
कुमार	२२ ३०	७ शु०	८ म०	९ बु०	१० म०	११ म०	१२ बु०	१ म०	२ शु०	३ बु०	४ च०	५ मू०	६ बु०
सनातन	३० ०	१० म०	११ म०	१२ बु०	१ म०	२ शु०	३ बु०	४ च०	५ मू०	६ बु०	७ शु०	८ म०	९ बु०

### अथ सप्तमांशमाह

सप्तांशपास्त्योजगृहे गणनीया निजेशतः ॥ युष्मराशौ तु विज्ञेयाः सप्तमक्षादिनायकात् ॥६०॥  
क्षारक्षीरी च दद्याज्यौ तथेक्षुरससंभवः ॥ मद्यशुद्धजलावोजे समे शुद्ध जलादिकाः ॥६१॥

### सप्तमांश वर्ग

राशि के ७ भाग करने से एक भाग ४।१७।८ अंशात्मक होता है। बाद ४।१७ जोड़ते रहने से सातवे भाग में ३० अंश पूरे सम्पन्नता। इसमें ओज (विषम) राशियों में राशिपति से ही गिनना। समराशियों में मातृवी राशि से गणना करना चाहिये। विषम राशि में देवता-क्षार, क्षीर, दधि, घृत, इक्षुरस, मद्य, जल क्रम से जानना।

समराशियों में-जल, मद्य, इक्षुरस, घृत, दधि, क्षीर, क्षार इस क्रम से जानना ॥६०॥६१॥

उदाहरण-सद्य-३।८ समराशि का द्वितीय सप्तमांश है अतः कुम्भ राशि तथा मद्य देवता है।

### सप्तमांशचक्रम्

स्वामी	सद्य	मे०१	बु०२	मि०३	क०४	ति०५	क०६	शु०७	बु०८	म०९	म०१०	कुं११	मी१२
क्षार	४ १७	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६
क्षीर	८ ३४	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७

वधि	१२ ५१	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८
आज्य	१७ ८	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९
इशुरत्न	२१ २५	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०
मघ	२५ ४२	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११
शुद्ध जलम्	३० ०	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२

### अव नवमांशम्

नवांशोशाच्चरस्तस्मात्स्थिरे तन्नवमादितः॥ उभये तत्पचमादेरिति चिंत्य विचक्षणैः ॥ देवा  
नृराक्षसाश्चैव चरादिषु ग्रहेषु च ॥६२॥

### नवारा वर्ग

चरराजिमे राशिस्वामीसे स्थिरराजि मे नवमराजि मे तथा द्विस्वभाव राजि मे पञ्चम राशि से गणना करनी चाहिए । चर मे देवता, मनुष्य, राक्षस, स्थिर मे मनुष्य, राक्षस, देव और द्विस्वभाव मे राक्षस, देव, मनुष्य तीन वार आवृत्ति होती है॥६२॥

उदाहरण—जैते लग्न ३।८।४।५ है। अतः कन्या नवमांश है।

टिप्पणी—नवांश वर्ग का व्यवहार मे अधिक उपयोग होता है, यहा मूलकार ने संक्षेप तथा कुछ जटिल रीति से इसका विवरण किया है। इसकी सरल प्रक्रिया इस प्रकार है—

राशि के नव भाग करने से प्रत्येक भाग ३।२० का होता है और "क्रियेण—तीलीन्दुभतो नवांशाः ।" अर्थात् प्रत्येक राशि पर मेष, मकर, तुला, कर्क, मेष, मकर, तुला, कर्क ॥ मेष, मकर, तुला, कर्क ये आदि राशि है। प्रत्येक राशि के नवांश मे अपनी आदि राशि से नवे भाग तक गणना करना और प्रत्येक भाग ३।२० का होता है। अतः नौ भागों की मस्या क्रमण ३।२०। - ६।४० - १०।०० - १३।२० - १६।४० - २०।०० - २३।२० - २६।४० - ३०।०० ये अगादि भाग सख्या है। इसको याद रखने से व्यवहारकाल मे चक्र मे देखना आवश्यक नहीं होगा।

### नवमांशचक्रम्

स्वामी	१०	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अशा
देव	१	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	३।२०
नृ०	२	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	म०	र०	६।४०
राक्षस	३	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	१०।०
देव	४	च०	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	१३।२०
नृ०	५	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	म०	१६।४०
राक्षस	६	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	२०।०
देव	७	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	२३।२०
नृ०	८	म०	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	२६।४०
राक्षस	९	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	वृ०	३०।०

### अथ दशमांशमाह

विगशाया ततश्चौजे युग्मे तत्रैवमाहृदेत् ॥ पूर्वोदिदशदिक्पाला इद्राग्निपमराक्षसा ॥६३॥ वरुणो  
मारुतश्चैव कुबेरैशानपद्मजा ॥ अनन्तश्च क्रमादौजे समे वा व्युत्क्रमेण तु ॥६४॥

#### दशमांश वर्ग

राशि के ३० अंशों के १० भाग करने से प्रत्येक भाग ३ अंश का होता है। इनमें विपमराशियों में अपनी राशि से तथा सम राशियों में अपने से नौवीं राशि से गणना की जाती है। देवता विपम राशि में क्रम से—इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, मारुत, कुबेर, ईशान, पद्मज, अनन्त। सम राशियों में क्रमशः—अनन्त, पद्मज, ईशान, कुबेर, मारुत, वरुण, राक्षस, यम, अग्नि, इन्द्र जानना ॥६३॥६४॥

उदाहरण—नक्ष-३।८।४।५ मीन राशि से गणना करने पर वृष राशि प्राप्त हुई।

## अथ दशांशचक्रम्

विषयमा स्वामिन		मे०	बृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	घ०	म०	कु०	मी०	समा स्वामि
इन्द्र	३	म० १	श० १०	बृ० ३	वृ० १२	१० ५	शु० २	शु० ७	च० ४	वृ० ९	बृ० ६	श० ११	म० ८	अनत
अग्नि	६	शु० २	श० ११	च० ४	म० १	बृ० ६	बृ० ३	म० ८	२० ५	श० १०	शु० ७	वृ० १२	बृ० ९	पयज
यम	९	बृ० ३	वृ० १२	२० ५	शु० २	शु० ७	च० ४	बृ० ९	बृ० ६	श० ११	म० ८	म० १	श० १०	ईशान
राक्षस	१२	च० ४	म० १	बृ० ६	बृ० ३	म० ८	२० ५	श० १०	शु० ७	वृ० १२	वृ० ९	शु० २	श० ११	कुबेर
वरुण	१५	१० ५	शु० २	शु० ७	च० ४	बृ० ९	बृ० ६	श० ११	म० ८	म० १	श० १०	बृ० ३	बृ० १२	माघत
माघत	१८	बृ० ६	बृ० ३	म० ८	२० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	वृ० ९	शु० २	श० ११	च० ४	म० १	वरुण
कुबेर	२१	शु० ७	च० ४	वृ० ९	बृ० ६	श० ११	म० ८	म० १	श० १०	बृ० ३	वृ० १२	मू० ५	शु० २	राक्षस
ईशान	२४	म० ८	१० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	वृ० ९	शु० २	श० ११	च० ४	म० १	बृ० ६	बृ० ३	यम
पयज	२७	वृ० ९	बृ० ६	श० ११	म० ८	म० १	श० १०	बृ० ३	वृ० १२	१० ५	शु० २	शु० ७	च० ४	अग्नि
अनत.	३०	श० १०	शु० ७	बृ० १२	वृ० ९	शु० २	श० ११	च० ४	म० १	बृ० ६	बृ० ३	म० ८	२० ५	इन्द्र

10 10 10 10 10 5 10 10  
5 5 अथ द्वादशांशमाह 5 10 10

द्वादशांशस्य गणना तत्तत्क्षेत्राद्भिनिर्दिशेत् ॥ तेषामधीशा क्रमशो गणेशाऽभिव्यमाह्वय ॥६५॥

द्वादशांश वर्ग

एक राशि के ३० अंशों के १२ भाग करने पर २।३० एव भाग प्राप्त होता है। इसकी गणना अपनी राशि से ही होती है (यथा मेष के द्वादशांश की मेष से, वृष की वृष से, मियुन की मियुन से) ॥६५॥ देवता—गणेश, अभिनीकुमार, यम, सर्प—ये तीन आवृत्ति करना।

उदाहरण—लग्न ३।८ बर्क से गुनने पर तुला राशि प्राप्त हुई।

अथ द्वादशांशक्रमिदम्

स्वामिन	अ०	मे०	ब०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	ब०	घ०	म०	कु०	मी०
गणेश	२ ३०	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२
अश्विनी कुमारी	५ ०	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२	म० १
घम	७ ३०	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२	म० १	शु० २
अहि	१० ०	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२	म० १	शु० २	बु० ३
गणेश	१२ ३०	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४
अश्विनी कुमारी	१५ ०	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५
घम	१७ ३०	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६
अहि	२० ०	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७
गणेश	२२ ३०	शु० ९	म० १०	शु० ११	बु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८
अश्विनी कुमारी	२५ ०	शु० १०	म० ११	शु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९
घम	२७ ३०	म० ११	शु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०
अहि	३० ०	शु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	शु० ९	म० १०	शु० ११

अथ षोडशांशमाह

अजसिहाश्रितो ज्ञेया नृपाशा क्रमशः सदा ॥ अजविष्णु रह सूर्यो ह्योजे युग्मे प्रतीपकम् ॥६६॥

षोडशांश वर्ग (चर, स्थिर, द्विस्व०)

षोडशांश मे-मेय सिंह, धनु राशि से अर्गात् (इनको नवाश की तरह आदि राशि मान कर

गणना करना।) इसका एक भाग १।५२।३० होता है। (चक्र में स्पष्ट है) देवता-विषम राशि में ब्रह्मा, विष्णु, हर, सूर्य तथा सम राशि में सूर्य, हर, विष्णु, ब्रह्मा। आगे पुन इसी क्रम से गिन लेना॥६६॥

उदाहरण-लग्न-३।८।४।५। मेघ से गणना की तो सिंह राशि प्राप्त हुई।

### षोडशांशचक्रम्

सख्या	विषम स्वा०	मे०	बु०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	द०	घ०	म०	कु०	मी०	सम स्वा	अ०	क०	वि०
१	ब०	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	सू०	१	५२	३०
२	वि०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	ह०	३	४५	०
३	ह०	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	वि०	५	३७	३०
४	सू०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	ब०	७	३०	०
५	ब०	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	सू०	९	२२	३०
६	वि०	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	ह०	११	१५	०
७	ह०	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	वि०	१३	७	३०
८	सू०	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	ब०	१५	०	०
९	ब०	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	सू०	१६	५२	३०
१०	वि०	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	ह०	१८	४५	०
११	ह०	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	वि०	२०	३७	३०
१२	सू०	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	ब०	२२	३०	०
१३	ब०	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	सू०	२४	२२	३०
१४	वि०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	ह०	२६	१५	०
१५	ह०	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	वि०	२८	७	३०
१६	सू०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	ब०	३०	०	०

### अथ विंशतिमाह

अथ विंशतिभागानामधिषा ब्रह्मणोहिता ॥ क्रियाच्चरे स्थिरे चापान्मृगेन्द्राद्विद्वस्वभावके ॥६७॥ काली गौरी जया लक्ष्मीर्विजया विमला सती ॥ तारा ज्वालामुखी श्वेता ललिता बगलामुखी ॥६८॥ प्रत्यगिरा शची रौद्री भवानी वरदा जया ॥ त्रिपुरा सुमुखी श्वेति विद्यमे परिचितयेत् ॥६९॥ समराशौ दया मेधा छिन्नशीर्षा पिशाचिनी ॥ धूमावती च मातंगी बाला मद्राऽरुणाऽनला ॥७०॥ पिंगला छुडुका घोरा चाराही वैष्णवी सिता ॥ भुवनेशी भैरवा च मङ्गला ह्यपराजिता ॥७१॥

#### विंशति वर्ग

विंशति वर्ग में चर (मेघ, कर्क, तुला, मकर) राशियों में श्रेय से गणना करना, स्थिर राशियों में धनुराशि से और द्विस्वभाव राशियों में सिंह से गणना करना। इसका परिमाण १।३० है। देवता-विषम राशियों में क्रमशः-काली, गौरी, जया, लक्ष्मी, विजया, विमला सती, तारा, ज्वालामुखी, श्वेता, ललिता, बगलामुखी, प्रत्यगिरा, शची, रौद्री, भवानी, वरदा जया, त्रिपुरा और सुमुखी। समराशियों में-दया, मेधा, छिन्नशीर्षा, पिशाचिनी, धूमावती मातंगी, बाला, भद्रा, अरुणा, अनला, पिंगला, छुडुका, घोरा, चाराही, वैष्णवी, सिता भुवनेश्वरी, भैरवी, मङ्गला और अपराजिता ये क्रमशः देवता हैं ॥६७-७१॥

उदाहरण-सप्त ३।८।४।५" कर्क चर राशि है अतः मेघ से गणना करने पर कन्या राशि प्राप्त हुई।

#### विंशतिचक्रम्

स	वि० स्वा०	मे० १	मृ० २	मि० ३	क० ४	सि० ५	क० ६	तु० ७	मृ० ८	ध० ९	म० १०	कु० ११	मी० १२	सं० स्वा	अशा	सख्या
१	काली	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	५	५	दया	१३०	१
२	गौरी	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	मेधा	३१०	२
३	जया	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	छिन्नशी	४३०	३
४	लक्ष्मी	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	पिशाचि	६१०	४
५	विजया	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	धूमाव	७३०	५
६	विमला	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	मातंगी	९१०	६

७	सती	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	बाता	१०३०	७
८	सारा	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	भटा	१२१०	८
९	न्वालापु०	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	अरुणा	१३३०	९
१०	भेता	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	अनन्ता	१५१०	१०
११	ललिता	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	विगता	१६३०	११
१२	बगला	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	छुछुका	१८१०	१२
१३	ज्यगिरा	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	घोरा	१९३०	१३
१४	शची	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	बाराही	२१०	१४
१५	रोही	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	वैष्णवी	२२३०	१५
१६	भवानी	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	सिता	२४१०	१६
१७	वरदा	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	भुवनेश्व०	२५३०	१७
१८	जया	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	शैरवी	२७१०	१८
१९	त्रिवुरा	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	मंगला	२८३०	१९
२०	सुमुली	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	अपराजि०	३०१०	२०

### अथ सिद्धांशकमाह

सिद्धाशकानामधिपा सिद्धादोजभगे गृहे ॥ कर्काद्युगभगे श्वेत स्वद. पशुघरोजनल ॥७२॥  
विश्वकर्मा भगो मित्रो मयोस्तक वृषध्वजा ॥ गोविदो मदनो भीम सिद्धादो विषमे क्रामात् ॥  
कर्कादौ समभे भीमाद्विलोमेन विचितयेत् ॥७३॥

### सिद्धा (२४) श वर्ग

चतुर्विंशश वर्ग मे विषमराशियो मे सिह से तथा सम राशियो मे बर्ब राशि मे गणना करनी चाहियो इसका एक भाग १।१५ अण वा होता है।

देवता—स्वन्द, पशुधर, अनल, विश्वक, भग, मित्र, मय, अन्तक, वृषध्वज, गोविन्द, मदन, भीम, स्वन्द, पशुधर, अनल, विश्वक, भग, मित्र, मय, अन्तक, वृषध्वज, गोविन्द, मदन, भीम ये देवता क्रमश विषम राशि मे जानना तथा सम राशियो मे ये ही देवता विपरीत क्रम से समझना ॥७२॥७३॥

उदाहरण—वय ३।८।४ बर्बादि गणना मे मकर प्राप्त हुआ।



### चतुर्विंशतिशतकम्

सं०	वित्त्वा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	संख्या०	अंक०	सं०
१	स्कद	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	भीम	१११५	१
२	पशुधर	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	मदन	२१३०	२
३	अनल	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	गोविन्द	३१४५	३
४	विश्वक	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	वृषध्वज	५१०	४
५	भग	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	अन्तक	६११५	५
६	मित्र	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	भग	७१३०	६
७	भग	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	मित्र	८१४५	
८	अन्तक	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	भग	९०१०	
९	वृषध्वज	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	विश्वक	११११५	९
१०	गोविन्द	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	अनल	१२१३०	१०
११	मदन	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	पशुधर	१३१४५	११
१२	भीम	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	स्कद	१५१०	१२
१३	स्कद	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	भीम	१६११५	१३
१४	पशुधर	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	मदन	१७१३०	१४
१५	अनल	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	गोविन्द	१८१४५	१५
१६	विश्वक	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	वृषध्वज	२०१०	१६
१७	भग	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	अन्तक	२१११५	१७
१८	मित्र	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	भग	२२१३०	१८
१९	भग	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	मित्र	२३१४५	१९
२०	अन्तक	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	भग	२५१०	२०
२१	वृषध्वज	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	विश्वक	२६११५	२१
२२	गोविन्द	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	अनल	२७१३०	२२
२३	मदन	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	पशुधर	२८१४५	२३
२४	भीम	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	स्कद	३०१०	२४

## अथ भांशशानाह

नक्षत्रेशाः क्रमाद्द्वयमवह्नित्पितामहाः ॥ चंद्रेशादितिजीवा हि पितरो भगसंज्ञिताः ॥७४॥  
 अर्यमार्कस्त्वष्टमरुच्छक्राग्निमित्रवासवासयाः ॥ निरृत्त्युदक विश्वेजो बिन्दो यसर्बोबुपः ॥७५॥  
 ततोऽजपादहिर्बुध्न्यः पूयाचैव प्रकीर्तितः ॥ नक्षत्रेशास्तु भांशेशा भांश संख्यस्वभात् क्रमात् ॥७६॥

## भांश (सप्तविंशश) वर्ग

भांश वर्ग मे ३० अक्ष के २७ भाग होते है। एक भाग १।६।४ अशावि होता है, राशियो के आदि गण्य क्रमश मेप, कर्क, तुला, मकर ये तीन बार आवृत्तिरूप मे आते है। और नक्षत्रो के देवता ही इनके देवता है। यथा—अश्विनीकुमार, यम, वह्नि, ब्रह्मा, चन्द्रमा, ईश, अदिति, जीव, अहि, पितर, भग, अर्यमा, सूर्य, त्वष्टा, मरुत्, शक्राग्नि, मित्र, वासव, राक्षस, वरुण, विश्वेदेव, गोविन्द, वसु, वरुण, अजपात्, अहिर्बुध्न्य, पूया, क्रमश ये देवता है ॥७४॥७५॥७६॥

उदाहरण—लग्न ३।८।४।५ मकर से गणना करने पर सिंह लग्न आया।

## भांशचक्रम्

सं०	स्वामिन	मे०१	गु०२	गि३	क०४	ति५	क०६	गु०७	गु०८	घ०९	म०१०	गु०११	मी०१२	अशादि
१	अश्विनीकु०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१।६।४०
२	यम	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२।१३।२०
३	वह्नि	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३।२०।०
४	ब्रह्मा	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४।२६।४०
५	चन्द्रमा	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५।३३।२०
६	ईश	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६।४०।०
७	अदिति	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७।४६।४०
८	जीव	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८।५३।२०
९	अहि	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९।०।०
१०	पितर	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	११।६।४०
११	भग	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	१२।१३।२०
१२	अर्यमा	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१३।२०।०

१३	सुर्व	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१४/१६/४०
१४	सपदा	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	१५/१७/२०
१५	सप्त	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	१६/४०/०
१६	सप्तविं	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	१७/४५/०
१७	विंश	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	१८/५३/२०
१८	द्वाविंश	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	२०/०/०
१९	त्रयोविंश	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	२१/६/४०
२०	चत्वारिंश	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	२२/२१/२०
२१	पञ्चविंश	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	२३/२०/०
२२	षोडश	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	२४/२५/४०
२३	सप्त	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	२५/३३/२०
२४	अष्ट	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	२६/४०/०
२५	नव	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	२७/४५/४०
२६	दश	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२८/५३/२०
२७	एकादश	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३०/०/०

### अथ त्रिंशोऽध्यायः

त्रिंशोऽध्यायः विषये भुजार्कस्यजमार्गवाः ॥ पञ्चषष्ट्यात्सप्तशतभागा व्यत्ययतः समे ॥७७॥  
 षड्भिः समोरगाद्वा च धनदो जलदस्तया ॥ विषयेषु ऋभाजोयाः समरताौ विपर्ययम् ॥७८॥

### विषमत्रिंशत्शतकम्

स्वामिन	अशा	मेघ	मिथुन	सिंह	तुला	धनु	कुम्भ
बृह्नि	५ ०	म०	म०	म०	म०	म०	म०
वायु	१० ०	श०	श०	श०	श०	श०	श०
शक्र	१८ ०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०
धनद	२५ ०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०
जतद	३० ०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०

### समत्रिंशत्शतकम्

स्वामिन	अशा	वृषभ	कर्क	कन्या	वृश्चिक	मकर	मीन
जतद	५ ०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०
धनद	१२ ०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०
शक्र	२० ०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०
वायु	२५ ०	श०	श०	श०	श०	श०	श०
बृह्नि	३० ०	म०	म०	म०	म०	म०	म०

### अथ खवेदाशमाह

अथवादिशतिभागानामधिपता विषमे ज्ञियात् ॥ विष्णुशुद्धो मरीचिश्च त्वष्टा धाता शिवो रवि  
॥७९॥ यमो यदोशगर्ध्वं शालो वरुण एव च ॥ समभे सुततो ज्ञेया स्वस्वाधिपसमन्विता ॥८०॥







३६	वृषण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	२७	०
३७	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	२७	४५
३८	शुक्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२८	३०
३९	मरुति	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२९	१५
४०	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३०	०

### अयाक्षवेदांशमाह

तयाक्षवेदभागानामधिप्राश्ररभे क्रियात् ॥ स्थिरेसिहाद्द्विस्वभावे चापाद्ब्रह्मोशकेशया ॥  
ईशाच्युतमुरज्येष्ठविष्णुकेशाश्ररादिषु ॥८१॥

#### अक्षवेदांश (४५) वर्ग

अक्षवेदांश वर्ग में ३० अक्ष के ४५ भाग हैं और एक भाग ४० घटिका का है। इनमें चरराशियों में मेष राशि से तथा स्थिर राशियों में सिंह एवं द्विस्वभाव राशियों में धनुराशि से गणना होती है। देवता-चरराशि में ब्रह्मा, शक्र, विष्णु इस क्रम से तथा स्थिरराशियों में शक्र, विष्णु, ब्रह्मा क्रम से एवं द्विस्वभाव राशि में विष्णु, ब्रह्मा, शक्र क्रम से बार २ आवृत्ति करके गणना होती है ॥८१॥

उदाहरण-सूत्र-३१।४।५ मेष में गणना करने पर वृष राशि आई।

### अक्षवेदांशचक्रमिदम्

सं०	स्वा० ब्रह्मा शक्र विष्णु मे०	स्वा० शक्र विष्णु ब्रह्मा ध०१	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शक्र मि०२	स्वा० ब्रह्मा शक्र विष्णु क०३	स्वा० शक्र विष्णु ब्रह्मा सि०४	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शक्र क०५	स्वा० ब्रह्मा शक्र विष्णु तु०६	स्वा० शक्र विष्णु ब्रह्मा वृ०७	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शक्र ध०८	स्वा० ब्रह्मा शक्र विष्णु वृ०९	स्वा० शक्र विष्णु ब्रह्मा कृ०१०	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शक्र मी०११	अ०	क०
१	१	५	९	१३	१७	२१	२५	२९	३३	३७	४१	४५	०	४०
२	२	६	१०	१४	१८	२२	२६	३०	३४	३८	४२	४६	१	२०
३	३	७	११	१५	१९	२३	२७	३१	३५	३९	४३	४७	२	०
४	४	८	१२	१६	२०	२४	२८	३२	३६	४०	४४	४८	३	४०
५	५	९	१३	१७	२१	२५	२९	३३	३७	४१	४५	४९	४	२०

६	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	४	०
७	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	४	४०
८	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	५	२०
९	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	६	०
१०	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	६	४०
११	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	७	२०
१२	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	८	०
१३	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	८	४०
१४	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	९	२०
१५	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१०	०
१६	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१०	४०
१७	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	११	२०
१८	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	१२	०
१९	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	१२	४०
२०	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	१३	२०
२१	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	१४	०
२२	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१४	४०
२३	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	१५	२०
२४	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१६	०
२५	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१६	४०
२६	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१७	२०
२७	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१८	०



२८	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१८	४०
२९	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	१९	२०
३०	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२०	०
३१	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२०	४०
३२	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२१	२०
३३	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	२२	०
३४	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	२२	४०
३५	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	२३	२०
३६	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	२४	०
३७	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	२४	४०
३८	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२५	२०
३९	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२६	०
४०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२६	४०
४१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	२७	२०
४२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२८	०
४३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२८	४०
४४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२९	२०
४५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	३०	०

### अथ षष्ट्यशमाह

घोरश्च राक्षसो देव कुबेरो यज्ञविघ्नरो ॥ भ्रष्ट कुलघ्नो गरतो बह्निर्मापा पुरीषक ॥८२॥  
 अपांपतिर्मत्स्वाश्च काल सर्पांमृतेन्दुका ॥ मृदु कोमलहेरब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ॥८३॥ देवार्धो  
 कलिनाशश्च क्षितीशकमलाकरी ॥ गुलिको मृत्युकालश्च दावाग्निर्घोरसज्जक ॥८४॥ यमश्च  
 कष्टकमुष्णामृतो पूर्णनिशाकर ॥ विषदग्धकुलातश्च मुख्यो वशजयस्तथा ॥८५॥  
 जत्पातकालसौम्यास्या कोमल शीतनाभिध ॥ बरालदष्टचद्रास्थो प्रवीण कालपायक  
 ॥८६॥ दण्डनृशर्मल सोम्य हूरोऽतिशीतलोमृत ॥ पयोधि भ्रमणाल्यो च चद्ररेता स्वयुग्मपी

॥८७॥ समेमे घ्यत्ययाज्जेया षष्टधंशाश्च प्रकीर्तिताः ॥ षष्टधंशास्वामिनस्तबोजे  
तदीशाश्चत्ययः समे ॥८८॥ शुभषष्टधंशासंपुक्ता प्रहाः शुभफलप्रवाः ॥ क्रूरषष्टधंशासंपुक्ता  
नाशयन्ति सचारिणः ॥८९॥ राशीन् विहाय शेटस्य द्विधमंशाद्यमर्कहृत् ॥ शेषं सैकं च  
तद्वाशिनाथषष्टधंशाः स्मृताः ॥९०॥

### षष्टधंश वर्ग (६०)

षष्टधंश वर्ग में प्रथम देवता कथन करते हैं। ये देवता विषम राशियों में लिखित क्रम से  
और सम राशियों में विपरीत क्रम से जानना। घोर । राक्षस । देव । कुवेर । यक्ष । किन्नर ।  
भ्रष्ट । कुलध्व । गरल । अग्नि । माया । पुरीष । अपा पति । मरुत्वत् । काल । अहिभाग ।  
अमृत । चन्द्र । मृदु । कोमल । हेरम्ब । बह्म । विष्णु महेश्वर । देव । आर्द्र । कलिनाश ।  
क्षितीश्वर । कमलाकर । गुलिक । मृत्यु । काल । दावाग्नि । यम । कण्ठक । सुधा । अमृत ।  
पूर्णचन्द्र । विषप्रदग्ध । कुलनाश । वशक्षय । उत्पात । कालरूप । सौम्य । कोमल । शीतल ।  
दृष्टा कराल । इन्दुमुख । प्रवीण । कालाग्नि । दण्डायुध । निर्मल । सौम्य । क्रूर । अतिशीतल ।  
सुधाश । पयोधीश । भ्रमण । इन्दुरेखा ये ६० देवता कहे गये हैं।

### वर्ग विवरण

जिस ग्रह या लग्न में षष्टधंश की राशि देखना हो उसके स्पष्ट में से राशि अलग रखकर  
अश, घटी, पल के अंक को द्विगुण करना, क्या को ३० से शेष कर अश में युक्त करना । और  
अश में १२ का भाग देकर (सब्ध त्याग कर) शेष सख्या में १ मिलाना पश्चात् लग्न या ग्रह  
जिस राशि में हो उस राशि से गणना करने पर राशि अंक प्राप्त होगा। देवता के सम विषम  
के बारे में ऊपर लिख चुके हैं ॥८२-९०॥

उदाहरण-लग्न-३।८।४५।०० इसके अशादि ८।४५।२=१६।९० घटिका में ३० का  
भाग दिया सन्धि ३ अश में योग किया तो १९ हुए, इगमें १ और योग किया २० हुए। १२  
का भाग दिया शेष ८ अश रहे। अतः मारिणो में १७ का अश १२ (मीन) राशि और  
'कालरूप' अश प्राप्त हुआ। यह में उदाहरण-सूर्य-अशादि ४।२।१।२=८।५६।२ घटी  
५६ में ३० के भाग से सन्धि १ को ८ में योग किया ९ हुए १ और योग किया १० हुए मित्त  
से गणना करने पर २१ 'हेरम्ब' अश और १ राशि प्राप्त हुई॥

अथ षष्ट्यंशचक्रमिदम्

सं०	विषयव्युत्पत्त्या	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	सप्तषष्ट्यंशता	अ० कला
१	घोरता	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	इन्दुरेखा	०   ३०
२	शङ्खता	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	भ्रमणता	१   ०
३	देवता	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	पयोधीता	१   ३०
४	कुवेरता	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	मुघता	२   ०
५	यक्षा	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	अतिशीतता	२   ३०
६	किप्रता	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कुरता	३   ०
७	भ्रष्टता	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	सौम्या	३   ३०
८	कुलता	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	निर्मला	४   ०
९	गरता	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	दवापुषता	४   ३०
१०	अप्रता	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कालाप्रता	५   ०
११	माया	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	प्रवीणा	५   ३०
१२	पुत्रीता	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	इन्दुमुखा	६   ०
१३	अपातता	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	तद्भ्रता	६   ३०
१४	गह्वरता	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	शीतलता	७   ०
१५	काता	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	शोभता	७   ३०
१६	अहिता	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	सौम्या	८   ०
१७	अमृता	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	शान्तता	८   ३०
१८	चन्द्रता	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	उपता	९   ०

१९	मृदराश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	वराहपाराश	९   ३०
२०	कोमलाश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	कुम्भनाशाश	१०   ०
२१	हेरम्बाश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	विष्णवशाश	१०   ३०
२२	बह्याश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	पूर्वाष्वन्दाश	११   ०
२३	विष्णवशा	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	अमृताश	११   ३०
२४	महेश्वराश	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	मुधाश	१२   ०
२५	देवाश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	वषटकाश	१२   ३०
२६	आर्द्राश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	यमाश	१३   ०
२७	कलिनाशाश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	घोराश	१३   ३०
२८	शिवीश्वराश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	दावाप्रधाश	१४   ०
२९	कमलाश्वराश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कालाश	१४   ३०
३०	गुलिवाश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	मृत्योरश	१५   ०
३१	मृत्योरश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	कृतिनाश	१५   ३०
३२	कालाश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	कमलाश्वराश	१६   ०
३३	दावाप्रधाश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	शिवीश्वराश	१६   ३०
३४	घाराश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कलिनाशाश	१७   ०
३५	यमाश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	आर्द्राश	१७   ३०
३६	वषटकाश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	देवाश	१८   ०
३७	मुधाश	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	महेश्वराश	१८   ३०
३८	अमृताश	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	विष्णवशा	१९   ०
३९	पूर्वाष्वन्दाश	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	बह्याश	१९   ३०

४०	विषप्रदग्धाश	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	हेरम्बाश	२०।०
४१	नम्राशाश	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	कोमलाश	२०।३०
४२	वशासपाश	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	मुद्गाश	२१।०
४३	उत्पाताश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	सदाश	२१।३०
४४	कालहपाश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	अमृताश	२२।०
४५	सौम्याश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	अहिमाश	२२।३०
४६	कोमन्ताश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	कालाश	२३।०
४७	शीतलाश	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	महत्याश	२३।३०
४८	दृष्टाकरलाश	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	अपापत्याश	२४।०
४९	इन्दुमुक्ताश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	पुरीपाश	२४।३०
५०	प्रवीणाश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	भाषाश	२५।०
५१	कालाप्रपश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	अप्रपश	२५।३०
५२	दहायुधश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	गरलाश	२६।०
५३	निर्मलाश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कुलप्राश	२६।३०
५४	सौम्याश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	भ्रष्टाश	२७।०
५५	क्रुराश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	विभ्रराश	२७।३०
५६	अतिशीतलाश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	यक्षराश	२८।०
५७	सुधाश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कुवेदाश	२८।३०
५८	पयोधीशाश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	देवाश	२९।०
५९	अमणाश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	राघवाश	२९।३०
६०	दग्दुष्टाश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	घोराश	३०।०

फल-शुभ षष्ठ्यश मे ग्रह हो तो फल शुभ होता है अशुभ षष्ठ्यश मे हो तो अनिष्टकारक होता है।

## अथ वर्गभेदानाह

वर्गभेदानह वक्ष्ये मैत्रेय त्व विधारय ॥ षड्वर्गा सप्तवर्गाश्च दिग्वर्गा नृपवर्गाका ॥११॥  
 भवति वर्गसयोगे षड्वर्गे किशुकादय ॥ द्वाभ्या किशुकनामा च त्रिभिर्व्यजनमुच्यते ॥१२॥  
 चतुर्भिश्चामरास्य च छत्र पचभिरेव च ॥ षड्भिः कुण्डलयोग स्यान्मुकुटास्य च सप्तभिः  
 ॥१३॥ सप्तवर्गोऽथ दिग्वर्गे परिजाता विसर्जका ॥ पारिजात भवेद्द्वाम्यामुत्तम त्रिभिःरुच्यते  
 ॥१४॥ चतुर्भिर्गोपुरास्य स्याच्छरे सिंहासन तथा ॥ पारावत भवेत्षड्भिर्देवलोक च सप्तभिः  
 ॥१५॥ वसुभिर्ब्रह्मलोकस्य नवभिः शक्रवाहनम् ॥ दिग्भिः श्रीधामयोग स्यादयपोडशवर्गके  
 ॥१६॥ भेदक च भवेद्द्वाम्या त्रिभिः स्यात्कुसुमास्यकम् ॥ चतुर्भिर्नागपुष्य स्यात्पचभिः  
 कदुकाह्वयम् ॥१७॥ केरलास्य भवेत्षड्भिः सप्तभिः कल्पवृक्षकम् ॥ आठभिश्चदनवन  
 नवभिः पूर्णचन्द्रकम् ॥१८॥ दिग्भिरुच्चैः श्रवा नाम रुद्रैर्धन्वन्तरिर्भवेत् ॥ सूर्यकान्त  
 भवेत्सूर्यैर्विश्वे स्याद्विद्रुमास्यकम् ॥१९॥ शक्रसिंहासन शक्रैर्गोलोकिविभिर्भवेत् ॥ मूपै  
 श्रीवल्लभास्य स्याद्वर्गा भेदशदाहता ॥२०॥ स्वोच्चमूलत्रिकोणस्यभवनाधिपति तथा ॥  
 स्वाहृदात्केद्रनाथाना वर्गा प्राह्या मुधीमता ॥२०॥ अस्तङ्गता ग्रहजिता नीचगा  
 दुर्बलास्तथा ॥ शयनादि वयादुस्था उत्पन्ना योगनाशका ॥२०२॥

### वर्गभेदप्रकार नाम

हे मैत्रेय! अब हम वर्गभेद कहते हैं आप ध्यान से सुनिये। प्रायः ४ समूह में इनका विचार किया जाता है। १-षड्वर्ग। २-सप्तवर्ग। ३-दश वर्ग। ४-षोडशवर्ग। इन ४ समूहों में षड्वर्ग और सप्तवर्ग में एक ही सजाएँ हैं। तथा दशवर्ग और षोडश वर्ग की सजाएँ भिन्न २ हैं। इनमें पहिले २ को संयुक्त सजाएँ कहते हैं। दो वर्गों से किशुक। तीन से व्यजन। चार से चामर। पाच से छत्र। छ से कुटल और सात से मुकुट नाम होता है। अब दश वर्ग की सामुहिक सजा कहते हैं-

दो वर्गों से पारिजात। तीन से उत्तम। चार से गोपुर। पाच से सिंहासन। छ से पारावत। सात से देवलोक। आठ से ब्रह्मलोक। नौ से शक्रवाहन। और दश से श्रीधाम नाम होता है। अब षोडशवर्ग की सामुहिक सजाएँ कहते हैं। दो से भेदक। तीन से कुसुम। चार से नागपुष्य। पाँच से कदुक। छ से केरल। सात से कल्पवृक्ष। आठसे चदनवन। नौ से पूर्णचन्द्र। दश से उच्चैः श्रवा। ग्यारह से धन्वन्तरि। बारह से सूर्यकान्त। तेरह से विद्रुम। चौहद से शक्रसिंहासन। पन्द्रह से गोलोक। सोलह से श्रीवल्लभ। ये नाम समूहात्मन्व परक हैं अर्थात् नामके साथ की सख्या ने वर्गसमुदाय का उल्लिखित नाम है।

केन्द्राधिपति ग्रहों की आरुह राशि (राशि अथ कलादि स) इन वर्गों का विचार करना चाहिए। जो ग्रह स्वग्रह उच्च मूल त्रिकोण में होते हैं उनके वर्ग भी यदि थोष्ट हो तो अपने शुभकारक फल में बलवान् होते हैं। और अस्त नीच शत्रुराशिगत ग्रहों के वर्ग योगनाशक होते हैं ॥१९१-१०२॥

किंशुकादिसप्तकवर्गसंज्ञाचक्रमिदमाह					
२	३	४	५	६	७
किंशुकाख्यम्	व्यननाख्यम्	चामराख्यम्	छत्रम्	कुडलाख्यम्	मुकुटाख्यम्

पारिजातादिदशवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्								
२	३	४	५	६	७	८	९	१०
पारिजात	उत्तमम्	गोपुराख्य	सिंहासन	पाररवाह	देवलोक	ब्रह्मलोक	सक्रवाहन	श्रीघाम

भेदादिषोडशवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्														
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
शेदकम्	कुशुमाख्यम्	नागशुण्डम्	ककुकाद्वयम्	केरलाख्यम्	कल्पशुक्रम्	चदननाम्	सूर्यस्तम्	सखी श्रवा	सन्वतिरि	सूर्यकान्तम्	विदुमाख्यम्	सक्रवाहासन	पोतोिकम्	श्रीविलासाख्य

अथ षोडशवर्गेषु चित्तालम्बनं वदाम्यहम् ॥ तत्र वेदस्य विज्ञानं होरायां सपदरदिकम् ॥१०३॥  
 त्रेष्काण्ये भ्रातृजं सौख्यं तुयांशे भाग्यचिन्तनम् ॥ पुत्रपौत्रादिकानां वै चिन्तनं सप्तमाशके  
 ॥१०४॥ नवमाशे कलत्राणां दशमाशे महत्फलम् ॥ द्वादशाशे तथा पित्रोश्चित्तं षोडशाशके  
 ॥१०५॥ सुखाऽसुखस्य विज्ञानं वाहनानां तथैव च ॥ उपासनायां विज्ञानं साध्यं विज्ञानभागके  
 ॥१०६॥ विद्यायां वेदवाङ्मनो भाशे चैव ब्रह्माऽबलम् ॥ विशाशके रिष्टफलं खवेदाशे  
 शुभाऽशुभम् ॥१०७॥

**वर्ग से विचारणीय विषय**

इन षोडश वर्गों में किस वर्ग के लक्षण से किस विषय का विचार करना चाहिये यह कहा जाता है। लक्षण (जन्म लक्षण) से जातक के वेद का विचार करना चाहिए। 'होरा लक्षण' से सम्पत्ति = पृथ्वी, भूकान, जमीन आदि अचल तथा सोना, चांदी, रुपया आदि चल सम्पत्ति का विचार करना चाहिए। 'त्रेष्काण' से भाई बंधु का मुंह दुःख का विचार करना चाहिए।

‘चतुर्थाश’ से भाग्य का विचार करना चाहिए। ‘सप्तमाश’ से पुत्र पौत्र आदि परिवार का विचार करना चाहिए। ‘नवमाश’ से विशेष करके भार्या सम्बन्धी विचार करना। ‘दशमाश’ से कोई बड़ी समस्या जिराका अपने जीवन से सम्बन्ध सम्भव हो उसका विचार करना। ‘द्वादशाश’ से माता पिता की स्थिति तथा सुख, दुःख का विचार करना चाहिए। ‘षोडशाश’ से सुख दुःख का तथा गाड़ी, मोटर आदि वाहन का विचार करना चाहिए। ‘विशाश’ से उपासना की सिद्धि-असिद्धि का विचार करना। ‘चतुर्विंशाश’ से विद्या की प्राप्ति, अप्राप्ति का विचार करना। ‘सप्तविंशाश’ में अपना बलाबल का विचार तथा त्रिंशाश में रिष्ट (कष्ट+रोग) आदि विचार एवं ‘खवेदाश’ में भले बुरे (शुभ अशुभ) का विचार करना चाहिए। ‘अक्षवेदाश तथा ‘षष्ठ्यश’ में सम्पूर्ण समस्याओं का विचार करना चाहिये ॥१०३-१०७॥

अक्षवेदाशभागे च षष्ठ्यंशेऽखिल मोक्षयेत् । यत्र कुत्रापि सम्प्राप्त कूरषष्ठ्यशकाधिपः ॥१०८॥ तत्र नाशो न सदेहो मैत्रेयस्य वचो यथा ॥ यत्र कुत्रापि संप्राप्त कलाशाधिपति शुभः ॥१०९॥ यत्र वृद्धिश्च पुष्टिश्च मैत्रेयस्य वचो यथा ॥ इति षोडशवर्गाणां भेदास्ते प्रतिपादिता ॥११०॥ उदयाविषु भावेषु खेटस्य भवनेषु वा ॥ वर्गविश्वाबल वीक्ष्य तेषां तेषां शुभाशुभम् ॥१११॥

### विचार विवेचन

मैत्रेय जी का कहना है कि— षष्ठ्यश का स्वामी यदि बुर हो तो वह जिस भाव में स्थित होगा उसी भाव की हानि करता है यह निःसदिग्ध है। और इसी तरह शुभ षष्ठ्यश का स्वामी भी शुभ होकर जिस भाव में स्थित होगा उस भाव की पुष्टि और वृद्धि निश्चय करता है। हे मैत्रेय! तुमको यह षोडश वर्ग का विचार कहां तथा जन्म लग्न और उसके घन, सहज आदि अन्य भाव और मूर्धादि ग्रह जिन स्थानों में तथा वर्गों में हो उनका वर्ग विचार तथा विश्वा बल विचार करके शुभ या अशुभ फल कहना ॥१०८-१११॥

अथवा सप्रवक्ष्यामि वर्गं विश्वाबल द्विज । यस्य विज्ञानमात्रेण विपाकं दृष्टिगोचरम् ॥११२॥ गृहविश्वाबल वीक्ष्य सूर्यादीनां संचारिणाम् ॥ स्वगृहोच्छे बल पूर्णं शून्यं तत्सप्तमस्थिते ॥११३॥ ग्रहस्थितिवशाज्ज्ञेयं द्विराश्याधिपतिस्तथा ॥ मध्ये तु पाततो ज्ञेया ओजपुगर्मक्षमेदत ॥११४॥ सूर्यहोराफलं द्युर्जावाकंबसुधात्मजा चन्द्रास्फूर्जिदर्वपुत्राश्चद्रहोराफलप्रदा ॥११५॥ फलद्वयं धुधो दद्यात्समे चाद्रतदन्यके ॥ रवे फलं स्वहोरादौ फलहीनं विरामके ॥११६॥

### विश्वाबल विचार

हे मैत्रेय! अब हम विश्वाबल कहते हैं, जिसके ज्ञान में शुभाशुभ यर्मफल का परिणाम रूप सुख दुःख का ज्ञान होता है। लग्न आदि भावों तथा मूर्ध आदि ग्रहों का विश्वाबल देव वर (जानकर) फलाफल भाग कही गई रीति में निश्चय करना। मूर्धादि ग्रह स्वगृही अथवा उच्चपरमोच्च हो तो पूर्ण बली होते हैं, नीच गतिगत ग्रहोक्षी हो तो बलीहीन होते हैं। ग्रहों



पूर्वखण्डे तृतीयोऽध्यायः

की स्थिति के आधार पर विचार करना। द्विराश्याधिपति ग्रहों का दो भावों पर प्रभाव होता है यह ध्यान रखना। वर्गबल देखने के समय सब विषय राशियों का ध्यान रखना। सूर्य होरा में सूर्य, मंगल, गुरु विशेष फलदायक है। चन्द्र होरा में चन्द्र शुक्र जनि विशेष फलदाता है। बुध, सूर्य तथा चन्द्र दोनों की होरा में फलदाता है। सूर्य-अपने होरा आदि में पूर्ण फल देता है। वर्ग-होरा आदि के अन्त में (समाप्ति के अर्थ में) फलहीन होता है। होरा, द्रेष्काण आदि में आदि, मध्य, अन्त की बलाबलता अनुपात से समझना। स्वगृह के समान ही नवमाश में तथा चतुर्याश में ग्रह का फल होता है।

मध्येऽनुपातात्सर्वत्र द्रेष्काणेपि विचित्रयेत् । गृहवर्तुर्यभागेऽपि नवांशादावपि स्वग्रम् ॥११७॥  
सूर्यः कुजफलं घत्ते भार्गवस्य निशापतिः ॥ त्रिंशांश के विचित्रैवमत्रापि गृहवत्समूतः ॥११८॥  
लग्नहोरादृकाणां कभागनूर्यांशिका इति ॥ सर्वे त्रिंशांश सहिताः पद्बर्गा विश्वकाः क्रमात्  
॥११९॥ रसनेत्राद्यिपचाश्विनमयः सप्तवर्गके ॥ स्थूल फल च सस्थाप्य तत्सूक्ष्म च ततस्ततः  
॥१२०॥ सप्तमांशक तत्र विश्वका मंचलोचनम् ॥ त्रयः सार्द्धं द्वय सार्द्धवेद द्वौ रात्रिनायकाः  
॥१२१॥ दशवर्गाद्विंशादद्याः कलांशाः षष्टिभागकाः ॥ त्रयं क्षेत्रस्य विज्ञेयाः पंचषष्ट्यंशक-  
स्य च ॥१२२॥

त्रिंशांश में इतना विशेष है कि-सूर्य, मंगल का और चन्द्रमा, शुक्र का फल देता है। फलाफल भावानुसार ही जानना। इस प्रकार लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमाश, द्वादशाश और त्रिंशांश के विश्वाबल क्रम से देखकर विचार करना। यह पद्बर्ग (नाम से प्रसिद्ध) है और पद्बर्ग में विश्वाबल क्रमशः ६,२,७,५,३,१, सख्या में प्राप्त होते हैं। प्रथम स्थूल रूप से लग्न भाव स्थित ग्रहों का विचार पुन सूक्ष्मरूप से स्व, उच्चादिरूप से विचार करना फिर उससे भी सूक्ष्म सप्तकवर्ग से विचार करना। इस सप्तकवर्ग में विश्वाबल की सख्या क्रमशः ५,२,३,२॥,४॥,२,१ जानना तथा दशवर्ग बलसाधनमें स्वक्षेत्रका ३ विश्वाबल है, और षोडश षष्ट्यंश का वर्ग बल में स्व के ३ षष्ट्यंश के ५ विश्वाबल लेना चाहिए। और बाकी वर्गों में १॥ विश्वाबल लेना ॥११२-१२२॥

सार्द्धकनागाः शेषाणां विश्वकाः परिकीर्तिताः ॥ अयं वक्ष्ये विशेषेण विश्वकां मम समताम्  
॥१२३॥ क्रमात् षोडशवर्गाणां क्षेत्रादीनां पृथक् पृथक् ॥ होराणां भागदृक्काणकुचद्वाराणिः  
क्रमात् ॥१२४॥ कलांशस्य द्वयं त्रयं त्रयं नंदांशकस्य च । क्षेत्रे सार्द्धं च त्रितयं चतुःषष्ट्यंशकस्य  
हि ॥१२५॥ अर्द्धमर्धं तु शेषाणां हेतुस्त्वोद्यमुदाहृतम् ॥ पूर्ण विश्वाबल विशेष धृतिः  
स्यादधिमित्तके ॥१२६॥ मित्रे पचदश प्रोक्तं समे दश प्रकीर्तितम् ॥ सप्तौ सप्ताधिपतौ च पच  
विश्वबल भवेत् ॥१२७॥ वर्गविश्वाः स्वविश्वानाः पुनर्विशतिनाजिताः । विश्वाफलोपयोग्यं  
तत्तंचोचन फलदो न हि ॥१२८॥ तदूर्ध्वं स्वल्पफलदं दशोर्ध्वं मध्यमं मृतम् ॥ तिम्यर्थं पूर्णफलदं  
योध्यं सर्वं सचरिणाम् ॥१२९॥ अयान्यदपि वक्ष्येऽहं मैत्रेय त्वं विद्यारय ॥ सेदाः पूर्णफलं  
दशः सूर्यास्तप्तमके स्थिताः ॥१३०॥ फलाभाव विजानीयात्समे सूर्यनभश्चरे ॥ मध्येऽनुपाता  
त्सर्वत्र ह्युदयास्तविशेषकाः ॥१३१॥ वर्गविश्वात्म त्रयं फलमस्य द्विजर्धम ॥ पञ्च यत्र फल

बुद्ध्वा तत्फलं परिकीर्तितम् ॥१३२॥ वर्गविश्राफलं चादाबुद्ध्यास्तमतःपरम् ॥ पूर्णं पूर्णैति पूर्णं  
स्यात्सर्वैवं विचिंतयेत् ॥१३३॥ हीनं हीनैति हीनं स्यात्स्वल्पात्पेत्पल्पकं स्मृतम् ॥ मध्यं  
मध्येति मध्यं स्याद्यावत्तस्य दशास्थितिः ॥१३४॥

### पाराशर संमत विश्वाबल

अब हम अपने सम्मत विश्वाबल कहते हैं। स्वक्षेत्र से आरंभ करके अलग २ होरा, त्रिशांश  
ट्रेक्वाण का १-१ षोडशांश में दो और नवांश में तीन तथा स्वक्षेत्रबल साठे तीन एव पठ्यंश  
में चार विश्वाबल लेना। बाकी नौ वर्गों में आधा आधा विश्वाबल लेना। पूरा विश्वाबल २०  
होता है। अधिमित्र में (१८) और मित्र क्षेत्र में (१५) सामक्षेत्र में (१०), शत्रु क्षेत्र में (७)  
तथा अधिशत्रु क्षेत्र में (५) विश्वाबल होता है। वर्ग से प्राप्त हुए विश्वा अपनी विश्वा सत्या  
से गुण करके २० का भाग देकर लब्धि विश्वा प्राप्त होता है। यह विश्वाबल ५ से कम हो तो  
निष्फल जानना। ५ से १० तक स्वल्पफल दायक है और १० से ऊपर मध्यम फल तथा १५  
से ऊपर विश्वाबल पूर्णफल दायक है। हे मैत्रेय! विशेष विचार भी कहता हूँ। सभी यह सूर्य से  
सप्तमभाव में स्थित हों तो पूर्णफल देते हैं। सूर्य के साथ होने से (अस्त होने के कारण) फल  
नहीं देते। साथ और सप्तम के बीच में अनुपात से विश्वाबल का विचार करना। इसका नाम  
उदयास्त बल है, वर्ग विश्वाबल के समान इसको भी मानना चाहिये। वर्ग विश्वाबल और  
उदयास्त दोनो अलग-अलग सब देखकर शुभाशुभ फल कहना चाहिये। वर्ग विश्वाबल और  
उदयास्तबल दोनो पूर्ण, पूर्ण (१५ से अधिक हो तो) पूर्ण बल जानना। मध्य, मध्य हो तो १०  
से १२॥ तक मध्य जाने और दोनो हीन बल हो तो हीनबल जाने। दोनो अल्प हों तो २॥ से  
५ तक अल्प जाने। इस प्रकार जिस ग्रह का विश्वाबल निश्चय किया है उससे सूचित शुभाशुभ  
उस ग्रह की दशा भर में होगा, ऐसा निश्चय करे ॥१२२-१३४॥

अथान्यदपि वक्ष्यामि मैत्रेय धृणु मुद्यत ॥ सप्ततुर्पास्तविपता केंद्रसंज्ञा विशेषतः ॥१३५॥  
द्विपंचरं प्रज्ञाभास्यं ज्येष्ठपणफरादिकम् ॥ त्रिपट्टभाष्यव्यादीनामापोक्तिममिति द्विज ॥१३६॥  
सप्तमं चमभाष्यस्य कोणसंज्ञा विधीयते ॥ यच्छाष्टव्ययभावानां दुःसंज्ञास्त्रिकसंज्ञकाः ॥१३७॥  
चतुरस्रं तुर्परं च कथयन्ति द्विजोत्तम ॥ स्वस्यादुपचयलाणि त्रिपट्टायांबराणि हि ॥१३८॥  
तनुर्धनंचसहजोबंधुपुत्रारयस्तथा । युवतीरंघ्रधर्माख्यं कर्मलाभय्याः क्रमात् ॥१३९॥  
संक्षेपेणैतदुदितमन्यद्बुद्धघनुसारतः ॥ किंचिद्विशेषं वक्ष्यामि यथा ब्रह्ममुक्ताच्छ्रुतम् ॥१४०॥

### भाव संज्ञा

हे मैत्रेय ! अब और भी कुछ विशेष मन्त्र आदि कहते हैं। तन्त्र, चतुर्ध, सप्तम, दशम की  
'केन्द्र' संज्ञा है। २।५।८।११ स्थानों की 'पणफर' संज्ञा है। इसी प्रकार ३।६।९।१२ स्थानों की  
'आपोक्तिम' संज्ञा है। तन्त्र से ५।९ की 'कोण' तथा 'त्रिकोण' संज्ञा है। ६।८।१२ की दुष्ट  
स्थान तथा 'त्रिक' संज्ञा है। चतुरस्र 'तुर्ध रंघ्र' को ४।८ कहते हैं। ३।६।१०।११ को 'उपचय' तथा  
बुद्धि कहते हैं। ये विशेष मन्त्र हैं। सामान्यतः १२ भावों के भाग ये हैं। तनु, धन, सहज, बन्धु,

पुत्र, शत्रु, जाया, रघ्न, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय ये १२ भावों के नाम हैं। ये सजाए हमने सक्षेप से कही हैं। अब भगवान् ब्रह्मा से सुने हुए कुछ विशेष विचार कहते हैं ॥१३४-१४०॥

नवमेपि पितुर्जातं सूर्याच्च नवमेऽथवा ॥ यत्किञ्चिद्दशमे लाभे तत्सूर्याद्दशमे शिवे ॥१४१॥ सूर्यं तनौ धने लाभे भाग्ये यत्किञ्चिन्तनं च तत् ॥ चद्रातुर्यं तनौ लाभे भाग्ये तत्किञ्चिन्तयेद्भ्रुवम् ॥१४२॥ तत्राद्दुश्चिक्वमयने यत्कुजाद्विक मेऽखिलम् ॥ विचार्य षष्ठभावास्व बुधात्पाठे वित्तोकयेत् ॥१४३॥ पञ्चमस्य गुरोः पुत्रे जायायाः सप्तमे भृगोः ॥ अष्टमस्य व्ययस्यापि मन्वान्मृत्यो व्यये तथा ॥१४४॥ यद्वावाद्यत्फलं वित्य तदीशात्तत्फलं विदुः । ज्ञेयं तस्य फलं तद्धि तत्र चिन्त्यं शुभाशुभम् ॥१४५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरापूर्वखण्डशास्त्रे राशिस्वभावषोडशवर्गादिकथन  
नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

### फल विचार में कुछ विशेष नियम

जातक के पिता के लिये शास्त्र में जो मुख्यरूप से दशम भाव विचारणीय कहा है उस सम्बन्ध में विशेष यह है कि पिता के सम्बन्ध का फलाफल नवम भाव से भी जाना जाता है तथा सूर्य से और सूर्य के नवमभाव से भी विचारना होता है। इसी प्रकार जो विचार दशम और एकादश भाव से कहा गया है, वह सूर्य से तथा सूर्य के दशवे और ग्याहरवे भाव से भी करना चाहिये। तथा जो विचार लग्न, द्वितीय, चतुर्थ, नवम तथा एकादश से करना होता है, वह चन्द्रमा से भी लग्न, चतुर्थ, नवम और एकादश भाव से कर सकते हैं। (यहां चन्द्रमा से धनभाव नहीं कहा है)। लग्न से दुश्चिक्व=तृतीय भाव का विचार मंगल के विक्रम (तृतीय) भाव से भी करे। छठे भाव का विचार बुध के छठे भाव से भी करना। पञ्चम भाव का विचार गुरु के पञ्चम भाव से भी करना, इसी प्रकार सप्तमभाव का विचार शुक्र के सप्तमभाव से भी करना। आठवे और बारहवे भाव का विचार ज्ञान के आठवे और बारहवे से भी करना और विशेष बात यह है कि—जिस भाव से जिस फल का विचार कहा है, वह उस भाव के स्वामी से भी उसी प्रकार जानना चाहिये ॥१४१-१४५॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया राशिस्वभाव-  
षोडशवर्गादिकथन नाम तृतीयोऽध्याय ॥३॥

### पराशर उवाच

मेवादीनां च राशीनां द्वादशानां पृथक्पृथक् ॥ दृष्टिभेद प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजततम ॥१॥  
राशान्मेभिमुक्त्वान्विषयं पश्यति पार्श्वं तथा ॥ रक्षे षष्ठे तथा हूनेऽभिमुखो राशिदृश्यते ॥२॥  
पार्श्वं त्वामहं वक्ष्ये चरत्पिरद्विस्वभावकैः ॥ पञ्चमैकादशो विषयः पश्येत् क्रमेण हि ॥३॥

स्थित ग्रह—चरराशिस्थित ग्रह को देखते है। द्विस्वभावरशि मत ग्रह—द्विस्वभाव राशिस्थित ग्रह को देखता है। अपने निकट की राशि पर स्थित ग्रह को छोड़ कर परस्पर अन्य को देखते है। ॥१६-१८॥

ब्रह्मा का कहा हुआ दृष्टिचक्र कहता है जिसके जानने से दृष्टिभेद जाना जाय, पूर्व दिशा में मेष और वृष तथा दक्षिण दिशा में सिंह, कन्या, एव पश्चिम में तुला, वृश्चिक तथा उत्तर में धनु और मकर लिखना। अग्नि कोण में मिथुन तथा नैर्ऋत्य में कन्या बायव्य में धनु, और ईशान में मीन लिखना। यह चौकोर चक्र के न्यास पर दृष्टिभेद हुआ। तथा ब्रह्मा ने गोलचक्र भिन्न प्रकार की दृष्टि कही है। यह दृष्टि इस प्रकार है—तीसरे और दशवे तथा पाचवे, नवे और चौथे, आठवे तथा सप्तम भाव पर ग्रहों की दृष्टि होती है। शनि, गुरु तथा मंगल ये तीन ग्रह विशेष प्रकार की दृष्टि से देखते है। अथत् दृष्टि में चार भेद है, पूर्ण दृष्टि २० विश्वा मानकर ५ विश्वा की एकपाद, १० की दो पाद, १५ की तीन पाद और २० विश्वा की पूर्ण दृष्टि होती है। शनि—त्रिकोण (५-९) को एक पाद चतुरस्र (४।८) को दो पाद और सप्तम में ३ पाद तथा त्रिदश (३-१०) को पूर्णदृष्टि से देखता है। गुरु—चतुरस्र को एकपाद, सप्तम को दो पाद और त्रिदश को तीन पाद तथा त्रिकोण (५-९) को पूर्ण दृष्टि से देखता है। मंगल—सप्तम में एक पाद, त्रिदश में दो पाद, त्रिकोण में तीन पाद दृष्टि से एव चतुरस्र (४-८) में पूर्णदृष्टि से देखता है। और ग्रहों की ३-१० में एक पाद, ५-९ में दो पाद तथा ४-८ में तीन पाद और सप्तम में पूर्णदृष्टि होती है। हे मैत्रेय! ग्रहों की इस प्रकार दो रीति से यह दृष्टि कही है। प्रथम दृष्टि तो जैसे कही है, वैसे ही जानना और दूसरी में पाद अर्द्ध आदि देख कर पूर्णदृष्टि तक के भेद जानना चाहिये ॥११९-१२९॥

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया दृष्टिभेदकथन नाम  
चतुर्थोऽध्याय ॥४॥

### अथ रिष्टारिष्टभंगाध्यायः

चतुर्विंशतिवर्षाणि यावद्गच्छति जन्मनः ॥ जन्मारिष्टं तु तावत्स्वादायुर्दायं न चिंतयेत् ॥१॥  
पष्ठाष्टरिष्टगश्चरः कूरश्च सह वीक्षितः ॥ जातस्य मृत्युदः सद्यस्त्वष्टवर्षे. शुभेक्षितः ॥२॥  
शनिबन्धुमृत्युदः ६।८।१२ सौम्याश्रेढकाः कूरवीक्षिताः ॥ शिशोजातस्य मासेन सप्रे  
सौम्यविबर्जिते ॥३॥ यस्य जन्मनि धीस्या स्युः सूर्याकिन्दुकुजाभिघा ॥ तस्य त्वाहु जनित्रौ  
च भ्राता च निघनं सभेत् ॥४॥ पापेक्षितो युतो भौमो लग्नो न शुभेक्षितः ॥  
मृत्युदस्त्वष्टमस्योपि सौरेणाकेंष वा पुन ॥५॥ चंद्रसूर्यग्रहे राहुशुक्रसूर्ययुतो यदि ॥  
सौरिभौमेक्षित लग्न पञ्चमेक स जीवति ॥६॥ कर्मस्थाने स्थित सौरि. शत्रुस्थाने  
कलानिधिः ॥ क्षितिजे सप्तमस्थाने समाग्रा छिद्यते शिशु ॥७॥ लग्ने भास्करपुत्रश्च निघने  
चन्द्रमा यदि ॥ तृतीयस्थो यदा जीवः स घाति यममदिरम् ॥८॥

अरिष्ट और अरिष्टभगयोग

जातक के २४ वर्ष की आयु तक 'जन्मारिष्ट' बहना चाहिए। आयु का विचार नहीं करना

चाहिए। (ऐसे 'जन्मारिष्ट' योग कहते हैं) चन्द्रमा यदि पापग्रहो से युक्त होकर ६।८।१२ वे स्थान में हो तो सब जल्दी ही मृत्यु करता है। यदि शुभग्रह देखते हो तो ८ वर्ष तक मृत्यु कारक है। सौम्यग्रह यदि बरकी होकर ६।८।१२ स्थान में पापदृष्ट हो और लग्न में सौम्यग्रह नहीं हो तो बालक की १ साल में मृत्यु होती है। जिसके लग्न तथा पश्चिम में सूर्य श० च० म० स्थित हो उसकी माता तथा भ्राता की मृत्यु होती है। जिस जातक के लग्न में मंगल हो, तथा शुभदृष्टि न हो और पापदृष्टि हो अथवा यह योग अष्टमस्थान में हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है। यह योग सूर्य तथा शनि से भी जानना। चन्द्रमा या सूर्य के घर में राहु, चन्द्र सूर्य के साथ में स्थित हो तथा लग्न को शनि, मंगल दोनों देखते हो तो जातक १५ दिन ही जीता है। जिस जातक के दशमस्थान में शनि तथा छठे चन्द्रमा और मंगल सातवे हो वह बालक माता सहित मृत्यु को प्राप्त होता है। जिस जातक के लग्न में शनि तथा अष्टमभाव में चन्द्रमा तथा तीसरे में गुरु हो वह जल्दी ही मृत्यु पाता है। जन्म समय में लग्न, नवम स्थान में सूर्य और सप्तममें शनि तथा शुक्र, गुरु एकादश में हो वह एक महीने तक ही जी सकता है।

होरायां नवमे सूर्यः सप्तमस्यः शनैश्चरः ॥ एकादशे गुरुः शुक्रो मासमेक स जीवति ॥९॥ व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टाः सूर्यशुक्रेदुराहवः ॥ विरोधाभ्राशकर्तारो दृष्ट्या वा भगकारिणः ॥१०॥ पापान्वितः शशो धर्मं ह्यूनलग्नगतो यदि ॥ शुभरवेक्षितपुत्रस्तदा मृत्युप्रदः शिशोः ॥११॥ संध्यायां चन्द्रहोराया गण्डांति निघनाय वै ॥ प्रत्येकं चन्द्रपापंश्च केन्द्रगैः स्याद्दिनाशनम् ॥१२॥ रवेस्तु मण्डलाढास्तिस्त्रापसंध्या त्रिनाडिका ॥ तथैवाढोदपात्पूर्वभ्रातः सन्ध्या त्रिनाडिका ॥१३॥ चक्रपूर्वापरादुषु चरसौम्येषु फीटभे ॥ लग्नगे निघनं भांति नाऽप्रकार्या विचारणा ॥१४॥ व्यपत्ताभुगतैः क्रूरैर्मृत्युं ब्रह्मगतैरपि ॥ पापमध्यगते लग्ने सत्यमेव मृति वदेत् ॥१५॥ लग्नसप्तमगौ पापी चद्रोऽपि क्रूरसयुतः ॥ यदा त्यवीक्षितः सौम्यैः शीघ्रान्मृत्युर्भवेत्तदाः ॥१६॥

बारहवे घर में सभी ग्रह नेष्ट हैं परन्तु सूर्य, शु० च० रा० हो अथवा इनकी दृष्टि हो (और शुभ दृष्टि नहीं हो तो विशेष करके हानि करने वाले होते हैं। पापग्रहयुक्त चन्द्रमा लग्न, सप्तम या नवम स्थान में हो तथा शुभ दृष्टि या योग न हो तो बालक की मृत्यु होती है। संध्याकाल का अथवा चन्द्रमा की होरा या गंडान्त (मूल, आश्लेषा, ज्येष्ठा) में जन्म हो, चन्द्रमा और ग्रह केन्द्र में हो तो मृत्युकारक होते हैं। (सूर्यास्त के बाद तथा सूर्योदय के पहले ३ घंटों 'संध्याकाल' कहा जाता है।) कर्क लग्न हो और लग्न से सातवे भाव तक पापग्रह और सातवे में बारहवे तक सौम्य ग्रह हो तो बालक की मृत्यु होती है। छठे तथा बारहवे और दूररे स्थान में पाप ग्रह हो तो निश्चय मृत्यु होती है। लग्न तथा सप्तम में पाप ग्रह हो, चन्द्रमा को क्रूरग्रह देखते हो और सौम्यदृष्टि नहीं हो तो शीघ्र मृत्युकारक योग है।

जीर्णे शशित्ति लग्नस्ये पापैः केन्द्राष्टसस्थितैः ॥ यो जातो मृत्युमाप्नोति स विप्रेत न सगायः ॥१७॥ पापघोर्भयगश्चदो सप्रगष्टांतसप्तमः ॥ अचिरान्मृत्युमाप्नोति यो जातः स मिशुस्तदा ॥१८॥ षापद्वयमध्यगते चन्द्रे सप्तसमायिते ॥ सप्ताष्टमेन पापेन मात्रा सह मृतः शिशुः ॥१९॥ शनैश्चरार्कभौमेषु रिष्टपार्माष्टमेषु च ॥ शुभरबीक्ष्यमाणेषु यो जातो निघन गतः

॥२०॥षट्द्रेष्कोणे च यामित्रे यस्य स्याद्दाहणो ग्रहः ॥ क्षीणचन्द्रो-विलप्रस्थः सद्यो हरति जीवितम् ॥२१॥ आपोविलमस्थिताः सर्वे ग्रहा बलविबर्जिताः ॥ षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम् ॥२२॥

वृद्ध चन्द्रमा (कृष्ण पक्ष की १० से ३० तक चन्द्रमा की वृद्ध अवस्था है।) लग्न में हो, पापग्रह केन्द्र तथा अष्टम स्थान में हो तो हे मैत्रेय! ऐसे योग में हुआ बालक नहीं जीता है। चन्द्रमा पापमध्यगत होकर लग्न से सातवे, आठवे या बारहवें में हो ऐसे योग में जन्म होने वाले बालक की जल्दी मृत्यु होती है। चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य होकर लग्न में स्थित हो तथा सप्तम अष्टमभाव में पापग्रह हो तो बालक की माता के साथ ही मृत्यु होती है। आठवे बारहवें तथा नौवें स्थान में सूर्य, मंगल, शनि हो और शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो जातक की मृत्यु होती है। जिसके सप्तम स्थान में (द्रेष्काण और लग्न में) पापग्रह हो और लग्न में क्षीणचन्द्रमा हो तो जल्दी ही मृत्यु देनेवाला योग है। जिसके जन्मसमय में सारे ही ग्रह निर्बल होकर ३।६।९।१२ स्थान में हो वह बालक २ मास से ६ मास तक जी सकता है ॥१-२२॥

### अथ मातृकष्टम्

चन्द्रमा यदि पापानां प्रितये न प्रदृश्यते ॥ मातृनाशो भवेत्तस्य शुभदृष्टे शुभं वदेत् ॥२३॥ धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा स्थितः ॥ तस्य मातृभविन्मृत्युमृते पितरि जायते ॥२४॥ पापात्सप्तमरंद्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते ॥ बलिभिः पापकैर्दृष्टे जाते भवति मातृहा ॥२५॥ उच्चस्थो वाश्य नीचस्थः सप्तमस्यो यदा रविः ॥ पानहीनो भवेद्बालः अजासीरेण जीवति ॥२६॥ चन्द्राच्चतुर्यगः पापो रिपुलेत्रे यदा भवेत् ॥ तदा मातृवध कुर्यात्केन्द्रे यदि शुभो न चेत् ॥२७॥ द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत् ॥ तदा मातृर्भय विद्याच्चतुर्यं दशमे पितुः ॥२८॥ लग्ने क्रूरो ध्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च । सप्तमे भवने क्रूरःपरिवारभयंकरः ॥२९॥ लग्नस्थे च गुरौ सौरौ धने राहौ तृतीयो ॥ इति चेज्जन्मकाले स्यान्माता तस्य न जीवति ॥३०॥क्षीणचन्द्रात्त्रिकोणस्थैः पापैः सौम्यदिव्यज्जितैः ॥ माता परित्यजेद्बाल षण्मासाच्च न संशयः ॥३१॥ एकांशकस्यां भंदारी यत्र कुत्र स्थितौ यदा ॥ शशि केन्द्रगतौ तौ वा द्विमातृभ्यां न जीवति ॥३२॥

### मातृ कष्टकारक योग

यदि चन्द्रमा पापत्रितय (सूर्य, मंगल, शनि) के साथ न हो तो माता को कष्ट सम्भव है। शुभदृष्टि होने से कष्ट नहीं है। जिसके धनस्थान (द्वितीय) में रा० बु० शु० श० मू० हो उस जातक को पिता की मृत्यु होने के बाद जन्म हो और माता की मृत्यु होती है। पापग्रह में चन्द्रमा, ७।८ में पापयुक्त तथा बलवान् पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक माता का मारक होता है। जिस जातक के सप्तम स्थान में सूर्य उच्च अथवा नीच राशि का हो वह बालक माता का दूध न पाकर बकरी के दूध से जीता है। चन्द्रमा से चौथे पापग्रह छठे भाव में हों और केन्द्र में शुभग्रह न हों तो माता की मृत्यु होती है। छठे तथा बारहवें घर में यदि पापग्रह हो तो माता

को कष्ट और चतुर्थ दशम मे पापग्रह हो तो पिता को बाध होता है। लग्न, सप्तम तथा व्यय मे क्रूर ग्रह हो तथा द्वितीय मे सौम्यग्रह हो तो परिवार के लिये हानिकर योग है। लग्न मे गुरु, द्वितीय मे शनि तथा तृतीय मे राहु हो तो माता की मृत्यु होती है। धीण चन्द्र से सौम्यग्रहरहित पापग्रह त्रिकोण (५-९) स्थान में हो तो छ महीने भीतर ही माता की मृत्यु होती है। मंगल और शनि एक ही-नवाश मे होकर किसी भी भाव मे हो अथवा चन्द्रमा से केन्द्र स्थान मे हो तो माता या मौसी से पालित होने पर भी नही जीता है ॥२३-३२ ॥

### अथ पितृकष्टम्

लग्ने सौरिर्मदे भौमः पण्डस्थाने च चंद्रमाः ॥ इति चैज्जन्मकाले स्यात्पिता तस्य न जीवति ॥३३॥ लग्ने जीवो घने मंदरविभौमबुधास्तथा ॥ विवाहसमये तस्य बालस्य क्षियते पिता ॥३४॥ सूर्यः पापेन समुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगः ॥ सूर्यात्सिद्धभगः पापस्तदापितृबधो भवेत् ॥३५॥ सप्तमे भवने सूर्यः कर्मस्थो नूमितदतः ॥ राहुर्ध्वजे न पर्येव पिता कष्टेन जीवति ॥३६॥ दशमस्थोयदाभौमः शत्रुभेदत्रसमाश्रितः ॥ क्षियते तस्य जातस्य पिता शीघ्र न सशयः ॥३७॥ रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः ॥ कुजश्च सप्तमे स्थाने पिता तस्य न जीवति ॥३८॥ भौमाशकस्थिते भानी स्वपुत्रेण निरीक्षिते ॥ प्राग्जन्मनो निवृत्तिः स्यान्मृत्यु-र्वापि शिशोः पितुः ॥३९॥ पातले चांबरे पापी द्वादशे च यदा स्थितो ॥ पितर मातर हत्वा देशादेशांतरं व्रजेत् ॥४०॥ राहुजीवो रिपुक्षेत्रे लग्ने वायु चतुर्थके ॥ त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तात न पश्यति ॥४१॥ भानुः पिता च जलनां चन्द्रो माता तथैव च ॥ पापदृष्टियुतो भानुः पापमध्यगतोऽपि वा ॥४२॥ पित्ररिष्ट विजानोयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम् ॥ भानोः पण्डाष्टमर्क्षस्थेः पापैः सौम्यविवर्जितैः ॥ चतुरस्रगतैर्वापि पित्ररिष्ट विनिर्दिशत् ॥४३॥

### पितृकष्ट कारक योग

जिसके जन्मसमय मे-लग्न मे शनि, सातवे मंगल, तथा छठे चन्द्रमा हों तो पिता की मृत्यु होती है। लग्न मे गुरु तथा द्वितीय मे म० श० म० बु० हो तो जातक के विवाह मे पिता की मृत्यु होती है। सूर्य के साथ पापग्रह हो अथवा सूर्य पापग्रह मध्यगत हो और सूर्य से सप्तम मे भी पापग्रह हो तो पिता का वध होता है। सप्तमस्थान मे सूर्य हो, दशम मे मंगल हो और राहु बारहवां हो तो पिता रोगी रहता है। जबकि-मंगल शत्रुक्षेत्री होकर दशम मे हो तो शीघ्र ही पिता की मृत्यु होती है। चन्द्रमा पण्डस्थान मे, लग्न मे शनि, मंगल मातवे हो उमवा पिता नही रहता। मंगल के नवमाश मे सूर्य शनि से दृष्ट हो तो बालक के जन्म के पहिले ही पिता का घर छोडना या मृत्यु होती है। चाँये या दशवे अथवा व्यय मे पापग्रह हो तो जातक मातृपितृ हीन होकर देग-विदेग मे भटकना रहता है। गहू, गुरु छठे हो या लग्न मे अथवा चाँये पर मे हो तो तेईसवे वर्ष मे पुत्र जन्म मे पहिले पिता की मृत्यु होती है। जातक का सूर्य ही पिता है और चन्द्रमा माता है, अन सूर्य पापग्रहो मे दृष्ट हो अथवा युक्त हो तो निश्चय ही

पिता को कष्ट जानना)। सूर्य से छोटे आठवे स्थान में पापग्रह हो, सौम्यदृष्टि या योगरहित हो अथवा सूर्य से चौथे स्थान में इसी प्रकार हो तो पिता को अरिष्ट जानना चाहिए ॥३३-३४॥

### अथारिष्टभगमाह

एकोऽपि नार्यगुक्राणा लप्रात्केंद्रगतो यदि ॥ अरिष्ट निखिल हति तिमिर भास्करो यथा ॥४४॥  
 एक एव बली जीवो लप्रस्थो रिष्टसचयम् ॥ हति पापक्षय भक्त्या प्रणाम इव शूलिन ॥४५॥ एक  
 एव विलग्नश केन्द्रसस्थो बलान्वित ॥ अरिष्ट निखिल हति पिनाको त्रिपुर यथा ॥४६॥ शुक्लपक्षे  
 क्षपाजन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षिते ॥ विपरीत कृष्णपक्षे तथारिष्टविनाशनम् ॥४७॥ व्ययस्थाने यदा  
 सूर्यस्तुलालग्ने तु जायते ॥ जीवेत्स शतवर्षाणि दीर्घायुर्बालको भवेत् ॥४८॥ गुरुभौभौ यदा पुत्तौ  
 गुरुदृष्टोऽथ वा कुज ॥ हत्वारिष्टभशेष च जनन्या शुभकृद्भवेत् ॥४९॥ चतुर्थदशमे पाप-  
 सौम्यमध्ये यदा भवेत् ॥ पितु सौम्यकरो योग शुभे केन्द्रत्रिकोण्ये ॥५०॥ लग्नाच्चतुर्थे यदि  
 पापसेट केन्द्रत्रिकोणे सुरराजमत्री ॥ कुलद्वयानदकरे प्रपूतौ दीर्घायुरारोग्यसमन्वितश्च ॥५१॥  
 सौम्यान्तरगतं पापं शुभे केन्द्रत्रिकोण्ये ॥ सद्योनाशयतेऽरिष्टं तद्भावोत्पत्त्यफल न तत् ॥५२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे रिष्टारिष्टभगाऽध्याय ॥५॥

### अरिष्ट भग योग

बुध गुरु शुक्र में से एक भी ग्रह केन्द्र में हो तो सब अरिष्ट दूर करता है। यदि बलवान् होकर गुरु लग्न में हो तो समस्त अरिष्ट योग को दूर करता है जैसे भगवान् शंकर की शरणात्ता समस्त पाप को भस्म कर देती है। लग्न का स्वामी बलवान् होकर केन्द्र स्थान में हो तो सब अरिष्ट दूर करता है। शुक्लपक्ष की रात्रि का जन्म हो और लग्न को सौम्यग्रह देखते हो इसी प्रकार कृष्णपक्ष में दिन का जन्म हो लग्न पाप दृष्टि युक्त हो तो अरिष्ट का नाश होता है। तुला लग्न में जन्म लेने वाले के बारहवें स्थान में सूर्य हो तो सौ वर्ष जीनेवाला दीर्घायु होता है। गुरु पक्ष एक स्थान में हो या मंगल पर पुरुदृष्टि हो तो सब अरिष्ट दूर होते हैं और जातक की माता सुखी रहती है। चौथे दशवे स्थान में स्थित पाप ग्रह यदि सौम्य ग्रहों के मध्य में हो तथा केन्द्र में शुभग्रह हो तो जातक के पिता को सुखकारी हैं। लग्न से चतुर्थ स्थान में पापग्रह होने पर भी केन्द्र या त्रिकोण में गुरु हो तो मातृ पितृ पक्ष के दोनों कुल को आनन्द देनेवाला नीरोगी दीर्घायु बालक होता है। पापग्रह सौम्यग्रहों के मध्य में हो शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण में हो तो सब अरिष्ट को दूर करते हैं और पाप दूषित भाव का नेष्ट फल नहीं होता ॥४५-५२॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० स० भावप्रवाशिकाया रिष्टारिष्टभगाऽध्याय पञ्चम ॥५॥



## अथऽप्रकाशग्रहफलाध्यायः ६

शूरो विमलनेत्रांशः मुस्तब्धो निर्धूणःसलः ॥ मूर्तिस्थे धूमसंप्राप्ते गाढरोषो नरः सदा ॥१॥ रोगी धनी तु हीनांगो राज्यापहृतमानसः ॥ द्वितीये धूमसंप्राप्ते मंदप्राज्ञो नपुंसकः ॥२॥ मतिमान् शीर्षसंप्रामे इष्टचित्तः प्रियवदः ॥ धूमे सहजभावस्थे घनाढ्यो धनवान् भवेत् ॥३॥ कलत्रांगपरित्यक्तो नित्यं मनसि दुःखितः ॥ चतुर्थे धूमसंप्राप्ते सर्वशास्त्रार्थचित्तकः ॥४॥ स्वल्पापत्यो धनैर्दीनो धूमे पञ्चमसंस्थिते ॥ गुरुता सर्वभक्षं च गृह्णन्मंत्रविवर्जितः ॥५॥ बलवाञ्छत्रुवधको धूमे च रिपुभावगे । बहुतेजोयुतः स्यात् सदा रोगविवर्जितः ॥६॥ निर्धनः सततं कामी परदारेषु कोविदः ॥ धूमे सप्तमगे प्राप्तो निस्तेजाः सर्वदा भवेत् ॥७॥ विक्रमेण परित्यक्तः सोत्साही सत्यसंगरः ॥ अप्रियो निष्ठुरःस्वामी धूमे मृत्युगते सति ॥८॥ सुतसौभाग्यसंपन्नो धनी मानी दयान्वितः ॥ धर्मस्थाने स्थिते धूमे धनवान्बधुवत्सलः ॥९॥ सुतसौभाग्यसंयुक्तः संतोषी मतिमान् सुधी ॥ कर्मस्थे मानवो नित्यं धूमे सत्यपदस्थितः ॥१०॥ धनधान्यहिरण्यढ्यो रूपवाञ्छ कसान्वितः ॥ धूमे लाभगते चैव विनीतो गीतकोविदः ॥११॥ पतितः पापकर्मा च द्वादशे धूमसंगते ॥ परदारेषु संसक्तो व्यसनी निर्धूणः शठः ॥१२॥ इति धूमफलम् ॥

## अप्रकाशक ग्रह फल

## धूमग्रहफल

यदि लग्न मे धूम ग्रह हो तो शूरवीर निर्मल नेत्रवाला हठी घृणारहित दुष्टबुद्धि महाक्रोधी होता है ॥ द्वितीयभाव मे धूमग्रह हो तो जातक धनी, रोगी, अगहीन, राजपन्न से चिन्ताशील, भूर्ख और नपुंसक होता है ॥ तृतीय स्थान मे धूमग्रह हो तो बुद्धिमान्, सप्राम मे धीर, मिष्टभाषी, शान्तचित्त तथा धनवान् होता है ॥ चतुर्थ भाव मे हो तो स्त्रीरतिहीन, नित्य चिन्ताशील, शास्त्रव्यसनी होता है ॥ पञ्चम भाव मे हो तो कम मन्तानवाला, धनहीन, स्पृष्टकाय, सर्वभक्षी तथा मित्र रहित होता है ॥ छठे भाव मे होने मे बलवान्, शत्रु को जीतनेवाला, तेजस्वी, नीरोग और विख्यात होता है ॥ सातवें भाव मे हो तो दरिद्री, अतिकामी, लम्पट, कान्तिरहित होता है ॥ आठवें भाव मे हो तो-हिम्मतहीन, उल्गाही, सत्यवादी, निष्ठुर, बठोर वृत्तिवाला होता है ॥ नवमभाव मे धूम हो तो धनी, मानी, प्रजावाला, बन्धुप्रेमी, ऐश्वर्यशाली होता है ॥ दशमभाव मे हो तो सन्तान तथा ऐश्वर्य सम्पन्न, बुद्धिमान्, सुसी, सत्यवादी होता है ॥ एकादशभाव मे-धूम ग्रह हो तो धन सम्पत्तिपुक्त, रूपवान् कन्याप्रेमी, विनीत और मान वाचनिपुण होता है ॥ द्वादश भाव मे धूमग्रह हो तो पतित, पापी, लम्पट, (परस्त्रोगामी) व्यसनी और निर्धूण, दुष्टप्रकृति होता है ॥ धूम फल समाप्त ॥

## अथ पातफलानि

मूर्तो च पाते संप्राप्ते दुःखेनांगप्रपीडितः ॥ शूरो पातकरो मूर्खो द्वेष्यो बंधुजनस्य च ॥१३॥

जिह्वोऽतिपित्तवान् भोगी घनस्थे पातसक्तके ॥ निर्वृणश्च कृतज्ञश्च दुष्टात्मा पापकृत्तया ॥१४॥  
 स्थिरप्रज्ञो रणी दाता धनाड्यो राजबल्लभः ॥ सहजे पापसंप्राप्ते सेनाधीशो भवेत्तर ॥१५॥  
 बद्धव्याधिसमायुक्तमुत्सहीभाग्यवर्जितः ॥ चतुर्थगो यदा पातस्तदा स्यान्मनुजश्च स ॥१६॥  
 दरिद्रो रूपसयुक्तपाते पचमगे यदि ॥ कफपित्तानिलैर्युक्तो निष्ठुरो निरपत्रप ॥१७॥ शत्रुहन्ता  
 सुपुष्टश्च सर्वास्त्राणां च ग्राहकः ॥ कलासु निपुणः शातः पाते शत्रुगते सति ॥१८॥  
 घनदारमुतस्त्यक्तस्त्रीजितसप्तमस्थितः ॥ पाते कलयगे कामी निर्लज्जः परसौहृदः ॥१९॥  
 विकलाशौ विरूपश्च दुर्भगो द्विजनिदकः ॥ मृत्युस्थाने स्थिते पाते रक्तपोडापरिप्लुतः ॥२०॥  
 बहुव्यापारको नित्यबहुमित्रो बहुश्रुतः ॥ धर्मभे पापसंप्राप्तो स्त्रीप्रियज्ञः प्रियवदः ॥२१॥ सश्रीको  
 धर्मकृच्छ्रान्तो धर्मकार्येषु कोविदः ॥ कर्मस्थे पातसंप्राप्ते महाप्राज्ञो विचक्षणः ॥२२॥  
 प्रभूतधनवान्मानी सत्यवादी दृढव्रतः ॥ अश्वाद्यो गीतस्सक्तः पाते लाभगते सति ॥२३॥ कोपी च  
 बहुकर्मद्विषो ध्यगो धर्मस्य दूषकः ॥ व्ययस्थाने गते पाते विद्वेषी निजबधुमि ॥२४॥ इति  
 पातफलानि॥

### पातग्रहफल

लग्न मे यदि पातग्रह हो तो दुःखी रोगी क्रूर घातकारी मूर्ख और बन्धुद्वेषी होता है॥  
 घनस्थान मे पात हो तो कुटिल पित्तप्रकृति भोगी घृणारहित दुष्टात्मा पापी और कृतघ्न  
 होता है॥ तृतीयभाव मे पात हो तो अपने विचार पर दृढ रहनेवाला रणवीर दानशील  
 धनाड्य राज मे मानवाला सेनाध्यक्ष होता है॥ चतुर्थ भाव मे पात हो तो मुख  
 सौभाग्यहीन रोगी दरिद्री तथा कैदी होता है॥ पाँचवे भाव मे पात हो तो रूपवान् दरिद्री  
 त्रिदोषयुक्त शरीर निष्ठुर और निर्लज्ज होता है॥ छठ भाव मे पात हो तो शत्रुहन्ता  
 पुष्टशरीर हथियार चलाने मे प्रवीण कलाचतुर तथा शान्तप्रकृति होता है॥ सप्तम स्थान मे  
 पात हो तो धनऐश्वर्यहीन स्त्री-पुत्र-रहित या स्त्री के आधीन रहनेवाला तथा निर्लज्ज और  
 परप्रेमी होता है॥ आठवे स्थान मे पात हो तो नेत्ररोगी विरूप दुर्भागी परनिन्दक रक्तस्राव  
 आदि रोगवाला होता है॥ नवमभाव मे पात हो तो अनेक व्यापार करनेवाला अनेक  
 मित्रोवाला बहुश्रुत मिष्टभापी दारप्रेमी होता है॥ दशमभाव मे पात हो तो लक्ष्मीवान्  
 धर्मात्मा शान्तप्रकृति महापण्डित और अतिचतुर होता है॥ लाभस्थान मे पात हो तो  
 महाधनी प्रतिष्ठित सत्यवादी दृढसकल्यवाला सवारीवाला गायनप्रेमी होता है॥ बारहवे  
 स्थान मे पात हो तो क्रोधी अगहीन धर्मद्रोही बन्धुद्वेषी तथा अनेक वामो मे ससक्त रहता  
 है॥१३-२४॥

### अथ परिधिफलम्

विद्वान्त्वरतः शातो घनवान् पुत्रवाञ्छुचि ॥ दाता च परिधी मूर्त्तो जायते गुरुवत्सलः ॥२५॥  
 ईश्वरो रूपवान् भोगी सुखी धर्मपरायणः ॥ घनस्थे परिधी प्राप्ते प्रभुर्मवति मानवः ॥२६॥  
 स्त्रीबल्लभः सुहृपागो देवस्वजनसगतः ॥ तृतीये परिधी मृत्यो गुरुभक्तिसमन्वितः ॥२७॥ परिधी  
 सुखभावस्थे विस्मित त्वरिमङ्गलम् ॥ अक्षर त्वय सम्पूर्णं कुरुते गीतकोविदः ॥२८॥ लक्ष्मीवान्  
 शीलवान् कातः प्रियवान् धर्मवत्सलः ॥ पचमे परिधी जाते स्त्रीणां भवति बल्लभः ॥२९॥

लाभो चापसंपाते लाभयुक्तो भवेन्नरः ॥ नीरोगो बृद्धकोपाग्निमीशस्त्रीपरमास्त्रवित् ॥४७॥  
 सत्तेजसिमानो दुर्बुद्धिर्निर्लज्जो व्ययसंस्थितः ॥ चापे परस्त्रीसंयुक्तो जायते निर्धनः सदा ॥४८॥  
 इति चापफलानि ॥

### अप्रकाश चापग्रहफल

लग्न मे चापग्रह हो तो धन ऐश्वर्य युक्त, सर्वदोषरहित कृतज्ञ और समाज मे मान्य होता है। धनभाव मे चाप हो तो प्रिय वचन बोलने वाला, प्रगल्भ (ढोड) विनीत, विद्वान्, धर्मात्मा तथा रूपवान् होता है। तीसरे भाव मे चाप हो तो कलाप्रेमी परन्तु कृपण, चोरी करनेवाला, हीनाग मैत्री तत्पर रहता है। चौथे भाव मे चाप हो तो सुखी नीरोग धनादि ऐश्वर्यवान् राजमान्य होता है। पंचम भाव मे चाप हो तो रूपवान् गम्भीर विचारवाला, सुरुचि सम्पन्न, प्रियभाषी, देवभक्त, सब कामो मे अनुभवी होता है। छठे स्थान मे चाप हो तो, शत्रु का नाश करने वाला धूर्तता रहित, सुखी, प्रीति में रुचिवाला, पवित्र विचार और सर्व कार्य मे दक्ष होता है। सप्तम भाव मे चाप हो तो आज्ञाकारी, पूर्वगुणी, शास्त्रज्ञानवाला धार्मिक होता है। अष्टमस्थान मे चाप हो तो दूरगो की नौकरी करनेवाला, क्रूरस्वभाववाला, परस्त्रीगामी, चिन्ताशील होता है। नवमभाव मे चाप हो तो आदर करनेवाला तपस्वी, व्रतादि मे निष्ठावाला, विद्यावान्, समाज मे विख्यात होता है। दशमभाव मे चाप हो तो धन, ऐश्वर्य, सन्तानवाला, गौ आदि का पालक लोक समाज मे प्रसिद्ध होता है। यदि लाभस्थान मे चाप हो तो व्यापार से बहुत लाभ होता है। नीरोगी, बहुक्रोधी, अस्वविधानिपुण, स्त्रीभोगी होता है। बारहवें भाव मे चाप हो तो अभिमानी, दुर्बुद्धि, निर्लज्ज, परस्त्रीगामी तथा दरिद्री होता है ॥३७-४८॥

### अथ शिखिफलम्

कुसलः सर्वविद्यासु सुखी यादनिपुणः प्रियः ॥ मूर्तिस्थे शिखिसंपाते सर्वकामान्वितो भवेत् ॥४९॥ यत्ता प्रियंवदः कांतो धनस्थानगते शिखी ॥ काव्यकृत्यण्डितो मानी विनीतो वाहनान्वितः ॥५०॥ कदर्पक्रूरकर्मा च कुरांगो धनवर्जितः ॥ सहजस्ये तु शिखिनि तीव्ररोगी प्रजायते ॥५१॥ रूपवान् गुणसपन्नः सात्त्विको विश्रुतिप्रियः ॥ सुखसस्थे तु शिखिनि सदा भवति सौख्यभाक् ॥५२॥ सुखी भोगी कलाविच्च पंचमस्थानगः शिखी ॥ पुक्तिज्ञो मतिमान् धार्मी गुरुभक्तिसमन्वितः ॥५३॥ मातृपद्मस्यकरः पीठगो बहुबांधवः ॥ रिपुस्थाने शिखिप्राप्ते शूरः कांतो विचक्षणः ॥५४॥ रक्तपीडाविचरतः कामी भोगसमन्वितः ॥ शिखी तु सप्तमस्थाने वैश्यासु कृतसौहृदः ॥५५॥ नीचकर्मरतः पापो निर्लज्जो निदकः सदा ॥ मृत्युस्थाने शिखिप्राप्त गतस्त्र्यपरपलकः ॥५६॥ निगधारी प्रसन्नात्मा सर्वभूतहिते रतः ॥ धर्ममे शिखिनि प्राप्ते धर्मकार्येषु कोविदः ॥५७॥ सुखसौभाग्यसंपन्न कामिनोना च यत्सभ ॥ दाता द्विजसमायुक्तः कर्मस्थे शिखिनि भवेत् ॥५८॥ नित्यलाभसुधर्मा च लाभे शिखिनि पूज्यते ॥ धनाढ्यः सुभगः शूरः सुयज्ञश्रतिकोविदः ॥५९॥ पापकर्मरतः शूरः श्रद्धाहीनोऽधुनो नरः ॥ परवाररतो रौद्रः शिखिनि व्ययमे सति ॥६०॥ इति शिखिफलम् ॥

### शिखीप्रह फल

प्रथमभाव मे शिखी हो तो सर्वविद्या मे कुशल, सुखी, प्रिय व्याख्यान मे निपुण सर्व समृद्धिमान् होता है॥ दूसरे भाव मे शिखी हो तो व्याख्याता, मिष्टभाषी, सुन्दर, कवि, पंडित, मान सम्मानवाला, विनीत और सवारी वाला होता है॥ तीसरे भाव मे शिखी हो तो अतिकामी, दुर्बल, धनहीन तथा कठिन रोगवाला होता है॥ चौथे भाव मे शिखी हो तो रूपवान्, गुणी, सात्त्विक, विविध ज्ञान श्रवणप्रिय सुखी होता है॥ पञ्चमभाव मे शिखी हो तो सुखी भोगी, बलाज्ञानवाला गुरुभक्त, चतुर, बुद्धिमान् तथा वाचाल होता है॥ छठे भाव मे शिखी हो तो मातृपक्ष का नाशक, किसी पद पर रहनेवाला, बहुकुटुम्बी, बलवान्, सुन्दर और चतुर होता है॥ सातवे भाव मे शिखी हो तो रक्त विकारवाला, कामी, भोगी तथा वेश्यागामी होता है॥ आठवे भाव मे शिखी हो तो नीच कर्म करनेवाला, पापी, निर्लज्ज, निन्दक, स्त्रीहीन, परपक्ष मे रहनेवाला होता है॥ धर्म, आचार तथा जाति की सस्कृति धारण करनेवाला, सुखी, सबका हित चाहनेवाला, धर्मकार्यों मे चतुर, ऐसे लक्षण-नमभाव के शिखी वाले के होते हैं॥ दशम भाव मे शिखी होने से सुख और सौभाग्य से युक्त, कामिनियो का प्यारा, दानशील, ब्राह्मणभक्त होता है॥ लामभाव मे शिखी होने से नित्य नये लाभ होते हैं। सब जगह आदर होता है, धनी, सुखी, शूरवीर, पंडित तथा धर्मतत्पर होता है॥ बारहवे भाव मे शिखी होने से बुरे कर्म करनेवाला, बलवान्, धर्म मे श्रद्धाहीन, घृणारहित, परस्त्रीगामी, तथा क्रूर होता है॥ शिखिफल समाप्त ॥४९-६०॥

### अथ गुलिकफलम्

रोगार्तः सततं कांभी पापात्माधिगतः शठः ॥ मूर्त्तिस्ये गुलिके मदे खलभावोऽतिदुःखितः॥६१॥  
 विकृतो दुःखितःक्षुद्रो व्यसनी च गतपत्रः ॥ धनस्ये गुलिके जातो निःस्वो भवति मानवः  
 ॥६२॥ चार्वंगो ग्रामपः पुष्यः संयुक्तः सज्जनप्रियः ॥ मंदे तृतीयगे जातो जायते राजपूजितः  
 ॥६३॥ रोगी सुखपरित्यक्तः सदा भवति पापकृत् ॥ यमात्मजे सुखस्ये तु बातपिताधिको भवेत्  
 ॥६४॥ विस्तुर्तिर्विधनोऽप्यायुर्द्वेषो क्षुद्रो नपुंसकः ॥ मुतस्थानगते पापे स्त्रीजितो नास्तिको  
 भवेत् ॥६५॥ वीतशत्रुः सुपुष्टांगो रिपुस्थाने यमात्मजे ॥ मुदीप्तः सम्मतः स्त्रीणां सोत्साहः  
 मुदृष्टे हितः ॥६६॥ स्त्रीजितः भापकृज्जारः कुरांगो गतसौहृद ॥ जीवितः स्त्रीधनेनैव  
 सप्तमस्ये रवेः मुते ॥६७॥ क्षुधासुर्दुःखितः क्रूरस्तीर्ष्णरोषोऽतिनिर्घृणः ॥ रंभे प्राणहरो निःस्वो  
 जायते गुणवर्जितः ॥६८॥ बहुक्लेशी क्रुशतनुर्दुष्टकर्मातिनिर्घृणः ॥ मंदे धर्मस्थिते मंदःपिगुनो  
 बहिराकृतिः ॥६९॥ पुत्रान्वितः सुखी भोक्ता देवान्यर्धनवत्सलः ॥ वरमे गुलिके जातो  
 योगधर्माश्रितः सुखी ॥७०॥ सुस्त्रीभोगो प्रजाध्यक्षो बंधूनां च हिते रतः ॥ लामे यमानुजे  
 जातो नीचांगः सार्वभौषकः ॥७१॥ नीचकर्माश्रितः पापो हीनांगो दुर्भगोऽलसः ॥ व्ययगे  
 गुलिके जातो नीचेषु क्रुधते रतिम् ॥७२॥ इति गुलिकफलम् ॥

### गुलिकयोग फल

लग्न मे गुलिक हो तो रोगी, कामी, पापी, शठ, खल तथा दुखी होता है॥ धनभाव मे गुलिक हो तो विकृत (बदशकल) दुःखी, क्षुद्रप्रकृतिवाला, व्यसनी, निर्लज्ज तथा निर्धन होता

है। तृतीयभाव मे गुलिक हो तो सुन्दर, ग्रामाधिपति, पुण्यकर्ता, सज्जनप्रिय तथा राजपूजित होता है। चतुर्थ भाव मे गुलिक हो तो रोगी, दुःखी, सदा पापकर्म करनेवाला, वात्तपित्त रोगी होता है। पचमभाव मे गुलिक होने से समाज मे निन्दित, निर्धन, अल्पायु, द्वेषी, सुद्रप्रकृति, नपुंसक, स्त्री मे अनुरक्त तथा नास्तिक होता है। छठेभाव मे गुलिक हो तो शत्रुहीन, पुष्टशरीर, कान्तिवाला, स्त्रियो को प्रिय, उत्साही, सुदृढ (गठीला) सबका प्रिय होता है। सातवे भाव मे गुलिक हो तो स्त्री का अनुचर, पापी, जार, दुर्बल, प्रेमरहित, स्त्री की कमाई पर जीनेवाला होता है। आठवे स्थान मे गुलिक हो तो निर्धन, दुःखी, क्रूरकर्मरत, क्रोधी, घृणारहित, हिंसक, गुणहीन दरिद्र होता है। नौवे भाव मे गुलिक हो तो बडे कष्ट से उपार्जन करनेवाला, दुर्बल, बुरे कर्म करनेवाला, घृणारहित, पिशुन (चुगलसोर) बाहर से अच्छा दीखनेवाला होता है। दशमभाव मे गुलिक हो तो पुत्रसन्तानवाला सुखी, भोगी, देवपूजा तथा हवननादि करनेवाला, कर्मयोगी, सुखी होता है। लाभस्थान मे गुलिक हो तो सुन्दर भार्यावाला, सन्तानवाला, बन्धुवर्य का हित करनेवाला, हीनाग (छोटा कद) पर्यटनशील होता है। व्ययभाव मे गुलिक हो तो नीच कर्म का आशय लेनेवाला, पापी, हीनाग, दुर्भागी, अलसी, नीच, सगति मे रहनेवाला होता है। गुलिक फल समाप्त ॥६१-७२॥

### अथ प्राणपदफलम्

मूकोन्मत्तो जडांगस्तु हीनागो दुःखितः कृशः ॥ लघ्रे प्राणपदे क्षीणो रोगी भवति मानवः ॥७३॥  
 बहुधान्यो बहुधनो बहुमृत्यो बहुप्रजः ॥ धनस्थानस्थिते प्राणे सुभगो जायते नरः ॥७४॥ हियो  
 भवंसमापुक्तो निष्ठुरोऽतिमलिन्युचे ॥ तृतीयगे प्राणपदे गुरुभक्तिविवर्जितः ॥७५॥ सुखस्थे तु  
 सुखी कातः सुहृद्दामानु यत्कमः ॥ गुरी परायणः शीलः प्राणे ये सत्यतत्परः ॥७६॥ सुखभाक् च  
 क्रियोपेतस्त्वपचारबयान्वितः ॥ पचमस्थे प्राणपदेसर्वकामसमन्वितः ॥७७॥ बंधुशत्रुव-  
 शस्तीक्ष्णो मंदाग्निर्निर्दयः खलः ॥ षष्ठे प्राणोऽप्यरोगश्च वित्तपोऽप्यायुरेव च ॥७८॥ ईर्षालुः  
 सतत कामी तीव्ररीद्रवपुर्नरः ॥ सप्तमस्थे प्राणपदे दुराराध्यः कुबुद्धिमान् ॥७९॥  
 रोगसंतापितांगश्च प्राणपादेऽष्टमे सति ॥ पोटितः पार्थिवैर्दुःक्षैर्मृत्युबधुमुतोद्भवः ॥८०॥  
 पुत्रवान् धनसंपन्नः सुमगः प्रियदर्शनः ॥ प्राणे धर्मस्थिते मृत्युः सदाऽहुंटी विचक्षणः ॥८१॥  
 वीर्यवान् मतिमान् दलो नृपकार्येषु कोविदः ॥ दशमे वै प्राणपदे देवार्चनपरायणः ॥८२॥  
 विख्यातो गुणवान् प्राज्ञो भोगी धनसमन्वितः ॥ लाभस्थानस्थिते प्राणे गौरांगो मानवत्सलः  
 ॥८३॥ क्षुद्रो दुष्टस्तु हीनागो विद्वेषी द्विजबधुषु ॥ व्यये प्राणे नेत्ररोगी काणो वा जायते नरः  
 ॥८४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे धूमादिगुलिकप्राणपदफलनिरूपण  
 नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

### प्राणपद फल

लक्ष्म में प्राणपद हो तो मूक (गूणा) उन्मत्त (पागल) तथा हीनाग, जडान (बेकार अगवाला) दुखी, दुर्बल, तथा रोगी होता है। धनभाव में प्राणपद हो तो बहुधनी, बड़े अप्रभङ्गारवाला, बहुत नौकरवाला, बहुत सन्तानवाला, सौभाग्यवाला होता है। तृतीयभाव में प्राणपद हो तो हिंसकवृत्ति, अभिमानी, निष्फुर, मलीन, मातृपितृभक्ति रहित होता है। चौथे भाव में प्राणपद हो तो सुखी, सुन्दर, प्रेमी, स्त्रियो में प्यारा, शुक्ल, सुशील होता है। पंचमभावमें प्राणपद हो तो सुखभोगी, धर्मक्रियातत्पर, दयावान्, सर्वतः सन्तोषी होता है। छठे भाव में प्राणपद हो तो दूसरे के वश में रहनेवाला, क्रोधी, मन्दाग्नि रोगवाला, दयाहीन, दुष्ट, धनी तथा अल्पायु होता है। सातवें भाव में प्राणपद हो तो ईर्ष्या, कामी, भयानक आकार, कुबुद्धिवाला, विरोधी स्वभाव वाला होता है। आठवें भाव में प्राणपद हो तो निरन्तर रोगी, नौकर चाकर, भाई बन्धु, तथा समाज में पीडित रहता है। नौवें भाव में प्राणपद हो तो पुत्रवान्, धनवान्, सौभाग्यवान्, सुन्दर, विनीत तथा प्रेमी होता है। दशमभाव में प्राणपद हो तो बलवान्, मतिमान्, चतुर, राजकार्य में बुद्धिमान्, देवभक्ति परायण होता है। जाभस्थान में प्राणपद हो तो विख्यात गुणवान्, पंडित, भोगी, धनी, गौरवर्ण, मानी होता है। बारहवें भाव में प्राणपद हो तो बुद्धि, दुष्ट, हीनाग, ब्राह्मण तथा बन्धुओं का द्वेषी, नेत्ररोगी अथवा काना होता है। प्राणपद फल सम्पूर्ण ॥७३-८४॥

इति वृ० पा० हो० शा० पूर्वख० भावप्रकाशिकाया धूमादि गुलिक प्राणपद फल निरूपण नाम षटोऽध्यायः ॥६॥

### अर्गलाफलाध्यायः ७

पराशर उवाच—अभातः सप्रवक्ष्यामि अर्गलाफलमुत्तमम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण ग्रहाणां च फल वदेत् ॥१॥ तुर्ये द्वितीये लाभे च विद्यमानग्रहार्गला ॥ तस्य वृष्ट्यात्मक ज्ञेय निर्विघ्नं द्विजोत्तम ॥२॥ एकग्रहार्गलात्पुं च द्विग्रहा मध्यमा भवेत् ॥ त्रयेण ग्रहयोगेन अर्गला पूर्णमुच्यते ॥३॥ राश्यर्गलापि सा ज्ञेया ग्रहयुक्ता विशेषतः ॥ तुर्यवितैकादशेषु यस्य कस्यार्गला भवेत् ॥४॥ द्विविधा साऽर्गला विप्र ब्राह्मणा चोदिता पुरा ॥ शुभकृत् पापकृत्तं च तन्वादीनां विचिन्तयेत् ॥५॥ भिन्नार्गलां पुनर्वक्ष्ये चतुर्धर्गलपापयुक् ॥ तृतीये तु यदा विप्र बहुपापयुते यदि ॥६॥ बहुपापा तृतीयस्था पापयद्बर्णयोगतः ॥ पापार्जितः पापदुष्ट्या सयुक्तार्गलकारकः ॥७॥ तृतीये शुभसम्बन्धे शुभक्षेत्रे शुभेक्षिते ॥ शुभवर्गे च षड्वर्गे विज्ञेय तुर्यमर्गला ॥८॥

### अर्गलाफलाध्याय

पराशरजी ने कहा—अब यहाँ से 'अर्गला' का फल कहते हैं, जिस उतम अर्गला ज्ञान से राशि (भाव) और ग्रहों का फल कहा जाय। हे द्विजोत्तम ! (मैत्रेय) दूसरे, चौथे, और बारहवें स्थान में रहनेवाले ग्रहों से 'अर्गला' योग होता है, उसका निश्चय रूप से

दृष्टधात्मक विचार करना चाहिये। एक या दो ग्रह २।४।११ के स्थान में होने से मध्यम 'अर्गला' होती है (किन्तु एक या दो ग्रहों से 'अर्गला' योग नहीं माना जाता, यह बात अगले ११ वे श्लोक से कही गई है। अतः यह मध्यम का तात्पर्य अमान्य में समझना चाहिये) तीन (या तीन से अधिक) ग्रहों के योग से अर्गला योग पूर्ण होता है। (यही सिद्धान्त जैमिनीय सूत्र के अध्याय १ पाद १ सूत्र ५ "दार-भाग्य-शूलस्थार्गला निधातुः । कामस्या भूपसा पायानाम् । रिःफ-नीच-कामस्या विरोधिनः । न न्यूना विदलाश्र ।" इन चारों सूत्रों में बहुवचन से स्पष्ट है।) राशि से भी अर्गला जानना किन्तु ग्रहयुक्ता का विशेष महत्व है। २।४।११ के स्थान में जिस किसी भी ग्रह से अर्गला हो। ब्रह्माजी ने हमें पहिले दो प्रकार की कही है, एक 'शुभार्गला', दूसरी 'अशुभार्गला' ये दोनों प्रकार की अर्गला तन्वादि बारहों भावों में देखना चाहिये। अब इस 'अर्गला' से अर्थात् २।४।११ स्थानों की अर्गला से भिन्न (दूसरी) अर्गला कहता हूँ। (अर्थात् पहिली अर्गला तीन भावों को लेकर होती है और यह दूसरी अर्गला उपर्युक्त तीन भाव २।४।११ से भिन्न तृतीय भाव मात्र को लेकर कही है, इसलिये इसको प्रथम अर्गला से भिन्न कहा। यह एकदेशी मत प्रतीत होता है क्योंकि 'जैमिनीय सूत्र' में अर्गला प्रकरण अध्याय १ पाद १ सूत्र 'प्राग्बत् त्रिकोणे' 'विपरीतं केतोः' कह कर इस प्रकरण को समाप्त कर दिया।)

हे मैत्रेय ! तृतीय भाव में यदि अनेक पापग्रह हो तो, वे तृतीय भावस्थ पापग्रह पद्वर्ग में पापग्रहों के वर्ग में हो तथा पापग्रहों की दृष्टियुक्त हो तो 'अर्गला' योगकारण होते हैं।।७।। इसी प्रकार तृतीय भाव में शुभग्रह योग (स्थिति) शुभ सम्बन्ध शुभक्षेत्र (शुभग्रह की राशि) शुभदृष्टि तथा पद्वर्ग में शुभ वर्ग हो तो यह शुभार्गला है।।८।। (इस अर्गला का प्रकरण समाप्त )

तुर्बिबलैकादशे च पापपुग्वा शुभोऽपि वा ॥ उभयक्षेत्रसन्धे अर्गला कारयेद्द्विज ॥९॥ तृतीये बहुपापस्ये बहुयुक्तार्गला भवेत् ॥ निर्वाधिका तु सा ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥१०॥ एकेन द्वितीयेनापि अर्गला यामवेद्द्विज ॥ सार्गला नैव विज्ञेया बहुपापयुतिं विना ॥११॥ चतुर्थे धनलाभस्था शुभपापकृतार्गला ॥ तस्यापि बाधकाः खेटा ध्योमरिष्कतृतीयगाः ॥१२॥ क्रमेण ज्ञायते विप्र चतुर्थे ध्योमबाधकम् ॥ धने च व्ययभावे च भयं ज्ञेयं तृतीयकम् ॥१३॥ निर्वाधिका च फलदा च दातव्या सबाधका ॥ चिंतनीयं प्रयत्नेन तत्फलं द्विजपुङ्गव ॥१४॥ अर्गलाया बाधकानां बाधकान् कल्पयेऽपुना ॥ नूनं सा विबला खेटा ज्ञायते गणकैस्तदा ॥१५॥ वितलाभचतुर्थानां यः पश्यति शुभार्गलाम् ॥ व्ययभ्रातृनभस्यान्वेद्विपरीतार्गला द्विज ॥१६॥ पुनर्योगार्गलं ज्ञेयं त्रिकोणे पूर्वबद्धिज ॥ पंचमे चार्गलास्थान नवमस्तद्विरोधकः ॥१७॥ विपरीतेन केतुश्च नवमेऽर्गलकारकः ॥ पञ्चम स्थस्तद्विरोधो ज्ञायते गणकैर्द्विज ॥१८॥ क्रमेण पंचमे केतुः प्रकरोत्यर्गलां द्विज ॥ नवमस्थस्तद्विरोधो लग्नार्गलमिदं विदुः ॥१९॥ राश्वर्गलं च खेटानां चितयेद्विधार्गलम् ॥ यस्या यस्या दशा प्राप्ता तस्यां तस्यां फलं भवेत् ॥२०॥ यत्र राशिस्थितः खेटस्तस्य पाकांतरे दशा ॥ तत्र कालं फलं बाध्यं निर्विशकं द्विजोत्तम ॥२१॥

२।४।११ भावों में पापग्रह हो या शुभग्रह हो अथवा कोई ग्रह इन तीन स्थानों में एक में

स्थित होकर दूसरे स्थान से क्षेत्र या दृष्टि सम्बन्ध रखता हो तो भी अर्गलायोग होता है॥  
 गीनों ही स्थानों में अनेक पापग्रह हों तो वह बाधरहित निश्चय ही अर्गला जानना॥ हे भैत्रेय!  
 एक या दो ग्रहों से जो अर्गला होती है उसको अर्गला ही नहीं मानना चाहिए क्योंकि तीन या  
 अधिक पापयोग से ही अर्गला मानी गई है॥

### अर्गलायोग—बाधक

दूसरे चौथे ग्यारहवें स्थान में बहुग्रह योग से जो अर्गला कही गई है उस अर्गला योग के  
 बाधक स्थानों हैं बारहवा दशवा तथा तीसरा॥ क्रम से प्रथम का द्वितीय बाधक है। जैसे दूसरे  
 का बारहवां, चौथे का दशवां, तथा ग्यारहवें का तीसरा॥ हे भैत्रेय! बाधरहित ही अर्गला  
 फलदायक होती है इसलिए इसका अच्छी तरह विचार करना चाहिए॥ अब अर्गला के बाधक  
 योग कहते हैं जिससे बाधित होने से निर्बल अर्गला का भी भली प्रकार ज्ञान हो। २।४।११  
 स्थान की 'शुभार्गला' को उपर्युक्त बाधक स्थानों में स्थित ग्रह देखता या देखते हो तो वह  
 'विपरीतार्गला' या 'बाधतार्गला' कहाती है। अब द्वितीय अर्गला योग समझना कि, त्रिकोण  
 के ५।९ दो स्थानों में पूर्वोक्त प्रकार से पञ्चमभावस्य ग्रह अर्गला कारक है और नवमस्य ग्रह  
 बाधक है। तथा केतु के लिए इससे विपरीत अर्थात् केतु से नवमस्य ग्रह अर्गला कारक  
 और पञ्चमस्य बाधक है। (यही भाव जैमिनीय सूत्र के अध्याय १ पाद १ सूत्र ९-१० में  
 कही है। परन्तु अगले श्लोक में जै० सू० से कुछ विरुद्ध कहा है सो हो सकता है, एकदेशी मत  
 हो) इसी क्रम से केतु के पञ्चमस्य ग्रह अर्गला कारक है और नवमस्य ग्रह अर्गला बाधक है।  
 इसका नाम 'सप्तार्गला' है। इस प्रकार राशि से (भाव से) तथा ग्रह से अर्गला का विचार  
 करके जिस २ राशि की दशा प्राप्त हो उस २ राशि में उस भाव का फल होगा यह निश्चय  
 करो। जिस राशि में ग्रह स्थित हो उसकी दशा या अतर्दशा में उसका फल कहे। अर्गला  
 विवेचन समाप्तः ॥९-२१॥

### अथाग्नेर्गलाफलमाह

पदे सप्रे सप्तमे वा निरामार्गलां द्विज ॥ निर्बन्धा चार्गला तत्र दिष्ट्या भाग्यं भवेन्नरः  
 ॥२२॥ अर्गला प्रतिबन्धं च प्रथमाग्नेर्विचिंतयेत् ॥ धनधान्यपुत्रपुत्रादारावभुक्तैर्पुतः ॥२३॥  
 शरीरारोग्यमेधर्ममृत्युवाहनसंयुतः ॥ हरमक्तः सुधर्मज्ञो दिष्ट्याभाग्यस्य सतनम् ॥२४॥  
 शुभग्रहार्गला विप्र बहुद्रव्यप्रदायका ॥ पापेन स्वल्पवित्तः स्याद्विचिंशकं द्विजोत्तम ॥२५॥  
 उभयार्गला भवेत्तत्र कदाचिद्धनवान् भवेत् ॥ कदाचिद्धितचितार्तिर्जयिते द्विजसत्तम ॥२६॥  
 यत्र अन्मनि सोऽपि स्याच्छुभदृष्टे शुभार्गला ॥ तेन दृष्टेऽलिते सप्रे प्राबल्याद्योगकल्पने ॥२७॥  
 यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलास्थितः ॥ प्रथमां तु विजानीयाद्विपरीतार्गलां द्विज ॥२८॥  
 सप्तसप्तमयोगेन भाग्ययोगं विचिंतयेत् ॥ भाग्यप्रबलता ज्ञेया सप्तसप्तशुभार्गला ॥२९॥  
 शुभार्गले स्वबुद्धिः स्यात्पापे स्वल्पघनं बदेत् ॥ उभयार्गले तु तत्रैव स्वचिद्बुद्धिः स्वचित् जयम्  
 ॥३०॥ तत्तद्गतिदशायां तु अर्गला फलमिदमे ॥ शुभो वाग्यशुभो यापि ह्यर्गलाफलदायकः ॥३१॥

इति श्रीबृहस्पतिस्मृतौ राशिसंज्ञासूत्रे पूर्वोक्ते अर्गलाफलरूपननामस्तप्तमोऽध्यायः ॥३॥



### अर्गला फल

हे मैत्रेय! लग्न मे या सप्तम मे प्रतिबधरहित शुभ अर्गला पूर्णरूप से मनुष्य बडे भाग्य से पाता है। अर्गला (शुभार्गला) मे प्रतिबध भी (फल प्रतिबध भी) प्रथम के चतुर्थांश मात्र मे ही होता है, बाद मे धन, धान्य, पुत्र, पशु भार्या, बन्धु, और कुल से युक्त होता है। उपर्युक्त 'शुभार्गला' मे भगवद्भक्त, आरोग्यता, ऐश्वर्य, नोकर, सवारी (मोटर आदि) तथा धर्मज्ञ आदि सुख होना ही भाग्य का लक्षण है। हे मैत्रेय! शुभार्गला हो तो बहुत धन हो तथा पापग्रह से हो तो मामूली द्रव्य हो। तथा शुभ-पाप मिश्रित अर्गला हो तो कभी धनवान् और कभी धनहीन होता है। जहा पर जन्मलग्न मे मिश्रित अर्गला हो तो भी शुभग्रह की दृष्टि होने न शुभार्गला ही हो जाती है। इसी प्रकार लग्न को भी शुभग्रह देखते या युक्त हो तो योग की प्रबलता जानो। यदि अर्गला का बाधक योग भी हो तो शुभदृष्टि होने से अनिष्टकारी नहीं है। लग्न तथा सप्तम भाव मे इस प्रकार अर्गला योग का विचार करके 'शुभार्गला' है या नहीं यह देखकर निश्चय करो। यदि शुभार्गला हो तो भाग्य की प्रबलता जाने। शुभार्गला मे धन की वृद्धि होती है तथा पापार्गला मे स्वल्पधन होता है एव 'उभयार्गला' मे कभी कभी धनवृद्धि कभी धनहानि होती है। जिस २ भाव की अर्गला हो उसका फल उस २ राशि की दशा तथा अन्तरदशा मे (जो कि आगे राशि दशा कहेंगे) अच्छा या नेष्ट होता है ॥२२-३१॥ अर्गलाध्याय समाप्त।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० ख० भावप्रदीपिकाया अर्गलाफल क० नाम सप्तमोऽध्याय

### कारकाध्यायः ८

अथापे सप्रवक्ष्यामि ग्रहाणा कारकान् द्विज ॥ आत्मादिकारकान् सप्त यथावत् कथयामि ते ॥१॥ रव्यादिशनिपर्यन्ता भवति सप्तकारका ॥ अशौ साम्यां प्रहौ द्वौ च राहृतान् गणयेद्विज ॥२॥ रव्यादिपुण्यतमसाधिकप्रहोऽपि चेत् ॥ कारकेन्द्रोऽपि स ज्ञेय आत्मा कारक उच्यते ॥३॥ अशसाम्यग्रहो यत्र कलाधिक्य च पश्यति ॥ कलासाम्ये पलाधिक्यमात्मा कारक ईर्यते ॥४॥ तत्र राशिकलाधिक्ये नैव ग्राह्य प्रधानकः ॥ अशाधिक्ये कारक स्यादल्पभागोत्कारक ॥५॥ मध्याशो मध्यलेट स्यादुपलेट स एव हि ॥ अधोऽध कारका ज्ञेयाध्वराणि सप्त कारका ॥६॥ तेषा मध्ये प्रधान तु आत्मकारक उच्यते ॥ जातकराट स विज्ञेय सर्वेषा मुख्यकारक ॥७॥ यथा भूमौ प्रतिद्वोऽस्ति नराणा क्षितिपालकः ॥ सर्ववार्त्ताधिकारी च वधकृन्मोक्षकृतया ॥८॥ पुत्रामात्यप्रजाना तु तत्तदोपगुणैस्तया ॥ अधकृन्मोक्षकृद्विप्र तथा सन्मानकारकः ॥९॥ तथैव कारको राजन् ग्रहाणा फलकारकः ॥ आत्मेत्यादिफल तत्ते अन्यथा स्थापयेद्विज ॥१०॥ यथा राजाज्ञया विप्र पुत्रामात्यादयोऽपि च ॥ समर्था लोककार्येषु तथैवान्योपकारकः ॥११॥ कारको राजवश्येन फलदातान्यकारकः ॥ यथा राजनि कृद्दे च सर्वेऽमात्यादयो द्विजः ॥१२॥ स्वजनाना कार्यकर्तुमसमर्था भवति हि ॥ क्रिग्रे मूरे ह्यमात्यादि स्वशापूर्णा द्विजोत्तमः ॥१३॥ अकार्य कर्तुं नो शक्तस्तथैवान्योऽपकारकः ॥ आत्मकारकवश्येन ह्यमात्यादिफल ददु ॥१४॥ इत्यात्मकारकः ॥

आत्मकारकक्षेतेन न्यूनभाषो हि तद्दह ॥ अमात्यसता तथैव ज्ञायते द्विजतत्तम ॥१५॥

पूर्वखण्डे अष्टमोऽध्यायः

अमात्यन्यूनो भ्राता च भ्रातृन्यूनं च मातृकम् ॥ मातृकारकखेटेन न्यूनभागो हि यो प्रहः  
 ॥१६॥ स पुत्रकारको ज्येष्ठस्तद्वीनो जातिकारकः ॥ जातिकारकखेटेन हीनभागो हि यो प्रहः  
 ॥१७॥ दारकारकविज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥ चराश्र कारकाः सप्त ब्रह्मणा चोदिताः पुरा  
 ॥१८॥ अंशसाम्यौ ग्रहौ द्वौ च जायेतां यस्य जन्मनि ॥ स्वकारक विना विप्र लुप्यति  
 वांत्प्रकारकः ॥१९॥ तत्कारको लुप्यति चेदन्वत्रैवास्ति कारकम् ॥ कारकाणां स्थिराणां च  
 मध्ये संचितपेदद्विज ॥२०॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि खेटान् कारकसंज्ञकान् ॥ यस्य जन्मनि  
 भावानां यथास्थाने च वै द्विज ॥२१॥ स्वर्षे तुगे च मित्रर्षे कटके संस्थिता प्रहाः ॥  
 अन्योन्यकारका विप्र कर्मगांस्तु विरोधतः ॥२२॥ लग्ने सुखे तथा लाभे ग्रहभाववशेन च ॥  
 भवति कारका विप्र विशेषेण च भैरवौ ॥२३॥ स्वमित्रर्षौ च्वमे हेतुरन्योऽस्य यदि कर्मगः ॥ स  
 शुद्धगुणसंपन्नः सोऽपि कारक एव वै ॥२४॥ नीचान्वये यस्य जन्मबभूव द्विजसप्तम ॥ पतति  
 कारका लग्ने प्रधानं च न वाप्रयात् ॥२५॥ राज्ञां कुले समुत्पन्नो राजा भवति निश्चितम् ॥ एव  
 कुलानुसारेण कारकाणां फल भवेत् ॥२६॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि कारकाणि स्थिराणि च ॥  
 सूर्यादीनां ग्रहाणां च वीर्यवान् कारको भवेत् ॥२७॥ वीर्यवान् जायते विप्र जन्मनि  
 रविशुक्रयोः ॥ स पितृकारको ज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥२८॥ चंद्रारयोश्च बलवान्  
 मातृकारक उच्यते ॥ भौमद्वय विशेषेण भगिनी दारभ्रातृकौ ॥२९॥ बुधान्मातुलतो ज्ञेयो  
 मातृगुल्यानपि द्विज ॥ गुरुणाञ्च च विज्ञेयाः पुत्रस्वामिपितामहाः ॥३०॥ स्वभार्या  
 मातृपितरौ तथा मातामही द्विज ॥ मृगुद्वारा विज्ञानीयादेतेषां शुक्र कारकः ॥३१॥ अर्धम्यः  
 पुष्यभे तात इन्दोर्माता च तुर्यतः ॥ कुजात्तृतीयतो भ्राता मातुलो रिपुभाद्बुधात् ॥३२॥  
 देवेज्यात्संचमात्पुत्रो दैत्येज्याद्घनभात्त्रिणयः ॥ मदादष्टमतो मृत्युस्तातादीनां  
 विचिन्तयेत् ॥३३॥

अथ कारकाध्यायः

अब आगे सूर्यादि ग्रहों के आत्मादि सात कारक यथावत् कहते हैं। सूर्य से गनि तक सात कारक होते हैं, सूर्यादि ग्रहों में अशादि साम्य होने पर राहु को भी गिनना चाहिये किन्तु राहु सदा बक्री रहता है, अतः उसके अंशों को ३० में घटा कर शेष अशादि से कारक का निर्णय करें। अतः सूर्य से राहु पर्यन्त अश, कला, विकला में जो सबसे अधिक होता है, वह कारको में राजा 'आत्मकारक' होता है। जहा पर दो ग्रहों में अशों की समता हो तो कलाधिक ग्रहों और अश, कला बराबर होने पर फलाधिक ग्रह 'आत्मा कारक' होता है। इन अशादि साम्य में राशि नहीं लेना, अशाधिक्य से ही कारकता होती है। सबसे कम अश वाला अंतिम कारक होता है। इस प्रकार सर्वाधिक और सर्वन्यून अशादि आदि और अतः कारक होते हैं। बीच के अशादि से मध्यकारक होते हैं। अतः मध्यांशों में उसके बाद तथा उसने बाद इस प्रकार न्यून अशवाले से न्यून अशादिवाला क्रमशः गिनने से सात चरवारक होते हैं। इन सात कारकों का राजा 'आत्मा कारक' होता है। वह जातक शास्त्र में सब कारकों में मुख्य होने से कारकराज कहा गया है। जैसे कि संसार में मनुष्यों में से सबसे प्रधान (बड़ा) राजा होता है और वही प्रधान न्याय कारक एव बध, मोक्ष का वर्ता है। राजपुत्र, मन्त्री, अन्य अधिकारी तथा प्रजा इन सबके दोष और गुणों से बधन और सन्मान करता है। इसी प्रकार यह आत्माकारक भी

सब कारको मे मुख्य होकर सब ग्रहों के फल का अधिष्ठाता है अन अन्यथा नहीं स्थापन करना चाहिए। जैसे राजा की आज्ञा से राजपुत्र, मन्त्री आदि लोक कार्य मे समर्थ होते हैं और अन्य भी सहायक कार्यकर्ता होते है। कारक भी राजा के वशीभूत रहकर कर्म तथा फल-दाता है। और जैसे कि राजा के क्रुद्ध होने पर मन्त्री आदि सभी कोई अपने घर के स्वजनों का भी कोई उपकार करने मे असमर्थ होते हैं एव राजा के प्रसन्न होने पर भी (राजाशा के बिना) शत्रु का भी अपकार करने मे समर्थ नहीं है। इसी प्रकार आत्मा कारक के वशीभूत ही अन्य सब कारक अपने २ अधिकार का फल देते है। आत्मकारकप्रशसा समाप्त। आत्म कारक से कम अशुभवाला "अमात्यकारक" होता है। अमात्य कारक से कम अशुभवाला "भ्रातृ कारक" और उससे न्यून "मातृ कारक" तथा "मातृ कारक" से न्यून "पुत्र कारक" होता है। उससे न्यून "जाति कारक" है। जाति कारक ग्रह से हीन अशुभवाला "दारकारक" होता है। ये सात 'कारक' (अस्थायी होने से) पहिले ब्रह्माजी ने कहे। यदि दो ग्रहों के सर्वाधिक अंश समान हो तो (पूर्वोक्त रीति से) कलाधिक आत्माकारक लेना क्योंकि आत्माकारक के अभाव मे अत्यकारक का भी अभाव होगा। आद्यन्त लोप मे फिर अन्य कारक भी नहीं ही सकते। अतः चरकारक और स्थिरकारकी का विचार करना चाहिए। अब कारक-संज्ञक ग्रह बताते हैं। जन्मलग्न मे यथास्थान ग्रह लिख कर विचार करना चाहिए। जो ग्रह अपनी राशि या मित्रराशि मे अथवा उच्चराशि मे या केन्द्रस्थान मे हो अथवा दशमभाव में हो वे परस्पर कारक होते हैं। स्थान वंश से कारकत्व— लग्न, चतुर्थ या लाभ स्थान मे होने से तथा विशेष करके सूर्य राशि मे होने से भी ग्रह 'कारक' होते हैं। स्वगृही, मित्रराशिगत अथवा उच्च राशिगत तथा दशमभावस्थ हो तो सौम्यगुणसम्पन्न होने से वह भी कारक होता है। जिस जातक का जन्म नीच कुल मे हो और जन्म लग्नकुण्डली बहुत ग्रह कारक भी हो तो भी वह जातक राजा आदि की प्रधान पदवी प्राप्त नहीं कर सकता। किन्तु राजकुल मे जिसका जन्म हो वह निश्चय कारक ग्रह के होने पर राजा होता है। इस प्रकार कुलानुसार भी कारको का फल होता है। अब स्थिर कारक कहते हैं। सूर्यादि ग्रहों मे जो बलवान् होता है, वह कारक होता है। हे मैत्रेय! लग्न मे सूर्य शुक्र मे से जो बलवान् होता है, वह निश्चय से 'पितृकारक' होता है। चन्द्रमा और मंगल मे से जो बलवान् हो वह 'मातृकारक' होता है। विशेष करके मंगल के अधिकार मे दो कारक है। एक उपर्युक्त तथा दूसरा भाई और भार्या मे से स्थिर कारकत्व है। बुध से मामापक्ष का कारकत्व विचार करना और गुरु से, पुत्र स्वामी, पितामह के कारकत्व का विचार करना। अपनी भार्या, माता, पिता, नानी का कारकात्वभाव शुकुद्वारा जानना। अर्थात् इनका कारक शुकु है। सूर्य-पुण्यकारक, चन्द्रमा मातृ कारक तथा चतुर्थ भाव से भी माता का विचार करना इसी प्रकार मंगल से तथा तृतीयभाव से आता का और बुध से तथा छठे भाव से मामा का विचार करना योग्य है। बृहस्पति से तथा पचमभाव से पुत्र का तथा शुक्र से तथा सप्तम मे भार्या का शनि से तथा अष्टमभाव से निर्वाण (मृत्यु) का तथा पिता आदि का विचार करना। (ग्रहों के कारकत्व का विचार समाप्त) ॥१-३३॥

पूर्ववर्णे अष्टमोऽध्यायः

अथ भावकारकमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि विशेष भावकारकान् । जनुर्लघ्नं च विद्याहं आत्मा कारकमेव च ॥३४॥  
 धनभाव विजानीयाद्धारकारकमेव च ॥ एकादशे ज्येष्ठभ्रातृस्तृतीये तु कनिष्ठक ॥३५॥ सुते  
 सुत विजानीयात्तथा सप्तमभावत ॥ सुतस्थाने प्रहस्तिष्ठेत्सोऽपि कारक उच्यते ॥३६॥ सूर्यो  
 १ गुरु २ कुज ३ सोमो ४ गुरु ५ भौम ६ सित ७ शनि ८ ॥ गुरु ९ श्रद्धसुतो १० जीवो ११  
 मरुश्च १२ भावकारका ॥३७॥ पुनस्तन्वादयो भावा स्व्याप्यास्तेषां शुभाशुभम् ॥ ताम  
 तृतीय रश्च च शत्रुस्वस्त्रीव्यय तथा ॥ एषा योगेन यो भावस्तत्रास प्राप्नुयाद्भुवम् ॥३८॥  
 चत्वारो राशयो मद्रा केद्रकोणशुभावहा ॥ तेषां सयोगमात्रेण ह्यशुभोऽपि शुभो  
 भवेत् ॥३९॥

कारकवस्तुविचार

अब हम विशेष कर भावकारको को कहते हैं। जातक के जन्म का लग्न ही आत्माकारक है। और धनभाव भावकारक है। एकादशभाव बड़े भाई का तथा तृतीयभाव छोटे भाई का कारक है। पञ्चम तथा सप्तमभाव से और पञ्चमभावस्य प्रह से भी पुत्रसन्तान का विचार करना। १२ भावों के कारक ग्रह कहते हैं। क्रम से सूर्य, गुरु, कुज, चन्द्र, गुरु भौम, शुक, शनि, गुरु, बुध, गुरु, शनि ये कारक हैं। तन्वादि १२ भाव लिखकर शुभाशुभ फल का विचार करो भावों में २।३।६।७।८।१।१।१२ इन भावों के परस्पर दृष्ट्यादि सम्बन्ध से जो भाव सम्बद्ध हो उस भाव की निश्चय हानि होती है। तथा केन्द्रभाव की चार राशि और त्रिकोण की दो राशि इनके सम्बन्ध से अशुभ राशि भी शुभफलकारक होती है। स्थिरकारक विचार समाप्त।  
 ३४-३९॥

चरकारकग्रहाः स्युः

सर्वग्रहेऽन्वेषिकाशादिनात्मकारकस्तत्क्रमेण ज्ञेयः । आत्माऽमात्यभ्रातृमातृपुत्रहानिदारा इत्यादिचरकारकग्रहाः स्युः ।

**चरकारकग्रहाणां चक्रम्**

गुरु	शुक्र	शनि	बुध	सूर्य	राशि
अशुभकारक	अशुभकारक	अशुभकारक	अशुभकारक	अशुभकारक	अशुभकारक

अथ सूर्यादिग्रहकारकमाह

राज्यविदुमरत्तवस्त्रव्याणिष्यराज्यवनपर्यन्तसंप्रियतृत्वारको रवि ॥४०॥ मातृमनः पुष्टिपध-  
 रते सुगोपूमशारकः इति ज्ञातिराज्यसंस्परजतादिशारकश्च ॥४१॥ मत्स्यस्तधनूमिपुत्रगीतवीर्य-  
 रोग बह्मभ्रातृपरराज्यमाप्तिमाहमत्तजगत्पुत्रारकः बुध ॥४२॥ ज्योतिर्विद्यामानुनगणितराज्य-

नर्तनवैद्यहासभीश्रीशिल्पविद्यादिकारको बुध ॥४३॥ स्वकर्मयजनदेवब्राह्मणधनगृहकाचन-  
वस्त्रपत्रमिश्राबोलनाविकारको गुरु ॥४४॥ क्लृप्तप्रकार्मुक्तसुखगीतशास्त्रकाव्यपुष्पसुकुमारयौ-  
वना भरणरजतयानगर्वलोकनीतिकविभवकवितारसादिकारक शुक ॥४५॥ महिषायोगजतैल  
वस्त्र शृङ्गारप्रधानसर्वराज्यदावापुधुगृहपुद्गसचारशूद्रनीलमणिविघ्नकेशशल्पशूलरोगदासदा-  
सोजनापुष्पकारक शनि ॥४६॥ प्रयाणसमयसर्परात्रिसकलमुप्तार्थद्यूतकारको राहु ॥४७॥  
वणरोगचर्मातिशूलस्फुटसुधार्तिकारक केतु ॥४८॥

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे कारकाध्यायकथन नामाष्टमोऽध्याय ॥८॥

### कारक वस्तु विचार (गद्यभाग)

राज्य विदुम (भूगा) रक्त वस्त्र भाणिक राजा वन पर्वत क्षत्री गिता इनका कारक  
सूर्य है। माता मन पुष्टि गद्य रस ईस गेहू नमक सोडा आदि द्विज (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य  
र्षिक कार्य चादी का कारक चन्द्रमा है। बल मकान भूमि पुत्र शील चोरी रोग ब्रह्म  
भ्राता पराक्रम अग्नि साहस राज शत्रु इनका कारक मंगल है। ज्योतिर्विद्या मामा गणित  
शरीर नाचना वैद्य हास भय सजावट शिल्पविद्या इनका कारक बुध है। स्वकर्म यज  
देवता ब्राह्मण धन मकान मुवर्ण वस्त्र पत्र (चिट्ठी) मित्र आन्दोलन (प्रचार) इनका  
कारक बृहस्पति है। भार्या धनुष सुख गीतशास्त्र काव्य पुष्प सुकुमार (अवस्था) यौवन  
आभरण (भूषण) चान्दी सवारो गर्व (अभिमान) लोक (समाज) भोती सम्पत्ति  
कविता रस इनका कारक शुक है। महिष अयसु (लौह) यज तेल वस्त्र शृङ्गार यात्रा  
राजकीय वस्तु काठ हथियार गृह युद्ध सचार (यात्रा) शूद्र नीलम विघ्न वेश शल्प  
(सर्जरी) दास दासीजन आयु इनका कारक शनि है। यात्रा समय सर्प रात्रि समस्त स्वप्न  
तथा द्यूत (जूआ) इनका कारक राहु है। व्रण चमड़ा रोग अतिशूल फुटकर भूख कष्ट  
इनका कारक केतु है। कारक वस्तु विचार समाप्त ॥४०-४८॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रवाशिकाया कारकाध्याय  
नामाष्टमाध्याय ॥८॥

कारकाश कुंडली			
सु०	रा	६	
बु०	श	७	५
	शु		४
१०			
पुलि	के		म०
क११	१		३
यु	ध	१२	२

कारकग्रहा									
र०	ब०	म०	बु०	शु०	शु०	श०	रा०	के०	गु०
८	१२	३	६	११	७	७	७	१	११

पूर्वखण्डे नवमोऽध्यायः

### अथ कारकांशग्रहफलमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि कारकस्याधिपान् ग्रहान् ॥ योगसबधमात्रेण यथावद्गतो मम ॥१॥  
 स्वांशकारककुंडल्यां नवमांशाधिपोऽथवा ॥ यस्मिन् राशौ स्थितो विप्र तदंशफलमुच्यते ॥२॥  
 अजांशकारकांशेषु तिष्ठंति च यदा ग्रहाः ॥ यथावद्भाषितं शूलिप्रोक्तं यदुदयात्ने ॥३॥  
 शुभोमे च यदा विप्र मार्जारादिप्रसिद्धिदौ ॥ वृषे च कारकाशे च भयार्थो च चतुष्पदात् ॥४॥  
 शुभे चतुष्पदात्सिद्धिरिति तत्त्व द्विजोत्तम ॥ युग्मकाराशके त्वेते कड्वादिरोगसम्भवः ॥५॥  
 काकशि च चलाद्दुःखं जलमूर्तिर्न सशयः ॥ कुष्ठादिरोगसमूहिः शुभे फलविपर्ययः ॥६॥  
 सिंहोशे कारके त्वेते तिष्ठत्येव द्विजोत्तम ॥ शुनकादिभय दद्याच्छुभे सिद्धिप्रदायकः ॥७॥  
 कन्यायां कारकाशे च तिष्ठत्येव यदा ग्रहः ॥ मृत्युवत्कटुदोषोर्गतिर्विह्वितोयेण दुःखमाह ॥८॥  
 तुलास्थकारकाशे च सर्पादिभयकारकः ॥ मातुः पयोधरे पीडा जायते द्विजसत्तम ॥९॥  
 वृश्चिके कारकाशे च सर्पादिभयकारकः ॥ उच्चात्प्रपतन वापि कोपि यन्तुसमन्वितः ॥१०॥  
 धनुर्धरकारकाशे वाहनाद्भयमादिशेत् ॥ शङ्खमुक्ताप्रवालादिमत्स्येष्वेतरदेवता ॥११॥  
 नक्षत्रकारकांशे विप्र सिद्धिर्जलवरादयः ॥ शोक्तिमान्त्वर्मवात्कोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥१२॥  
 कुम्भास्थकारकाशे च तद्वागादीनि कारयेत् ॥ मीने च कारकाशे वै सामुद्र्यमुक्तिभागमेव ॥१३॥  
 पर्याति कंदुरोगादि भवतीह न सशयः ॥ मीने च कारकाशे वै सामुद्र्यमुक्तिभागमेव ॥१४॥

### कारकांश राशि फल

अब पूर्वोक्त कारकाधिपति ग्रहों के नवमांश योग से होने वाले फल को कहते हैं। वारकांश कुण्डली में नवमांशपति जिस राशि में हो उस राशि का फल कहते हैं। सूर्यामल में महादेवजी के कहे हुए १२ राशियों के फल को विचार कर रहना चाहिये। कारक ग्रह में नवमांश में हो तो मूषक और बिलाव से भय तथा दुःख होता है। यदि मेष राशि में शुभग्रहों का योग या दृष्टि हो तो मूषक गार्जर ही प्रसिद्धि के कारण होते हैं। वृषराशि में वारकांश हो तो चौपाया पशु से भय और दुःख हो। शुभयोग होने से यही चतुष्पद सिद्धिकारक होते हैं। वारकांश में मियुन राशि होने में शुकली आदि रोग होते हैं। इसी प्रकार बर्ब राशि हो तो जलवस्तु सवारी आदि तथा जलभय और कुष्ठ आदि रोग होता है। शुभयोग होने से उत्त वस्तुओं में सिद्धि होती है। सिंह राशि यदि वारकांश में हो तो कुत्ता आदि में भय होता है और शुभयोग होने से उन्हीं में सिद्धि होती है। कन्या राशि में होने पर मृत्यु के समान वष्ट अथवा अग्निभय होता है। तुल्यराशि में मित्त वारकांश में जातक अधिकतर व्यापारी होता है। वारकांश में वृश्चिक राशि हो तो सर्प आदि से भय तथा माता को स्तन पीडा होती है। धनु के वारकांश में हो तो सवारी में भय तथा ऊँचे में गिरने का भय होता है। मकर राशि के वारकांश में होने से जलचर जीव, शम्भ, मीन, मूगा, मत्स्य तथा आकाशवादी भी लाभकरक होते हैं। कुम्भ के वारकांश में जलाशय बनानेवाना, कीर्तिमान् तथा धर्मात्मा होता है तथा कडू (बुजली) आदि रोग होते हैं। मीन राशि के वारकांश में होने से जातक की सामुद्र्य मुक्ति होती है। वारकांश राशिफल समाप्त ॥१-१५॥

## अथ कारकांशग्रहाणां फलमाह

शुभराशौ शुभाशे वा कारके धनवान् भवेत् ॥ तदशकेद्रे शुभो नून सत्य राजा प्रजायते ॥१६॥  
 कारके शुभराश्यशे तन्नाशस्थे शुभग्रहे ॥ उपग्रहस्य पश्चात्ये स्वोच्चस्वर्क्षे शुभर्षगे ॥१७॥  
 पापदृष्ट्योगरहिते कैवल्य सत्य निर्दिशेत् ॥ मित्रे मित्र विजानीयाद्विपरीते विपर्ययम् ॥१८॥  
 चन्द्रभृगुवारवर्गस्थे कारके पारदारिक ॥ वृषतौत्यशकगते तस्मिन्वाणिज्यषाम्भवेत् ॥१९॥  
 भेषसिंहाशके तस्मिन्भूयान्मूषकदशक ॥ कारके कार्मुकाशस्थे वाहनात्पतन भवेत् ॥२०॥  
 अथैक कारकाशेषु रव्यादिस्तिष्ठति ग्रह ॥ तेषा फल प्रवक्ष्यामि भृशु त्व द्विजसत्तम ॥२१॥  
 कारकाशे यदा सूर्यस्तिष्ठति द्विज वीर्ययुक् ॥ आदावते पुमान्तोऽपि राजकार्येषु तत्पर ॥२२॥  
 कारकाशे तु पूर्णेन्दुर्वैत्याचार्येण वीक्षित ॥ शतभोगी भवेत्तोऽथ विद्याजीवी भवेद्द्विज ॥२३॥  
 कारकाशे यदा भौमे बलाढ्येन युतेक्षिते ॥ रसवादी कुतधारी बह्निःकृञ्जीवन भवेत् ॥२४॥  
 कारकाशे यदा सौम्ये तिष्ठत्येव बलाढ्यक ॥ शिल्पको व्यवहारी च धनिककृत्यपरो ॥२५॥  
 कारकाशे गुरौ विप्र कर्मनिष्ठापरो भवेत् ॥ सर्वशास्त्राधिकारी च विख्यात क्षितिमडले ॥२६॥  
 कारकाशे यदा शुके राजमानी सदा भवेत् ॥ सदिद्विष्य शताध्यायु कथनीय द्विजोत्तम ॥२७॥  
 कारकाशे यदा सौरिभृत्यलोके प्रसिद्धिवान् ॥ महता कर्मणा वृत्ति क्षितिपालेन पूजित ॥२८॥  
 कारकाशे यदा राहर्धनुर्धारी प्रजायते ॥ जागत्यलोहपत्रादि- कारकञ्चौरसगमी ॥२९॥  
 कारकाशे यदा केतुस्तिष्ठति द्विजसत्तम ॥ व्यवहारी गजादीना- मुशति परद्रव्यके ॥३०॥  
 कारकाशे यदा विप्र सस्थितौ रविसैहिकौ ॥ सर्पाद्भूतिर्भवेन्मृत्यु शुभदृष्ट्या निवर्तते ॥३१॥  
 कारकाशे भानुतमी शुभपद्भर्गसमुता ॥ विषवेद्यो भवेन्मून विपहर्ता विचक्षण ॥३२॥  
 भौमेक्षिते कारकाशे भानुस्वर्भानुसयुते ॥ अन्यग्रहा न पश्यति स्ववेशमपरदाहक ॥३३॥  
 यदि सौम्येक्षिते विप्र ह्यग्निदो नैव जायते ॥ पापक्षे च गुरो दृष्टे समीपगृहदाहक ॥३४॥  
 सगुलिके कारकाशे पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज ॥ सति चीरेर्नीतधन स्वय चोरोऽथ वा भवेत् ॥३५॥  
 सगुलिके कारकाशे अन्यग्रहयुतेक्षिते ॥ बुधदृष्टियुते वापि अडबुद्धि प्रजायते ॥३६॥  
 कारकाशे केतुपुक्ते पापग्रहनिरीक्षिते ॥ धोत्रच्छेदो भवेन्मून कर्णरोपार्तिना द्विज ॥३७॥  
 कारकाशे स्थिते केतौ भृगुणा च समीक्षिते ॥ युते वा जायते विप्र क्रियाकर्मसामन्वित ॥३८॥  
 कारकाशे स्थिते केतौ शनिसौम्यनिरीक्षिते ॥ बलवीर्येण रहितो जायते सोऽपि मानव ॥३९॥  
 सकेतौ कारकाशे च बुधशुक्रनिरीक्षिते ॥ जायते योनियुतिको दासीपुत्रोऽथ वा भवेत् ॥४०॥  
 सकेतौ कारकाशे च अन्यग्रहनिरीक्षिते शनिदृष्टिविहीने च सत्याच्च रहितो भवेत् ॥४१॥  
 कारकाशे यदा विप्र भृगुभास्वरवीक्षिते ॥ राजप्रप्यो भवेद्दालो जायते नात्र सशप ॥४२॥

### कारकासा ग्रहफल

कारक ग्रह शुभराशि या शुभाश मे हो तो जातक धनवान होता है। यदि कारकाश राशि तथा ग्रह केन्द्रस्थान मे हो तो निश्चय ही राजा होता है। कारकग्रह शुभराशि मे हो, नवाश मे सप्रराशि पर शुभग्रह ही और उपग्रह के अन्त्य भाग मे तथा स्वग्रह, उच्च, तथा शुभदृष्टि युक्त हो और पापग्रह की दृष्टि तथा योग से रहित हो तो निश्चय कैवल्य-मुक्ति होती है। दोनो प्रकार के योग (शुभाशुभयोग) हो तो मिश्रित फल और केवल पापयोग हो तो वयित फल से विपरीत फल होता है। कारकाश ग्रह यदि चन्द्रमा, शुक्र वे वर्ग मे हो तो परस्त्रीगामी

होता है। वृष और तुला के अश में हो तो व्यापारी होता है। मेघ तथा सिंह के अश में हो तो मूषकभय तथा धनु के अश में हो तो वाहन से गिरना होता है। कोई एक ग्रह कारकाश में स्थित हो तो उसका भिन्न भिन्न फल कहते हैं। कारकाश में जब सूर्य बलवान् होकर स्थित हो तो जातक सारी आयु राजकार्य में तत्पर रहता है। चन्द्रमा यदि कारकाश शुकदृष्ट हो तो पूर्णायु तक भोगी और विद्याजीवी होता है। कारकाश में मंगल बली ग्रह से दृष्ट होकर स्थित हो तो शस्त्रघारो, रसभस्मज्ञाता, अग्निजीवी होता है। कारकाश में बलयुक्त होकर बुध हो तो शिल्प विद्या जाननेवाला, वणिक्वृत्ति, व्यापारी होता है। हे मैत्रेय! कारकाश में जब गुरु हो तो कर्मकाण्ड में निष्ठावाला विख्यात सर्वशास्त्रज्ञ होता है। कारकाश में शुक हो तो राजमान्य इन्द्रियजित् तथा शतायु होता है। कारकाश में शनि हो तो सत्सार प्रसिद्ध राजपूज्य महान् कार्यकर्ता होता है। कारकाश में यदि राहु हो तो धनुर्विद्यावान्, लोहयन्त्र (ताले) भादि बनानेवाला चोरसगी होता है। कारकाश में केतु हो तो पराशय से हाथी आदि का व्यापारी होता है। कारकाश में जब सूर्य, राहु हो तो सर्प से मृत्यु होती है, शुभदृष्टि नहीं होती। कारकाश में रविराहु शुभघट्बर्ण में हो तो विषवेद्य (गारडी) विचक्षण विषहर्ता होता है। कारकाश में रविराहु मंगल से दृष्ट हो और अन्य दृष्टि न हो तो अपना तथा पराया घर का जलानेवाला होता है। हे मैत्रेय! यदि शुभदृष्टियुक्त हो तो दाहक नहीं होता। पापराशि में हो और गुरु दृष्टि हो तो समीप के घर का दाहक होता है। कारकाश यदि मुलिक योगवाला हो तो स्वयं चोर या जातक का धन चोरी हो। कारकाश सगुलिक हो तथा अन्य ग्रहसे युक्त या दृष्ट हो अथवा बुधदृष्टियुक्त हो तो 'अङ्गुष्ठि' रोग होता है। कारकाश में केतु हो और पाग्रह दृष्ट हो तो कर्पूररोग के कारण कर्णच्छेद हो। कारकाश में केतु शुकदृष्ट हो अथवा युक्त हो तो क्रियाकर्म युक्त होता है। कारकाश में केतु शनि और सौम्यग्रह दृष्ट हो तो बलवीर्य रहित होता है। कारकाश में केतु बुध शुक दृष्ट हो तो वर्णसकर या दासीपुत्र होता है। कारकाश में केतु शनिदृष्टि रहित अन्यदृष्टि युक्त हो तो कृतप्रतिज्ञा से रहित होता है। कारकाश में केतु सूर्य शुक दृष्ट हो तो राजा का नौकर होता है। कारकाश ग्रहफल समाप्त ॥१६-४२॥

### अथ कारकाशदशमफलमाह

दशमं कारकाशे च बुधेन समधीक्षिते ॥ व्यापारे बहुला मन्त्र महत्कर्मविचक्षण ॥ ४३ ॥ कारकाशे च दशमे रविणा च युते यदि ॥ गुरुदृष्टे तथा विप्र जायते योगकारक ॥ ४४ ॥ कारकाशे च दशमे शुभशेठनिरक्षिते ॥ स्थिरचित्तो भवेद्दालो गभीरो बहुवीर्यवान् ॥ ४५ ॥

### अथ कारकाशे चतुर्थस्थानफलम्

पाताले कारकाशे च शशिगुरुयुतेक्षिते ॥ प्रासादवान् भवेद्दालो विचित्रहर्म्यवान् द्विज ॥ ४६ ॥ कारकाशे च पाताले तु गर्जे कोऽपि सस्थितः ॥ हर्म्यमदिरसयुक्तो ह्यत्युच्चो बहुदीप्तिमान् ॥ ४७ ॥ कारकाशे च पाताले शनिराहुयुतेक्षिते ॥ विशाच्छादनपट्टीयुजायते मदिर द्विज ॥ ४८ ॥ कारकाशे च पाताले कुजकेतुसानीक्षिते ॥ ऐष्टिक मदिर तस्य जायते नाम सशयः ॥ ४९ ॥ कारकाशे



च पातालेगुरुयुक्तनिरीक्षिते ॥ ऐष्टिक मंदिर तस्य जायते नात्र सशय ॥५०॥ कारकाशे च पाताले  
गुरुयुक्तनिरीक्षिते ॥ कणवेष्टितसयुक्त जायते तस्य मंदिरम् ॥५१॥

## कारकांश विभिन्नभावफल

### दशमभावफल

कारकाश मे दशमभाव हो और बुधदृष्ट हो तो बड़े बड़े कार्य करनेवाला तथा व्यापार मे बहुत धन प्राप्त करनेवाला होता है। कारकाश दशम मे रवियुक्त तथा गुरुदृष्ट हो तो राजयोग होता है। दशमभाव मे कारकाश हो तथा शुभग्रहदृष्ट हो तो जातक दृढविचारी, गभीर और बलवान् होता है। दशम कारकाशफल समाप्त ॥४३-४५॥

### कारकाश मे चतुर्थस्थानफल

चतुर्थ स्थान मे कारकाश हो चन्द्र शुक्रदृष्टि युक्त हो तो अनेक प्रकार के मकानवाला होता है। चतुर्थस्थान मे कारकाश उच्चराशिगत ग्रहयुक्त हो तो लम्बे बढवाला, सुन्दर शरीर, बड़े बड़े मकानवाला होता है। चतुर्थ कारकाश शनि राहु से युक्त या दृष्ट हो तो बड़े बगीचेवाला मकान होता है। चतुर्थ कारकाश यदि म० श० के० से दृष्ट हो तो ईट से बना मकान होता है। चतुर्थ कारकाश गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो पक्की ईट का मकान होता है तथा बजरी (पत्थर के छोटे टुकड़े) का पक्का मकान होता है ॥ चतुर्थ फल सम्पूर्ण ॥४६-५१॥

## अथ कारकांशे नवमभावफलमाह

कारकाशे च नवमे शुभसेटयुतेक्षिते ॥ सत्यवादी गुरौ भक्त स्वधर्मनिरतो भवेत् ॥५२॥  
कारकाशे च नवमे पापग्रहयुतेक्षिते ॥ स्वधर्मनिरतो बाल्ये मिथ्यावादी भवेद्द्विज ॥५३॥  
कारकाशे च नवमे शनिराहुयुतेक्षिते ॥ गुरुद्रोही भवेद्विप्र शास्त्रेषु विमुखो नर ॥५४॥  
कारकाशे च नवमे गुरुभानुयुतेक्षिते ॥ तदापि च गुरुद्रोही गुरुवाक्ष्य न मन्यते ॥५५॥  
कारकाशे च नवमे भृगुभौमयुतेक्षिते ॥ पद्मवर्णाधिकपोगे च मरण पारदारिक ॥५६॥  
कारकाशे च नवमे क्षतयुतेक्षिते द्विज ॥ परस्त्रीसगमाद्बालो बधको भवति ध्रुवम् ॥५७॥  
कारकाशे च नवमे गुरुयुतेक्षिते द्विज ॥ स्त्रीलोलुपो भवेद्बालो विषयी चैव जायते ॥५८॥

### नवमभाव के कारकाश का फल

कारकाश नवमभाव मे हो शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो धर्मात्मा गृहभक्त और सत्यवादी होता है। नवमभावगत कारकाश पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो बाल्यावस्था मे धार्मिक वृत्तिवाला, मिथ्यावादी होता है। नवमभावगत कारकाश शनि राहुयुक्त या दृष्ट हो तो मूर्ख और गुरुद्रोही होता है। नवमभावगत कारकाश यदि सूर्य गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो भी गुरुद्रोही, आज्ञापालक नहीं होता। नवमभावगत कारकाश शुक्रमंगलयुक्त या दृष्ट हो और पद्मवर्ग मे भी इन्हीं से युक्त या दृष्ट हो तो परस्त्री के कारण मरण होता है। नवमभावगत कारकाश राहुयुक्त या दृष्ट हो तो परस्त्री के कारण बन्धन होता है। नवमगत कारकाश गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो कामी और मिथ्या होता है ॥५०-५८॥

### अथ कारकांशसप्तमभावफलमाह

कारकांशे च द्यूतस्ये गुरुचंद्रयुते द्विज ॥ सुंदरी गेहिनी तस्य पतिभक्तिपरायणा ॥५९॥ राहुणा विह्वला बाला जायते चांगना द्विज ॥ शनिना च वयोधिक्या रोगिणी वा तपस्विनी ॥६०॥ भौमेन विकलांगी च तथा कांताद्यलक्षणा ॥ रविणा स्वकुले मुक्ता आसक्ता परवेदर्मिनि ॥६१॥ बुधे कलावती ज्ञेया कलाभिज्ञा प्रजायते ॥ शुक्रेण तद्वज्ज्येया च निर्विशंक द्विजोत्तम ॥६२॥

### अथ कारकांशे तृतीयभावफलमाह

कारकांशे तृतीये च पापखेटयुतेक्षिते ॥ स शूरो जायते वालो कीर्यवान्बहुविक्रमो ॥६३॥ कारकांशे तृतीयेऽपि शुभखेटयुतेक्षिते ॥ जायते तत्त्वहृदयः कातरोऽपि विशेषतः ॥६४॥ कारकांशे तृतीये च षष्ठे पापयुतेक्षिते ॥ कृषिकर्मरतो नित्य जायते च न सशयः ॥६५॥

#### सप्तमभावगत कारकांशफल

सप्तमस्थ कारकांश गुरुचन्द्रयुक्त हो तो पतिभक्त मुन्दरी स्त्री प्राप्त होती है ॥ इसी प्रकार राहुयुक्त हो तो अतिकामासक्त भार्या प्राप्त होती है और शनियुक्त होने से अपने से अधिक उमरवाली और रोगिणी और विरक्त होती है ॥ और इसी प्रकार मंगलयुक्त होने से विकलांगी और पुरुष समान होती है ॥ भूय के योग से अपने घर में सुरक्षित रखने पर भी अन्य घर में आसक्त रहती है ॥ बुध के योग से गायनवाद्य आदि कलाओं की जाननेवाली होती है ॥ शुक्र के योग से भी बुध के ही समान फल होता है ॥५९-६२॥

#### तृतीयभावगत कारकांशफल

तृतीयभावगत कारकांश हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो जातक बलशाली और पराक्रमी होता है ॥ तृतीयभावगत कारकांश शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो तत्त्वज्ञानी और डरपोक होता है ॥ कारकांश तृतीय या षष्ठभाव गत हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो खेती से आजीवन करता है ॥६३-६५॥

### अथ कारकांशे द्वादशभावफलमाह

कारकांशे ध्ययस्याने उच्चस्थेऽपि शुभग्रहे ॥ सद्गतिर्जायते तस्य शुभलोकमवाप्नुयात् ॥६६॥ कारकांशे ध्यये केतौ शुभखेटयुतेक्षिते ॥ तदापि जायते मुक्तिः सायुज्यपदमाप्नुयात् ॥६७॥ मेघेऽय धनुषि वापि कारकांशे ध्यये शिखी ॥ शुभग्रहेण संदृष्टे कैवल्यपदमाप्नुयात् ॥६८॥ केवलेऽपि ध्यये केतुः पापग्रहयुतेक्षितः ॥ न मुक्तिर्जायते तस्य शुभलोक न पश्यति ॥६९॥ रविणा सयुते केतौ कारकांशे ध्ययस्थिते ॥ गौर्या भक्तिर्भवेत्तस्य शाक्तिको जायते नरः ॥७०॥ रविभक्तिर्भवेत्तस्य निर्विशंक द्विजोत्तम ॥ चद्रेण संपुते केतौ कारकांशे ध्ययस्थिते ॥७१॥ शुक्रेण संपुते केतौ कारकांशे ध्ययस्थिते ॥ समुद्रतनयामक्तिर्जायतेऽसौत्तमृद्धिमान् ॥७२॥ कुजेन स्कंदभक्तो वा जायते द्विजसत्तम ॥ वैष्णवो बुधशीरिभ्या गुरुणा शिवभक्तिमान् ॥७३॥

राहुणा तामसीं बुर्गां भूतप्रेतादिसेवकः ॥ हेरंबभक्तः शिखिना स्कंदभक्तोऽथ वा भवेत् ॥७४॥  
 कारकांशे व्यये शौरिः पापराशी यदा भवेत् ॥ तदैव क्षुद्रदेवस्य भक्तिस्तस्य न संशयः ॥७५॥  
 पापस्यैपि व्यये शुक्रस्तदापि क्षुद्रसेवकः ॥ कारकान्पूनभागो हि अमात्यो जायते ग्रहः ॥७६॥  
 कारके च फलं ब्रूयादमात्येऽनुचरो भवेत् ॥ आदित्येदुधरापुत्राद्गणनीयोऽष्टभो ग्रहः ॥७७॥  
 तस्मिन् ग्रहेऽप्येव फलं यत्कथं नात्र संशयः ॥ अमात्याद्द्वाब्दे राशौ पापसं पापसंपुते ॥  
 तयापि क्षुद्रदेवस्य भक्तिर्भवति निश्चितम् ॥७८॥ अमात्यो वर्तते यत्र तन्वादौ द्विजसत्तम ॥  
 सूर्यादिग्रहसंपुक्ते तत्फल पूर्ववद्द्विज ॥७९॥

### द्वादशभावगत कारकाशफल

बारहवे भाव मे कारकाश हो और उच्चस्य शुभग्रहयुक्त हो तो सद्गति होती है, अन्त मे शुभलोक की प्राप्ति होती है॥ व्ययभावगत कारकाश मे केतु हो और शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो भी सायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है॥ व्ययभाव मे मेष या धनु राशि हो और उसमे केतु शुभग्रहदृष्ट हो तो भी सायुज्यमुक्ति प्राप्त होती है॥ और वही केतु पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो उसकी न तो मुक्ति होती है और न शुभ लोक ही प्राप्त होता है॥ व्ययभावगत कारकाश मे केतु सूर्ययुक्त हो तो जातक गौरीभक्त और श्राक्त होता है॥ व्ययभावास्थित कारकाश मे चन्द्रयुक्त केतु हो तो सूर्य मे भक्ति होती है॥ व्ययभावगत कारकाश मे केतु शुक्र से युक्त हो तो लक्ष्मीदेवी की आराधना से समृद्धिवाला होता है॥ इसी प्रकार केतु मंगलयुक्त हो तो स्वामी कार्तिकेय का भक्त होता है। बुध तथा शनियुक्त होने से विष्णुभक्त और गुरु युक्त होने से शिवभक्त होता है॥ कारकाश के व्ययभाव मे राहु होने से काली पूजक तथा भूत प्रेतादि को सिद्ध करनेवाला होता है। तथा केवल केतु से गणेश या स्कन्द का भक्त होता है॥ कारकाश के व्ययभाव मे पाप राशि मे शनैश्चर हो तो क्षुद्र देवता यक्ष आदि का उपासक होता है॥ इसी प्रकार पापराशि मे शुक्र हो तो भी क्षुद्र देवताओं का भक्त होता है। यह सम्पूर्ण फल आत्मकारक के नवमाश का जानना॥ आत्मकारक से कम अशवाला ग्रह 'आत्मकारक' होता है॥ कारकाश मे जो फल कहा है अमात्यकारक भी उसी का अनुगामी है। तथा सूर्य, चन्द्रमा, मंगल से अष्टम राशिगणना करना ॥ उस राशि मे भी इसी प्रकार फल जानना । अमात्यकारक से बारहवी राशि यदि पापराशि हो या पाप ग्रहयुक्त हो तो भी क्षुद्रदेवता भक्त होता है॥ हे मैत्रेय! अमात्यकारक राशि लग्न आदि भावो मे सूर्यादि ग्रह के योग से भी पूर्ववत् फल जानना॥ कारकाश ग्रहफल सम्पूर्ण ॥ १६-७९॥

### अथ कारकांशे त्रिकोणफलमाह

कारकांशे त्रिकोणस्थे खेते च तांत्रिको भवेत् ॥ पापेन क्षुद्रदेवस्य शुभेन शुभसेवकः ॥८०॥  
 कारकांशे त्रिकोणस्थे पापयुक् पापवीक्षिते ॥ भूतानुग्रहकर्ता स्यान्निरिषांक द्विजोत्तम ॥८१॥  
 कारकांशे त्रिकोणस्थे पापयुक् शुभवीक्षिते ॥ पुत्रैर्भयप्रदो नित्य राजानुग्रहकारकः ॥८२॥  
 कारकांशे लये चंद्रे कुजराहुनिरौक्षिते ॥ क्षयरोगो भवेत्तस्य श्वासकासादिरोगयुक् ॥८३॥  
 लप्रेक्षिते प्रबंधे च पापद्वययुते द्विज ॥ तांत्रिको जायते विप्र निरिषांक कुले द्विज ॥८४॥

पूर्वक्षणे नवमोऽध्यायः

पापनिरीक्षितौ तत्र तंत्रनिग्राहको भवेत् ॥ शुभनिरीक्षितौ वापि तंत्रानुग्रहकारकः ॥८५॥  
कारकांशेदुशुक्रौ च शुभदृष्टिनिरीक्षितौ ॥ रसवादी भवेद्वालो धातूनां भस्मकारकः ॥८६॥  
शुकेदुबुधसंदृष्टौ सदैवो हि भवेन्नरः ॥ पीयूषपाणिः कुशलःसर्वरोगहरो द्विज ॥८७॥  
कारकांशेदुतुर्यस्यो दैत्याचार्यनिरीक्षितः ॥ श्वेतकुण्ठी भवेन्नूनं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥८८॥

### कारकांश त्रिकोणफल

कारकांश राशि त्रिकोणमे हो तथा ग्रहयोग हो तो 'तान्त्रिक' होता है। कारकांश त्रिकोणमे हो तथा ग्रहयुक्त और पापदृष्टि हो तो भूत प्रेतादिसे विद्धि प्राप्त करता है। कारकांश के त्रिकोण मे होने और पापग्रहयुक्त तथा शुभग्रह की दृष्टि होने से पुत्र-सन्तान और ऐश्वर्य तथा राजा का अनुग्रह प्राप्त होता है। कारकांश मे चन्द्रयुक्त होकर अष्टमभाव मे हो और भगल राहु से दृष्ट हो तो जातक क्षय रोगी अथवा श्वास-सासी वाला होता है। लग्न मे दूसरे या तीसरे स्थान मे दो पापग्रहो से युक्त हो तो निश्चय ही 'तान्त्रिक' होता है। पूर्वोक्त स्थान मे अनेक पापग्रहो से दृष्ट हो तो तन्त्र का निग्रहकारक होता है, और शुभग्रह दृष्ट हो तो अनुग्रह कारक होता है। कारकांश मे चन्द्रमा और शुक्र शुभग्रहदृष्ट हो तो रसभस्म का जानने और करनेवाला होता है। और चन्द्र, बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो चिकित्सा प्रणाली मे कुशल, पीयूषपाणि (चिकित्सा मे द्रव्य पानेवाला) रोगी को दूर करनेवाला सदैव होता है। कारकांश मे चन्द्रमा चतुर्थ मे हो और शुक्रदृष्ट हो तो निश्चय ही श्वेत कुष्ठरोग वाला होता है ॥८०-८८॥

कारकांशेदुचापस्ये यदि शुक्रयुतेक्षिते ॥ पांडुश्चित्री भवेद्वालः श्वेतकुण्ठांगपीडितः ॥८९॥  
कारकांशेदुचापस्ये धरापुत्रेण धीलिते ॥ राजरोगो भवेत्तस्य रक्तपित्तांतिको द्विज ॥९०॥  
कारके चंद्रधनुषि शिखिना वीक्षिते सति ॥ नीलकुण्ठं भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९१॥  
चतुर्थे पंचमे रंभ्रे धने राहुकुजौ यदि ॥ क्षयरोगो भवेत्तस्य चंद्रदृष्ट्या विशेषतः ॥९२॥  
कारकांशे सप्तस्थाने केवलः संस्थितः कुजः ॥ पिटकादि भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९३॥  
कारकांशे त्रये केतौ ग्रहणीरोगपीडितः ॥ स्वर्मानुतुलकी रंभ्रे विषवेद्यःप्रजायते ॥९४॥  
कारकांशे धने सुर्वे केवले संस्थिते शनी ॥ धनुर्विद्याधरो बालो जायतेऽपि न संशयः ॥९५॥  
कारकांशे मुखे बिन्दे केवले संस्थिते शिखी ॥ घटिकापंश्रवादी स्याद्विषशोधनतत्परः ॥९६॥  
उक्तस्थाने स्थिते सौम्ये तद्वत्परमहंसके ॥ तथा संन्यस्तकेः जेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९७॥

कारकांश चन्द्रमा धनु राशि मे शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो पांडुरोगी तथा श्वेतकुण्ठी होता है। कारकांश चन्द्रमा धनु राशि मे भगल से दृष्ट हो तो रक्तपित्त की बीमारी या क्षयरोगी हो ॥ कारकांश चन्द्रमा धनुराशि मे यदि केतुदृष्ट हो तो नील कुष्ठरोग निश्चय होता है। कारकांश मे दूसरे, चौथे, पाचवे, आठवे यदि भगल राहु हो तो क्षयरोगी होता है, चन्द्रदृष्टि हो तो अवश्य ही होता है। कारकांश मे भगल आठवे घर मे हो तो फोडा-फुन्सी की व्याधि होती है। कारकांश मे छठे केतु हो तो सप्रहणी रोग होता है। राहु तथा शुक्र आठवे हो तो विषवेद्य (गारुडी) होता है। कारकांश मे चतुर्थ या द्वितीय मे केवल शनि हो तो निश्चय धनुर्विद्याविशारद होता है। कारकांश मे द्वितीय, चतुर्थ स्थान मे केतु हो तो घटिका मन्त्र

(प्राचीन काल की घड़ी) से दृष्ट (समय) शोधन में प्रवीण होता है। कारकाश में २।४ स्थान में बुध हो तो निश्चय ही परमहंस सन्यासी होता है ॥८९-९७॥

उक्तस्थाने स्थिते राहौ सोह्यशदिकारक ॥ शिखिना सङ्गकारी च कुजेन कुतधारक ॥९८॥ चद्रेज्यौ कारकाशे च लग्ने वा नवपचमे ॥ प्रथकर्ता भवेन्नून सर्वविद्याविशारद ॥९९॥ उक्तस्थानगते शुक्रे स्वल्पप्रथकरो द्विज ॥ उक्तस्थानगते सौम्ये किञ्चिदग्रथकरो ह्यसौ ॥१००॥ शुक्रेण काव्यकर्ता च प्राकृतप्रथतत्पर ॥ गुरुणा सर्वप्रयाना कारको द्विजसत्तम ॥११॥ वाक्यहीनो भवेद्दाल सभासोभो न जायते ॥ वैयाकरणश्च वेदाती जायते तर्कशास्त्रकृत् ॥१२॥ उक्तस्थानगतसौरि सभाजाड्यो भवेन्नर ॥ मीमांसको भवेन्नूनमुक्तस्थानगते बुधे ॥१३॥ कारकाशे धरामूनूर्लगे वानवपचमे ॥ नैयायिको भवेन्नून सुष्ठुकाव्यकरो नर ॥१४॥ कारकाशे निशानाये त्रिकोणे चाय लग्ने ॥ साख्यशास्त्रज्ञनिपुणो जायते मतिमात्रर ॥१५॥ भाग्ये लब्धे प्रबधे वा कारकाशे शिखी तथा ॥ गणितज्ञो भवेन्नून ज्योति शास्त्रविशारद ॥१६॥ मुराचार्येण सबधे साप्रदायिकशस्त्रघृक् ॥ ये घोषा भाग्यभावे तु यथाबद्धापित मया ॥१७॥

कारकाश में २।४ स्थान में राहु हो तो मजीनरी बनाने या सुधारने में प्रवीण होता है। केतु होने से तलवार आदि हथियार बनाता और रक्षता है। कारकाश में चन्द्र गुरु लग्न में या पचम नवम में हो तो सर्वविद्याओं में पारंगत तथा ग्रन्थकर्ता होता है। उक्तस्थान में शुक्र हो तो छोटी पुस्तके लिखनेवाला तथा बुध होनेसे कभी कोई ग्रन्थ करनेवाला होता है। गुरु के होने से कवि तथा प्राकृतभाषा का विद्वान् होता है। गुरु होने से सब विषयों का विद्वान् होता है। गुरु होने से वैयाकरण नैयायिक और वेदान्ती होते हुए भी कम बोलनेवाला तथा सभा में भी शान्त रहनेवाला होता है। उक्त स्थान में शनि हो तो पंडित होते हुए भी समाज में जड़ हो। बुध हो तो निश्चय ही मीमांसक होता है। कारकाश में लग्न या पचम अथवा नवम स्थान में मंगल हो तो कवि और न्यायशास्त्र का ज्ञाता होता है। कारकाश के लग्न या त्रिकोण में चन्द्रमा हो तो साख्यशास्त्र का ज्ञाता होता है। कारकाश के १।१।२ स्थान में केतु हो तो ज्योतिष शास्त्र में पारंगत गणितज्ञ होता है। गुरु के सम्बन्ध से धार्मिक शास्त्र का ज्ञाता होता है। जो योग भाग्यभाव में होते हैं वे यथावत् कहे गये ॥९८ १००॥ तथा ॥१ ७॥

विसस्थानेऽपि ते ज्ञेया पूर्वबज्जायते फलम् ॥ केऽपि तृतीयभागे तु कथयति पुरा द्विज ॥८॥ कारकाशे धने केतौ तथा भाग्यालये गते ॥ पापग्रहेण सदृष्टे वाचालश्च भवेन्नर ॥९॥ कारकाशे तथाहृदे धने रक्षे स्थिते द्विजे ॥ ग्रहसाम्येतिविज्ञेयो योग केमद्रुमो भवेत् ॥१०॥ उक्तस्थाने ग्रहो नास्ति तदा केमद्रुमो भवेत् ॥ चद्रदृष्टे विशेषेण दारिद्र्यार्तिपुतो भवेत् ॥११॥ आह्लाज्जन्मलप्राद्धा पापा स्त्रीहाणिगा यदि ॥ केदले सग्रहत्वेऽपि समसील्यौ शुभाशुभौ ॥१२॥ चद्रदृष्टिविशेषेण योग केमद्रुमो मल ॥ द्वितीयाष्टमभावाभ्या योगोऽय कल्पते द्विज ॥१३॥ कारकाशेषु ये घोषा पूर्वोक्ता गदिता मया ॥ तत्तद्राशिब्रजापाके सर्वेषा फलमादिशेत् ॥१४॥ एव दशाप्रदो राशिर्द्वितीयाष्टमयोर्द्विज ॥ ग्रहसाम्येति विज्ञेय केमद्रु शशिनेक्षिते ॥१५॥ दशाप्रारभसमये शोधयेज्जन्मलप्रवत् ॥ सूर्यादिखेचरान्पट्टान् साधयेज्ज-

पूर्वखण्डे दशमोऽध्यायः

नवदृष्टिज ॥१६॥ तत्र विताष्टमे भागे ग्रहसाम्ये तु यद्भवेत् ॥ तदा केमद्रुमो ज्ञेयश्चन्द्रदृष्ट्या विशेषतः ॥१७॥ एव तन्वादिभावानां दशरभेषु योजयेत् ॥ तत्तद्ग्रहानुसारेण फलं वाच्यं बुधे सदा ॥१८॥

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डेकारकाशफलकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥१॥

ऊपर बड़े गये सभी योग घनस्थान में भी इसी प्रकार माने। कोई आचार्य तृतीय भाव में भी इन योगों को मानते हैं। कारकाश में केतु द्वितीय स्थान में या नवमस्थान में पापदृष्ट हो तो बाचाल (बकवादी) होता है। 'केमद्रुम' योग कहते हैं। कारकाश में अथवा आरुढ लग्न में दूसरे और आठवे स्थान में बराबर ग्रह हो तो 'केमद्रुम' (केम नामक जंगली बेकारफल होता है उसका वृक्ष यह सार्यक सजा है) योग होता है। उक्त स्थानों में कोई ग्रह नहीं हो तो भी 'केमद्रुम' योग होता है और चन्द्रमा की दृष्टि हो तो योग बलवान् होता है, यह योग दरिद्रता तथा पीडाकारक ही है। आरुढलग्न या जन्मलग्न से पापग्रह सप्तम और द्वादश भाव में हो अथवा ये स्थान खाली हो तो समान सुख दुःख अर्थात् मिश्रित फल होता है। 'केमद्रुम' योग द्वितीय और अष्टमभाव से ही होता है और विशेष करके चन्द्रमा की दृष्टि से बलवान् होता है। कारकाश में जो योग कहे गये हैं उनका फल उन राशियों की दशा में होता है। इस प्रकार दशाप्रद द्वितीय अष्टम राशि ग्रहसाम्य (दोनों स्थानों में बराबर ग्रह होने अथवा न होने से) कहाती है और चन्द्रदृष्टि होने से 'केमद्रुम' योग कहा जाता है। दशा के प्रारम्भकाल में जन्म के समान १२ भावों को स्पष्ट करना चाहिये, और सूर्यादि ग्रहों को स्पष्ट करके देखना चाहिये। इसके बाद द्वितीय तथा अष्टमभाव ग्रहसाम्य (उपगुणित प्रकार से) होने पर 'केमद्रुम' योग होता है, चन्द्रदृष्टि से बलवान् होता है। इस प्रकार तनु, घन (प्रथम, द्वितीय) आदि १२ भावों का ग्रहों के अनुसार जो शुभाशुभ फल हो वह फल उस राशि के दशा काल में कहना। कारकाश फल समाप्त ॥८०-११८॥

इति बृ० पा० हो० शा० पू० ख० भावप्रकाशिकाया कारकाशफलकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥१॥

### अथ भाव-होरा-घटीलग्नप्रमाह

अथ वक्ष्याम्यहं विप्र ! कल्पनात्मकलग्नप्रमाह ॥ भावहोराघटीलग्न-लग्नातीह यथाक्रमम् ॥१॥ सूर्योदयात् समारम्भ्य घटिकानान्तु पञ्चकम् ॥ इष्टपर्यन्तमेतत्तु भावलग्नं समुच्यते ॥२॥ इष्टघटिकादिकं यत्तु पञ्चभिर्भाजितं फलम् ॥ योज्यं मौढयिके सूर्ये 'भावलग्नं' तदेव हि ॥३॥ होरालग्नं च वक्ष्येह शृणु त्वं द्विज पुत्रव ! सार्द्धद्विघटिका तुल्यं विधिं तस्य वक्ष्याम्यहम् ॥४॥ इष्टघटिकादिकं द्विष पञ्चात् भादिकं फलम् ॥ योज्यमौढयिके सूर्ये 'होरालग्नं' तदेव हि ॥५॥

हे भैरव ! अब मैं भावलग्न, होरालग्न तथा घटीलग्न जो कि वास्तविक नहीं है, काल्पनिक है, वे यथाक्रम से कहता हूँ। सूर्योदय से ५-५ घटी में इष्टपर्यन्त १-१ राशि वा भोग होता है, इसको भावलग्न कहते हैं। जो घटिकादि इष्ट हो उसमें ५ का भाग देकर नव राश्यादि अक मानकर प्रातःकालिक सूर्य में युक्त करे तो 'भावलग्न' स्पष्ट होता है ॥१-३॥

उदाहरण-

इष्टघटी १०।०० मे ५ का भाग दिया तो २।० लब्ध हुआ। सूर्य ४।२३।२८।१८ मे युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ यह भावलग्न स्पष्ट हुआ।

हे द्विजश्रेष्ठ ! अब हम 'होरालग्न' कहते हैं, २।।-२।। घटी मे १-१ लग्न का भोग होता है। इष्ट घटी को २ से गुणा करके ५ का भाग देकर लब्धाक को प्रातः सूर्य मे युक्त करने से 'होरालग्न' स्पष्ट होता है। ४।।५।।

उदाहरण-

इष्टघटी १०।०० को द्विगुण किया तो २०।०० हुआ, ५ का भाग दिया तो लब्ध ४ राशि को प्रातः सूर्य मे युक्त किया तो ६।२३।२८।१८ 'होरालग्न' स्पष्ट हुआ।

पुनरन्यत्र घटीलग्नं कल्पनीयं द्विजोत्तम ॥ सूर्योदयात् समारम्भ्य जन्मकालावधिं स्फुटम् ॥६॥  
एकैकघटिकामानं लग्नं यद् भादिकं भवेत् ॥ तदेव घटिकालग्नं कथितं नारदादिभिः ॥७॥  
घटीतुल्यां राशयस्तु पलाईप्रमिताशकाः ॥ योज्याध्रौदयिके-सूर्ये 'घटीलग्न' स्फुटं भवेत् ॥८॥  
क्रमादेशां हि लग्नानां भावकुण्डलिकां लिखेत् ॥ ये ग्रहा यत्र ते तत्र स्थाप्या वै गणितागताः ॥९॥  
वर्णदाख्यदशां भानां कथयामि तवाग्रतः ॥ यस्या चिज्ञानमात्रेण ज्ञेयमायुर्भव फलम् ॥१०॥  
ओजलग्नप्रसूतानां मेधादर्शणयेत् क्रमात् ॥ समलग्न प्रसूताना मीनादेरपसव्यतः ॥११॥

हे द्विजोत्तम ! अब तुमको तीसरे 'घटीलग्न' की कल्पना करनी चाहिये। सूर्योदय से जन्मसमय का इष्टकाल जो घटीपल इष्ट है, वही राशि अशरूप मे 'घटीलग्न' है, ऐसा नारद आदि का मत है। इसमे घटी अक 'राशि' है और पलाक का द्विगुण अक 'अण' होता है, प्राप्त राशि अण को प्रातः कालीन सूर्यस्पष्ट मे युक्त करने से घटी लग्न के राशि अण आदि स्पष्ट होते हैं ॥६-८॥

उदाहरण-

इष्ट १०।०० यहा १० यह राशि अक है, पल नहीं होने से अशादि वही रहा तो राशि मे १२ से भाग देने पर २।२३।२८।१८ यह घटी लग्न स्पष्ट हुआ।

इन (भाव, होरा, घटी) लग्नो से कुडली बनाकर जो ग्रह जिस राशि मे हो उसी राशि मे लिखे। अब हम 'वर्णद' दशा कहते हैं, जिसके जान से आयुभर का शुभाशुभ फल जाना जाता है। विषम राशि मे लग्न हो तो मेघ आदि से क्रम से गिनना चाहिये और सम राशि मे लग्न हो तो मीन राशि से उलटे क्रम से गिनना चाहिये ॥११॥

एवं मेधादिमीनादि जन्मलग्नान्त मेव हि ॥ तथैव होरालग्नान्त गणनीयं द्विजोत्तम ॥१२॥  
ओजत्वेन समत्वेन साजात्यमुग्रय यदि ॥ तर्हि संख्ये योजनीये वैजात्ये तु वियोजयेत् ॥१३॥  
मेघ मीनादितो ज्ञात्वा यो राशिः स तु वर्णदः ॥ प्रयोजनं च वस्येज्ज कृणु त्व द्विजपुंगव ॥१४॥  
होरा लग्नप्रयोन्या सबलाद् 'वर्णद' दशा ॥ यत् संख्यो वर्णदो राशि तत्तत् सत्या क्रमेण तु ॥१५॥  
क्रम व्युत्क्रम भेदेन दशा स्यादोज-युग्मयोः ॥ भावहोरादि लग्नानां सर्वत्रैव समानता ॥१६॥  
जन्मलग्नान्तुस्वस्थीय देशोद्भवमितीरितम् ॥ मीनाद्यपसव्यमार्गेण गणनीयं प्रयत्नतः ॥१७॥

पूर्वखण्डे एकादशोऽध्यायः

यत्त्वन्मतिमो राशिस्तद्राशिर्वर्णदो भवेत् ॥ वर्णसंख्यां विज्ञानोयाच्चरपर्याप्रमाणतः ॥१८॥  
 होरालग्रभयोर्नेपा सबलाद्वर्णदा दशा ॥ यत्संख्या वर्णदा ल्त्प्रातत्र सख्या क्रमेण तु ॥१९॥  
 क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यादोजगुम्भयोः ॥ वर्णदा राशिमेषादि मीनादि गणयेत्क्रमात् ॥२०॥  
 वर्णदा स्यात्त्रिकोणे च पापयुक् पापराशिकः ॥ पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम् ॥२१॥

हे द्विजोत्तम ! इस प्रकार मेष आदि से (क्रम से) और मीन आदि से (उलटे क्रम से) जन्म लग्न तथा होरा लग्न तक गिनकर भिन्न भिन्न सख्या लेना । पश्चात् यदि होरा लग्न और जन्मलग्न दोनों ही सम या दोनों ही विपम हो तो इन सख्याओं का योग करो और यदि एक सख्या सम और दूसरी विपम हो तो दोनों का अन्तर करो। इस प्रकार योग अथवा अन्तर करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह यदि विपम हो तो मेष से क्रम से और सम हो तो मीन से व्युत्क्रम से गिनकर जो राशि प्राप्त होती है, वही 'वर्णद' राशि है। होरालग्र तथा जन्मलग्न में जो बलवान् हो उससे 'वर्णद' दशा ग्रहण करना। 'वर्णद' राशि की जो सख्या सम, विपम है, उसके अनुसार क्रम व्युत्क्रम भेद से दशा ग्रहण करना चाहिये। भाव, होरा तथा घटी लग्न सर्वत्र समानरूप से मानना (अर्थात् देशभेद से भेद नहीं होता) और जन्म लग्न अपने अपने देश (स्थान) के अनुसार विभेद होता है तो परस्पर घटाने से शेष सख्यात्मक अक मीनादि अपसव्यमार्ग से गिनने पर वर्णद राशि होती है। इस प्रकार जो अंतिम राशि प्राप्त होती है वह वर्णद राशि है। उस राशिकी दशाके वर्षों की सख्या 'चरपर्या' दशा के अनुसार लेना। जन्मलग्न तथा होरालग्रमें जो बलवान् हो उससे वर्णददशा लेना। वर्णददशाकी जो विपम या सम सख्या हो उसके अनुसार क्रम से तथा व्युत्क्रम से मेषादि और मीनादि क्रम में गणना करना। यह वर्णद राशि त्रिकोण में पड़े और पापग्रह की ही राशि हो और पापग्रहयुक्त हो तो उस दशा तक ही जातक का जीवन जानना ॥१२-२१॥

उदाहरण—

जन्मलग्न—६।१६।१७।१९। होरालग्र—६।२३।२८।१८, दोनों ही विपम राशि हैं, अतः मेष से क्रम से गणना किया तो ७-७ हुई, प्राप्त दोनों मध्या विपम (सजातीय) हैं, अतः योग किया तो १४ हुआ, १२ से भाग दिया तो '२' यह 'वृष' वर्णद राशि प्राप्त हुआ।

रदशुले यथैवायुर्निर्दिशक द्विजोत्तम ॥ वर्णदा सप्तमाद्राजोः कलप्रायुर्विचिंतयेत् ॥२२॥ पंचमे तनयस्यायुर्मातुः स्यात्तुर्पंचके ॥ तृतीये भ्रातुरायुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्भेद्विजि ॥२३॥ पितुस्तु नवमान्मातुः पंचमादूर्णदस्य तु ॥ भूतराशिदशायां च प्रबलायामरिष्टकम् ॥२४॥ एव तन्वादिभावानां कारयेद्वर्णदा दशा ॥ पूर्वबच्च कलं ज्ञेय द्विजोत्तम शुभागुम्भम् ॥२५॥ पहणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा ॥ ग्रहाहठपदत्वेन चिंतयेद्ग्रहवर्णदा ॥२६॥ दशाया अन्तरं कार्यं मानुभागं प्रदापयेत् ॥ चरस्तिरदशायां च वर्णदापास्तथैव च ॥२७॥ यत्त्वन्मया पूर्वमव्यानां मानुभागं च कारयेत् ॥ क्रमव्युत्क्रमभेदेन संतितेष्टै दशांतरम् ॥२८॥ पूर्णायां कारकस्यैव केदस्यानां दशा भवेत् ॥ ततः पणफरस्यानामापोस्तमदशां ततः ॥ जन्माणां जन्मलग्नं च कालं होत प्रगास्यते ॥२९॥

इति श्रीबृहस्पारामहोरामास्त्रे पूर्वखण्डे भावतप्रादिकपणं नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥



उदाहरण—

इष्टघटी १०।०० मे ५ का भाग दिया तो २।० लब्ध हुआ। सूर्य ४।२३।२८।१८ मे युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ यह भावलघ्न स्पष्ट हुआ।

हे द्विजश्रेष्ठ ! अब हम 'होरालग्न' कहते हैं, २॥-२॥ घटी मे १-१ लग्न का भोग होता है। इष्ट घटी को २ से गुणा करके ५ का भाग देकर लब्धाक को प्रातः सूर्य मे युक्त करने से 'होरालग्न स्पष्ट होता है' ४।५॥

उदाहरण—

इष्टघटी १०।०० को द्विगुण किया तो २०।०० हुआ ५ का भाग दिया तो लब्ध ४ राशि को प्रातः सूर्य मे युक्त किया तो ६।२३।२८।१८ 'होरालग्न' स्पष्ट हुआ।

पुनरन्यद् घटीलग्न कल्पनीय द्विजोत्तम ॥ सूर्योदयात् समारम्भ्य जन्मकालावधि स्फुटम् ॥६॥  
एकैकघटिकामान लग्न यद् भादिक भवेत् ॥ तदेव घटिकालग्न कथितं नारदादिभिः ॥७॥  
घटीतुल्या राशयस्तु पलाढ्यप्रमिताराका ॥ योज्याध्रौदयिके-सूर्ये 'घटीलग्न' स्फुटं भवेत् ॥८॥  
क्रमादेया हि लग्नानां भावकुण्डलिका लिखेत् ॥ ये ग्रहा यत्र ते तत्र स्याप्या वै गणितागता ॥९॥  
वर्णदाक्ष्यदशा भाना कथयामि तवाग्रत ॥ यस्या विज्ञानमात्रेण ज्ञेयमायुर्भव फलम् ॥१०॥  
ओजलग्नप्रसूतानां मेधावेर्गणयेत् क्रमात् ॥ समलग्न प्रसूतानां मीनादेरपसव्यत ॥११॥

हे द्विजोत्तम ! अब तुमको तीसरे 'घटीलग्न' की कल्पना करनी चाहिये। सूर्योदय से जन्मसमय का इष्टकाल जो घटीपल इष्ट है वही राशि अशरूप मे घटीलग्न है ऐसा नारद आदि का मत है। इसमे घटी अक राशि है और पलाक का द्विगुण अक अश होता है, प्राप्त राशि अश को प्रातः कालीन सूर्यस्पष्ट मे युक्त करने से घटी लग्न के राशि अश आदि स्पष्ट होते हैं ॥६-८॥

उदाहरण—

इष्ट १०।०० यहा १० यह राशि अक है पल नहीं होने से अशादि वही रहा तो राशि मे १२ से भाग देने पर २।२३।२८।१८ यह घटी लग्न स्पष्ट हुआ।

इन (भाव होरा घटी) लग्नो से कुडली बनाकर जो ग्रह जिस राशि मे हो उसी राशि मे लिखे। अब हम वर्णद दशा कहते हैं, जिसके ज्ञान से आयुभर का शुभाशुभ फल जाना जाता है। विषम राशि मे लग्न हो तो मेघ आदि से ब्रम से गिनना चाहिये और सम राशि मे लग्न हो तो मीन राशि से उलटे क्रम से गिनना चाहिये ॥११॥

एव मेघादिमीनादि जन्मलग्नान्त मेव हि ॥ तथैव होरालग्नान्त गणनीय द्विजोत्तम ॥१२॥  
ओजत्वेन समत्वेन साजात्यमुभय घटि ॥ तर्हि सख्ये योजनीये वैजात्ये तु वियोजयेत् ॥१३॥  
मेघ मीनादितो ज्ञात्वा यो 'राशि' स तु वर्णदः ॥ प्रयोजनं च वक्ष्येऽहं शृणु त्वं द्विजपुंगव ॥१४॥  
होरा लग्नभयोर्नैवा सबलाद् 'वर्णदा' दशा ॥ यत् सख्यो वर्णदो राशि तसत् सख्या क्रमेण तु ॥१५॥  
क्रम घ्युत्क्रम भेदेन दशा स्यादोज-पुग्मयो ॥ मावहोरादि लग्नानां सर्वत्रैव समानता ॥१६॥  
जन्मलग्नान्तुस्वस्थीय देशोद्भवमितीरितम् ॥ मीनाद्यपसव्यभागण गणनीय प्रयत्नत ॥१७॥

यत्कर्ममतिमो राशिस्तद्राशिर्वर्णदो भवेत् ॥ वर्षसख्यां विज्ञानीयाच्चरपर्याप्रमाणतः ॥१८॥  
 होरालग्रभयोर्नेया सबलाद्वर्णदा दशा ॥ यत्संख्या वर्णदा स्तप्राप्तत्र सख्या क्रमेण तु ॥१९॥  
 क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यादोजपुष्पयोः ॥ वर्णदा राशिमेषादि मीनादि गणपेत्क्रमात् ॥२०॥  
 वर्णदा स्यात्त्रिकोणे च पापयुक् पापराशिकः ॥ पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम् ॥२१॥

हे द्विजोत्तम ! इस प्रकार मेष आदि से (क्रम से) और मीन आदि से (उलटे क्रम से) जन्म लग्न तथा होरा लग्न तक गिनकर भिन्न भिन्न सख्या लेना । पश्चात् यदि होरा लग्न और जन्मलग्न दोनों ही सम या दोनों ही विषम हो तो इन सख्याओं का योग करो और यदि एक सख्या सम और दूसरी विषम हो तो दोनों का अन्तर करो। इस प्रकार योग अथवा अन्तर करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह यदि विषम हो तो मेष से क्रम से और सम हो तो मीन से व्युत्क्रम से गिनकर जो राशि प्राप्त होती है, वही 'वर्णद' राशि है। होरालग्र तथा जन्मलग्न में जो बलवान् हो उससे 'वर्णद' दशा ग्रहण करना। 'वर्णद' राशि की जो सख्या सम, विषम है, उसके अनुसार क्रम व्युत्क्रम भेद से दशा ग्रहण करना चाहिये। भाव, होरा तथा घटी लग्न सर्वत्र समानरूप से मानना (अर्थात् देशभेद से भेद नहीं होता) और जन्म लग्न अपने अपने देश (स्थान) के अनुसार विभेद होता है तो परस्पर घटाने से शेष सख्यात्मक अंक मीनादि अपसव्यमार्ग से गिनने पर वर्णद राशि होती है। इस प्रकार जो अंतिम राशि प्राप्त होती है वह वर्णद राशि है। उस राशिकी दशाके वर्षों की सख्या 'चरपर्या' दशा के अनुसार लेना। जन्मलग्न तथा होरालग्रमें जो बलवान् हो उससे वर्णददशा लेना। वर्णददशाकी जो विषम या सम सख्या हो उसके अनुसार क्रम से तथा व्युत्क्रम से मेषादि और मीनादि क्रम से गणना करना। यह वर्णद राशि त्रिकोण में पड़े और पापग्रह की ही राशि हो और पापग्रहयुक्त हो तो उस दशा तक ही जातक का जीवन जानना ॥१२-२१॥

उदाहरण—

जन्मलग्न—६।१६।१७।१९ । होरालग्र—६।२३।२८।१८, दोनों ही विषम राशि हैं, अत मेष से क्रम से गणना किया तो ७-७ हृत्, प्राप्त दोनों सख्या विषम (सजातीय) है, अत योग किया तो १४ हुआ, १२ से भाग दिया तो '२' यह 'वृष' वर्णद राशि प्राप्त हुआ।

वद्रशूले यथेवायुर्निर्विशकं द्विजोत्तम ॥ वर्णदा सप्तमाद्राशेः कलशायुर्विचिंतयेत् ॥२२॥ पञ्चमे तनपस्यायुर्मातुः स्यात्तुर्पंचके ॥ तृतीये भ्रातुरायुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्भवेद्द्विज ॥२३॥ पितुस्तु नवमान्मातुः पञ्चमाङ्गणदस्य तु ॥ शूलराशिदशायां वै प्रबलायामरिष्टकम् ॥२४॥ एव तन्वादिभावाना कारयेद्दर्शदा दशा ॥ पूर्ववच्च फल ज्ञेय द्विजोत्तम शुभायुगम् ॥२५॥ ग्रहाणा वर्णदा नैव राशीना वर्णदा दशा ॥ ग्रहार्कदपदत्वेन चितयेद्ग्रहवर्णदा ॥२६॥ दशाया अन्तर कार्य भानुभाग प्रदापयेत् ॥ चरस्थिरदशाया वै वर्णदायास्तयेवच ॥२७॥ पल्लव्या पूर्वमन्वानां भानुभाग च कारयेत् ॥ क्रमव्युत्क्रमभेदेन सल्लिखेई दशांतरम् ॥२८॥ पूर्णार्था कारकस्येव केंद्रस्थानां दशा भवेत् ॥ ततः षण्फरस्थानामापेक्तिमदशां ततः ॥ जन्मलग्न च काल होरा प्रसास्यते ॥२९॥

इति श्रीकृत्स्नारात्तहोराशास्त्रे पूर्वक्षण्डे भावलग्नादिकथन नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

रुद्र, शूल दशा के अनुसार ही कष्टकारी जानना । वर्षाद के सप्तम भाव में जातक की स्त्री की आयु देखना ॥ पञ्चम से पुत्र की, और चतुर्थ से माता की आयु देखना। तीसरे से छोटे भ्राता की आयु देखना, ग्यारहवें से बड़े भाई की। माता से पञ्चम अथवा जातक के वर्षाद से नवम से पिता की आयु का विचार करना। प्रबल शूल राशि की दशा में अरिष्ट होता है। इस प्रकार तन्वादि १२ भावों की वर्षादा दशा देखनी चाहिये। और हे द्विजोत्तम! पहिले उक्त प्रकार ही शुभाशुभ फल जानना ॥ यह वर्षादा दशा ग्रहों की नहीं होती, केवल राशियों की ही होती है। क्योंकि ग्रहों के स्थित होने के स्थान राशियाँ ही हैं, अतः ग्रहों का ही फल देनेवाली यह 'वर्षादा' दशा है। इस दशा की अतर्दशा बनाने के लिये प्रत्येक भाग की दशा के १२ भाग करना। चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियों में अन्तर्दशा निकालना। पूर्वोक्त जो दशावर्ष आये हैं, उनके द्वादशांश अन्तर दशा होती है। इसी प्रकार केन्द्रादि दशा का प्रकार जानना, प्रथम कारक होने से केन्द्रस्थ की दशा बाद पणफरस्थ की और बाद आपोक्लिमस्व की दशा जानना। जन्मलग्न शरीर है, होरा समय है, यह तत्त्व है। वर्षाददशा समाप्त ॥२२-२९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वसडे काल्पनिक होरालग्नादि कथन  
नाम दशमोऽध्याय ॥१०॥

### अथाऽऽरूढमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि राश्यारूढपद द्विज ॥ राशीना द्वादशाना तु यावदोशाश्रयो भवेत् ॥१॥  
सख्या त्वीशोदपादप्रे समाप्ता तत्पद वदेत् ॥ राशिबद्ग्रह आरूढ ज्ञायते गणकैर्जनैः ॥२॥  
यावद्दूर यस्य राशित्तावत्सख्या क्रमेण वै ॥ अप्रे खगारूढपद ज्ञायते द्विजसत्तम ॥३॥  
जनुर्लप्राल्लप्रस्थामी यावद्दूर हि तिष्ठति ॥ तावद्दूर तदप्रे च लग्नारूढ च कथ्यते ॥४॥ यदि  
लग्नेश्वर, स्वर्से कलत्रे सस्थितोऽयथा ॥ आरूढलग्नमित्वाहर्जन्मलग्न द्विजोत्तम ॥५॥ एव  
तन्वादिभावाना भावारूढपद भवेत् ॥ यत्र यत्र ग्रहा लग्ने तत्र तत्र मुनल्लेत् ॥६॥

#### आरूढपद

हे मैत्रेय ! अब मैं राश्यारूढपद कहता हूँ। १२ राशियों का तो वही आरूढ स्थान होता है कि राशि का स्वामी राशि से जितनी राशि पर हो उतनी सख्या पर की अगली राशि उस राशि का आरूढपद होता है। राशि के स्वामी से आगे की उतनी ही सख्या 'पद' जानना, इस प्रकार राशि के समान ही ग्रह का भी आरूढ पद होता है। (ग्रह में) जिस ग्रह की राशि अपने से जितनी सख्या पर हो उससे आगे उतनी ही सख्या पर जो राशि होती है वह ग्रहारूढपद कही जाती है। जातक के लग्न से लग्न का स्वामी जितनी दूर पर स्थित है, उससे उतनी सख्या पर आगे की राशि लग्नारूढ पद कहाती है। हे मैत्रेय ! यदि लग्नेश्वर जन्मलग्न में अथवा सप्तम में ही तो जन्मलग्न ही आरूढपद कहता है। इसी प्रकार लग्न आदि बारहों भावों का पद (आरूढलग्न) जानना। लग्न में जिस जिस स्थान पर ग्रह हो वहा वहा पर

पूर्वखण्डे एकादशोऽध्याय

लिखे ॥ पश्चात् उपर्युक्त रीती से तत् तत् भावो का आरूढ पद तत्तत् स्थानो मे लिखे ॥१-६॥

### उदाहरणार्थमारूढकुडलीमाह

भाग्यारूढ पुत्रारूढ ब० २	धनारूढ १ शु	के० १२ तपारूढ लाभारूढ पराक्रमारूढ	११	१०
	व्यापारारूढ सूर्य बुध ३	९ कर्मारूढ		
४	६ रा जापारूढ		७	८
	म ५ मातुलारूढ निधनारूढ		बु० ७ मुक्तारूढ	

### पराशर उवाच

अधुना सप्रवक्ष्यामि तन्वारूढफल द्विज ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण जायते कर्ममूषकः ॥३॥  
यावदीशास्त्रस्य राशिरित्युक्त मुनिभिः पुरा ॥ पदमारूढसज हि तदात्तर्थाधि  
द्विज ॥८॥

### अथैकादशस्थानमाश्रित्य फलमाह

गदादेकादशे स्थाने शुभग्रहपुतेक्षिते ॥ लःभीवाञ्जनायते घात प्रजावाञ्छीतसयुत ॥९॥  
वित्तोपार्जनव्याघेन नीतिवाञ्छायते गदा ॥ नरो न नास्तिको नून न तु शास्त्रविद्वङ्ङुत्  
॥१०॥ पदादेकादशे विप्र पापमेदपुतेक्षिते ॥ अन्त्यापोपार्जित धित विष्ट शास्त्रमार्गत  
॥११॥ मिश्रमिधफल ज्ञेयमुक्त्वमिध्रादिक्षेत्रग ॥ बहुधा जायते नाभो यत्र यत्र द्विजोत्तम  
॥१२॥ आरुद्राल्ताभभवत पर घटयेत् न व्ययम् ॥ यस्य जन्मनि मोऽपि स्यात्प्रवृत्तो  
घनवानपि ॥१३॥ वृष्टप्रहाणा ग्राहृत्ये तदा दृष्टपरितुगमे ॥ मार्गते चापि तत्रापि  
बद्धर्गनममागमे ॥१४॥ शुभग्रहार्गते तत्र तत्राप्युक्त्वप्रहाणति ॥ मुनानि स्वामिना वृष्टे  
सप्रभागाधिगेन वा ॥१५॥ ज्ञानस्य धुम प्रायस्य निर्दिनेदुनरोत्तम् ॥ उत्तयोगेणु ये नेदा  
दादग तु न पश्यति ॥१६॥

### सगरुडफल

हे मैत्रेय ! अब हम सगरुड का फल बहते हैं। जिसके ज्ञान से कर्म का सूचित करनेवाला होता है। यह राशि अपने स्वामी की सत्या तक होती है, ऐसा प्राचीन महर्षि लोग कहते हैं। इसीलिये उससे आरंभ करके उतने ही आगे और जाने पर वह स्थान होता है॥७॥८॥

### एकादश स्थान का फल

आरुडपद से एकादशस्थान शुभग्रह से युक्त हो तो जातक प्रजावान्, सखीवाला और सुशील होता है। वह न्याय से धन का उपार्जन करनेवाला नीतिनिपुण होता है, न तो नास्तिक होता है और न शास्त्रविरुद्ध कार्य करता है॥ हे मैत्रेय ! पहले एकादश स्थान में यदि पापग्रह युक्त या देखते हो तो अन्याय से उपार्जन करता है और शास्त्रविरुद्ध कर्म करता है॥ इसी प्रकार सौम्य पाप उभययोग से मिथित फल जानना। यदि उस स्थान में उच्च या मित्र आदि में ग्रह स्थित हो तो हे मैत्रेय ! उस जातक को जहा तहा बहुत प्रकार से लाभ होता है। सौम्यग्रह लाभस्थान को तो देखता हो और व्ययस्थान को नहीं देखता हो तो भी जातक बहुत धनवान् होता है। यदि एकादशस्थान को अनेक ग्रह देखने वाले हो जिनमें कोई शक्रराशि में हो, कोई उच्चराशि में हो, अर्गला होने पर भी अनेक अर्गला योग का समावेश हो, कोई शुभग्रहजनित अर्गला हो, कोई उच्च राशिगत ग्रहजनित अर्गला हो, ऐसे अनेक अर्गला हो, स्थान स्वामी की दृष्टि हो अथवा लग्न या भाग्येश की दृष्टि हो और इन उक्त योगों में द्वादशभाव को न देखते हो तो सुख की बहुलता योगानुयोगक्रम से उत्तरोत्तर भाग्य की प्रबलता कहनी चाहिये॥ ९ - १६॥

### अथ द्वादशराशिमाश्रित्य फलमाह

पदारुडे व्यये विप्र शुभपापयुतेक्षिते ॥ बाहुल्यव्ययमित्येव विशेषोपार्जनात्सदा ॥१७॥  
 शुभग्रहे सुमार्गेषु कुमार्गात्पापक्षेत्रे ॥ मिश्रेर्मिश्रफल वाच्य यथास्तमेषु पूर्ववत् ॥१८॥  
 पदारुडे व्यये शुभे भानुस्वर्भानुवीक्षिते ॥ राजमूलाद्दृश्य वाच्य चन्द्र दृष्ट्या विशेषतः ॥१९॥  
 पदारुडे व्यये सौम्ये शुभक्षेत्रयुतेक्षिते ॥ ज्ञातिमध्ये व्ययो नित्यं पापदृक्कलहाद्दृश्यः ॥२०॥  
 पदव्ययेऽमुराचार्यं वीक्षिते चान्यक्षेत्रैः ॥ करमूलाद्दृश्य वाच्य करव्याजेन वै द्विज ॥२१॥  
 आरुडे द्वादशे सौरो धरापुत्रेण सयुते ॥ अन्यग्रहेक्षितेऽविप्र भ्रातृमूलाद्धनव्ययम् ॥२२॥ पदेषु  
 द्वादशे स्थाने ये योगास्तान्वदाम्यहम् ॥ लाभमावेपु ये योगा लाभयोगकराः सदा ॥२३॥ पदेषु  
 सप्तमे राहुरथवा सस्थितः शिखी ॥ क्रुधिव्यथापुतो बालः शिखिना पीडितेऽधिकम् ॥२४॥  
 पदे च सप्तमे केतुः पापक्षेत्रयुतेक्षिते ॥ साहसी श्वेतवेषी च दीर्घलिगी भवेत्प्रः ॥२५॥ पदे च  
 सप्तमे स्थाने गुरुशुकनिशाकराः ॥ एको द्वयं त्रयं तत्र सखीवान्कारयेद्द्रुवम् ॥२६॥ तुंगर्षे  
 सप्तमे क्षेत्रे शुभो वाप्यशुभः पदे ॥ धीमान्तोऽपि भवेन्नूनं सत्कीर्तिसहितो द्विज ॥२७॥ ये  
 योगाः सप्तमे भावे राह्वादिकथिता मया ॥ ते योगा दूनवर्षिन्या वित्तभावे च  
 सद्द्विज ॥२८॥

### द्वादश राशि (द्वारहो भाव) का फल

शुभ तथा पापग्रह दोनो प्रकार के ग्रहों से व्याख्येय पद युक्त तथा दृष्ट हो तो बहुत धर्म होता है और आय भी बहुत होती है। शुभग्रह युक्त दृष्ट हो तो सुमार्ग में और पापग्रहों से कुमार्ग में व्यय होता है। दोनो प्रकार के ग्रहों से फल भी दोनो प्रकार का होता है। लाभस्थान के समान ही यहाँ भी जानना। पदारूढ के व्ययभाव में शुक्र हो सूर्य राहु देखते हो तो राजसम्बन्ध से सर्व हो चन्द्र दृष्टि हो तो विशेष हो। व्यय पदारूढ में सौम्यग्रह हो, अन्य शुभग्रह भी देखते हो तो अपने बन्धु वर्ग में व्यय हो पापग्रह वी दृष्टि से कलह (लडाई-झगडा) के कारण व्यय हो। व्ययपद म (गुरु) शुक्र हो तथा अन्यग्रह भी देखते हो तो कर (टैक्स) के कारण सर्व होता है (कर के रूप में धन व्यय होता है) द्वादश आरूढ में शनि हो तथा मंगल भी हो एव और ग्रह भी देखते हो तो आताओं के कारण धन व्यय होता है। द्वादश आरूढपद के और जो योग है उनका कथन करत है। लाभभाव में जो लाभयोगकारी योग है। सातवे आरूढपद में राहु अथवा केतु हो तो वास्य अवस्था में कुक्षि (काल) व्यथा से युक्त हो। केतु से अधिक कष्ट जानना। तथा सप्तम पद में केतु हो और पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो असमय में बाल सफेद हो जावे तथा असम साहसी और दीर्घेन्द्रियवाला हो। सप्तम पद में चन्द्र गुरु शुक्र इनमें से एक दो या तीनों हो तो उत्तरोत्तर (योगानुसार) लक्ष्मीवान् निश्चय होता है। हे मैत्रेय ! शुभग्रह उच्च राशि वा होकर सप्तम आरूढ पद में हो ग्रह शुभ हो अथवा अशुभ हो किन्तु जातक कीर्तियुक्त धनी होता है। हे द्विजश्रेष्ठ ! हमने सप्तम भाव में राहु आदि ग्रहों के जा शुभाशुभ योग कह हे वे सब योग द्वितीयभाव में भी समजना ॥१७-२८॥

उच्चो धाम हिरण्य वा जीवो वा शुभ एव वा ॥ एको बली धनमत धियदिशति देहिन ॥२९॥ ये योगाश्च पदे लग्ने यथावद्गदतो मम ॥ कारकागतस्य कुण्डल्या निर्वाधका विचिंतयेत् ॥३०॥ आरूढादष्टमे पापे सौरे स्याच्छुभवर्जित ॥ तथा वित्तालये पापे पूर्ववज्जापते फलम् ॥३१॥ आरूढाद्विंशते सौम्ये सर्वदिशाधिपो भवेत् ॥ सर्वजो यदि चेन्न स्यात्कविर्वादि च भार्गव ॥३२॥ आरूढात्केद्रकोणेषु तथा लाभपदे द्विज ॥ लग्नसप्तमराश्यघ्नौ सबले सेट सपुते ॥३३॥ श्रीमांश्च जायते नून देजे विख्यातिमान् भवेत् ॥ षष्ठाष्टमे व्यये स्वान्ते श्रीमान्त न भवेत्कदा ॥३४॥ पदाल्लग्न-सप्तमे वा केद्रे त्रिकोणोपचये ॥ सुबोर्धतस्थिते सेटे भार्याभर्तृमुक्तप्रद ॥३५॥ एव - लग्नपदाद्विंश पुत्रभावावि चितयेत् ॥ मित्रामित्रे विजानीयाद्दधमभावेषु वै द्विज ॥३६॥ षष्ठाष्टमे व्यये सेटस्तत्तद्भ्रात्रेषु तिष्ठति ॥ यद्भ्रात्रेषु यद्वैर लग्नारूढे विचिंतयेत् ॥३७॥ लग्नारूढे दारपद मिय केद्रगत यदि। लाभे वापि त्रिकोणे वा तथा राजधराधिप ॥३८॥ आरूढ पुत्रमित्रैस्तु त्रिलोककेद्रगो यदि ॥ द्वयोर्मैत्री त्रिकोणेषु साम्य द्वेषोऽन्यथा भवेत् ॥३९॥ एव दारादि भावानामर्जयित्वारिमित्रता ॥ जातकद्वयमासोक्त्य विचक्षणैः ॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आरूढफलरूपेण नाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥

उच्चग्रह होने से सुवर्ण की प्राप्ति तथा गुरु या शुभग्रह हो तथा एक भी ग्रह बलवान् होकर द्वितीय पद में होने से जातक को धन की प्राप्ति कराते है। जो योग हमने आरूढ पद में कहे है वे योग पूर्वोक्त कारकाञ्च कुण्डली में भी निर्वाधरूप से समझना। आरूढ लग्न से अथवा ज्ञानसे शुभयोगरहित पापग्रह हो, द्वितीयभाव में भी पापग्रह हो तो धन हानि होती है। आरूढ पद से द्वितीयभाव में सौम्यग्रह हो और शुक न हो तो सर्वदेशाधिपति तथा सर्वशास्त्रगारगामी होता है। आरूढ से केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभस्थान में लग्न तथा सप्तम राशि नवाशमें बलवान् शुभग्रह हो तो जातक श्रीमान्, देश में विख्यात होता है। किन्तु ६।८।१२ स्थान में यह योग होने से धनी नहीं होता। आरूढ पद से सप्तम स्थान या लग्न में, केन्द्र, त्रिकोण या उपचय स्थान में बलवान् ग्रह स्थित हो तो पुरुष को स्त्री का तथा स्त्री को सौभाग्य का अखण्ड सुल होता है। हे मैत्रेय! इसी प्रकार लग्नारूढ पद से भी पुत्रभाव आदि स्थान में ग्रहस्थिति विचार करना। वारहो भावों में मित्र, शत्रु आदि का भी विचार करना। इसी तरह छठे, आठवें, बारहवें भाव में जो ग्रह हो उनका मित्र शत्रुभाव भी इस आरूढ लग्न में विचार करना। सप्तम स्थान का लग्न ही आरूढपद कहा गया है, उनके स्वामी यदि केन्द्रस्थान में हो (चतुर्थ दशम में) अथवा लाभ या त्रिकोण स्थान में हो तो राजाधिराज होता है ॥ लग्नारूढ यदि तीसरे, ग्यारहवें या केन्द्रमें हो तो पुत्र मित्र युक्त होता है। त्रिकोण के दोनों भावों में परस्पर मैत्री साम्यभाव है अन्य भाव से शत्रुता है। इस प्रकार स्त्री आदि भावों की परस्पर शत्रुमित्रता जानकर ग्रह, भाव दोनों का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए ॥२९-४०॥ भाव फल समाप्त ॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकाया आरूढफलवचन नाम एकादशोऽध्याय

### पराशर उवाच

अधुना सप्रवक्ष्याम्युपपदं च द्विजोत्तम ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण जायते फलसूचकः ॥१॥  
पदारूढाद्ग्रहस्थानेषु चोपपदं स्मृतम् ॥ सप्तानुचरसप्तोपपदं च द्विजसत्तम ॥२॥

### उपपदस्योपपदद्वितीये वा गुणविशेषफलमाह

पापाज्ञाने पापपुत्रे पापसं पापवीक्षिते ॥ पापसबधसयोगे उपपदद्वितीयके ॥३॥ प्रद्वज्यायोगे विज्ञेयः संन्यासो भवति द्रुयम् ॥ तथा भाषाविरोधी स्यादथवा स्त्रीविनाशकृत् ॥४॥ रवि पापत्वनास्थैव सिंहर्षे पापदे राति ॥ पूर्वोक्त नो फल ज्ञेय जायते गृहिणीसुखम् ॥५॥ मेधादिपापराशौ च सस्थिते द्विबसाधिपे ॥ पूर्वोक्त च फल ज्ञेय प्रद्वज्यादारनाराकः ॥६॥ उपपदे द्वितीये वा शुभसबधदृष्टियुक् ॥ शुभसं शुभसयोगे पूर्वोक्तफलदो भवेत् ॥७॥ उपपदे द्वितीये वा नीचाशे नीचक्षेद्युक् ॥ नीचसबधयोगे वा प्रपीता दारनाशकृत् ॥८॥ उच्चारो उच्चसंस्थे वा उच्चसबधदृष्टियुक् ॥ बहुदारा भवेयुश्च रूपलक्षणसयुताः ॥९॥ उपपदद्वितीयेपि युग्मसं भेयरागितः ॥ मियुनेऽपि स्थिते विप्र बहुदारपुत्रो भवेत् ॥१०॥ उपपदे द्वितीयेपि स्वस्वामिक्षेद्युक् ॥ उत्तरायुषि निर्दारी भवत्येव न सशयः ॥११॥ व्यस्ये वा तुले वापि दैत्येज्ये दारकारके ॥ अन्यराशौ च वा विप्र निर्दार उत्तरायुषि ॥१२॥ स्वराशौ

संस्थिते श्लेते नित्याख्ये दारकारके ॥ उत्तरायुषि निर्दारो भवत्येव न सशय ॥१३॥  
 उपपदेशोपि तुगर्भे नित्याख्ये दारकारके ॥ उत्तमकुलाहारलाभो नीचस्थेऽपि विपर्ययः ॥१४॥  
 शुभसंबन्धयुक् दृष्टे उपपदे दारकारके ॥ सुदरी लभ्यते भार्या भव्या रूपवती द्विज ॥१५॥  
 सबन्धे शनिराहुभ्यामुपपदे च शनिद्विज ॥ निर्दारकारके चापि शनिराहुपुतेऽधिते ॥१६॥ अय  
 चादपुतो विप्र भार्याया सहितो द्विज ॥ स्त्रीविनाशो भवेन्नून तथा स्त्रीपरित्यागवान् ॥१७॥  
 उपपदे च समुक्तौ शिखिशुकौ द्विजोत्तम ॥ रक्तप्रदररोगार्ता जायते तस्य भामिनी ॥१८॥  
 उपपदादिषु सम्यगे बुधकेत्वोर्द्विजोत्तम ॥ अस्थिजावपुता बाला गृहे तस्य न सशय ॥१९॥  
 रवी राहुस्तथा पगुरुपपदे योगकारक ॥ अस्थिज्वरवती बाला तप्ताणा च दिवानिशाम्  
 ॥२०॥ उपपदे बुधकेतुभ्या योगसंबन्धके द्विज ॥ स्थूलापी गृहिणी तस्य जायते नात्र सशय  
 ॥२१॥ उपपदे बुधक्षेत्रे भौमर्क्षे चाथया द्विज ॥ मदारी संस्थितौ तत्र प्राणरोगार्तिपित्तयुक्  
 ॥२२॥ सौम्यारौ चान्यक्षेत्रे वा उपदिश्ये शनिर्पुते ॥ कर्णरोगवती बाला नेत्ररोगपुता तथा  
 ॥२३॥ कुजसौम्यौ चान्यक्षेत्रे उपपदे द्विजोत्तम ॥ योगे स्वर्भानुदेवैज्यौ दतार्ता गृहिणी भवेत्  
 ॥२४॥ उपपदे तु कन्याख्ये अस्यर्क्षेऽपि तथा द्विज ॥ शनिस्वर्भानुयोगश्च पन्वगी तस्य भामिनी  
 ॥२५॥ ये योगा पूर्वकथिता मया ते विप्रसत्तम ॥ शुभयुक् दृष्टितयोगे न भवेयु फलप्रदा  
 ॥२६॥ लग्नादुपपदाद्वापि यो राशि सप्तमो द्विज ॥ तत्रवाशा राशयोशा स्वसप्तमतदशका  
 ॥२७॥ तत्र पापे स्थिते दृष्टे उक्तयोगफल विदुः ॥ शनि शुक्रस्तथा चादि सप्तमशग्रहेषु च ॥  
 त्रिकयोगकृते विप्र अपत्यरहितो नर ॥२८॥ पदोपपदलप्रेषु पुत्रकारके द्विज ॥ पञ्चमस्थे गुरौ  
 भानौ तत्र स्वर्भानुयोगकृत् ॥२९॥ बहुपुत्रो भवेन्नून प्रतापी बलवीर्ययुक् ॥ प्रचंडविजयी विप्र  
 रिपुनिग्रहकारक ॥३०॥ उक्तस्थाने निशानाथे एकपुत्रो भवेद्द्विज ॥ उक्तस्थाने शुभे पापे  
 पुत्रसौख्यं विलंबितम् ॥३१॥

### उपपदफल विचार

हे मैत्रेय! अब उपपद का कथन करते हैं कि—जिसके ज्ञान से जातक के फल का ज्ञान होता है। पदारूढ लग्न के १२ बारहवें स्थान के आरूढ की पद या उपपद सज्ञा है। (पदारूढ शब्द से महा लग्न समझना अर्थात् पद व्यत्यय करके आरूढ पद अर्थात् आरूढपद अर्थात् का पद=कारण=जन्म लग्न) लग्न वा अनुचर (पीछे वाला) सज्ञक होने से इसका नाम 'उपपद' है। उपपदत्व उपपद द्वितीय भाव का फल—उपपद के द्वितीय स्थान में पापराशि हो, पापग्रहयुक्त हो, पापग्रहो स (उभयतः) आत्रान्त हो पापग्रहो वे या ग्रह से दृष्ट हो, पापग्रहो से परम्परा संयोग हो तो ॥ घर से विरक्तिभाव होकर निश्चय ही सन्धास होता है। भार्या से विरोध हो अथवा स्त्रीका मरण हो जावे। यहा (इस प्रकार में) सूर्य सिंहा में पापराशि में होने पर भी क्रूरग्रह नहीं माना जाता। अतः सूर्य योग हो तो पूर्वोक्त फल नहीं होता, प्रत्युत भार्या का सुख रहे ॥ (सिहराशि म भिन्न) मेघ आदि पापराशियों पर सूर्य पूर्वोक्त फल सन्धास, भार्या की हानि है। आरूढलग्न अथवा आरूढ से द्वितीय में शुभराशि, शुभग्रह का योग और शुभग्रह की दृष्टि आदि सम्बन्ध हो तो पूर्वोक्त फल (उपपद में जो सूर्य के संबन्धमें कहा है) भार्या का सुख रहेगा। (यहा पूर्वोक्त फल पद में प्रप्रज्या दारनाश अर्थ नहीं लेना क्योंकि आगे श्लोक २६ में स्पष्ट कहा है, उससे विरोध होगा) उपपद द्वितीय में नीचाज्ञ तथा



नीचग्रह युक्त हो तथा नीचग्रह से ही दृष्टिघादि सम्बन्ध हो तो विवाहित स्त्री की मृत्यु होती है। उच्चाश हो और उच्चराशिगत ग्रह हो, उच्चग्रह की दृष्टि हो तो रूपलावण्ययुक्त अनेक स्त्री प्राप्त हो। उपपद द्वितीस्थान में युग्मराशि (मेधादि गणना से समराशि) हो तो भी अनेक भार्या होती है और यही फल मिथुन राशि में भी जानना। (इस वचन से युग्मराशि तथा मिथुन अर्थात् वृष, मियुन, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन इतनी राशि समझनी चाहिये)। उपपद द्वितीय में भाव की राशि का स्वामी ग्रह ही स्थित हो तो उत्तर आयु (प्रौढ अवस्था) में तो स्त्री की हानि होती ही है। स्त्रीकारक होकर शुक्र यदि वृष या तुला राशि में हो अथवा अन्य (उच्च, मित्रराशि) में हो तो भी प्रौढ अवस्था में तो स्त्री की हानि होती है। स्थिरकारक में दारकारकग्रह स्वराशि में स्थित हो तो भी प्रौढ अवस्था में स्त्री की हानि होती है। उपपद का स्वामी उच्चराशि में हो और वही स्थिर 'दारकारक' हो तो उत्तम कुल से स्त्री का लाभ होता है। और नीचस्व हो तो नीच कुल की स्त्री प्राप्त होती है। हे मैत्रेय! शुभ दृष्टियुक्त दारकारक उपपद में हो तो अति रूपवती श्रेष्ठ भार्या प्राप्त होती है। उपपद में शनि हो या शनि राहु से सम्बन्ध हो या 'दारकारक' रहित होकर शनि राहु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो भार्या से सदा विद्वेष रहे अथवा स्त्री की हानि हो या स्त्री का परित्याग करनेवाला हो। हे मैत्रेय! उपपद में केतु शनि हो तो उसकी स्त्री को रक्तप्रदर की बीमारी रहे। यदि उपपद में बुध केतु हो तो उसकी भार्या को 'अस्थिराव' (हड्डी का घीण होना) की बीमारी हो। उपपद में सूर्य, राहु तथा शनि का योग हो तो जातक की भार्या अस्थिरगत ज्वर रोग वाली होती है, दिनरात शरीर गर्म रहता है। उपपद में बुध, केतु का योग हो तो स्त्री स्थूल शरीरवाली होती है। उपपद में बुध की राशि हो या मंगल की राशि हो और शनि मंगल स्थित हो तो प्राणात कष्ट देनेवाली पित्त की बीमारी होती है। शनि मंगल अन्यराशि में होकर सम्बन्ध करते हो अथवा शनि उपपद में हो तो कान तथा आस के रोगवाली होती है। मंगल, बुध, अन्यस्थान में सम्बन्धित हो उपपद में गुरुराहु हो तो स्त्री दतरोगवाली होती है। उपपद में कन्या राशि हो या अन्य (मिथुन) राशि हो, शनि राहु का योग हो तो भार्या पणु (एकपाद विकल) होती है। हे विप्रवर! हमने जो योग (दुर्योग) कहे हैं, उनमें यदि शुभग्रह की दृष्टि अथवा योग हो तो पूर्वोक्त बुरा फल नहीं होता है। आरूढ लग्न और उपपद से जो सप्तम राशि है, उसमें जो नवाश है, वह और उसमें सप्तम नवाश में यदि पापग्रह हो या पापदृष्ट हो तो भी उक्तयोग भार्या सम्बन्धी फल जानना; शनि, शुक्र तथा बुध यदि सप्तम राशि के नवाश में हो तो इन तीन ग्रहों के योग के फल से जातक रन्तान-रहित होता है। जन्मलग्न, आरूढलग्न तथा उपपद में पुत्र वारक युक्त, गुरु, सूर्य, राहु ये पञ्चमभाष में हो या गुरु, सूर्य स्थित और राहु योग करता हो तो निश्चय ही बहुत पुत्र होते हैं, जातक प्रतापी बलवान तथा विजयी एव शत्रुओं को जीतनेवाला होता है। उक्त स्थान में चन्द्रमा हो तो एक पुत्र होता है और सौम्य-पाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो विलम्ब से पुत्र मुख होता है ॥१३-३१॥

उक्तस्थाने कृजश्रान्द्रिजायिते च ह्यपुत्रवान् ॥ परपुत्रयुतो वापि सहोदमुत्तवान् भवेत् ॥३२॥

उक्तस्थाने चौजराशौ बहुपुत्रप्रदो भवेत् ॥ मिथुने युग्मराशौ चैत्स्वल्पापत्सो भवेत्प्रः ॥३३॥

ग्रहकृमात्कुक्षिसंज्ञे तबीशं पंचमांशतः ॥ सिंहाधीशे रबी विप्र स्वल्पापत्यो भवेन्नरः ॥३४॥  
 उपपदे सिंहलग्ने निशानाययुतेक्षितः ॥ स्वल्पप्रजो भवेद्विप्र तथा कन्याप्रजो भवेत् ॥३५॥  
 सुतभावनवांशाञ्च तथापि पुत्रकारकात् ॥ यद्वा त्रिंशांशकुंडल्यां पंचमांशात्तदा द्विज ॥३६॥  
 तबीशाच्चिंतयेद्विप्र संततैर्योगमुत्तमम् ॥ एव सर्वप्रकारेण चिंतनीयं सदा बुधैः ॥३७॥ उपपदे  
 शनी राहुभ्रातृस्थौ भ्रातृनाशदौ ॥ एकादशे ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये च कनिष्ठकम् ॥३८॥  
 उपपदैकादश स्थाने तृतीये दानवेज्यके ॥ व्यवहितार्यनाशः स्याद्यथा समवति द्विज ॥३९॥  
 लग्ने चापि लगे चापि दैत्याचार्ययुतेक्षिते ॥ व्यवहितांगनाशः स्यात्त्रिविंशकं द्विजोत्तम ॥४०॥  
 तृतीयैकादशे विप्रं कुजेज्यबुधपंचममाः ॥ भ्रातृबाहुल्यता वरच्या प्रतापी बलवतरः ॥४१॥  
 शनैरसंपुते दृष्टे तृतीयैकादशे द्विज ॥ कनिष्ठज्येष्ठयोर्नाशं भिन्नस्थे भिन्नभावदृत् ॥४२॥  
 भ्रातृस्थाने युते सौरौ लाभस्ये वा तृतीयगे ॥ स्वस्य माता स्वस्तिमती अन्यप्रशयति वै द्विज  
 ॥४३॥ तृतीयैकादशे केतुर्बाहुल्यं भगिनीमुतम् ॥ भ्रातृस्वल्पसुखं तस्य निर्विंशकं द्विजोत्तम  
 ॥४४॥ सप्तमे द्वादशे स्थाने संहिकेयं युतेक्षिते ॥ ज्ञानवांश्र भवेद्दालो बहुभाग्ययुतो द्विज  
 ॥४५॥ सप्तमेशाद्द्वितीयस्थे पुच्छनाथयुतेक्षिते ॥ स्तब्धवाग्जायते बालस्तथा स्थलितवाग्  
 द्विजः ॥४६॥ आरूढे शत्रुभाबस्थे पापस्ये शुभवर्जिते ॥ शुभसंबंधरहिते चोरो भवति  
 निश्चितम् ॥४७॥ आरूढे वाजपि सौम्ये तु सर्वविशाधिपो भवेत् ॥ सर्वज्ञस्तत्र जीवः स्यात्कवि-  
 र्वादी च भार्गवः ॥४८॥ आरूढेऽपि पदे चापि धनस्ये शुभलेचरे ॥ सर्वद्व्याधिपो  
 धीमाञ्जायते द्विजसंतम ॥४९॥ उपपदाद्धनपो यत्र वर्तते तस्य वित्तभे ॥ पापसेचरसंपुते  
 चोरो भवति निश्चितम् ॥५०॥

उक्त स्थान में मंगल, बुध के होने से पुत्रहीन होता है। अथवा दत्तक पुत्र हो या सहोत्प  
 सुतवान् (भ्राता के पुत्र से पुत्रवाना) होता है। उक्त स्थान में विषम राशि होने से  
 बहुपुत्रवान् हो। मिथुन या युग्मराशि हो तो जातक कम सन्तानवाला होता है। पूर्व बताये  
 शरीर के अर्धाधिपति ग्रहों में जो कुक्षिसंज्ञक ग्रह हो उसकी राशि के स्वामी के पंचमांश में  
 यदि सिंहाधीश सूर्य हो तो कम सन्तान वाला जातक होता है। उपपद में सिंहलग्न हो तथा  
 चन्द्रमा युक्त अथवा दृष्ट हो तो केवल एक या दो कन्या होती है। पंचमभाव के नवाश से  
 तथा पुत्रकारक से तथा त्रिंशांश कुण्डली में पंचमांश के स्वामी से उत्तम सतान का योगायोग  
 देखना चाहिये। इस प्रकार ऊपर कहे गये सर्वप्रकारों से विचार करना चाहिये। उपपद में  
 शनि, राहु, तृतीय स्थान में हों तो भ्राता की मृत्यु करते हैं। एकादश स्थान में ज्येष्ठभ्राता की  
 तथा तृतीयस्थान में कनिष्ठ भ्राता की हानि (मृत्यु) करते हैं। उपपद के एकादश स्थान में  
 या तृतीय में शुक्र हो तो दूर का तथा छिपे हुए (गुप्त) अर्थ भी जैसा सम्भव हो मष्ट होता  
 है। लग्न में या सप्तम में शुक्र युक्त हो या शुक्र की दृष्टि हो तो गुप्ताग की हानि होती है।  
 तृतीय तथा एकादश स्थान में म०, बु० वृ० चन्द्र हो तो भाइयों की सख्या बहुत होती है और  
 जातक प्रतापी और बलवान् होता है। शनि ग्रह तृतीय तथा एकादश भाव को देखता हो,  
 स्वयं स्थित न हो तो भी बड़े और छोटे भाई का नाश करता है। भिन्न राशि में हो तो भिन्न  
 भाव की ही हानि करता है। शनैश्चर तृतीय या एकादश भाव में स्थित हो अथवा  
 (भ्रातृस्थान) में हो तो अपनी माता सुखी रहे (जननी स्वस्य रहे), यदि अन्य माता हो

तो नष्ट हो जावे। तृतीय एकादश में केतु हो तो भगिनी पुत्रों की बहुलता हो और भाइयों का मुख कम हो यह निश्चय है। सप्तम तथा द्वादश स्थान में राहु युक्त हो या दृष्ट हो तो जातक बड़ा भाग्यशाली और ज्ञानवान् होता है। सप्तमभाव के स्वामी से द्वितीय भाव में केतु स्थित हो या देखता हो तो जातक गूगा या तोतला होता है। आरूढलग्न छठे भाव में पापग्रह युक्त हो और शुभ सम्बन्ध रहित हो तो जातक निश्चय चोर होता है। आरूढलग्न में बुध हो तो महाराजा होता है। बृहस्पति हो तो सर्वज्ञकल्प और शुक्र हो तो कवि और व्याख्याता होता है। आरूढलग्न में या धनस्थान में शुभग्रह हो तो बहु धनवान् और बुद्धिमान् होता है। उपपद स्थान से द्वितीयस्थान का स्वामी जिस स्थान में स्थित हो उससे दूसरे स्थान में पापग्रह हो तो निश्चय चोर होता है। ॥३२-५०॥

सप्तमेशाद्द्वितीये च राहुस्थे मूक एव च ॥ खलस्थितो यदा विप्र वंशानामधिक भवेत् ॥५१॥  
 शिखिगावातव्याधिः स्याद्धास्यादस्फुटोक्तवान् ॥ तत्र नानाग्रहैर्योगे सिद्ध फलमुदाहरेत् ॥५२॥  
 सप्तमेशाद्द्वितीये च छायासूनुपुते द्विज ॥ गौरः श्यामो नीलपीतो जायते बुद्धिमाधुरः ॥५३॥  
 अमात्यानुचराद्विप्र देवभक्ति विचिन्तयेत् ॥ नीचत्वादेव नीचत्व शुभपापाच्छुभाशुभम् ॥५४॥  
 कारकांशे पापसर्गः पापांशे पापयोगकृत् ॥ पापवर्गे शुभैर्हाने जायते परजातवान् ॥५५॥ कारकांशे  
 भवेत्पापो न ज्ञेयः परजातकः ॥ अन्येषां पापलेटानां योग घटत्वमाप्नुयात् ॥५६॥ अथवा रघुभे  
 पापे नाप योगो विचिन्तयेत् ॥ शनिराहुयुतौ यत्र शनिराहुो क्षेत्रके द्विज ॥५७॥ परजातः  
 प्रसिद्धोस्ति ह्यन्येभ्यो गुप्त एव च ॥ शुभवर्गे यदा सेटो वर्गोक्तानां यथा द्विज ॥५८॥ जारजः  
 कथनमात्रे न तु जारज इत्यपि ॥ यत्र कुत्रापि स्वोच्चे द्वौ कुलमुख्यो भवेन्नरः ॥५९॥ आदिपदकं च  
 पर्यन्ता ग्रहाः सौख्य विचिन्तयेत् ॥ सार सारमह वक्ष्ये तवापे द्विजसतम् ॥६०॥

इति श्रीबृहत्सारासारहोराशास्त्रे पूर्वखंडे कारकमारकादिविचारकथन  
 नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

सप्तमेश से द्वितीयभाव में राहु हो तो गूगा होता है। पापग्रहस्थित हो तो दांत अधिक होते हैं। केतु स्थित हो तो वातव्याधि हो अथवा तोतली बोलीवाला हो और अनेक ग्रह हो तो उन उन ग्रहों का भी फल जानना। सप्तमेश से द्वितीय स्थान में यदि राहु हो तो मिथित वर्ण और बुद्धिमान् होता है। भातृकारक से देवभक्ति का विचार करो। नीच होने से भक्ति की हीनता और शुभपाप दोनों प्रकार के मिथित योग होने से मिथित शुभाशुभ फल होता है। कारकांश लग्न में पापग्रह हो, पापनवाश में पापग्रहों का ही योग हो तथा पापग्रहों के ही वर्ग हो तो जारज होता है। कारकांश में केवल पापग्रह के योग से ही जारज नहीं होता, अन्य पाप ग्रहों का योग भी होना चाहिये। अथवा अष्टमभाव में पापग्रह होने में भी इसका निश्चय नहीं किंतु शनि राहु के क्षेत्र (राशि) में शनि राहु भी हो तो जारजरूप से दूगरे लोगों में प्रसिद्ध रहता है। शुभग्रहों के वर्ग में वर्गोक्त ग्रह हो तो कहने मात्र का जारज है, वास्तव में नहीं है, जहां कहीं किसी भी राशि आदि में दो ग्रह उच्च के हों तो जातक नून में मुख्य होता है। इस प्रकार आदि के छ भावों के फल कहे। हे मैत्रेय ! हम तुमको सार सार ही कहते हैं। उपपद फल समाप्त ॥५१-६०॥

इति वृ० पा० हो० शा० पूर्वखंडे भावप्रकाशिकाया उपपदफलकथन  
 नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

## अथ कारकमारकादिविचारमाह

पचम नवम चैव विशेषधनमुच्यते ॥ चतुर्थं दशम चैव विशेष सुखमुच्यते ॥१॥ चंद्रभानू चित्रा सर्वे मारके मारकाधिपा ॥ पष्ठाष्टमव्यपेशास्तु राहु केतुस्तथैव च ॥२॥ केद्राधिपतय सौम्या शुभ नैव दिशति च ॥ क्रूरा नैवाशुभ कुर्यु कोणपी शुभदायकौ ॥३॥ धनेशो हि व्यये शश्र सयोगात्फलदो मती ॥ लाभारि अधिपा पापा रधेशो न शुभप्रद ॥४॥ जायाकुटुंबका- धीशौ मारकौ परिकीर्तितौ ॥ क्रूरा केद्राधिपा भूपात्क्षीणचन्द्रो रविस्तथा ॥५॥ शनिर्मीमश्र चित्नेया प्रबला ह्युत्तरोत्तरा ॥ लग्नाबुधूनकर्माणि प्रबलान्युत्तराणि हि ॥६॥ सुतधर्मो तथा स्थानी प्रबलौ चोत्तरोत्तरौ ॥ लाभारिर्त्रितयस्थाने त्वधोध प्रबल भवेत् ॥७॥ पुनर्मारकयोर्म ध्ये ह्युत्तर प्रबल मतम् ॥ भाग्यस्थानाद्द्वयय रध तस्माच्चैवाशुम वदेत् ॥८॥ एतत्स्थानानुसा रेण ग्रहाणा मानमालिखेत् ॥ चन्द्राद्री गुरुसितौ केन्द्रदोषो योत्तरम् ॥९॥ तथैव च ग्रहा क्रूरा बल चैवोत्तरोत्तरम् ॥ भाग्येश सर्वदा सौम्यो न क्रूर फलदायक ॥१०॥ पुत्राधिपोऽपि शुभब-क्रूरोपि सुखद स्मृत ॥ त्रिलाभरिपुमृत्पूना पतयो दुःखदायका ॥११॥ शुभोपि शुभदो नैव दशाधामशुभस्तथा ॥ अष्टमाधिपतिर्दोषस्तुता भेषे न हि स्वचित्पुत्रलौ पष्ठाष्टदोषो न वृषभोपि न दोषभाक् ॥१२॥ पद्यद्भावगतो राहु केतुश्च जनने नृणाम् ॥ पद्यद्भावैरासयुक्तस्त र्फल प्रदिशेदलम् ॥१३॥

### कारक-मारक विचार

भावाधिपतित्व से कारक मारक के विशेष नियम

पचम और नवमभाव विशेष धनभाव है। चतुर्थ और दशम विशेष सुखभाव है। सूर्यचन्द्र को छोड़कर बाकी ग्रह मारकाधिपति होकर मारक हात है। ६।८।१२ ये स्थान और राहु केतु तथा केन्द्राधिपति सौम्यग्रह ये शुभफल नहीं करते और केन्द्राधिपति क्रूरग्रह पापफल नहीं देते ॥ तथा ५।९ के स्वामी शुभफल दाता होत है। द्वितीय और द्वादशेश अन्यग्रह के साथ होकर फलदाता होते है। लाभ शत्रुभाव के स्वामी पापग्रह और अष्टमेश य शुभफल दायक नहीं होते। द्वितीय सप्तम के स्वामी मारक कहलाते है। केन्द्राधिपति पापग्रह, राज्येश क्षीणचन्द्र सूर्य शनि और मंगल ये उत्तरोत्तर प्रबल है। लग्न चतुर्थ सप्तम दशम ये उत्तरोत्तर बलवान् है। पचम और नवम य उत्तरोत्तर बलवान् है। लाभ शत्रु तथा तृतीय प्रथम प्रथम बलवान् है। दो मारको म दूसरा मारक द्वितीय बलवान् है। भाग्यस्थान बरहृषा स्थान जो अष्टमभाव है उससे अशुभ फल का विचार करना। इन स्थानो के अनुसार ग्रहो का बलाबल जानना। केन्द्राधिपतित्व दोष क्रमश चन्द्र, बुध गुरु म उत्तरोत्तर विशेष है। इमी प्रकार क्रूर ग्रहो म भी उत्तरोत्तर अधिक बल है। भाग्यश मदा ही थोछ है। वभी भी पाप फलदायक नहीं होता। पञ्चमेश भी क्रूरग्रह हात पर भी शुभ फलदायक ही होता है। ३।११।६।८ इन स्थानो के स्वामी पाप फलदाता (दुःखदाता) हात है। शुभग्रह भी शुभदाता नहीं होता अपनी दशा में अशुभ फल दता है। अष्टमाधिपतिव्व दाप तुना और वृष राजि में नहीं होता। वृश्चिक् म पष्ठाष्ट दाप नही जाता। तथा वृष म भी पष्ठाष्ट दोष नहीं होता। राहु केतु जिम जिम भाव म हो और जिम जिम भावश म युक्त हा केा ही उनका फल कहना चाहिये। कारक मारक विचार समाप्त ॥१-२०॥

### अथ मेघलग्नम्

मंदसौम्यसिताः पापाः शुभौ गुरुदिवाकरौ ॥ न शुभ योगमात्रेण प्रभवेच्छनिजीवयोः ॥१४॥  
परतंत्रेण जीवस्य पापकर्मापि निश्चितम् ॥ कविः साक्षाद्निहंता स्यान्मारकत्वेन लक्षितः ॥१५॥  
मंदादयो निहंतारो भवेयुः पापिनो प्रहाः ॥ शुभाशुभफलान्येवं ज्ञातव्यानि क्रियोद्भवैः ॥१६॥

### द्वादशराशि कारक मारक निर्णय

मेघ लग्न—शनि, बुध, शुक्र पापफलप्रद है। गुरु, सूर्य शुभ है। शनि और गुरु के कारक योग मात्र से शुभ फल नहीं हो सकता क्योंकि—(शनि के आभेश होने) गुरु के व्ययेश होने से पाप भी हो गया है। शुक्र साक्षात् मारक है, २-७ स्वामीका होने से शनि आदि भी (मारक के सम्बन्ध से) मारनेवाले होते हैं। मेघ जन्म वाले के ये शुभाशुभ ग्रह कहे ॥१४-१६॥

### अथ वृषलग्नम्

जीवशुक्रदेवः पापाः शुभौ शनिदिवाकरौ ॥ राजयोगकरः साक्षादेक एव रवे सुतः ॥१७॥  
जीवादयो प्रहाः पापा संति मारकलक्षणाः ॥ बुधस्तत्र फलान्येव ज्ञेयानि वृषजन्मनः ॥१८॥

वृष लग्न—गुरु, शुक्र, चन्द्रमा पापफलप्रद और शनि सूर्य शुभ है। एक शनि ही राजयोग कारक है। बुध, गुरु, पापी और मारक है। वृष लग्न में जन्मवाले के ये फल है ॥१७॥१८॥

### अथ मिथुनलग्नम्

भौमजीवारुणाः पापा एक एव कवि शुभः ॥ शनैश्चरेण जीवस्य योगो मेघभवो यथा ॥१९॥ नाय  
शशी निहता स्यात्लक्षणं पापनिष्फलम् ॥ ज्ञातव्यानि द्वद्वजस्य फलान्येतानि सूरिभिः ॥२०॥

मिथुन लग्न—मंगल, गुरु, सूर्य पापफलप्रद हैं। केवल एक शुक्र ही शुभ है। गुरु, शनि का योग मेघलग्न के समान जानना। द्वितीयेश होने से चन्द्रमा मारक नहीं होता, इसका मारकत्व निष्फल है। मिथुन लग्न वाले के ये फल जानना ॥१९॥२०॥

### अथ कर्क लग्नम्

भार्ग्विंदुमुतौ पापी भ्रुमुतागिरसौ शुभौ ॥ एक एव ग्रह साक्षाद्भ्रुमुतो योगकारकः ॥२१॥ निहता  
रविजोऽन्ये तु मानिनो मारकाह्वयाः ॥ कुलीरसम्भवस्यैव फलान्युक्तानि सूरिभिः ॥२२॥

### अथ सिंहलग्नम्

बुध शुक्र यमा पापा कुजेज्यार्का शुभादहाः ॥ प्रभवेद्योगमात्रेण न शुभ गुरुशुक्रयोः ॥२३॥ इति  
शन्यादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः ॥ एषं फलानि वेद्यानि सिंहे यस्य जनुर्मवेत् ॥२४॥

### अथ कन्यालग्नम्

कुजजीर्षेदवः पापा एक एव भगुः शुभः ॥ भाग्विदुमुतावेव भवेतां योगकारकी ॥२५॥ निहंता कविरन्धे तु मारकास्तु कुजादयः ॥ प्रतीक्षेत् फलान्मुक्तान्येवं कन्याभवे बुधैः ॥२६॥

कर्क लग्न-शुक्र, चन्द्रमा पापफलप्रद है। मंगल, शनि शुभ हैं। एक मंगल ही योगकारक है। शनि मारक है। अन्य सूर्य, बुध, गुरु मध्यम है। कर्क लग्न वाले के ये फल मुनियो ने कहे हैं ॥२१॥२२॥

सिंह लग्न-बुध शुक्र शनि पापफलदाता और मंगल, गुरु, सूर्य, शुभफलप्रद हैं। गुरु शुक्र का सम्बन्ध (केन्द्र त्रिकोण योग होने पर भी) शुभ नहीं है। मारकलक्षण युक्त शनि बुध मारक है। यह सिंह जन्म का फल है ॥२३॥२४॥

कन्या लग्न-चन्द्रमा, मंगल, गुरु, पापफलप्रद है। केवल एक शुक्र शुभ है। शुक्र और बुध योगकारक है। शुक्र निहन्ता है, अन्य मंगल, शनि, मारक हैं। (सूर्य मध्यम है) कन्या लग्न वाले के ये फल हैं ॥२५॥२६॥

### अथ तुलालग्नम्

जीवार्कभहिजाःपापाः शनैश्चरबुधौ शुभौ ॥ भवेतां राजयोगस्य कारकी चंद्रतत्सुतौ ॥२७॥ कुजो निहंति जीवाद्याः परेमारकलक्षणाः ॥ निहंतारःफलान्येव काव्यो न तु तुला भवः ॥२८॥

### अथ वृश्चिक लग्नम्

सौम्यभौमाः सिताःपापाःशुभौ गुरुनिशाकरौ ॥ सूर्यश्चरमसावेवं भवेतां योगकारकी ॥२९॥ जोबो निहता सौम्याद्या हतारौ मारकाद्वयाः ॥ तत्तत्फलानि विज्ञेयान्येवं वृश्चिकजन्मनः ॥३०॥

### अथ धनुर्लग्नम्

एक एव कर्कः पापः शुभौ सौम्यदिवाकरौ ॥ योगो भास्करसौम्याभ्यां । निहता भास्वतः सुतः ॥३१॥ प्राति गुणादयः पापा मारकत्वेन क्षतिताः ॥ सात्प्र्याति सात्प्र्येण जपत्प्रत्य मनोधिभिः ॥३२॥

तुलालग्न-सूर्य, मंगल, गुरु पापफलदाता है। शनैश्चर, बुध शुभ हैं। चन्द्रमा, बुध, राजयोग कारक है। मंगल निहन्ता (मृत्युकारक) है। बाकी गुरु, शुक्र भी मारक है। तुला लग्नवाले के ये फल बहे गये हैं ॥२७॥२८॥

वृश्चिक लग्न-मंगल, बुध, गुरु, पापफलदाता है। चन्द्रमा, गुरु शुभ है। सूर्य, चन्द्रमा, राजयोग कारक है। गुरु मृत्युकारक है। बुध, शनि मारक के समान है। वृश्चिक जन्मवाले के ये फल जानना ॥२९॥३०॥

धनुर्लग्न-शुक्र यह एक ही पूर्ण फलदाता है। सूर्य, बुध शुभ हैं। सूर्य, बुध, राजयोग कारक है। शनि मृत्युकारक है। गुरु आदि मारक के समान है। यह फल धनु लग्न का

जानना ॥३१॥३२॥

### अथ मकरलग्नम्

कुजजीवेदध पापा शुभौ भार्गवचन्द्रजौ ॥ स्वयं चैव निहन्ता स्यान्मदो भौमादय परे ॥३३॥  
तल्लक्षणानि हतार कबिरेक सुयोगकृत् ॥ ज्ञातव्यानि फलान्येव विबुधैर्मृगजन्मन ॥३४॥

### अथ कुंभलग्नम्

जीवचन्द्रकुजा पापा एको दैत्यगुरुशुभ ॥ राजयोगकरो भौम कविश्चैव बृहस्पति ॥३५॥ निहता  
प्रति भौमाद्या मारकत्वेन लक्षिता ॥ एवमेव फलान्यूह्यान्पेतानि घटजन्मन ॥३६॥

### अथ मीनलग्नम्

मदशुक्राशुमत्सौम्या पापा भौमविधू शुभौ ॥ महीसुतगुर्वोयोगे-कारकोर्नैव भूमुत ॥३७॥  
मारकान्कारकान्वीक्ष्य भद्रजौ चैव मारकौ ॥ इत्पूह्यानि फलान्येव बुधेस्तु शपजन्मन ॥३८॥  
एतच्छास्त्रानुसारेण मारकान्निर्दिशेद्बुध ॥ चद्रसूर्यो विना सर्वे मारका परिकीर्तिता ॥३९॥  
स्वदशाया स्वभुक्ता च नराणा निधन नहि ॥ क्वचिद्दशायामिच्छति स्वभुक्तौ न कदाचन ॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे कारकमारकादिविचारकथन  
नाम त्रयोदशोऽध्याय ॥१३॥

मकर लग्न-चन्द्रमा मंगल गुरु पापफल दाता है। बुध शुक्र शुभ है। शनि स्वयं मृत्युकारक है। शुक्र एक ही राजयोगकारक है। मंगल आदि बाकी मारक के समान है। यह फल मकरलग्न वाले वा बहा गया है ॥३३॥३४॥

कुम्भ लग्न-चन्द्र मंगल गुरु पापफलप्रद है। एक शुक्र शुभ है। मंगल शुक्र राजयोगकारक है। बृहस्पति मृत्युयोग कारक है। मंगल और बाकी ग्रह मारक के समान हैं। यह फल कुम्भ लग्नवाले के जानना ॥३५॥३६॥

मीन लग्न-शनि, शुक्र सूर्य और बुध पापफलदाता है। मंगल चन्द्रमा, शुभ है। मंगल, गुरु राजयोगकारक हैं। मंगल, मृत्युकारक नहीं है। शनि बुध मन्वन्ध से मारक है। मीन लग्न वाले के ये फल बहे गये हैं ॥३७॥३८॥

इस होराशास्त्र के अनुसार मारकों का विचार (तथा वाक्कों का भी विचार) नरे। चन्द्रमा और सूर्य के विना और ग्रह मृत्युकारक होने हैं। किसी भी मारक की दशा तथा उमके ही अन्तर में मृत्यु नहीं होती है। मारक की दशा में तो मृत्यु होती है, पर अन्तर में नहीं ॥३९॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया विचारकथन  
नाम त्रयोदशोऽध्याय ॥१३॥

## अथ द्वादशभावनिरीक्षणमाह

तनो रूप च ज्ञान च वर्णं चैव बलाबलम् ॥ शीलं चैव प्रकृतिं चाथ तनुत्यानाग्निरीक्षणयेत् ॥१॥  
 धनस्यापि कुटुंबस्य मृत्युनालममित्रकम् ॥ धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानाग्निरीक्षणयेत् ॥२॥  
 विक्रमं मृत्युभ्रात्रादि चोपदेशप्रयाणकम् ॥ पित्रोर्वै मरणं विद्यादृश्विक्याच्च निरीक्षणयेत् ॥३॥  
 बाहूनस्थाय बधूना मातृसौख्यादिकानपि ॥ निर्धिलेत्रगृहं चापि हर्म्यारामादिकानपि ॥४॥  
 धर्मस्य विमलस्थानं पातालाच्च निरीक्षणयेत् ॥ यत्रमत्रौ तथा विद्या बुद्धेश्चैव प्रबधका  
 पुत्रराज्यापभ्रशादि पश्येत्पुत्रालयाद्बुध ॥५॥ मातृजातकशकानां शत्रुश्रेय  
 वणादिकन् ॥ सपत्नीमातरश्चापि ह्यरिस्थानाग्निरीक्षणयेत् ॥६॥ जाया  
 मध्यप्रयाणं च व्ययभावं तथा निशि ॥ मरणं च स्वदेहस्य जायाभावाग्निरीक्षणयेत् ॥७॥  
 ऋणदानग्रहणयोगुदे चैवाकुरावप ॥ गत्यनुक्तादिकं सर्वं पश्येद्भ्रातृचक्षण ॥८॥ हर्म्यं धर्मं च  
 श्यालं च भ्रातृपत्न्यादिकास्तथा ॥ तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थानाग्निरीक्षणयेत् ॥९॥ राज्य  
 चाकाशवृत्तिं च मानं चैव पितुस्तथा ॥ प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानाग्निरीक्षणम् ॥१०॥  
 नानावस्तुमवस्थापि पुत्रजायादिकस्य च ॥ रिपूणां रिपवश्चैव भद्रस्थानाग्निरीक्षणम् ॥११॥  
 व्ययं च वैरियुक्तात् रिपुमत्यादिकं तथा ॥ एव भावफलं सम्यक् ततस्मिन् ज्ञानं पूर्वकम् ॥१२॥  
 व्याजं चैव हि ज्ञातव्यं वेत्ति सर्वत्र बुद्धिमान् ॥ यो यो भावपतिर्नन्दंस्त्रिकेशाद्यैश्च सयुत ॥  
 भाव न वीक्षते समग्रग्रहो वापि मृतो यदा ॥१३॥ स्वबिरो वा भवेत्क्षेपः युक्तो वापि प्रपीडित  
 ॥ तदा तद्भ्राजः सौख्यं नष्टं द्यूयाद्विशक्ति ॥१४॥ यदा सौम्यप्रहृष्टो भावो भावेशसौम्ययुक्  
 ॥ पुषा प्रबुद्धराजस्थं कुमारो वापि तद्भवेत् ॥१५॥ ईशक्षणवशात्तत्र भावसौख्यं वदेद् बुध ॥  
 शुक्रं शुक्रश्च नेत्रं च चंद्रमा मनसस्तथा ॥१६॥ आत्मा वै विनकुत्तत्र जीवो जीवितसौख्यकम् ॥  
 क्रोधं पराक्रमो भ्रमो बुधो बालत्वधीमत ॥१७॥ मनिर्दुःखप्रदानान्च प्रपद्ये पार्श्वेकरतथा  
 ॥१८॥ राहुरैश्वर्यकविद्धिं मुहनाभिपदस्तत् ॥ शिरो नेत्रे तथा कर्णे नासा चापि कपोलवौ ॥१९॥  
 हनू मुखं तथा वाच्यं कलागीं बाहुकौ तथा ॥ पार्श्वे बाहुद्वये चैव क्रीडे नाम्नी तथैव च ॥२०॥  
 बस्तिनिगणुदे वृष्णावूरु जानू च जघके ॥ पेदति चैव सर्वाणि सत्यां द्युपुर्विचक्षणा ॥२१॥ तत्रे  
 तत्कालद्रेष्णाने शिरादि परिकल्पयेत् ॥ तस्माद्यस्मिन्स्थितं खेदस्तत्र चिह्नं स्पृष्टं वदेत् ॥२२॥  
 एव भेदानुभेदेन सर्वत्रैकोपलक्षणयेत् ॥ सन्नेपेर्णतद्बुद्धितमन्यद्बुद्धधनुसारत ॥२३॥

## द्वादशभावनिरीक्षण

तत्र से विचारणीय- शरीर वा रूप, ज्ञान, वर्ण, बलाबल, चरित्र और प्रकृति ये बाते तत्र से विचारना चाहिये।

द्वितीय भाव से-द्रव्य कुटुंब (परिवार) मृत्यु, कष्ट, शत्रु, सोना, चादी आदि धातु ये सब धनस्थान से विचारना चाहिये।

तृतीयभाव से-बल, भ्राता, नौकर, परदेशयात्रा, माता पिता की मृत्यु ये तृतीय भाव से विचारना चाहिये।

चतुर्थ भाव से-सवागी, बन्धुमुग, माता वा मुग राजाना, भवान, भूमि, मेत शमीचा मन्दिर (देवस्थान) ये सब चतुर्थ से विचारना चाहिये।



पञ्चम भाव से—यन्त्र, मन्त्र, विद्या, बुद्धि के सहायक, पुत्र, राज्य, हानि ये सब विचार पञ्चम भाव से करना चाहिये॥

छठे भाव से—मामा की मृत्यु तथा कष्ट आदि, शत्रु, व्रण, (फोटा, फुन्सी, दाद, खाज आदि) सपत्नी, सास आदि विचारना॥

सप्तमभाव से—भार्या, साधारण यात्रा, खर्च, अपना मरण, ये सब सप्तमभाव से विचारना चाहिये॥

अष्टमभाव से—कर्ज लेना या देना, गुदा का रोग (ववासीर आदि) गति (यात्रा) आदि आदि विचार अष्टमभाव से करना॥

नवमभाव से—मकान, धर्मकार्य, साले (पत्नीभ्राता) भाइयो की स्त्रिया, तीर्थयात्रा में यह सब नवमभाव से विचार करो॥

दशमभाव से—राज्य से सम्बन्ध, अस्थिर वृत्ति, सन्मान पिता का सुख, परदेश का रहना, ऋण इनका विचार दशमभाव से करो॥

एकादश भाव से—अनेक प्रकार की वस्तुओं का विचार, पुत्र, स्त्री आदि परिवार का विचार, शत्रुओं का विचार एकादशस्थान से विचारे॥

द्वादशभाव से—अनेक प्रकार के तर्क, शत्रुओं के भेद विचार करो

इस प्रकार ऊपर बताये गये विचार अपने भावों से करो॥

बारहवें भाव का जानने का विचार भी बुद्धिमान् को जान लेना चाहिये। जिस जिस भाव का स्वामी त्रिकस्थान ३।६।११ के स्वामी से संयुक्त हो तथा अपने स्थान को नहीं देखता हो और अवस्था विचार से मृत अवस्था में हो। अथवा वृद्ध सुप्त या प्रपीडित (पापाक्रान्त) हो तो निश्चय भाव से उस भाव से प्राप्त होनेवाला सुख नहीं है यह कहना॥ तथा जो भाव अपने स्वामी से युक्त वा दृष्ट हो या सौम्यग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो, अवस्था में युवा या कुमार अवस्था में प्रबुद्ध हो, दशमभाव में स्थित (भावेश) हो तो उस भाव का सुख पूर्ण प्राप्त होता है। शुक्र वीर्य का स्वामी है और नेत्र इन्द्रिय का भी स्वामी है। चन्द्रमा मन का स्वामी है। सूर्य आत्मा है। बृहस्पति जीवन और सुख का स्वामी है। मंगल क्रोध और पराक्रम का तथा बुध बाल्य अवस्था तथा बुद्धि का स्वामी है। शनि दुःखदाता और नीकर तथा पडोसी का और राहु ऐश्वर्य का स्वामी है।

ग्रहों के अंग (विभाग)—

सूर्य—मुख, शिर, नेत्र, कान, नाभि पैर, तल ॥ चन्द्रमा—नासिका और कपोल॥ मंगल—हनु (ठोड़ी) मुखा बुध—कंठ, कंधे, बाहू। गुरु—पार्श्व (पमली) दोनों हाथ। शुक्र—श्रोत्र (गोदी) नाभि। शनि—वस्ति (पेड़) लिंग गुदा, वृषण (अडकोण) राहु—ऊर (ऊपर की आधी जया) जानू (घुटना) जघा, पैर। इस प्रकार से ग्रहों की मिर में पैर तक के अंगों में स्थिति है। इसी प्रकार से लग्न में तथा तात्विक द्रव्यों में शिर आदि अंगों की बल्यता बने और जिस भाव में शुभ या दूर जैसा ग्रह हो उसके अनुसार वैसा चिह्न उम अंग में बने। इस तरह भेदभेद से सभी स्थलों में अपनी बुद्धि में भी कल्पना करे। हमने यह संक्षेप से कहा है॥ १-२३॥

### अथ प्रथमभावफलम्

देहाधिप पापघ्नोऽष्टमस्यो व्ययरिगो धागगुह्य निहन्ति ॥ सर्वत्र भावेषु च योजनोपमेवं बुधैर्भविशात्फल हि ॥२४॥ एव तृतीयेपि च सप्तमेपि फल विमुञ्च्य कृतिभिः प्रयत्नात् ॥ तथा व्यये मित्रगृहे रिपौ मृते स्थिते विलप्राधिपतौ फल स्यात् ॥२५॥ पापो विलप्राधिपतिर्विलप्रे घ्ने विलप्रे यदि बालक स्यात् ॥ तदाऽतिरोग स हि केन्द्रस्यत्रिकोणतामेषु गद निहन्ति ॥२६॥ बलोनतामेव तु पापवत्तामेतस्य विल फलमानुक्यताम् ॥ नीचारिसूर्यस्य गृहेषु तिष्ठन् स्वर्गादिऋक्षगदिगृहत्रये च ॥२७॥ देहाधिपश्चरगृहाधिपो वा तृतीयेरिः फारिगतोऽबल स्यात् ॥ नीचास्तगद्वघ्नगृहे स्थितो वा कार्श्य शरीरेऽतिगद करोति ॥२८॥ लग्नाधिपो वा जीवो वा शुक्रो वा यदि केन्द्रग, तस्य पुत्रस्य दीर्घायुर्धनवान् राजवल्लभ ॥२९॥ लग्नाधिपोऽप्रतबलश्च शुभैर्नवकेन दृष्टस्य ॥ केन्द्रस्थिते शुभावलोक्ये मृत्युहीनेऽपि दीर्घायुः ॥३०॥ केन्द्रत्रिकोणेषु न मस्य पापा लग्नाधिपो सुरगृहश्चतुरष्टमस्य ॥ भुक्त्वा सुखानि विविधानि च पुण्यकर्मा जीवेत्तु वर्षशतमेव विमुक्तरोग ॥३१॥ लग्ने च रराशित्ये शुभग्रहनिरीक्षिते ॥ कीर्तिश्रीमान्महा-भोगी देहपुष्टिसमन्वित ॥३२॥ जीव शुक्रो बुधश्चन्द्रो लग्ने शशितमन्वित ॥ लग्नात्केद्रगतश्चैव राजलक्षणसयुत ॥३३॥ लग्ने राहुसमायुक्ते तथा सोमनिरीक्षिते ॥ लग्नाशे मदसूरी चेज्जातश्च यमलो भवेत् ॥३४॥ जातो नरो बालविवेदितागो लग्ने फणिर्मन्दसमन्वितश्च ॥ लग्ने च पार्श्वे द्वितये च पापे निरीक्षिते जीवबुधेऽशुक्रे ॥३५॥ रविचद्री च ह्येकस्यावेकाशकसमन्वितौ ॥ त्रिमात्रा च त्रिभिर्मसिभ्रात्रा पित्रा च पोषित ॥३६॥

#### प्रथम भावफल

देह (लग्न) वा स्वामी ६।८।१२ भाव मे हो देह की आरोग्यता का सुख नहीं। इस योग को (६।८।१२ भावस्थिति को) १२ भावो म समझ लेना, यह भाव से फलनचन है। इसी तरह तृतीयभाव तथा सप्तमभाव मे भी फल का विचार करना। और ६।८।१२ मे यदि मित्र राशि मे भावेश हो, तो भी यही फल कहना। यदि लग्न का स्वामी पापग्रह हो और लग्न मे ही चन्द्र तथा लग्नेश हो तो जातक अतिरोगी रहे। और यदि लग्नेश केन्द्र त्रिकोण या नाभम्यान मे हो तो निरोग रहे। इस लग्नेश की बलहीनता एव पाप शीलता देसकर अनुरूप फल का निर्देश करना। अथवा नीचराशि मे या शत्रुक्षेत्री सूर्य के पर मे हो या स्वराशि से तीन घरों मे हो तो अनुरूप फल कहना। लग्नेश या चन्द्रराशिपति तीसरे, छठे, बारहवें स्थान मे हो तो निर्बल होता है। नीचराशि मे या अस्त वा हो अथवा दूसरे, आठवे घर मे हो तो जातक व शरीर मे वृशता और बीमारी वृत्ता है। जिसके जन्मलग्न मे लग्नेश या, गुरु शुक्र केन्द्रस्थान मे हो उसके पुत्र की आयु बड़ी होती है और धनवान् तथा राजमान्य होता है। लग्नेश यदि बलवान् शुभग्रहो से दृष्ट होकर केन्द्र मे स्थित हो तो (नवकेन दृष्टस्य अष्टमेरोन दृष्टस्य । ऋषयः आदि अक्षा) अष्टमज म दृष्ट होन पर भी मृत्यु न होकर दीर्घायु होता है। जिस जातक के चन्द्र और त्रिकोण म पापग्रह न हो तथा लग्नेश और गुरु चतुर्थ और अष्टमम्यान म हो तो वह जातक अनन्य सुख भोगता हुआ नीरोगी होकर पुण्यकार्य करता है। लग्न वा स्वामी चन्द्रराशि मे शुभग्रह मे दृष्ट हो तो नीरोगी भोगी कीर्तियान तथा धनवान् होता है। चन्द्रमा, बुध,

गुरु, शुक्र ये चारो शुभग्रह केन्द्र मे हो तथा इनमे से किसी एक या दो के साथ चन्द्रमा लग्न मे हो तो राजा के समान होता है। लग्न मे राहु हो, चन्द्रमा देखता हो, लग्नवाश मे शनि गुरु हो तो जातक यमल (जोडा) होता है। लग्न मे राहु, शनि हो और लग्न तथा पास की २ राशियो (२।१२) को पापग्रह तथा बु० गु० शु० देखते हो तो बालक नालवेष्टित होता है। सूर्य, शुक्र एक घर मे हो तथा एक ही नवाक्ष मे हो तो तीन महीने तक ३ माताओं द्वारा पालन हो या भाई, पिता पालन करे ॥२४-३६॥ प्रथमभावफल समाप्त।

### अथ द्वितीयभावफलम्

शुकेण युक्तो यदि नेत्रनाथ शुक्रस्य वाङ्गविग्रहत्रयस्य ॥ सबधवान्स्याद्यदि देहेपेन नेत्र विघ्नते विपरीतभावम् ॥३७॥ तत्र स्थितौ चद्ररवी निशाध्य जात्यधता नेत्रपदेहपार्का ॥ पेशर्शनाभेन युतास्तदाध्यं कुर्वन्ति मात्रादिफल तथेदृक् ॥३८॥ दोषकृत्र च सर्वत्र स्वोच्चस्वर्गगतो ग्रह ॥ घडादित्रयसस्थैश्चेत्तद्विना दोषकृच्छुम् ॥३९॥ बागीशवाग्गृहाधीशौ पडादित्रयसस्थितौ ॥ मूकता कुरुतोऽप्येव पितृमातृगृहाधिपा ॥४०॥ बागीशवाग्गृहाधीशा युतास्ते त्रयसस्थिता ॥ कुर्वन्ति तेषा मूकत्वमेवमूह्य मनीषिभि ॥४१॥ कुटुम्बकारका केन्द्रत्रिकोणेषु गता ग्रहा सकुटुम्बकलत्रेशा कलत्र वा कुटुम्बकम् ॥४२॥ पश्यति च द्वयस्या वा यावत्तान्त्रप्रमाणकम् ॥ कलत्र निर्दिशेत्प्राज्ञोऽथवा तेषा च नो वदेत् ॥४३॥ विद्याधिपौ जीवदुधावविद्यामरित्रप्रस्थौ कुरुतोऽथ तौ चेत् ॥ केन्द्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसस्थौ प्रयच्छता द्रागनवद्यविद्याम् ॥४४॥ एव बुधस्यागिरसः घडादित्रय स्थितौ नीचग्रहोऽरिनाथ ॥ केन्द्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसस्थौ धनाभिवृद्धि कुरुतस्तदेव ॥४५॥ धनाधिपो गुह्यस्य धनराशिस्थितो यदि ॥ भौमेन सहितो वापि धनवान् स नरो भवेत् ॥४६॥ धनेशे लाभराशित्थे लाभेशो वा धन गते ॥ तावुभौ केद्रराशित्थौ धनवान्त नरो भवेत् ॥४७॥ धनेशे केद्रराशित्थे लाभेशे तत्रिकोणगे ॥ गुरुशुक्रयुते दृष्टे धनलाभमुदीरयेत् ॥४८॥ वित्तेशे रिपुभावस्ये लाभेशे तद्गते यदि ॥ वित्तलाभौ पापयुक्तौ दृष्टे निर्धन एव स ॥४९॥ वित्तलाभाधिपौ द्विस्थे पापलेखरसयुते ॥ जन्मप्रमृतिदरिद्रघ्न भिसान्न लभते नर ॥५०॥ पष्ठाष्टमव्ययस्येषु धनलाभाधिपौ स्थितौ ॥ लाभे कुजे धने राहौ राजवडाढनक्षय ॥५१॥ लाभे जीवे धने शुके तदीशे शुभसयुते ॥ व्यये शुभग्रहयुते धर्ममूलाढनव्यय ॥५२॥ कुटुम्बराशेरधिप स सौम्ये केद्रेऽथ सौम्ये च सुहृद्गृही वा ॥ सौम्यर्षयुक्ते यदि जातपुण्य शुद्धबसरक्षणवाग्विभूत ॥५३॥ कुटुम्बनाये परमोच्चयुक्ते देवेद्रपूज्ये च समीक्षिते वा ॥ तयाविधे तद्भयनेऽभिमात सहस्ररक्षो भुवनप्रतापो ॥५४॥ तत्राये भृगुणा बुधेन सहिते पारायतारो तथा स्वोच्चे चाय सुहृद्गृहे धनपतौ स्वस्यानकोलाहल ॥५५॥ कुटुम्बराशित्थपतौ यदि स्याद्भृगौ बुधे तादृशभावनाथे ॥ स्वोच्चे सुहृत्क्षेत्रगतोऽथवा स्यात्परोपकारी जनरक्षक स्यात् ॥५६॥ नेत्रेशे बलसयुक्ते शोभनासौ भवेन्नर ॥ पष्ठाष्टमव्यये युक्ते नेत्रे वैकल्पसादिशेत् ॥५७॥ धनेशे पापसयुक्ते धने पापसमन्विते ॥ असत्यवादी पिशुन पवनव्याधिसयुत ॥५८॥

### द्वितीयाभावफल

यदि नेत्रनाथद्वितीयश शुक्रयुक्त हो अथवा द्वितीय लग्न या सूर्य से मन्व्यग्ध करता हो तो नेत्र विद्रूप करता है। द्वितीय भाव मे सूर्य चन्द्र न्यित हो तो जातक राश्वघ (रात मे न

शुभपुक्तनिरोजिते ॥ भावे वा बससपूर्णे भ्रातृणां वर्धनं भवेत् ॥६३॥ केन्द्रत्रिकोणो वापि स्वीच्चमित्रस्वयमी ॥ नाथे वा कारके वापि भ्रातृलाभ वदेद्बुधः ॥६४॥ भ्रातृभे बुधसंयुक्ते तदीशे चन्द्रसमुते ॥ कारके मंदसयुक्ते भगिन्येकाग्रतो भवेत् ॥६५॥ पश्चात्सहोदरेष्वेतत्तृतीयस्तु मृतौ भवेत् ॥ कारके राहसयुक्ते विक्रमेशस्तु नीचगः ॥६६॥ पश्चात्सहोदराभावात्पूर्वस्तु त्रयकृद्भवेत् ॥ भ्रातृस्थानाधिपे केन्द्रे कारके तत्रिकोणमे ॥६७॥ जीवेन सहितश्चोच्चे सख्या द्वादश सोदराः ॥६८॥ अथ तृतीयगर्भश्च प्रथमाच्च तृतीयके ॥ सप्तमश्चैव नवमो द्वादशश्च मृतिप्रदः ॥६९॥ शेषाः सहोदरा दीर्घाः षड्भार्या यमलो भवेत् ॥ व्ययेशेन युते भौमे गुरुणा सहितोऽपि वा ॥७०॥ भ्रातृस्थाने शशियुते सप्तसख्यास्तु सोदरा ॥ एतेषा द्विप्रजानायः शुक्रयुक्तेऽसितेन हि अप्रे जात रविर्हन्ति पृष्ठे जातं शनैश्चरः । अप्रज पृष्ठज हन्ति सहजस्यो धरामुतः ॥७१॥

### तृतीय भावफल

तृतीयभाव का स्वामी भ्रातृ-स्थान को देखता हो, मंगल सहित हो या तीसरे भाव में ही हो ६।८।१२ में न हो तो भ्राता का सुख रहता है। वे मंगल तथा तृतीयेश पापग्रह या पापराशि से युक्त हो तो बन्धुधो को हटाने या मारनेवाला होता है। तृतीयभाव का स्वामी यदि स्त्री ग्रह हो और स्त्रीग्रह ही भ्रातृ स्थान में हो तो अधिक भगिनी होती है और यदि पुरुष राशि और पुरुष ग्रह हो तो अधिक भाई का सुख होता है। दोनों प्रकार का योग हो तो बलाबल देखकर भाई या बहन या दोनों कहे। तृतीयेश और मंगल अष्टमस्थान में पापदृष्ट होकर स्थित हो तो भ्राताओ के नाश का कारण है। तथा वे दोनों पापदृष्ट या पापयुक्त हो तो सब विद्या व्यर्थ होती है। तृतीयराशि में कारकग्रह हो शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो अथवा भ्रातृभाव में बलवान् होकर स्थित हो तो भाइयो की वृद्धि होती है। भ्रातृस्थान का स्वामी अथवा भ्रातृकारक केन्द्र या त्रिकोण में उच्च या मित्र अथवा अपने वर्ग में हो तो भाइयो का लाभ (वृद्धि) होता है। भ्रातृस्थान में बुध हो और भ्रातृस्थान के स्वामी के साथ चन्द्रमा हो, भ्रातृकारक के साथ शनि हो तो अगली बार केवल एक भगिनी ही हो। पश्चात् एक सहोदर हो और उसके नेष्ट योग हो तो तीसरे की मृत्यु होती है। भ्रातृ-कारक के साथ में राहु हो और भ्रातृस्थान स्वामी भी नीचराशि का हो तो उसके बाद सहोदर भ्राता न होने से बही तीसरा होता है। भ्रातृस्थान स्वामी केन्द्र में हो और भ्रातृकारक अपने से त्रिकोण में हो गुरु सहित उच्च राशि में हो तो १२ भाई होते हैं। इन १२ भाइयो में तीसरा, छठा, सातवा, नौवा और बारहवा गर्भ या बालक नष्ट होता है। बाकी भाई दीर्घायु तथा बाकी कन्याये होती है। (अथवा ३ बार २-२ यमल कन्या होकर ६ बन्ध्याएँ होती हैं।) व्ययेश के साथ मंगल या गुरु हो और तीसरे स्थान में चन्द्रमा हो तथा चन्द्रमा गुरु युक्त या दृष्ट हो तो सात भाई होते हैं। तृतीयभाव में सूर्य से बड़े भाई की, शनि से छोटे भाई की, मंगल में छोटे बड़े दोनों की मृत्यु होती है ॥५९-७१॥

### अथ धनुर्भावफलम्

गेहाधिनाथेन युते तु गेहे देहाधिपेनापि गृहाभिलषिः ॥ युते पहादी तु विषयंयः स्याद्गृहाधिपे देहपते च तद्वत् ॥७२॥ केन्द्रत्रिकोणे च शुभग्रहेण युते समीचीनगृहाभिलषिः ॥ क्षेत्रस्य चित्ता

सदनाधिपेन जीवेन चिन्ता तु मुखस्य काया ॥७३॥ दिव्यागनावाहनवस्तुमुपाचिता तु कार्या मृगुणा बुधेन्द्रैः ॥ तमशनिभ्यामभिचिन्त्यमापुरर्केण तात शशिनात्र माता ॥७४॥ बुधेन बुद्धिः सदनर्क्षसंस्था गतेन सप्तशयुतेन च स्यात् ॥ केन्द्रत्रिकोणेषु गतेषु सप्त प्रपश्यता वापि स्वतुगयेन ॥७५॥ स्वकीयस्वाशमे स्वोच्चैः सुतस्मानस्थितो यदि ॥ मुखवाहनवृद्धिः स्याच्छ्लेषभेदादिवाद्य युक् ॥७६॥ विचित्रसौधप्रकार मण्डित गृहमाविशेत् ॥ कर्माधिपेन सहिते तामे चन्द्रार्कसूनुना ॥७७॥ बधुस्यानेश्वरे सौम्यशुभग्रहनिरीक्षिते ॥ शशिजे लग्नसयुक्ते बुधपूज्यो भवेन्नर ॥७८॥ मातु स्याने शुभयुते तदीशे स्वोच्चराशिमे ॥ कारके बलसयुक्ते मातृवीर्यागुराविशेत् ॥७९॥ स्वतुगसस्ये ह्यबुकाधिनाये स्वर्के त्रिभे मित्र गृहे स्थिते च ॥ शुभेन दृष्टे शुभसयुते च क्षेत्राभिवृद्धिः प्रवदेन्नराणाम् ॥८०॥ मुखेशे केन्द्रभावस्ये तथा क्षेत्रे स्थितो मृगुः ॥ शशिजे स्वोच्चराशिस्ये विद्वान्पण्डित एव स ॥८१॥ मुखे मदे रविपुते चद्रो भाग्यगतो यदि ॥ लाभस्थानगते भीमे गोमहिष्यादिलाभकृत ॥८२॥ चरग्रहसमायुक्ते मुख तद्राशिनायके ॥ पण्डे भीमे व्यपगते भ्रुकत्व प्राप्नुते नरः ॥८३॥ लग्नस्थानाधिपे सौम्ये मुखेशे नीचराशिगे ॥ कारके व्ययराशिस्ये मुखेशे लाभसयुते ॥८४॥ द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरवाहनलाभकृत् वाहने रविसयुक्ते स्वोच्चैः तद्राशिनायके ॥८५॥ युते शुकेण सयुक्ते द्वात्रिंशे वाहन भवेत् ॥ कर्मशेन युते बधुनाये तुगाशतयुते ॥८६॥ द्विचत्वारिंशके प्राप्ते नरो वाहनभाग्भवेत् ॥ लाभेशे मुखराशिस्ये मुखेशे लाभसयुते ॥ द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरवाहनलाभकृत् ॥८७॥

### चतुर्थ भावफल

लग्नेश तथा चतुर्थेश चतुर्थभाव में हो तो मकान का लाभ हो। दोनों ६।७।८ में हो तो अपना भी नष्ट हो जावे। वही लग्न चतुर्थेश केन्द्र या त्रिकोण में हो और शुभग्रह से युक्त हो तो सुन्दर मकान प्राप्त हो। भूमि की चिन्ता (विचार) चतुर्थेश से और भूमि से मुख का विचार गुरु से करना। और शुक्र से सुन्दर स्त्री वाहन वस्तु आभूषण इतका विचार करना चाहिए। राहु शनि से आयु का विचार करना। सूर्य से पिता और चन्द्रमा से माता का विचार करना चाहिए। बुध से बुद्धि का विचार करना। बुध चतुर्थ भाव में सप्तमेश से युक्त हो तो श्रेष्ठ बुद्धिमान हो। यह बुध केन्द्र या त्रिकोण स्थान में अपने उच्चराशि का होकर स्थित हो सातवें स्थान को देखता हो तो और श्रेष्ठ है। चतुर्थ स्थानपति अपनी राशि का या अपने कारकाश में अथवा उच्च में होकर पञ्चम भाव में स्थित हो तो अनेक झगडयुक्त सुख और वाहन की वृद्धि होती है। और विचित्र महल चारों तरफ से प्रकार युक्त होना चाहिये। दशमेश से युक्त तथा चन्द्रमा और शनि युक्त चतुर्थेश हो तो पूर्वोक्त प्रकार का महल (भारी मकान) होता है। तृतीयेश शुभग्रह तथा बुध की दृष्टियुक्त अथवा बुध लग्न में हो तो पंडितो से मान्य होता है। चतुर्थ स्थान में शुभग्रह हो और चतुर्थेश उच्च का हो तथा मातृकारक बलवान् हो तो माता की आयु बड़ी होती है। चतुर्थेश अपने उच्च में हो या स्वगृही हो अथवा मित्रराशि में होकर तीसरे घर में हो शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्या की भूमि की वृद्धि का सुख होता है। चतुर्थेश केन्द्र में हो केन्द्र में ही शुक्र हो तथा बुध उच्चराशि का हो तो जातक विद्वान् मेधावी होता है। चतुर्थ स्थान में सूर्ययुक्त शनि हो चन्द्रमा नवमस्थान में हो तथा लाभस्थान में मंगल हो तो गौ भैस आदि का लाभ है। सुसभाव में चरराशि या चर

रिख (मातृवारक) हो और मुखेश पष्ठस्थान मे हो, मंगल द्वादशस्थान मे हो तो जातक मूक (गूया) होता है॥ सप्रेश सौम्य बुध हो और मुखेश नीच राशि मे हो, मातृकारक द्वादशभाव मे हो, मुखेश लाभस्थान मे हो तो जातक के १२ वे वर्ष मे पालकी की सवारी का लाभ होता है॥ चतुर्थभाव मे सूर्य हो चतुर्थेश उच्चराशि का हो और शुक्र युक्त हो तो ३२ वे वर्ष मे सवारी का लाभ होता है॥ चतुर्थेश दशमेश से युक्त उच्चराश (परमोच्च) मे हो तो ४२ वे वर्ष मे बाहन का लाभ होता है॥ लाभेश चतुर्थभाव मे हो तथा चतुर्थेश लाभ स्थान मे हो तो १२ वे वर्ष मे पालकी (या रिक्सा) का लाभ हो॥७२-८७॥

### अथ पचमभावफलम्

पडाद्वित्रयसस्ये तु सुताधीशे स्वपुत्रता ॥ केन्द्रत्रिकोणसस्ये तु पुत्रलाभाभिसम्भव ॥८८॥ सत्पुत्रताभ सुतपे सुरेज्ये शुभेषु गेहेषु गते च मानी ॥ एक स्थिर स्यात्सुत एक एव स्थित शुभ केन्द्रनवात्मजस्ये ॥८९॥ पितापि चित्यो नवमे सुतर्से एवविध चितनमूहनीयम् ॥९०॥ क्षेत्रस्य कारको भीम कर्मस्थानेऽप्यय विधि ॥ अस्तगते पचमेशे पापक्राते च दुर्वले ॥९१॥ पष्ठे नीचे सुताधीशे काकवध्या विशेषत ॥ षष्ठस्थाने सुताधीशे लग्नेशे कुजवेऽभनि ॥ त्रियुते प्रयमापत्य काकवध्यात्वमाप्नुयात् ॥९२॥ सुताधीशो हि नीचस्य पडाद्वित्रयसस्थित ॥ काकवध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि ॥९३॥ सुतेशो नीचगो धन सुतस्थान न पश्यति ॥ तत्र सौरिबुधौ स्याता काकवध्यात्वमाप्नुयात् ॥९४॥ भाग्येशो मूर्तिवर्ती च सुतेशो नीचगो यदि ॥ सुते केतुबुधौ स्याता सुत कष्टाद्विनिर्दिशेत् ॥९५॥ पडाद्वित्रयसस्योऽपि नीचो वाऽप्यरिसस्थित ॥ पापाक्राते सुतस्थाने पुत्र कष्टाद्विनिर्दिशेत् ॥९६॥ पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मर्दक्षेत्रेऽथवा पुन ॥ मदे माद्युते दृष्टे तदा दत्तादय सुता ॥ रविचन्द्रौ यदैकस्यावेकाशकसमन्वितौ ॥९७॥ त्रिमात्राभिरसौ भ्रता द्विपित्राऽपि च पोषक ॥ पचमे पद्गृहे युक्ते तदीशे ध्ययरशिगे ॥ लग्नेशे दुर्वलो यस्य दत्तपुत्रभवोदय ॥९८॥ सुतभवने भृगुजोवसौम्पनाये बलसहिते रविलोकिते युते वा ॥ बहुसुतजनन वदति सत सुतभवनेशबलेन चित्यमेतत् ॥९९॥ सुतेशे शशिपुक्ते च त्रिराश्यरागतेऽपि च ॥ तथैव कन्यकालाभ प्रबवेन्मतिमाध्न ॥१००॥ सुतेशे नरराशिस्ये राहुणा सहित शशी ॥ पुत्रस्थान गते मदे परजात बदेच्छिशुम् ॥१०१॥ सुतेशे राहुसयुक्ते सुतस्थान समाश्रितम् ॥ न वीक्ष्यतेन्दुगुरुणा परजातो भवेन्नर ॥१०२॥ न लग्नमिदु च गुरुर्निरीकिते न वा शशाको रविणा समागत ॥ सपापकार्केण युते नवाशके परेण जात प्रयदति निश्रितम् ॥१०३॥ लग्नाद्द्वादशगे चदे लग्नादष्टमगे गुरु ॥ पापयुक्तेन सदृष्टे अन्यबीज न सशय ॥१०४॥ पुत्रस्थानाधिपे स्वोल्बे लग्नात्त्वेद्वित्रिकोणगे ॥ गुरुणा सयुते दृष्टे पुत्रभाग्यमुपैति स ॥१०५॥ त्रिचतु पापसयुक्ते सुतेशेनाधिपे तु युक् ॥ सुतेशे नाशराशिस्ये नीचसस्यौ भवेच्छिशु ॥१०६॥ पुत्रस्थान गते जीवे तदीशे भृगुसयुते ॥ द्वात्रिंशे च त्रयस्त्रिंशे वत्सरे पुत्रलाभकृत ॥१०७॥ सुतेशे केद्रभावस्ये कारकेण समन्विते ॥ पद्वित्रिंशे त्रिंशदब्दे च पुत्रोत्पत्ति विनिर्दिशेत् ॥१०८॥ लग्नाद्भाग्यगते जीवे जीवाद्भाग्यगते भृगोऽलग्नेशे भृगुसयुक्ते चत्वारिंशे सुत लभेत् ॥१०९॥ पुत्रस्थान गतो राहुस्तदीशे पापसयुते ॥ नीचराशिमते जीवे द्वात्रिंशे पुत्रमृत्युद ॥११०॥ जीवात्पचमगे पापे लग्नात्पत्र गतेऽपि च ॥ पद्विंशे च त्रयस्त्रिंशे चत्वारिंशे सुतदय ॥१११॥ लग्ने मादिसमायुक्ते

लग्नेशे नीचराशिगे ॥ षट्पचाशदशब्देषु पुत्रशोकसमाकुल ॥११२॥ चतुर्थे पापसयुक्ते षष्ठे  
 पापसमन्विते ॥ सुतेशे परमोच्चस्थे लग्नेशेन समन्विते ॥११३॥ कारके शुभसयुक्ते  
 दशसख्यास्तु सूनव ॥ परमोच्चगते जीवे धनेशे राहुसयुक्ते ॥११४॥ भाग्येशे भाग्यसयुक्ते  
 सख्याता नवसूनव ॥ पुत्रभाग्यगते जीवे सुतेशे बलसयुक्ते ॥११५॥ धनेशे कर्मराशिस्थे  
 वसुसख्यास्तु सूनव ॥ पचमात्पचमे भदे सुतस्थे च तदीश्वरे ॥११६॥ सूनव सप्तसख्याश्च  
 द्विगुणं यमल भवेत् ॥ वितेशे पचमस्थे च सुतस्थे पचमाधिपे ॥११७॥ षट्सख्या च  
 सुतप्राप्तिस्तेषा च त्रिप्रजामृति ॥ मदात्पचमगे जीवे जीवात्पचमगे रवी ॥११८॥  
 सूर्यात्पचमगे राहौ पुत्रमेक विनिर्दिशेत् ॥ पचमे पापसयुक्ते गुरो पचमगे शनि ॥११९॥  
 कलत्रान्तरे पुत्रलाभ कलत्रत्रयभाग भवेत् ॥ पचमे पापसयुक्ते गुरो पचमगे शनौ ॥१२०॥  
 पचमे भीमसयुक्ते लग्नेशे धनसगते ॥ जात जात विनाश च दीर्घायुश्चैव  
 मानव ॥१२१॥

### पचम भावफल

पचमेश ६।७।८ इन स्थानो मे हो तो पुत्रहीन होता है। और पचमेश केन्द्र या त्रिकोण मे  
 हो तो पुत्रलाभ की संभावना है॥ पचमेश यदि गुरु हो और सूर्य शुभस्थान मे हो तो एक पुत्र  
 स्थिर रहता है पर यदि पचमेश केन्द्र या नवमभाव मे हो । नवमभाव मे तथा पचमभाव मे  
 इसी प्रकार के योग हो तो उन पर से पिता का विचार भी करे॥ कारक मंगल दशमभाव मे  
 हो, पचमेश अस्त हो या पापग्रहो के बीच मे (पापाक्रान्त) तथा बलहीन हो और पुत्रस्थान  
 पचम का स्वामी नीचराशि का बलहीन हो तो स्त्री काकबन्ध्या (एक सन्तान होने के बाद  
 और सन्तान न हो) होती है॥ पचमेश षष्ठस्थान मे हो और लग्नेश मंगल की राशि मे हो तो  
 प्रथम सन्तान के बाद स्त्री काकबन्ध्या होती है। सुताधीश नीचराशि का होकर ६।७।८  
 स्थानो मे हो और पचमस्थान मे केतु या बुध हो तो स्त्री काकबन्ध्या होती है॥ जिस  
 जन्मकुण्डली मे सुतेश नीच का होकर सुतस्थान को न देखता हो और सुतस्थान मे शनि बुध  
 हो तो स्त्री काकबन्ध्या होती है॥ भाग्येश लग्न मे हो, पचमेश नीचराशि का हो और  
 सुतस्थान मे केतु, बुध हो तो बडे कष्ट से पुत्रजन्म होता है॥ सुतेश नीच का होकर छठेभाव मे  
 या सातवे आठवे स्थान मे जनुराशि मे हो और सुतस्थान मे पापग्रह हो तो बडे कष्ट से  
 पुत्रजन्म होता है॥ पुत्रस्थान मे बुध की राशि ३।६ हो या शनि की राशि १०।११ हो और  
 पचमभाव को शनि या मादीयुक्त या देखते हो तो दत्तक आदि पुत्र होते है॥ सूर्य, चन्द्रमा यदि  
 एक स्थान मे एक ही नवमाश मे हो तो बालक तीन माताओ से भाई और दो पिता मे पोषित  
 होता है॥ पचमेश छठे घर मे हो षष्ठेश बारहवे स्थान मे हो और लग्नेश दुर्बल हो तो दत्तक  
 पुत्र होता है॥ सुतस्थान मे बुध, गुरु या शुक हो और बलवान् हो, सूर्ययुक्त हो या देखता हो  
 और सुतेश बलवान् हो तो बहुत पुत्र होते है॥ सुतेश चन्द्रमा से युक्त हो और त्रिराशिपति भी  
 चन्द्रमा हो तो बन्धा होवे॥ सुतेश पुरुष राशि मे हो चन्द्रमा राहु के साथ हो और पचमभाव  
 मे शनि हो तो सन्तान जारज है॥ सुतेश राहु के साथ होकर सुतस्थान मे ही स्थित हो और  
 चन्द्रमा या गुरु की दृष्टि नहीं हो तो सन्तान जारज है॥ लग्न और चन्द्रमा को गुरु नहीं देखता  
 हो और चन्द्रमा सूर्ययुक्त नहीं हो तथा पापग्रह युक्त सूर्य पुत्र नवाश मे हो तो जारज सन्तान

है। लग्न से द्वादशभाव में चन्द्रमा हो और आठवें गुरु हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो सन्तान जरूर है। और पुत्रस्थानपति उच्च वा हो लग्न से दूसरे तथा त्रिकोण में हो और बृहस्पति की दृष्टि हो या युक्त हो तो भाग्यशाली पुत्र होता है। तीन चार पापग्रहों से युक्त पञ्चमेश अष्टमभाव में हो तो नीची श्रेणी में रहनेवाला बालक होता है। गुरु पुत्रभाव में हो, सुतेश शुक के साथ हो तो ३२ या ३३ वें वर्ष में पुत्र प्राप्ति होती है। सुतेश केन्द्र में हो और पुत्रकारक से युक्त हो तो ३०-३६ वें वर्ष में पुत्रप्राप्ति होती है। लग्न से नवमस्थान में बृहस्पति हो तथा गुरु से नवमभाव में शुक हो लग्नेश भी शुक के साथ हो तो ४० वें वर्ष में पुत्र होता है। और पुत्रस्थान में राहु हो सुतेश पापग्रह हो एव गुरु नीच में हो तो ३२ वें वर्ष में पुत्र की मृत्यु होती है। बृहस्पति पंचम स्थान में पापग्रह युक्त हो तथा पंचमस्थान में भी पापग्रह हो तो २६, ३३, ४० वें वर्षों में पुत्रक्षय होता है। लग्न में मन्दी (शनि का गुनिक लग्न) लग्नेश नीचराशि में हो तो ५६ वें वर्ष में पुत्रशोक होता है। चतुर्थ तथा षष्ठस्थानों में पापग्रह हो और सुतेश परमोच्च का होकर लग्नेश से युक्त हो पुत्रकारक भी शुभग्रह संयुक्त हो तो दस पुत्रसन्तान होती है। बृहस्पति परमोच्च में प्राप्त हो धनेश राहुयुक्त हो, भाग्येश भाग्यस्थान में हो तो ९ पुत्रसन्तान होती है। बृहस्पति पुत्र या भाग्यस्थान में हो तथा पुत्रेश बलवान हो, धनेश दशम में हो तो ८ पुत्र होते हैं। पंचम के पंचम (नवम) में शनि हो तथा नवमेश पंचम में हो तो ७ पुत्र होते हैं एव दो गर्भों में २-२ (जुडवा) होते हैं। धनेश तथा पञ्चमेश पंचमभाव में हो तो छ पुत्र होते हैं और उनमें से तीन सन्तान नष्ट होती है। शनि से पंचमस्थान में गुरु हो, गुरु से पंचम सूर्य हो सूर्य से पंचम राहु हो तो एक पुत्र होता है। पंचमस्थान में पापग्रह हो, गुरु से पंचमभाव में शनि हो तो दूसरी या तीसरी स्त्री से पुत्र हो और वह जातक ३ स्त्रीवाला हो। पंचम स्थान में पापग्रह हो तथा गुरु से पंचम में शनि हो पंचम स्थान में मंगल भी हो तथा लग्नेश दूसरे भावों में हो तो अनेक पुत्र होकर भी न रहे तथा जातक दीर्घायु होता है। ८८-१२१॥

#### अथ षष्ठभावफलम्

षष्ठाधिपोऽपि पापग्रहेहे वाप्यष्टमे स्थित तदा वधो भवेद्देहे कर्मस्थानेऽप्यय विधि ॥१२२॥  
 एव पित्रादिभावेशास्तत्कारकसयुता ॥ वणाधिपयुताश्चापि षष्ठाष्टमयुता यदि ॥१२३॥  
 तेषामपि वण वाज्यमादित्येन शिरोवणम् ॥ इन्दुना च मुखे फटे भीमेन ज्ञेन नामिषु ॥१२४॥  
 गुरुणा नासिकाया च भ्रुवुणा नयने पदे ॥ शनिना राहुणा कुली केतुना च तथा भवेत् ॥१२५॥  
 लग्नाधिप कुजक्षेत्रे बुधस्य यदि सस्थित ॥ यत्र कुत्र स्थितो ज्ञेन वीक्षितो मुखरूपप्रद ॥१२६॥  
 लग्नाधिप कुजबुधौ चद्रेण यदि सस्थितौ ॥ राहुर्वा शनिना सार्द्धं कुष्ठं तत्र विनिर्दिशत् ॥१२७॥  
 लग्नाधिप विना लग्ने स्थितश्चेत्तमसा शशो ॥ श्वेतकुष्ठं तदा कृष्ण कुष्ठं च शनिना सह ॥१२८॥ कुजेन रक्तकुष्ठं स्यात्तत्तदेव विचारयेत् ॥ लग्ने षष्ठाष्टमाधोशी रविणा यदि सस्थितौ ॥१२९॥ ज्वरगद कुजे एषि शस्त्रघ्नमयापि वा ॥ बुधेन पित्त गुरुणा रोगामाव विनिर्दिशत् ॥१३०॥ स्त्रीभिः शुक्रेण शनिना वायुना सयुतो यदि ॥ गण्डव्याण्डालतो नामी तम केत्वोर्गृहे भयम् ॥१३१॥ चद्रेण गण्डसन्तिले कफश्लेष्मादिना भवेत् ॥ एव पित्रापि भावाना तत्कारक योगत ॥१३२॥ गण्डे तेषा भवेदेवमूहमत्र मनीषिभि ॥



हृतशत्रुप्रहादास्तिगजवाजिघनाधिपा ॥१३३॥ श्रीपति' स्वोच्चतेजस्वी गृहारामसुखी भवेत् ॥  
 भीष्मै विरचित पुसा प्रभावरिपुनीचयो ॥१३४॥ लक्ष्म्या सतिगितो देहे गजमूमिसहस्रभृत् ॥  
 रोगस्थानगते पापे तदीशे पापसयुते ॥१३५॥ राहूणा सयुते मदे सर्वदा रोगसयुत ॥  
 रोगस्थानगते भीमे तदीशे रध्रसयुते ॥१३६॥ षड्वर्षेद्वादेशे वर्षे ज्वररोगी भवेन्नर ॥  
 षष्ठस्थानगते जीवे तद्गृहे चन्द्रसयुते ॥१३७॥ द्वाविंशैकोनविशेब्दे कुष्ठरोग विनिर्दिशेत् ॥  
 रोगस्थान गतो राहु केद्रे भादिसमन्वित ॥१३८॥ लग्नेशे नाशराशिस्ये षड्विंशे क्षयरोगता ॥  
 व्ययेशे रोगराशिस्ये तदीशे व्ययराशिये ॥१३९॥ त्रिषड्वर्षेकोनवर्षे गुल्मरोग विनिर्दिशेत् ॥  
 रिपुस्थानगते चन्द्रे शनिना सयुते यदि ॥१४०॥ पचपचागताब्देषु रक्तकुष्ठ विनिर्दिशेत् ॥  
 लग्नेशे लग्नराशिस्ये मदे शत्रुसमन्विते ॥१४१॥ एकोनषष्टिवर्षे तु वातरोगादितो भवेत् ॥  
 रधेशे रिपुराशिस्ये व्ययेशे लग्नसस्थिते ॥१४२॥ चन्द्रे षष्ठाशसयुक्ते वसुवर्षे मृगाद्रूपम् ॥  
 षष्ठाष्टमगतो राहुस्तस्मादष्टगते शनी ॥१४३॥ वत्तराशिमथ तस्य त्रिवर्षे पक्षिदोषभाक् ॥  
 ॥१४४॥ षष्ठाष्टमगते सूर्ये तद्द्वये चन्द्रसयुते ॥ पञ्चमे नवमेऽब्दे तु जलभीति विनिर्दिशेत् ॥  
 ॥१४५॥ अष्टमे मदसयुक्तेरघ्नाद्री द्वादशे कुज ॥ त्रिशाब्द च दशेऽष्टेतु स्फोटकादिविनिर्दिशे  
 त् ॥१४६॥ रधेशे राहुसयुक्ते तदशेरध्रकोणो ॥ द्वाविंशेऽष्टादशे वर्षे ग्रयिमेहादिपीडनम् ॥  
 ॥१४७॥ लाभेशे रिपुभावस्ये तदीशे लाभराशिये ॥ एकत्रिंशैकचत्वारि शत्रुमुलाद्धनव्यय  
 ॥१४८॥ सुतेशे रिपुभावस्ये षष्ठेशे गुरुसयुते ॥ व्ययेशे लग्नभावस्ये तस्य पुत्री रिपुर्भवेत् ॥  
 १४९॥ लग्नेशे षष्ठराशिस्ये तदशे षष्ठराशिये ॥ दशमैकोनविशेऽब्दे शुनकाद्भूतिरुच्यते  
 ॥१५०॥

### षष्ठभावफल

षष्ठस्थान का स्वामी पापग्रह हो और लग्न में या अष्टमभाव में हो तो देह में फोडा-कुन्सी  
 होते हैं। दशमस्थान से भी इसी तरह विचार करना। इसी प्रकार पिता आदि भावों के  
 स्वामी भी अपने २ कारक (पितृकारक) आदि से तथा षष्ठेश से युक्त हो ६।८ भावगत हो  
 तो उनके भी व्रण (फोडा आदि) कहना चाहिये। विशेष षष्ठाधिपति यदि सूर्य हो तो शिर में  
 घाव या फोडा, चन्द्रमा में मुख में या कंठ में, मंगल तथा बुध में नाभि में, गुरु से नासिकामें,  
 शुक्र से आस तथा पैर में, शनि, राहु, तथा केलु में बाल में फोडा या घाव अथवा नासूर होता  
 है। लग्न का स्वामी मंगल या बुध के स्थान में किसी भी स्थान में हो किन्तु बुध की दृष्टि हो  
 तो मुख में रोग होता है। लग्न के स्वामी मंगल या बुध में कोई हो और चन्द्रमा की दृष्टि  
 हो अथवा शनि के साथ राहु लग्न में हो तो कुष्ठ (बोड) होता है। लग्नेश के बिना लग्न में राहु  
 के साथ चन्द्रमा हो तो श्वेत कुष्ठ होता है और राहु के साथ शनि हो तो बाला बोड होता है।  
 ऐसे ही मंगल राहु के योग में रक्तकुष्ठ होता है। इसी प्रकार तत्तद् भाव का विचार करना  
 चाहिए। लग्न में ६।८ के स्वामी यदि सूर्य के साथ हो तो ज्वर, गलगण्ड रोग होते हैं। मंगल  
 हो तो ग्रन्थि अथवा हथियार का घाव, बुध में पित्त सम्बन्धी बीमारी हो। यदि बृहस्पति में  
 षष्ठ योग हो तो नीरोग रहे। यह योग गुरु के साथ हो तो त्रिभयों के द्वारा, शनि के साथ हो  
 तो वायु द्वारा गण्डरोग व्रण या घाव होता है। गुरु में चाण्डाल के द्वारा केलु में घाव में भय  
 चन्द्रमा में जन में या बफ भ्रंष्य में गण्ड (घाव आदि) जानना। इसी प्रकार पिता, माना

आदि के कारणको के साथ उपर्युक्त योग हो तो उनको भी व्याधि, भय होता है। (यहा से २ श्लोक आत्मकारक के दीप्तादि अवस्था के फल निर्देशक है, प्रमाद से यहा प्रक्षिप्त हो गये हैं तथापि अर्थ लिखा जाता है शत्रुओं का नाश करने के बाद शत्रुओं के घर से प्राप्त हाथी, घोडे, घर, महल आदिका स्वामी होता है। लक्ष्मीपति तथा प्रचण्ड तेजस्वी, मकान बगीचा आदि से मुषी होता है। दीप्त अवस्थावाले प्रभौ = स्वामी (ग्रह वा विशेषण) शत्रुराशि तथा नीचराशि का न हो तो हाथी आदि युक्त राज्यलक्ष्मी जातक को घेरे रहती है। पृष्ठस्थान मे पापग्रह हो, पृष्ठेश पापग्रहयुक्त हो। राहु से शनि युक्त हो तो सर्वदा रोगी ही रहता है। रोगस्थान (पृष्ठ) मे मंगल हो तथा रोगेश अष्टम भाव मे हो तो ६।१२ वे वर्ष मे ज्वर रोग होता है। पृष्ठस्थान मे गुरु हो, छठे घर मे चन्द्रमा हो तो १९ या २२ वे वर्ष मे कुष्ठ रोग होता है। रोग स्थान मे राहु हो केन्द्रस्थान मे मादी (शनि - गुलिक लग्न) हो लग्नेश अष्टमभाव मे हो तो २६ वे वर्ष मे क्षय (तपेदिक) रोग होता है। व्येश छठे भाव मे हो, पृष्ठेश व्ययभावमे हो तो २९।३० वर्ष मे गुल्मरोग होता है। पृष्ठस्थान मे चन्द्रमा यदि शनि से युक्त हो तो ५५ वे वर्ष मे रक्तकुष्ठ होता है। लग्नेश लग्न मे हो, शनि शत्रुग्रह के साथ हो। तो ५९ वे वर्ष मे वात व्याधि होती है। अष्टमेश शत्रुराशि मे हो, व्येश लग्न मे हो तथा चन्द्रमा पृष्ठभाव के नवमाश मे हो तो ८ वे वर्ष मे पशु से भय हो। पृष्ठ तथा अष्टमभाव मे राहु हो और राहु से आठवे शनि हो। तो जातक को प्रथम वर्ष मे अग्नि से भय और तीसरे वर्ष मे पत्नी से खतरा हो। छठे आठवे सूर्य हो और उन्ही भावो मे चन्द्रमा साथ हो तो पाचवे या नौवे वर्ष मे जल से भय होता है। मंगल और शनि ७।८।१०।१२ इन स्थानो मे समुक्त होकर स्थित हो तो ३० वर्ष की आयु तक सफोटक (चेचक = भीतला) का भय होता है तथा अष्टमेश राहु युक्त हो अष्टमभाव की नवमाश राशि अष्टमभाव से त्रिकोण भाव मे हो १८ या २२ वे वर्ष मे ग्रन्थिबात या प्रमेह आदि रोग हो लाभेश छठे भाव मे हो और पृष्ठेश लाभ स्थान मे हो तो ३१ या ४१ वे वर्ष मे शत्रु के कारण (मुकदमा आदि मे) धनव्यय होता है। सृष्टेश पृष्ठभाव मे हो, पृष्ठेश गुरु के साथ हो तथा व्येश लग्न मे हो तो उम जातक का पुत्र ही शत्रु हो जाता है। लग्नेश छठे भाव मे हो, लग्ननवमाश राशि भी छठे भाव मे हो तो १० वे या १९ वे वर्ष मे कुत्ते से भय हो ॥१२२-१५०॥

### अथ सप्तमभावफलम्

कलत्रपो विना स्वर्शे षडादित्रयसस्थित ॥ रोगिणीं कुरुते नारीं तथा तुगादिक विना ॥१५१॥ स्त्रीपुत्रयात्राफलचित्तनानि कार्याण्यनेनापि सहाधिपेन ॥ शुभेन कार्यं शुभद तथैव पापेन पाप फलमूहनीयम् ॥१५२॥ सप्तमे तु स्थिते शुक्लेतीवकामो भवेन्नर ॥ यत्रकुत्रस्थिते पापयुते स्त्रीमरण भवेत् ॥१५३॥ वाराधिप पुण्यग्रहेण युक्तो दृष्टोजपि वा पूर्णबल प्रसन्न ॥ सौभाग्ययुक्तो गुणवान्प्रभुश्च दाता विभोग्य बहुधान्यमाहु ॥१५४॥ शलत्रेशे बहुगुणे तुगवशादिहेतुभि ॥ बहुभार्यान्तर विद्याच्छत्रुनीचास्तोगे च ॥१५५॥ परमोच्चगते भन्दाधिनाये मन्दराशो शुभसेचरेण दृष्टे ॥ अथवा मृगुसदने तुगे बहुभार्यं प्रवदति बुद्धिमन्त ॥१५६॥ यध्यासगो मदे भानो चद्रराशिसम स्त्रिय ॥ कुजे रजस्यलासगो कथ्यासगश्च कीर्तित ॥१५७॥ बुधे देय्या च हीना च वणिक्स्त्री वा प्रकीर्तिता ॥ गुरोर्ब्राह्मण

भार्या स्याद्गर्भिणी सग एव च ॥१५८॥ हीना च पुष्पिणी वाच्या मन्दराहुफणीश्वरैः ॥ कुजोत्ते  
 मुस्तना मन्दा व्याधिर्वावर्त्तितस्तथा ॥१५९॥ कठिनोर्ध्वकुजाचार्यं श्रेष्ठस्पूलोत्तमस्तना ॥ पापे  
 द्वादशकामस्ये क्षीणचद्रस्तु पचमे ॥१६०॥ जातश्च भार्यावश्य स्यादिति जातिविरोधकृत् ॥  
 जामित्रे मदभीमस्ये तदीशे मदभूमिजे ॥१६१॥ वेद्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न सगय ॥  
 दारेसे स्वोच्चराशिस्ये दारे शुभसमन्विते ॥१६२॥ लग्नेशे बलसयुक्ते स कलत्रसमन्वित  
 ॥१६३॥ कलत्रनाये रिपुनीचस्ये मूढेऽथवा पापनिरीक्षिते वा ॥ कलत्रभे पापयुते च वृष्टे  
 कलत्रहानि प्रवदति सतः ॥१६४॥ षष्ठाष्टमव्ययस्येषु मदेशो दुर्वलो यदि ॥ नीचराशिगते  
 युक्ते दारनाश विनिर्दिशेत् ॥ कलत्रस्थानगे चद्रे तदीशे व्ययराशिगे ॥१६५॥ कारको  
 बलहीनश्च दारसीस्य न विद्यते ॥ भार्याधिपे नीचगृहे च पापेपापसंगे वा बहुपापयुक्ते ॥ फलीषे  
 ग्रहे सप्तमराशिस्ये तस्योदयाशे द्विकलत्रसिद्धि ॥१६६॥ कलत्रस्थानगे भौमे शुके जामित्रो  
 शनौ ॥१६७॥ लग्नेशे रधराशिस्ये कलत्रत्रयवान् भवेत् ॥ द्विस्वभावगते शुके  
 स्वोच्चैतद्राशिनायके ॥१६८॥ दारेसे बलसयुक्ते बहुवारसमन्वित ॥ दारेसे शुभराशिस्ये  
 स्वोच्चस्वर्कगतो भृगु ॥१६९॥ पचमे नवमेऽब्दे तु विवाह प्रायशो भवेत् ॥ दारस्वान गते  
 सूर्ये तदीशे भृगुसयुते ॥१७०॥ सप्तमैकादशे वर्षे विवाह प्रायशो भवेत् ॥ कुटुबस्थानगे शुके  
 दारेसे लाभराशिगे ॥ दशमे षोडशाब्दे च विवाह प्रायशो भवेत् ॥१७१॥ लग्नेन्द्रगते  
 शुक्ललग्नेशे मदराशिगे ॥ वत्सरेकादशे प्राप्ते विवाह लभते नर ॥१७२॥ लग्नात्केन्द्रगते शुके  
 तस्मात्कामगते शनौ ॥ द्वादशैकोनविशे च विवाह प्रायशो भवेत् ॥१७३॥ चन्द्राज्जामित्रगे  
 शुके शुकाज्जामित्रगे शनौ ॥ वत्सरेऽष्टादशे प्राप्ते विवाह लभते नर ॥१७४॥ धनेशे  
 लाभराशिस्ये लग्नेशे कर्मराशिगे ॥ अन्डे पचदशे वर्षे विवाह लभते नर ॥१७५॥ धनेशे  
 लाभराशिस्ये लाभेशे धनराशिगे ॥ अन्डे त्रयोदशे प्राप्ते विवाह लभते नर ॥१७६॥  
 रन्ध्राज्जामित्रगे शुके तदीशे भौमसयुते ॥ द्वाविशे सप्तविशाब्दे विवाह लभते नर ॥१७७॥  
 दाराशकगते लग्ने नाथे दारेऽश्वरे व्यये ॥ त्रयोविशे च षड्विंशे विवाह लभते नर ॥१७८॥  
 रन्ध्राशे दारराशिस्ये लग्नेशे भृगुसयुते ॥ पचविशे त्रयस्त्रिंशे विवाह लभते नर ॥१७९॥  
 भाग्याङ्गान्यगते शुके तद्द्वये राहु सयुते ॥ एकत्रिंशान्त्रयस्त्रिंशे वारलाभ विनिर्दिशेत्  
 ॥१८०॥ भाग्याज्जामित्रगे शुके तद्द्वयूने दारनायके ॥ त्रिंशे वा सप्तविशाब्दे विवाह लभते  
 नर ॥१८१॥ दारे च नीचराशिस्ये शुके रधारिसयुते ॥ अष्टादशे त्रयस्त्रिंशे वत्सरे  
 दारनाशनम् ॥१८२॥ मदेशे नाशराशिस्ये व्ययेशे मदराशिगे ॥ तस्य चैकोनविशाब्दे  
 दारनाश विनिर्दिशेत् ॥१८३॥ कुटुबस्थानगे राहु कलत्रे भौमसयुते ॥ पाणिग्रहे च त्रिदिने  
 सर्पदष्टेबधूमृति ॥१८४॥ रधस्थानगते शुके तदीशे सौरिराशिगे ॥ द्वादशैकोनविशाब्दे  
 दारनाश विनिर्दिशेत् ॥१८५॥ लग्नेशे नीचराशिस्ये धनेशे निधन गते ॥ त्रयोदशे तु सप्राप्ते  
 कलत्रस्य मृतिर्भवेत् ॥१८६॥ शुकाज्जामित्रगे चद्रे चन्द्राज्जामित्रगे बुधे ॥ रधेशे सुतभावस्ये  
 प्रथमदशमाब्धिकम् ॥१८७॥ द्वाविशे च द्वितीये च त्रयस्त्रिंशे तृतीयके ॥ विवाह लभते मर्त्यो  
 नाश कार्या विचारणा ॥१८८॥

सन्तम भाव फल

सन्तमभाव का स्वामी उच्चादि रहित होकर छठे या आठवे भाव मे हो तो स्त्री सदा रोगिणी रहती है। इस भाव से विचार योग्य कहते है-भार्या सन्बन्धी तथा पुत्रसन्बन्धी एव

यात्रा का फलफल ये सब विचार सप्तमभाव तथा सप्तमाधिपति से भी करना चाहिये। शुभयोग हो तो शुभफल होगा, और पापयोग हो तो अशुभ फल होगा। सप्तमभाव में शुक्र हो तो जातक अतिवर्गी होता है। अन्यभाव में पापयुक्त हो तो स्त्री-मरण होता है। भार्येश सौम्यग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो तथा पूर्ण बलवान् हो और अस्तगत नहीं हो तो भार्याका स्वामी भाग्यवान् गुणवान् दानी मानी तथा अनेक भोग का साधनवाला होता है। भार्या भवत का स्वामी ग्रह स्वर्ग, उच्च, वज्र आदि वारणों से बलवान् हो तो अनेक भार्या होती हैं। एव शत्रुराशि, नीच तथा अस्त हो तो भी अनेक भार्या होने पर भी जीवित नहीं रहती। शनि स्थित राशि का स्वामी शनि के साथ परमोच्च का हो तथा शुभग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो एक से अधिक स्त्रियां होती हैं। यह योग शुक्र से भी देखना। उपर्युक्त योग शनि राशि में सूर्य से हो तो स्त्री बन्ध्या होती है और स्त्रियों की सख्या चन्द्रमा की राशि के अनुसार जानना। इसी प्रकार मंगल के योग से भी बन्ध्या-सग होता है और ऐसा योग बुध से हो तो वेश्या से योग हो, अथवा हीन जाति की स्त्री से एव वैश्य जाति की स्त्री से भी सम्बन्ध हो सकता है, विशेष क्या वह पुण्य चरित्रहीनता में इतना गिर जाता है कि-गृह की स्त्री तथा ब्राह्मणी या गर्भिणी-सग भी करता है और शनि राहु केतु से योग हो तो हीन जाति की प्राय रजोवती से सग हो। मंगल के योग से हीन जाति और सुस्तना से संयोग हो स्वयं जातक भी व्याधियस्त होकर दुर्बल हो। बृहस्पति से उपर्युक्त योग हो तो दीर्घ लम्ब अतिस्थूल, वृत्तपीन घनस्तनी' नारी से सग हो। पापग्रह ७।१२ में हो और शीघ्र चन्द्रमा पंचमभाव में हो ॥ ऐसे योग में हुआ जातक स्त्री के वश में रहता है और स्वजाति से विरोध करता है। सप्तम भाव में शनि मंगल और भावेश भी हो, तो जातक की स्त्री जरिणी हो अथवा वेश्या ही हो। सप्तमेश उच्चराशि में हो सप्तम घर में शुभग्रह हो, लग्नेश बलवान् हो तो स्त्री का सुख स्थायी होता है। सप्तमेश नीचराशि का शत्रु के घर में हो मूढावस्था में या पापदृष्ट हा सप्तमराशि पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। सप्तमेश ६।८।१२ स्थान में दुर्बल होकर स्थित हो तथा नीच का हो तो स्त्री की हानि होती है। सप्तमस्थान में चन्द्रमा हो और सप्तमेश १२वे में हो भार्या कारक बलहीन हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। स्त्रीभाव का स्वामी स्वयं पापग्रह हो पापग्रह की राशि में नीचराशि गत हो और पापग्रहों का सग हो नपुंसक ग्रह भी सप्तम भाव में हो उमकी नवाश दशा में दो स्त्रियां हो सप्तमस्थानमें मंगल और शुक्र भी हो शनि लग्नेश होकर अष्टमभाव में हो तो तीन स्त्रियां होती हैं। शुक्र द्विस्वभावराशि में हो और उस राशि का स्वामी उच्च का हो तथा स्त्रीभाव स्वामी बलवान् हो तो अनेक स्त्रियां होती हैं। दारेश (सप्तमेश) शुभ राशि में हो और शुक्र स्वर्गही या उच्च का हो, तो प्राय पाँचवे या नौवें वर्ष में विवाह होता है। सप्तमभाव में सूर्य हो और सप्तमेश शुक्रयुक्त हो तो सातवें या ग्यारहवें वर्ष में प्राय विवाह होता है। शुक्र द्वितीय भाव में हो सप्तमेश लाभ (११) में हो तो दसवें या सोलहवें वर्ष में प्राय विवाह होता है। शुक्र लग्न (केन्द्र) में हो और लग्नेश शनि की राशि में हो तो जातक का ११ वें वर्ष में विवाह होता है। चन्द्रमा से सातवें शुक्र हो और शुक्र से सातवें शनि हो तो अठारहवें वर्ष में विवाह होता है। द्वितीयेश लाभस्थान में हो तथा लग्नेश दशम में हो तो १५ वें वर्ष में विवाह होता है। द्वितीयेश लाभस्थान में हो और लाभेश द्वितीय में हो तो

१३वे वर्ष में विवाह होता है। आठवे स्थान से सातवे स्थान में शुक्र हो और उस स्थान की राशि के स्वामी के साथ मंगल हो तो २२ वे या २७ वे वर्ष में विवाह होता है। सप्तमभाव की नवाश राशि लग्न में हो, लग्नेश तथा सप्तमेश १२वे स्थान में हों तो २३वा २६वे वर्ष में विवाह होता है। आठवे भाव की नवाश राशि सप्तमभाव में हो और लग्न के नवाश में शुक्र हो तो २५ या ३३ वे वर्ष में विवाह होता है। भाग्यस्थान से नौवे स्थान में शुक्र हो उससे दूसरे स्थान में राहु हो तो ३१ से ३३वे वर्ष में विवाह होता है। भाग्यस्थान से सातवे स्थान में शुक्र हो और शुक्र से सातवे स्थान में सप्तमेश हो तो २७वे या ३०वे वर्ष में विवाह होता है। सप्तमेश नीचराशि में हो और शुक्र ६।८ भाव के स्वामी से युक्त हो तो १८ वे या ३३ वे वर्ष में विवाह होता है। शनिस्थान का स्वामी अष्टमभाव में हो और व्ययेश शनि की राशि में हो उसके १९ वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है। द्वितीय स्थान में राहु और सप्तम में मंगल हो तो विवाह होने के तीसरे दिन सर्प से मृत्यु होती है। आठवे स्थान में शुक्र हो और उसका स्वामी शनि की राशि में हो तो १२ वे या १९वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है। लग्नेश नीच राशि में हो तथा धनेश अष्टमभाव में हो तो १३ वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है। शुक्र से सातवे स्थान में चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवे में बुध हो और अष्टमेश पंचमभाव में हो तो पहला विवाह १०वे, दूसरा २२वे और तीसरा २३वे में होता है ॥१५१-१८८॥

### अष्टमभावफलम्

आयुःस्थानाधिपः पापैः सहैव यदि संस्थितः ॥ करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्रसंस्थितः ॥१८९॥  
एवं हि शनिना चिंता कार्या तर्कीर्विचक्षणोः ॥ कर्माधिपेन च तथा चिंतनं कार्यामायुषः ॥१९०॥  
छठे व्ययेऽपि छठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ॥ लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायुः प्रयच्छति ॥१९१॥  
स्वस्थाने स्वांशकेनापि मित्रेशे मित्रमंदिरे ॥ दीर्घायुषं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमयः पुनः ॥१९२॥  
लग्नाष्टमपकर्मेशमदाः केन्द्रत्रिकोणयोः ॥ तामे वा संस्थितास्तद्द्विशेषुर्वीर्घमायुषम् ॥ येषु यो बलव्यास्तस्यानुसारादायुरादिनेत् ॥१९३॥  
अष्टमाधिपतौ केंद्रे लग्नेशे बलवर्जिते ॥ विशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्विशिशतरमायुषम् ॥१९४॥  
रंघ्रेशे नीचराशिस्ये रंघ्रे पापग्रहैर्षुते ॥ लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति ध्रुवम् ॥१९५॥  
रंघ्रेशे पापसंयुक्ते रंघ्रे पापग्रहैर्षुते ॥ व्यये क्रूरग्रहैर्जति जातमात्रं मृतिर्भवेत् ॥१९६॥  
केन्द्रत्रिकोणपापस्थाः पठ्याष्टयु भगा यदि ॥ लग्ने रंघ्रेशे नीचस्ये जातः सद्योमृतो भवेत् ॥१९७॥  
पंचमे पापसंयुक्ते रंघ्रेशे पापसंयुते ॥ रंघ्रे पापग्रहैर्षुक्ते अल्पायुष्यः प्रजायते ॥१९८॥  
रंघ्रराशिस्ये चन्द्रे पापसंयुक्ते ॥ शुभदृष्टेन सफलं मासाते च मृतिर्भवेत् ॥१९९॥  
स्वोच्चराशिस्ये चंद्रे सामसंयुक्ते ॥ रंघ्रस्थानगते जीवे दीर्घायुष्यं न संशयः ॥२००॥

### अष्टम भावफल

अष्टमेश पापग्रही के तथा लग्नेश के साथ (अष्टमभाव में) हो तो जातक को अल्पायु करता है। इसी प्रकार चन्द्रमा तथा दशमभाव के स्वामी से भी आयु का विचार करना चाहिये। छठभाव का स्वामी छठे या शारहवे में हो और व्ययाधीश ६।८।१२ वे या लग्न में

यात्रा का फलाफल ये सब विचार सप्तमभाव तथा सप्तमाधिपति से भी करना चाहिये। शुभयोग हो तो शुभफल होगा, और पापयोग हो तो अशुभ फल होगा। सप्तमभाव में शुक्र हो तो जातक अतिकामी होता है। अन्यभाव में पापयुक्त हो तो स्त्री-मरण होता है। भायेश सौम्यग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो तथा पूर्ण बलवान् हो और अस्तगत नहीं हो तो भार्याका स्वामी भाग्यवान् गुणवान् दानी मानी तथा अनेक भोग का साधनवाला होता है। भार्या भवन का स्वामी ग्रह स्वग्रह, उच्च, वक्र आदि कारणों से बलवान् हो तो अनेक भार्या होती हैं। एव श्युराशि, नीच तथा अस्त हो तो भी अनेक भार्या होने पर भी जीवित नहीं रहती। शनि स्थित राशि का स्वामी शनि के साथ परमोच्च का हो तथा शुभग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो एक से अधिक स्त्रिया होती है। यह योग शुक्र से भी देखना। उपर्युक्त योग शनि राशि में सूर्य से हो तो स्त्री बन्ध्या होती है, और स्थियो की सख्या चन्द्रमा की राशि के अनुसार जानना। इसी प्रकार मंगल के योग से भी बन्ध्या-सग होता है और ऐसा योग बुध से हो तो वैश्या से योग हो, अथवा हीन जाति की स्त्री से एव वैश्य जाति की स्त्री से भी सम्बन्ध हो सकता है, विशेष क्या, वह पुरुष चरित्रहीनता में इतना गिर जाता है कि-गुरु की स्त्री तथा ब्राह्मणी या गर्भिणी-सग भी करता है और शनि, राहु, केतु से योग हो तो हीन जाति की प्राय रजोवती से सग हो। मंगल के योग से हीन जाति और सुस्तना से सयोग हो स्वयं जातक भी व्याधिग्रस्त होकर दुर्बल हो। बृहस्पति से उपर्युक्त योग हो तो 'दीर्घ' लम्ब, अतिस्थूल, वृत्तपोन-घनस्तनी' नारी से सग हो। पापग्रह ७।१२ में हो और क्षीण चन्द्रमा पचमभाव में हो ॥ ऐसे योग में हुआ जातक स्त्री के वश में रहता है और स्वजाति से विरोध करता है। सप्तम भाव में शनि मंगल और भावेश भी हो, तो जातक की स्त्री जारिणी हो अथवा वैश्या ही हो। सप्तमेश उच्चराशि में हो, सप्तम घर में शुभग्रह हो, लग्नेश बलवान् हो तो स्त्री का सुख स्थायी होता है। सप्तमेश नीचराशि का शत्रु के घर में हो मूढावस्था में वा पापदृष्ट हो सप्तमराशि पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। सप्तमेश ६।८।१२ स्थान में दुर्बल होकर स्थित हो तथा नीच का हो तो स्त्री की हानि होती है। सप्तमस्थान में चन्द्रमा हो और सप्तमेश १२वे में हो भार्या कारक बलहीन हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। स्त्रीभाव का स्वामी स्वयं पापग्रह हो पापग्रह की राशि में नीचराशि गत हो और पापग्रहों का सग हो, मपुसक ग्रह भी सप्तम भाव में हो उसकी नवाश दशा में दो स्त्रिया हो सप्तमस्थानमें मंगल और शुक्र भी हो, शनि लग्नेश होकर अष्टमभाव में हो तो तीन स्त्रिया होती है। शुक्र द्विस्वभावराशि में हो और उस राशि का स्वामी उच्च का हो तथा स्त्रीभाव स्वामी बलवान् हो तो अनेक स्त्रिया होती है। दारेश (सप्तमेश) शुभ राशि में हो और शुक्र स्वग्रही या उच्च का हो तो प्राय पाचवे या नौवे वर्ष में विवाह होता है। सप्तमभाव में सूर्य हो और सप्तमेश शुक्रयुक्त हो तो सातवे या ग्यारहवे वर्ष में प्राय विवाह होता है। शुक्र द्वितीय भाव में हो, सप्तमेश लाभ (११) में हो तो दशवे या सोलहवे वर्ष में प्राय विवाह होता है। शुक्र लग्न (केन्द्र) में हो और लग्नेश शनि की राशि में हो तो जातक का ११ वे वर्ष में विवाह होता है। चन्द्रमा से सातवे शुक्र हो और शुक्र से सातवे शनि हो तो अठारहवे वर्ष में विवाह होता है। द्वितीयेस लाभस्थान में हो तथा लग्नेश दशम में हो तो १५ वे वर्ष में विवाह होता है। द्वितीयेस लाभस्थान में हो और लाभेश द्वितीय में हो तो

१३वे वर्ष में विवाह होता है। आठवे स्थान से सातवे स्थान में शुक्र हो और उस स्थान की राशि के स्वामी के साथ मंगल हो तो २२ वे या २७ वे वर्ष में विवाह होता है। सप्तमभाव की नवाश राशि लग्न में हो, लग्नेश तथा सप्तमेश १२वे स्थान में होतो २३या २६वे वर्षमें विवाह होता है। आठवे भाव की नवाश राशि सप्तमभाव में हो और लग्न के नवाश में शुक्र हो तो २५ या ३३ वे वर्ष में विवाह होता है। भाग्यस्थान से नौवे स्थान में शुक्र हो उससे दूसरे स्थान में राहु हो तो ३१ से ३३वे वर्ष में विवाह होता है। भाग्यस्थान से सातवे स्थान में शुक्र हो और शुक्र से सातवे स्थान में सप्तमेश हो तो २७वे या ३०वे वर्ष में विवाह होता है। सप्तमेश नीचराशि में हो और शुक्र ६।८ भाव के स्वामी से युक्त हो तो १८ वे या ३३ वे वर्ष में विवाह होता है। शनिस्थान का स्वामी अष्टमभाव में हो और व्येश शनि की राशि में हो उसके १९ वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है। द्वितीय स्थान में राहु और सप्तम में मंगल हो तो विवाह होने के तीसरे दिन सर्प से मृत्यु होती है। आठवे स्थान में शुक्र हो और उसका स्वामी शनि की राशि में हो तो १२ वे या १९वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है। लग्नेश नीच राशि में हो तथा धनेश अष्टमभाव में हो तो १३ वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है। शुक्र से सातवे स्थान में चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवे में बुध हो और अष्टमेश पचमभाव में हो तो पहिला विवाह १०वे, दूसरा २२वे और तीसरा २३वे में होता है ॥१५१-१८८॥

### अष्टमभावफलम्

आयुश्चात्माधिपः पापे सहैव यदि सस्थित ॥ करोत्यल्पायुष जात लग्नेरोऽप्यत्रसस्थित ॥१८९॥  
एष हि शान्तिना चित्ता कार्या तर्कीर्विचक्षणो ॥ कर्माधिपेन च तथा चित्तन कार्यमायुष  
॥१९०॥ षष्ठे व्येऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ॥ लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायु  
प्रयच्छति ॥१९१॥ स्वस्थाने स्वाशवेनापि मित्रेशे मित्रमदिरे ॥ दीर्घायुष करोत्येव  
लग्नेरोऽष्टमप पुन ॥१९२॥ लग्नाष्टमपकर्म्मोशमदा केन्द्रत्रिकोणयो ॥ लाभे वा  
सस्थितास्तद्दृशेःपुर्दीर्घमायुषम् ॥ येषु यो बलवास्तस्थानुसारादापुरादिशेत् ॥१९३॥  
अष्टमाधिपतौ केद्रे लग्नेशे बलवर्जिते ॥ विशद्वर्षायुसौ जीवेद्द्वान्निशत्परमायुषम् ॥१९४॥  
रक्षेशे नीचराशिस्ये रक्षे पापग्रहैर्युते ॥ लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति द्रुवम् ॥१९५॥  
रक्षेशे पापसयुक्ते रक्षे पापग्रहैर्युते ॥ व्यये क्रूरग्रहैर्जति जातमात्र मृतिर्भवेत् ॥१९६॥  
केन्द्रत्रिकोणपापस्था षष्ठाष्टशु भगा यदि ॥ लग्ने रक्षेश नीचस्ये जात सद्योमृतो भवेत् ॥१९७॥  
पचमे पापसयुक्ते रक्षेशे पापसयुते ॥ रक्षे पापग्रहैर्युक्ते अल्पायुष्य प्रजायते ॥१९८॥ रक्षेशे  
रक्षराशिस्ये चन्द्रे पापसमन्विते ॥ शुभदृष्टेन सकल मासाते च मृतिर्भवेत् ॥१९९॥ लग्नेशे  
स्वोच्चराशिस्ये चद्रे लाभसमन्विते ॥ रक्षस्थानगते जीवे दीर्घायुष्य न सशय ॥२००॥

### अष्टम भावफल

अष्टमेश पापग्रहों के तथा लग्नेश के साथ (अष्टमभाव में) हो तो जातक को अल्पायु करता है। इसी प्रकार चन्द्रमा तथा दशमभाव के स्वामी से भी आयु का विचार करना चाहिये। षष्ठभाव का स्वामी छठे या बारहवें में हो और व्याधीश ६।८।१२ वे या लग्न में

ही तो दीर्घायु होता है। मित्रेश पंचमेश, पंचमभाव में अपने ही नवाश में हो तथा लग्नेश और अष्टमेश भी हो तो दीर्घायु होता है। लग्नेश, अष्टमेश तथा दशमेश और घनि केन्द्र, त्रिकोण या लाभस्थान में हो तो दीर्घायु होती है। इनमें जो बलवान् हो उसके अनुसार आयु बहे। अष्टमाधिपति केन्द्र में हो लग्नेश बलहीन हो तो ३० या ३२ वर्ष की परमायु होती है। अष्टमेश नीच राशि में हो, अष्टम भाव में पापग्रह हो और लग्नेश बलहीन हो तो अल्पायु होती है। अष्टमेश पापयुक्त हो, अष्टमभाव में पापग्रह हो तथा १२वें भी पापग्रह हो तो जन्मके बाद ही मृत्यु होती है। केन्द्र त्रिकोण में पापग्रह हो तथा छठे, आठवें शुभग्रह हो और अष्टमेश नीच का होकर लग्न में हो तो जन्म के बाद ही मृत्यु होती है। पंचमभाव पापग्रह युक्त हो और अष्टमेश पापग्रह युक्त हो तथा अष्टमभाव में पापग्रह युक्त हो तो अल्पायु होता है। अष्टमेश अष्टम में हो, चन्द्रमा पापयुक्त हो और शुभग्रह नहीं देखते हो तो एक महीने बाद मृत्यु होती है। और शुभग्रह देखते हो तो मृत्यु नहीं होती। लग्नेश उच्चराशि में हो चन्द्रमा लाभ में हो, आठवें स्थान में बृहस्पति हो तो दीर्घायु होती है ॥१८९-२००॥

### अथ नवमभावफलम्

भाग्याधिनायोऽपि च भाग्यकर्ता शुकोऽपि पापे सह चेत्त्रिषु स्यात् ॥ त्रिपदादिभावेषु च भाग्यहीन केन्द्रत्रिकोणोपगतोऽतिभाग्यम् ॥२०१॥ अनेन धर्म परिकल्पनीय पिता तु चित्तो निजमातुलस्य ॥ शुभे शुभस्थानगते शुभ स्याद्विपर्यये तत्र विपर्यय स्यात् ॥२०२॥ भाग्यस्थिते वाहनराशिसंस्थे शुके च जीवे शुभराशियुक्ते ॥ भाग्याधिने कोणचतुष्टये वा बहुत्वदेशाभरण च यानम् ॥२०३॥ भाग्यस्थानगते जीवे तदीशे वेद्रसस्थिते ॥ लग्नेशे बलसयुक्ते बहुभाग्याधिपो भवेत् ॥२०४॥ भाग्येशे बलसयुक्ते भाग्ये भृगुसमन्विते ॥ बलसत्केद्रगते जीवे पितृभाग्यसमन्वित ॥२०५॥ भाग्यस्थानाद्द्वितीये वा मुखे भौमसमन्विते ॥ भाग्येशे नीचराशिसंस्थे पिता निर्धन एव स ॥२०६॥ भाग्येशे परमोल्बस्थे भाग्याशे जीवायुते ॥ लग्नाच्चतुष्टये शुके पिता दीर्घायुरादिशेत् ॥२०७॥ भाग्येशे वेद्रभावस्थे गुरुणाघनिरीक्षिते ॥ तत्पिता वाहनैर्पुक्तो राजा वा तत्समो भवेत् ॥२०८॥ भाग्येशे धर्मभावस्थे च मीने भाग्यराशिने ॥ कर्मशास्त्रे धनादघञ्च कीर्तिमास्तत्पिता भवेत् ॥२०९॥ परमोल्बान्तो मूर्खे भाग्येशे लाभसंस्थिते ॥ धर्मिष्ठो नृपचात्तत्पितृपुण्यो भवेन्नर ॥२१०॥

### नवमं भावफलम्

भाग्यस्थान (नवम) का म्यामी भाग्य को बनातेवाना है तथा ग्रहों में शुभ भाग्यवर्ता है। यदि शुभ पापग्रहों के साथ ३।६।११ अथवा अष्टम में हो तो मनुष्य को भाग्यहीन करता है। और यदि केन्द्र या त्रिकोण १।४।७।१०।१५।९ में हो तो भाग्यशान्ती बनाता है। और हम नवमस्थान से धर्म का विचार करना और अपने मामा के पिता का विचार करना चाहिये। नवमभाव में शुभग्रह हो अथवा शुभ शुभस्थान में हो तो शुभ होता है। और इसके विपरीत अनुभूत जानना। शुभ और बृहस्पति इन दोनों ग्रहों में से एक या दोनों ही नवमस्थान में या चतुर्थस्थान में शुभग्रह तथा शुभराशि में युक्त हो और नवमेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो जमीन जायदाद, सम्पत्ति, मवारी आदि का मुम होता है। भाग्येश केन्द्र में हो और



भाग्यस्थान मे बृहस्पति हो एव लग्नेश बलवान हो तो जातक बड़ा भाग्यशाली होता है॥  
भाग्येश बलवान हो भाग्यस्थान मे शुक्र हो बलवान् गुरु केन्द्र मे हो तो पिता भी और आप  
भी भाग्यशाली होता है॥ भाग्यस्थान से द्वितीय या चतुर्थ स्थान मे मंगल हो तथा भाग्येश  
नीच राशि का हो तो पिता निर्धन ही होता है॥ भाग्येश परमोज्ज्व मे हो तथा भाग्यराशि के  
नवाश मे बृहस्पति हो तथा गुरु केन्द्र मे हो तो पिता दीर्घायु होता है॥ भाग्येश केन्द्रस्थान मे  
हो और बृहस्पति देखता हो तो जातक बाहनोसे युक्त राजा या राजा के समान होता है॥  
भाग्येश दशम मे हो और दशमेश भाग्यस्थान मे हो तो कर्मेश के प्रभाव स जातक का पिता  
धनी और यशस्वी होता है॥ सूर्य परमोज्ज्व मे हो तथा भाग्येश लाभस्थान मे हो तो पिता  
पुण्यात्मा राजमान्य होता है॥२०१-२१०॥

लग्नात्रिकोणगे सूर्ये भाग्येशे सप्तमस्थिते ॥ गुरुणा सहिते दृष्टे पितृभक्तिसमन्वित ॥२११॥  
भाग्येशे धनभावस्ये धनेशे भाग्यराशिगे ॥ द्वात्रिंशत्परतो भाग्य वाहन कीर्तिसमव ॥२१२॥  
लग्नेशे भाग्यराशिस्ये षष्ठेशे भाग्यराशिगे ॥ अन्योन्यवैर बुवते जनक कुत्सितो भवेत्  
॥२१३॥ कर्मजे रिपुरप्ररि फभवने जीवे च भिक्षाशन ॥ भाग्येशे यदि जन्मकालसमये  
प्राप्नोति दीक्षा रवि ॥२१४॥ कर्माधिपेन सहितो विक्रमेशो विधिबल ॥ नीचराशिबिमूढस्यो  
योगो भिक्षाशनात्प्रभु ॥२१५॥ षष्ठाष्टमव्यये भानू रध्नेशे भाग्यसयुते ॥ व्ययेशे लग्नाशिस्ये  
षष्ठाशपचमे स्थिते ॥२१६॥ जातस्य जननात्पूर्वं जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥ रध्नस्थानगते सूर्ये  
रध्नेशे भाग्यनायके ॥२१७॥ जातस्य प्रथमाब्दे तु पितुर्मरणमादिशेत् ॥ व्ययेशे भाग्यराशिस्ये  
नीचाशे भाग्यनायके ॥२१८॥

लग्न से त्रिकोण ५।९ मे सूर्य हो तथा भाग्येश सप्तमभाव मे हो और गुरुयुक्त या दृष्ट हो  
तो जातक पिता का भक्त होता है॥ भाग्येश धनभाव मे हो और धनेश भाग्यभाव मे हो तो  
३२ वर्ष की उम्र के बाद भाग्योदय होता है और वाहन तथा कीर्ति होती है॥ लग्नेश तथा  
षष्ठेश भाग्यस्थान मे हो तो पिता पुत्र का आपस मे वैर होता है और पिता दुष्टबुद्धि होता  
है॥ यदि दशम भाव मे बुध हो और जन्मलग्न मे भाग्येश सूर्य हो, ६।८।१२ स्थान मे गुरु हो  
तो भिक्षारी होता है॥ तृतीयभाव का स्वामी दशमेश के साथ नीचराशि और मूढ अवस्था मे  
हो तो भिक्षाटन करता हुआ भगवान् के भरोसे पर जीता है॥ सूर्य- ६।८।१२ भ हो, अष्टमेश  
भाग्यस्थान मे हो और व्ययेश लग्न के छठे पचमाश मे हो , तो जातक के जन्म के पहिले ही  
पिता की मृत्यु होती है। अष्टमभाव मे सूर्य हो तथा अष्टमेश और नवमेश एक ही हो (जैसे  
मिथुन लग्न मे शनि) तो जातक के पहिले वर्ष मे ही पिता की मृत्यु होती है॥ व्ययेश ही  
भाग्यस्थान मे हो, भाग्येश परमनीच का हो॥२११-२१८॥

तृतीये षोडशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥ लग्नेशे नाशराशिस्ये रध्नेशे भानुसयुते ॥२१९॥  
द्वितीये द्वादशे वर्षे पितुर्मरणमादिशेत् ॥ भाग्याद्दध्नगते राहौ भाग्याद्भाग्यगते रवौ ॥२२०॥  
षोडशेऽष्टादशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥ भाग्याद्दध्नगते राहौ भाग्याद्भाग्यगते रवौ  
॥२२१॥ राहुणा सहिते सूर्ये चद्राद्भाग्यगते शनौ॥सप्तमैकोनविंशत्तत्तस्य मरण

शुभम् ॥२२२॥ भाग्येशे व्ययराशित्ये व्ययेरो भाग्यराशिगे ॥ चतुश्रत्वारिवर्षाञ्च  
 पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२३॥ रव्यो च स्थिते चद्रे लग्नेरो रध्रसपुते ॥ पचत्रिशंकचत्वारि-  
 षत्सरे पितृनाशनम् ॥२२४॥ पितृस्थानाधिपे सूर्ये मदभौमसमन्विते ॥ पचाशद्वत्सरे प्राप्ते  
 जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२२५॥ भाग्यात्सप्तमगे सूर्ये भ्रातृसप्तमगास्तम ॥ षष्ठमे पचविशाब्दे  
 पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२६॥ रध्रजाभिन्नगे मदे मदाज्जाभिन्नगे रवौ ॥ त्रिशकविशे षड्विंशे  
 जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२२७॥

तो तीसरे या सोलहवे वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। लग्नेश अष्टमभाव मे हो, अष्टमेश के साथ मे सूर्य हो तो दूसरे या बारहवे वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। नवमस्थान से आठवे राहु और नौवे सूर्य हो तो सोलहवे या अठारहवे वर्षे मे पिता की मृत्यु हो। नवमभाव से आठवे राहु और नौवे सूर्य हो तथा राहु के साथ सूर्य हो और चन्द्रमा से नौवे शनि हो तो सातवे या १९ वे वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। भाग्येश व्ययभाव मे हो और व्ययेश भाग्यभाव मे हो तो २४ वे वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। चन्द्रमा सूर्यनवाश मे हो तथा लग्नेश आठवे भाव मे हो तो ३५ या ४१ वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। सूर्य दशमेश हो और शनि, मंगलयुक्त हो तो पचासवे वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। भाग्यभाव से सूर्य सप्तम मे हो तथा तीसरे भाव से सातवे राहु हो तो छठे या २५वे वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। आठवे भाव से सातवे शनि हो और शनि से सातवे सूर्य हो तो २१ या २६ अथवा ३० वे वर्षे मे पिता की मृत्यु हो ॥ ॥२१९-२२७॥

भाग्येशे नीचराशित्ये तदीशे भाग्यराशिगे ॥ षड्विंशगे त्रयस्त्रिंशे पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२८॥  
 रव्यशकस्थिते चद्रे लग्नेरो रध्रसपुते ॥ पचत्रिशकचत्वारिवत्सरे पितृनाशनम् ॥२२९॥  
 पितृस्थानाधिपे सूर्ये चन्द्रभौमसमन्विते ॥ पचाशद्वत्सरे प्राप्ते जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२३०॥  
 परमोच्चराशे शुके भाग्येशेन समन्विते ॥ भ्रातृस्थाने शनिपुते बहुभाग्याधिपे भवेत् ॥२३१॥  
 गुरुणा सपुते भाग्ये तदीशे केद्रराशिगे ॥ त्रिशद्वर्षत्पर चैव बहुभाग्य विनिर्दिशेत् ॥२३२॥  
 परमोच्चराशे सौम्ये भाग्येशे भाग्यराशिगे ॥ षट्त्रिंशाच्च पर चैव बहुभाग्य विनिर्दिशेत् ॥२३३॥  
 लग्नेरो भाग्यराशित्ये भाग्येशे लग्नसपुते ॥ गुरुणा सपुते छूने धनवाहनलाभकृत् ॥२३४॥  
 भाग्याद्भाग्यगतो राहुर्भाग्येशे निधन गते ॥ भाग्येशे नरराशित्ये भाग्यहीनो भवेन्नर ॥२३५॥  
 भाग्यस्थानगते मदे शशिना च समन्विते ॥ लग्नेरो नीचराशित्ये भिक्षाशी च नरो भवेत् ॥२३६॥

भाग्येश नीचराशि मे हो और उस राशि का स्वामी भाग्यराशि मे हो तो २९ या ३३ वे वर्षे मे पिता की मृत्यु हो। सूर्य के नवाश मे चन्द्रमा हो तथा लग्नेश आठवे भाव मे हो तो ३५ या ४१वे वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। सूर्य दशमेश हो और चन्द्र मंगलयुक्त हो तो ५० वे वर्षे मे पिता की मृत्यु होती है। शुक परमोच्च मे हो, भाग्येश युक्त हो, तृतीयभाव में शनि हो तो बहुत भाग्यवान् होता है। भाग्यस्थान मे गुरु हो, भाग्येश केन्द्र मे हो तो २० वर्ष के बाद भाग्योदय होता है। बुध परमोच्च मे हो, भाग्येश भाग्यराशि (स्वगृही) हो तो ३६ वे वर्षे मे पूर्ण भाग्योदय होता है। लग्नेश भाग्यराशि मे और भाग्येश लग्न मे तथा गुरु सप्तम मे हो तो

घन और सवारी का लाभ होता है। भाग्यस्थान में नीचे राहु हो और भाग्यराशि स्वामी पुरुषराशि में अष्टमभाव में हो तथा लग्नेश नीचे राशि में हो तो जातक का जीवन भिक्षा पर ही व्यतीत होता है। २२८-२३६।

### अथ दशमभावफलम्

कर्माधिपो बलोनश्रेत्कर्मवैकल्यमादिशेत् ॥ सिंह केन्द्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादिदागकृत् ॥२३७॥ अत्रायुषश्चित्तं च कार्यं स्यात्कर्मपास्तथा ॥ शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा षष्ठाष्टमगृहं तथा ॥२३८॥ दशमे पापसयुक्ते लाभे पापसमन्विते ॥ दुष्कृति लभते मर्त्यं स्वजनानां विदूषक ॥२३९॥ कर्मेश नाशराशिस्थे कर्मेश राहुसयुते ॥ जनद्वेषी महामूर्खो दुष्कृति लभते नर ॥ कर्मेशोन्नराशिस्थे मदभौमसमन्विते ॥२४०॥ द्यूनेशे पापसयुक्ते शिशुनोदरपरायण ॥ तुंगराशि समाश्रित्य कर्मेशे गुरुसयुते ॥२४१॥ भाग्येशे कर्मराशिस्थे मानैर्भ्रयप्रतापवान् ॥ लाभेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे लग्नसयुते ॥ तावुभौ केद्रणौ वापि सुखजीवनभाग् भवेत् ॥२४२॥ कर्मेशे बलसयुक्ते मौनेगुरुसमन्विते ॥ बस्त्राभरणसौख्यादि लभते मात्र संशय ॥२४३॥ लाभस्थानगते सूर्ये राहुभौमसमन्विते ॥ रविपुत्रेण सयुक्ते कर्मच्छेत्ता भवेन्नर ॥२४४॥ मौने च राहौ यदि चोच्चकाशे भागीरथीज्ञानफल लभेन्नर ॥२४५॥ माने च मौने यदि वार्कपुत्रे सन्यासयोग प्रवदति तस्य ॥२४६॥ मौने जीवे भृगुयुते लग्नेशे बलसयुते ॥ स्वोच्चराशिगते चन्द्रे सम्यग्ज्ञानार्थवान् भवेत् ॥२४७॥ कर्मेशे लाभराशिस्थे लाभेशे लग्नसन्विते ॥ कर्मराशिस्थिते शुके रत्नवान् स नरो भवेत् ॥२४८॥ केन्द्रत्रिकोणगे कर्मनाथे स्वोच्चसमाश्रिते ॥ गुरुणा सहिते दृष्टे स कर्मसहितो भवेत् ॥२४९॥ कर्मेशे लग्नभावस्थे लग्नेशेन समन्विते ॥ केन्द्रत्रिकोणगे चन्द्रे सत्कर्मनिरतो भवेत् ॥२५०॥ कर्मस्थानगते भदे नीचलेखरसयुते ॥ कर्मेशे पापसयुक्ते कर्महीनो भवेन्नर ॥२५१॥ कर्मेशे घागराशिस्थे लग्नेशे कर्मसन्विते ॥ पापग्रहेण सयुक्ते दुष्कर्मनिरतो भवेत् ॥२५२॥ कर्मेशे नीचराशिस्थे कर्मस्थे पापलेखरे ॥ कर्मभात्कर्मगे पापे कर्मवैकल्यमादिशेत् ॥२५३॥ कर्मस्थानगते चन्द्रे तद्वेशे तत्रिकोणगे ॥ लग्नेशे केन्द्रभावस्थे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ॥२५४॥ लाभेशे कर्मभावस्थे कर्मेशे बलसयुते ॥ देवेंद्रगुरुणा दृष्टे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ॥२५५॥ कर्मस्थानाधिपे भाग्ये लग्नेशे कर्मसयुते ॥ लग्नात्यचमगे चन्द्रे स्यात्कीर्ती विनिर्दिशेत् ॥२५६॥

### दशमभाव फल

दशमेश बलहीन हो तो कर्म (क्रियाशक्ति) में विकलता होती है। सूर्य केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'ज्योतिष्टोम' आदि यज्ञ करनेवाला होता है। इस दशमस्थानसे आयुका विचार तथा भले बुरे कर्मों का विचार करना चाहिये। कर्मेश के लिये शत्रुराशि और नीचराशि का त्याग तथा ६।८ भाव का त्याग उत्तम होता है। दशमभाव पापराशियुक्त हो और लाभस्थान में भी पापग्रह हो तो जातक कर्महीन होता है और स्वजनो का निन्दक होता है। दशमेश अष्टमभात्र में हो और राहु साथ में हो तो जनद्वेषी, महामूर्ख और दुर्गतियुक्त होता है। दशमेश सातवे स्थान में हो, शनि भगल युक्त हो और सप्तमेश पापग्रह युक्त हो तो जातक केवल कामी, भोगासक्त और पैट भरना ही परम पुरुषार्थ जानता है। दशमेश उच्च में तथा

वृहस्पति युक्त हो और भाग्येश दशम मे हो तो प्रतिष्ठा ऐश्वर्य और प्रतापवाला होता है। लाभेश दशमभाव मे हो और दशमेश लग्न मे हो अथवा ये दोनों केन्द्र मे हो तो जीवन सुखमय होता है। दशमेश बलवान् होकर मीनराशि मे बृहस्पतियुक्त हो तो उत्तमवस्त्र, आभूषण आदि प्राप्त होता है। लाभस्थान मे सूर्य, मंगल, शनि, राहु हो तो जातक कर्मबन्धन का करनेवाला होता है। राहु यदि मीन राशि मे अपने उच्चांग पर हो तो मनुष्य को भागीरथी गंगास्नान का सुयोग प्राप्त होता है। शनि यदि मीनराशि का होकर दशमभाव मे स्थित हो तो सन्धास ग्रहण करता है। मीनराशि मे स्थित गुरु, शुक से युक्त हो, लग्नेश बलवान् हो और चन्द्रमा उच्च राशि का हो तो ज्ञानी, धनी, मानी होता है। दशमेश लाभराशि मे हो, लाभेश लग्न मे हो, दशमभाव मे शुक हो तो जातक रत्नवाला (जौहरी) होता है और दशमेश केन्द्र या त्रिकोण स्थान मे उच्च राशि मे हो और गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्य कर्मयोगी होता है। दशमेश लग्नेश के साथ लग्न मे हो और चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो श्रेष्ठकर्मरत रहता है। दशमभाव मे शनि नीचराशिगत बृह युक्त हो और दशमराशि के नवाश मे भी पापग्रह हो तो मनुष्य कर्महीन होता है। दशमेश अपने नवाश मे हो, अष्टमेश दशमभाव मे हो और पापग्रह से युक्त हो तो जातक दुर्जर्म निरत रहता है। दशमेश नीचराशि मे हो और दशमभाव मे पापग्रह हो तथा दशमभाव से दशमभाव मे (अर्थात् लग्न से सप्तम मे) पापग्रह हो तो जातक का कोई काम पूरा नहीं होता। दशमभाव मे चन्द्रमा हो दशमेश चन्द्रमा से त्रिकोण ९।५ मे हो लग्नेश दशम मे हो तो श्रेष्ठ कीर्तिवाला होता है। लाभेश दशमभाव मे हो और दशमेश बलवान् हो गुरु की दृष्टि हो तो सुयशवाला होता है। दशमेश नवम मे हो लग्नेश दशमभाव मे हो लग्न से पचमभाव मे चन्द्रमा हो तो जातक सत्कीर्ति से विख्यात होता है ॥२३७-२५६॥

### अथैकादशभावफलम्

लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत्केन्द्रत्रिकोणयो ॥ बहुलाभतदा कुर्यादुच्चसूर्याशगोऽपि वा ॥२५७॥  
लाभेशे धनराशिस्थे धनेशे केद्रसस्थिते ॥ गुरुणा सहिते भावे गुरुलाभ विनिर्दिशेत् ॥२५८॥  
पट्त्रिंशे वस्त्रे प्राप्ते सहस्रद्वयनिष्कभाक् ॥ केद्रत्रिकोणने भावेनाथे शुभसमन्विते ॥ चत्वारिंशे तु संप्राप्ते सहस्राधं च निष्कभाक् ॥२५९॥ लाभस्थाने गुरुयुते धने चद्रसमन्विते ॥ भाग्यस्थानगते शुके पट्सहस्राधिपो भवेत् ॥२६०॥ लाभोच्च लाभो जीवे गुरुचद्रेण रायुते ॥ धनधाम्याधिप श्रीमान्गुत्नाद्याभरणैर्युत ॥२६१॥ लाभेशे लग्नभावस्थे लग्नेशे लाभसयुते ॥ त्रयस्त्रिंशे तु संप्राप्ते सहस्रनिष्कभागभवेत् ॥२६२॥ धनेशे लाभराशिस्थे तदीशे धनराशिगे ॥ विवाहात्परतश्चैव बहुभाग्य समादिशेत् ॥२६३॥ धर्षेशे लाभराशिस्थे लाभेशे भ्रातृसस्थिते ॥ भ्रातृभावाद्द्वनप्राप्तिर्दिव्याभरणसयुत ॥२६४॥ लाभे पापे च व्यये पापयुक्ते दृष्टे पापे क्षेत्रयुक्तेन युक्ते ॥ लाभाल्कामे लाभविष्टे निरर्थं सौम्यार्थं यो वीक्षण विघ्ननाश ॥२६५॥

### एकादशभाव फल

लाभेश लाभ मे हो अथवा केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो बहुत लाभ कारक होता है। उच्चराशि का और सिंह नवाश मे और भी श्रेष्ठ है। लाभेश द्वितीय मे हो तथा द्वितीय

द्वे मे हो और गुरु से युक्त हो तो अच्छा बड़ा लाभ होता है। और छत्तीसवे वर्ष में दो हजार क्रमुद्रा (प्राचीन मुद्रा सुवर्ण की के हिसाब से तो बहुत होता है) का लाभ होता है। भेष केन्द्र या त्रिकोण में शुभग्रह युक्त हो तो चालीसवे वर्ष में ५०० निष्क प्राप्त होता है। भस्मान में गुरु हो, द्वितीय में चन्द्रमा हो भाग्यस्थान में शुक्र हो तो छ हजार निष्कमुद्रा धनी होता है। लाभस्थानमें गुरु हो, बलवान् चन्द्रमासे युक्त हो तो जातक धनधान्ययुक्त न-भूषणवाला होता है। लाभेश लग्न में और लक्षेश लाभ में हो तो ३३ वे वर्ष में एक हार निष्क की प्राप्ति होती है। धनेश लाभ में और लाभेश धन में हो तो विवाह के बाद ही लग्नशाली होता है। तीसरे भाव का स्वामी लाभस्थान में हो और लाभेश तृतीय में हो तो जाता से श्रेष्ठ वस्त्राभरणादि प्राप्त होते हैं। लाभस्थान में और व्यवभाव में पापग्रह हो या ष्टि हो तथा ग्रह स्वगृही होकर युक्त या द्रष्टा हो और लाभ से सप्तमभाव पर भी पापदृष्टि युक्त हो तो लाभ में विघ्न होता है और सौम्यदृष्टि हो तो विघ्नोका नाश होता है। २५७-२६५॥

### अथ व्यवभावफलम्

चन्द्रो व्ययाधिपो धर्मलाभमन्त्रेषु सन्वित् ॥ स्वोच्चस्वर्क्षनिजाशे वा लाभधर्मात्मजाशके ॥ दिव्या गाराविपर्ययो दिव्यगद्यैकभोगवान् ॥ २६६॥ परार्थ्यरमणो दिव्यवस्त्रमाल्याविभूषण ॥ परार्थ्यसयुतो वित्तो दिनानि नयति प्रभु ॥ २६७॥ एव स्वशत्रुनीचाशे अष्टाशे वाष्टमे रिषी ॥ सन्वित् कुपते जात कातामुख विवर्जितम् ॥ २६८॥ व्ययाधिक्यपरिकृतात् दिव्यभोगनिराकृतम् ॥ सहि केद्रत्रिकोणस्थ स्वस्त्रियालकृत स्वयम् ॥ २६९॥ एव भ्रात्रादिभावेपु तत्तत्तर्ब विचारयेत् ॥ लग्नस्य पूर्वार्द्धे १०।११।१२।१३। गता नभोगा फल प्रदद्युस्त्वपरोक्षक ते ॥ परार्द्धे ४।५।६।७।८।९। षट्कोपगता परोक्ष फल वदतीति बुधा पुराणा ॥ २७०॥ व्ययस्थानगतो राहुर्भाभार्करविसयुत ॥ तदीशेनार्कसयुक्ते नरके पतन भवेत् ॥ २७१॥ व्ययस्थानगते सौम्ये तदीशे स्वोच्चराशिगे ॥ शुभायुक्ते शुभैर्दृष्टे परोक्ष स्थात्र सशय ॥ २७२॥ व्ययेशे पापसयुक्ते व्यये पापसमन्विते ॥ पापग्रहेण सद्रष्टे देशादेशातर गत ॥ २७३॥ व्ययेशे शुभराशित्वे व्ययसं शुभसयुक्ते ॥ शुभग्रहेण सद्रष्टे स्वदेशात्सचरो भवेत् ॥ २७४॥ व्यये मदादिसयुक्ते भूमिजेन समन्विते ॥ शुभदृष्टैश्च संप्राप्ति पापमूलाद्जनार्जनम् ॥ २७५॥ लग्नेशे व्ययराशित्वे व्ययेशे लग्नसयुक्ते ॥ मृगुपुत्रेण सयुक्ते धर्ममूलाद्जनव्ययम् ॥ २७६॥ अग्ने जात रविर्हन्ति पृष्टे जात शनैश्चर ॥ अग्रज पृष्ठज हति सहजस्यो धरामुत ॥ २७७॥ पत्नीस्थाने यदा राहु पापमुग्मेन वीक्षित ॥ पत्नी योगस्थिता तस्य भूतापि त्रियतेऽचिरात् ॥ २७८॥ षष्ठे च भवने मौम सप्तमे राहुसम्भव ॥ अष्टमे च यदा सौरिस्तस्य भार्या न जीवति ॥ २७९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे द्वादशमांशविचारकथन नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४॥

### व्ययभावफल

व्ययभाव का स्वामी होकर चन्द्रमा ५।९।११ में स्थित हो और अपनी राशि या नवाग या उच्च का हो अथवा ५।९।११ वे नवाग में हो तो अति सुन्दर भवान तथा अति सुन्दर भोग

विभूति वाला होता है। उच्च भर उत्तम भोग भोगता है। और यदि वही चन्द्रमा मन्थुराणि में नीच अण वाला होकर ६।८ भाव में हो तो स्त्रीमुख से रहित करता है और अधिक खर्च से दुःखी तथा अच्छे पदार्थों से रहित रहता है। और वह चन्द्रमा निर्बल होकर भी केन्द्र या त्रिकोण भावों में हो तो अपनी स्त्री का सुख रहता है। इसी प्रकार भ्राता, आदि के लिए उनके भाव से व्ययेश या चन्द्रमा से उपर्युक्त योगानुसार विचार करना चाहिये। लग्न के पूर्वार्द्ध भाग (१।२।३।१०।११।१२) में स्थित ग्रह प्रत्यक्ष फल देते हैं। और लग्न के परार्द्ध भाग में स्थित ग्रह परोक्ष फल देते हैं (परार्द्धभाग की 'षट्कोप' सजा है) यह प्राचीन आचार्यों का कथन है। व्ययस्थान में स्थित राहु सूर्य, मंगल, शनि युक्त हो अथवा व्ययेश सूर्य युक्त हो तो (कुर्म के फल से) नरक में वास होता है। व्ययस्थान में बुध हो और उसका स्वामी उच्च राशि में हो शुभग्रह युक्त और शुभदृष्ट हो तो यज्ञ, दान, धर्म आदि परोक्ष फलप्रद कर्म में व्यय होता है। व्यय स्थान और स्वामी पाप ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो देश देशान्तरो में भ्रमण करता है। (एक स्थान पर जम कर नहीं रह सकता) व्ययेश शुभ राशि में हो, व्ययभाव में शुभ ग्रह युक्त हो या शुभग्रह देखते हो तो अपने देश में ही सचरण (यातायात) करता रहता है। व्ययभाव में शनि मंगल आदि हो परन्तु शुभग्रहों की दृष्टि हो तो पापजनक कार्यों से घनार्जन होता है। लग्नेश ग्रह व्ययभाव में हो और व्ययेश लग्न में हो और शुक्र युक्त हो तो धर्म कार्यों में धन का खर्च होता है। (यह अगला श्लोक तीसरे भावफल में होना चाहिये) तीसरे भाव में रावि हो तो अपने जन्म के बाद जन्म लेनेवाले भाइयों को मारता है। और शनैश्चर अपने से पहिले जन्म लेनेवालों को मारता है। और मंगल यदि तीसरे भाव में स्थित हो तो बड़े छोटे सभी भाइयों को मारता है। भार्यास्थान में जब राहु हो और दो पापग्रहों से दृष्ट हो तो उस जातक के प्रथम तो पत्नी ही नहीं, और हो भी तो जल्दी ही मृत्यु को प्राप्त होती है। छठे भाव में मंगल, सप्तम में राहु और अष्टम भाव में शनि हो तो उसकी स्त्री जीवनलाभ नहीं कर सकती। (इन २ श्लोकोंका सम्बन्ध सप्तम भावफलसे है) बारहों भावों का फल समाप्त ॥ २६६-२७९ ॥

इति श्री बृ०पा०हो०शा०पू०भा०प्र० द्वादशभावविचारकथन नामचतुर्विंशोऽध्यायः ॥१४॥

सैत्रेय उवाच-

परजात कथ ज्ञेय कथ ज्ञेय शुभाशुभम् ॥ एतत्सर्वं समाचक्ष्व ग्रहराशिफल शुभम् ॥१॥  
 पराशर उवाच-तुर्यचन्द्रेक्षितः शेटः शत्रुभिर्वा युतेक्षित ॥ परेण जायते बालो निश्चितं च यथा पशुः ॥२॥ त्रिपण्डितमुत्ताधीशो यदा लग्ने स्थितस्तदा ॥ तथापि परजातः स्याद्भृत्याद्यन्यमुतादिभिः ॥३॥ लग्ने क्रूरोऽस्तगः सौम्य कर्मस्थो रविनन्दनः ॥ अस्मिन्योगे च यो जातो जायते घर्णसकरः ॥४॥ मूर्तो चेन्बुध बुध्रिष्ये भूमिनदनभार्गवी ॥ यदा पंचदशवर्षे तदापि परबालकः ॥५॥ ग्रहराजे स्थिते लग्ने चतुर्थे सिहिकामुतः ॥ स्वदेवरात्सुतोत्पत्तिर्जाता तस्या न सशयः ॥६॥ लग्ने राहुधरापुत्री सप्तमे चंद्रभास्करौ ॥ नौत्वेन जायते बालो यदि राज्ञी भवेदपि ॥७॥ सूर्ययुक्तेदुलग्रस्थे सप्तमे भौमभास्करौ ॥ अस्मिन्योगे यदा जन्म परेणैव हि जायते ॥ केद्र शून्य भवेद्यस्य सोऽपि जातः परेणहि ॥८॥ द्विपण्डाष्टनरिः केपु यहास्तिपठति यस्य स ॥ परजातो भवेत्सत्यमन्वप्रापि च सस्थितः ॥९॥ एकस्थाने यदाऽस्तेशालग्रेषु सोऽपि जारजः

॥१०॥ जीवो निशाकरं लग्नं नेत्रेतापि स जारजः ॥ जीववर्गविहीनांशे तदा योगः पराजने  
 ॥११॥ द्विशत्रू चक्रकेन्द्रस्थावन्यग्रहविजितौ ॥ तदापि परजातः स्यात्स्थिरलग्ने विरोधतः  
 ॥१२॥ चतुर्थे दशमे लग्ने पापयुग्ं विधुसंस्थितः ॥ लग्नेशेनेक्षितं लग्नं तदापि परवालकः ॥१३॥  
 लग्नेशे सस्थिते लग्ने परजातः कदाचन ॥ भगोऽयं सर्वयोगानामिति ते कथितं  
 मया ॥१४॥

### परजातयोगफल

मैत्रेय बोले-परजात (दूसरे के सयोग से जन्म होना) को किन योगों से जाने? और उसका शुभाशुभ फल कैसे जाने? ग्रह और भाव के फल सब कथन करिये।

पराशरजी ने कहा-चतुर्थ भावस्थ चन्द्र से दृष्ट और शत्रुग्रह से युक्त या दृष्ट तो बालक निश्चय परजात है। ३।६।२।५ इन स्थानों का कोई भी स्वामी लग्न में हो तो भी उपर्युक्त योग में परजात है और यह गर्भाधान नौकर आदि से हुआ है। लग्न में पापग्रह, सातवें भाव में अस्त बुध, दशम में शनि इस योग में हुआ बालक वर्णसकर है। लग्न में चन्द्रमा, तीसरे मंगल, शुक्र हो तो पन्द्रह आवरण में भी परवालक है। लग्न में शनि या सूर्य चतुर्थ भाव में राहु हो तो अपने देवर से सन्तान की उत्पत्ति हुई है। लग्न में राहु, मंगल हो, सप्तम में सूर्य चन्द्रमा हो तो रानी होने पर भी नीच जाति से बालक हुआ है। लग्न में सूर्य, चन्द्रमा हो, सप्तम में मंगल सूर्य हो इस योग में जन्म लेने वाला दूसरे से ही होता है। केन्द्रस्थान शून्य हो तो भी पर से ही जन्म है। २।६।८।१२ इन स्थानों में अधिक तर ग्रह हो तो परजात है। अन्य स्थान में १-२ ग्रह हो तो भी परजात है। लग्नेश और सप्तमेश दोनों एक स्थान में हो तो परजात होता है। बृहस्पति यदि चन्द्रमा या लग्न को नहीं देखता हो तो भी जारज है। षड् वर्ग में बृहस्पति का अणु न हो तो जारज है। दो शत्रुग्रह किसी एक केन्द्र स्थान में हो और अन्य ग्रह न हो तो भी परजात है, स्थिर लग्न में विशेष करके योग बलवान् है। चतुर्थ, दशम तथा लग्न में पापग्रह सहित चन्द्रमा हो और लग्नेश से लग्न दृष्ट हो तो भी परजात है। लग्नेश लग्न में हो तो परजात कभी ही होता है। यह परजातभग सब कथित योगों का भजक है। सो मत्र तुमको कहा गया है ॥१-१४॥

### अथ लग्नेशद्वादशभावस्थितफलमाह

लग्नेशे लग्ने पुंसः स्वदेहस्वभुजाकामी ॥ मनस्वी चातिचांचल्यो द्विभार्यः परगोपि वा ॥१५॥  
 लग्नेशे धनगे लाभे सलाभः पीडितो नरः ॥ सुशीलो धर्मविन्मानी बहुदारणुर्धुतः ॥१६॥  
 लग्नेशे सहजे षष्ठे सिंहतुल्यपराक्रमी ॥ सर्वसम्पद्युतो धानी द्विभार्यो मतिमान्शुखी ॥१७॥  
 लग्नेशे दशमें तुर्यं पितृमातृमुखान्वितः ॥ बहुभ्रतृपुतः कानो गुणसौंदर्यसद्युतः ॥१८॥ लग्नेशे  
 पञ्चमे मानो सुतसौख्यं च मध्यमम् ॥ प्रयमापत्यनाशः स्यात्कीर्षी राजप्रवेशकः ॥१९॥ लग्नेशः  
 सप्तमे यस्य भार्या तस्य न जीवति ॥ विरक्तो वा प्रवासी वा दरिद्रो वा नृपोपि वा ॥२०॥  
 लग्नेशे अथगोष्ठस्थे सिद्धविद्याविशारदः ॥ शूरी चौरौ महाशोधी परनार्यतिभोगकृत् ॥२१॥  
 लग्नेशे नवमे पुंसो भाग्यवान् जनबल्लभः ॥ विष्णुभक्तः पटुर्वाग्मी पुत्रदारधनैर्धुतः ॥२२॥

### लग्नेशद्वादशभावफल

लग्नेश जिसके लग्न में हो वह अपनी कमाई करनेवाला, मनस्वी, चञ्चल, दो स्त्री वाला होता है। लग्नेश दूसरेभाव में हो तो लाभ करनेवाला, पीडा भोगनेवाला, सुशील, धर्मात्मा, मानी तथा स्त्रीभावप्रधान होता है। लग्नेश के तीसरे भाव में होने से तथा छठे भाव में होने से सिंह के समान पराक्रमी, सर्वगुणसम्पन्न, मतिमान्, सुखी, मानी, दो स्त्रियोवाला होता है। लग्नेश जिसके चौथे या दशम भाव में हो—वह माता पिता का सुखवाला, भाइयों में युक्त, कामी, सुन्दर, गुणी होता है। लग्नेश पञ्चम में हो तो मानी तथा कम सन्तानवाला, दूसरी स्त्री तथा क्रोधी और राजकार्य में निपुण होता है। लग्नेश सप्तम भाव में हो तो स्त्री सुख से वंचित, विरक्त, प्रवासी, दरिद्र या राजा होता है। लग्नेश बारहवें या आठवें हो तो अनेक विद्यायुक्त, जुवारी, चोर, क्रोधी, परदारगामी होता है। लग्नेश नौवें हो तो भाग्यवान्, सबका प्रेमी, विष्णुभक्त, चतुर, वाचाल, स्त्री-पुत्र-धनयुक्त होता है ॥१५-२२॥

### अथ धनेशद्वादशभावस्थितफलमाह

धनेशे धनमे सोऽथ धनवान् गर्वसयुतः ॥ भायद्वयं त्रयं चापि सुतहीनं प्रजायते ॥२३॥ धनेशे सहजे तुर्ये विक्रमी मतिमान् गुणी ॥ परदाराभिगामी च लोभी वा देवनिन्दकः ॥२४॥ धनेशे रिपुणे शत्रोर्धनं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ शत्रुतो वितनाशः स्याद्गुदे चोर्वाभवेच्च रुक् ॥२५॥ धनेशे सप्तमे वैद्यं परजायाभिगामिकं ॥ जाया तस्य भयेद्वेश्या मातापि व्यभिवारिणी ॥२६॥ धनेशे मृत्युगेहस्थे भूमिद्रव्यं लभेद्भ्रुवम् ॥ जायासौख्यं भवेत्स्वल्पं ज्येष्ठभ्रातृमुखं न हि ॥२७॥ धनेशे नवमे लाभे धनवानुद्यमी पटुः ॥ बाल्यरोगी सुखी पञ्चाष्टावदायुः समाप्यते ॥२८॥ धनेशे दशमे यस्य कामी मानी च पण्डितः ॥ बहुदारधनैर्युक्तः सुतहीनोपि जायते ॥२९॥ धनेशे व्ययगे मानी साहसी धनवर्जितः ॥ जीविका नृपगेहाच्च ज्येष्ठपुत्रमुखं न हि ॥३०॥ धनेशे च तनी पुत्री स्वकुटुम्बस्य कटकः ॥ धनवाग्निष्टुरः कामी परकार्येषु तत्परः ॥३१॥

### धनेश द्वादशभाव फल

धनेश (द्वितीयेन) द्वितीय में हो तो धनवान्, अभिमानी हो, स्त्री दो या तीन तथा पुत्रहीन होता है। धनेश तीसरे या चौथे भाव में हो तो विक्रमी, बुद्धिमान्, गुणी, परस्त्रीगामी, लोभी, देवनिन्दक होता है। धनेश छठे भाव में हो तो शत्रु का धन प्राप्त होता है तथा बाद में शत्रु के कारण ही मृत होता है तथा जाय की बीमारी होती है। धनेश सप्तम में हो वैद्य, परस्त्रीसेवी तथा स्त्री और माता व्यभिवारिणी होती है। धनेश अष्टम में हो तो भूमि में गड्डा हुआ धन प्राप्त होता है, स्त्रीमुख कम तथा बड़े भाई का सुख नहीं होता। धनेश नौवें या लाभ में हो धनवान्, उद्यमी, चतुर, भोगी, बाल्य अवस्था का रोगी बाद में सदा सुखी रहता है। धनेश दशवें हो तो कामी, मानी, पण्डित, अनेक स्त्रीवाला, धनी तथा सन्तान हीन होता है। धनेश व्ययभाव में हो तो मानी, साहसी, दरिद्र तथा राजसेवी होता है और ज्येष्ठ पुत्र नहीं रहता। धनेश लग्न में हो तो पुत्रवाला, अपने कुटुम्ब का द्रोही, धनवान् निष्टुर, कामी तथा औरों के काम में सहायक होता है ॥२३-३१॥



### अथ तृतीयेशद्वादशभावस्थितफलमाह

तृतीयेशे तृतीयस्थे विक्रमी सुतसयुतः ॥ धनयुक्तो महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम् ॥३२॥  
 तृतीयेशे सुखे कर्म पंचमे वा सुखी सदा ॥ अतिक्रूरा भवेद्भार्या घनाढ्यो मतिमान्भवेत् ॥३३॥  
 तृतीयेशो रिपी यस्य भ्राता शत्रुर्महाधनी ॥ मातुलानां सुखं न त्यान्मातुल्या भोगमिच्छति  
 ॥३४॥ तृतीयेशे व्यये भाग्ये स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत् ॥ पिता तस्य महाचोरः सुखेपि  
 दुःखदर्शकः ॥३५॥ तृतीयेशेऽष्टमे छूने राजद्वारे मृतिर्भवेत् ॥ चौरो वा परिगामी वा बाल्ये  
 कष्टं दिने दिने ॥३६॥ तृतीयेशे तनीं लाभे स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥ मूर्खं शूशो महारोगी  
 साहसी परसेवकः ॥३७॥ गुदाभंजनिकः स्थूलः परभार्याधने र्विचिः ॥ स्वत्पारमी सुखी न  
 स्यात्तृतीयेशे धने गते ॥३८॥

#### तृतीयेश द्वादशभावफल

तृतीयेश तृतीय मे हो तो विक्रमी सन्तान, सुखवाला, धनी और सुखी, सदा प्रसन्न रहनेवाला होता है ॥ तृतीयेश चौथे भाव मे दशवे या पंचम मे हो तो सदा सुखी, मतिमान्, धनी किन्तु स्त्री क्रूर स्वभाववाली होती है ॥ तृतीयेश छठे भाव मे हो तो महाधनी पर उसका भ्राता द्रोही तथा मामा न रहे पर मामी से आसक्त रहे ॥ तृतीये नवम तथा व्यय मे हो तो स्त्री से भाग्योदय हो और पिता महाचोर हो, सुख मे भी कलह करे ॥ तृतीयेश सातवे आठवे मे हो तो राजकार्य मे मृत्यु हो, चोर और परगामी तथा सदरोगी रहता है ॥ तृतीयेश लक्ष मे या लाभ मे हो तो स्वयं कमाई करनेवाला, दुर्बल, मूर्ख, रोगी, साहसी, परसेवी होता है ॥ तृतीयेश धनस्थान मे हो तो गुदगामी, स्थूलशरीर, अन्य स्त्री के धन वा लालची, कम काम करनेवाला तथा दुःखी होता है ॥३२-३८॥

### अथ चतुर्थेशद्वादशभावस्थितफलमाह

चतुर्थेशे चतुर्थे मन्त्री भवेत्सर्वधनाधिपः ॥ चतुरः शीलवान् मानी घनाढ्यः स्त्रीप्रियः सुखी  
 ॥३९॥ चतुर्थे पंचमे भाग्ये सुखी सर्वजनप्रियः ॥ विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान्  
 ॥४०॥ सुखेशे शत्रुगेहस्ते तदा स्याद्बहुपातुकः ॥ क्रोधी चौरोऽभिचारी च दुष्टचित्तो  
 मनस्व्यपि ॥४१॥ सुखेशे सप्तमे लग्ने बहुविद्यासमन्वितः ॥ पित्रार्जितधनत्वागी सभायां  
 मूकध्वंसेत् ॥४२॥ सुखेशे व्ययर्धस्थे सुखहीनो भवेन्नरः ॥ पितृसौख्यं भवेदल्पं क्लीबो वा  
 जारजोपि वा ॥४३॥ सुखेशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः ॥ रसायनी महाहृष्टो भुनक्ति  
 सुखमद्भुतम् ॥४४॥ सुखेशे सहजे लाभे नित्यरोगी भवेन्नरः ॥ उदारो गुणवान्दाता  
 स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥४५॥ सर्वसपत्न्यतो मानी साहसी कुहकन्वितः ॥ कुटुंबसयुतो भोगी  
 सुखेशे च धने गते ॥४६॥

#### चतुर्थेश द्वादशभावफल

चतुर्थेश अपने अश मे होकर चतुर्थभाव मे स्थित हो तो सब प्रकार की धन सम्पत्तिवाता, चतुर, शीलवान्, मानी एव स्त्रीप्रिय, सुखी होता है ॥ चतुर्थेश पंचम तथा भाग्य मे हो तो

सबका प्रेमी, सुखी, विष्णुभक्त, मानी और अपने उद्योग से धनी होता है। मुखेश यदि छोटे भाव में हो तो यात्रारत, क्रोधी, चोर, दुष्ट, अपकारी और मनस्वी होता है। मुखेश सप्तमभाव में या लग्न में हो तो अनेक विधायुक्त, पिताकी सम्पत्ति का त्यागी और सभाचातुर्यहीन होता है। मुखेश ८।१२ में हो तो जातक सुखरहित, पितृसुखवंचित, नपुंसक या जारज होता है। मुखेश दशम में हो तो राजमान्य, अद्भुत सुखभोगी, सदासुखी तथा रसायन जाननेवाला होता है। मुखेश तृतीयभाव में या लाभ में हो तो सदा रोगी, उदार, गुणवान् तथा निजोपार्जित धनी होता है। मुखेश धनभाव में हो तो सर्वसम्पत्ति युक्त, मानी, साहसी, भोगी, कुटुम्बी, छली एवं कपटी होता है ॥३९-४६॥

### अथ सुतेशद्वादशभावस्थितफलमाह

सुतेशः पचमे यस्य तस्य पुत्रो न जीवति ॥ क्षणिकः क्रूरभाषी च धार्मिको मतिमान् भवेत् ॥४७॥  
 सुतेशे षष्ठरिःफस्ये पुत्रः शत्रुत्वमाप्नुयात् ॥ मृतापत्यो ग्राह्यपुत्रो धनपुत्रोऽप्यवा भवेत् ॥४८॥  
 सुतेशे कामगे मानी सर्वधर्मसम्पन्नितः ॥ तुगयष्टिस्तनुस्वामी भक्तिसुक्तैकतेजसा ॥४९॥ सुतेशे  
 चापुषि धने बहुपुत्री न शशयः ॥ कासश्वासी सुखी न स्यात् क्रोधयुक्तो धनान्वित ॥५०॥ सुतेशे  
 नवमे कर्मे पुत्रो नूपसमो भवेत् ॥ अथवा ग्रथकर्ता च विख्यातः कुलदीपक ॥५१॥ सुतेशे लाभवने  
 पंडितो जनबल्लभः ॥ ग्रथकर्ता महादक्षो बहुपुत्रधनान्वितः ॥५२॥ सुतेशे लग्नसहजे मायावी  
 पिशुनो महान् ॥ लोष्ट तु दत्तवादैव कल्पिद्द्रव्यस्य का कथा ॥५३॥ सुतेशे मातृवने चिरं  
 मातृमुख भवेत् ॥ लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिबोऽप्यथवा गुरुः ॥५४॥

### सुतेश द्वादशभावफल

पचमेश पचमभाव में शुभग्रहयुक्त हो तो पुत्रवान्, क्षणिक मिष्टभाषी, धर्मत्मा तथा बुद्धिमान् होता है। मुखेश ६।१२ में हो तो अपना पुत्र ही शत्रु होता है और जीता भी नहीं है। अतः दत्तक या धन से सरीदा हुआ पुत्र होता है। मुखेश सप्तमभाव में हो तो अभिमानी, धार्मिक, लम्बा कद, गठीला शरीर, भक्त और तेजस्वी होता है। मुखेश अष्टम भाव तथा धनभाव में हो तो अनेक सन्तानवाला, भासखासी रोग होने से दुःखी, क्रोधी और धनी होता है। मुखेश नवम या दशमभाव में हो तो उसका पुत्र राजा के समान हो अथवा ग्रन्थकर्ता विख्यात और अपने कुल का नामी होता है। मुखेश लाभस्थान में हो तो पण्डित और समाजसेवी, ग्रन्थकर्ता, अत्यन्त चतुर, अनेक पुत्र, धन से मुक्त होता है। मुखेश लग्न या तृतीयभाव में हो तो मायावी (कपटी) पिशुन (चुगलखोर) जीवन में विभीषणों को कुछ भी न देनेवाला होता है। मुखेश चौथे भाव में हो तो माता पिताका मुख पूजा ही, लक्ष्मीयुक्त, बुद्धिमान् या तो सचिव (मन्त्री) या गुरु होता है ॥४७-५४॥

### अथ षष्ठेशद्वादशभावस्थितफलमाह

षष्ठेशे रिपुभावस्ये स्वतातिः शत्रुवद्भवेत् ॥ परजातिर्भवेन्मित्रं भूमि न चलति ध्रुवम् ॥५५॥  
 षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्ने वा कीर्तिमान् भवेत् ॥ धनवान् गुणवान् मानी साहसी पुत्रवर्जिनः ॥५६॥

### अष्टमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

पूती चौरोऽन्यथावादी गुरुनिदासु तत्परः ॥ अष्टमे ह्यष्टमस्थाने भार्या पररता भवेत् ॥६९॥  
 अष्टमेशे तप स्थाने महापापी च नास्तिकः ॥ सुतहा ह्यथवा बध्या परभार्याधने रुचि ॥७०॥  
 अष्टमेशे सुखे कर्मपिसुनो बधुवर्जित ॥ मातापित्रोर्भवेन्मृत्यु स्वल्पकालेन भीतियुक् ॥७१॥  
 अष्टमेशे मुते लाभे तस्य वृद्धिर्न जायते ॥ इव्य न स्थीयते गेहे स्थिरवृद्धिर्भवेज्जन ॥७२॥  
 अष्टमेशे व्यये पठे नित्य रोगी प्रजायते ॥ जलसर्पादिकादघातो भवेत्तस्य च शैशवे ॥७३॥  
 अष्टमेशे तनौ कामे भार्यापुंगव समादिशेत् ॥ त्रिष्णुद्रोहरतो नित्यं घणरोगी प्रजायते ॥७४॥  
 धन तस्य भवत्स्वल्प गत वित्त न लभ्यते ॥ अष्टमेशे धने बाहुबलहीन प्रजायते ॥७५॥

#### अष्टमेशद्वादशभावफल

अष्टमेश अष्टम मे हो तो जुवारी, चौर, झूठा, गुरुनिन्दक हो और उसकी स्त्री व्यभिचारिणी होती है। अष्टमेश यदि ११ मे हो तो पापी, नास्तिक, उसकी स्त्री बन्ध्या हो तथा आपका मन सदा दूसरे के धन और स्त्री मे रहता है। अष्टमेश ४।१० मे हो तो चुगलखोर, बन्धुहीन, माता तथा पिता का मुख कम रहे, और डरपोक होता है। अष्टमेश ५।११ मे हो तो परिवार मे वृद्धि नहीं हो और घर मे धन स्थिर नहीं रहे, जातक स्थिरमति हो। अष्टमेश ६।१२ मे हो तो सदारोगी रहे, बाल्य अवस्था मे जल या सर्प से घात हो। अष्टमेश लग्न या सप्तम मे हो तो दो भार्या हो, सदा ईश्वर द्रोही और घणरोगी होता है। अष्टमेश धनस्थान मे हो तो दरिद्री, साहस तथा बलहीन होता है ॥६९-७५॥  
 (यहा फल कथन मे ३।९ भाव का फलादेश का श्लोक अनुपलब्ध है)

### अथ भाग्येशद्वादशभावस्थितफलमाह

धनधान्ययुतो नित्य गुणसौंदर्यसपुत ॥ बहुभ्रातृमुख युक्त भाग्येशे नवमे स्थिते ॥७६॥ भाग्येशे दशमे तुर्यं मन्त्री सेनापतिर्भवेत् ॥ पुण्यवान्मुबशा वाग्मी साहसी क्रोधवर्जित ॥७७॥ भाग्येशे पचमे लाभे भाग्यवान् जनबल्लभ ॥ गुरुभक्तिरतो मानी धीरो धीरगुण्युत ॥७८॥ भाग्येशे तु तुले रिंके भाग्यहीनो भवेद् ध्रुवम् ॥ मातुलस्य मुख न स्याज्ज्येष्ठभ्रातृमुख तथा ॥७९॥ भाग्येशे च मदे कल्पे गुणवान्कीर्तिमान् भवेत् ॥ ऋदाचिप्र भवेत्सिद्ध यत्कार्यं कर्तुमिच्छति ॥८०॥ भाग्येशे सहजे वित्ते सदा भाग्यानुचितक ॥ धनवान् गुणवान्कामी पंडितो जनबल्लभ ॥८१॥

#### भाग्येशद्वादशभावफल

भाग्येश नयमभाव मे हो तो धनधान्ययुक्त और मुनी, सुन्दर तथा अनेक भ्राता ही। भाग्येश १०।४ मे हो तो मन्त्री या सेनापति हो, पुण्यात्मा, मुयशवाला, वाग्मी (अब्धा बोलनेवाला) साहसी और क्रोधरहित हो। भाग्येश ५।११ मे हो तो भाग्यवान्, बन्धुप्रेमी, गुरुभक्त, धीर, मानी होता है। भाग्येश—तुलाराशि मे या बारहवे म्यान मे हो तो

भाग्यहीन मामा का सुख तथा बड़े भाई के सुख से हीन होता है। भाग्येश लग्न या सप्तम मे हो तो गुणवान्, कीर्तिवाला, किन्तु कभी कभी इच्छित कार्य सिद्ध नहीं हो। भाग्येश २।३ मे हो तो भविष्य चिन्तक, गुणी, धनी तथा कामी पंडित एव जनप्रिय होता है॥७६-८१॥

### अथ दशमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

दशमेशे सुखे कर्म ज्ञानवान्सुखविक्रमी ॥ गुरुदेवार्चनरतो धर्मात्मा सत्यसयुतः ॥८२॥ दशमेशे सुते लाभे धनवान्पुत्रवरान् भवेत् ॥ सर्वदा हर्षसयुक्तः सत्यवादी सुखी नरः ॥८३॥ कर्मसोऽरिब्यये यस्य शत्रुभिः परिपीडितः ॥ चातुर्यगुणसपन्नः क्वचिच्च न सुखी नरः ॥८४॥ दशमाधिपतौ लग्ने कवितागुणसयुतः ॥ ब्राह्म्ये रोगी सुखी पश्चादर्थवृद्धिर्दिने दिने ॥८५॥ धने मदे च सहजे कर्मसो यदि सस्थितः ॥ मनस्वी गुणवान्वाग्मी सत्यधर्मसमन्वितः ॥८६॥

#### दशमेशद्वादशभावफल

दशमेश ४।१० मे हो तो जानी सुखी पराक्रमी, देवगुरुभक्त, धर्मात्मा तथा सत्यवादी होता है। दशमेश ५।११ मे हो तो धनवान् और पुत्रवान्, सदा प्रसन्नचित्त, सुखी और सत्यवादी होता है। दशमेश ६।१२ मे हो तो जातक शत्रुओ से पीडित, चतुर तथा कभी-कभी दुःखी रहता है। दशमेश लग्न मे हो तो कविता करनेवाला तथा बाल्यावस्था मे रोगी पश्चात् नीरोग और दिनानुदिन धनवृद्धि होती है। दशमेश २।७।३ मे हो तो मनस्वी, गुणी, वक्ता तथा सत्यवादी होता है ॥८२-८६॥

### अथ लाभेशद्वादशभावस्थितफलमाह

लाभेशे संस्थिते लाभे स वाग्मी जायते ध्रुवम् ॥ पांडित्य कविता चैव वृद्धंते च दिने दिने ॥८७॥ प्राप्तिस्थानाधिपे रिःके म्लेच्छससर्गकारकः ॥ कामुको बहुकातश्च क्षणिको लम्पटः सदा ॥८८॥ लाभेशे संस्थिते लग्ने धनवान्सात्त्विको महान् ॥ सप्तदृष्टिर्महान्वक्ता कौतुकी च भवेत्सदा ॥८९॥ लाभेशे च धने पुत्रे नानामुखसमन्वितः ॥ पुत्रवान्धार्मिकश्चैव सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥९०॥ लाभेशे सहजे वित्ते तीर्थेषु तत्परो महान् ॥ कुशल सर्वकार्येषु केवल शूलरोगवान् ॥९१॥ लाभेशे षष्ठभवने नानारोगसमन्वितः ॥ सर्वं सुख भवेत्तस्य प्रवासी परसेवकः ॥९२॥ लाभेशे सप्तमे रद्रे भार्या तस्य न जीवति ॥ उदारो गुणवान्कर्मां मूर्खो भवति निश्चितम् ॥९३॥ लाभेशे गगने धर्म राजपूज्यो धनाधिपः ॥ चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः ॥९४॥

#### लाभेश द्वादशभावफल

लाभेश स्वगृही हो तो वाग्मी, पण्डित और दिनानुदिन उत्तम कविता करनेवाला होता है। लाभेश १२ भाव मे हो तो म्लेच्छ ससर्गी, कामी अनेक स्त्रीससर्गी, क्षणिकमति और लम्पट होता है। लाभेश लग्न मे हो तो धनवान्, सात्त्विक भाववाला, समदर्शी श्रेष्ठवक्ता तथा कौतुकी होता है। लाभेश २।५ मे हो तो नानामुखभोगी, पुत्रवान्, धार्मिक तथा सर्वसिद्धिमम्पन्न होता है। लाभेश २।३ मे हो तो तीर्थसेवी, सर्वकार्यकुशल होता है केवल शूल रोग रहता है। लाभेश छठे भाव मे हो तो नाना व्याधिग्रस्त, सर्वसुखसम्पन्न तथा परदेशवासी

एवं नीकरी करनेवाला होता है। लाभेश ७।८ में हो तो उसकी भार्या नहीं जीवे। उदार गुणी तथा कर्मी हो एवं भूख हो। लाभेश ९।१० में हो तो धनी, राजपूज्य, चतुर, सत्यवादी तथा धर्मत्मा होता है ॥८७-९४॥

### अथ व्ययेशद्वादशभावस्थितफलमाह

व्ययेशोऽरिव्यये पापी मातृमृत्युविविन्तकः ॥ क्रोधी सन्तानदुःखी च परजायासु लंपटः ॥९५॥  
व्ययेशे मदनने लग्ने जायासौख्यं भवेन्नहि ॥ दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः ॥९६॥  
व्ययेशे द्वितीये रंष्ट्रे विष्णुभक्तिसमन्वितः ॥ धार्मिकः प्रियवादी च सम्पूर्ण गुणसंपुतः ॥९७॥  
भाषद्विषी प्रियद्वेषो गुरुद्वेषो भवेन्नरः ॥ व्ययेशे सहजे धर्म स्वशरीरस्य पोषकः ॥९८॥ व्ययेशे  
दशमे लामे पुत्रसौख्यं भवेन्नहि ॥ भणिभाणिक्यमुक्तादि धत्ते किञ्चित्समालभेत् ॥९९॥ एतत्ते  
कथितं विप्र भाषानां च फलाफलम् ॥ बलायलविवेकेन सर्वेषां फलमादिशेत् ॥१००॥

#### व्ययेश द्वादशभावफल

व्ययेश ६।१२ में हो तो पापी तथा माता को मारने के सकल्प वाला, क्रोधी, सन्तान से दुःखी, परस्त्री-रत रहता है। व्ययेश लग्न या सप्तम में हो तो स्त्री सुखरहित, दुर्बल, कफरोगी, धन और विद्यारहित होता है। व्ययेश २।८ में हो तो विष्णुभक्त, धार्मिक, प्रियभाषी, सम्पूर्ण-गुणयुक्त होता है। व्ययेश ३।९ में हो तो भाषद्विषी, तथा प्रियद्वेषी, गुरुद्वेषी एवं स्वयंपोषक होता है। व्ययेश १०।११ में हो तो पुत्र सुख नहीं होता, भणिभाणिका आदि का लाभ होता है। हे मैत्रेय! १२ भावों का यह फलाफल हमने कहा, ग्रहों के बल जानकर इनका फल कहना चाहिए।

बन्नी चेत्स्वच तुर्यः स्यात्फलं भीमो ददाति च ॥ बुधतुर्येऽथ देवेज्ये पञ्चमे शशिभार्गवी ॥१०१॥  
सप्तमस्य तमध्वंसी पुत्रस्य नवमस्य च ॥ वित्तस्य विपुक्त्यर्कं ददाति स्वफलं विधुः ॥१०२॥ ग्रहे  
पूर्णफलै प्राप्ते फलं पूर्वं समादिशेत् ॥ अर्द्धमर्द्धं पादहीने तत्रेद पादमंग्रिणा ॥१०३॥ भाषानां  
द्वादशानां च सर्वेषां फलमादिशेत् ॥ भावस्थानां ग्रहाणां च फलं ते कथितं मया ॥१०४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भावस्थग्रहाणां फलकथनं

नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

उद्दिष्ट ग्रह में बन्नी मगल यदि चतुर्थभाव में स्थित हो तो पूर्णफल प्राप्त होता है। इसी प्रकार उद्दिष्ट ग्रह में चतुर्थ बुध हो, पञ्चम गुरु हो। चन्द्र-शुक्र मन्त्रम हो, शनि नवम हो, बर्क के सूर्य में चन्द्रमा दूमरे हो तो पूर्वोक्त भावफल होता है। और ग्रह पूर्णबन्नी हों तो पूरा फल होता है। आधे बल में आधा और हीनबल में चौथाई फल होता है। इस कथित ग्रह फल में १२ भावों का फल कहना चाहिये ॥१५-१०४॥

इति बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकाया भावस्थग्रहफलकथननाम  
पञ्चदशोऽध्याय ॥१५॥

## अथ प्राणिनां पूर्वजन्मशापद्योतकम् पार्वत्युवाच

देवदेव जगन्नाथ शूलपाणे वृषद्वज ॥ केन योगेन मर्त्यानां जायते शिशुनाशनम् ॥१॥ तत्सर्वमथ  
योगेन ब्रूहि मे शशिशेखर ॥ शापमोक्ष च कृपया प्राणिनामल्पमेघस्ताम ॥२॥

### पूर्वजन्म शापकथन

पार्वतीजी ने कहा, हे शूलपाणि वृषद्वज! भगवन् महादेव! जगत् के स्वामी !! किस योग से मनुष्यों के सन्तान की हानि होती है? आप सिद्धयोगी है अतः यह सब कहिये और हे शशि शेखर! उन अज्ञानी पुरुषों के शाप को दूर करने का उपाय भी कहियेगा ॥१॥२॥

### शङ्कर उवाच

साधु पुष्ट त्वया देवि कथयामि सविस्तरात् ॥ शृणुष्वैकमना भूत्वा बलाबलवशादपि ॥३॥  
ज्ञेय मुनिश्चित सर्वैराशिकके विरोधत ॥ मेधादिमीनपर्यन्त मूर्त्यादिद्वादशरूमात् ॥४॥ भाव च  
भावज ज्ञात्वा फल ब्रूयाद्विचक्षण ॥ तनुर्वित्त बहुमातृपुत्रशत्रुस्मरोमृति ॥५॥ पितृकर्म च  
लाभ च व्ययाता भावसन्नका ॥ गुणैरे शदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु च ॥६॥ सर्वेषुबलहीनेषु  
वक्तव्या त्वनपत्यता ॥ रव्यारराहुशनय पुत्रस्था बलसपुता ॥७॥ कारकाद्यात्क्षीणबलादनप-  
त्यत्वमादिरोत् ॥ पुत्रस्थानमते राहौ कुजेनापि निरीक्षिते ॥ कुजक्षेत्रगते वापि  
सर्पशापात्सुतक्षय ॥८॥ पुत्रेशे राहुसपुक्ते पुत्रस्थे भानुनन्दने ॥ चन्द्रदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सु-  
तक्षय ॥९॥

शकरजी ने कहा—हे देवि ! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया, ध्यान देकर सुनो। हम विस्तार से सबका उत्तर कहते हैं। ग्रहों के बलाबल से बारह राशियों के भावों का सुनिश्चित फल जाना जाता है। मेष से मीन पर्यन्त बारह राशियों का स्वरूप जानकर भाव और भाव का फल जानकर कहना चाहिये ॥ १२ भावों के नाम कहते हैं तनु, वित्त, बन्धु, माता, पुत्र, शत्रु, भार्या, मृत्यु घर्म, कर्म लाभ और व्यय ये बारह भाव हैं। बृहस्पति, सप्तेश, पुत्रेश इन सब भावों के और भावेषो के बलहीन होने पर पुत्रहीनता कहनी चाहिये। सूर्य, मंगल, राहु और शनि ये बलवान होकर पचम भाव में हों, पुत्रकारक हीनबल हो तो पुत्रहीनता कहनी चाहिये। पचम भाव में राहु हो, मंगल देखता हो अथवा मंगल की राशि हो तो पूर्वजन्म के सर्प के शाप से इस जन्म में पुत्र की मृत्यु होती है ॥ पचमेश राहुयुक्त हो, पचम भाव में शनि हो। चन्द्रमा युक्त अथवा देखता हो, तो सर्प के शाप में पुत्र नाश होता है ॥३-९॥

कारके राहुसपुक्ते पुत्रेशे बलवर्जिते ॥ विलग्नेशे भीमयुते सर्पशापात्सुतक्षय ॥१०॥ कारके  
भीमसपुक्ते तप्रे च राहुसपुते ॥ पुत्रस्थानेश्वरे बुस्थे सर्पशापात्सुतक्षय ॥११॥ भीमेशे  
भीमसपुक्ते पुत्रेशे सौमनन्दने ॥ राहुमादियुते सशे सर्पशापात्सुतक्षय ॥१२॥ पुत्रस्थाने  
कुजक्षेत्रे पुत्रे राहुसमन्विते ॥ सौम्यदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षय ॥१३॥ पुत्रस्था

भानुमंदाराः स्वर्मानुः शशिजोगिराः ॥ निर्बलो पुत्रलप्रेषौ सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१४॥ लग्नेशे राहुसंयुक्ते पुत्रेशे भीमसंयुते ॥ कारके राहुसंदृष्टे सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१५॥ तद्दोषपरिहारार्थं नागपूजां समारभेत् ॥१६॥ स्वगृहोक्तविधानेन प्रतिष्ठां कारयेत्पुत्रीः ॥ नागमूर्तिं सुवर्णेन कृत्वा पूजां समाचरेत् ॥१७॥ गोमूतिलहिरण्यादि दद्याद्विज्ञानुसारतः ॥ एवं कृते तु नागोदप्रसादाद्बद्धतिकुलम् ॥१८॥ पुत्रस्थान गते भानौ नीचे मंदांशकस्थिते ॥ पार्श्वयोः क्रूरसम्बन्धे पितृशापात्सुतक्षयः ॥१९॥ पुत्रस्थानाधिपे भानौ त्रिकोणे पापसंयुते ॥ क्रूरन्तरे पापदृष्टे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२०॥

पुत्रकारक राहु के साथ हो, पुत्रेश बलहीन हो, लग्नेश मंगलयुक्त हो तो सर्प शाप से सुतक्षय होता है। पुत्रकारक मंगलयुक्त हो, लग्न में राहु, पुत्रेश तीसरे हो तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है। मंगल अपने नवमाश में हो, पुत्रेश बुध हो, लग्न में राहु और मान्दी हो तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है। पुत्रस्थान में मंगल की राशि और राहु हो बुध युक्त या देखता हो, तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है। पुत्रस्थान में सूर्य मंगल शनि, राहु, बुध और शुक्र हो, पुत्रेश और लग्नेश निर्बल हो, तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है। लग्नेश के साथ राहु हो, पुत्रेश के साथ मंगल हो, पुत्रकारक को राहु देखता हो तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है। (इतने योग कहे मये और इनका उपाय कहते हैं) इस दोष के दूर करने के लिये, नागपूजा करनी चाहिये। सुवर्ण की नागमूर्ति बनाकर, विधान से प्रतिष्ठा करे और फिर पूजा करे। तिल, गौ, सुवर्ण इनका शक्ति के अनुसार दान करे और मूर्ति का भी दान करे, तो ऐसा करने पर नागेन्द्र की कृपा से कुल में वृद्धि होती है। (यह उपाय किसी महान पर्व में गंगा आदि तीर्थ पर किया जाता है) अब पितृशाप के योग कहते हैं। पुत्रस्थान में सूर्य हो और नीच का होकर शनि के अंश में हो, १२ वें तथा दूसरे स्थान में पापग्रह हो तो पितृशाप से सुत-क्षय होता है। पुत्रस्थान का स्वामी सूर्य त्रिकोण स्थानों में पापग्रह से युक्त होकर स्थित हो और सूर्य के दोनों तरफ क्रूर ग्रह हो, पापग्रह की दृष्टि हो तो पितृशाप से सुत-क्षय होता है ॥१०-२०॥

भानुराशिस्थिते जीवे पुत्रेशे भानुसंयुते ॥ पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२१॥ लग्नेशे दुर्बले पुत्रे पुत्रेशे भानुसंयुते ॥ पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२२॥ पितृस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे वा तथा स्थिते ॥ लग्ने पुत्रे पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२३॥ पितुः स्थानाधिपौ भीमःपुत्रेशेन समन्वितः ॥ लग्ने पुत्रे पितृस्थाने शापात्सततिनाशनम् ॥२४॥ पितृस्थानाधिपे दुःस्थे कारके पापरशिगे ॥ पुत्रे लग्नेश्वरे पापे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२५॥ लग्नपक्षमभावस्या भानुभीमशनिश्रराः ॥ रन्ध्रे रिःके राहुजीवी पितृशापात्सुतक्षयः ॥२६॥ लग्नादष्टमगे भानौ पुत्रस्थे भानुनदने ॥ पुत्रेशे राहुसंयुक्ते लग्ने पापे सुतक्षयः ॥२७॥ व्यपेशे लग्नभावस्थे रन्ध्रेशे पुत्रराशिगे ॥ पितृस्थानाधिपे रन्ध्रे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२८॥ रोगेशे पुत्रभावस्थे पितृस्थानाधिपे तथा ॥ कारके राहुसंयुक्ते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२९॥ तद्दोषपरिहारार्थं गद्याश्राद्धं च कारयेत् ॥ ब्राह्मणान् भोजयेदत्र अयुत वा सहस्रकम् ॥३०॥ कन्यादानं ततः कृत्वा गां च दद्यात्सवत्सकाम् ॥ एवं कृते पितुः शापान्मुच्यते नात्र राशयः ॥३१॥ वर्धते च कुलं तस्य पुत्रपौत्रादिभिस्तथा ॥ दृष्टियोगपदैः सर्वं फलं श्रूयाद्विचक्षणः ॥३२॥

अथ मातृशाप के योग एव उपाय कहते हैं

पुत्रेश चन्द्रमा नीच का हो और पापग्रहों के बीच में हो अर्थात् चतुर्थ और षष्ठभाव में पापग्रह हो तो मातृशाप से मुक्त-क्षय होता है। पुत्रेश तृतीय में हो, लग्न में नीच राशि हो, चन्द्र और पापग्रहों का योग हो तो मातृशाप से मुक्त क्षय होता है। पुत्रेश तृतीय में, चन्द्रमा पाप नवमाश में, लग्न में तथा पुत्रभाव में पापग्रह हो तो मातृ शाप से मुक्त-क्षय होता है। पुत्रेश चन्द्रमा, शनि, राहु, मंगल से युक्त होकर नवम या पंचम भाव में स्थित हो, अथवा यही योग पुत्र कारक के साथ हो तो मातृशाप से मुक्तक्षय होता है। चतुर्थेश मंगल, शनि, राहु, युक्त हो, पुत्र भाव में चन्द्रमा एव सूर्य हो या लग्न में हो तो मातृ शाप से मुक्त-क्षय होता है। लग्नेश एव पुत्रेश शत्रुस्थान में हो, चतुर्थेश अष्टमभाव में हो अष्टम और दशम के स्वामी लग्न में हो तो मातृ शाप से मुक्त क्षय होता है। षष्ठेश और अष्टमेश लग्न में हो या व्यय में हो चतुर्थेश पंचम में हो या व्यय में हो, पंचम भाव में चन्द्रमा और बृहस्पति पापयुक्त हो तो मातृ-शाप से मुक्त-क्षय होता है। लग्न की दोनों पार्श्व राशि में पापग्रह हो क्षीण चन्द्रमा सप्तम भाव में हो, चौथे भाव में और पाचवे भाव में राहु शनि हो तो मातृशाप से मुक्त-क्षय होता है। अष्टमेश पंचम में हो पंचमेश अष्टम में हो चन्द्रमा और चतुर्थेश तृतीय भाव में हो, तो मातृशाप से मुक्त-क्षय होता है। चन्द्रमा की राशि में लग्न हो, मंगल राहु युक्त हो चन्द्रमा और शनि पंचम भाव में हो तो मातृशाप से मुक्त-क्षय होता है। लग्न पंचम अष्टम और द्वादश भाव में क्रमशः मंगल, राहु शुक एव शनि हो चतुर्थ एव लग्नेश तृतीय भाव में हो तो मातृ शाप से मुक्त-क्षय होता है। अष्टम भाव में बृहस्पति हो, मंगल राहु से युक्त हो, पंचम भाव में शनि चन्द्रमा हो तो मातृ शाप से मुक्त-क्षय होता है। पण्डित की विचारकर इस प्रकार उपर्युक्त योग से फल बहना चाहिये। शुभयोग से सुख और मित्र योग से मध्यम फल होता है (उपाय) सतुबन्ध रामेश्वर में स्नान करे एक लाख गायत्री मंत्र का जाप करे जिस ग्रह का दुर्योग हो उस ग्रह का दान करे चादी के पात्र में दूध भर कर दान दे। यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराये, पीपल की प्रदक्षिणा करे भक्तिपुक्त होकर ये कर्म करे। ऐसा करने स शंकर कहते हैं हे देवी ! शाप से मुक्ति मिलती है एव श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति होती है और उम पुत्र स परिवार चक्षता ॥३३ ४९॥

अत पर प्रवक्ष्यामि भ्रात्रादीं शापकारणम् ॥ पापयोगेन भावेन कारकेण बलाबले ॥५०॥  
 भ्रातृस्थानाधिपे पुत्रे कुजराहुसमन्विते ॥ पुत्रलग्नेश्वरी र धे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५१॥ लग्ने सुते कुजे मदे भ्रातृपे भाग्यराशिगे ॥ कारके नाशराशिस्ये भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५२॥ भ्रातृस्थाने गुरो नीचे मद पंचमगो यदि ॥ नाशस्थी न तु मन्दारी भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५३॥  
 भूर्तिस्थानाधिपे रि के भौम पंचमगो यदि ॥ पुत्रेशे र प्रपापस्ये भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५४॥ पाप मध्यगते लग्ने मुतभे पापमध्यगे ॥ नाशौ न कारकौ दु स्थे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५५॥ कर्मेशे भ्रातृ भावस्ये पापयुक्ते सुते शुभे ॥ पुत्रे च कुजसयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५६॥ पुत्रस्थाने बुधलग्ने शनिराहुसमन्विते ॥ रि के विदारी शापत्वाद् भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५७॥ लग्नेशे भ्रातृराशिस्ये भ्रातृस्थानाधिपे सुते ॥ लग्ने भ्रातृसुते पापे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५८॥ भ्रातृशे नाशराशिस्ये पुत्रस्ये कारके तथा ॥ राहुमादिपुते दृष्टे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५९॥ नाशस्थानाधिपे पुत्रे



भ्रातृनाथेन संयुते ॥ रंघ्रे आराकिंसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतलयः ॥६०॥ भ्रातृशापविमोक्षार्थं धवण  
विष्णुकीर्तनम् ॥ चांद्रायणं चरेत्पञ्चात्कावेर्या विष्णुसन्निधौ ॥६१॥ अश्वत्थस्यापनं कार्यं दश धेनूः  
प्रदापयेत् ॥ प्राजापत्यं चरेत्तत्र भूमिं दद्यात्कलान्विताम् ॥६२॥ एव यः कुर्वते भक्त्या पुत्रवृद्धिः  
प्रजायते ॥६३॥ पुत्रस्थाने बुधे जीवे कुजराहुसमन्विते ॥ तत्रे मंदसमाधौगे मातुलात्सुतनाशनम्  
॥६४॥ लग्नपुत्रेश्वरी पुत्रे बुधमीसमन्विते ॥ मंदे मातुलशापत्वात्पुत्रसंततिनाशनम् ॥६५॥

### भ्रातृशाप के योग तथा उपाय

अब यहां से भ्रातृशाप का कारण कहते हैं। भाव में पापग्रह के योग से तथा पुत्र एव  
भ्रातृकारक के बलाबल से शापयोग कहते हैं। तृतीयेश पचमभाव में मंगल, राहुयुक्त हो, पुत्रेश  
तथा लग्नेश अष्टमभाव में हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। लग्न में मंगल, पचम में शनि,  
तृतीयेश नवमभाव में तथा पुत्रकारक अष्टमभावमें स्थित हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय है।  
तृतीयभाव में नीचराशि का गुरु हो, शनि पचमभाव में हो तथा अष्टमभाव में भौम, शनि न  
हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। लग्नेश १२में मंगल पचमभाव में हो, पुत्रेश अष्टमभाव  
में पापग्रह युक्त हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। लग्न तथा पचमभाव दोनों पापग्रह के  
मध्य में हो और इन भावों के स्वामी तृतीयाभाव में हो एव कारकग्रह भी तृतीयभाव में हो  
तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। दशमेश तृतीयभाव में हो, पचमभाव में पापग्रह युक्त  
शुभग्रह हो, पचमभाव में मंगल हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। पचमभाव में बुध राशि  
शनि राहुयुक्त हो, १२वें भाव में मंगल और बुध हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। लग्नेश  
तृतीय भाव में हो और तृतीयेश पचमभाव में हो लग्न, तृतीय, पचम में पापग्रह हो तो  
भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। तृतीयेश अष्टम में हो और पुत्रकारक पुत्रभाव में राहु और  
मान्दी से युक्त या दृष्ट हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। अष्टमेश पचम में हो और  
तृतीयेशयुक्त हो तथा अष्टमभाव में मंगल शनि हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।  
(उपाय) भ्रातृशाप को दूर करने के लिए 'विष्णु पुराण' का धवण तथा विष्णुनाम जप  
कीर्तन करे, बाद में चान्द्रायण व्रत करे, पञ्चात् कावेरी नदी के तट या विष्णु मंदिर में  
पीपल का वृक्ष लगावे तथा दश गोदान करे, प्राजापत्यव्रत करे, भक्तभूमि प्रदान करे। इस  
प्रकार भक्ति से जो करता है उसके पुत्र की वृद्धि होती है ॥५०-६३॥

### मामा के शाप का वर्णन और उपाय

पचमभाव में बुध गुरु मंगल राहु हो, लग्न में शनि हो तो मामा के शाप से सुतक्षय होता  
है। लग्नेश और पचमेश पुत्र भाव में हो, बुध मंगल शनि के साथ हो तो मामा के शाप से  
सुतक्षय होता है ॥६४-६५॥

नुप्ते पुत्राधिपे लग्ने सप्तमे भानुनन्दने ॥ लग्नेशे बुधसंयुक्ते तस्य सततिनाशनम् ॥६६॥  
ज्ञातिस्थानाधिपे लग्ने व्यपेक्षेन समन्विते ॥ शनिमीम्यपुत्रे पुत्रे तस्य सततिनाशनम् ॥६७॥  
पुत्रलगाधिपौ युक्तावन्योन्य वाय योसितौ ॥ पुत्रे परस्परस्थौ वा पुत्रयोगा इमे स्मृताः ॥६८॥  
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुस्यापनमुच्यते ॥ धार्पिकूपतडागादिघनसेतुदर्शनम् ॥६९॥ पुत्रवृद्धिर्भ-

वेत्तस्य सपद्बुद्धिं प्रजायते ॥ इदं योगग्रहेणैव फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ॥७०॥ गुरुक्षेत्रे यदा राहुः  
 पुत्रे जीवारानुजा ॥ धर्मस्थानाधिपे नाशे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७१॥ विद्यागर्वणं यो मर्त्यो  
 ब्राह्मणानवमन्वते ॥ तद्दोषाद् ब्रह्मशापत्वात्सततैस्तस्य नाशनम् ॥७२॥ धर्मेशे पुत्रभावस्थे  
 पुत्रेशे नाशराशिगे ॥ जीवारराहुमृत्युस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७३॥ धर्माधिपे नीचगते व्ययेशे  
 पुत्रराशिगे ॥ राहुयुक्तेक्षिते वापि ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७४॥ जीवे नीचगते राहुर्लग्न्ये वा  
 पुत्रराशिगे ॥ पुत्रस्थानाधिपे दुर्बले ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७५॥ पुत्रस्थानाधिपे जीवे रश्मि  
 पापसमन्विते ॥ पुत्रेशावर्कचर्द्री वा ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७६॥ मदाशे मदसयुक्ते जीवे  
 भीमसमन्विते ॥ पुत्रेशे व्ययराशिस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७७॥ लग्न्ये गुरुयुते मदे भाग्ये  
 राहुसमन्विते ॥ व्यये गुरुसमायोगे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७८॥ तस्य दोषस्य शात्यर्थं  
 कुर्यान्वाद्रायणं नरः ॥ ब्रह्मकूर्चत्रयं कृत्वा धेनुं दद्यात्सदशिशाम् ॥७९॥ पचरत्नानि देवानि  
 सुवर्णं समन्वितम् ॥ अन्नदानं ततः कुर्यादियुतं वा सहस्रकम् ॥८०॥ एव कृते तु सत्पुत्रं तमते  
 नात्र सशयः ॥ मुक्तशापो विशुद्धात्मा स पुमान्सुखमोघते ॥८१॥ वारेशे पुत्रभावस्ते  
 वारेशस्थाशपे शनी ॥ पुत्रेशे नाशराशिस्थे पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८२॥ कलत्रेशे नाशस्थे  
 रिफेशे पुत्रराशिगे ॥ वारके पापसयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८३॥ पुत्रस्थानगते शुके कान्पे  
 रश्मिस्थिते ॥ वारके पापसयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८४॥ कुटुंबे पापसंबन्धे कामेशे  
 नाशराशिगे ॥ पुत्रे पापग्रहैर्युक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८५॥ भाग्यस्थानगते शुके वारेशे  
 नाशराशिगे ॥ लग्न्ये पापे सुते पापे पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८६॥ भाग्यस्थानाधिपे शुके पुत्रेशे  
 शशुराशिगे ॥ गुरुलग्न्येशदारेशा दुःस्था सततिनाशनम् ॥८७॥ पुत्रस्थाने गुरुक्षेत्रे राहुचन्द्रसम-  
 न्विते ॥ व्यये लग्न्ये धने पापे स्त्रीशापात्सुतनाशनम् ॥८८॥ सप्तमे मदगुरुं च रश्मेशे पुत्रभैरवीं  
 ॥ लग्न्ये राहुसमायोगे पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८९॥

पुत्रेश लग्न्ये मे अस्तं होकर स्थित हो सप्तमभाव मे शनि हो वज्रेश के साथ बुध  
 हो तो सन्तति नष्ट होती है। पुत्र भावेश लग्न्ये मे हो व्ययेश के साथ च० म०, बु०  
 पचम मे हो तो सन्तति नष्ट होती है। पुत्रेश और लग्न्येश परस्पर दृष्ट या परस्पर  
 स्थान सम्बन्ध हो तो पुत्र सुख होता है। पूर्वोक्त दोष दूर करने के लिए बुधा,  
 वावडी, तालाब बनाना सेतुबन्ध रोमेश्वर का दर्शन करना ॥ इनके करने से पुत्रसुख होता है  
 तथा सम्पत्ति की वृद्धि होती है ॥ इन ग्रहयोगों से पण्डित को फल बहना चाहिये ॥ गुरु के घर  
 मे राहु हो पचम मे सू० म० वृ० हो नवमेश अष्टम मे हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है ॥  
 विद्वत्ता के घमण्ड से जो मनुष्य ब्राह्मण का अपमान करता है उस पाप से ब्रह्मशाप होता है  
 और उससे सन्तति नाश होती है ॥ नवमेश पुत्रभाव मे हो पुत्रेश अष्टम मे हो वृ० म० रा०  
 अष्टम मे हो तो ब्रह्म शाप से सुतक्षय होता है ॥ नवमेश नीच का हो व्ययेश पुत्रभाव मे हो,  
 राहुदृष्ट हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है ॥ गुरु नीचराशि का हो, राहु लग्न्ये मे हो या  
 पुत्रभाव मे हो, पुत्रेश छठे भाव मे हो तो ब्रह्म शाप से सुतक्षय होता है ॥ गुरु सुतेश होकर तथा  
 पापग्रहयुक्त अष्टमभाव मे हो तथा पुत्रेश सूर्य या चन्द्रमा हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है ॥  
 शनि अपने नवाश मे हो, गुरु मंगल के साथ हो, पुत्रेश व्ययभाव मे हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय  
 होता है ॥ लग्न्ये मे गुरु, शनि भाग्यस्थान मे राहुयुक्त हो या गुरु व्ययभाव मे हो तो ब्रह्मशाप से  
 सुतक्षय होता है ॥ इस दोष की शान्ति के लिए चान्द्रायण व्रत करे, वाद ब्रह्मकूर्च व्रत ३ वर

पश्चात् गोदान, सुवर्ण, पञ्चरत्नदान, अन्नदान करे, ब्राह्मण भोजन कराये। ऐसा करने से सत्पुत्र अवश्य होता है इसमें संशय नहीं। उसका शाप दूर होकर अत्मा शुद्ध हो जाती है और सुख की वृद्धि होती है। सप्तमेश पुत्रभाव में हो सप्तमभाव के नवाश का स्वामी शनि हो पुत्रेश अष्टमभाव में हो तो पत्नी के शाप से सुतक्षय होता है। सप्तमेश अष्टम में हो, व्यग्रेश पुत्रभाव में हो, पुत्रकारक पापयुक्त हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है। शुक पचम में हो, सप्तमेश अष्टम में हो, पुत्रकारक पापग्रहयुक्त हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है। तृतीयभाव का पापग्रह से सम्बन्ध हो, सप्तमेश अष्टम में हो, पुत्रभाव में पापग्रह हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है। शुक भाग्यस्थान में हो, सप्तमेश अष्टम में हो, लग्न में तथा पचम में पापग्रह हों तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है। भाग्येश शुक हो पुत्रेश छोटे भाव में हो, गुरु, लग्नेश और सप्तमेश तृतीयभाव में हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है। पुत्रभाव में शुकराशि हो, चन्द्रमा और राहुयुक्त हो लग्न व्यय, धन भाव में पापग्रह हो तो स्त्री के शाप से सुतक्षय होता है। सप्तमभाव में शनि शुक हो अष्टमभाव में पुत्रेश की राशि हो, राहुसहित सूर्य लग्न म हो तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है ॥६६-८९॥

धने कुजे व्यये जीवे पुत्रस्ये नृपुनन्दने ॥ राहुयुक्तेऽपि पत्नीशापात्सुतक्षय ॥९०॥  
 नारास्थी विसदारेणौ पुत्रे लग्ने कुजे शनौ ॥ कारके पापसयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥९१॥  
 लग्नपचमभागादस्था राहुमन्दकुजा क्रमात् ॥ रधस्थौ पुत्रदारेणौ पत्नीशापात्सुतक्षय ॥९२॥  
 तस्य दौपस्य शात्यर्थं कन्यादान समाचरेत् ॥ लक्ष्मीनारायण देव सर्वाभरणभूषितम् ॥९३॥  
 मूर्तिदान च कर्तव्यं दशधेनुं प्रदापयेत् ॥ शय्या च भूषण चैव दपत्योर्दापयेत्सुधी ॥९४॥ पुत्र  
 प्रसूयते तस्य भाग्यवृद्धिश्च जायते ॥ मंत्रशापमिदं मर्त्यं पिशाच बाध्यते सदा ॥९५॥ कर्मलोप  
 पितृभ्यश्च तच्छापाद्दशनाशनम् ॥ पुत्रस्थितौ मदमूर्त्तौ क्षीणचद्रस्तु सप्तमे ॥ लग्ने व्यये  
 राहुजीवी प्रेनशापात्सुतक्षय ॥९६॥ पुत्रस्थानाधिपे मदे नाशस्ये लग्ने कुजे ॥ कारके  
 नाराशिश्वेऽप्रेतशापात्सुतक्षय ॥९७॥ लग्ने पापे व्यये भानी सुते चारार्कितोमजा ॥ पुत्रेशो  
 रध्रभावस्ते प्रेतशापात्सुतक्षय ॥९८॥ लग्ने पापा व्यये भानी सुते चारार्कितोमजा ॥ पुत्रेशो  
 रध्रभावस्ये प्रेतशापात्सुतक्षय ॥९९॥ लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्ये भानुनदने ॥ कारके  
 नाराशिश्वे प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१००॥

धनभाव में मंगल, व्ययभाव में गुरु, पचमभाव में शुक हा, राहु से युक्त या दृष्ट हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है। द्वितीयेश तथा सप्तमेश अष्टम में हो पुत्रभाव में मंगल, लग्न में शनि हो और पुत्रकारक पापग्रहयुक्त हो तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है। लग्न में राहु पचम में शनि, नवम में मंगल हो, पुत्रेश तथा सप्तमेश अष्टमभाव में हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है इन दोष की शान्ति के लिए 'कन्यादान' करे लक्ष्मीनारायण की मूर्ति आभरण (गहने से) युक्त करके दान करे तथा दम गोदान करे। शय्या और भूषण दान करे। यह दान दम्पति को दे तो पुत्र प्राप्त होता है भाग्यवृद्धि होती है। यह शाप पिशाचरूप है और दुःसदायी है इसमें बमलोप होकर पितरो के शाप से वग वा नाम होता है। पचमभाव में शनि और मूर्ध हो, क्षीण चन्द्रमा मज्जम में हो लग्न में राहु तथा व्यय म गुरु हो भी प्रेनशाप से

सुतक्षय होता है ॥ शनि, पुत्रेश, ये अष्टम मे, लग्न मे मंगल हो, पुत्रकारक अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है ॥ लग्न मे पापग्रह तथा व्यय मे सूर्य हो सुतभाव मे मंगल, शनि और बुध हो तथा पुत्रेश अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है ॥ लग्न मे पापग्रह तथा व्ययभाव मे सूर्य हो, पंचमभाव मे मंगल, शनि, बुध हो तथा पुत्रेश अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है ॥ लग्न मे राहु पुत्रभाव मे शनि हो पुत्रकारक अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है ॥ (१८-१९ इन दोनो श्लोकोमे एकरूपता है) ॥१०-१०॥

लग्ने राहो च शुक्रेज्ये चन्द्रे मदयुते तथा ॥ लग्नेशे मदराशिस्ये प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०१॥ लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनदने ॥ कुजदृष्टे पुते वापि प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०२॥ कारके नीचराशिस्ये पुत्रस्थानाधिपे स्थिते ॥ नीचदृष्टे नीचयुते प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०३॥ लग्ने मदे सुते राहो रश्मे भानुसमन्विते ॥ व्यये भीमसमायोगे प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०४॥ कामस्थानाधिपे दुस्थे पुत्रे चन्द्रसमन्विते ॥ मदमादिपुते लग्ने प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०५॥ बाधस्थानाधिपे पुत्रे शनिशुक्रसमन्विते ॥ कारके नाशराशिस्ये प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०६॥ तद्दोषस्य प्रशास्यर्थे विष्णुश्राद्धं च कारयेत् ॥ रुद्रज्ञान प्रकुर्वीत ब्रह्ममूर्तिं प्रदापयेत् ॥१०७॥ धेनु रजतपात्र च नील चैव प्रदापयेत् ॥ एतत्कर्म कृते तत्र शापमोक्षं प्रजायते ॥१०८॥ पुत्रप्राप्तिर्भवेत्तस्य विप्रेभ्यो दक्षिणा दिशेत् ॥ पुत्रे राहुवरिसौम्या कारके शुभसपुते ॥ शुभेन धीक्षिते वापि बहुपुत्र समादिशेत् ॥१०९॥ पुत्रेशे शुभराशिस्ये शुभदृष्टिसमन्विते ॥ कारके केन्द्रभावस्थे बहुपुत्र समादिशेत् ॥११०॥ लग्नेशे पुत्रराशिस्ये पुत्रेशे लग्नमाश्रिते ॥ केन्द्रत्रिकोणमे जीवे बहुपुत्र समादिशेत् ॥१११॥ पुत्रस्थानगते राहो मदाशकदिवर्जिते ॥ बहुपुत्र नर विद्याच्छुभग्रहनिरीक्षिते ॥११२॥ पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नेशे शुभसपुते ॥ कारके शुभसयुक्ते बहुपुत्र समादिशेत् ॥११३॥ पुत्रस्थाने तदीशे वा गुरो या शुभवीक्षिते ॥ शुभेन सहिते वापि बहुपुत्र समादिशेत् ॥११४॥ परिपूर्णबले जीवे लग्नेशे पुत्रराशिगे ॥ पुत्रेशे बलसयुक्ते बहुपुत्र समादिशेत् ॥११५॥ पुत्रस्थानगते जीवे परिपूर्णबलान्विते ॥ लग्नेशे बलसयुक्ते पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११६॥ वर्गोत्तमराशे जीवे लग्नेशस्याशपे शुभे ॥ पुत्रेशेन युते दृष्टे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११७॥ वित्तेशे पुत्रभावस्थे परिपूर्णबलान्विते ॥ वैशेषिकाशके जीवे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११८॥ सप्राप्त्याधिपे स्वोच्चे अत्योन्मत्त्वादिबीक्षिते ॥ परस्परस्थानगते पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११९॥ पुत्रस्थानाधिपस्यांशराशिगे शुभसपुते ॥ शुभेन वीक्षिते वापि पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२०॥ लग्नपुत्राधिपी केद्रे शुभग्रहसमन्विते ॥ कुदुबेशे बलादधे तु पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२१॥ लग्नेशे दारभावस्थे दारेसे लग्नमाश्रिते ॥ द्वितीयेशे विलप्रस्थे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२२॥ दारेसे ग्रहसयुक्ते नवाशामवनाधिपे ॥ पुत्रवित्तविलप्रेशे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२३॥ इति बहुपुत्रयोगा ॥ पुत्रवित्तकलप्रेशा सयुक्ता तद्वभागया पापाशका पापयुता अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२४॥ मुदत्तप्रेशदारेसपुत्रस्थानाधिपेषु वा ॥ सर्वेषु बलहीनेषु वक्तव्या स्वनपत्यता ॥१२५॥ व्यपेशसयुताशेसे धनुराशी स्थिते यदि ॥ पुत्रेशे क्रूरपष्टशके अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२६॥ लग्नपुत्रेशरी दुस्थे कारके नीचराशिगे ॥ अनपत्यग्रहे पुत्रे अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२७॥ क्रूरपष्टशके जीवे पुत्रस्थे नाशराशिके ॥ पुत्रेशे नाशराशिस्ये अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२८॥ सप्राधिपे कुजे स्वोच्चे रश्मे

मंदंयुते रवौ ॥ शुभदृष्टि समायोगे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१२९॥ लग्ने मंदे गुरौ रंघ्रे घ्ये  
 भौमसमन्विते ॥ शुभदृष्टे स्वतुगे वा चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥ १३०॥ पुत्रस्या मवलीवजा लग्ने  
 पुत्राधिपे शुभे ॥ पुत्रेशे शुभराशित्ये चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३१॥ सुते राहृर्कगुकेज्या  
 शुभर्से शुभवीक्षिते ॥ पुत्रेशे शुभराशित्ये चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३२॥ लग्ने सौम्ये धने पापे  
 तृतीये पापलेचरे ॥ पुत्रेशे शुभराशित्ये चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३३॥ इति पुत्रयोगाः ॥  
 पुत्रस्थाने कुजे मंदे बुधलेत्रे बिलप्रपे ॥ बुधदृष्टे युते वापि तदा दत्ताः सुतादयः ॥१३४॥

लग्न में राहु, शुक्र, गुरु, चन्द्र, शनि हो, लग्नेश शनि के भाव में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय  
 होता है। लग्न में राहु हो, पुत्रस्थान में शनि हो, मंगल से दृष्ट या युक्त हो तो प्रेतशाप से  
 सुतक्षय होता है। पुत्रकारक वीचराशि में हो तथा पुत्रेश भी स्थित हो, नीचग्रह से दृष्ट या  
 युक्त हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है। लग्न में शनि, पंचम में राहु तथा अष्टम में सूर्य हो  
 तथा व्ययभाव में मंगल हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है। सप्तमेश नृनायभाव में हो,  
 पुत्रभाव में चन्द्रमा हो, लग्न में शनि और भान्दी हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है। बाघ  
 (६) स्थान का स्वामी पुत्रस्थान में हो और शुक्र शनि युक्त हो पुत्रकारक अष्टम भाव में हो  
 तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है। इस दोष की शान्ति के लिए 'विष्णुधाढ' करे, रुद्रसान करे,  
 ब्रह्मा की मूर्ति का दान करे। गो तथा चान्दी का पात्र और नील वृषभ (वैल) का दान करे।  
 यह उपाय करने से शाप की शान्ति होती है। पुत्र की प्राप्ति होती है, पुत्र प्राप्त होने पर  
 ब्राह्मणों को दक्षिणा दे। पुत्र स्थान में राहु, सूर्य, बुध हो, पुत्र कारक शुभराशि में हो, शुभग्रहों  
 की दृष्टि हो तो बहुत पुत्र होते हैं। पुत्रेश शुभराशि में हो, शुभदृष्टि युक्त हो, पुत्रकारक  
 केन्द्रभाव में हो तो बहुत पुत्र होते हैं। लग्नेश पुत्रभाव में हो, पुत्रेश लग्न में हो, गुरु केन्द्र  
 त्रिकोण में हो तो बहुत पुत्र होते हैं। पुत्रस्थान में राहु हो परन्तु शनि के नवाश में नहीं हो तो  
 बहुत पुत्र होते हैं। पुत्रेश उच्च का हो, लग्नेश शुभयुक्त हो, पुत्रकारक शुभग्रहयुक्त हो तो बहुत  
 पुत्र होते हैं। पुत्रभाव या भावेश अथवा गुरु शुभग्रह दृष्ट या युक्त हो तो बहुत पुत्र होते हैं।  
 बृहस्पति पूर्ण बलवान् हो, लग्नेश पुत्रभाव में हो, पुत्रेश भी बलयुक्त हो तो बहुत पुत्र होते हैं।  
 पुत्रस्थान में गुरु हो, पूर्णबलवान् हो तथा लग्नेश भी बलवान् हो तो पुत्रप्राप्ति का योग  
 है। बृहस्पति वर्गात्तमाश में हो, लग्नेश के नवाश का स्वामी शुभग्रह हो तथा पुत्रेश में  
 युक्त या दृष्ट हो तो पुत्रमुख होने के योग हैं। धनेश पुत्रभाव में हो और पूर्णवली हो,  
 गुरु अपने विशेष अश में हो, ऐसे योग पुत्रप्रद होते हैं। लग्न से पंचमेश उच्चराशि में हो, लग्नेश  
 पुत्रेश परस्पर दृष्टियोग या म्यान योगकर्ता हो तो पुत्रयोग होता है। पुत्रेश की नवामाश  
 राशि का स्वामी शुभग्रह हो और शुभयुक्त या दृष्ट हो तो पुत्रयोग होता है। लग्नेश पुत्रेश केन्द्र  
 में शुभग्रहयुक्त हो, तृतीयेश बलवान् हो तो पुत्रयोग है। लग्नेश मन्मेश परस्पर एव दूररे के  
 स्थान में हो और द्वितीयेश लग्न में हो तो पुत्रयोग होता है। सप्तमेश यहयुक्त हो, लग्न,  
 द्वितीय, पंचम के स्वामी नवाश के स्वामी हो तो पुत्रयोग होता है। (यें 'बहुपुत्र' योग कहें  
 गये। अब 'पुत्रहीन' योग कहने हैं।) २।५।७ भावों के स्वामी अपने नवाश में हों, और पाप  
 नबमान पापग्रह युक्त हो तो 'पुत्रहीन' योग कहना चाहिये। बृहस्पति, लग्नेश, पंचमेश,  
 मन्मेश ये सब ग्रह वर्ग आदि बलहीन हो तो 'पुत्रहीन' योग होता है। नवान् पनि स्येन

युक्त होकर अष्टमभाव में हो, पुत्रेश पापग्रह के षष्ठ्यक्ष में हो तो 'पुत्रहीन' योग होता है। लग्नेश तथा पुत्रेश तृतीय भाव में हो, पुत्रकारक नीचराशि में हो, पुत्रस्थान में पुत्रनाशक पापग्रह हो तो अनपत्य (पुत्रहीन) योग होता है। बृहस्पति पापग्रह के षष्ठ्यक्ष में हो, अष्टमेश पुत्रभाव में हो, पुत्रेश अष्टमभाव में हो तो अनपत्य योग होता है।  
यहां से देरी से पुत्र होने के योग कहते हैं।

(१) लग्नेश मंगल उच्चराशि का हो अष्टमभाव में शनियुक्त सूर्य हो, शुभदृष्टि हो तो बहुत देर से पुत्र होता है। लग्न में शनि, गुरु अष्टम में, व्यय में मंगल हो शुभदृष्टि या उच्चराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है। पुत्रभाव में शनि, गुरु बुध हो, पुत्रेश शुभग्रह हो और लग्न में अथवा शुभभाव में हो तो देर से पुत्र होता है। पुत्रस्थान में राहु सूर्य शुक्र, गुरु हो तथा पंचमभाव में शुभ राशि, शुभदृष्टि हो और पुत्रेश शुभराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है। लग्न में सौम्यग्रह तथा धनभाव में पापग्रह एवं तृतीयभाव में भी पापग्रह हो और पुत्रेश शुभराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है। (पुत्रयोग समाप्त) (अथ दत्तपुत्रयोग कहते हैं) पुत्रस्थान में मंगल तथा शनि बुध राशि में हो और लग्नेश को बुध देवता हो अथवा युक्त हो तो 'दत्तपुत्र' होता है। १०१-१३४॥

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मदक्षेत्रेऽप्यवा भवेत् ॥ मदमादियुते दृष्टे तदा दत्ता सुतादय ॥१३५॥  
पुत्रस्थाने बुधे क्षेत्रे बुधसस्येक्षितेऽपि वा ॥ लग्नाधिपे शनौ वापि दत्तपुत्रा भवति हि ॥१३६॥  
पुत्रेशे मदसयुक्ते कुजे सौम्यनिरीक्षिते ॥ लग्नाधिपे बुधाशे वा दत्तपुत्रा भवति हि ॥१३७॥  
कामेशे लाभभावस्ये पुत्रेशे शुभसयुते ॥ पुत्रे मदे बुधे वापि दत्तपुत्रा भवति हि ॥१३८॥ पुत्रेशे भाग्यभावस्ये भाग्येशे कर्मराशिगे ॥ पुत्रे मदजदृष्टे तु दत्तपुत्रेण सतति ॥१३९॥ लग्नाधिपे भृगोश्चोच्चे पुत्रे मदसमन्विते ॥ कारके बलसयुक्ते दत्तपुत्रात्तु सतति ॥१४०॥ पुत्रस्थानाधिपे च्छे लग्ने पुत्रे शनैश्चरे ॥ परिपूर्णबले जीवे दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ॥१४१॥ पुत्राधिपे रवौ लग्ने पुत्रस्थौ शनिसोमजौ ॥ पुत्राधिपे बलसयुते दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ॥१४२॥ लग्नाधिपे बुधे पुत्रे कुजदृष्टिसमन्विते ॥ कारके लाभराशिस्ये दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ॥१४३॥ लग्नाधिपे गुरौ पुत्रे शनिदृष्टिसमन्विते ॥ पुत्रेशे भीमराशिस्ये दत्तपुत्रा भवति हि ॥१४४॥ वशान्तो हरिरुष्णगौ त्रिपुरहाक्षे भूसुते रुद्रिय सौम्ये सपुटकास्पपात्रविधिवज्जीवे च पैश्यातिथि ॥ शुक्रौ गोश्रतियालन च कश्चित मदे च मृत्युजय ॥ कन्यादानभुजगकेतुकपिला सतानसौख्यप्रद ॥१४५॥ यावत्सख्या भवेद्राशिस्ताबद्धार धितिर्दिशेत् ॥ शिवविष्णुस्वापनाद्दालक्षयोगात्सुख भवेत् ॥१४६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे सतानभावफलादेशवर्णन  
नाम षोडशोऽध्याय ॥१६॥

पुत्रभाव में बुधराशि या शनिराशि हो, शनि या भान्दी में युक्त या दृष्ट हो तो दत्तपुत्र (गोद का पुत्र) होता है। पुत्रस्थान में बुधराशि युधयुक्त या दृष्ट हो और लग्नपति शनि हो तो दत्तपुत्र होता है। पुत्रेश शनि में युक्त हो, मंगल को बुध देवता हो और लग्नेश बुध के

नवाश मे हो तो दत्तपुत्र होता है। राप्तमेश लाभस्थान मे हो पुत्रेश शुभग्रहयुक्त हो पुत्रभाव मे शनि या बुध हो तो दत्तपुत्र होता है। पुत्रेश भान्यभाव मे हो, भाग्येश दशमभाव मे और पचम शनि से दृष्ट हो तो दत्तपुत्र होता है। उन्वराशस्थित शुक्र लग्नेश हो, पुत्रभाव मे शनि हो और पुत्रकारक बलवान् हो तो 'दत्तपुत्र' होता है। पचमेश चन्द्रमा हो लग्न या पुत्रभाव मे शनिश्चर हो, गुरु पूर्ण बली हो तो दत्तपुत्र होता है। पुत्रेश सूर्य लग्न मे हो, पुत्रस्थान मे शनि, बुध हो, पुत्रस्थान स्वामी बलवान् हो तो दत्तपुत्र होता है। लग्नस्वामी बुध हो, पचम भाव पर मंगल की दृष्टि हो, पुत्रकारक बलवान् हो और लाभस्थान मे हो तो दत्तपुत्र से सुख होता है। १४४। लग्नेश गुरु पुत्रभाव मे हो, पुत्रभाव पर शनि की दृष्टि हो और पुत्रेश मंगल की राशि मे हो तो दत्तपुत्र होता है।

(अब पुत्रोत्पत्ति के लिये उपाय कहते है)

सूर्य के दोष मे 'हरियश पुराण' श्रवण करना, चन्द्रदोष मे महादेवजी का प्रदोष व्रत तथा उद्यापन, मंगलदोष मे 'हृद्राभियेक' बुधदोष मे 'सम्पुट कासीपात्र मे घृत सुवर्ण दान, गुरुदोष मे पितृपूजा, शुक्रदोषमे 'गोपालन' (या गोदान) शनिदोष मे मृत्युजय मन्त्र-पुरश्चरण और राहु-केतु के दोष अथवा शापजनित दोष मे पूर्वोक्त कन्यादान, सुवर्ण भुजगदान, कपिला, गोदान आदि उपाय सन्तान सुख देनेवाले है। राशि की सख्या के अनुरूप उपाय की आवृत्ति कहना अथवा शिव विष्णु की स्थापना करना या सन्तान गोपाल आदि के पुरश्चरण आदि से सुख कहना ॥१३५-१४६॥

इति श्री वृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० सतानभावकफलादेश वर्णन  
नाम षोडशोऽध्याय ॥१६॥

### अथ नाभसयोगमाह

अधुना वै विस्तरतः कथिता योगास्तु नाभसा नाम्ना ॥ अष्टादशशतगुणितस्तेषां संक्षेपतो  
वक्ष्ये ॥१॥ आश्रयाख्यास्त्रयो योगा दलयोगद्वय ततः ॥ आकृतिर्विशतिः संख्या योगानां सप्तक  
स्मृतम् ॥२॥ रज्जुयोगो मूशलश्च नतो मालामुजंगमी ॥३॥ गदायोगश्च शकटः  
शृंगाटकविहंगमी ॥ हलवज्रयवाश्रैव कमलो वापियूपकी ॥४॥ शरशक्तिव उनीकाकूटच्छप्रधनूं-  
पि च ॥ अर्द्धन्दुयोगश्चकात्यः समुद्रश्चेति विशतिः ॥५॥ घोषादात्मनिकायोगः  
पाशाकेदारशूतकाः ॥ युगगोली ततः प्रोक्ती योगा द्वात्रिंशका इमे ॥६॥

### अथाश्रययोगत्रयमाह

सर्वे घरस्था अपि वा स्थिरस्था द्विदेहस्था यदि वा भवति ॥ क्रमेण रज्जुमुंशत नतश्च  
योगत्रयं स्यादिदमाश्रयाल्पम् ॥७॥

#### नाभस योग

अब हम विस्तार मे 'नाभस' नाम के जो योग पूर्व आचार्यों ने कहे है जो वि-मय  
मिलाकर १८०० है उनमे से मुख्य मुख्य योग-गणेश मे बहने ॥ तीन आश्रय नाम के योग है।

दल योग २ है। आकृति नाम के योग २० है, योग नाम के ७ हैं, जिनके विशेष नाम रज्जू, मूसल, नल, माला, भुजङ्गम्, गदा, शकट, शृङ्गाटक, विहङ्गम, हल, बज्र, यव, कमल, वापी, यूपक, शर, शक्ति, दण्ड, नौका, कूट, छत्र, धनुष, अर्धेन्दु, चक्र और समुद्र ये २० हैं। बीणा, दामनिका, पाश, केदार, शूलक, मृग, गोल ये ७ हैं। सब मिलकर ३२ योग होते हैं। १-६॥

### तीन आश्रययोग

सब ग्रह यदि चर राशि में हों तो 'रज्जू' योग और स्थिर राशि में 'मूसल' तथा द्विस्वभाव राशि में हों तो 'नल' योग होता है। ये आश्रय नाम के ३ योग हुए। ७॥

### अथ दलाख्ययोगद्वयमाह

केन्द्रत्रये सौम्यस्वर्गस्तु माला खलग्रहैर्व्यलिसमाह्वयः स्यात् ॥ इदं तु योगद्वितयं दलाख्य मुनीश्वरेण प्रतिपादितं हि ॥८॥

### अथाकृतियोगविंशतिमाह

आसन्नकेन्द्रद्वयर्गदाख्यो लग्नास्तस्यैः शकटः समस्तैः ॥ खबधुयातेर्विहगः प्रदिष्टः शृंगाटक लग्नवात्मजस्यैः ॥९॥ धनारिखस्यैस्त्रिमदायर्गैर्वा चतुर्थरघ्नव्ययसस्थितैर्वा ॥ नभस्तलस्यै-  
र्हस्तनामयोगः किलोदितोय निहितलग्नैः ॥१०॥ लग्नस्मरस्थानगतैः शुभाख्यैः पार्ष्ण  
मेष्णवधुयातैः ॥ वज्राभिधस्तैर्विपरीतसस्यैर्व्यवश्च मिथैः कलमाभिधानः ॥११॥ त्यक्त्वा  
केद्राणि चेत्येदा शेषस्थानेषु सस्थिताः ॥ वापीयोगो भवेदेव गदितः पूर्वगूरिभिः ॥१२॥  
लग्नाच्चतुर्थ्यात्स्मरतः खमध्याच्चतुर्गृहस्यैर्गनेचरेद्रैः क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्डः प्रदिष्टः  
खनु जातकज्ञैः ॥१३॥ लग्नाच्चतुर्थ्यात्स्मरतः खमाद्यात्सप्तर्षीर्नोर्नोरथकूटसज्ञैः ॥ छत्र  
धनुश्चान्यगृहप्रवृत्तैर्नोर्पूर्वकैर्योग इहाईचन्द्रः ॥१४॥ तनोर्धनादेकगृहातरेण स्युः स्थानपदके  
गनेचरैर्द्राः ॥ चक्राभिधानश्च समुद्रनामा योगा इतीहाकृतिजाश्च विशत् ॥१५॥

### दो दल योग

तीन केन्द्र स्थानों में सौम्य ग्रह हों तो 'माला' योग होता है और पापग्रह हों तो 'ब्याल' योग होता है। इस प्रकार ये दो दल योग मुनीश्वरों ने कहे हैं। ८॥

### चौस आकृति योग

समीप के दो केन्द्र स्थानों में यदि सब ग्रह हों तो सब योग। लग्न और सप्तम में सब ग्रह हों तो 'शकट' योग। दसवे और तीसरे स्थान में 'विहग' योग। लग्न, पंचम, नवम में सब ग्रह हों तो 'शृङ्गाटक' योग। दूसरे, छठे, दसवे अथवा तीसरे, मातवे, म्यारहवे एव चौधे, आठवे, बारहवें में सब ग्रह हों तो 'हल' नाम का योग शास्त्राचार्यों ने कहा है। लग्न सप्तम स्थान में शुभग्रह हों, तीसरे, दसवे स्थान में पापग्रह हों तो 'बज्र' योग होता है। इसके विपरीत हों तो 'यव' नाम का योग होता है। और मिले जुले ग्रह हों तो 'कमल' नाम का योग होता है। केन्द्र स्थान को छोड़कर बाकी स्थानों में सब ग्रह हों तो 'वापी' नाम



और स्थिर-चित्त होते हैं। 'नल' योग में होनेवाले जातक कम या अधिक अङ्ग वाले, कजूस, व्यापार में निपुण, मुडील और बन्धु से हित चाहनेवाले होते हैं। 'माला' योग में जन्म लेनेवाले जातक ज़दा सुखी, अन्न, वस्त्र, भोग, वाहन, सम्पन्न, बहुस्त्रीभोगी होते हैं। 'मर्प' योग में होनेवाले क्रूर स्वभाव, दरिद्र, नित्य दुःखी, दोन और सर्वभक्षी होते हैं। 'गदा' योग में पैदा हुए जातक सदा उद्योगशील, यज्ञ आदि धार्मिक कार्य करनेवाले, ज्ञास्त्रज्ञान में कुशल, सुवर्ण आदि सम्पत्ति से युक्त होते हैं। 'शकट' योग में होनेवाले मनुष्य रोगी कुनखी, मूर्ख, सवारी से जीविका चलानेवाले, मित्र-स्वजन हीन, और दरिद्री होते हैं। 'विहग' योग में होनेवाले मनुष्य भ्रमण रुचि, नौकर, कामी, धृष्ट और कलह प्रिय होते हैं। 'शृङ्गाटक' योग में होनेवाले मनुष्य कलह प्रिय, युद्ध प्रेमी, सुखी, राजा के प्यारे, अच्छी स्त्रीवाले और धनी होते हैं।

॥१७-२५॥

बह्माशिनो दरिद्रा कृपीवला दुःखिताश्च सोद्रेगा ॥ बधुसुहृद्भिः सक्ता प्रेष्या हलसज्जेके सदा पुरुष्या ॥२६॥ आद्यतवय सुखिन शूरा सुभगा निरीहाश्च ॥ भाग्यविहीना बन्धे जाता खला विरुद्धाश्च ॥२७॥ व्रतनियममगलपरा वयसो मध्ये मुष्णार्थपुत्रयुता ॥ दातार स्थिरचित्ता यवयोगभवा सदा पुरुष्या ॥२८॥ विभवगुणाढ्या पुरुष्या स्थिरामुषो विपुलकीर्तय शुद्धा ॥ सुमशतका पृथ्वीशा कमलभवा मानवा नित्यम् ॥२९॥ निधिकरणे निपुणधिय स्थिरार्थमुख सयुता सुतयुताश्च ॥ नयनमुखसप्रहृष्टा वापीयोगेन राजान ॥३०॥ आत्मविदिज्यानिरत स्त्रिया युत सत्त्वसपन्न ॥ व्रतनियमनिरतो यूषे जातो विशिष्टश्च ॥३१॥ दृष्ट करणे दस्युबधनमृगयाधनसेविताश्च मासादा ॥ हिला कुशिल्पकारा शरयोगे मानवा प्रसूयते ॥३२॥ धनरहित विफलदुःखितनीचालसाश्चिरायुष पुरुष्या ॥ सप्रामयुद्धिनिपुणा शतया जाता स्थिरा शुभगा ॥३३॥ हतपुत्रदारनिस्वा सर्वत्र च निर्घृणा स्वजनबाह्या ॥ दुःखितनीचप्रेष्या दडप्रभवा भवति नरा ॥३४॥ सलिलोपजीविविभवा बह्माशा ख्यातकीर्ते यो दुष्टा ॥ कृपणा मलिना लुब्धा नोसजाता खला पुरुष्या ॥३५॥

'हल' योग में होने वाले मनुष्य बहुभोजी, दरिद्री, सेतिहर दुःखी, चिन्ताशील, इष्टमित्रों में रात दिन रहनेवाले होते हैं। 'बन्ध' योग में पैदा होनेवाले मनुष्य बन्धन और मुडापा में सुखी, बुरखीर सौभाग्ययुक्त और निष्कामी होते हैं। यव योग में पैदा हुए मनुष्य बत, नियम, सयगशील तथा जबानी में सुखी धन-पुत्रयुक्त दानी और स्थिर चित्त होते हैं। 'वमल' योग में होनेवाले वैभवशाली दीर्घायु कीर्तिमान्, शुद्धाचरणी, राज्या होते हैं। 'वापरी' योग में होनेवाले धन सच्यकारी, स्थिर सुख सम्पन्न, सुख सतान से युक्त, स्थिर इन्द्रियोवाले राजा के समान होते हैं। 'यूप' नामक योग में पैदा हुए जातक आत्मज्ञानी, कर्मयोगी, विद्वान, माहसी, गृहस्थ-धर्म-सम्पन्न, समाज में विशिष्ट व्यक्ति होता है। 'शर' योग में हुआ जातक अपना मतलब सिद्ध करने में निपुण, शिवारी, चोर, ठग, मासाहारी, हिंसक और नीच कार्य करनेवाला होता है। 'शक्ति' योग में पैदा हुए मनुष्य निर्धन, विफल मनोरथ, दुःखी, नीच, भावसी, दीर्घायु, जगडालू और दृढप्रतिज्ञ होते हैं। दण्ड योग में होने वाले निर्धन, स्त्रीपुत्रहीन, सर्वभक्षी, समाज बहिष्कृत, दुःखी, नीच, नौकर होते हैं। 'नीका' योग में पैदा हुए मनुष्य नदीबासी, बहुभोजी, विख्यात, दुष्ट, कृपण, मलिन, लोभी और चुगलनोर होते हैं ॥२६-३५॥

अनतकथनबधपाया निष्किचता शठा क्रूरा ॥ कूटसमुत्था नित्य भवति गिरिदुर्गवासिनो  
 मनुजा ॥३६॥ स्वजनाश्रयो दयावाघ्नानानुपबल्लभ प्रकृष्टमति ॥ प्रथमोऽस्ये वयसि नर  
 सुखवान्दीर्घायुरातपत्री स्यात् ॥३७॥ आनृतिकगुण्ठपापाश्रीरा कितवाश्च कानने निरसा ॥  
 कार्मुकयोगे जाता माग्यविहीना शुभा वयोमध्ये ॥३८॥ सेनापतय सर्वे कातशरीरा नृपप्रिया  
 वलिन ॥ मणिकनकभूषणयुता भवति योगे बार्धचद्वाल्ये ॥३९॥ प्रणताशेषनराधिपकिरीटर-  
 त्नप्रभास्फुरितपाव ॥ भवति नरेंद्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे ॥४०॥ बहुरत्नघनसमृद्धा  
 भोगयुता धनजनप्रिया समुता ॥ उर्वधिसमुत्था पुरुषा स्थिरविभवा साधुरीलाश्च ॥४१॥  
 प्रियगीतनृत्यवाद्यनिपुणा सुखिनश्च धनवन्त ॥ नेतारो बहुमृत्या वीणाया कीर्तिता पुरुषा  
 ॥४२॥ दामिन्यामुपकारी नयधनयुक्ते महेश्वर स्यात् ॥ बहुसुतरत्नसमृद्धो धीरो जायेत  
 विद्वाश्च ॥४३॥ पाशे बधनभाज कार्ये दया प्रपचकाराश्च ॥ बहुभाषिणो विशीला बहुमृत्या  
 सप्रतानाश्च ॥४४॥ सुबहूनामुपयोज्या कृषीबला सत्यवादिन सुखिन ॥ केदारो  
 समूताश्चतस्वभावा धर्मेयुक्ता ॥४५॥

‘कूट’ योग मे पैदा हुए मनुष्य झूठे पापी और हिंसक, दरिद्र, शठ, क्रूर और बनवासी होते हैं। ‘छत्र’ योग मे होने वाले आश्रय दाता दयावान, राजबल्लभ, श्रेष्ठ बुद्धिवाले, सुखी, दीर्घायु, बाल्य और वृद्ध अवस्था के सुखी होते हैं। धनुष योग मे होनेवाले झूठे चोर गुप्त पापी, धूर्त, जगलवासी, भाग्यहीन, जबानी मे सुखी होते हैं। ‘अर्धचन्द्रयोग’ मे होने वाले जातक सेनापति, सुन्दर शरीर, राजप्रिय, वनवान् धनी होते हैं। जो महाभाग ‘चक्र’ योग मे जन्म लेते हैं वे राजाधिराज होते हैं और राजा लोग उनके चरणो मे सदा प्रणाम करते हैं। ‘समुद्र’ योग मे जन्म लेनेवाले सदा ऐश्वर्यशाली, श्रेष्ठ आचारवाले, धनीजनो के मान्य भोगी, वैभवयुक्त बहु पुत्रवाले होते हैं। ‘वीणा’ योग मे होनेवाले जातक गान-बाद्य नृत्य मे निपुण और धनवान्, सुखी, नेता तथा बहुत कर्मचारीवाले होते हैं। ‘दामिनी’ योग मे जन्म लेनेवाले उपकारी, नीतिमान् धनी, ऐश्वर्यशाली, विख्यात बहुत परिवारवाले और धीर होते हैं। ‘पाश’ योग मे पैदा हुए मनुष्य कभी कभी बन्द भोगनेवाले, छल छिद्रकारी, चतुर, बहु भाषी (बकवादी), शीलरहित, डपोरशख होते हैं। ‘केदार’ योग मे पैदा होनेवाले सत्यवादी, सुखी, चञ्चल स्वभाववाले, धनी और उपकारी होते हैं ॥३६-४५॥

तोष्णालसधनहीना हिंसा सुबहिष्कृता महासूरा ॥ सप्रामे सस्यशब्दा शूले योगे भवति नरा  
 ॥४६॥ पाण्डवादिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके ॥ सुतभातृधर्मरहिता पुण्ययोगे मे  
 नरा जात ॥४७॥ बलसयुक्ता विघना विद्याविज्ञानवर्जिता मलिना ॥ नित्य दुःखितदीना  
 गेले योगे भवति नरा ॥४८॥ सधार्त्स्वयि दशास्येते भवेयुः फलदायिन ॥ प्राणिनामिति  
 धिजेया प्रवदति तवाग्रजा ॥४९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे नामस्ययोगादि फलकथन  
 नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

‘शूल’ योग में पैदा हुए मनुष्य तीक्ष्ण स्वभाववाले, आलसी, धनहीन, हिंसक, बलवान् किन्तु समाज से निन्दित होते हैं। ‘युग’ योग में होने वाले मनुष्य पाखण्डी, झूठे, दरिद्र, समाज से निन्दित, धर्ममर्यादा रहित होते हैं। ‘गोल’ योग में होनेवाले मनुष्य बलवान्, निर्धन, ज्ञान और विचाररहित, मलिन और सदा दुःखी होते हैं। हे मैत्रेय! ये योग अपना पूरा फल विशेष करके सभी दशा में दिखाते हैं ॥४६-४९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भा० प्र० नाम त्रयोणादिकफलकथन  
नाम सप्तदशोऽध्याय ॥१७॥

### अथ गजकेसरियोगमाह

केन्द्रस्थिते देवगुरौ मृगाकाद्योगस्तदाहुर्गजकेसरोति ॥ दृष्टे युते वेदसुते शशाके  
भीचास्तहीर्नर्गजकेसरी स्यात् ॥१॥ गजकेसरिसंज्ञातस्तेजस्वी धनवान् भवेत् ॥ मेधावी  
गुणसापन्नो राजप्रियकरो भवेत् ॥२॥

### अथाऽमलायोगमाह

यस्य जन्मसमये शशिलप्रात्सद्ग्रहे यदि च जन्मनि सस्य ॥ तस्य कीर्तिरमला भुवि  
तिष्ठेदायुषोन्तमविनाशनसपत् ॥३॥ लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा दशमे शुभसयुते ॥ योगोयममला  
नाम कीर्तिराचन्द्रतारकी ॥४॥ राजपूज्यो महाभोगी दाता बन्धुजनप्रिय ॥ परोपकारी  
गुणवानमलायोगसम्भव ॥५॥

### गज केसरी योग

चन्द्रमा से बृहस्पति केन्द्र में हो तो गजकेसरी नाम का योग होता है। और नीच और अस्तरहित ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त बुध या चन्द्रमा हो तो भी गजकेसरी योग होता है। गजकेसरी में उत्पन्न हुआ मनुष्य तेजस्वी, धनवान्, बुद्धिमान्, गुणी और राजप्रिय होता है ॥१॥२॥

### “अमला” योग

जिस जातक के जन्म समय में चन्द्रमा यदि शुभग्रह के साथ लग्न में हो अथवा लग्न में शुभग्रह हो या चन्द्रमा के साथ शुभग्रह हो तो उस जातक की निर्मल कीर्ति होती है और जीवन पर्यन्त सम्पत्तिशाही रहता है। लग्न से या चन्द्र लग्न से दशमभाव में शुभग्रह हो तो ‘अमला’ नाम का योग होता है। इस योग में होनेवाले जातक का यश मसार में अनन्तकाल तक रहता है और वह जातक महाभोगी, राजपूज्य, दाता, समाजप्रिय, परोपकारी एवं गुणवान् होता है ॥३-५॥

## अथ मालिकायोगमाह

सप्तादिसप्तगृहणा यदि सप्तखेटा जातो महीपतिरनेकगजाश्वनाथः ॥ धितादिगे निधिपतिः पितृभक्तियुक्तो धीरोग्ररूपधनवान्नरचक्रवर्ती ॥१२॥ जातो यदा विक्रममालिकाया भूपः स शूरो धनिकश्च रोगी ॥ सुखादिका चेद्रहुदेशभाग्यभोगी महादानपरो महीपः ॥१३॥ पुत्राद्या यदि मालिका नरपतिर्यज्वाय वा कीर्तिमान् जातः पष्टगृहाद्ग्न च सुखभृत्प्रातो दरिद्रो भवेत् ॥ कामाद्या गृहमालिका यदि बहुस्त्रीवल्लभो भूपतिर्दीर्घायुर्धनवर्जितो नरवरः स्त्रीनिर्जितश्चाष्टमात् ॥१४॥ धर्मादिग्रहमालिकागुणनिधिर्यज्वा तपस्वी विभुः कर्माद्यो यदि धर्मकर्मनिरतः सपूजितः सज्जनैः ॥ साम्राज्यवरारंगनामणिपतिः सर्वक्रियादक्षको जातो रिःफगृहाद्बहुव्ययकरः सर्वत्र पूज्यो भवेत् ॥१५॥

### मालिका योग

लग्न से सप्तमभाव तक सात भावों में सूर्यादि सात ग्रह प्रत्येक घर में १-१ ग्रहरूप से स्थित हो तो यह 'मालिका' या 'माला' योग होता है। इस योगमें होनेवाला हाथी घोड़े युक्त राजा होता है। यही योग यदि धनभाव से हो तो बहुधनी, पितृभक्त, धीर, प्रतापी रूपवान्, उपस्वभाववाला राजाधिराज होता है और यही योग तृतीय भाव से हो तो शूरवीर, धनिक तथा राजा और रोगी होता है। और चतुर्थ स्थान से हो तो महादानी, महाभाग्यशाली महाराजा होता है। पंचमभाव से यदि 'माला' योग हो तो जातक यशस्वी, धार्मिक राजा होता है। छठेभाव से यह योग हो तो बनवासी, दरिद्र होता है। सप्तमभाव से 'माला' योग हो तो बहुस्त्रीभोगी, दीर्घायु राजा होता है। अष्टमभाव से यह योग हो तो धनहीन और स्त्री के आधीन रहनेवाला होता है। नवमभाव से यह योग हो तो मुणी, यज्ञ करनेवाला तथा तपस्वी होता है। दशमभाव से यह योग हो तो धर्मकर्मज्ञाता तथा सज्जन वदनीय होता है। जाभस्थान से यह योग हो तो महासुन्दरी भार्या होती है तथा सब कामों में शत्रु होता है। यही योग बारहवें भाव से हो तो बहुत खर्च करनेवाला तथा सर्वपूज्य होता है ॥१२-१५॥

## अथ चामरयोगमाह

लग्नेश्वरे केन्द्रगते स्वतुगे जीवेक्षिते चामरनामयोगः ॥ सौम्यद्वये लग्नगृहे कलत्रे नवास्पदे वा यदि चामरः स्यात् ॥१६॥ योगे जातश्चामरे राजपूज्यो विद्वान्वाग्मी पंडितो वा महीपः ॥ सर्वज्ञः स्याद्वेशशास्त्राधिकारी जीवेद्वर्षे सप्ततिर्वत्तराणाम् ॥१७॥

### चामर योग

लग्नेश उच्चराशि का होकर केन्द्र में हो और गुरुदृष्टि हो तो 'चामर' योग होता है। अथवा दो शुभग्रहों में से १-१ लग्न और सप्तम में इसी प्रकार नवम और आस्पद(१०) में हो तो भी 'चामर' योग होता है। इस चामर योग में होनेवाला राजपूज्य, विद्वान्, वाक्पटु, ज्ञानी, वेद और शास्त्र का अधिकारी ७० वर्ष आयु वाला राजा होता है ॥१६॥१७॥

### अथ शङ्खयोगमाह

अन्योन्यकेन्द्रगृहणौ सुतशत्रुनाथौ लग्नाधिपे बलपुते यदि शङ्खयोग ॥ लग्नाधिपे च गगनाधिपतौ चरस्थे भाग्याधिपे बलपुते तु तथा ववति ॥१८॥ शखे जातो भोगशीलो दयालुः स्त्रीपुत्रार्थः क्षेत्रवान्युष्यकर्मा ॥ शास्त्रज्ञानाचारसाधुक्रियावान् जीवेद्वर्षं वत्सराणामशीतिम् ॥१९॥

#### शङ्खयोग

पचम तथा षष्ठभावस्वामी परस्पर केन्द्र में हों और लग्नेश बलवान् हो तो 'शङ्ख' योग होता है। इसी प्रकार लग्न, दशम के स्वामी चरराशि में हों और भाग्येश बलवान् हो तो भी 'शङ्ख' योग होता है। शङ्ख योग में होनेवाला भोगी, दयालु, धन, स्त्री पुत्र वात्सा, भूमिपति, पुण्यात्मा, शास्त्रज्ञानी श्रेष्ठकर्म करनेवाला और प्रायः ८० वर्ष का दीर्घायु होता है ॥१८॥१९॥

### अथ भेरीयोगमाह

स्वात्योदयास्तभवनेषु विषज्वरेषु कर्माधिपे बलपुते यदि भेरियोग केन्द्रे गते मुरगुरी सितलग्ननाथौ भाग्येश्वरे बलपुते तु तथैव वाच्यम् ॥२०॥ दीर्घायुषो विगतारोगभया नरेन्द्र बह्वर्षभूमिसुतदारयुता प्रसिद्धा ॥ आचारभूरिसुतशौर्व्यमहानुभावा भेरीप्रजातमनुजा निपुणा कुलीना ॥२१॥

#### भेरी योग

लग्न, द्वितीय, द्वादश और सप्तमस्थान में सब ग्रह हों और दशमेश बलवान् हो तो 'भेरी' योग होता है। तथा लग्नेश, शुक्र, गुरु केन्द्र में हों तथा भाग्येश बलवान् हो तो भी 'भेरी' योग होता है ॥२०॥ इस योग में होनेवाला जातक रोगभयरहित धनभूमिसम्पन्न, स्त्री पुत्र युक्त, दीर्घायु, प्रसिद्ध, आचारवान् सुमी तथा शूरवीर कुलीन राजा चतुर होता है ॥२०-२१॥

### अथ मृदंगयोगमाह

उच्चग्रहाशरूपतौ यदि केन्द्रकोषे तुगस्वकीपभवतोपगते बलादधे ॥ लग्नाधिपे बलपुते तु मृदंगयोग कल्याणरूपनृपतुल्यपरा प्रदः स्यात् ॥२२॥

#### मृदंग योग

उच्चराशित्थित नवाप्तस्वामी यदि केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हों और लग्नेश बलवान् होकर उच्च या स्वगृही हों तो 'मृदंग' योग होता है। इस योग में होनेवाला सुन्दर रूप, युगो से युक्त राजा के समान यश प्रतापवाना होता है ॥२२॥

### अथ श्रीनाथयोगमाह

कामेश्वरे कर्मगते स्वतुगे कर्माधिपे भाग्यपसपुते च ॥ श्रीनाथयोग शुभदस्तदानीं जातो नरः राजतमो नृपालः ॥२३॥

## श्रीनाथ योग

सप्तमेश दशमभाव मे उच्चराशि मे हो और दशमेश भाग्यस्थान मे हो तो 'श्रीनाथ' योग होता है। इस योग मे सजात मनुष्य महाप्रतापी राजा होता है। ॥२३॥

## अथ शारदायोगमाह

योगः शारदसप्तकः सुतगते कर्माधिपे चंद्रजे केन्द्रस्ये दिननाथके निजगृहप्राप्तेतिवीर्यान्विते।  
चंद्रात्कोणश्रुते पुरंदरगुरौ सौम्यत्रिकोणे कुजे लाभे वा यदि देवमत्रिणि बुधास्तच्छारदासप्तकः  
॥२४॥ स्त्रीपुत्रबंधुमुखरूपगुणानुरक्ता भूप्रियागुरुमहीसुरदेवभक्ताः ॥ विद्याधिनोदरतिशील  
तपोबलाढ्या जाताः स्वधर्मनिरता भूवि शारदास्ये ॥२५॥

## शारदा योग

पञ्चमेश दशमभाव मे हो और बुध केन्द्र मे तथा सूर्य पूर्ण बलयुक्त स्वगृही हो तो 'शारदा' योग होता है। तथा चन्द्रमा से गुरु त्रिकोण स्थान मे हो, सौम्यग्रह त्रिकोण मे, मंगल लाभस्थान मे या गुरु लाभ मे हो तो 'शारदा' योग होता है। इस योग मे होनेवाला स्त्री पुत्र-युक्त, सुखी, रूपवान्, गुणी, राजप्रिय, गुरु देवता का भक्त, धर्मशील, विद्यावान्, कामक्रीडा रत तपोबल संपन्न होता है। ॥२४॥ ॥२५॥

## अथ मत्स्ययोगमाह

लग्नधर्मगते पापे पचमे सदसद्युते ॥ चतुरस्र गते पापे योगोऽय मत्स्यसप्तकः ॥२६॥ काततः  
करुणासिंधुर्गुणधोर्बलरूपवान् ॥ यशोविद्यातपस्वी च मत्स्ययोगसमुद्भवः ॥२७॥

## मत्स्य योग

लग्न तथा नवमभाव मे पापग्रह, पचमभाव मे शुभपाप मिथितग्रह हो और केन्द्र मे भी पापग्रह हो तो 'मत्स्य' योग होता है। इस योग मे होने से दैवज्ञ, दयावान्, बल बुद्धि गुण रूपवाला, यशस्वी विद्वान् तपस्वी होता है ॥२६-२७॥

## अथ कूर्मयोगमाह

कलत्रपुत्रारिगृहेषु सौम्याः स्वतुगमित्रांशकराशियाताः ॥ तृतीयलाभोदयनास्त्वसौम्या  
मित्रोच्चसस्यो यदि कूर्मयोगः ॥२८॥ विख्यातकीर्तिर्भुवि राज्यमोगी धर्माधिकः  
सत्त्वगुणप्रधानः ॥ धीरः मुखी वागुपकारकर्ता कूर्मोद्भवो मानवनाथको वा ॥२९॥

## कूर्म योग

५।६।७ स्थानो मे सौम्यग्रह, उच्च स्वगृही या मित्रनवाश मे हो और लग्न, तृतीय तथा लाभस्थान मे उच्च या मित्रराशि मे पापग्रह हो तो 'कूर्मयोग' होता है। ॥२८॥ इस योग मे होनेवाला विख्यात् कीर्ति, राजसमान ऐश्वर्यसम्पन्न, धर्मात्मा सात्त्विक, धीर, मुक्ती, व्याख्याता जननामक होता है ॥२८-२९॥

### अथ खड्गयोगमाह

भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे ॥ लग्नेशे केन्द्रकोणस्थे खड्गयोग इतीरितः ॥३०॥  
वेदार्थशास्त्रनिलितागमतस्त्रयुक्तिबुद्धिप्रतापबलवीर्यमुखानुरक्ताः ॥ निर्मत्तराश्च निजवीर्य-  
महानुभावाः खड्गे भवति पुरुषाः कुशलाः कुतज्ञाः ॥३१॥

#### खड्ग योग

भाग्येश धनभाव में एव धनेश भाग्यस्थान में हो और लग्नेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'खड्गयोग' होता है। इस योगमें होनेवाला वेदादि शास्त्र का ज्ञाता, बुद्धिमान्, प्रतापी, सुवी, द्वेषरहित, अपने उद्योग से उन्नति करनेवाला कुतज्ञ और कुशल होता है ॥३०॥३१॥

### अथ लक्ष्मीयोगमाह

केंद्रमूलत्रिकोणस्थे भाग्येशे परमोच्चगे ॥ लग्नाधिपे वृत्तादधे च लक्ष्मीयोग इतीरितः ॥३२॥  
गुणाभिरामो बहुदेरानायो विद्यामहाकीर्तिरनंगरूपः ॥ दिगंतविश्रांतनृपालवद्यो राजाधिराजो  
बहुदारपुत्रः ॥३३॥

#### लक्ष्मी योग

परमोच्चराशि स्थित भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण में हो और लग्नेश बलवान् हो तो 'लक्ष्मी' नामक योग होता है। इस योग में सञ्जात व्यक्ति विद्वान्, सुन्दरराजा तथा महाराजाधिपति एव अनेक स्त्री पुत्र वाला होता है ॥३२॥३३॥

### अथ कुसुमयोगमाह

स्थिरलग्ने भृगी केन्द्रे त्रिकोणैवौ शुभेतरौ ॥ मानस्थानगते सौरे धोणोय कुसुमो भवेत् ॥३४॥  
दाता मही-मडलनायवद्यो भोगी महावराजराजमुख्यः ॥ लोके महाकीर्तिपुतः प्रतापी नाथो  
नराणा कुसुमोद्भवः स्यात् ॥३५॥

#### कुसुम योग

स्थिर राशि का लग्न हो, शुक्र केन्द्र में तथा चन्द्रमा त्रिकोण में एव पापग्रह और जनि मानस्थान (दशम) में हो तो 'कुसुम' योग होता है ॥३४॥ इस योग में होने से दानशील राज वैद्य भोगी, राजाधिराज, यशप्रताप युक्त होता है ॥३५॥

### अथ पारिजातयोगमाह

विलग्ननायस्थितराशिनावस्थानेगाराशोरातवंशनायाः ॥ केन्द्रत्रिकोणोपगता यदि स्युः  
स्थतुंगगा वा यदि पारिजातः ॥३६॥ मध्यांतसौख्यः क्षितिपालवंद्यो पुद्गप्रियो  
वारणवाजियुक्तः ॥ स्वकर्मधर्माभिरतो दयातुयोंगो नृपः स्याद्यदि पारिजातः ॥३७॥

### पारिजात योग

लग्नेश, तथा लग्नेश जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी तथा वह जिस राशि में हो, एवं उस राशि का स्वामी तथा वह भी जिस राशि में हो, उस राशि का स्वामी, और उनके नवमाश के स्वामी ये यदि उच्च राशि के हो अथवा केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'पारिजात' योग होता है॥३६॥ इस योग में जवानी तथा वृद्धावस्था में सुखी, राजवच, युद्धप्रिय, हाथी घोडेयुक्त, स्वकर्म धर्मरहित, दयालु तथा राजा होता है॥३६-३७॥

### अथ कलानिधियोगमाह

द्वितीय पंचमे जीवे बुधशुक्रयुतेजिते ॥ क्षेत्रे तयोर्वा संप्राप्ते योगः स्यात्स कलानिधिः ॥३८॥  
कामी कलानिधिभवः सुगुणाभिरामः सस्तूयमानचरणो नरपालमुख्यः ॥ सेनातुरंगमदवारण-  
शंखभेरीवाद्यान्वितो विगतरोगभयारिसद्यः ॥३९॥

### कलानिधियोग

द्वितीय या पंचमभाव में गुरु हो तथा बुध, शुक्र से युक्त या दृष्ट हो अथवा इनकी राशि में हो तो 'कलानिधि' योग होता है॥३८॥ 'कलानिधि' योग में जन्म लेनेवाला कामी, गुणी, सुन्दर तथा राजपूज्य, सेना आदि से युक्त, नीरोग, निर्भय तथा शत्रुजेता होता है॥३८॥३९॥

### अथ पारिजातादियोगमाह

स पारिजातधुचरः सुखानि नीरोगतामुत्तमवर्गपातः ॥ सगोपुराशे यदि गोधनानि  
सिंहासनस्थः कुरुते विभूतिम् ॥४०॥ करोति पारावतभागयुक्तो विद्या यश श्रीविपुल  
नराणाम् ॥ स देवलोकं बहुयानसेनामेरायतस्यो यदि भूपतित्वम् ॥४१॥

### पारिजात योग में विशेष

पारिजात योगवारक ग्रह षोडशवर्ग में—श्रेष्ठवर्ग में हो तो जातक को नीरोग, और पूर्वोक्त 'गोपुराश' में हो तो गोधन, और सिंहासन में हो तो राजसिंहासन के योग्य विभूति होती है॥४०॥ और पारावताश में हो तो विद्या, यश, धन ऐश्वर्यशाली होता है॥ और 'देगवताश में' हो तो इन्द्र के समान राजा होता है॥४१॥

### अथ लग्नाधियोगमाह

सप्राञ्च दाराष्ट्रमगेहसस्थेः शुभेर्न पापग्रहयोगदृष्टेः ॥ लग्नाधियोगे भवति प्रसिद्धः पार्यः  
सुखस्थानवियर्जितश्च ॥४२॥ लग्नाधियोगे बहुशास्त्रवर्ता विद्यायिनीतश्च बलाधिजारी ॥  
मुख्यस्तु निष्कापटिको महात्मा लोके यमोचितगुणाधिः स्यात् ॥४३॥

### लग्नाधियोग

लग्न से सप्तम तथा अष्टमभाव में शुभग्रह हो और पापग्रहों में युक्त या दृष्ट न हो तो



‘सप्राधियोग’ होता है किन्तु चतुर्थभाव में पापग्रह न होना चाहिए॥४२॥ सप्राधियोग में होनेवाला बहुशास्त्रज्ञाता, विद्वान्, विनीत सेनापति जनमान्य, तन्धकपट, यज्ञ-धन-गुण-सम्पन्न महात्मा होता है॥४३॥

### अथ चन्द्रयोगादीनाह

सहस्ररश्मितश्चद्रे कटकदिगते सति ॥ न्यूनमध्यवरिष्ठानि धनीधीनेपुणानि च ॥४४॥  
स्वाशेषधिमित्रस्याशेषे वा स्थिते वा दिवसे शशी ॥ गुरुणा दृश्यते तत्र जातो वित्तमुखान्वित  
॥४५॥ स्वाधिमित्राशाश्वद्रो वृष्टो दानधमत्रिणा ॥ निशासु कुरुते सधर्मो छत्रध्वजसमाकुलाम्  
॥ विपर्ययस्थे शीतशौ जायतेऽल्पधना नरा ॥४६॥

#### चन्द्र योग

सूर्य से चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोणस्थान में हो तो योग बलानुसार उत्तम, मध्यम और कनिष्ठरूप में बुद्धि, धन और वैभव होते हैं। चन्द्रमा अपने नवाश या अतिमित्र के नवाश में हो तथा दिन का जन्म लग्न हो तथा गुरु की दृष्टि हो तो धनी और सुखी होता है। अधिमित्राश में स्थित चन्द्र गुरु से दृष्ट तथा रात्रि का जन्म हो तो ध्वजा छत्र-युक्त राजा होता है। इससे विपरीत होने से सामान्य धनवाला होता है ॥४४-४६॥

### अथाऽधियोगमाह

शशिन सौम्या षष्ठे घ्नूने घा निधनसंस्थिता वा स्यु ॥ स्यादधियोगे जात सौम्ये  
सबलैर्धराधीश ॥ मध्यबलैर्मन्त्री स्यादधमबलै सैन्यनायक स स्यात् ॥४७॥ चद्राद्वृद्धिगतं  
सौम्यो धर्मशोलो महाधनी ॥ द्वान्या समोत्पद्यमानेकेन परिकीर्तित ॥ चद्राल्लग्राद्ग्रहाभावे  
वरिद्रो दुःखितो भवेत् ॥४८॥

#### अधियोग

चन्द्रमा से ६।७।८। स्थान में सौम्यग्रह हो और बलवान् हो तो राजा तथा मध्यबली हो तो मन्त्री, और हीनबली हो तो सेनानायक होता है। चन्द्रमा से वृद्धिस्थान (३।६।१०।११।) में सौम्यग्रह हो तो धर्मात्मा तथा श्रेष्ठ आचारवाला होता है। दो सौम्यग्रहों से फल समान, और एक ग्रह से अल्पधनवाला होता है। चन्द्र या लग्न से उपर्युक्त स्थान में कोई भी ग्रह नहीं हो तो दरिद्र और दुःखी होता है।४७॥४८॥

### अथ सुनफाऽनफादुरधराकेमद्रुमयोगानाह

शीतारोर्द्विचरस्थितश्च सुनफायोगोऽनफात्वस्थिते स्वात्मस्य सचरंभविदुरधरा पकेरहेसोम्निते ॥  
चेद्विचर्ययमा न चेद्विचररा केमद्रुम स्यात्तदा प्राचीनेर्मुनिभिः स्मृता क्षुतिमिता  
योगा शशाकोद्भवा ॥४९॥

### सुनफा, अनफा, दुरधरा, केमद्रुम योग

चन्द्रमा से दूसरे स्थान में ग्रह हो तो 'सुनफा' योग होता है। (ग्रह २ या तीन से अधिक होने चाहिए) और द्वादशभाव में यदि तीन या तीन से अधिक ग्रह हो तो 'अनफा' योग होता है। और सूर्य छोड़कर दूसरे तथा द्वादश भाव में ग्रह हो तो 'दुरधरा' योग और दूसरे चारहवें स्थान में कोई भी ग्रह नहीं हो तो 'केमद्रुम' योग होता है। ४९॥

### अथ सुनफायोगफलमाह

भूमिपतेश्च सचिव सुकृती कृती च नून भवेन्निरभुजार्जितवितयुक्त ॥ स्यात् सदाखिलजनेषु  
विशालकीर्त्या बुद्ध्याधिकश्च मनुज सुनफामिधाने ॥५०॥

### सुनफा योग फल

राजमन्त्री, पुण्यकर्ता, कर्मवीर, स्वोपार्जित धन से धनी, समाज में विख्यात, कीर्तिमान् तथा बुद्धिमान् होता है। ५०॥

### अथाऽनफायोगफलमाह

प्रभुर्विनीत शुभवाग्बिलास सच्छीलशाली गुणपूर्तिभुक्त ॥ उदारकीर्तिं स्मरतुष्टचित्तो नित्य  
नर स्यादनफामिधाने ॥५१॥

### अनफा योग फल

विनीत, मान्य, मिष्टभाषी, मुशील, गुणी, यशस्वी तथा विरक्त होता है। ५१॥

### अथ दुरधरायोगफलमाह

सद्वित्तसद्धारणयाहृथात्रीसौख्याभियुक्त सतत हतारि ॥ कातामुनेत्राचललालस स्याद्योगे सदा  
दौरधरे भनुष्य ॥५२॥

### दुरधरा योग फल

इस योग में होनेवाला, धनी बाहनयुक्त, मुसी, शत्रुहीन, तथा कामी होता है। ५२॥

### अथ केमद्रुमफलमाह

सद्वित्तमनुयनितात्मजनेर्विहीन प्रेष्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी ॥ नित्य विरद्धधिपणो  
मलिन कुवेष केमद्रुमे च मनुजाधिपते सुतोऽपि ॥५३॥

### केमद्रुम योग फल

स्त्री, पुत्र, धनहीन, भृत्यवृत्ति (नीचरी) विदेशवासी, विरद्धबुद्धि, मलीन तथा कुवेषवाला होता है। ५३॥

### अथ केमद्रुमभंगमाह

चन्द्रचतुर्थः सुनफा दशमस्थितैः कीर्तितोऽनफा विहृगैः उभयस्थितैर्दुरधरा केमद्रुमसजितोऽन्यथा  
योगः ॥५४॥ घटासिंसेने शोतांशुर्नवाशो जन्मनि स्थितः ॥ तद्बद्धितीयस्थितैर्योगैः सुनफाल्याः  
प्रकीर्तितः ॥५५॥ द्वादशैरनफा जेयो ग्रहैर्द्विदशस्थितैः ॥ प्रोक्तो दुरधरायोगोऽन्यथा केमद्रुमो  
मतः ॥५६॥ प्रातेषांशुः सूतिकाले घटा वा सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाणः करोति ॥ दीर्घाषुष्य राजयोग  
मनुष्य सत्त्वोशाद्वचं हति केमद्रुमं च ॥५७॥ सर्वे खेटाः केन्द्रतुर्षुषु सस्था दुष्टो योगश्चापि  
केमद्रुमोऽयम् ॥ दुष्टं सर्वं स्व फल संविहाय क्रुर्षुः पुंसां सत्फल वै विचित्रम् ॥५८॥ सर्वेषु  
चन्द्रयोगेषु वेद यत्नाद्विचितयेत् ॥ केमद्रुमादिका योगाः समवेऽस्य तयं ययुः ॥५९॥

### केमद्रुमभंग योग

चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान ग्रहो के होने से 'सुनफा' योग और दशमभाव में होने से 'अनफा'  
योग होता है। दोनो ४।१० स्थानो में ग्रहो के होने से 'दुरधरा' योग अन्यथा होने से 'केमद्रुम'  
योग होता है। ५४। जन्मलग्न में चन्द्रमा जिस नवाश में हो उससे द्वितीय नवाश में ग्रह हो तो  
'सुनफा' और द्वादश नवाश में ग्रह हो तो 'अनफा' योग होता है। ५५। तथा २।१२ नवाश  
में ग्रहो के होने से 'दुरधरा' योग अन्यथा 'केमद्रुम' योग होता है। ५६। जन्मलग्न में चन्द्रमा  
पर सब ग्रहो की दृष्टि हो तो 'केमद्रुम' योग का वाधक होकर श्रेष्ठ धन युक्त दीर्घायु और  
राजयोग कारक होता है। ५७। सारे ग्रह चारो केन्द्र स्थानो में हो तो यह भी 'केमद्रुम' योग  
होता है परन्तु यह योग अपना सब दुष्ट फल छोडकर सब प्रकार शुभफल करता है। ५८।  
सब प्रकार के चन्द्रयोगो के इनका अवश्य ही विचार करना चाहिए। योगायोग विचार से  
'केमद्रुम' योग के भंग होने की अधिक सभावना रहती है। ५९।

### अथ रवियोगमाह

वेसिभ्राह्मण्यतैर्ग्रहैर्द्विषणोर्वेसिः शशांकोज्जितैर्भानिस्तूभयर्गैस्तदोभयचरीयोगः स्मृतः प्राक्तन  
॥ किञ्चित्तद्वचनेषु नैव नियमोऽवश्य नरभ्रानृतोऽत्यत कष्टकरो नरश्च मृशुर्दृष्टः  
स्वाद्देसियोगोद्भवः ॥६०॥

### रवियोग

चन्द्रमा रहित तीन या तीन से अधिक ग्रह सूर्य से वारहवें हो तो 'वेसि' योग होता है। और  
सूर्य से द्वितीयभाव में हो तो 'वेसि' योग होता है। तथा सूर्य से २।१० स्थानो में  
(चन्द्ररहित) ग्रह हो तो 'उभयचरी' योग होता है।  
वेसियोगफल-वेसि' योग में होनेवाले के वचन का कोई सिद्धान्त नहीं (कभी कुछ २ बर्ता  
है) अत मूढा, कष्टकारी किन्तु दर्शन का मोठा होता है। ६०। (देखने का मोठा करनी का  
कहा-छिपी छुरी होती है।)

### अथ वेसियोगफलम्

तिर्यग्दृष्टिः सत्त्वसत्त्वानुक्रुपी भर्त्याऽत्यर्थं दीर्घकायोऽलसश्च ॥ मूर्ता पत्य स्पाठरा  
वेसियोगसत्त्वत्यद्व्योवाग्नितासाधिशाती ॥६१॥

### वेशियोग फल

जिसका जन्म 'वेशि' योग में होता है, वह सत्वगुणी, सत्यभाषी, तिरछी नजरवाला, लम्बा कद, आलसी, दरिद्र तथा वाचाल होता है ॥६१॥

### अथोभयचरीफलमाह

यस्य स्याज्जनने किलोभयचरीयोगस्य चेत्सम्भवः सोत्पत्त समवायवानपि तदा मर्त्यो भवेत्सद्यशाः ॥ नात्युच्चः प्रबलामलाब्धितनवापुक्तः समृद्धः सदा ह्यत्यर्थ स्थिरमानसः सरत्तदुक सर्वसहः सम्मतिः ॥६२॥

### उभयचरी योगफल

जिसके जन्मलग्न में उभयचरी योग होता है, वह कजूस (अत सप्रही) यशस्वी, मझोला कदवाला, लक्ष्मीवान्, सरल, स्थिर बुद्धि और धीर होता है ॥६२॥

### अथ पुरुषस्त्रीनपुंसकजन्मज्ञानमाह

बलाग्रलं विलोक्यैषां ग्रहाणां योगकारिणाम् ॥६३॥ स्त्रीपुंसनिर्णयः स्त्रीबयोगास्तु तदसंभवा-  
॥६४॥ ओजसे च विषमराशिकोपगैर्लघुचन्द्रगुरुभास्करैर्नरः ॥ स्यात्तथापि सममे समाशौ-  
स्त्रीनियेकसमये प्रभूतिषु ॥६५॥ लग्न त्वक्त्वा च विषमे पुत्रदो भास्करात्मजः ॥ समे  
कन्याप्रदः प्रोक्तो नान्यग्रहनिरीक्षितः ॥६६॥

### पुरुष, स्त्री, नपुंसक ज्ञान

योगकारक ग्रहों का बलावल विचार करके पुरुष स्त्री का जन्म जानना और उन पुरुषयोग तथा स्त्रीयोग के अभाव में नपुंसक का जन्म जानना ॥ लग्न में विषमराशि तथा विषम नवाश हो और चन्द्र, सूर्य, गुरु विषम नवाश में हो तो 'नर' का जन्म हो ॥ एव समराशि और चन्द्र, सूर्य, गुरु सम नवाश में हो तो 'कन्या' जन्म होता है ॥ लग्न को छोड़कर शनि विषमराशि (या विषम नवाश) में हो तो पुत्र और समराशि (या सम नवाश) में हो तो कन्या होती है ॥६३-६६॥

### अथ षट्क्लीबयोगानाह

अन्योन्यं रविशशिनी विषमाविषमर्क्षगौ निरीक्ष्येते ॥ इदुजरविपुत्री वा तथैव हि नपुंसक  
कुरुतः ॥६७॥ बक्रो विषमे सूर्यः समगश्रेय परस्परालोकात् ॥ विषमर्क्षे लग्नेदुसमराशिग  
शुजोऽवलोकायति ॥६८॥ बुधचन्द्रौ कुजदृष्टौ विषमर्क्षसमर्क्षगौ तथैवोक्ता ॥ ओजनवांशकसंस्था  
लग्नेन्दुसितास्तथैवोक्ताः ॥६९॥

### नपुंसक छह योग

सूर्य चन्द्रमा विषम सम राशियों में होकर परस्पर देखते हो अथवा चन्द्रमा और शनि इनी प्रकार हो तो जातक 'नपुंसक' होता है ॥ मंगल विषम राशि में सूर्य सम राशि में होकर

परस्पर देखते हों अथवा लग्न विषम राशि में चन्द्रमा सम राशि में दोनो को मंगल देखता हो॥ अथवा बुध विषम राशि में चन्द्रमा सम राशि में दोनो को मंगल देखता हो अथवा विषम नवमाशक में लग्न, चन्द्रमा और शुक्र हो तो नपुसक होता है॥ ये ६ योग नपुसक के कहे गये॥६७॥६८॥६९॥

### अथ प्राणिनां वृत्तिनिर्णयमाह

अर्थात् कथमेहितप्रशशिनौ प्राबत्पत सेचरैर्मानस्ये पितृमातृशत्रुसमुहूद्भ्रात्रादिभि-  
स्याद्धनम् ॥ मृत्याद्वा दिननाथलप्रशशिनो मध्ये बली यस्तत कर्मेशस्यनवाशराशिगवशाद्-  
वृत्ति जगुस्तद्विद ॥७०॥ शेषज्यवामीकरतोयपानपण्येन मुक्तामणिविप्रलभात् ॥  
अन्योऽन्यदूतागमवृत्तिमार्गाज्जीवत्यसौ वासरनायकाशे ॥७१॥ मन्त्रोपदेशरसवादविनोदमार्ग-  
वृत्ति जगु सकलशास्त्रपुराणमार्ग ॥ ज्ञानोपदेशपिभिः क्षितिपालपूज्यो जीवत्यसौ खलु  
पुमान्दिननायकाशे ॥७२॥ जलोद्भवाना क्यविक्रमेण कुपेथ्र मृद्धादविनोदमार्गात् ॥  
राजागनासशयवृत्तिरूपाग्निशाकराशे बसनक्रयाद्वा ॥७३॥ धातोर्बिबादेन रणप्रहारास्तब्धा-  
ग्निवादात्कलहप्रवृत्त्या ॥ जीवत्यसौ साहसमार्गरूपया धरासुताशे यदि चौरवृत्त्या ॥७४॥  
शिल्पादिकाव्यागमशास्त्रमार्गाज्ज्योतिर्गणज्ञानवशादुद्युधाशे ॥ वेदार्यवेदाध्ययनाज्जपाच्च  
पुरोहितव्याजवशात्प्रवृत्ति ॥७५॥ जीवाशके मूमुरदेवतानामुपासकाध्ययकमार्गरूप्यात् ॥  
पुराणशास्त्रागमनीरतिमार्गाद्धर्मोपदेशेन कुतोवनाह ॥७६॥ सुवर्णमणिक्यगजाश्वमूलाद्गवा  
क्रयाज्जीवनमाहुरार्या ॥ गुडौदनवीरदधिक्रमेण स्त्रीणा प्रलोभेन भृगो सुताशे ॥७७॥  
शन्यशके फुत्सितमार्गवृत्त्या शिल्पादिभिर्दारुमर्यैर्वधाद्यैः ॥ विन्यस्तभाराज्जतविप्रलभादन्यो-  
न्यवेरोद्भवमूलमार्गात्॥७८॥ स्वप्नेषु स्वनवाशके मुहूर्ति वा स्वात्युच्चभागे यदा  
स्वदेष्काणचतुष्टयेषु सहिता मूलत्रिकोणेषु वा ॥ तत्तत्कालबलान्वितास्तु लक्षरा  
यगोत्तमार्गोऽपि वा ते सर्वे शुभदा भवति हि तदा स्वातर्दशादावपि ॥७९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे बहुयोगफलकथन नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

### मनुष्यो की वृत्ति निर्णय

लग्न और चन्द्रमा का बलाबल विचार करके दशम भाव में स्थित ग्रह के अनुसार पिता, माता, शत्रु मित्र, भ्राता आदि के द्वारा धन की प्राप्ति होती है। अथवा सूर्य, लग्न और चन्द्रमा में जो बलवान् हो तथा दशम भाव में स्थित जो राशि वा नवमाश उसके स्वामी के अनुसार वृत्ति का निर्णय करे॥७०॥ दशमेश राशि नवमाश पति यदि सूर्य हो तो औपधि-विक्रय, सुवर्ण-विक्रय, शर्बत आदि विक्रय, मोती-माणिक आदि जवाहरात में आजीविका हो अथवा ठगी से अथवा दलाली से आजीविकन हो॥ सूर्य के नवमाश में हो तो मन्त्रोपदेश, रसाघातु व्यापार, खेल, बाजीधरी आदि शास्त्रपुराण उपदेश से, या ज्ञानोपदेश में प्रसिद्ध और राजपूज्य होता है। चन्द्रमा के नवाश में जन्म हो तो जलजीव मछली आदि के व्यापार से या कृषि (भेती) से या मिट्टी के घने दूर पदार्थों से या राजाकुता मय्यर्क में अथवा बस्त्र व्यापार से जीवनयापन होता है। उसी प्रकार मंगल के नवमाश में घातु का व्यापार, मुक्दमावाजी, मारपीट, आग लगाना, लडाई मगडा, अमम साहम के कार्यों में

अथवा चोर वृत्ति से आजीविका होती है। युध के नवमाश के शिल्प व्यापार, काव्य-कविता शास्त्रों द्वारा, ज्योतिष से, वेदपाठ आदि से, पुरोहित या व्याज से आजीवन होता है। बृहस्पति के नवमाश होने पर देवोपासना अथवा अध्यापन कार्य, पुराण शास्त्र आदि का उपदेश, व्याख्यान वृत्ति या व्याज आदि से आजीवन होता है। शुक के नवमाश में सुवर्ण, मणि-माणिक, हाथी घोंटे, गाय, आदि से अथवा अन्न, गुड, दूध, दही आदि के व्यापार से जीवनयापन होता है। शनि के नवमाश में निन्दित वृत्ति से अथवा लकड़ी के खेल खिलौने से, अथवा हिसक वृत्ति से, भाडे से, ठगी से, परस्पर वैर कराने से तथा बकालत से आमदनी होती है। किसी भी ग्रह के शुभफल देने में ये निमित्त होते हैं—स्वक्षेत्री होना, स्व नवाश में होना, मित्र राशि या मित्र नवाश में होना, अपने उच्च राशि का या उच्च नवाश में होना, केन्द्र या त्रिकोण में होना, अपने द्वेषकोण में होना, मूल त्रिकोण या वर्गोत्तम होना, जन्मकाल में पूर्ण बली होना, इस कथित स्वरूप में ग्रह अपनी दशा और अन्तर्दशा में अपना पूर्ण फल करते हैं। अर्थात् इन कथित योगों में भी ग्रह का स्वरूप कथित रीति से देखना चाहिए॥७०-७९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भावप्रका० बहुयोगफलकथन नाम  
अष्टादशोऽध्याय ॥१८॥

### अथ मारकभेदाध्यायः

त्रिविधाभ्रायुषो योगा स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमा ॥ द्वात्रिंशत्पूर्वमल्पायुर्मध्यमायुस्ततो भवेत् ॥  
चतुषष्ट्या पुरस्तात् ततो दीर्घमुदाहृतम् ॥१॥ उत्तमायु शतादूर्ध्वं ज्ञातव्यं मुनिसत्तम ॥  
चतुर्विंशतिवर्षाणामायुर्जातु न शक्यते ॥२॥ जपहोमचिकित्साद्यैर्बालरक्षा तु कारयेत् ॥  
पित्रोर्दोषैर्मृता केचित्केचिन्मातृग्रहैरपि ॥३॥ अपरेऽरिष्टयोगाच्च त्रिविधा बालमृत्यव ॥  
अल्पायुर्योगजातस्य विपत्तारा मृति भवेत् ॥४॥ जातस्य मध्यमे योगे प्रत्यरिस्तु मृतिर्भवेत् ॥  
दीर्घायुर्योगजाताना बधने तु मृतिर्भवेत् ॥५॥ त्रिषु योगेषु सर्वेषु प्रत्येक त्रिविध भवेत् ॥६॥  
अल्पायुर्लभमध्य तु पूर्णापुस्त्रिविध भवेत् ॥ मध्यमादल्पमध्य तु पूर्णापुस्त्रिविध भवेत् ॥७॥  
दीर्घायुषोऽल्पमध्य तु पूर्णापुस्त्रिविध भवेत् ॥ एव बहुविध प्रोक्त आयुषस्तु विनिर्णय ॥८॥  
अष्टमर्षं तृतीयं च लक्षादायुषदाहृतम् ॥ द्वितीयं सप्तमस्यान मारकस्यानमुच्यते ॥९॥  
सप्तेशरघ्नपत्न्योश्च सप्तैन्दोर्त्तग्रहोरयो ॥ पूर्वाण्येव प्रयुजीयात्सवादादायुषा ऋषे ॥१०॥ चरे  
चरस्थिरद्वद्वा स्थिरे द्वद्वचरस्थिरा ॥ द्वे स्थिरोभयन्तरा दीर्घमल्प्याल्पकायुष ॥११॥

#### मारकभेदाध्याय

आयु योग तीन प्रकार के हैं। नाम—स्वल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु। ३० वर्ष तक स्वल्पायु। ६४ तक मध्यायु। इसके बाद दीर्घायु होती है। १०० वर्ष तक बाद उत्तमायु बही जाती है। २४ वर्ष की अवस्था तक निश्चित आयु का ज्ञान नहीं होता। यदि षष्ट हो तो जप, होम, दान तथा चिकित्सा आदि से बालकों के जीवन की रक्षा करनी चाहिए। क्योंकि कुछ बालकों की मृत्यु पितृ दोष से और कुछ की मातृबाधा विस्फोटक आदि से ॥ एव कुछ की बालारिष्ट में होती है। अल्पायुयोग में उत्पन्न बालक की 'विपत्' नाम के तारा में भी मृत्यु होती है।

मध्यायु योग में जन्म वाले की भी 'प्रत्यरि' तारा में मृत्यु संभव है। दीर्घायु योगोत्पत्त शिषु की भी 'बध' तारा में मृत्यु संभव है। अल्प, मध्यम, दीर्घ इन तीन भेदों में प्रत्येक के ३-३ भेद हैं। यथा-अल्पायु में अति अल्प, मध्यम अल्प, पूर्णात्या इसी प्रकार मध्यायु के तीन भेद हैं-मध्याल्प, मध्यम पूर्णमध्यमायु। इसी प्रकार पूर्णायु के ३ भेद हैं। पूर्णात्य पूर्णमध्यम पूर्णायु। इस प्रकार पूर्वाचार्यों ने आयु के अनेक भेद कहे हैं। लग्न से अष्टम तथा तृतीयभाव आयु के स्थान हैं। और द्वितीय तथा सप्तमभाव मारकस्थान हैं। लग्नेश-अष्टमेश से तथा लग्न-चन्द्रमा से और लग्न-होरा से आयु का निर्णय होता है। परस्पर विभिन्न योग प्राप्त होने पर अधिक फल से आयु योग स्थिर करना। चर में (क्रम से) 'चर, स्थिर, द्विस्वभाव में क्रमशः दीर्घायु मध्यायु, अल्पायु होती है। स्थिर में द्विस्वभाव, चर, स्थिर हो तो दीर्घ मध्य अल्प आयु। तथा द्विस्वभाव में-स्थिर, द्विस्वभाव, चर हो तो दीर्घ, मध्य, अल्प आयु होती है। ११-११॥

अल्पमध्यमपूर्णायु प्रमाणमिह योगजम् ॥ विज्ञाय प्रथम पुता ततो मारकचिन्तनम् ॥१२॥  
 वृश्चिके मकरे जन्म नृणा राहुर्मृत्तिप्रद ॥ ग्रहस्थितावशभेदे शनिं स्यान्मारको ध्रुवम् ॥१३॥  
 महामारकज्ञौ तौ मादिकेनु इति स्मृतौ ॥ जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकावष्टमेश्वरी ॥१४॥  
 प्रायेण मारका राशिदशास्वत्राविशेषत ॥ षष्ठभे पापमृष्टिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारक ॥१५॥  
 षष्ठत्रिकोणगो धापि मुख्यमारक इष्यते ॥ मध्यायुषि मृति षष्ठदशायामष्टमस्य वा ॥१६॥  
 षष्ठात्रिकोणस्य पुनर्दोषात्स्वविषयो भवेत् ॥ षष्ठे बलपुते तस्य त्रिकोणे मृतिमादिशेत् ॥१७॥  
 षष्ठेशश्चेदतादृश स्यात्त्रिकोणे मृति वदेत् ॥ व्यवल्लेप समस्तापि कारकादिदशास्वतु ॥१८॥  
 चरे चरस्थिरद्वया इति यो राशिरागत ॥ स एव मारको राशिर्भवतीति चिनिर्णय ॥१९॥  
 मारकेदशाकाते मारकस्थस्य पापिन ॥ पाके पाकपुना पाके समवे निघन दिशेत् ॥२०॥  
 असमवे व्यपाधीदशाया मरण नृणाम् ॥ अभावेऽप्यभावेदशासर्वधिग्रहमुक्तिपु ॥२१॥  
 तदभावेऽष्टमेशस्य दशाया निघन पुन ॥ मरुश्चेत्पाप सपुत्तो मारकग्रहयोगत ॥२२॥  
 तिरस्कृत्य ग्रहान्तर्वाग्निहता पापकृच्छ्रद ॥२३॥  
 मारकग्रहसवन्धी पापकर्ता शनिस्तदा ॥ तिरस्कृत्य ग्रहान्तर्वाग्निहता भवति ध्रुवम् ॥२४॥

पूर्वोक्त प्रकार से अल्प, मध्य, पूर्ण आयु का योग जान कर आगे वह योगानुसार मारक का विचार करना चाहिए। वृश्चिक और मकर राशि में जिनका जन्म होता है, उनका राहु मारक होता है। ग्रहों में नवम भेद हो तो शनि निश्चय ही मारक होता है। मन्दी और केतु तो महामारक ही हैं। द्वितीय और सप्तमभाव के स्वामी तथा षष्ठेश, अष्टमेश मारक हैं। इस शास्त्र में प्रायः मारक राशि की दशा में उपर्युक्त ग्रह मारक होते हैं। षष्ठभाव में पापग्रह योग अधिक हो तो षष्ठेश ही मुख्य मारक होता है। षष्ठभाव का त्रिकोण स्थान भी मुख्य मारक होता है। मध्यायु योग वाले की षष्ठ या अष्टमभाव की दशा में मृत्यु होती है। छठे भाव से त्रिकोण स्थान दशम और द्वितीय वे दोनों भावदशा क्रमशः दीर्घायु और अल्पायु वाले के विषय में जानना। षष्ठभाव वर्णाग्रहयुक्त हो तो षष्ठभावकी त्रिकोण राशि मारक होती है। अर्थात् षष्ठेश यदि बलपुत हो तो उनकी त्रिकोण राशि की दशा में मृत्यु बटना। मारक ग्रह

की दशा के भोग के पश्चात् ही मारक विचार की व्यवस्था जानना (क्योंकि मारक का फल यदि प्रथम हो तो कारक का फल किसको प्राप्त होगा)

प्रथम 'चरे चरस्थिरद्वया' इस कथन के अनुसार जो मारक राशि प्राप्त हुई है, 'वही मारक राशि है' यह निश्चय है॥ मारकेण ग्रह की महादशा में मारक स्थान स्थित पापी ग्रह की अन्तर्दशा हो या पापसम्बन्धी ग्रहों का अन्तर हो तो (यदि सम्भव प्रतीत हो तो) मृत्यु होती है॥२०॥ यदि संभव न हो तो व्याघ्रीश की दशा में भी मरण हो सकता है। और व्याघ्रीश की बहुत दूर पड़ती हो तो व्याघ्रीश से सम्बन्ध रखनेवाले ग्रह के अन्तर में मरण हो॥ वह भी न प्राप्त हो तो अष्टमेश की दशा में मरण कहना॥ शनि यदि पापग्रह युक्त हो तथा मारक ग्रह से भी सम्बन्ध रखता हो तो सब मारको को हटाकर आप मारक होता है॥ क्योंकि शनि स्वयं पापकर्मकर्ता है, अतः यदि मारकग्रह से सम्बन्ध हो तो सबको हटाकर निश्चय मारक होता है॥१२-२४॥

एतद्दशांतमुक्त्यादी विचार्यैव मृतिं वदेत् ॥ पष्ठद्रेष्काणपश्चैवः तथा चै नाशकाधिपः ॥२५॥  
 विपत्ताराप्रत्यरीशौ बधभेगस्तयैव च ॥ आद्यंतपो च विज्ञेयो चंद्रक्रांतग्रहाधिपः ॥२६॥  
 दशाक्षिप्तोपु कालेषु मारको मरणप्रदः ॥ दुष्टतारापतेः पाके निर्याणं कथितं बुधैः ॥२७॥  
 चेदंगपो यदि गृहे ह्यरिरेव हीनं पूर्णं सुहृद्यतिसमः सममायुरग्रहः ॥ वा लग्नो हितसमारि-  
 पदेऽपि पूर्णं मध्यं च हीनमिहजातकतत्त्वविज्ञाः ॥२८॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि मारकाख्यं ग्रहं  
 द्विज ॥ तस्मात्फलप्रभेदेन कथयामि तवाग्रतः ॥२९॥ स्वात्मकारकलगाच्च चिंतयेद्द्विजसतम  
 ॥ भ्रातृपष्ठाष्टमं रिष्कं धनं ज्ञानांतरोव्यपि ॥३०॥ सर्वेषां बलवान्छेदो मारको ग्रह उच्यते ॥  
 सर्वबलसमानत्वे मारकः संतको ग्रहः ॥३१॥ पष्ठाधिपस्तु प्रायेण बहुधा मारकः स्मृतः ॥ तेषां  
 मध्येऽधिकारी च पष्ठेशो मुख्यमारकः ॥३२॥ मारकग्रहाश्रितो राशिमारकस्वामिनोऽथवा ॥  
 तान्यां महादशाकाले विंशोतर्याः स्थिरादिकः ॥३३॥ पापे मृत्युर्विजानीयात्त्रिविंशकं द्विजोत्तम  
 ॥ मारका बहवः खेदा यदि चौर्यसमन्विताः ॥३४॥ तत्तद्दशांतरे विप्रयोगकृष्टादिसंभवः ॥  
 पष्ठाधिपदशायां च निधन भवति ध्रुवम् ॥३५॥ ज्युनातिरिक्तभेदेन बहुखेदास्तु मारकाः ॥  
 दुर्बलाश्रयराशिशेदशा स्वल्पातिदा भवेत् ॥३६॥ प्रबलस्य दशायां च महारोगार्तिमृच्छुषत् ॥  
 भयशोकमृताद्भूतिस्तत्स्वराग्निभयं भवेत् ॥३७॥ मारकस्य दशायां च महत्या निघनाश्रयो ॥  
 भूतामंतर्दशामाह तवाग्रे कथयामि भोः ॥३८॥ मारकग्रहाश्रयो नूतमहापाके  
 विंचितयेत् ॥ कारकाच्च विलग्नान्ना सप्तमाद्वा द्वितीयकम् ॥३९॥ पष्ठाष्टरि-  
 फनायानामपहराष्टके मृतिः ॥ तेषामंतर्दशाधीशास्तेषां मध्ये बलादचकः ॥४०॥

इन मारकेश की दशा का अन्त तक विचार करके मारक की अन्तर्दशा में मरण कहना चाहिए। पष्ठभाव के द्रेष्काण का स्वामी तथा अष्टमेश, और 'विपद्' नामक तारा और 'प्रत्यरि' तारा के स्वामी एवं 'बध' तारा का स्वामी ये आदि मारक और अन्तिम मारक हैं। और चन्द्रयुक्तग्रह राशिपति ये इतने मारक जानना ॥ मारकदशा से प्राप्त समय में मारकग्रह मृत्यु देनेवाला है। विपद् प्रत्यरि, बध इन तारापति के अन्तर में भी मरण सम्भव है। अङ्गप अर्थात् गणेश यदि लग्न में शत्रु के घर में हो तो हीनायु, मित्र के घर में हो तो दीर्घायु तथा सम के घर में हो तो मध्यायु होती है॥२८॥ यदि लग्न का स्वामी शत्रु के घर में हो तो हीन



आयु, मित्र के घर में हो तो पूर्ण आयु, सम के घर में हो तो मध्य आयु जानना।

हे मैत्रेय! अब हम 'मारक ग्रह' कहते हैं और उस मारक ग्रह के फल के भेद भी तुम्हारे सामने कहते हैं। द्वितीयेश और आत्मकारक और लग्न में विचार करना चाहिए। तीसरे, छठे, आठवे, बारहवे, दूसरें और सातवे घर से भी मारक का विचार करना चाहिए। इन सब स्थानों के स्वामी ग्रहों में जो सबसे बलवान् हो वह 'मारक' ग्रह होता है।

मव का बल समान हो तो पहले कहा हुआ मारक ही मारक होता है। पण्डेश प्राय अधिकतर मारक होता है। पहले वह हुए भावों में बलवान् हो तो पण्डेश मुख्य मारक है। मारक ग्रह स्थित राशि या मारक ग्रह की राशि इन दोनों राशि की दशा में मरण वहना। या विशोत्तरी दशा के अनुसार मारक की दशा में मरण वहना। इस प्रकार पापी ग्रह की दशा में निशन्देह मृत्यु जानना। हे मैत्रेय! बहुत से मारक यदि बनवान् हो तो उन २ की दशा अथवा अन्तर में

रोग कष्ट आदि होना संभव है। किन्तु पण्डेश की दशा में निश्चय मरण होता है। इस प्रकार न्यूनाधिक भेद से अनेक ग्रह मारक हैं। बलहीन ग्रह स्थित राशि के स्वामी की दशा साधारण दशा के अनुसार मारक की दशा में महान् रोग दुःख या मृत्यु के समान कष्ट

किन्ता, भय, चोरी, अग्नि आदि से भय होता है। ॥३७॥ हे मैत्रेय! मारक ग्रह की महादशा में बलवती होने में अष्टमभाव स्थित ग्रह की अन्तर्दशा में मृत्यु होती है यह (महादेवजी) ने कहा है, (यह गोप्य तत्त्व) तुम्हारे सामने बहते हैं। ॥३८॥ मारक ग्रह की आश्रयी भूत जो राशि है (अर्थात् जिस भाव में मारक ग्रह स्थित है वही राशि उसकी आश्रयी भूत है) उनकी महादशा में जिस अन्तर्दशा में मृत्यु होगी यह विचार करे। (यही बात अब आगे बहत है) उनकी आत्मकारक से लग्न से और लग्न में जो द्वितीयभाव है (उन राशि की अन्तर्दशा में या तदोश की अन्तर्दशा में मृत्यु होती है) ॥३९॥ पण्ड अष्टम द्वादश भावों में

अपहर-हरण-मारण में बलवान् अष्टम भावराशि की अन्तर्दशा या भावेश की अन्तर्दशा में निघ्न होता है। उन (अर्थात् बर्धित भावों के स्वामी ही उन अन्तर्दशा के स्वामी हैं कि-जिन अन्तर्दशा में निघ्न हो) अन्तर्दशा के स्वामी (जो अभी बते गये हैं) हैं इनमें जो ग्रह बल में अधिक बलवान् है। ॥४०॥

तदीयातर्दशावाले निघ्न भवति ध्रुवम् ॥ अपरा पापकाले तु रोगदुःखार्तिव्यन्दिन ॥४१॥ बलिगुप्तस्य च शनैर्ग्राह्य पण्डाष्टमादिकम् ॥ द्वितीयदूतनाथेन ज्ञेय चैवोत्तरोत्तरम् ॥४२॥ सप्रसप्तमयोर्मध्ये बलवास्तद्विधीयते ॥ पण्डाष्टमेशो द्वौ मुख्यौ व्यपेशमुपलक्षणम् ॥४३॥

॥४४॥ मध्यायुषि समायोगे चितयेद्द्विजसप्तम ॥ पण्डस्थे पापवाहुल्ये पण्डेशो मुख्यमारक ॥४५॥ पण्डाष्टमेशोऽपि त्रिकोणोऽपि मारक ॥ दीर्घायुषोऽपि योगेन चितनीय द्विजोत्तम ॥४६॥ पण्डस्थ वा तदीयास्य त्रिकोणे मस्थितो ग्रह ॥ तस्याधितस्वामिरामोर्दशाया निघ्न ध्रुवम् ॥४७॥ पण्डे बलवति विप्र तत्रिकोणे विचितयेत् ॥ तदीया वा त्रिकोणेषु प्रायेणापि मृति वदेत् ॥४८॥ राहुरागिस्तमोवेशाद्भक्तवान्मारक स्मृत ॥ सप्रदण्ड्य मध्ये तापयोन्मूल-मस्ति चेत् ॥४९॥ स रागिमारक ज्ञेयो ग्रहरीत्या विचितयेत् ॥ तत्तदगिदशाया तु तदीयाधपराणि च ॥५०॥ दशाया निघ्न बाध्य पुरा शुभप्रणोदितम् ॥ अपरे तु चरंयार्ति

पूर्ववत्साम्याय च ॥५१॥ यो राशि स तु विज्ञेयो मारकश्चेति समत ॥ तद्दशामा च निधन  
निर्विज्ञक द्विजोत्तम ॥५२॥ अत्राध्याये च सर्वेषु ये योगा गदिता मया ॥ तेषा सर्वं समालोच्य  
जातस्य च मृति वदेत् ॥५३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे मारकभेदकथन नाम ऊनविंशोऽध्याय ॥१९॥

उसकी अन्तर्दशा में निश्चय मृत्यु होती है। हे मैत्रेय! दूसरी जो पापी ग्रहों की अन्तर्दशाएँ  
हैं वे रोग, दुःख, कष्ट देनेवाली हैं ॥४१॥ बलवान् शुक्र और शनि के (मारकत्व में हेतु) पष्ठ,  
अष्टम आदि भाव—(स्थितित्व या तदीशत्व ही मारकत्व में हेतु) ग्रहण करना। और (ये शुक्र  
तथा शनि) द्वितीये तथा सप्तमेश होने से उत्तरोत्तर प्रबल मारक होते हैं ॥४२॥ लग्न और  
सप्तमभाव में जो बलवान् हो उससे (मारक का) विधान करना चाहिए। पण्डेश तथा  
अष्टमेश भी मुख्य मारक हैं, और व्ययेश उपलक्षकः (६-८ के स्वामी की प्राप्ति के अभाव में  
मारक है) है ॥४३॥ पण्डेश और अष्टमेश इन दोनों में अष्टमेश मारक है इसमें अभिप्राय यह  
है कि पण्डभाव में पापग्रह अधिक हो तो पण्डेश ही मुख्य मारक है ॥४४॥ मध्यायु योग हो तो  
हे द्विजोत्तम! पण्डभावस्थित राशि के स्वामी की दशा में निधन होता है ॥४५॥ (अर्थात्  
मारकेश दशा दूर हो तो पष्ठाथयराशीश दशा में मृत्यु कहना) पण्डभाव या पण्डभाव से  
त्रिकोण भाव में स्थित ग्रह भी मारक होता है (यदि दीर्घायु योग हो तो) ॥४६॥ पण्डभाव  
या पण्डेश से त्रिकोण स्थान में जो ग्रह है। उसकी आश्रित राशि के स्वामी की दशा में निश्चय  
मृत्यु होती है ॥४७॥ हे विप्र! पण्डभाव में बलवान् (रक्षक) ग्रह हो तो उससे त्रिकोण  
भावस्थ की दशा मारक जानना। अथवा त्रिकोणेश की दशा ही मारक बल्पना करना ॥४८॥  
राहु ग्रहाश्रित राशि (यद्यपि राहु पिण्डरूप ग्रह नहीं है तथापि) अधकाराच्छत्र होने में  
बलवान् मारक है। लग्न और अष्टम इनमें यदि यह न हो तो (अर्थात् आश्रय = आधार =  
स्थान) और आश्रयी तदाधारस्थित ग्रह) वह राशि ही (चरपर्या दशा में) मारक होती है,  
ऐसा ग्रह मारक की रीति से विचार करे। इस प्रकार वह २ पाप राशि की दशा तथा उस  
राशि के स्वामी की आश्रित राशि की दशा ॥५०॥ इन दशाओं में मृत्यु कहना, यह भगवान्  
महादेवजी का कथन है। और जो चरे चराम्बिरद्विधा इत्यादि से आयु का विचार किया गया  
है ॥५१॥ उसमें जो राशि पूर्वनिर्देशानुसार मारक कही गई है उसकी दशा में निःसन्देह  
मारक कहना ॥५२॥ इस अध्याय में हमने जो मारक योग कहे हैं। उन सबके लक्षण का  
विचार करके जातक की मृत्यु का निर्णय करना चाहिए ॥५३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे मारकभेदकथन नाम ऊनविंशोऽध्याय ॥१९॥

### अथायुर्दायाध्यायप्रारम्भः

मैत्रेय उवाच—कर्मवेत्ता महाभाग आयुर्दागहने गति ॥ निर्विज्ञक ममाग्रे च कथयस्व  
कृपानिधे ॥१॥

परमेश उवाच—अधुना सप्रवक्ष्यामि आयुर्दाया गतिं तव ॥ यस्या विज्ञानभाषेण वातर्तौ

मन्वित ध्रुवम् ॥२॥ सप्रेशाष्टमनायाभ्यामायुर्दयि विचित्रयेत् ॥ दीर्घमध्यात्ययोगत्व  
 यथावद्गदतो मम ॥३॥ चरेऽचरे स्थिते द्वौ च लप्ररध्राधिषी यदि ॥ पूर्णायुर्योगो विज्ञेयो  
 निर्विशक द्विजोत्तम ॥४॥ स्थिरर्से लप्रनायो हि सप्रेसे द्वद्वभे स्थिते ॥ तदायु पूर्णयोगश्च स  
 मवेद्गणिताप्रणी ॥५॥ तन्वधौशे स्थिते द्वद्वे स्थिरे स्थिते लयार्धये ॥ पूर्णायुर्योगो विज्ञेयो  
 निर्विशक द्विजोत्तम ॥६॥ अथात् सप्रबध्प्रानि मध्यायुर्योगमुत्तमम् ॥ चरे लप्राधिषे विप्र  
 स्थिरे रध्रपतिर्वयि ॥७॥ तदा मध्यायुष विद्याद् द्वौ द्वद्वे मध्यमायुष ॥ अधुनात्यायुर्योगो च  
 श्वाप्रे कययाम्यहम् ॥८॥ अगाधोशश्चरे यस्य द्वद्वभे रध्रनायके ॥ तस्यात्यायुर्ग्रहाप्राज्ञ  
 निर्विशक द्विजोत्तम ॥९॥ स्थिरेऽस्थिरे स्थिते द्वौ च लप्ररध्राधिषी द्विज ॥ स्वत्यायुस्तत्र विज्ञेय  
 सृष्टिकर्ता प्रणोदितम् ॥१०॥ पूर्ववत्तनुचद्राभ्यामायुर्योग विचित्रयेत् ॥ जन्मेन्द्रीवास्थिते  
 सूनेवान्यस्थे मदचद्रयो ॥११॥ त्रिधा योग सम प्रोक्तश्चितयेद्गणिताप्रणी ॥ एकरूपास्त्रयो  
 योगा आयुषि सुविचित्रयेत् ॥१२॥ एकरूपत्वयोगौ द्वौ तृतीयो भिन्नरूपक ॥ द्वयोर्योगेन  
 सप्राह्य न प्राह्य चैक रूपत ॥१३॥

### आयुर्दायाध्याय

मैत्रेय बोले—हे कृपासागर महाभाग! आप कर्मवेत्ता है, अब मुझको आयुर्दयि का गहन  
 विचार शकारहित रूप से कहिये ॥१॥ श्रीपाराशरजी ने कहा—अब हम तुमको आयु के विषय  
 का विज्ञान कहते हैं, जिसके ज्ञान से मनुष्य काल की गति का ज्ञान होता है ॥२॥ सप्रेश और  
 अष्टमेश से प्रथम दीर्घ, मध्य, अल्प रूप से आयु का योग जानना चाहिए ॥ सप्रेश और  
 अष्टमेश दोनों चरराशि में हो तो निश्चितरूप से पूर्णायु जानना ॥ सप्रेश स्थिर में हो और  
 अष्टमेश द्विस्वभाव में हो तो गणितज्ञ को पूर्णायु योग जानना चाहिए ॥ सप्रेश द्विरवभाव  
 राशि में हो और अष्टमेश स्थिर राशि में हो तो दीर्घायु योग जानना ॥ अब हम मध्यायु योग  
 कहते हैं। चरराशि में सप्रेश हो और स्थिर में अष्टमेश हो तो मध्यायु होती है। सप्रेश,  
 अष्टमेश दोनों द्विस्वभाव में हो तो मध्यायु होती है। अब अत्यायु योग कहते हैं। सप्रेश  
 चरराशि में, अष्टमेश द्विस्वभाव में हो तो अत्यायु होती है ॥९॥ दोनों ही स्थिर राशि में हो  
 तो अत्यायु होती है, यह ब्रह्मा का कथन है ॥१०॥ इसी प्रकार लग्न और चन्द्रमा से भी  
 आयुयोग का विचार करना चाहिए ॥ लग्न और सप्तम में चन्द्रमा हो तो लग्न, चन्द्र से अन्यथा  
 शनि, चन्द्र से आयु का विचार करना चाहिए ॥११॥ यह तीन प्रकार (दीर्घ मध्य, अल्परूप  
 से) उपर्युक्त (सप्रेश, अष्टमेश और लग्न, चन्द्र या शनि चन्द्र से) आयु के विषय में गणितज्ञ  
 को विचार करना चाहिए ॥ दो प्रकार से एकरूप आयु हो और तीसरे प्रकार से भिन्नरूप से  
 हो तो दो प्रकार से प्राप्त आयु का ग्रहण करे और भिन्न प्रकार से प्राप्त आयु का परित्याग  
 करे ॥१३॥

योगत्रय त्रय रूप भिन्न भिन्न मवेद्द्विज ॥ होरालप्रवितप्रभ्या प्राप्तायुर्योगनिश्चितम् ॥१४॥  
 सप्रेशादष्टमेशाच्च योगैक कथितो द्विज ॥ होरालप्राम्या द्वितीय योगमेव विचिन्तयेत् ॥१५॥  
 तृतीय गनिचद्राम्या चित्तनीय सदा द्विज ॥ सप्रेन्दुमदने यत्पि चिन्तयेत्सप्रचदत ॥१६॥  
 यत्रोद्धारमह वक्ष्ये शृणुत्व त द्विजोत्तम ॥ चतुरेखा तिलैर्तिर्यक् चतुर्ध्वं तिलैत्युत ॥१७॥ नव कोष्ठे  
 त्रयो योगा दीर्घमध्यात्ममायुषि ॥ आद्यत्रये चर लेख्य तदधस्थे श्मेण च ॥१८॥ चर स्थिर द्वि

स्वभावं संतिसेद्विजसत्तम ॥ मध्ये स्थिरत्रयं कोष्ठे तदधो द्विस्वभावतः ॥१९॥ द्वंद्वं चरं स्थिरं  
 लेख्यं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥ अंतत्रये द्विःस्वभावं तदधः स्थिरमादिशेत् ॥२०॥ स्थिरं द्वंद्वं चरं विप्र  
 क्रमेण संलिखेत्सुधीः ॥ तिर्यक्कोष्ठानुसारेण दीर्घमध्याल्पमायुषि ॥२१॥ एवं पंक्तित्रये विप्र आदौ  
 पंक्तित्रयेण च ॥ धराधः स्थिरपंक्तिश्च स्थिरपंक्तिरथोमयम् ॥२२॥ चतुरस्रं लिखेद्यं  
 नवकोष्ठान्तरे द्विज ॥ प्रथमांकेन संलेख्यमूर्ध्वकोष्ठत्रयात्मके ॥२३॥ तिर्यक्पंक्तौ च द्वित्रीणी  
 तिर्यक्पंक्तित्रयेष्वपि ॥ तदधोप्यूर्ध्वपंक्तौ च लिखेदेकं त्रयं द्वयम् ॥२४॥ मध्यपंक्त्यूर्ध्वं सतेख्यं  
 द्वयं चैकं त्रयं पुनः ॥ अंतपंक्त्यूर्ध्वके लेख्यं त्रयं द्वैकं द्विजोत्तम ॥२५॥ एयं क्रमेण वै विप्र  
 प्रतिकोष्ठत्रिपंक्तिषु ॥ दीर्घमध्याल्पआयुष्याद्विज्ञेयानि भवन्ति हि ॥२६॥ अधरोत्तरक्रमेणैव  
 वामभागप्रिकोष्ठके ॥ वीर्घापुश्च विजानीयात्त्रिर्विशंकं द्विजोत्तम ॥२७॥ मध्यकोष्ठत्रयंमध्यं  
 दक्षिणकोष्ठत्रयेत्यक्रमम् ॥ सप्तविंशतिका भेदा भाषिता द्विजसप्तम ॥२८॥ सप्ताष्टमेशयोर्विप्र  
 दीर्घादौ च त्रयं त्रयम् ॥ नवकोष्ठं विजानीयादायुः साधनहेतवे ॥२९॥ तदैव सबिजानीयात्को  
 ष्ठांकलप्रचंद्रयोः ॥ नव कोष्ठा महाप्राज्ञ विज्ञेया लघुहोरयोः ॥३०॥ एवं चरादिराशीनां  
 भेदेनापि पृथक्पृथक् ॥ नानाभेदादिसयुक्ते तवाप्रे कथयाम्यहम् ॥३१॥

यदि तीनो प्रकार से प्राप्त हुई आयु का भिन्न २ रूप हो तो होरा और लग्न से प्राप्त आयु का ग्रहण करे। १४। लग्नेश, अष्टमेश से प्रथम आयु देखे। यह प्रथम योग है। होरा तथा लग्न से देखना द्वितीय योग है। १५। शनि और चन्द्र से देखना तृतीय योग है। चन्द्रमा लग्न सप्तम में होतो लग्न चन्द्रमासे देखना भी तृतीय योग है। अब हम इसका चक्र (गरलता से समझने के लिए) कहते हैं। चार तिरछी रेखा और चार खड़ी रेखा (आपस में मिलाकर) लिखे, तो ९ कोष्ठ (३-३ कोष्ठक के) होते हैं। पहिले तीनो में चर नाम लिखे और उसके नीचे क्रमशः चर, स्थिर, द्विस्वभाव लिखे। मध्य के तीन कोष्ठको में प्रथम सबसे स्थिर नाम लिखे और उसके नीचे द्विस्वभाव, चर, स्थिर लिखे। अन्त्य के तीन कोष्ठको में प्रथम द्विस्वभाव लिखे, पश्चात् उसके नीचे स्थिर, द्विस्वभाव और चर लिखे इस प्रकार लिखकर तिरछे क्रम से प्रथम पंक्ति में दीर्घ, मध्य, अल्प आयु लिखे। हे विप्र! तीनो पंक्तिगोमे क्रमसे लिखना। मध्य पंक्ति में स्थिर पंक्ति तीनों हैं। (और नीचे की तीनो कोष्ठको की पंक्ति द्विस्वभाव की है) इस प्रकार से लिखे हुए चक्र में नी कोष्ठो में ऊपर के कोठो में प्रथम १-१ अंक लिखकर पश्चात् तिरछी पंक्ति में १-२-३ अंक लिखे। और खड़ी पंक्ति में १-३-२ के अंक लिखे उसके नीचे मध्यपंक्ति में २-१-३ लिखे (खड़ी पंक्ति में) और तिरछी पंक्ति में ३-१-२ लिखे। नीचे की पंक्ति में ऊपर ३-३-३ लिखे और नीचे २-३-१ लिखे। इस प्रकार प्रति कोष्ठत्रिक में अब निवेश करना। प्रथम पंक्ति में (ऊपर की पंक्ति में दीर्घ, मध्य, अल्प आयु होगी। ऊपर नीचे के बाईं तरफ के तीनो कोष्ठो में 'दीर्घायु' नाम होगा और इसी तरह मध्य के कोठो में 'मध्यायु' और अन्त्य कोष्ठो में 'अल्पायु' शब्द होंगे। इस प्रकार ९X३=२७ भेद रहे। लग्नेश और अष्टमेश के विचार में दीर्घ आदि ९ भेदों में आयु का साधन करें। और आयु भी इसी तरह नी कोष्ठो में लग्न, चन्द्र से तथा लग्न होरा से आयु निर्णय करें। इस प्रकार चरगदि राशियों के अलग अलग भेद से नाना प्रकार के आयु के भेद होते हैं। गो स्पष्टरूप में अब तुम्हारे सामने कहते हैं। १४-३१॥

अथ दीर्घाद्यनेकमेदानामायुश्चक्रम्		
दीर्घायु चर १ तप्रेग चर १ अष्टमेश	माध्यायु चर १ तप्रेग स्विर २ अष्टमेश	अत्यायु चर १ तप्रेग द्वि-स्वभाव ३ अष्टमेश
दीर्घायु स्विर २ तप्रेग द्वि-स्वभाव ३ अष्टमेश	मध्यायु स्विर २ तप्रेग चर १ अष्टमेश	अत्यायु स्विर २ तप्रेग स्विर २ अष्टमेश
दीर्घायु द्वि-स्वभाव ३ तप्रेग स्विर २ अष्टमेश	मध्यायु द्वि-स्वभाव ३ तप्रेग द्वि-स्वभाव ३ अष्टमेश	अत्यायु द्वि-स्वभाव ३ तप्रेग चर १ अष्टमेश

स्पष्टायु चक्र			
दीर्घायु	त्रियोगे १२०	द्वियोगे १०८	एकयोगे ९६
मध्यायु	त्रियोगे ८०	द्वियोगे ७२	एकयोगे ६४
अत्यायु	त्रियोगे ४०	द्वियोगे ३६	एकयोगे ३२
सम्पद	४०	३६	३२

कदाचित्कश्चिद्भवति इत्युक्तं द्विलसत्तम ॥ तत्राष्टमेशयोरेकं त्वपरं सप्तचक्रयो ॥३२॥  
 त्रिसप्तहोरयोरन्यदितिषस्यत्र द्विज ॥ तदेभिः प्रेत्य सवादादित्यादियोगसकयम् ॥३३॥  
 दीर्घमध्यात्मभेदेषु चरेत्यादि निरूप्यते ॥ द्वात्रिंशच्च चतुः षष्टिः षण्णवति स्वरूपके ॥३४॥  
 पद्त्रिंशद्वा द्विसप्तान्दे अष्टोत्तरशताब्दके ॥ चत्वारिंशत्तयाशोतेर्विंशोत्तरशतात्मके ॥३५॥  
 योगान्धप्रहमायुष्य वा शेषेषु समानत ॥ समागतेषु आयुर्दास्वष्टीकरणतकयाम् ॥३६॥  
 पूर्णमादौ हानिरतेऽनुपाते मध्यमो भवेत् ॥ राशिद्वयस्य योगार्द्धं वर्षाणां स्पष्टमुच्यते ॥३७॥  
 एकं द्विकालं सचित्यं त्रयाणां योगविन्मते ॥ यत्रास्यायुर्व्यतिर्णीतं योगजातेन यत्कृतम् ॥३८॥

तत्रापुर्दीर्घसलब्धा सिद्धिर्मध्यावधिर्भवेत् ॥ निर्विंशक महाप्राज्ञ स्फुटीपातानुपाततः ॥३९॥  
 सलब्धाब्दमनुपातेन मध्यमध्येपि योजयेत् ॥ दीर्घायुषा विजानीयात्संस्फुटी  
 चपलात्मका ॥४०॥

कभी कोई आयु और कभी कोई आयु होती है, यह हम कह चुके हैं। (उनमें निर्णय करने के लिए) लघेश और अष्टमेश से (१) तथा लग्न और चन्द्रमा से (२) ॥ लग्न और होरा से (३) आयु निर्णय करे। इस प्रकार तीन पक्ष हैं। इन तीन पक्षों में से अधिक पक्ष से जो आयु प्राप्त हो सो ग्रहण करना सृष्ट्र हम कह चुके हैं। दीर्घ, मध्य, अल्प आयु के विषय में विचार दशा तथा वर्ष परिमाण का है वह अब कहते हैं। वर्षसंख्या के परिमाण भी तीन प्रकार के हैं, उनमें प्रथम ३२ वर्ष, ६४ वर्ष और ९६ वर्ष क्रमशः अल्प, मध्य, दीर्घ के वर्ष परिमाण हैं। और दूसरा परिमाण ३६, ७२, १०८ वर्ष का है। तीसरा परिमाण ४०, ८०, १२० वर्ष का है। अन्य योगों से प्राप्त आयु प्रायः इनके समान हैं। योग से आयु का दीर्घ, मध्य आदि निर्णय होने पर ठीक स्पष्ट करने का विचार होता है। पहले नियम से पूर्ण आयु प्राप्त हो और तीसरे से अल्पायु प्राप्त हो तो अनुपात से मध्यायु होती है। आई हुई २ आयु के वर्ष जोड़कर उनका आधा करने से स्पष्ट वर्ष संख्या होती है। इस प्रकार इन तीन आयु के निर्णय में जो प्रधानतः दो आयु प्राप्त हो उनको जोड़ कर आधा करने से स्पष्ट होती है। पूर्वोक्त नियमों से जो आयु निर्णीत हुई और योग समूह से जो स्पष्ट हुई उसमें यदि दीर्घायु है तो उसका आरम्भ मध्यायु की अवधि से होता है। और इसके बीच में अनुपात से स्पष्ट करना चाहिए। ३९॥ अनुपातसे प्राप्त हुई वर्ष संख्या मध्यायु के भी मध्यमें जानना। और दीर्घायु की अवधि पर्यन्त जो स्पष्ट प्राप्ता हो सो गणित से पल पर्यन्त आयु जानी जा सकती है। ३२-४०॥

मध्यमायुर्लभेतत्र अल्पायु सिद्धिसंभवम् ॥ पूर्वचदनुपातेन यत्र युद्धमध्यमायुषि ॥४१॥  
 कदाचित्सर्वयोगेन अल्पायु सममागते ॥ यत्र भाशानुपातस्य तत्रैक खड सिद्धचति ॥४२॥  
 खडप्रयप्रयोगेण आयुर्दा कथिता मया ॥ द्वात्रिंशत्पठत्रिंशत्तत्तत् द्विज ॥४३॥ कि  
 प्राह्य कियतो प्राह्य कदाचिद्प्राह्यमाणक ॥ इति सशयनिवृत्त्यर्थं कथयामि पृथक् पृथक्  
 ॥४४॥ तत्रेशाष्टमनाथास्या तदायुर्योगसंभवः ॥ चत्वारिंशत्तमक खण्ड मग्राह्य द्विजसत्तम  
 ॥४५॥ योगत्रयेण चागत्य अल्पायुर्द्विजसत्तम ॥ द्वात्रिंशत्तमकखण्ड च सजेय ब्रह्मणोदितम्  
 ॥४६॥ कदाचिदनुपातेन युक्ते सिद्धिः प्रजायते ॥ दत्ताब्देन तु सदेहो रुद्रशूल विचिंतयेत्  
 ॥४७॥ अपुना सप्रवक्ष्यामि ह्यनुपातविधि द्विज ॥ पृथक् स्पष्ट च तस्याप्य  
 विलप्रेशाष्टमेशयोः ॥४८॥ गतराशांस्त्यजेद्विप्र विद्यमानेन सगुणैत् ॥ त्रैराशिकैकखण्डस्य  
 यदाप्त वर्षमादिशेत् ॥४९॥ तत्रेशस्याष्टमेशस्य आपुरागतयोर्द्विज ॥ वर्षादिपडयोगेण तदर्थं  
 स्पष्टकारितम् ॥५०॥ दीर्घमायुर्लभेद्विप्र द्विसप्तमाब्देषु योजयेत् ॥ तदा चाशीतिमे योन्य  
 दीर्घसजा स्फुटा भवेत् ॥५१॥ मध्यमायुषि यत्रैव पट्त्रिंशत्तमभवेदयोः ॥ अनुपातेन चागत्य  
 युक्तेब्दे मध्यमायुषि ॥५२॥ त्रैराशिकमहृ षष्ठ्ये तवापे द्विजसत्तम ॥ प्रमाणमिच्छानुत्य च  
 तस्याप्यमाद्यतयोर्द्वयोः ॥५३॥ मध्ये फलेन्यजाती च सगुणेदिच्छया द्विज ॥ प्रमाणासस्फुटपत  
 तस्याप्यमनुपातकम् ॥५४॥

॥६४॥ आयुर्वायसमापत्रे कक्षात्रयमिहोच्यते ॥ दीर्घमध्याल्परूपे चेतत्प्रमाणं ब्रह्माम्यहम् ॥  
 ॥६५॥ षट्त्रिंशोऽब्देन वर्षे का तस्या हानिं प्रजायते ॥ मध्यमायुर्भवेत्तत्र निर्विशक द्विजोत्तम ॥  
 ॥६६॥ मध्यमायु समागत्य स्वल्पायुर्जायते ध्रुवम् ॥ योगेल्पायु समायात शनिर्योगं  
 करोत्यपि ॥६७॥ षट्त्रिंशाब्दश्च रूपेण कक्षाह्लासो भवेद्द्विज ॥ अत्यल्पायुर्विजाननीयाद्बाल्ये च  
 निघनं भवेत् ॥६८॥ अयं योगत्रये विप्र शनिर्योगं करोति च ॥ एकैकादशाह्लास  
 कक्षाह्लासस्त्वय क्रमात् ॥६९॥ तत फलविशेषार्थं गुणदोषौ वदाम्यहम् ॥ गुणं प्रपूरित  
 सौरि कक्षावृद्धिं करोति च ॥७०॥ दोषयुक्ता भवेद्धानिस्ताम्या निर्णय उच्यते ॥  
 स्वर्स्तुगादिगुणिभिर्मुक्तो मार्तंडवशज ॥७१॥ कक्षावृद्धिकरो विप्र विभागेनायुवृद्धिकृत् ॥  
 अत्यल्पायुर्भवेदल्पमल्पान्मध्य प्रजायते ॥७२॥ मध्यमान्जायते दीर्घं कक्षावृद्धेश्च लक्षणम् ॥  
 एव नोचारिण सौरि पापदृष्टिसमन्वित ॥७३॥ कक्षाह्लासकृते विप्र त्रिभागेनायुहानिकृत् ॥  
 वृद्धाद्भवति मध्यायुर्मध्यादल्पायुरेव च ॥७४॥ अत्यादत्यल्पक याति बाल्ये निघनसमभव ॥  
 लयेशे वापि होरेशे केवले शनिसयुते ॥७५॥

अनुपात दीर्घायु और मध्यायु म नियुक्त करना चाहिए। जबकि अल्पायु प्राप्त हो तो अनुपात व्यर्थ है। इस प्रकार स जन्म स लेकर आयु का विचार करना चाहिए। इसी प्रकार लग्न होरा से और लग्न चन्द्रमा स विचार करना चाहिए। तीन प्रकार स आई हुई आयु के खण्डों को जोड़कर ३ का भाग देने स स्पष्ट आयु जानना। होरा लग्न से आई हुई खण्ड सख्या आदि की हो और अन्य प्रकार से आई हुई खण्ड सख्या अन्तिम हो तो इसी प्रकार स्पष्टीकरण होगा। ऐसे ही दीर्घायु मध्यायु तथा अल्पायु मे स्पष्टीकरण करना चाहिए। होरा और लग्न का स्पष्ट राशि अथ कक्षा विकना पर्यन्त स्पष्ट करके पहले कही हुई रीति के अनुसार त्रैराशिक के गणित के वर्षादि आयु स्पष्ट करना चाहिए। आई हुई आयु के अन्तिम खण्ड पर्यन्त इन वर्षों की सख्या ही सकती है। और इस प्रकार आयु का निर्णय होता है। होरा लग्न प्राय २॥ घटी का होता है। उसका सूर्य राशि से स्पष्ट करके और पूर्व रीति के अनुसार आयु निकालना होरा-लग्न का स्पष्ट करना हम पूर्व के अध्याया मे कह चुके है। अब हम तुमको आयु सिद्ध करन के लिये आयु मे कक्षा ह्लास और वृद्धि जो कि शनि के योग से होती है वह कहते है। (अर्थात् शनि के योग से आयु मे वर्षों की कमी व अधिकता होना कहा जाता है।) लग्नेश अथवा होरेश शनि युक्त हो तो कक्षा ह्लास (आयु मे कमी) होती है। किन्तु जहा शनि निर्बल हो वहा कक्षा ह्लास कहना चाहिए। दीर्घ मध्य व अल्प आयु का जो प्रमाण आया है उसम विचार करना चाहिए। जहा मध्यायु आई है वहा यदि कक्षा ह्लास हो तो ३६ वर्ष की अल्पायु जानना। इस प्रकार मध्यायु कक्षा ह्लास से स्वल्पायु हो जाती है। योग से यदि अल्पायु आई है और शनि योग करता है तो ३६ वर्ष की अल्पायु मे कक्षा ह्लास होकर अत्यल्प आयु जानना और बाल्यावस्था मे ही निघन कहना। मैत्रेय! यदि तीनों योगों म शनि, योग करता हो तो प्रत्येक दशा म कक्षा का ह्लास करता है। इसलिये अब विशेष फल जानने के लिय आयु विचार के लिए शनि के गुण और दोष दोना बताते है। गुणों से युक्त शनैश्चर कक्षा मे वृद्धि करता है। दोष युक्त शनि कक्षा मे हानि करता है। इस हानि वृद्धि का निर्णय कहते है। शनि अपनी राशि या उच्च का हो तो कक्षा वृद्धि करता है। अर्थात् अल्पायु से मध्यायु मध्यायु से दीर्घायु करता है। शनि दोषयुक्त हो तो

कक्षाह्रास करता है। (अर्थात् दीर्घायु से मध्यायु और मध्यायु से अल्पायु) कक्षा वृद्धि में अल्पायु से अल्पायु तथा अल्पायु से मध्यायु तथा मध्यायु से दीर्घायु होना कक्षा वृद्धि का लक्षण है। इसी प्रकार नीच राशि का या शत्रु राशि का शनि पापग्रह की दृष्टियुक्त हो तो कक्षा ह्रासकारी है और आयु का तीसरा भाग कम करता है। अर्थात् दीर्घायु से मध्यायु और मध्यायु से अल्पायु तथा अल्पायु से अल्पायु कारक है बाल्यावस्था में मृत्युकारक होता है। अष्टमेश अथवा होरेश यदि केवल शनियुक्त हो ॥५५-७५॥

पापक्षे पापयुक्ते वा पापदृष्टिसमन्विते ॥ कक्षाह्रास न कुर्वीत विना नीचारिणे द्विज ॥७६॥  
एव तुगादिरहितः कक्षावृद्धि न कारयेत् ॥ शुभक्षे शुभसयुक्ते शुभदृष्टौ च तुग्रे ॥७७॥  
पापयोगेन रहिते कक्षावृद्धिकर शनिः ॥ एव नीचादिदोषेण कक्षाह्रासः प्रजायते ॥७८॥  
साधारण्ये स्थिते युक्ते कष्ट चातितरा भवेत् ॥ अधुना सप्रबध्यामि कक्षावृद्धिद्वितीयकम् ॥७९॥  
गुरुणा स्वानसबन्धे भविष्यति द्विजोत्तम ॥ सप्रे वा सप्तमे वापि तुगादिगुणसयुते ॥८०॥ शुभक्षे  
शुभदग्युक्ते कक्षावृद्धिकरे गुरौ ॥ जीवने सगयो यस्य अल्पायुर्वृद्धिकारकम् ॥८१॥ अल्पायुषि च  
मध्यायुर्मध्यायुते दीर्घमायुषि ॥ एव भेदानुभेदेन कथयामि तवाग्रतः ॥८२॥ अयायुर्बाधक विप्र  
दर्शयामि तवाग्रतः ॥ दीर्घायुर्बाधे सप्राप्ते प्रकारसकलेष्वपि ॥८३॥

पापराशि में पापदृष्टि या पापयुक्त हो तो कक्षाह्रास नहीं करना। क्योंकि-शनि के नीचराशि या शत्रुराशि में होने पर ही कक्षा ह्रास होता है ॥७६॥ इसी प्रकार शनि के उच्चराशि या मित्रश्रेणी के बिना कक्षावृद्धि भी नहीं करना। शनि यदि शुभराशि में सौम्ययुक्त तथा शुभदृष्टियुक्त अथवा उच्चराशि में हो और पापग्रह योग रहित हो तो कक्षा वृद्धिकारक है और नीचादि दोष से कक्षा ह्रास कारक होता है ॥७८॥ साधारणरूप में शनियुक्त हो तो विशेष कष्टकारक होता है। अब हम कक्षावृद्धि का दूसरा योग बहते हैं ॥७९॥ गुरु से स्वान सम्बन्ध होने पर जैसे लग्न में या सप्तमभाव में उच्च आदि गुणयुक्त शुभराशि में शुभ दृष्टियुक्त हो तो कक्षावृद्धिकारक होता है। अर्थात् अल्पायु (जीवन में सशय) हो तो अल्पायु और अल्पायु से मध्यायु और मध्यायु में दीर्घायु होती है। इन योगों के भेद तथा अनुभेद तुमको बहते हैं ॥८२॥ और आयु के बाधक योग भी बहते हैं। सब प्रकार में दीर्घायु योग प्राप्त होने पर ॥८३॥

कि दशाया च निघनमिति कर्तुमपेक्षया ॥ निर्णय ताय कुर्वीत तवापे कथयाम्यहम् ॥८४॥  
यस्य दीर्घायुषः सख्या पर्यत मध्यमायुषि ॥ निरपवादता ज्ञेया तदपे निघनमुच्यते ॥८५॥  
मध्यायुषः समायोग सख्या पूर्वप्रकारतः ॥ निर्दिशकाल्यपर्यत तदपे मृतिचितनम् ॥८६॥  
योगेऽल्पायुः समागत्य स्वयः खण्डे विहितयेत् ॥ किंस्विद्दशाया निघन भविष्यतिद्विजोत्तम ॥८७॥  
दीर्घे द्विसप्ततिवर्षे तदूर्ध्वं चितयेन्मृतिम् ॥ षट्त्रिंशदब्दादूर्ध्वं च चितयेन्मध्यमायुषि ॥८८॥  
अयः स्पष्टः प्रबध्यामि मन्त्रिने द्वारवाह्ययो ॥ नवासे निघन तस्य त्रिगुलिभाषित पुरा ॥८९॥  
द्वारद्वारेणयोर्विप्रः भालिन्यः तत्रवर्षाशके ॥ जातस्य हि भवेन्मृत्युः सत्यमेव न स्यात् ॥९०॥  
षाण्णयोगद्वये विप्रः चितनोऽयः प्रयत्नतः ॥ स्वयः पापः पापदृष्टेः पापतेऽसमन्विते ॥  
तत्रवर्षाशकाले निघन च भवेद्द्रुवम् ॥९१॥



अब हम तुमको यह बताते हैं कि, जातक का मरण किस दशा में होगा इसका निर्णय करने के लिए कहते हैं॥८४॥ (प्रथम स्थूलरूप से कहते हैं) जिस जातक की दीर्घायु प्राप्त हुई है, उसके लिये मध्यायु तक तो बाधरहित जीवन है, उसके बाद ही मृत्यु कहना॥ पूर्वोक्त प्रकारों से जिसका मध्यायु योग प्राप्त है, उसका जीवन अत्यायु की अवधि तक तो है ही, पश्चात् मृत्यु के विषय में विचार करना चाहिए॥८६॥ योग में यदि अत्यायु आई हो तो उसके क्षण में ही विचार करना चाहिए। किस दशा में मृत्यु होगी यह विचार करना॥ दीर्घायु हो तो ७२ वर्ष के बाद मृत्यु समझना, और मध्यायु में ३६ वर्ष के बाद मृत्यु विचारना॥८८॥ अब यह स्पष्ट कहा जाता है कि—द्वारराशि या बाह्य राशी के मलिन पापदृश्योग होने पर उसकी नवाश दशा में या अन्तर्दशा में मृत्यु होती है जो कि भगवान् शंकर ने पहिले कहा था॥८९॥ हे मेरेय! जिस जातक के द्वारराशि या द्वारराशीश की मलिनता हो तो उसके नवाशदशा या अन्तर्दशा में निःसन्देह मृत्यु होती है॥९०॥ यह विचार पाप — दशा और भोग — अन्तर्दशा दोनों में करना। जो द्वारराशि या द्वारराशीश स्वयं पाप या पापदृष्ट या युक्त हो उसकी नवाशदशा काल में निश्चय मृत्यु होती है॥९१॥

निर्दिशक महाप्राज्ञ तदन्तरगते मृति ॥९२॥ द्वारे च बाह्यराशेर्वा नवाशे निघ्न भवेत् ॥  
पापयोगे नवाशेऽसदन्तर्गते द्विज ॥९३॥ यदा दशाप्रदो राशि पापसज्ज प्रजापते ॥  
लप्राद्यावति यो दूर तावद्दूर विभोगका ॥९४॥ अधुना सप्रधक्ष्यामि नवाशकपदेन च ॥  
प्रतिराशिनवाशेन नवाब्देन दशास्थिरम् ॥९५॥ विशेषरूपेण प्रोक्त नवाब्दाद्द्वारबाह्यो ॥  
राशिसवधिनी प्राह्याश्रदशाया विचित्रपेत् ॥९६॥ भावाना स्पष्टकृत्यैव द्वारबाह्य विचित्र-  
पेत् ॥ यद्भाष्यस्पष्टता सप्रहनवाशेषु षो द्विज ॥९७॥ रीत्याब्दे च समानेति मरण भवति  
ध्रुवम् ॥ एव तन्वादयो भावा स्पष्टीकार्या यथार्थत ॥९८॥ प्रहनवाशैर्परीत्याद्दशादशाना  
नवाशके ॥ नवाशायुसमानेन विशेषे च समादिशेत् ॥९९॥ एव विचित्रपेद्विप्र द्वारबाह्यद्वयोर  
पि ॥ मलिनत्वमथैवेद निघ्न न तु कथ्यते ॥१००॥

अथवा हे महाप्राज्ञ मेरेय ! उसकी अन्तरदशा में मृत्यु होती है॥९२॥ जिस द्वारराशि या बाह्यराशि के नवाश में पापग्रहदृष्टि या योग हो तो उसी नवाश दशा में निघ्न (मृत्यु) होता है॥९३॥ स्वयं पाप या पापदृश्योग युक्त राशि दशाप्रदरूप में (चर पर्यायदशा में) भोगरूप से आरम्भ होती है तो वह लग्न से जितनी सख्या पर हो उतनी सख्या पर का भोग अन्तरदशा मारक होगी अर्थात् द्वारराशि के द्वारनवाश से या सम्भव हो तो लग्न से उतनी सख्या परे वी राशि दशा या नवाश दशा में मृत्यु होती है ॥९४॥ अब नवाश राशि के आम्ब (राशि) में यह विचार कहते हैं। हर एक राशि की दशा ९-९ वर्ष की होती है और उसमें अन्तर एक अंश के १-१ वर्ष जानना। यह 'नवाशस्थिरदशा' कहाती है। जो नि, आगे दशाप्रकरण में कही जायगी॥९५॥ और द्वार तथा बाह्य राशि के राशिसम्बन्धी विशेषरूप चरदशा या चरपर्यायदशा में विचार करना। द्वादशभावों को स्पष्ट करके द्वार तथा बाह्य राशि का विचार करना। जिस भाव या नवाश में द्वार राशि हो और जिस भाव में या नवाश में बाह्यराशि हो उसको देखकर पूर्वोक्त ग्रहयोगानुसार जिस राशि में मरणयोग प्राप्त हो उसमें

वृद्धानंतर्यदा मृत्युस्तस्य विश्वात्मकोऽच्युतः ॥ सर्वात्मना मृत्युयोगः शुभदुःयोगसम्बन्धः ॥११३॥ तप्येते तुगराशिस्ये इत्याकांक्षा द्विजोत्तम ॥ तस्या विनिर्णयं कर्तुं स्पष्टमुक्तेन भाषितम् ॥११४॥ यस्य वृद्धिकरे विप्र पदेशस्य दशांतरे ॥ निघनं च भवेत्तस्य निर्विशकं वदाम्यहम् ॥११५॥ पदेशस्य नवांशे वा लग्नाष्टपत्रिकोणने ॥ दशायां निघनं तस्य यस्य वृद्धिपदं भवेत् ॥११६॥ यदि वृद्धाब्दमादाय निघनं न भवेत्कदा ॥ दशात्रयाणामंते तु मृत्युमवति निश्चितम् ॥११७॥ पदेशस्य दशा तत्र लग्नाष्टके पदस्य च ॥ रक्षाष्टके तदा प्राह तदीयस्य यदा द्विज ॥११८॥ तवाश्रये राशिदशा प्राह्यमाणा द्विजोत्तम ॥ अत्र केवललेटानां दशायां चिंतयेत्सुधीः ॥११९॥ यद्वा पदेशस्य दशा निसर्गबललक्षणा ॥ विशोत्तरी दशा रीत्या दशा चाष्टोत्तरी मता ॥१२०॥

द्वारराशि की दशा, द्वारनवाश की दशा एव बाह्यराशि की दशा को लघ कर बाह्य राशिदशा से भी आगे ९ वर्ष तक और आयुवृद्धि होती है ॥१११॥ द्वारबालराशिदशा से आगे दूसरी राशि की दशा में भी पापसम्बन्ध होने पर भी आयु की निश्चय वृद्धि होती है ॥११२॥ आयुवृद्धि के पश्चात् शुभदृष्टि तथा योग से कष्टरहित अवस्था में मृत्यु होती है ॥ अष्टमेश यदि उल्चराशि में हो तो क्या होना चाहिये, इस आकांक्षा के विषय पहिले कहे जा चुके हैं, उसी से समझना चाहिये ॥ जिस जातक के आयुवृद्धि का योग हो, उसकी आरुह लग्न के स्वामी की दशा या अन्तर में मृत्यु निश्चितरूपसे जाने। अथवा जिस जातक के वृद्धियोग हो उसकी मृत्यु आरुह लग्नाधीश के नवांश में या लग्न से अष्टमेश की त्रिकोण राशि के स्वामी की दशा में मृत्यु होती है ॥ यदि कदाचित् बड़े हुए ९ वर्ष के बाद भी मृत्यु न हो तो, आरुहेश, उपपदेश और अष्टमभावारुह इन तीनों का ग्रहण करना ॥११७॥ (अर्थात् आयुवृद्धि योग बलवान् हो तो द्वारराशिदशा तथा बाह्यराशिदशा, अष्टमेश दशा, इनके बाद आनेवाली दशाओं में मृत्यु हो और समय निर्देश के लिये आरुहेश की दशा, या उपपदेश की दशा या अन्तरदशा का निर्देश करना) यही बातें कहते हैं कि-लग्न से आरुह स्थान के स्वामी की या उपपद राशि की स्वामी की या अष्टमभाव के आरुह के स्वामी की दशा मारक निर्देश में ग्रहण करना चाहिये ॥११८॥ आयुवृद्धि योग में ग्रहण की हुई राशि के (बाध्य होने पर) केवल ग्रहों की दशा का उपयोग करना ॥११९॥ अथवा केवल आरुह लग्नाधीश की दशा से मारक निर्देश करे। यह दशा ग्रहण करने में यद्यपि अनेक दशा है किन्तु विशोत्तरी दशा अथवा अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करना चाहिये ॥१२०॥

तदा पददशाया च निघनं गणिताप्रणी. ॥ अलपद तदीशस्य पदशीच तयोर्दशा ॥१२१॥ नाथातेन समारोत्या राशिखेटद्वयोर्दशा । निवर्तिता दशा विप्र तर्दतेषु विचितयेत् ॥१२२॥ चरपर्यादशारोत्या पदेशस्य दशांतरे ॥ अवश्यं निघनं तस्य निर्विशकं द्विजोत्तम ॥१२३॥ तथापदेशस्य च तत्रिकोणं चायं प्रोद्धिज ॥ नवांशकदशारोत्या समानीय दशांतरे ॥१२४॥ पुनः पदत्रिकोणाभ्यामनतरगते द्विज ॥ दशायां निघनं वाच्यं जातकस्य न संशयः ॥१२५॥ नवांशकदशा प्रोक्ता द्विधा प्राह्या द्विजोत्तम ॥ ताम्यां लग्नाष्टमाधीश अथ वा रागिकोणया

॥ १२६॥ दशाया निघ्न वाच्य त्रिशूलिभाषित पुरा ॥ इत्येषा निघ्न योगादवश्य  
चितयेद्द्विज ॥१२७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आयुर्दायिकयन नाम विंशोऽध्यायः ॥२०॥

गणितज्ञ को चाहिये कि—आरूढ की दशा में या आरूढ राशि के स्वामी के 'अथापद' त्रिकोणेश की दशा में अथवा 'पदशौच' अष्टमेश (पद=आरूढ का शौच=शुद्धि=शोधन का स्थान=अष्टमभाव) की दशा में निघ्न कहना ॥१२१॥ 'नाथान्तेन समा ज्ञेयां०' आदि रीति से जो चरदशा कही जायेगी, उस रीति से दशास्पष्ट करके बाद उसमें मरण का विचार करे ॥ चरपर्यादशा की रीति से स्पष्ट की हुई दशा में आरूढेश की अन्तरदशा में निश्चय मरण कहना ॥१२३॥ अथवा नवाशदशा स्पष्ट करके आरूढ की दशा या उससे त्रिकोण ५१९ की दशा या अंतर में अथवा आरूढ के त्रिकोण की दशा में ही निश्चय मरण कहना ॥ नवाश दशा दोनों रीति से (कही जायेगी) ग्रहण करना ॥ उन दशाओं लग्नेश और अष्टमेश से या त्रिकोणाधीश की दशा में निघ्न (मृत्यु) कहना, ऐसा भगवान् शंकर का कहना है। इन भाशकों का हे मैत्रेय ! अवश्य विचार करना चाहिये ॥ श्लोक १ से १२७ ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया आयुर्दायिकयन  
नाम विंशोऽध्यायः ॥२०॥

पराशर उवाच—अथात् सप्रवक्ष्यामि प्रकार वै द्वितीयकम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण  
आयुर्दासूचको भवेत् ॥१॥ विलग्नप्रत्यक्षे विप्र अष्टमेशात्तयोर्द्वयो ॥ मध्ये चैवो बली चित्त्य  
सोपि ह्यायु प्रदो ग्रह ॥२॥ केन्द्रादित्रिकयोगेन दीर्घमध्यात्पतापुपि ॥ सा विज्ञेया महाप्राज्ञ  
तवाप्ये प्रवदाम्यहम् ॥३॥ केदे स्थितेऽपि दीर्घादिमध्यायुः पणफरे स्थिते ॥ आपोक्तिमे स्थिते  
स्वल्पमायुर्मवति निश्चितम् ॥४॥

पराशरजी ने कहा—अब हम दूसरा प्रकार कहते हैं जिसका ज्ञान स आयु की सूचना होती है ॥१॥ हे मैत्रेय ! लग्नेश तथा अष्टमेश में आयु का विचार करे इन दोनों में जो ग्रह बनवान् होता है, वह आयु का देनेवाला है ॥ उन ग्रह के केन्द्रादि स्थान में होने से दीर्घ मध्य, अन्य आयु गमयनात् ॥ सो हम स्पष्ट (मुनामा) कहते हैं ॥ उस वही ग्रह के केन्द्र स्थान १।४।७।१० में होने से 'दीर्घायु' पणकर २।५।८।११ में होने से 'मध्यायु' और आपोक्तिम ३।६।९।१२ में होने से 'अल्पायु' होती है ॥१-४॥

कर्त्तव्ये तु सूत्रेण तदेव चितयेद्द्विज ॥ लग्ने वा मदने यापि वाष्टमेशो तयोर्द्वयो ॥५॥ तान्मया  
मध्ये बली चैव स्थित केन्द्रादिपूर्ववत् ॥ दीर्घमध्यात्पमेदेन आयुर्निश्चितम् पूर्ववत् ॥६॥  
पूर्ववद्द्वन्द्वस्य प्रैरागिकमेव च ॥ आयुदपि कृते स्पष्ट प्रवक्ष्यामि इदं वच ॥७॥  
स्वस्तिन्तमवने भेटेऽनधिके च बने द्विज ॥ न दीर्घताया दीर्घादि विपरीतायुयो भवेत् ॥८॥

दीर्घमध्ये च वाल्पं च ह्यल्पं वा किञ्चिदेव च ॥ विपरीत योगभंगे सत्यमेव न संशयः ॥१॥  
 प्तमात्सप्तमे विप्र नवमे कारके स्थिते ॥ विपरीत च दीर्घादि योगायुर्म तु संशयः ॥१०॥  
 त्यापेऽनेकभेदानामापुपो निर्णयः कृतः ॥ दीर्घादित्रयरूपेण इत्युक्तं ब्रह्मणोदितम् ॥११॥  
 न्यतप्राष्टमेशी द्वौ चितयेज्जन्मपत्रके ॥ पचमैकादशे विप्र दीर्घायुश्च प्रजायते ॥१२॥ तामे  
 तृतीयगे मध्य आयुर्दाय विचिन्तयेत् ॥ लाभे विते त्रिकोणे वा ह्यायुरल्प भवेद्द्विज ॥१३॥  
 तापुर्लभिगौ द्वौ च जातकोपि न जीवति ॥ एवं समस्तजन्तूनामीदृग्योग  
 वेचितयेत् ॥१४॥

कर्क लग्न की कुंडली में भिन्नता है, सो यह है—लग्नेश, सप्तमेश में से जो बलवान् हो वह और अष्टमेश इनमें से जो एक ग्रह बली हो उसके केन्द्र, पणपर, आपोक्लिम स्थानों में होने से क्रमशः दीर्घ, मध्य और अल्प आयु होती है। और दीर्घादि आयु प्राप्त होने पर पूर्वके हीन खण्ड को छोड़कर प्राप्त खंड को ग्रह की वर्तमान राशि से गुणा करके आगामी खण्ड का भाग देने से जो वर्षादि अंक प्राप्त हो, उनको पूर्व त्यक्त खण्ड में योग करने से स्पष्ट आयु के वर्षादि जानना ॥ इस स्पष्ट गणित में इतना विशेष है कि—ग्रह यदि अपनी राशि में समबली हो और दूसरा ग्रह अधिक बली न हो तो ग्रह का बल समान होने के कारण दीर्घ आदि जो आयु प्राप्त हो वही रहेगी, विपरीत (भिन्न) आयु नहीं होगी। और यदि लग्नेशाष्टमेश हीन बल हो तो दीर्घादि आयु में कक्षा हानि होता है, इसमें सन्देह नहीं है। १॥ और आत्म कारक सप्तम से सप्तम (लग्न) या नवमभाव में हो तो प्राप्त योगायु विपरीत जाने, इसमें संशय नहीं है। १०॥ अब आगे आयु के अनेक भेदों का निर्णय किया जाता है। जिसमें दीर्घ, मध्य, अल्परूप से विचार किया गया है। ११॥ लग्नेश और अष्टमेश का विचार करना, यदि ये दोनों पचम और एकादश भाव में हो तो दीर्घायु होती है। १२॥ और वही लग्नेशाष्टमेश लाभ (११) स्थान या तृतीय भाव में हो तो मध्यायु जानना। तथा दूसरे या लाभ ११ अथवा त्रिकोण ५।९ में हो तो अल्पायु होती है। १३॥ और दोनों ग्रह यदि लाभभाव में हो तो जातक यतायु (आयुहीन) होता है और वह जानक अधिक दिन नहीं जी सकता है। इन प्रकार में सबके लिए आयु योग का विचार करना चाहिए। १४॥

अथेव भिन्नमार्गेण आयुर्दायि निरूपितम् ॥ तनुतन्वोऽशतद्राशिपत्युर्भान्ना त्रिकोणवे ॥१५॥  
 अल्पमध्यचिरायुष्ये रूपवर्षप्रमाणतः ॥ अष्टमेशादियोगेन निर्याणं चारयेद् ग्रहः ॥१६॥  
 लग्नेत्रिकोणवेत्यायुर्विप्रेःशस्य त्रिकोणवे ॥ मध्यमायुर्विजान्तीयान्निर्विशकः द्विजोत्तम ॥१७॥  
 लग्नेशात्स्वीयरशीगे त्रिकोणे रद्रनायके ॥ दीर्घायुषि प्रदातव्यं पुरा शमुप्रणोदितम् ॥१८॥

अब और एक नीति में आयु का निरूपण है। लग्न की राशि, लग्नेश की राशि, लग्नेशस्थित राशि के स्वामी की राशि इन तीन राशियों के त्रिकोण में अष्टमेश के होने से अल्प, मध्य, दीर्घ आयु अपने वर्षों के प्रमाणानुसार जानें। और अष्टमेश आदि (पष्टम, द्वादश) के योग में प्राप्त आयु वर्ष में हानि होता है। लग्न में त्रिकोण में अष्टमेश हो तो अल्प आयु और लग्न

पूर्वकण्ठे एकविंशोऽध्याय

से त्रिकोण में अष्टमेश हो तो मध्यायु और लग्नेशराशिज से त्रिकोण में अष्टमेश हो तो दीर्घायु जानो, ऐसा महादेवजी का वचन है ॥१८॥

तेषां मध्ये त्रिकोणानां विभागे च नवमकथम् ॥ स्वल्पमप्यत्र चिरायुष्यद्वादशाब्दाधिकेन च ॥१९॥  
अल्पायुषस्त्रयो भेदास्त्रयस्याने पृथक् पृथक् ॥ बिलग्रेशाष्टमेशादि लग्नस्थेषु द्विजोत्तम ॥२०॥  
द्वादशाष्ट भवेदायुश्रुतुर्विंशतिपञ्चमे ॥ नवमे च पद्मिशाब्दमित्येव न तु सशय ॥२१॥  
लग्नेशराशिकोणेषु लग्नराशिपादि चेत् ॥ तत्र स्थितेष्टवेदाब्दे षष्ट्यब्द पञ्चमे स्थिते ॥२२॥  
नवमस्थे द्विसप्तत्यब्द तद्वचकमिदं मतम् ॥ लग्नेशाश्रितराशीशे त्रिकोणेषु स्थिते द्विज ॥२३॥  
लग्नेशाष्टमेशादि त्रिभाग दीर्घमायुषि ॥ लग्नस्थे चतुरशीति पञ्चमे पद्मनवाशके ॥२४॥  
नवमेष्टौत्तरशत वर्षोऽयुर्विनिर्णय ॥ द्वादशाब्दानुपाते च ह्येतच्छतमुप्रणोदितम् ॥२५॥ तुला  
मेघविलग्नेषु प्रायः शुक्रो भवेद्वली ॥ स दशादीं स्वल्पं स्यादते च स्यात्स्वभावतः ॥२६॥

इन त्रिकोणभावों में प्रत्येक भाव के फलायः म क्या नवीनता है, सो कहत है। अल्पायु म १० वर्ष की इसी प्रकार मध्यायु और दीर्घायु में ग्रहयोग बल में १२-१२ वर्षों की न्यूनाधिकता होती है, सो दिखाते हैं। अल्पायु के ३ भेद हैं, वे तीन स्थानों में बलग अलग समझना ॥ लग्नेश और अष्टमेश ये दोनों लग्न में हो तो १२ या ८ वर्ष की आयु जानना और पञ्चम में हो तो २४ वर्ष और नवमभाव में हो तो ३६ वर्ष की आयु जानना ॥२१॥ मध्यायु के तीन भेद-लग्नेशराशि से त्रिकोण में, लग्नेश और राशेश हो तो ४८ वर्ष और पञ्चमभाव में हो तो ६० वर्ष और नवमभाव में हो तो ७२ वर्ष की आयु होती है ॥ इसी प्रकार दीर्घायु में लग्नेशस्थितराशीज यदि लग्न में हो तो ८४ वर्ष और पञ्चमभाव में हो तो ९६ वर्ष, और नवमभाव में हो तो १०८ वर्ष की आयु होती है ॥ इस प्रकार १०-१० वर्ष के अनुपात में भगवान् शंकर ने कहा है ॥२५॥ अब आठ श्लोकों में मेघ, तुला लग्न के विषय में कुछ विशेष वचन करते हैं ॥ तुला-मेघ लग्न में (शुक्र लग्नेश तथा केन्द्रेश होने में प्रायः शुक्र बलवान् होता है। वह शुक्र दशांश अपने शुक्रग्रह रूप में और वजा के अन्त में भावरूप में बलवान् है ॥२६॥

पूर्वादि चस्पष्टदशा मेघस्यापि तुलस्य च ॥ चरपदसिमानोते अर्धे चैकाब्दयोजिते ॥२७॥  
द्वादशाब्दाधिके कृत्वा पूर्वमायु समगते ॥ नायाताब्दसमूहे च मेलनीयं द्विजोत्तम ॥२८॥ तत्र  
चाय विभागश्च तवापे कथितो द्विज ॥ लग्नेशादीं समारभे प्रथमाशादिसत्यया ॥२९॥  
योजयेद्द्वादशाब्दं च ह्यायु साधनहेतवे ॥ अने श्रितातमाशाते लग्ने स्पष्टे सति द्विज ॥३०॥  
स्वभावात्तूवाचलून्ये द्वादशाब्दं तु योजयेत् ॥ मध्ये तयानुपाते च विप्राय च दशागतम् ॥३१॥  
तद्योजनं तु कर्तव्यं निर्विगारं स्वभावात् ॥ इत्येव नायाताब्दा ये स्वभावज्ञा भवति च ॥३२॥  
नाधिषे धैव नाब्देन शुक्रो सत्यस्थितो यदि ॥ भानुनष्टे च शून्यात्ते न युक्तं द्वादशाब्दम् ॥३३॥  
एषोऽष्टमेशः स्वोच्चस्थे पर्यायां प्रयज्जति ॥ नाश्रय्यो नामपेत्यर्थांशमायुर्विनि  
श्रितम् ॥३४॥ नीचरत्नेनमपुक्ता पर्यायां पृथक्पृथक् ॥ पहा विनाशययं च निर्णय  
परमायुषि ॥३५॥ उच्चरत्नेनमपुक्ते परे प्रत्येकमुपप्रेत् ॥ एष हि मध्यपर्याय  
परमायुर्विनिश्रितम् ॥३६॥ रविः शुक्रः शनी राहर्षरत्ने चरितं जमान् ॥ त्रिकोणदुर्बलं त्रिव्या

गृह्णीयाद्वलिनं सुधीः ॥३७॥

मेघराशि या तुला राशि की दशा के पूर्वार्द्ध में (चरपर्यादिशाके मान में) १ वर्ष योग करना॥ और इसी प्रकार गणितागत उत्तरार्द्ध में १२ वर्ष योग करना॥ इस प्रकार नाथान्त वर्ष सख्या में १२ वर्ष मिलाना॥ इस रीति से यह विभाग तुम्हारे सामने कहा। लग्नेश राशि की दशा में प्रथम अंश में १२ वर्ष योग करना और स्पष्ट लग्न की दशा में ३० वे अंश में १२ वर्ष का योग करना तब मध्य के अंश जितने वर्तमान हो उतने अंशों पर अनुपात (श्रैराशिक गणितद्वारा, अर्थात् यदि लग्नेशराशि की दशा के आदि में १२ वर्ष मिलते हैं और आगे प्रति अंश ४ मास २४ दिन कम होते जाते हैं तो इष्ट अंश में कितने वर्ष मास दिनादि मिलेंगे। और इसी प्रकार लग्न की दशा में प्रति अंश ४।२४ आरंभ से बढ़ते जायेंगे। और शून्य अंश होगा तो उपर्युक्त शास्त्र से १ वर्ष तो बढ़ेगा ही।) से स्पष्ट करके जितने वर्ष मास दिनादि प्राप्त हो उतने भावराशि की दशा में युक्त करना (जोड़ना) इस प्रकार से युक्त करने पर भावराशि का दशावर्ष—परिमाण स्पष्ट होगा (यह विशेष नियम मेघ, तुला के विषय में ही है) और शुक्र यदि अष्टमभाव में स्थित हो तो न कम होंगे, न अधिक होंगे। और गणितागत वर्ष सख्या योग करने पर यदि १२ से भाग देने पर शून्य प्राप्त हो तो भी १२ वर्ष नहीं जोड़े जाते हैं॥ (अब अन्य भेद कहते हैं) केवल एक अष्टमेश उच्चराशि में हो तो राशि दशा में दशमान का आधा और बढ़ाता है और उच्चस्थ न हो तो आई हुई आयु में से आधा कम करता है॥३४॥ तथा अन्य ग्रह भी यदि नीच राशिस्थ अष्टमेश से युक्त हो तो अपनी २ भावराशि दशाओं में आधा २ भाग घटाते हैं। उच्चराशि स्थित अष्टमेश से युक्त हो तो अपने २ भाव की दशा में आधा २ भाग बढ़ाते हैं। उपर्युक्त कारण, रहित भाव की समागत निर्णीत आयु एकरूप ही रहती है॥३६॥ सूर्य, मंगल, शनि, राहु ये चार ग्रह मृत्यु के विषय में क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक बलवान् हैं। इनमें विशेष दुर्बल ग्रह को छोड़कर बाकी ग्रहों को लेना॥३७॥

केतुश्च शनिवन्मृत्युनायनेमित्वमादिशेत् ॥ शनिना राहुणा चापि युक्ते सौम्ये रक्षोक्षिते ॥ पर्यायमेक तन्मध्यएकराशी मृति वदेत् ॥३८॥ तयोस्तु शुभयोगेन तद्राशी मृतिमादिशेत् ॥३९॥ भोगराशी दुर्बले वा प्रबले वा ग्रहे स्थिते ॥ तथापि निर्दिशेत्काले मरण तत्र सशयः ॥४०॥ केतौ वैषावमानस्ते नाये वाऽशुभवीक्षिते ॥ केतोर्दशान्ते मृत्युः स्याच्छुभदृष्टेन किं च न ॥४१॥ तन्वधोशाष्टमेशाभ्यां योगेनायुः कृते द्विज ॥ अष्टमेशान्तदुच्चस्थे वर्षपर्यायप्रमाणके ॥४२॥ अर्धाधिकशब्द दत्त्वैव योजयेत्पूर्वमायुषि ॥ एव नाथात्तरीत्या च चरपर्यायतिरिक्तम् ॥४३॥ मर्यादयापि यथापुराणमेशेन वीयते ॥ तत्सर्वमर्धाधिक्य च विधेय द्विजसत्तम ॥४४॥ एव रघुपतिर्विषं नीचराशिगतोपि च ॥ दीयमानापुरर्द्धं चैत्राशयेत् न सशयः ॥४५॥

और केतु भी शनि के समान ही अष्टमेश का फल देने में समान है। सौम्यग्रह यदि शनि या राहु से युक्त और सूर्य से दृष्ट हो तो एक ही पर्याय की आयु में मृत्यु होती है॥३८॥ शनि राहु से शुभग्रह का योग हो तो उमी राशि की दशा में मृत्यु होगी है॥३९॥ दशाप्रदराशि में दुर्बल या सबल वीसा भी ग्रह हो (चिन्नु पूर्वोक्त ग्रहों का योग हो तो) तो भी उम समय (पापयुक्त

पूर्वखण्डे एकविंशोऽध्यायः

दशाकाल मे मरण मे सशय नही है।) केतु की दशा यदि अन्त मे (योग समागत, दीर्घ, मध्य, अल्प आदि आयु मे) और राशिस्वामी अशुभ ग्रह से दृष्ट हो तो केतु की दशा मे ही दशा के अन्तभाग मे मृत्यु होती है। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो नहीं होती॥४०॥ लग्नेश और अष्टमेश से पूर्वोक्त योगानुसार आयु स्पष्ट होने पर भी अष्टमेश के उच्चस्थ होने पर पूर्व आई हुई आयु मे अर्द्ध भाग देकर ही सिद्ध समझना। यहा इस प्रकरण मे 'नाथान्त' रीति से आई हुई चरपर्या दशा का ही ग्रहण है॥४३॥ अष्टमेश अपनी मर्गादा (उच्च राशिस्थिति) से जो अर्द्धभाग आयु का देता है, वह सब समागत आयु मे ही अधिक कर देना चाहिये॥४४॥ इसी प्रकार अष्टमेश नीच राशिगत हो तो अन्यग्रहो से दी हुई सयुक्त आयु का अर्द्धभाग निश्चय कम कर देता है॥४५॥

एवं रंध्यपतिर्विप्र नीचखेटेन सयुतः ॥ तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं विनश्यति ॥४६॥ एव रंध्यपतिर्विप्र तुगखेटेन सयुतः ॥ तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं च वर्द्धति ॥४७॥ एवमुक्तं च विप्रेन्द्र परमायुर्विनिश्चितम् ॥ लग्नेश्वराष्टमेशाभ्यां योगायुर्दायमागते ॥४८॥ तेषु संस्कारमाज्ञेयमिदं पूर्वोक्तसकयाम् ॥ लग्नेशादायुरित्येवं तत्तद्योगकलात्मकम् ॥४९॥ संयुक्ताश्च ग्रहा उच्चनीचादिगुणदोषतः ॥ वृद्धिहासावृत्तरीत्या कार्या वै संप्रदायतः ॥५०॥ द्विष्यादिमृत्युयोगश्च प्रयत्नः पूर्वभाषितः ॥ नैसर्गिकोपि वीर्याय तस्य पाके मृतिर्भवेत् ॥५१॥ स्थारराहुपगूना चतुःखेटान्तरे बली ॥ तस्य योगानुसारेण जातकस्य मृति बदेत् ॥५२॥ अष्टमेशेन संयुक्ताःशनी राहुःकुजो रविः ॥ न वीक्ष्यते ग्रहैर्वीर्या तस्य मृत्युं विनिर्दिशेत् ॥५३॥ एषां मध्येषु प्रयत्ना सा तत्स्वामिकराशिने ॥ पाके मृत्युं विजानीयात्सिर्विशकं द्विजोत्तम ॥५४॥

..

अर्थात् नीचग्रह से युक्त अष्टमेश अन्यग्रह से प्राप्त आयु का भी अर्द्धभाग नष्ट कर देता है॥४७॥ इसी प्रकार अष्टमेश यदि उच्चग्रह से युक्त हो तो उस ग्रह से दी हुई आयु मे और अर्द्धभाग बढ़ाता है॥४८॥ हे विप्रेन्द्र ! निश्चित परमायु लग्नेश और अष्टमेश के गुण दोष से जो संस्कार युक्त होती है उसका निर्णय कहा। लग्नेश, अष्टमेश से जो आयु स्पष्ट होती है, उसमे हास वृद्धि के नियम कहे गये॥४९॥ उच्च नीच आदि गुणदोष से युक्त ग्रह आयु मे वृद्धि तथा हास करते हैं। यह संप्रदायरीति है॥५०॥ (लग्नेश तथा अष्टमेश का विचार समाप्त) दो तीन प्रकार के तथा एक एक दो आदि ग्रहो से होनेवाले प्रयत्न मृत्युयोग अब तक कहे गये, इन योगो मे नैसर्गिक बल से युक्त भी योग अपनी दशा मे मृत्यु के लिये पर्याप्त है॥५१॥ सूर्य, मंगल, जनि, राहु, इन चार ग्रहो मे जो ग्रह बलवान् हो उसके योगानुसार जातक की मृत्यु कहना॥५२॥ जिस जातक के जन्म लग्न मे उपर्युक्त ग्रह अष्टमेश से युक्त हो और कोई शुभग्रह नहीं देखता हो तो उसकी मृत्यु कहना॥५३॥ इन ग्रहो मे जो ग्रह बलवान् हो उसकी राशि की दशा मे जातक की मृत्यु निश्चक रूप से जानना ॥५४॥

एतेषां चतुःखेटानां मध्ये खेको बलीस्वचित् ॥ तस्य राशिदशाकाले मृतिस्थानं विनिर्दिशेत् ॥५५॥ मृत्युस्थानामिमूतप्यां सिद्धायां च महादशा ॥ तत्तस्यापि क्रमेणैव तदनन्तर्दशाप्रदा

॥५६॥ राशिषु मारकत्वेन बलवदागमेपि च ॥ शूलाद्यधिष्ठातृगृहदशांतरगते मृतिः ॥५७॥  
 शुभग्रहेण संबन्धे शनिराह्नोस्तयोरपि ॥ तत्तत्स्वामिदशाकाले मरणं च विनिर्दिशेत् ॥५८॥  
 तदाश्रयाद्वाशिपाके मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥ निर्विशंकां महाप्राज्ञ पुरा शंभुप्रणोदितम् ॥५९॥  
 सुखदुःखादि संख्यात्पाकराशौ विचिंतयेत् ॥ भोगांतरागता तत्तु तत्तद्दीर्घानुसारतः ॥६०॥  
 सबलायां सुखं शूयादुर्बला दुःखदायिका ॥ वैषम्येन फलं वाच्यं तथा मरणमेव च ॥६१॥ द्वादशे  
 दशमे वापि सन्स्थिते पुच्छनायके ॥ पापदृष्टे दशाप्राप्ते तदंतरगते मृतिः ॥६२॥ द्वादशे दशमे  
 केतुःशुभग्रहनिरोक्षितः ॥ नायं योगो महाप्राज्ञ न कष्ट न तु मृत्युकृत् ॥६३॥

इन चार ग्रहों में से एक भी बलवान् हो तो उसकी दशा में मृत्यु स्थान का निर्देश करना ॥  
 जो महादशा मृत्युस्थान नाम से निर्दिष्ट हो वह भी क्रम से ही अपने अन्तर में मारक होती  
 है ॥५६॥ राशिदशा में बलवान् मारक के सम्बन्ध होने पर भी रुद्र, शूल, सजक दशा के  
 अन्तर्दशा में ही मृत्यु होती है ॥ शनि, राहु का शुभग्रह से सम्बन्ध होने पर उस ग्रह की राशि  
 के दशाकाल में ही मृत्यु का निर्देश करो ॥ उस ग्रह के सम्बन्ध से उसकी राशि की दशा में  
 निश्चित मृत्यु होती है ॥ ऐसा प्रथम भगवान् ने कहा है ॥५९॥ राशि के बलाबल के अनुसार  
 राशि की महादशा के अन्तर में सुख, दुःख आदि कहना चाहिये ॥ यदि राशि बलवान् हो तो  
 सुख और दुर्बल हो तो दुःख कहना ॥ और अति पापयोग आदि वैषम्य हो तो मृत्यु कहना ॥  
 द्वादश या दशमभाव में केतु हो और पापग्रहदृष्ट हो तो उसके अन्तर में मृत्यु होती है ॥ तथा  
 १२।१० भाव में केतु शुभग्रह दृष्ट हो तो यह मारक नहीं होता ॥ न रोग न मृत्यु होती है ॥  
 प्राणिनीत्युक्त विप्रेन्द्र प्राणानयनमुच्यते ॥ राश्याद्येनं बल ज्ञेय तदुक्त कथ्यतेऽधुना ॥६४॥  
 अप्रहात्सग्रहो ज्यायान्सग्रहे त्वधिकग्रहः ॥ साम्ये चरस्विररुद्धाः क्रमात्सुबलशालिनः ॥६५॥  
 अधुना संप्रबध्यारामि मध्यायुयौगनिश्चितम् ॥ मारकांतरतो विप्र तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥६६॥  
 विलप्राप्तदशा वा चेदुभयोरष्टमेशयो ॥ सन्स्थितेऽन्यतरे विप्र मध्यायुयोग उच्यते ॥६७॥  
 अस्मिन्द्योगे स्थिते सैव दीर्घस्य मध्यपादके ॥ बालस्य मध्यता पादे केचिदिति विवेचनम् ॥६८॥  
 अथ दीर्घादियोगेषु त्रिषु च द्विजसत्तम ॥ कक्षाह्लासकृते योगान्दर्शयामि तवाग्रतः ॥६९॥  
 लग्नसप्तमयोर्विप्र द्विद्विदशकयोरपि ॥ षष्ठरप्राधिपस्यति जनुर्लप्रे विचिन्तयेत् ॥७०॥ पापकाले  
 पापयोगे पापमध्यत्वमागते ॥ कक्षाह्लासी विजानीयाश्चिर्दिशक द्विजोत्तम ॥७१॥

पहिले जो हमने बलवती दशाका कथन किया था, वह बलवत्ता कहते हैं। राशिवे ही आधीन बल  
 है, सो कहते हैं ॥ ग्रहरहित राशि से ग्रहसहितराशि बलवान् है और सग्रह राशि से अधिक  
 ग्रहवाली बलवती है। बल समान होने पर चर, स्थिर, द्विस्वभाव ये राशि उत्तरोत्तर  
 बलशाली हैं ॥६५॥ लग्नेश अष्टमेश दोनों लग्न या अष्टमभाव में से किसी एक स्थान में हो तो  
 मध्यायु योग कहा जाता है ॥ केचित्—कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि—दीर्घायु मध्यभाग तक  
 बालक की आयु जानना ॥ दीर्घ, मध्यादि आयु के कक्षाह्लासकारी योग तुम्हारे सामने कहते  
 हैं ॥६९॥ जन्म लग्न में लग्न, सप्तमभाव का तथा द्वितीय द्वादशभाव और षष्ठ अष्टमभाव का  
 विचार करो ॥ ये भाव पापग्रहयुक्त दृष्ट या पापमध्यगत हो तो निश्चय ही बला ह्लासकारी  
 हैं ॥७१॥



पूर्वखण्डे एकविंशोऽध्यायः

दीर्घस्य मध्यमा याता भवेदायुषि मध्यमे ॥ अल्पावल्प च विज्ञेय कक्षाह्लासस्य लक्षणम् ॥७२॥  
 कक्षाह्लासे यदाऽयौऽपि पूर्ववज्जायते ध्रुवम् ॥ अपयै लप्रकृण्डत्या पापयोगत्रिकोणे ॥७३॥  
 लग्नपचमभाष्येषु पापयोगकृते द्विज ॥ कक्षाह्लासो भवेद्विप्र निर्विशक विघ्ने सुत ॥७४॥  
 अत्राऽस्मिन्कारके लग्ने चिन्तयेज्जनिलप्रवत् ॥ कारकाशे दूनराशे पापमध्यत्वमेव हि ॥७५॥  
 एको योग स विज्ञेय कक्षाह्लास च पूर्ववत् ॥ अर्थककक्षाह्लासस्य चापवाद यदाम्यहम् ॥७६॥  
 एकस्यकक्षाह्लास च वित्तये चान्यथा भवेत् ॥ पूर्ववच्छुभयोगेन कक्षावृद्धिर्भविष्यति ॥७७॥  
 जनुर्लगे कारके च चिन्तयेत्पूर्वद्विज । लग्ने दूने धने रिष्के षष्ठे रधे स्थलत्रये ॥७८॥ शुभखेटकृते  
 योगे कक्षावृद्धिर्भवत्यपि ॥ चिन्तयेत्पूर्वद्विप्र त्रिकोणेषु स्थलत्रये ॥७९॥ जनुर्लगे कारके च  
 शुभयोग करोति च ॥ कक्षावृद्धिर्न सदेहो भविष्यति द्विजोत्तम ॥८०॥ कारके च त्रिकोणस्ये  
 नीचस्या पापखेचरा ॥ कक्षाह्लासो महाप्राज्ञ द्वितयेन भविष्यति ॥८१॥

दीर्घायु का मध्यायु होना और मध्यायु का अल्पायु होना तथा अल्पायु का अत्यल्पायु होना  
 कक्षाह्लास का लक्षण है ॥७२॥ कक्षाह्लास होने पर वर्ष प्रमाण भी पूर्व कहे अनुसार घट जाते  
 हैं। अब कुण्डली में त्रिकोणस्थान में पापयोग का विचार करते हैं। हे मीत्रेय! लग्न पचम और  
 नवमभाव में पापग्रह योग होने पर कक्षाह्लास होता है। इसी प्रकार से कारकलग्न में भी  
 जन्मलग्न के समान विचार करना होता है। कारकाश में सप्तमराशि यदि पापमध्य हो ॥७५॥  
 तो यह एक योग हुआ और पूर्ववत् कक्षाह्लास होगा। इस कक्षा ह्लास का अपवाद कहते हैं।  
 एक योग द्वादशभाव कक्षा ह्लास का हो और धनेश शुभयोगी हो तो कक्षा वृद्धि होती  
 है ॥७७॥ जन्मलग्न तथा कारक में प्रथम कथनानुसार विचार करो। ऊपर तो १२।१२ में  
 तथा नीचे ६।७।८ भावों में दोनो जगह ३-३ स्थल में ॥७८॥ शुभग्रह युक्त दृष्ट या आक्रान्ता  
 हो तो कक्षावृद्धि होगी। इसी प्रकार इन दोनो के त्रिकोण स्थल में भी देखना ॥७९॥ तथा ये  
 दोनो शुभग्रह से योग करे तो निःसन्देह कक्षावृद्धि होती है। कारक यदि नीच राशि के  
 पापग्रहों से युक्त होकर त्रिकोणमें हो तो कक्षा ह्लास होता है। दो ग्रहोंसे यह योग जाने ॥८१॥

कारकाशे त्रिकोणेषु शुभखेटे शुभस्थले ॥ कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र न सदेहो द्विजोत्तम ॥८२॥ कारके  
 पापखेटान्त्र चातगे पापसयुते ॥ कक्षाह्लासो भवेत्तत्र प्रणीते द्विजसत्तम ॥८३॥ कारके  
 शुभसयुक्ते स्वतुगे शुभखेचरा ॥ कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र निर्विशक द्विजोत्तम ॥८४॥ पापकारक-  
 गृह्लासो वृद्धिर्वा क्वचिता द्विज ॥ अर्थव गुरुणा कक्षा ह्लासवृद्धि यदाम्यहम् ॥८५॥ वित्ते ध्यये  
 लग्नषष्ठे त्रिकोणे पापयोर्विज ॥ कक्षाह्लासो भवेत्तत्र पूर्ववद्विजसत्तम ॥८६॥ गुरौ नीचे द्युतुगे  
 च सयुक्तेऽशुभखेचरै ॥ कक्षाह्लासो भवत्येव निर्विशक द्विजोत्तम ॥८७॥ वित्तगे च गुरौ ज्ञेय  
 पूर्वयोजन द्विज ॥ प्रागुक्तार्थकृतेषु च कक्षा सर्वा प्रकथ्यते ॥८८॥ तथैव शुभयोगेषु  
 चापवादवदाम्यहम् ॥ उक्तस्थाने शुभयोगे पूर्णन्दुशुक्रयोर्विज ॥८९॥

कारकाश शुभग्रह का हो और शुभस्थान में हो या त्रिकोण में हो तो निःसन्देह कक्षावृद्धि  
 होती है ॥८४॥ पापग्रह कारक हो और पापग्रह युक्त १२ भाव में हो तो कक्षा ह्लास  
 होता है। कारक शुभयुक्त हो, शुभग्रह उच्च का हो तो कक्षा वृद्धि होती है ॥

पापकारक से ह्रास और शुभयोगो से कक्षा वृद्धि नहीं। अब बृहस्पति से होनेवाली कक्षा की ह्रास वृद्धि बही जाती है॥८५॥ दो पापग्रह धन, व्यय तथा पष्ट और त्रिकोण भाव में हो तो कक्षाह्रास होता है॥८६॥ बृहस्पति नीचराशि में हो तथा पापग्रहो से युक्त हो तो कक्षाह्रास होता है॥ गुरु धनस्थान में हो तो पूर्ववत् (प्रथम कथनानुसार) समझना। प्रागुक्त कक्षाविषयक आलोचना पुन स्पष्ट करते हैं॥ और शुभयोग तथा अपवाद भी कहेगे। प्रथम कहे गये स्वानो में चन्द्रमा और शुक्र के साथ शुभग्रह का योग हो तो॥८९॥

योगप्रकरणे कक्षाह्रासाय न तु बृद्धये ॥ तत्रैकराशिबृद्धिश्च भवत्येव न सशय ॥९०॥ पूर्ववच्चोक्तपापेषु शनिना योगकारक ॥ कक्षाह्रासश्च तत्रैव यत्रैको राशिर्हसिकृत् ॥९१॥ अधुनासप्रवक्ष्यामि विशेषेण द्विजोत्तम ॥ आलब्ध स्थिरदशाया योगाग्निधनमेव च ॥९२॥ शशिनन्दपावकाश्चेदित्युक्ता च दशा स्थिरा ॥ चरे स्थिर द्वि स्वभावेभानुनाराशियु द्विज ॥९३॥ त्रिभिस्त्रिभौरानिरेक खण्डाश्चत्वार एव च ॥ कस्मिन्खण्डे च निधन तस्य योग विचिन्तयेत् ॥९४॥ यस्मिन्खण्डे मृत्युयोगस्तस्मिन्खण्डे विचिन्तितम् ॥ मरण भवतीत्यर्थं निर्विशक वदाम्यहम् ॥९५॥ योगत्रयमह वक्ष्ये दीर्घमध्याल्पभेदत ॥ चतु खण्डेषु यत्रामुरागत त्रि चितयेत् ॥९६॥ दीर्घायुर्योगवत्तत्तु यस्मिन्खण्डे समानते ॥ तस्मिन्खण्डे च निधन भवत्यपि न सशय ॥९७॥ वक्ष्यमाणप्रकारेण मध्यमाल्पायुषि द्विज ॥ निधनाश्रयखण्डेषु लक्षणाक्रातया दशा ॥९८॥

योग प्रकरण में कहे अनुसार कक्षाह्रास होती है। और ऐसे स्थल में एकराशि की वृद्धि होती है॥९०॥ पूर्व कहे अनुसार उक्त पापग्रहों में शनि से यदि योग कारक सम्बन्ध हो तो कक्षा ह्रास तथा एक राशि का ह्रास होता है॥ हे मैत्रेय! अब हम स्थिरदशा में होनेवाले विशेष योग से मृत्यु का कथन करते हैं॥९२॥ चर स्थिर द्विस्वभाव राशियों में जो स्थिर दशा नामक सूर्यदेवद्वारा कही गई है। उसमें तीन २ राशियों के चार विभाग हैं। उनमें किस विभाग में मृत्यु होगी उससे योग का विचार कहता हूँ॥९४॥ जिस खण्ड में मृत्यु योग है उसका विचार किया गया है उससे मरण समय का ज्ञान होने के लिए पूर्णरूप से कहते हैं। दीर्घ, मध्य, अल्प भेद से तीन योग कहेगे, उसका प्रयोग चार विभाग में आई हुई दशा में विचार करना चाहिए॥९६॥ दीर्घायु योग जिस खण्ड में समाप्त में प्राप्त हो उस खण्ड में मृत्यु होती है, यह निश्चित है॥९७॥ इस कहे जानेवाले प्रकार से जिस खण्ड में मध्य या अल्प आयु के लक्षण से युक्त जो खण्ड हो उस खण्ड में उसकी मृत्यु होती है॥९८॥

तद्दशायां च निधन भवत्येव द्विजोत्तम ॥ कदाचिन्न मृतिस्तत्र क्लेशदुःखमयानि च॥९९॥ भवति तत्र सस्कार्यं पुनरित्य वदाम्यहम् ॥ पापद्वयमध्यगते राशिपाके मृतिर्भवेत्॥१००॥ लग्नाद्वा कारकाद्विप्र पापाक्राते त्रिकोणेषु ॥ द्वादशाष्टमराशयेव पापाक्राते भवेदपि ॥१०१॥ तद्दशायां च निधन जातकस्य न सशय ॥ खण्डे स्थिरदशायां च चितनीयं प्रयत्नत ॥१०२॥ पापराशेस्त्रिकोणेषु द्वादशाष्टमराशियु ॥ पापाक्राते तद्दशायां निधन भवति ध्रुवम् ॥१०३॥ शुभमध्ये मृतिर्नैव पापमध्ये मृतिर्भवेत् ॥ भूयोपि निधनार्थाय राशिदोष वदाम्यहम् ॥१०४॥

द्वादशाष्टमयोः पत्न्योर्दृष्टौ क्षीणेन्दुशुक्रयोः ॥ तद्दशायां च निघ्नं सत्यमेव न सशयः ॥१०५॥  
 क्षीणेदोः केवलं दृष्टिः शुक्रदृष्टिश्च केवलम् ॥ दृष्टिमात्रेण निघ्नं स्थिरदशायां  
 विचिन्तयेत् ॥१०६॥

उस दशा मे मृत्यु होती है, पर यदि मृत्यु नहीं हो तो क्लेश, दुःख, भय आदि होंगे। अतः उस दशा के आगे कहे जानेवाला विचार करना। जो राशि दो पापग्रहों के मध्य में हो उसकी दशा मे निघ्न होता है। लघ या कारक से त्रिकोण स्थान के पापाक्रान्त हो अथवा अष्टम द्वादश राशि पापाक्रान्त हो। तो उस दशा मे जातक का निघ्न होता है। इसमे कोई सशय नहीं है। १००॥ उन भावों मे यदि शुभग्रहयोग हो तो मृत्यु नहीं होती। पापग्रह का योग होने पर ही मृत्यु होती है। मृत्युज्ञान के लिए और भी राशि मे होनेवाले दोष कहते हैं। अष्टमद्वादशभाव मे जो राशि है उसके स्वामी को क्षीण चन्द्रमा और शुक्र देखते हों तो उस राशि की दशा मे निघ्न होता है, इसमे कोई सशय नहीं है। १०५॥ केवल एक क्षीण चन्द्रमा की या केवल शुक्र की ही दृष्टि हो तो दृष्टिमात्र से ही मृत्यु होती है। स्थिरदशा मे यह विचार करना चाहिए। १०६॥

मृत्युस्थानेन वा दृष्टिः पापघ्नार्थं च पश्यति ॥ दशां तस्य समालोक्य ज्योमपष्ठाधि-  
 पाद्द्विज ॥१०७॥ निरीक्षिते नवांशेषु द्वयोः स्थाने द्विजोत्तम ॥ तत्रैव निघ्नं ज्ञेयं भाषितं च  
 तवापके ॥१०८॥ पूर्वोक्तनिघ्नमस्थाने महापाक नरेर्ध्वनि ॥ ज्योमपष्ठाधिपो विप्र तयोरशे  
 निरीक्षिते ॥१०९॥ राशेरतर्दशाकाले निघ्नं भवति ध्रुवम् ॥ अतर्दशायां रूपे द्वे  
 निघ्नमस्थानमेव च ॥११०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आयुर्दायकथनं नाम एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

अष्टमभावेश द्वारा पापयोगयुक्त भाव पर दृष्टि हो तो उस राशि की दशा मे, इसी प्रकार छटा तथा दशमभाव के स्वामी द्वारा भी दृष्टि होने से, केवल राशि ही नहीं, जिस नवाश पर दृष्टि हो उस राशि की दशा तथा दृष्टियुक्त नवाश वर्ष मे मृत्यु होती है। १११॥ इसी प्रकार पूर्वोक्त अष्टमस्थान मे षष्ठेश तथा दशमेश देखते हो या युक्त हो और अपने नवाश पर दृष्टि हो तो उस राशि की महादशा मे और नवाशराशि के अन्तर वर्ष मे निश्चय मृत्यु होती है। अन्तरदशा के दो भाव है, एक षष्ठ तथा दूसरा अष्टम। इनका विचार करके निघ्न का निर्देश करना चाहिए। १-११३॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० ख० भा० प्र० आयुर्दायकथनं नाम

एकविंशोऽध्याय ॥२१॥

## ग्रहलक्षणम्

पराशर उवाच—अथात सप्रबध्यामि निधनार्थे विशेषत ॥ प्रकारान्तर्दशायास्तन्त्र  
 रुद्राब्जिसत्तम ॥१॥ तद्रहूनाष्टमे शीघ्रे तयोर्मध्ये च यो बली ॥ प्राणी रुद्र स विज्ञेय  
 सूर्यादक्षेत्रोऽपि च ॥२॥ तयोर्मध्ये बली चित्य शुभदृष्टेन सपुते ॥ दुर्बल सोपि गौणाख्यो  
 रुद्रग्रह इतीर्यते ॥३॥ तत्रैव प्राणिद्वयस्य विशेष गणयेत्कलम् ॥ प्रबध्यामि तवापे च भृगुष्वत्त्व  
 महामते ॥४॥ शुभैर्युक्ते शुभैर्दृष्टे शुभसवधकारक ॥ प्राणी रुद्र स विज्ञेयस्तस्याधीनापुरेव  
 च ॥५॥ रुद्रशूलान्तमामु स्यात्त्रिकोणाते तथा पुन ॥ तत्राते पञ्चमान्ते च नवमाते त्रयस्यले  
 ॥६॥ चितनीय महाप्राज्ञ तत्तद्वाशिवशातरे ॥ अल्पमध्य च दीर्घायुयोगभेदा न सराय ॥७॥  
 यत्राल्यायु समायोगे त्रिकोणमध्यमान्तरे ॥ आयुस्तत्रैव विज्ञेय तदपे च क्रमेण च ॥८॥ योगे  
 मध्यायुष प्राप्तो त्रिकोणे मध्यमातने ॥ आयुर्दायिसमाप्तिश्च निर्विशक द्विजोत्तम ॥९॥  
 दीर्घायुयोगसलब्धे त्रिकोणे नवमातगे ॥ दशातरे महाप्राज्ञ आयुर्दायिसमाप्तये ॥१०॥ अथैव  
 तद्रहूनादि आरम्य च दशाक्रम ॥ प्रवृत्तिर्जन्मतो ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥११॥  
 यत्ररुद्रग्रहस्यापि शुभदत्व न भाव्यते ॥ तत्र जीवस्य मष्टत्वाग्नेद फलमिति  
 स्थिति ॥१२॥

## रुद्रमहेश्वरबल-ग्रहलक्षण

अब हम मृत्युकाल ज्ञान के लिए विशेष प्रकार से अन्तर्दशा का ज्ञान कहते हैं। लग्नेश तथा सप्तमादि ७।८।९ भावेश इन दो भावेशो में जो ग्रह बलवान् हो वह बली रुद्र (या प्रधान रुद्रसजक ग्रह) ग्रह है। इस रुद्र सजक ग्रह में सूर्यादि सभी ग्रहों का ग्रहण है। (जो ग्रह न्यूनबली है, वह गौण रुद्र है।) इन दोनों रुद्रग्रहों में बली रुद्र ग्रह का विचार करना चाहिए। वह रुद्रग्रह यदि शुभदृष्टग्रह युक्त हो या शुभग्रहयुक्त हो तो न्यूनबली होने पर भी मुख्य बली रुद्र के समान ही है। ३॥ इस बली रुद्र का फलसम्बन्धी विशेष विचार करना चाहिए सो वह तुमको कहते हैं। ४॥ वही प्राणी (बलवान्) रुद्र ग्रह शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट अथवा अन्य सम्बन्ध हो तो वह पूर्ण बलवान् रुद्र है और उसीके आधीन आयु है। ५॥ जातक की आयु रुद्रशूल तक या उसके त्रिकोण (राशि की दशा) तक है (शूल दशा जो आगे कही जायगी उसी की रुद्रशूल दशा जानना) लग्न तक या पश्चम अथवा नवम भाव की दशा तक आयु है ऐसा समझना। ६॥ (अब और स्पष्ट करते हैं) अर्थात् हे महाप्राज्ञ मैत्रेय! अल्यायु मध्यायु और दीर्घायु को पूर्व कथित लग्न आदि राशि की दशा से विचार करो। ७॥ जहा अल्यायु योग है वहा त्रिकोण के पश्चम भाव तक (अर्थात् लग्न पश्चम के मध्य के भाव तक की राशि से विचारे) उस अल्यायु वाले जातक की आयु वही तक है। ८॥ उससे आगे यदि मध्यायु प्राप्त हो तो पश्चमभाव से नवमभाव तक विचार करो। क्योंकि—उसकी आयु यही तक है इसमें कोई शक नहीं है। ९॥ दीर्घायु योग प्राप्त होने पर त्रिकोण नवम भाव से अत तक विचार करना। (अर्थात् जैसे आयु के तीन भाग कल्पना विधे वैसे ही कुण्डली में भी ३ भाग कल्पित है। यथा लग्न से चतुर्थ तक अल्यायु विचार पश्चम से अष्टम तक मध्यायु विचार और नवम से द्वादश तक दीर्घायु का विचार करना चाहिए) अब लग्न से ६ भाव तथा सप्तम आदि ६ भाव इस प्रकार १२ भावों की दशाक्रम स्पष्ट करके जन्म लग्न में विचार आरम्भ करो। ११॥ जिस

जन्मकृदलो मे रुद्रसजक ग्रह की शुभफलरूपता नहीं मालूम हो वहा तो जातक के जीवहोन होने से यह विचार ही निष्फल है॥१२॥

अथैवरुद्रशूलातमायुर्दमितिकारणे ॥ योगेस्मिञ्च समुत्कर्षात्किंचिदर्शयति द्विज ॥१३॥ प्राणीरुद्रशुभे दृष्टे पूर्वोक्तफलदायक ॥ शुभयोगे न सदेहो रुद्रे शूलातमायुषि ॥१४॥ स्थित एव फल जन्म कथित कारणातरे ॥ निरुक्ते शुभसयोगे किं कीर्तयति भो द्विज ॥१५॥ पूर्वमेव फल सादो समुत्कृष्टे तदेव चेत् ॥ सुतरा तदेव वक्तव्य निर्विशक द्विजोत्तम ॥१६॥ अनेन पूर्वयोगेन फल किंचिद्वि न्यूनता ॥ अद्योतितादुक्तकालात्पूर्वपश्चान्मृतिर्यदि ॥१७॥ निरुक्तयोगश्च तदा ह्यपवाद वदाम्यहम् ॥ रवि बिहाय नितरा पापयोगो भवेद्द्विज ॥१८॥ योगोऽयं निष्फलो वाच्य पुरा ब्रह्मप्रणोदितः ॥ इदं फल न भवति योगेस्मिन्निजसत्तम ॥१९॥ नाशयोगस्य वक्तव्य फल वापि भयकरम् ॥ अपुना सप्रवक्ष्यामि गौणरुद्रस्य वै द्विज ॥२०॥

रुद्रशूल दशा पर्यन्त जीवन ही एगे जीवनस्थापन के उत्कृष्ट योग दिखाते (कहते ) है॥१३॥ प्राणी रुद्रग्रह-शुभग्रह से दृष्ट होने मात्र से ही जातक का जीवन रुद्रशूलदशा पर्यन्त रहेगा। और प्राणी रुद्र ग्रह यदि शुभग्रह युक्त हो तो जातक के रुद्रशूल दशा के भोग पर्यन्त जीते रहने में कोई सन्देह ही नहीं है॥१४॥ जातक का जीवन कारणान्तर से भी स्थित रह सकता है फिर शुभ सयोग रहने पर तो कहना ही क्या है॥१५॥ हे मैत्रेय! प्रथम निश्चित, दीर्घ, मध्य आयु आदि फल यदि उत्कृष्टयोग युक्त हो तो निष्कलरूप से वही कहना॥१६॥ पहिले कहे हुए आयु के सहायक योगो में कुछ न्यूनता है। क्योंकि- पूर्वयोगानुसार उक्त अर्थात् जातक हुए काल जिसका कि छोटन (जापन = ज्ञान) नहीं हुआ उगने पहिले या पीछे यदि मृत्यु संभव हो तो पूर्वोक्त योग सापवाद (निन्दित) होते है। (अथवा पूर्वोक्त योग की निष्फलता में 'अपवाद' बाधक भोग कहते है यह तात्पर्य है) सूर्य के बिना अन्य पापग्रहों से योग ही तो यह योग निष्फल होता है और इसका फल नहीं होता॥१९॥ और इसके विपरीत दुर्योग का फल भयकर होता है। अब हम मुख्य रुद्रग्रह का फल बताकर गौण रुद्र का फल कहते है॥२०॥

गुणप्रकर्षेण फल विशेषेण तवाग्रतः ॥ गौणरुद्रे महाप्राज्ञ मदारेन्दुनिरीक्षिते ॥२१॥ अभावे शुभयोगस्य पापयोगात्तरे तथा ॥ फल विप्रैश्च शूलात्तादायुर्दायं भवत्यपि ॥२२॥ शुभदृष्टे वा शूलात्तात्परश्चायुर्भवेदपि ॥ योगद्वय परस्त्वैव योजनीयं न सशयः ॥२३॥ एतद्योगद्वय किंचिन्न्यूनतायामपि द्विज ॥ नेदं फल प्रवक्तव्यं मैत्रेयाभाषितं पुरा ॥२४॥ शुभदृष्टिमवे चैव योगे च परपूर्ववत् ॥ शुभदृष्टावसत्या च पापयोगाद्यभायतः ॥२५॥ कृत एको हि योगश्च पूर्वयोजनमेव च ॥ अशुभयोगे शुभो दृष्टी योगोऽग्रमपरो द्विज ॥२६॥ पापयोगैरभावे च शुभदृष्टी च सपुते ॥ कैमुतिकाल्यन्यायेन सिद्धो योगस्तृतीयकः ॥२७॥ पुरा प्रोधाच्च पञ्चभुस्तथापि कथयाम्यहम् ॥ द्वितीययोजनदाया तु शुभदृष्टिसमन्विते ॥२८॥ पापयोगस्य चाभावे योगः प्रथम उच्यते ॥ पापयोगे महाप्राज्ञ शुभदृष्टे प्रभावेके ॥२९॥

‘गौण रुद्रग्रह’ गौण होने पर भी योगरूप गुण के बल से विशेष कथन योग्य है। हे मैत्रेय! गौणरुद्रग्रह शनि, मंगल, चन्द्रमा से दृष्ट हो और शुभ ग्रह के योग का अभाव हो एव पापग्रहों के मध्य में हो तो भी वह जातक की आयु शूलदशा तक करता है (अतः जातक के लिए तो वही श्रेष्ठ है) और यदि इसके विपरीत शुभयोग हो तो ‘शूल’-दशा के बाद भी उसकी आयु हो सकती है। इस उपर्युक्त आयु के साधक, बाधक दोनों प्रकार के योग से आयु का विचार करो॥२३॥ (यहां गौणरुद्रग्रह के शुभाशुभ दृष्टि तथा योग के ३ भेद कहते हैं)

१- शुभग्रहकी दृष्टि हो और ग्रहयोग पूर्वोक्तके समान हो। तथा शुभ दृष्टि नहीं हो और पापग्रह योग भी नहीं हो। यह एक योगका कथन हुआ, इसमें पूर्व के कहे योग भी युक्त है।

२- अशुभग्रह का योग और शुभ दृष्टि हो यह दूसरा योग है।

३- पापयोग न हो और शुभदृष्टि हो। यह तीसरा योग है। (इसके फल की श्रेष्ठता का तो कहना ही क्या है) इस योग का फल कैमुतिक न्याय से ही सिद्ध है। अर्थात् अतिश्रेष्ठ है॥२७॥ पहिले जो शम्भु ने कहा सो सुनाते हैं। इस दूसरी योजना में पापग्रह योगाभाव और शुभदृष्टि युक्त होना यह प्रथम योग है। पापयोग और शुभदृष्टि यह द्वितीय योग है॥२९॥

द्वितीययोगपक्षेऽहं पूर्वस्मिन् द्विजसत्तम ॥ पापयोगस्य चाभावे चाशुभदृष्टिविवर्जित ॥३०॥  
कैमुतिकाल्पन्यायेन तृतीयो योग उच्यते ॥ अथैव प्राणिरुद्रस्य ह्युक्ता पञ्जातरे कथा ॥३१॥  
तत्रैव प्रथमे योगे शुभदृष्टिविवर्जिते ॥ शुभयोगादिवोगश्च द्वितीयोक्तेन योगकृत् ॥३२॥  
तृतीयेन द्वयस्यापि योगभग करोत्यपि ॥ अधुनोक्तत्रयाभावे मदादिदृष्टिमात्रत ॥३३॥ एव  
स्थिते सुयोगश्च नि शक प्रतिपद्यते ॥ अशुभै खेचरैर्दृष्टे पापयोग इति स्थिति ॥३४॥  
शुभयोगविहीने च मन्दारेन्दुनिरीक्षिते ॥ तदायु परतो विप्र समानादिति योजयेत् ॥३५॥  
प्रथमद्वितीये सत पापयोगैरभावत ॥ योगो भगमपेक्षा च तृतीयोक्तमिदं वदेत् ॥३६॥  
पापदृष्टिमात्रमेव योगनिर्वाहकारणे ॥ अपवादविहीनेन इत्येवोक्तं तृतीयवे ॥३७॥ रुद्राम्या  
प्राणिगौणाम्या ताम्यामाश्रितमेव च ॥ गुणविशेष आयुरतं बक्ष्यामीह महामते ॥३८॥

इस द्वितीय योग में तो प्रथम योजनावाले योग से समानता है और पापयोग न हो और अशुभदृष्टि भी नहीं हो तो अतिश्रेष्ठ। अब प्राणी (बली) रुद्र के योग के विषय में भिन्न विचार है। पूर्व ही कह चुके हैं कि—प्रथम योग में शुभदृष्टिरहित हो। और द्वितीययोग में शुभयोग दृष्टि हो॥३२॥ और तीसरे योग में शुभ दृष्टि और शुभयोग दोनों का अभाव कहा है, तथा योगभग का प्रकार बड़ा है। अब यह कहते हैं कि—उक्त तीनों प्रकार के योगों के अभाव में शनि, राहु की दृष्टिमात्र से ही योग होता है॥३३॥ इस केवल एक की दृष्टिमात्र से भी सुयोग होता है। और अनेक पापग्रहों की दृष्टि से तो पापयोग होगा, ऐसा समझना॥३४॥ प्राणी रुद्रग्रह शुभदृष्टिहीन हो, चन्द्र, मंगल, शनि से दृष्ट हो तो अपने मान से भी परे आयु जाने। यह पहिले कहा हुआ जानना चाहिए॥३५॥ प्रथम द्वितीय योग में शुभयोग हो और पापयोग न हो। और तीसरे योग में योगभग की अपेक्षा आदि कहा है। तृतीययोग में एक ग्रह पापग्रह का होने से योग का निर्वाह होता है और अपवाद नहीं होना चाहिए॥३७॥ बली तथा निर्बल, अतएव मुख्य और गौण रुद्रग्रह के योगविशेष के आश्रित ही आयु है, यह अब कहते हैं॥३८॥

गौणरुद्रेशुभैर्योगे शुभदृष्टिसम्बन्धिते ॥ रुद्रशूलातमापुञ्च योजनीय द्विजोत्तम ॥३९॥  
 पूर्वोक्तप्राणिरुद्रेण द्वियोगप्राणकेन च ॥ द्वाभ्यां शूलातमापुञ्च तत्रापे ऋयित मया ॥४०॥  
 अपुना सप्रवक्ष्यामि द्वयोर्निर्वाहकारणे ॥ तयो रूप भिन्नभिन्न शृणुष्व मुनिपुत्र ॥४१॥  
 प्राणिरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं द्विजसत्तम ॥ शुभयोगेति का वार्ता शूलातापुर्विनिश्चितम् ॥४२॥  
 गौणरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं क्लेशदायक ॥ रोगशोकभय कर्ता मृत्यु नैव करोति च ॥४३॥  
 शुभयोगे महाप्राज्ञ योगोऽयं बलवत्तर ॥ तस्य शूलातमापुञ्च निर्दिशक न सद्य ॥४४॥ उभौ  
 रुद्री शुभप्रहैर्योगदृष्टौ द्वयोरपि ॥ शुभप्रहेय क्लेशञ्च रुद्रशूलातमापुञ्चि ॥४५॥ प्राणी  
 चाप्राणिरुद्राभ्यां कृतयोगद्वयेन च ॥ तयोर्वा सप्रवक्ष्यामि तत्रापे द्विजसत्तम ॥४६॥  
 मार्तण्डरहिते चान्य पापयोगकृते द्विज ॥ योगद्वय न भवति पापयुक्त द्वयोरपि ॥४७॥

यदि गौण रुद्रग्रह शुभयुक्त, शुभदृष्ट हो तो रुद्रशूल दशा तक जातक की आयु है। यह समझना चाहिए॥३९॥ पूर्वोक्त प्राणीरुद्रग्रह के सम्बन्ध में प्रथम निश्चित कर दिया है कि-प्रथम कहे हुए दो योगों में भी आयु शूलदशापर्यन्त जानना॥४०॥ अब प्राणिरुद्र में आयु के निर्वाह के कारण आदि के दो योगों में कहते हैं सो अलग २ मुनियो॥४१॥ प्राणिरुद्रग्रह शुभदृष्टि युक्त हो, यह एक योग है। इस शुभ योग में शुभपन यही है कि-जातक की आयु शूल दशा तक निर्वाह है॥४२॥ गौण रुद्र यदि केवल शुभदृष्ट हो तो क्लेशदायक होता है रोग शोक, भयमात्र करता है, मृत्यु नहीं होती॥४३॥ हे महाभाग! शुभग्रह का योग हो तो यह योग अतिशली होता है। उस जातक की आयु के शूल दशा तक होने में कोई सन्देह नहीं रहता॥४४॥ दोनों रुद्रग्रह यदि शुभग्रहों से युक्त हो तो आयु तो शूल पर्यन्त है, परन्तु कष्ट सहित हो॥४५॥ हे द्विजयेष्ठ! प्राणी रुद्र और गौण रुद्र इन दोनों से प्रभावकारी योग होते हैं, सो कहते हैं॥४६॥ दोनों ही रुद्रग्रहों से सूर्ययोगरहित अन्य पापग्रहों से योग हो तो व योग विशेष प्रभावकारी नहीं होते॥४७॥

शुभयोग शुभदृष्टेरभयेऽपि विना रश्मिम् ॥ पापयोगकृते विप्रभययोगो विनश्यति ॥४८॥  
 शुभयोग शुभैर्दृष्टिरभावे न भवत्यपि ॥ यत्रापु कथयान्कुर्वन्तव्य द्विजसत्तम ॥४९॥ उभयो  
 पापयोगे च क्लेशदोषार्तिर्करो भवेत् ॥ क्लेश शोको मृणादूर्तिर्दोषपर्यन्त द्विज ॥५०॥  
 शुभदृष्टेरभावे च शुभयोगविवर्जिते ॥ पापयोगप्रभावेण मरण सारण दृशा ॥५१॥  
 शुभयोगदृष्टपभावे पापयोगे द्विजोत्तम ॥ पुष्टदशाचलेनैव सप्रासादो न सद्य ॥५२॥  
 अस्मिन्प्रकरणे चैवमुपपत्तौ द्विजोत्तम ॥ शुभवर्गो पापवर्गो तत्रापे कथयाम्यहम् ॥५३॥  
 अकारमद्वफणितः क्रमात्कूरा अयाश्वयम् ॥ चन्द्रोपि कूर एवात्र क्वचिदगारकाश्रयत् ॥५४॥ गुरु  
 शित्ति कविज्ञाश्च यथापूर्वं शुभग्रहा ॥ कूरखेटा महाप्राज्ञ चाकार्था उत्तरोत्तरम् ॥५५॥ कूरा  
 कूरखेटाग्रश्च कूरारिण ह्यपवादकम् ॥ शुभक्षेत्रगतं कूरं कूरता ह्युपसम्पत्ति ॥५६॥

दोनों ही रुद्रों में शुभदृष्टि और शुभयोग हो पर सूर्य में न हो तो पाप (नेष्ट) योग का भय नहीं रहता॥४८॥ शुभग्रह का योग तो हो, पर शुभदृष्टि न हो तो जो दीर्घादि आयु प्राप्त हुई है, वही आयु कहना चाहिए॥४९॥ दोनों रुद्रग्रहों में यदि पापयोग हो तो शोक, क्लेश,

राजभय तथा पर्यटन (मुसाफरी) होता है ॥५०॥ शुभदृष्टि और शुभयोग न हो तो पापयोग और दृष्टि के प्रभाव से मरण निश्चित है ॥५१॥ शुभयोग और दृष्टि न हो तथा पापयोग दृष्टि हो तो बलवान् शुभदशा रहगी तब तक ही सुख जानना ॥५२॥ द्विजोत्तम। इस रत्नप्रकरण में शुभाशुभफल की उत्पत्ति कर्ता जो योग है, उनमें सहायक शुभवर्ग और पापवर्ग (वर्ग-समूह) कहते हैं ॥५३॥ प्रथम पापग्रहों वा वर्ग (समूह) कहते हैं। सूर्य, मंगल, शनि, राहु, अपने आर्थयानुसार बुरे हैं और चन्द्रमा भी मंगल के योग से बुरे हैं ॥५४॥ (शुभवर्ग) गुरु, शुक्र, बुध तथा केतु पूर्वोक्तानुसार शुभ हैं। और पापग्रह जो अभी कहे हैं वे सूर्य से उत्तरोत्तर बलहीन हैं ॥५५॥ क्रूरग्रह तथा क्रूरराशि में जो ग्रह हो वे भी क्रूर हैं। किन्तु यही क्रूरग्रह जब शुभराशि तथा भाव में हो तो इनकी क्रूरता दूर हो जाती है। यह अपवाद है ॥५६॥

गुर्वादय शुभग्रहा यथापूर्वं बुध कवि ॥ कवित् केतुर्विज्ञेय केतुतो वाक्पतिर्द्विज ॥५७॥  
 क्रमेणैव विजानीपाच्छुभक्षेडोत्तरोत्तरम् ॥ यथापूर्वं क्रूरग्रहा क्रूराश्रयसमागते ॥५८॥ एव क्रौर्य  
 समापन्न क्रौर्यं तु शोभनाश्रय ॥ एव गुर्वादिसौम्याश्च शुभा श्रेयातिशोभना ॥५९॥ क्रूराश्रये  
 सौम्यक्षेडा सौम्यता नश्यते स्वचित् ॥ एवमेवापराभुक्ति कथयामि द्विजोत्तम ॥६०॥ प्रत्येक  
 शुभराशिस्य उच्चस्थो वा बुध शुभ ॥ गुरुशुक्रौ च सौम्यस्थौ ततोऽन्ये च शुभा स्मृता  
 ॥६१॥ पूर्वस्मिन्पापयोगेन योगभगद्वये द्विज ॥ निरूपित तथापि च निर्विशक न सशय ॥६२॥  
 योगद्वयोपि भगार्थे पापदृष्टौ विशेषकम् ॥ न दर्शयति कदापि स्यात्तवापि कथयामि वै ॥६३॥  
 शुभग्रहाणा चाभावे मदारेन्दुनिरोकिते ॥ पापयोगे शुभेर्दृष्टे परतश्चापुपि द्विज ॥६४॥  
 प्राणिरुद्वेष्यगौणेन शुभयोगविवर्जिते ॥ पापयोगेऽथवा दृष्टे तथा शुभनिरोकिते ॥६५॥

बुध शुक्र, केतु, गुरु ये चार ग्रह भी उत्तरोत्तर बलवान् शुभ हैं ॥५७॥ पूर्वोक्त शुभग्रह उत्तरोत्तर बलवान् हैं। और क्रूर ग्रह सब यथापूर्वं बलवान् हैं। शुभग्रह भी पापराशि में हो तो बुरे हैं ॥५८॥ इस प्रकार क्रूरता जाने यदि सौम्यराशि और शुभभाव में बुरेग्रह हो तो शुभ होते हैं। और गुरु आदि सौम्यग्रह शुभ हैं तथा शुभाश्रयी हो तो अति शुभ हैं ॥५९॥ सौम्य ग्रह यदि क्रूराश्रयी हो तो कहीं २ दनकी सौम्यता नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार और नियम कहते हैं ॥६०॥ अब प्रत्येक ग्रह के लिए कहते हैं। बुध शुभराशि में या उच्च वा हो तो शुभ है। तथा गुरु और शुक्र भी सौम्यराशि में शुभ हैं। इसी प्रकार अन्य ग्रह भी उच्च या शुभराशि में शुभ होते हैं ॥६१॥ और पहिले जो हमने पापग्रह के योग में योगभग के दो योग कहे हैं, उनमें कोई शका नहीं है ॥६२॥ योगभगवरी दो योग में पापदृष्टि रहते भी जो योगभग का फल नहीं होता, उसका कारण कहते हैं ॥६३॥ शुभग्रहों के योग वा अभाव हो चन्द्र, मंगल शनि की दृष्टि हो तथा शुभग्रहों की भी दृष्टि हो तो प्राप्त आयु अल्प मध्य दीर्घ, योग कुछ और आगे तक जानना ॥६४॥ केवल प्राणीरुद्रग्रह शुभयोगरहित हो और पापग्रह का योग अथवा दृष्टि हो एव शुभदृष्टि भी हो ॥६५॥

ध्यापारतानुधिज्ञेया पूर्ववद्विजसत्तम ॥ अत्रोपपदपापाच्च राहोरप्युपतक्षणम् ॥६६॥ एव  
 सूर्यातिरिक्तोपि पापयोगस्तथैव च ॥ तस्यै वेहानुबादाच्च राहोश्चिदुपबृहणात् ॥६७॥



परिग्रहदर्शनाच्च परतो रुद्रपाश्र्वात् ॥ शुभस्थाने आपुरत. शूलत्रयमलघनात् ॥६८॥ न तु  
 शूलदशायां च आपुरंत द्विजोत्तम ॥ एव शूले चेतदतशूलरीत्येति वार्धके ॥६९॥  
 पूर्वोक्तपापयोगेन शुभयोगेन दृष्टितः ॥ कृतयोगद्वयस्यापि भङ्गाय च वदाम्यहम् ॥७०॥  
 शुभयोगेन वे विप्र पापयोगोऽतिदुर्बलः ॥ शुभदृष्टिकृतो योगः पापदृष्टेः कथं क्षम ॥७१॥ न  
 भंजनसमर्थश्च कोटियत्ने कृते द्विज ॥ शुभकृद्योगभगार्थं पापयोगमपैलितम् ॥७२॥ शुभयोगे  
 दृष्टिकृते पापयोगेपि भङ्गकः ॥ शुभदृष्टिकृते योग पापयोगो विनश्यति ॥७३॥  
 यदायुर्वायमध्यस्य वेदितव्य द्विजोत्तम ॥ पापमात्रस्य शूलत्वे प्रथमशं मृति वदेत् ॥७४॥ द्वौ  
 ह्यौ पूर्वं बभूव्ह यदि चैकत्र सस्थिते ॥ मित्रमाध्यमशूलसं शुभमात्रेऽन्तिमे मृतिः ॥७५॥

तो इसका विचार पूर्व कहे अनुसार जानना। और पहिले जो उपदेश से फल कहा गया है, उस विचार में और ग्रहों के समान ही राहु को भी समझना चाहिए। ६६॥ राहु यद्यपि सूर्यतिरिक्त ग्रह है, तथापि अन्य ग्रहों के साथ होकर सूर्य के समान ही योग कारक है और स्व-रूप में शिरोभाग होने से चिन्मिश्रित (चित् शक्तियुक्त) है। और ग्रहण में सूर्य का भी आच्छादक है। ६७॥ अतः रुद्रग्रह की राशि के स्वामी से यदि सम्बन्ध हो तो अति बलवान होता है। अतः राहु शुभस्थान में हो तो अतरदशा तक आयु जाने क्योंकि—राहुयोग होने पर तोनो शूलदशाओं का लपन नहीं हो सकता। ६८॥ इसी प्रकार राहुयोग होने पर शूलदशा के अन्त तक आयु नहीं जाती है। शूलदशा में ही तत्-तत् शूलदशा के अन्तर में ही निघन जानना। ६९॥ पूर्वोक्त जो शुभ तथा पाप दोनों की दृष्टि अथवा योग में जो 'भययोग' होता है, इसके लिए अब हम कहते हैं। ७०॥ हे मैत्रेय ! शुभयोग से पापयोग दुर्बल हो जाता है। क्योंकि—शुभदृष्टि की सामर्थ्य भंग करने में पापदृष्टि की क्षमता नहीं है। ७१॥ शुभदृष्टि के योग को पापदृष्टि यदि कोटि (करोड़ों) बल करे तो भी शुभ दृष्टि का नाश नहीं कर सकती। ७२॥ शुभयोग और दृष्टि दोनों हो तो शुभदृष्टि से ही पापयोग का नाश हो जाता है। ७३॥ जब मध्यायु योग हो और पापग्रह मात्र का योग हो तो शूलदशा के प्रथम चरण में ही मृत्यु होती है। ७४॥ और प्रथम जो दो रुद्र गौण मुख्य भेद से कहे हैं, उनके विषय में अब यह कहना है कि—वे दोनों यदि एक स्थान में हों, या मिश्रराशि में हों तो मध्य या अन्तिम शूलराशि की दशा में मृत्यु होती है। ७५॥

द्वयोः पापी च प्रथमे शूले मृत्युर्भवत्यपि ॥ पद्येकशब्दः पापी च द्वितीय. शुभलेखः ॥७६॥ मध्ये  
 शूले मृतिर्विप्र निर्विशंकं भविष्यति ॥ शुभग्रहद्वय विप्र एकत्र यदि तिष्ठति ॥७७॥ अतः शूले  
 मृतिर्नेत्या शूलिना भाषित पुरा ॥ एव भेदानुभेदेन विद्यात् सर्वत्र बुद्धिमान् ॥७८॥ शूललेखे च  
 ह्यौ द्वौ यदि पापोऽथवा शुभः ॥ मिश्रग्रहोय वा विप्र चित्तयेदन्वतरः ॥७९॥ शीर्षापुराणयुगिनि  
 भङ्गाभावे द्विजोत्तम ॥ मृत्युशूलदशाया च पापयोग विना रविः ॥८०॥ क्रूराश्र पेयु क्षेत्रेणु  
 शुभनामाश्रयेणु च ॥ निर्वाणमितरेण तु शूलसं निर्विशेदयम् ॥८१॥ शुमानामत्र एषे तु तथा  
 क्रूराश्रयेणु च ॥ तस्मिञ्जातकशूलसं मृतिं ह्ययत्र सायः ॥८२॥ पद्यप्राप्तौ रुद्रयोगे  
 पत्किञ्चिन्मृतता द्विज ॥ तर्हि रुद्राश्रय तन्न त्रिघा न परतोऽपि च ॥८३॥ रुद्राश्रयेपि चायुर्दा  
 समाप्तिर्भवति ह्ययम् ॥ प्रायेण चिन्तयेद्विप्र पूर्वापरप्रपत्नतः ॥८४॥ यदाहाप्राणिरुद्रस्य

रोमे पूर्णं भवत्यपि ॥ रद्रशूले परत्येन आयुर्दायिसमाप्तये ॥८५॥ रद्राश्रयेण प्रायेण  
शूलमेकद्वयप्रयम् ॥ उल्लघनं कृतं विप्रं यदि योगविशेषत ॥८६॥

और दोनो रद्रग्रह पापी हो तो प्रथम शूलदशा में मृत्यु होती है और दो रुद्रो में एक पापी  
और एक शुभ हो तो निश्रयरूप से मध्य शूलदशा में मृत्यु होती है ॥७६॥ और दोनो रद्रग्रह  
शुभ हो और एक ही स्थान में हो तो अन्तिम शूलदशा में मृत्यु जानना ॥७७॥ ऐसे इसके भेद  
और अनुभेद जानना ॥७८॥ शूलदशा के मारक विचार में दोनो रद्रग्रहों का योग हो तो  
देखना चाहिये कि वे दोनो पाप हैं या शुभ हैं, अथवा एक पाप एक शुभ है, तो इन दोनो में  
बलवान रुद्र को (प्राणी रुद्र) लेना चाहिये ॥७९॥ आयुयोग में दीर्घायु प्राप्त हो और  
योगभागकारी योग नहीं हो, और पापयोग सूर्य के बिना हो तो शूलदशा में मृत्यु होती  
है ॥८०॥ पापग्रह शुभ राशियोंमें हो और शुभग्रह पाप राशियोंमें हो तो भी शूलराशिदशा में  
मृत्यु होती है ॥८१॥ पापग्रह पापराशियों में हो तो भी जातक की मृत्यु शूलदशा में होती  
है ॥८२॥ यदि गौणरद्रग्रह के साथ पूर्वोक्त योग हो तो भी रद्राश्रयफल पूर्वोक्त ही है, उस फल  
के तीन प्रकार नहीं होकर एक प्रकार ही है ॥८३॥ अतः हे भूत्रेय ! रद्राश्रयी विचार में  
पूर्वापर का ध्यान से विचार करके आयु समाप्ति का निर्णय करे ॥८४॥ और यदि बाल राशि  
में प्राणी रुद्र का पूर्ण योग हो तो शेष की शूल दशा में आयु समाप्ति (मृत्यु) होती है ॥८५॥  
हे विप्र ! यदि योग के विशेष बलाबल के विचार से शूल दशा पहिली, दूसरी और तीसरी में  
निर्गण (मृत्यु) कहे और विशेष बलवान् योग में तीनों का भो उल्लघन हो सकता  
है ॥८६॥

तर्हि रद्राश्रयेत्येव प्रायेणायुर्मवेद् ध्रुवम् ॥ तत्रद्वयेण कथं जीवनं ज्ञातकस्य च ॥८७॥ इत्युक्ते  
च प्रायेण च पूर्वं रद्राश्रयाद्विज्ञ ॥ आयुर्दायिसमाप्तिश्च कष्टयोगादिकारके ॥८८॥ रद्राश्रयात्  
ह्येव हि निरुक्ते चायुषि द्विज्ञ ॥ भवेद्विशेषणं किं तत्राप्रे दर्शयामि च ॥८९॥ मेघलत्रे विशेषेण  
आयुर्हराश्रयात्के ॥ कुष्ठरोगादि कुर्वीत पूर्णापुर्न समाप्यते ॥९०॥ इन्द्रराशौ स्थितौ रुद्रौ  
प्राणी गौणद्वयेऽपि वा ॥ रद्राश्रय तदन्ते वा आयुर्दायं भवत्यपि ॥९१॥ आयुर्दायं योगभेदेन  
प्रथमे मध्यमोत्तमे ॥ दर्शयामि तत्राप्रे च कथां शम्भुप्रणोदिताम् ॥९२॥ स्वल्पमध्यमदीर्घायुर्णी  
गादिकं वदेद्विज्ञ ॥ तदायुर्दायमत्यादि पयोक्तं कथितं मया ॥९३॥ स्वल्पायु प्रथमे शूले  
मध्यमायुर्द्वितीयके ॥ दीर्घायुश्च तृतीयात्ते शूलान्ते निधनं भवेत् ॥९४॥ अधुना सप्रबक्ष्यामि  
तत्राप्रे द्विजनवनं ॥ मृत्युर्मुक्ष्याथयीमृतदशाया तद्दशास्त्वपि ॥९५॥ तत्र फलविशेषार्थं  
माहेश्वरग्रहं द्विज्ञ ॥ सक्षयति तत्राप्रे च तस्मादायुर्विनिश्चितम् ॥९६॥ चिन्तयेत्कारके तत्रे  
हाप्यमेशो महेश्वर ॥ अथैवाऽन्यप्रकारेण माहेश्वरं बदाभ्यहम् ॥९७॥ कारके तुङ्गराशित्ये  
सप्रहो बलवत्तरः ॥ रिफरप्राधिपौ मध्ये सोऽपि माहेश्वरो ग्रहः ॥९८॥ कारकाच्च ग्रहामावे  
नायो माहेश्वरो भवेत् ॥ रिफरप्राधिपौ विप्रं बले सामान्यता यदि ॥९९॥ इयं माहेश्वर  
घातो यथा रद्रग्रहौ द्वयम् ॥ तान्वा च निर्णयार्थाय प्रकारान्त्यं वदाम्यहम् ॥१००॥

इसलिये रद्राश्रय योग में भी बल से आयु का निर्णय करे बलाबल के अनुसार जितने वर्ष  
प्राप्त हो उतनी आयु कहे ॥८७॥ इस प्रकार अब हमने रुद्र ग्रह के योग से प्रायण (मृत्यु) का

विचार किया। और इसके साथ ही कष्ट रोग आदि का विचार किया। ॥८८॥ इस प्रकार द्वादशय विचार है। इसमें जो विशेष विचार है, वह अब कहते हैं। ॥८९॥ मेषलग्न में विशेष करके द्वादशय विचार राशि के अन्तिम शून्य दशा में मृत्यु होती है और 'पूर्वायु' योग हो भी तो पूरी आयु जीवित नहीं रहता। और कुम्भादि रोग भी हो सकता है। ॥९०॥ प्राणी और गौणछद्र दोनों ग्रह यदि द्विस्वभाव राशि में हों तो द्वादशय शून्यदशा में या उसके अन्त में मृत्यु होती है। ॥९१॥ अब महेश्वर के कहे हुए आयुर्दाय सम्बन्धी प्रथम, मध्यम, उत्तम, शून्य दशा निर्वाण के योग कहते हैं। ॥९२॥ योगानुसार अल्प, मध्य, दीर्घ, आयु का योग निर्देश करो। इसके अल्पादि भेद के योग कह चुके हैं। ॥९३॥ स्वल्पायु हो तो प्रथम शून्य दशा में, मध्यायु हो तो द्वितीय और दीर्घायु हो तो तृतीय शून्यदशा में मृत्यु होती है। ॥९४॥ (अब आगे महेश्वर ग्रह का निरूपण करते हैं) हे द्विजनन्दन ! अब आपको महेश्वरग्रह का विचार कहते हैं, जो कि मृत्यु की आश्रयीभूत मुख्य दशा और अन्तर्दशा विचार में उपयोगी है। उसके पश्चात् उसके नक्षत्र कहेंगे, जिनसे आयु का विचार या निर्णय कहेंगे। ॥९५॥ कारक कुण्डली में अष्टमाधीश ग्रह महेश्वर सज्ञक होता है। अथवा दूसरी रीति से 'महेश्वर' कहते हैं। ॥९६॥ कारक यदि उच्च राशि का हो तो द्वादश तथा अष्टमाधीश में जो ग्रह अधिक बली हो वह 'महेश्वर' होता है। ॥९८॥ और कारक से यदि बली ग्रह नहीं मिले तो, अर्थात् १२।८ भावेश बलहीन या समबली हो तो कारकेश ही 'महेश्वर' होता है। ॥९९॥ तथा ८।१२ द्वादशेश के समबली होने पर दोनों की ही महेश्वर राजा मानकर दो महेश्वर हो जाते हैं। ॥१००॥

स्वकारकस्य योगश्रेद्राहुकेतुरवोन्विता ॥ महेश्वरो भवत्येव विकल्पेन द्विजोत्तम ॥१॥  
कारकस्याष्टमे पापग्रहो महेश्वरो भवेत् ॥ रविचद्री च चांद्रिश्च गुरुः शुक्रः शनिस्तमः ॥२॥  
शिखिता गणनायां च यः पट्टः कारकग्रहत् ॥ सोऽपि महेश्वरो ज्ञेयो नवभागतमुच्चयात् ॥३॥ एवं चार्कविभागश्च राशिब्यवहारोच्चता ॥ तदयं तृतीयः शेटो रव्यादीनां महेश्वरः ॥४॥ यद्वा कारकस्यानाच्च पट्टाधिपतये स्थिते ॥ सोऽपि महेश्वरो ज्ञेयो निर्विण्णं द्विजोत्तम ॥५॥ महेश्वरग्रहस्यापि ब्रह्मसाहित्यकेन च ॥ ततो ब्रह्मग्रहं बध्ने विशेषेण फलाय वै ॥६॥ लप्राप्ता सप्तमाहापि रिपुरं द्रव्यपाधिषाः ॥ एतेषु बलवान्विप्र मेयादिविषयस्थिते ॥७॥ लप्रसप्तमयोर्मध्ये राशयोश्च बलवान्भवेत् ॥ उच्चैरपुष्टभागाद्यसंयोगो विद्यमानतः ॥८॥ एतद्गुणत्रयाद् मुक्तः सोपि ब्रह्म ग्रहः स्मृतः ॥ लप्रस्य पृष्ठभाग व यद्वत् च शून्यवदिकम् ॥९॥ सप्तमस्य पृष्ठभागं पट्टकलप्रवदिकं द्विज ॥ बलवान्विषयस्योपि ब्रह्म शेटः स उच्यते ॥११०॥

ऐसी स्थिति में उनके निर्णय के लिये अन्य प्रकार कहते हैं। आत्मकारक का योग, राहु, केतु, सूर्य को छोड़कर किसी भी ग्रह से हो तो वह भी महेश्वर होता है। ॥१०१॥ (इस प्रकार कितने ही महेश्वर हो सकते हैं) इनमें से कुछ की गणना तथा नक्षत्र कहते हैं। प्रथम-कारक से अष्टमभावस्थित ग्रह महेश्वर होता है। दूसरा-सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन क्रम से आत्मकारक ग्रह से गणना करने पर जो छटा ग्रह है, वह भी महेश्वर है। यह द्वितीय है। और इसी प्रकार नवभाग तथा द्वादशांश में भी गणना करना। अर्थात् आत्मकारक के नवभाग या द्वादशांश से जो छटा हो और बली हो या उच्चान्दि बलमुक्त हो वह

तीसरा माहेश्वर सजक ग्रह है और सूर्यादि बाकी सभी ग्रहों का स्वामी है॥४॥ अथवा कारकस्थान (भाव) से छठे घर के स्वामी की राशि में हो, वह भी (चौथा) माहेश्वर होता है॥५॥ यह माहेश्वर ग्रह बताये गये। अब माहेश्वर के समान होने से 'ब्रह्म' नामक ग्रह भी बताया जाता है। विशेष करके फलविचार के लिये भी 'ब्रह्म' ग्रह कथन करते हैं॥६॥ (ब्रह्मग्रहलक्षण) लग्न से या सप्तमभाव से ६।८।१२ स्थानों के स्वामियों में जो बलवान् होता है। वह 'ब्रह्मा' ग्रह है। यह नियम विषम राशि के लग्न के लिये है॥७॥ लग्न, सप्तम भाव तथा इनके स्वामी में जो बलवान् हो और उज्जादि राशि में स्थित ग्रह से संयोग रहित हो। इन तीन गुणों से युक्त ग्रह भी 'ब्रह्मा' ग्रह है॥८॥ लग्न से पीछे की छ राशि, और सप्तम से पीछे की छ राशि (अर्थात् लग्न से छठे भाव तक और सप्तम से १२ भाव तक), इन दोनों भागों में जो ग्रह विषम राशि में हो और बलवान् हो वह भी 'ब्रह्मा' होता है॥९॥११०॥

ब्रह्मणा लक्षणप्राक्ता बलवान्वापि पातयोः ॥ शनिराहुरयो केतुर्यदि षष्ठो ग्रहो द्विज ॥११॥  
रवादिगणनाया च शन्यादौ तृतीयो ग्रहः ॥ स्थानात्यष्टराशिगे च षष्ठराश्यधिषोऽथवा  
॥१२॥ सौमि ब्रह्मा ग्रहो ज्यो निर्विशक द्विजोत्तम ॥ बहुना ब्रह्मणाक्ता को ग्रहो  
प्राह्यमाणकः ॥१३॥ सदेहे निर्णय चात्र तवापे कययामि च ॥ द्वित्र्यादिको ग्रहाणां च योगो  
ब्रह्मेति लक्षितः ॥१४॥ योगःस्वजातिर्यो प्राह्यः कारक याति यो ग्रहः ॥ बहुनामधिको भागः  
सौमि ब्रह्मा ग्रहोऽच्यते ॥१५॥ राहोर्ब्रह्मत्वयोगेन अधिकारी यदा भवेत् ॥ विपरीत  
विजानीयात्सर्वेषु न्यूनभागकम् ॥१६॥ इत्येकपापे पूर्वोक्त ब्रह्मणा ग्रहकारकात् ॥ रन्ध्राधीगो  
ष्टमस्थो वा जात्यप्राणैक्यवाक्यतः ॥१७॥ द्वौ ब्रह्मा विपरीतार्थे ह्यथवा बहुब्रह्मणा ॥  
सामान्यभागातरे हि कतमो प्राह्यमाणकः ॥१८॥ सर्वे भागसमानास्तु अप्रहात्सग्रहो बली ॥  
इति न्यायेन विज्ञेय बलवान् ब्रह्मणोच्यते ॥१९॥ ब्रह्मत्वेन प्रधानेन ब्रह्मकार्यं करोत्यपि ॥ स  
च ब्रह्मा ग्रहो प्राह्यः पुरा शम्भुप्रणोदितः ॥२०॥

तथा ब्रह्मा के लक्षण से युक्त और अनुपात से जो बली हो। शनि, राहु अथवा केतु को भी गणना करके जो छठा हो या छठे का स्वामी हो वह भी 'ब्रह्मा' होता है। अनेक ग्रह 'ब्रह्म' लक्षण युक्त हो तो कौनसा ग्रह लेना चाहिये॥११३॥ इस सदेह में निर्णय कहते हैं। २-३ ग्रह ब्रह्म लक्षण से युक्त हो तो जो आत्मकारक समान जातीय हो अथवा सब ब्रह्मलक्षण ग्रहों में अधिक अशवाला ही॥११५॥ राहु के ब्रह्मत्व लक्षण-सम्पन्न होने पर (अनेकों में अशाधिक्य निर्णय स्थल में, वही होने से कम अश ही अधिक जानना) सब ग्रहों (ब्रह्मलक्षणसम्पन्न ग्रहों) से यदि कम अश हो तो राहु भी ब्रह्मा होता है॥११६॥ इस प्रकार ग्रहों में तो आत्मकारक से तथा अष्टमाधीश या अष्टमभावस्थ, अथवा पूर्वोक्त सजातीयता या बलाधिक्य से 'ब्रह्मा' का निर्णय करना॥११७॥ दो अथवा अनेक ब्रह्मा प्राप्त हो तो जो अधिक अशवाला हो वह ब्रह्मा॥११८॥ और अश भी समान हो तो "अप्रहात् सग्रहो ज्यायान् सग्रहादधिकग्रहः" इस नियम से 'ब्रह्मा' का निर्णय करना चाहिये॥ ब्रह्मस्वरूप होने से प्रधान है और ब्रह्मशक्ति के समान कार्यकारी होने से इस ग्रह को ब्रह्मा कहा गया है॥१२०॥

अधुना सप्रवक्ष्यामि ब्रह्ममाहेश्वरौ ग्रहौ ॥ विशेषेण फल ब्रूयात्तवाप्रे द्विजनन्दन ॥२१॥  
 ब्रह्मपहाश्रितेभ्यस्त्य दशादि परिचितयेत ॥ माहेश्वरर्क्षपर्यन्त जातकस्यापुषि द्विज ॥२२॥  
 तत्तद्वाशित्रिकोषेषु राशिरतर्गते मृति ॥ चरश्च स्थिरपर्यन्त दशाया चित्तयेद्विद्वज् ॥२३॥ तथा  
 महादशाया च आपुर्दाय विलोकयेत् ॥ विशोत्तर्यादिक चैव पयान्यायेषु योजयेत् ॥२४॥  
 माहेश्वरश्च यो राशिरष्टमेशाश्रयी द्विज ॥ तत्तद्वाशित्रिकोषेषु राशावतगति मृति ॥२५॥  
 अत्राब्द इति निर्देशात्तत्तद्वाशिदशाक्रम ॥ अब्दो द्वादशाद्या भागे अतरैकैकराशि च ॥२६॥  
 एकैकाब्दातरदशा विज्ञेया गणितागमे ॥ द्वादशात्ये तयाधिकस्ये भाग सूर्येण दापयेत् ॥२७॥  
 प्राप्तैतरदशा ज्ञेया न्यूनाधिक्य न जायते ॥ धन्वाना द्वादशाधिक्ये भानुराश्वतर दशा ॥२८॥  
 दशाब्दे द्वादश न्यून यस्मिन् राशौ दशा द्विज ॥ भागद्वादशमध्ये च समास तदनतरम् ॥२९॥  
 महादशाक्रमेणैव चालनीयेति ज्ञापितम् ॥ अर्कभागेतरदशानयन द्विजसत्तम ॥३०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे ब्रह्ममाहेश्वरब्रह्मपहलक्षणपाकचन  
 नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

हे द्विजनन्दन ! हमने वे 'ब्रह्मा' और 'महेश्वर' नामक ग्रह कहे। अब इनका फल कहते हैं ॥१२१॥ ब्रह्म ग्रह जिस राशि में हो उसके स्वामी की दशा का विचार करो। माहेश्वर राशि की दशा तक जातक का जीवन जानना ॥१२२॥ राशिदशा में तत्तत् राशि के त्रिकोण राशि की अन्तर्दशा में मृत्यु कहना। चरराशि का जन्म हो तो स्थिर राशि तक जीवन है ॥१२३॥ ग्रहदशाओं में, महादशा में आयु के विचार करने के लिये विशोत्तरी आदि दशाओं में विचार करना चाहिये ॥१२४॥ अष्टमेशस्थित राशि की दशा में—माहेश्वर के अन्तर में या उससे त्रिकोण राशि दशा के अन्तर में 'मृत्यु' कहना ॥१२५॥ इस ब्रह्मा का वर्ष देने के लिये "अत्राब्दः" इस वचन के अनुसार जो राशि दशा है, उसमें १२ का भाग देने से अर्थात् बारह भाग करने से १-१ भाग की १-१ राशि जानना ॥१२६॥ और एक एक राशि का १-१ वर्ष जानना। इस प्रकार १-१ वर्ष की अन्तरदशा प्राप्त होगी। १२ से अधिक या कम होने पर १२ का भाग देना ॥१२७॥ जो वर्ष प्राप्त हो उसमें मृत्यु जानना, उसमें न्यूनाधिक्य नहीं होता। यदि वर्ष १२ से अधिक हो तो सूर्य राशि के अन्तर में मृत्यु कहना ॥१२८॥ अपवा दशावर्षों में १२ कम कर देना। जो शेष रहे उस राशि की दशा जाने। १२ भाग में भीतर ही दशा होती है ॥१२९॥ महादशा के क्रम से ही आगे भी विचार करना ॥ और १२ भाग के अनुसार अन्तरदशा का विचार करना। (सम्भवतः यहाँ ग्रन्थ का कुछ भाग छूट गया है) ॥१-१३०॥ ग्रहलक्षण समाप्त ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रवाशिकाया रुद्र, माहेश्वर,  
 ब्रह्मपहलक्षण नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

## अथ पित्रादिनिर्वाणमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि पित्रादेश्च द्विजोत्तम ॥ योग निर्वाणका स्थ्यात् तथा शभुप्रणोदितम् ॥१॥  
लघ्नसप्तमयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान्द्विज ॥ तस्य राशे समारम्य क्रमेण पूर्ववद्द्विज ॥२॥  
प्रवर्तकदशारीत्या रुद्रशूलदशातरे ॥ भविष्यति पितुर्मृत्युर्निर्विशकद्विजोत्तम ॥३॥

### पित्रादिनिर्वाण

हे द्विजोत्तम! अब हम पित्रादिनिर्वाण मुने अनुसार कहते है ॥१॥ लघ्न तथा सप्तम से जो राशि बलवान् हो, उस राशि से विचार करके पितृ स्थान दशम के प्रवर्तक ग्रह से रुद्रशूल दशा में पितृमृत्यु होती है ॥२॥३॥

अथमातुर्निर्वाणम्—लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली राशि चतुर्थक ॥ तस्या शूलदशाया च मातुर्मृत्युर्न सशय ॥४॥

मातृनिर्वाण—लघ्न या सप्तमभाव में जो इन भावों की बलवान् राशि हो उससे चतुर्थ भाव की रुद्रशूल दशा में माता की मृत्यु होती है ॥४॥

भ्रातृनिर्वाणम्—लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली वीक्षेत्तृतीयकम् ॥ तस्या शूलदशाया च भ्रातृनिर्वाणमेव च ॥५॥

भ्रातृ निर्वाण—लघ्न से या सप्तम से देखना इनमें जो बली हो और तीसरे भाव की देखता हो उसकी शूल दशा में छोटे भ्राता का निर्वाण होता है ॥५॥

भगिनीभगिनीपुत्रनिर्वाणमाह—लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि राशिपचमके बली ॥ तस्या शूलदशाया च भगिनीपुत्रयोर्मृति ॥६॥

भगिनी तथा भगिनेय निर्वाण—लघ्न से या सप्तम से पचमभाव में से जो बलवान् हो उसकी शूलदशा में भगिनी तथा भगिनेय की मृत्यु होती है ॥६॥

ज्येष्ठभ्रातृनिर्वाणम्—लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि एकादशे बली द्विज ॥ तस्या शूलदशाया च निर्वाण ह्यप्रजस्य च ॥७॥ लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि नवराशिर्बली द्विज ॥ निर्विशङ्क भवेत्तस्य शभुना कथित पुरा ॥८॥

ज्येष्ठभ्रातृनिर्वाण—लघ्न से या सप्तम से एकादश स्थान में जो बलवान् हो उसकी शूलदशा में ज्येष्ठ भ्राता का निर्वाण होता है ॥७॥ लघ्न से या सप्तम से नवमभाव में जो बली हो उसकी शूलदशा में ज्येष्ठभ्राता की मृत्यु होती है ॥८॥

मातापित्रो कारकाभ्या वितयेत्पूर्ववद्द्विज ॥ तदापुर्निघ्न चापि दीर्घादीना प्रवेदत ॥९॥  
मानुसार्गधयोर्मध्ये सद्दीर्घाधिष्यती द्विज ॥ ग्रहादित्यादिरीत्या च स सेट पितृकारक ॥१०॥  
चन्द्रमालयोर्मध्ये तत्रैव रविशुक्रयो ॥ बलेन रहित सोऽपि पापग्रहनिरीक्षित ॥११॥

पित्रादिकाना मजते यथाक्रम द्विजोत्तम ॥ उभयोर्वलसाम्ये च उभौ पित्रादिकारकौ ॥१२॥  
 द्विविध वितमेतत्र प्राण्यप्राणिविभेदतः ॥ पित्रादिकारकस्यैव प्राणिकल बढाम्यहम् ॥१३॥  
 पित्रादिकारके विप्र शुभग्रहनिरीक्षिते ॥ मातृकारकाथघ्नो मूतराशिरेतत्रिकोणगे ॥१४॥ दशाया  
 निघन बाध्य मातापिशोरय त्रयम् ॥ इति प्राणिकारकस्य तत्राप्रे कथित फलम् ॥१५॥  
 अप्राणिकारकस्यैवमष्टमेशो बलान्वितः ॥ तस्याथघ्नो मूतराशित्रिकोणे निघन भवेत् ॥१६॥

मातृकारक से माता की, पितृकारक से पिता की योगानुसार प्रथम दीर्घ मध्य अल्प आयु का विचार करके पूर्वोक्त चतुर्य और दशम भाव से इनकी आयु तथा मृत्यु का विचार करो ॥१॥ सूर्य और शुक से जो बली हो और अशो में अधिक हो वह पितृकारक है ॥१०॥ मंगल और बन्दामे से तथा सूर्य शुक से जो बलवान् न हो, पापग्रहदृष्ट हो वह भी पितृ, मातृकारक होता है ॥११॥ और दोनों का समान बल हो तो दोनों ही कारक होते हैं ॥१२॥ और इससे प्राणी अप्राणी भेद से दोनों विचार करो। इन पित्रादि कारक का फल कहते हैं ॥१३॥ पित्रादि कारक के शुभग्रहदृष्ट होने से मातृकारक की आश्रयी राशि तथा उसकी त्रिकोण राशि की दशा में माता पिता भ्राता की मृत्यु कहना। इस प्रकार बलवान् कारक का फल कहा गया ॥१५॥ तथा निर्बल कारक का अष्टमेश यदि बली हो तो तत् स्थित राशि के त्रिकोण में निघन होता है ॥१६॥

यदा रश्मिर्वादिष तच्छूले निघन द्विज ॥ पितृमातृकारके च शूले निघनमेव च ॥१७॥ यदा प्राणिकारकस्य ह्येव ऋसातरेपि च ॥ फल वै निर्दिशेद्विप्र पर तद्भगवन्नायके ॥ अप्राणिकारकफल निर्दिशेद्विषयगे द्विज ॥१८॥ तत्रान् प्रकारानित्येव वितयेद्द्रुशुलवत् ॥१९॥ अत्याद्यायुर्वीरके चेदापुर्दानयन द्विज ॥ दशासवारभेदेन ह्यपुर्दाय च पूर्ववत् ॥२०॥ राश्यादौ निर्णय चादौ तद्विशेषफलाय वै ॥ तन्वादिष्ययभावेषु भाव तत्तत्समुच्चितम् ॥२१॥ तत्तत्कारकमाश्रित्य राश्याहृद विचिंतयेत् ॥ द्वारबाह्यादिक सर्व राश्याष्ट द्विजसत्तम ॥२२॥ अधुना सप्रवस्थासि पितुर्निघनहेतवे ॥ विशेषक दर्शयति पुनरुक्त च वै द्विज ॥२३॥ रविर्षय क्रियायोगे तत्रादिष्कर्षगे स्थितौ ॥ बुधसूर्याथघ्नो मूतलप्रमेये दशान्तरे ॥२४॥

और यदि अष्टमेश बली हो तो उसकी शूलदशा में निघन होता है ॥ अथवा पितृ मातृ कारक की दशा में (शूलदशा में) निघन होता है ॥१७॥ अथवा बलवान् कारक की शूलदशा में मृत्यु होती है ॥१८॥ इसी रीति से रुद्र यह के समान पूर्वोक्त सभी प्रकारों से इसमें भी विचार करना चाहिए ॥१९॥ अल्प मध्यादि आयु के विचार में भी पूर्व के समान आयुयोग से आयु निर्णय करना। पञ्चात् दशा की कथितरीति से दशा देखना ॥२०॥ तत्तत् भावों के विचार करने के लिए राशि आदि का निर्णय उनके स्वामी आदि का विचार जैसा प्रथम कहा है उनका विषयविशेष का विचार करना, इसी प्रकार १२ भावों का विचार करना ॥२१॥ तथा कारक विचार एव आरुह्य तत्र विचार तथा द्वार, बाह्य राशि विचार आदि पूर्ववत् इसमें भी करना ॥२२॥ अब पिता की मृत्यु का ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ विशेष विचार कहते हैं ॥२३॥ इस कार्य का कर्ता सूर्य है वह मर्त्य — त्रिकोण स्थान में स्थित हो (यह

विचार मेघ लग्न मे करना) तो बुध या सूर्य स्थित राशि की दशा मे मृत्यु होती है॥२४॥

लग्नभूतस्य मेघस्य सिंहस्यापि दशातरे ॥ दत्तव्य पितृनिधन निर्विशक द्विजोत्तम ॥२५॥ यदि लग्ने पापलेटा मेघराशौ रविस्तथा ॥ योगे मेघमहापाके वाप्यामतर्गते मृति ॥२६॥ अधुना सप्रबध्यामि तवाप्रे द्विजनदन ॥ बाल्ये च पित्रोर्मरण मयोक्त च विशेषत ॥२७॥ पित्रो कारकयोर्विप्र प्राण्यप्राणिहीनोऽपि वा ॥ व्यकति पापयोगे च शुभयोगविवर्जिते ॥२८॥ दशाब्दान्त्यूनमित्येव पित्रोर्मृत्युर्यथा क्रमम् ॥ रविदृष्टाशुभ दृष्टौ नाय योगो द्विजोत्तम ॥२९॥ रव्यारूढविलप्रेस्मिन्पित्रोर्भाव विचारयेत् ॥ तद्दशाया फल वाच्य पित्रोर्दुःख सुखादिकम् ॥३०॥

तथा लग्न मेघ मे लग्न की राशि मेघ की सिंह की दशा म पिता की मृत्यु कहनी चाहिए॥२५॥ यदि लग्न मे पापग्रह और मेघराशि म सूर्य हो इस योग मे मघराशि की महादशा मे और केद्रराशि के अन्तर मे पिता की मृत्यु कहना॥२६॥ अब हम बाल्यावस्था म जिन योगा मे पितृमरण होता है वे योग कहते है। मातृकारक तथा पितृकारक का निर्णय करके प्राणीरूढ तथा अप्राणी-रूढ वा निर्णय करे और योगा का विचार करे यदि सूर्यरहित पापग्रहो का योग हो और शुभग्रहो से दान नही हो ता प्रथम शून दशा म ही माता तथा पिता की मृत्यु जानना॥२८॥ सूर्य दृष्टि युक्त अशुभ दृष्टि हो ता यह योग नही समझना ॥२९॥ इसी प्रकार सूर्य के आरूढ लग्न मे भी माता पिता की मृत्यु का विचार करा। और आरूढ लग्न की दशा तथा आरूढ लग्न म वसत भावा म माता पिता के मुख दुःख आदि का भी विचार करे॥३०॥

अथ कलत्रनिधनमाह-कलत्रकारक सेटस्तदा स्त्रीराशिचितनम् ॥ तत्त्रिकोणदशाया च कलत्रनिधन भवेत् ॥३१॥

भार्यानिधन विचार-प्रथम भार्याकारक ग्रह का निर्णय कर। पश्चात् उमम मन्मभाव वा विचार करे। उस सप्तमभाव या सप्तमभाव म त्रिकोण राशि की दशा म मृत्यु का विचार करना॥३१॥

अथान्यनिधनमाह-तत्तत्कारकाश्रये च त्रिकोणर्षेदशातरे ॥ तेषा च मातुलादीना निपन भवति ध्रुवम् ॥३२॥ एव भावकलत्रादितद्दशारूढपत्रके ॥ चितयेदापु सामर्थ्य मर्ष फलसमानकम् ॥३३॥ लग्नाच्च कारकाद्यापि तृतीये पापलेचरे ॥ पुते दृष्टेऽपया विप्र दृष्ट मरणमुच्यते॥३४॥ तत्तत्कारकतदीशान्तृतीये पापयोगहृत्॥तेषा तेषा प्रयत्तव्य दृष्ट मरणमेव च॥३५॥ तत्तद्भावात्कारकेसान्तृतीये शुभदृष्टियुक्ता॥तेषा तेषा शुभयोगोर्मरण भवति द्विज॥३६॥ शुभाशुभद्वये योगे दृष्टौ नापि तृतीये ॥ शुभाशुभात्मक विप्र मरण भवति ध्रुवम् ॥३७॥

मातुस आदि की मृत्यु का विचार-जिसक निधन का विचार करना है उमम वाग्म वा



राशि अथवा त्रिकोण राशि की दशा या अन्तरमे उनके निघन का निर्देश करो। ३२॥ इसी प्रकार भार्या आदि के भाव से तथा उन भावों के आरूढ लग्न से प्रथम आयु अत्यादि का निर्णय करो। पश्चात् फलाफल तथा निघन का विचार करो। लग्न से या कारक (आत्मकारक) से तीसरे भाव में पापग्रह हो तो कष्ट में मृत्यु होती है। ३४॥ उस २ सम्बन्धी कारक से या कारकेषु से तृतीयभाव में यदि पापयोग हो तो उन २ सम्बन्धी का कष्टकारी निघन कहे। ३५॥ तथा यदि उस भाव क कारकेषु से तृतीय भाव पर यदि शुभदृष्टि हो तो उन २ सम्बन्धियों का मरण शुभयोग से होता है। ३६॥ यदि शुभ या अशुभ कोई भी दृष्टि नहीं हो तो साधारण रूप से मृत्यु जाने। ३७॥

### अथ मरणनिमित्तान्याह

तृतीये भानुना दृष्टे तथा युक्ते बलाढ्यके ॥ राजहेतोश्च मरण निर्विशक द्विजोत्तम ॥३८॥  
 तृतीयचन्द्रेण युते पृष्ठे वा पश्यतो मृति ॥ तृतीयशनिराहुन्या दृष्टे वापि युतेय वा ॥३९॥  
 वियार्तिमरण वाध्य जलाद्वा वह्निपीडनात् ॥ यताद्बुज्वात्प्रपतन बधनात् वा मृतिर्भवेत् ॥४०॥  
 तृतीयेचन्द्रमादौ च पृष्ठे वापि युते द्विज ॥ शुभिकुण्डादिना सत्त्वमरण च विनिर्दिशत् ॥४१॥ तृतीये  
 गुरुणा दृष्टे युक्ते शोकादिना मृति ॥ तृतीये भृगुपुण्ड्रुष्टे मेहरोगेण वै मृति ॥४२॥ बहुयुक्ते तृतीये  
 च बहुरोगयुता मृति ॥ तृतीयकेतु सत्सेटपौगे दृष्टियुतेय वा ॥४३॥ तथैव चन्द्रयोगे च तत्तद्भोगे  
 च मृति ॥ अनेन योगभावेन तस्य मृत्यु मुनिञ्चित ॥४४॥

### मरण निमित्त

तृतीयभाव यदि बलवान् सूर्य से दृष्ट हो तो मृत्यु में कारण राजसम्बन्धी होता है। ३८॥ इसी प्रकार तीसराभाव चन्द्रमा से युत या दृष्ट अथवा पृष्ठभाव में चन्द्रमा हो तो राजनिमित्त ही मृत्यु जानना। ३९॥ तृतीयभाव शनि राहु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो विष से या अग्नि, जल से मृत्यु होती है। अथवा ऊंचे से गिरकर या गड्ढे में गिरकर या फासी से मृत्यु होती है। ४०॥ तृतीय भाव में चन्द्रमा तथा मान्दी हो अथवा पृष्ठभाव में हो तो गलितकुण्ड आदि या व्याघ्र आदि से मृत्यु हो। ४१॥ तृतीयभाव गुरु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो चिन्ता आदि से तथा शुक्रयुक्त हो तो प्रमह रोग से मृत्यु होती है। ४२॥ यदि अनेक ग्रह युक्त दृष्ट हो तो अनेक रोगों से मृत्यु होती है। ४३॥ तृतीय भाव सौम्यहोसे युक्त दृष्ट हो अथवा चन्द्रमा से युक्त दृष्ट हो तो उक्त तत् २ रोगों से मृत्यु होती है। ४४॥

### अथ निघनदेशभेदमाह

तृतीये शुभयोगेन शुभदेशे मृतिर्भवेत् ॥ पापेन शोकटे देशे मिश्रे मिषत्पले मृति ॥४५॥ तृतीये गुरुशुक्रान्या योगे ज्ञानेन वै मृति ॥ गुरुशुक्रातिरिक्तान्ययोगे तिथिलता मृती ॥४६॥ मिश्रे मिश्रा मृतिरिति एव कर्माणि विप्र भौ ॥ कर्मभावे विशेषेण फलवाता द्विजोत्तम ॥४७॥ लग्नद्वादशमध्ये च गत्यादिप्रितययदि ॥ स्वित पित्रोर्न सत्कार कुर्वीत निजहस्तत ॥४८॥ तत्रादीना च भावाना पूर्वार्द्धे द्वादशादिकम् ॥ परार्द्धे स्थितमन्यादि बोधितेपि न सशय ॥४९॥

लग्नादि यस्य मध्ये तु शुभग्रहनिरीक्षितम् ॥ नामयोगं विजानीयात्पुरा शंभुप्रणोदितम् ॥५०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे निघनकथन नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥२३॥

### निघन देशभेद

तृतीयभाव शुभग्रह युक्त हो तो शुभदेश में मृत्यु होती है। पापग्रह युक्त हो तो दुष्ट देश में। तथा दोनों प्रकार के ग्रह हो तो मिश्र देश (अच्छे घुरे मिश्रित देश) में मृत्यु होती है ॥४५॥ तृतीयभाव में गुरु या शुक्र का योग हो तो ज्ञानावस्था में, इनसे अन्य शुभग्रह योग हो तो शरीर धीरे २ क्षीण होकर मृत्यु होती है ॥४६॥ तथा तृतीयभाव में शुभपाप मिश्र योग हो तो मिश्रितभाव से। हे विप्र! इस प्रकार कर्मनुसार मृत्यु होती है। कर्म के ही फलदाता से सूर्यादि ग्रह है ॥४७॥ लग्न से बारहवें स्थान में यदि शनि, राहु, केतु हो तो जातक को अपने माता पिता का कर्मकाण्ड करने का सुयोग नहीं प्राप्त होता ॥४८॥ लग्नादि बारह भावों में पूर्वार्द्ध और पश्चार्द्ध की छः राशियाँ हैं। पूर्वार्द्ध में ज्ञान्यादि का दृष्टियोग हो तो पूर्वोक्त फल होता है। परार्द्ध में अन्य दृष्टियोग हो तो पूर्वार्द्ध का ज्ञान्यादि योग व्यर्थ होता है ॥४९॥ लग्न आदि भावों में शुभग्रह की दृष्टि जिस भाव पर हो उसका नाम मृत्यु के बाद प्रसिद्ध होता है ॥५०॥

इति श्री० बृ० पा० हो० शा० पू० ख०सा० निघनयोगकथन  
नाम त्रयोविंशतितमोऽध्याय ॥२३॥

### अथ राजयोगाध्यायः

पराशर उवाच—अथातः संप्रख्यामि राजयोगादिक परम् ॥ ग्रहाणा स्थानभेदेन राशिदृष्टिद-  
शात्फलम् ॥१॥ तपः स्थानाधिपो मन्त्री मन्त्राधीशो विशेषतः ॥ उभावन्योन्यसदृष्टौ जातश्रेदिह  
राज्यमाह् ॥२॥ यत्र कुत्रापि सयुक्तौ तौ वापि समसप्तमी ॥ राजवशोऽबूवो बालो राजा  
सर्वति निश्चितम् ॥३॥ बाहनेशस्तथा माने मानेशो बाहने स्थितः ॥ बुद्धिधर्माधिपाम्यो तु  
दृष्टश्रेदिह राज्यमाह् ॥४॥

### राजयोगाध्याय

अब श्रेष्ठ राजयोग आदि कहते हैं। उन योगों में ग्रहों के स्थान भेद से राशि और दृष्टि द्वारा फल ब्रह्म जायगा ॥१॥ सूर्यादिग्रहों में स्थान बल में एकादश स्थान का स्वामी मन्त्री होता है। और विशेष करने मन्त्राधीश (पञ्चमाधीश) मन्त्री पद में ब्रह्म जाता है। ये दोनों परस्पर दृष्टियुक्त हो तो जातक राजा होता है ॥२॥ वे दोनों किसी भी श्रेष्ठस्थान में एक साथ हों, अथवा आपस में सप्तमस्थान में हों तौ जातक (राजवशी हो तो) निश्चय राजा होता है ॥३॥ चतुर्थस्थान का स्वामी दशमभाव में, और दशमेश चतुर्थभाव में हों तथा षष्ठम नवम के स्वामी से दृष्ट हो तो राज्यभोगी होता है ॥४॥

सत्तेसकर्मेशसंश्लेषप्रनाया यदा धर्मपसपुताश्रेत् ॥ नृपोन्तरश्रेदिह वारणादपः स्वतेजसा

व्याप्तदिगंतरालः ॥५॥ सुलकर्माधिपौ चैव मन्त्रिनाथेन संपुतौ ॥ धर्मशेनाय वा युक्तौ  
जातश्रेदिह राज्यभाक् ॥६॥ मुतेश्वरी धर्मपसंपुतश्रेल्लग्रेश्वरेणापि युतो विलग्रे ॥ सुतेऽप्य वा  
मानगृहेऽप्य वा स्वाद्राज्याभिषिक्तो यदि राजवंश्यः ॥७॥ धर्मस्थाने गुरुश्रेत्रे स्वगृहे मृगुसपुते ॥  
पन्नमाधिपसमुक्ते जातश्रेदिहराज्यभाक् ॥८॥ निशाद्वान्च दिनाद्वान्च परं सार्द्धं नार्द्धिका ॥  
शुभा तद्गुणो राजा धनी वा तत्समोपि वा ॥९॥ चंद्रःकविं कविश्रद्धं पश्यत्यपि तृतीयगः ॥  
शुक्राब्धे ततः शुके तृतीये वाहनार्पवान् ॥१०॥

पञ्चमेश, दशमेश, तृतीयेश और लग्नेश ये सब यदि नवमेश से युक्त हो तो जातक यदि  
राज्यवश मे हो तो तेजस्वी, यशस्वी तथा हाथी आदि युक्त राजा होता है॥५॥ सुख (४)  
कर्म (१०) के स्वामी यदि पञ्चमेश से युक्त हो अथवा नवमेश से युक्त हो तो जातक  
राज्यभोगी होता है॥६॥ पञ्चमेश यदि लग्नेश और नवमेश से युक्त हो और लग्न मे स्थित हो  
या चतुर्थ अथवा दशम मे हो तो राजा होता है॥७॥ नवमभाव मे गुरु की राशि हो और गुरु  
स्वगृही तथा शुक्रयुक्त हो एव पञ्चमेश से युक्त हो तो राजा होता है॥८॥ दिनार्द्ध और रात्र्यर्द्ध  
से २॥ घटी (१ घण्टा) के भीतर जिसका जन्म हो वह राजा या धनी होता है॥९॥  
तृतीयभाव मे स्थित चन्द्रमा या शुक्र परस्पर देखते हो। अथवा शुक्र से चन्द्रमा तीसरे या  
चन्द्रमास से शुक्र तीसरे हो तो जातक धन वाहन युक्त होता है॥१०॥

### अथ द्वादशयोगमाह

लग्नवित्ती स्वर्दुश्चिख्यौ त्रितुषौ तुर्वपंचमौ ॥ द्विषात्पञ्चौ षष्ठमारौ श्रौरश्रौ मृतिभाग्यौ  
॥११॥ धर्मकर्मी खलामी च रिण्फलामी तनुव्ययी ॥ पुण्यकला लाभयोगाद्य राजमृत्य  
चमूपकम् ॥१२॥ आमात्यं दाहणं कर्म राजयोग प्रियामृतिम् ॥ भाग्यव्ययं राजयोग  
सूमिद्रव्यमृणव्ययम् ॥१३॥ वित्तहानिर्द्दविशते योगा वै सर्वदा स्मृता ॥१४॥

### अथ चतुर्विधसंबंधमाह

प्रथमः स्थानसंबधो दृष्टिजस्तु द्वितीयकः ॥ तृतीयस्त्वेकतो दृष्टिः स्थित्येकत्र चतुर्थकः ॥१५॥  
अन्योन्यगौ तथा स्वे स्वे सयुतावन्यमे स्थितौ पूर्णक्षितौ भिवो वापि चैकवर्गगतौ यदा ॥१६॥

### अथाग्रे राजाऽमात्ययोगादिबाधकमाह

तदा योगो भवेत्तत्र विबलो नैव योजसकृत् ॥ शत्रुयुक्तेक्षितो पापवीक्षितो नैव योगकृत् ॥  
व्यपमृत्युपटायस्थावयवा समसपुतौ ॥१७॥ यदाऽधीशो तदाप्यत्र भवतो नैव योगदी ॥  
राजाभात्यादियोगानां चक्रगौ नाशकारकौ ॥१८॥

### द्वादश योग

१२ योग—अको मे लिखे हुए भावो के स्वामी का परस्पर स्थान या दृष्टि सम्बन्ध होने से  
पुष्कल नाम के १२ योग होते है। १।२-२।३-३।४-४।५-५।६-६।७-७।८-८।९-९।१०-

१०।११-११।१२-१२।१ क्रम से इनका फल यह है-

लाभयोग, राजा की नौकरी, फौज में बड़ा पद, राजा का मंत्री या मंत्री तुल्य, कठिन कर्म करनेवाला, राजा या धनी, स्त्री की मृत्यु धनहीन राजयोग, भूमि और द्रव्य, खर्चा और कर्जा और धन हानि ॥ ये १२ योग हैं॥११॥१२॥१३॥१४॥

### ग्रहों के चार प्रकार के सम्बन्ध

(१) स्थान सम्बन्ध (२) दृष्टि सम्बन्ध (३) एकत्र दृष्टि सम्बन्ध (४) एकत्र स्थिति सम्बन्ध ॥ इनमें विशेष स्थान-सम्बन्ध में परस्पर एक दूसरे के स्थान में होना अथवा अपनी राशियों में किसी राशि का दोनो में होना अथवा मित्र की राशि में एक साथ दोनो का होना अथवा नवमाश आदिक वर्ग में एक वर्ग में होना। इसी प्रकार दृष्टि सम्बन्ध के भी भेद जानना ॥१५॥१६॥

राजा मन्त्री योग के बाधक योग-जहां राजयोग हो किन्तु ग्रह बलहीन हो या शत्रुग्रह से दृष्ट या युक्त हो अथवा पापग्रह देखते हो तो राजयोग का फल नहीं होता। अथवा ६।४।१।१२ इन स्थानों में हो तो राजयोग का फल नहीं होता॥१७॥ अथवा राजयोग का एक ग्रह बन्नी हो तो नाशकारक होते हैं॥१८॥

### अथ पारिजातादिशुभाशुभविचारमाह

त्रिबङ्गायाष्टरिण्फेसा पारिजाते व्यवस्थिता ॥ दायिकान्यभवे भावे यत्र ये ये विचारिता ॥१९॥  
द्वितीये चोत्तमास्ते ते तृतीये चान्यदा मता ॥ चतुर्थे ते च राजान पचमे गुरवो मता ॥२०॥  
भूदेवाश्च तथा षष्ठे देवा ज्ञेयाश्च सप्तमे ॥ अष्टमे परशवो ज्ञेया दुःखदाश्चात्र जन्मनि ॥२१॥ दुःस्या  
६।८।१२ श्रेव भवत्येते तदातेनैव बाधका ॥ केन्द्रकोणस्थिताश्चैव बाधकाश्चात्र जन्मनि ॥२२॥  
विषमे च भवेत्स्त्रीणां समे वै पुरुषो मत ॥ षष्ठे वै चोरित द्रव्यं ह्यष्टमे हननं कृतम् ॥२३॥ हननं  
हरणं रिण्फे तृतीये कैतव कृतम् ॥ पौश्रल्यं बधने प्रोक्तकृतघ्नत्वभवेत्कृतम् ॥२४॥

### पारिजात आदि योग

३।६।१।८।१२ इन स्थानों के स्वामी पारिजात योग में पहले जैसा कहा है वैसे स्थित हो तो पारिजात योग होता है तथा पूर्वोक्त स्थानों के स्वामी द्वितीय स्थान में हो तो उत्तम हो तृतीय स्थान में हो तो मध्यम, चौथे में हो तो राजा के समान पचम भाव में हो तो गुरु, षष्ठ भाव में हो तो भूदेव, सप्तम में हो तो देव आठवें में पशु छठे-बारहवें में हो तो बाधक दुःखदायी, जन्म में हो तो दुःख केन्द्र और त्रिकोण में हो तो बाधक। यह योग स्त्रियों के लिये विषम राशि में और पुरुषों के लिये सम राशि में देखना चाहिये। इन योगों का फल-स्त्रीजातक के लिये उपर्युक्त ग्रह छठे घर में हो तो चोरी करनेवाली, आठवें में हो तो हत्यारिणी, बारहवें हो तो हत्या और चोरी करनेवाली तीसरे हो तो धूर्त, सप्तम हो तो व्यभिचारिणी और कृतघ्न होती है॥१९॥२०॥२१॥२२॥२३॥२४॥

सुखाधिपात् ॥ मन्त्रेशोऽमात्यता याति सप्तमाधीशयोगत ॥३९॥ कर्मेशस्य तु योगेन राजा  
 सात्त्विक्यतामियात् ॥ केन्द्रधर्मेशयोगे राजा धै राजवदित ॥४०॥ धर्मकर्माधिपी चैव ध्यत्यये  
 तादुभौ स्थितौ ॥ पुक्तश्रेढे तदा वाच्य सर्वसौख्यसमन्वित ॥४१॥ पारिजाते स्थितौ तौ तु  
 नृपो लोकानुशिक्षक ॥ उत्तमो चोत्तमो मूपो गजवाजिरथादिमान् ॥४२॥ गोपुरे नृपशार्दूलो  
 पूजिताधिर्नृपैर्वेत् ॥ सिंहासने चक्रवर्ती सर्वलोणीप्रपात्क ॥४३॥ अस्मिन्योगे हरिश्चन्द्रो  
 मानवश्चोत्तमस्तथा ॥ बलिर्वैश्वानरो राजा अन्ये चैव तु चक्रपा ॥४४॥ कलौयुगे च भविता  
 तथा राजा युधिष्ठिर ॥ भविता शालिवाहश्च तथा विजयाभिनवन ॥४५॥ नागार्जुनस्तथा  
 मूपस्तदन्ये चैव गोपुरे ॥ पारावताशकेन्ये च जाता भन्वाद्यस्तथा ॥४६॥ देवलोके तु प्रथमे  
 हरेश्चैवावतारणम् ॥ मत्स्यादिकल्किपर्यन्ता सर्वे वर्गोद्भवा मता ॥४७॥ द्वितीये देवलोके तु  
 जेयाश्चेन्द्रादय परे ॥ ऐरावते च प्रथमे जात स्वायम्भुयो मनु ॥४८॥ एव सर्वप्रकारेण ज्ञात्वा  
 चैवविचक्षण ॥ कौणकेन्द्रादिनायाना योग सर्वविधायक ॥४९॥ चतुःकेन्द्राधिपी द्वौ च  
 कौषपी च घनाधिप ॥ ऐरावतादिमस्यास्तेऽकुर्वल्लोकोत्तरोत्तरम् ॥ अनेनैव प्रकारेण वेत्ति  
 सर्वत्र बुद्धिमान् ॥५०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डसारांशो राजयोगादिविचारकथन  
 नाम चतुर्विंशोऽध्याय ॥२४॥

### विशेष योग

अब राजयोग मे विशेष योग कहते है उन्हें यथार्थ रूप से जानना चाहिये। त्रिकोण स्थान  
 लक्ष्मी का स्थान है और केन्द्र विष्णु का स्थान है। इनके सम्बन्ध स ही राजयोग होता है।  
 केन्द्रेश और पंचमेश के योग से मन्त्री योग होता है और यह योग पारिजात योग के  
 नियमानुसार हो तो प्रबल राजयोग और प्रबलमन्त्री योग होता है। लग्नेश वा धनश से योग हो  
 तो राजयोग नहीं होता है। लग्नेश का सुखेश से सम्बन्ध हो तो एक योग सुखेश का पंचमेश से  
 अथवा सप्तमेश से योग हो ता यह अमात्य योग है अर्थात् मन्त्री योग है। लग्नेश वा दशमेश से  
 योग हो तो राजा अथवा मन्त्री होता है। नवमेश का केन्द्रेश स योग हो तो राजा होता है।  
 नवम और दशम के स्वामी परस्पर एक दूसरे के स्थान म अथवा दोनो नवम मे वा दशम मे  
 हो तो सम्पूर्ण सम्पत्तिशाली होता है। यदि पारिजात योग भी होता हो तो निश्चय राजा होता  
 है। हाथी घोडे आदि युक्त उत्तम राज्य भाग्य होता है। गापुर अश मे हो तो राजाधिराज  
 होता है। सिंहासनाश मे हो तो चक्रवर्ती सम्पूर्ण पृथ्वी वा शासक राजा होता है। इस  
 सिंहासनाश योग मे जन्म लेने वाला जातक मानवथेष्ठ हरिश्चन्द्र अथवा राजा बलि के समान  
 होता है। बलियुग मे जन्म हो तो युधिष्ठिर शालिवाहन न समान होता है। गोपुर अश म होना  
 से नागार्जुन के समान राजा होता है। पारावताश म ऋषि मनु के समान होता है। तथा  
 देवलोके मे ईश्वररूप तथा दस लोक मे ईश्वराश अवताररूप मत्स्यावतार स कल्कि अवतार  
 पर्यन्त के अवतारो का आविर्भाव पारावताश म होता है। देवलाक मे इन्द्र होता है एरावताश  
 म स्वायम्भुव मनु के समान होता है। इस प्रकार सूक्ष्म विचार करके देखने म प्रतीत हागा कि  
 केन्द्र और कोण स्थान के योग ही सब महान् पुरुषो के जनक है। चार स्थान केन्द्र के तथा २

स्थान त्रिकोण के और धनस्थान ये ही सात स्थान सप्तर मे उत्तरोत्तर महान् विभूतियो  
जन्म देनेवाले है ॥ श्लोक ३६ से ५० ॥

इति श्री कृ० पा० हो० शा० पू० स० सा० राजयोगादिविचारकथन  
नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

### पराशर उवाच

अथात् सप्रवक्ष्यामि राजयोगान्द्विजोत्तम ॥ येषां विज्ञानमात्रेण नृपपूज्यो जनो भवेत् ॥१॥ ये  
ये योगा पुरा शम्भुमापिता शैलजायत ॥ तेषां सारमहं वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन ॥२॥  
चित्तपैत्कारके लग्ने जनुर्लग्न्ये वा द्विज ॥ राजयोगप्रदातारौ लग्नौ द्वौ प्रणतोदितौ ॥३॥  
आत्मकारकपुत्राम्या राजयोग प्रकल्पयेत् ॥ तनुपचमनायाम्या तथैव द्विजसत्तम ॥४॥  
विलग्नान्तरमाधीशः पुत्रात्माकारको द्वयो ॥ विप्रसंबधयोगेन ज्ञेया वीर्यबलान्विता ॥५॥  
लग्न्ये सप्तमे वापि लग्न्ये सप्तमाधिपे ॥ पुत्रात्मकारको विप्र लग्ने वा सप्तमेपि च ॥६॥  
सवधे वीक्षिते तत्र दृष्टं च पञ्चमाधिपे ॥ उच्चता च नवाशस्ये शुभग्रहनिरीक्षिते ॥७॥  
महाराजेनि योगोय सोत्र जातः सुखी नरः ॥ गजवाजिर्यैर्मुक्तः सेनासगमनेतया ॥८॥  
भाग्येशत्कारके लग्ने पचमे सप्तमेऽपि वा ॥ राजयोगप्रदातारौ गजवाजिघनैरपि ॥९॥  
कारकाद्द्विचतुर्ये च पचमे भावगे द्विजः ॥ शुभलेटो न सदेहो राजयोग ददाति  
च ॥१०॥

हे द्विजोत्तम ! अब और राजयोग कहते हैं जिनके ज्ञान से मनुष्य राजपूज्य होता है ॥१॥  
जो योग भगवान् शंकर ने पार्वती के सामने कहे थे, उन योगों में से कुछ सारभूत योग तुमको  
मुनाते है ॥२॥ भगवान् ने दो लग्नों से राजयोग का विचार कहा है, अतः उनके बचनानुसार  
जन्मलग्न तथा कारकलग्न से राजयोग का विचार करना चाहिये ॥३॥ आत्मकारक और  
पचमेश से राजयोग होता है। इसी प्रकार लग्ने और पचमेश से राजयोग का विचार  
करे ॥४॥ लग्न, पचमभाव का सम्बन्ध यदि आत्मकारक और पुत्रकारक से हो और लग्न,  
पचम तथा कारक बलवान् हो तो राजयोग होता है ॥५॥ लग्न अथवा सप्तमभाव में—लग्ने या  
सप्तमेश अथवा आत्मकारक और पुत्र कारक (अपने अपने भाव में या परस्पर भाव में)  
हो ॥६॥ या परस्पर सम्बन्ध हो अथवा दृष्टि हो और इसी प्रकार पूर्वोक्त सम्बन्ध पचमभाव  
या भावेश में हो, तथा उच्चराशि में अथवा उच्चराशि तथा नवाश में हो एव शुभग्रहों की दृष्टि  
हो तो यह 'महाराज' नामक राजयोग होता है। इसमें जन्म सेनवान् मनुष्य गुणी तथा हाथी,  
घोड़े मुक्त, चतुरंग सेनायुक्त महाराजा होता है ॥८॥ भाग्येश तथा आत्मकारक लग्न, पचम,  
सप्तम भाव में हो तो भी पूर्ववत् राजा होता है ॥९॥ आत्मकारक से २४५५ इन भावों में  
गुणग्रह हो तो राजयोग होता है ॥१०॥

राजात्प्रिये वृद्धे राजयोगेभ्यसापमुक्त् ॥ राजवशोद्भूयो विप्र राजयोगस्तथा भवेत् ॥११॥  
प्राणीराष्ट्रनाथादने तुर्ये च पचमे ॥ शुभलेटमुने विप्र राजा च भवति ध्रुवम् ॥१२॥ तुर्ये

पठ्भे पापे राजा च भवति ध्रुवम् ॥ योगद्वये शुभे पापे कथं स्यात्फलान्ध्रय ॥१३॥ न  
 दरिद्रो भवेज्जीवो न राजा जायते द्विज ॥ समानकुलज प्राज्ञ प्रतिष्ठा गौरवान्विता ॥१४॥  
 कारके पचमे शुक्र सितेन्दुपुतवीक्षित ॥ तन्वारुद्रपदे लग्ने राजवर्गो भवेन्नर ॥१५॥ जन्मार्गे  
 वापि कालार्गे लिप्तागे खेचरेक्षिते । रव्यादयस्त्रयस्थाने राजयोगप्रदायका ॥१६॥ जन्मार्गे च  
 हि होरागे कुलागे येन केन चित् ॥ रव्यादिवृष्टिमात्रेण स राजा भवति ध्रुवम् ॥१७॥ स्वक्षेत्रे  
 तु नवाशे वा द्वेष्काणे भानुजादय ॥ लग्न च सप्तम विप्र पश्यति राजयोगदा ॥१८॥ पूर्णदृष्टे  
 पूर्णयोगमर्द्धं चार्द्धं विधीयते ॥ पादेन पादयोग च राजयोगमिदं क्रमात् ॥१९॥ षट्कुण्डल्यतरे  
 विप्र पश्यति भास्करादय ॥ राजयोगप्रदातारौ निर्विशक द्विजोत्तम ॥२०॥ लग्नस्थाने  
 पूर्णदृष्ट्या सप्तमे स्वल्पवीक्षिते ॥ स्वल्पराज्यप्रदो विप्र पङ्कलेषु विचितयेत् ॥२१॥

आत्मकारक से तीसरे तथा छठे भाव में पापग्रह हो तो राजवशी के लिये राजयोग होता है ॥१३॥ लग्नेश और सप्तमेश से २।४।५ वे स्थान में शुभग्रह हो तो निश्चय राजा होता है ॥१४॥ तीसरे छठे भाव में पापग्रह हो तो राजा होता है। यह कह चुके हैं। अब कहते हैं कि यदि ३।६ में पाप और २।४।५ में शुभग्रह हो तो फल का निश्चय क्या हो ? ॥१३॥ तो उसका निर्णय कहते हैं कि जातक में तो राजा ही होगा न दरिद्र ही रहेगा। प्रतिष्ठायुक्त गौरवशाली होकर मध्यम श्रेणी का होगा ॥१४॥ पुत्रकारक शुक्र हो और शुक्लपक्ष के पूर्णचन्द्र से युक्त या दृष्ट हो। ऐसा शुक्र लग्न के आरुद्र राशि में (भाव) या लग्न में हो तो जातक राजा श्रेणी में होता है ॥१५॥ जन्मलग्न में या कालाग=होरालग्न में एव लिप्ताग=घटीलग्न में शुभग्रह स्थित हो तथा सूर्यादि क्रूरग्रह तीसरे भाव में हो तो राजयोग कारक होते हैं ॥१६॥ जन्मलग्न होरालग्न, घटी लग्न में स्थित ग्रह से सूर्यादि ग्रह की दृष्टिमात्र से 'राजयोग' होता है ॥१७॥ शनि, राहु, केतु, स्वक्षेत्र में, स्वनवाश में या स्वद्वेष्काण में स्थित होकर लग्न और सप्तमभाव को देखते हो तो 'राजयोग' कारक होते हैं ॥१८॥ यह राजयोग पूर्णदृष्टि से पूर्ण तथा अर्द्धदृष्टि से आधा और पाददृष्टि से चौथाई जानना ॥१९॥ इसी प्रकार पद्वर्ग की कुण्डली में सूर्यादि ग्रहों की दृष्टि हो तो राजयोग कारक होते हैं। (यहां 'षट्कुण्डल्या' मात्र या ही निर्देश है किन्तु वे छ कुण्डली कौनसी ली जाय यह नहीं बताया गया । अभी तब जिन कुण्डलियों से 'राजयोग' का विचार हो रहा है वे ये हैं। जन्मलग्न, आरुद्रलग्न, कारकलग्न होरालग्न, जपपदलग्न घटीलग्न। क्या यही छ लेनी अथवा पद्वर्ग कुण्डली लेना। यह विज्ञान विचार करें) लग्न में पूर्णदृष्टि हो और सप्तमभाव में पाददृष्टि हो तो साधारण धनीयोग जानना ॥२१॥

एव नवाशकुण्डल्या द्वेष्कार्णेपि विचिन्तयेत् ॥ लग्नसप्तमयो खेटो राजयोगप्रदायक ॥२२॥  
 उच्चग्रहे राजयोगो लग्नद्वयमथापि चेत् ॥ राशेर्द्वेष्काणतोऽज्ञाच्च राशेरशादयापि वा ॥२३॥  
 यद्वा राशिदुकाणाभ्यां लग्ने दृष्टे तु योगत ॥ प्रायेणैव जातव तु प्रभूणामेवदृश्यते ॥२४॥  
 जन्मकालघटीलग्न एकेनैव निरीक्षिते । तच्चाहृदे तु सप्राप्ते चद्राक्रान्ते विशेषत ॥२५॥ क्रांते  
 वा गुरुशुकान्या केनाप्युच्चग्रहेण वा ॥ दुष्टार्गलाग्रहाभावे राजयोगो न सशय ॥२६॥  
 शुभाहृदे तत्र चद्रे धने देवगुरुस्तथा ॥ उच्चदृष्टे ग्रहे वाय ह्युच्चखेटे तथा ग्रहे ॥२७॥  
 राजयोगप्रदाता च निर्विशक द्विजोत्तम ॥ यत्रयेपि शुभाहृदे चद्रे सति समानकम् ॥२८॥ उच्चग्रहे

राजयोगो लग्नप्रथमयापि वा ॥ आरूढमवलबाश्च योगो वाहनदाः स्मृताः ॥२९॥ शुक्रास्त्रे ततः  
शुके तृतीये वाहनार्थवान् ॥ अन्योन्य पश्यतो विप्र ईत्याचार्यनिशाधिपौ ॥३०॥

इसी प्रकार नवाश लग्न और द्रेष्काण में भी विचार करो लग्न तथा सप्तमभावस्थित ग्रह राजयोग कारक होता है ॥२२॥ जन्मलग्न तथा होरालग्न में (द्रेष्काण और नवाश के सहयोग से यहा दूसरा होरालग्न जानना) ग्रह उच्च राशि में हो, राशि के द्रेष्काण में अथवा राशि नवाश में या ग्रह अपने नवाश में उच्चका हो ॥२३॥ अथवा जन्म लग्न और द्रेष्काण में लग्न को देखते हो तो ऐसा श्रेष्ठ योग प्राय बड़े आदमियों के ही होता है ॥२४॥ जन्मलग्न, होरालग्न तथा घटीलग्न को एक ही ग्रह देखता हो तथा वही ग्रह आरूढलग्न में हो और विभेप करके चन्द्रमा से युक्त हो अथवा गुरु शुक्र से युक्त हो, अथवा किसी उच्चग्रह में युक्त हो तथा अर्लायोगकारक पापग्रह न हो तो 'राजयोग' होता है ॥२५॥२६॥ चन्द्रमा वासुद लग्न में दूसरे भाव में गुरु हो उच्च ग्रह की दृष्टि हो। चन्द्र तथा गुरु भी उच्च के हो तो राजयोगकारक है ॥२७॥२८॥ जन्म लग्न और आरूढ लग्न इनमें उच्च वा ग्रह होने से तो राजयोग कारक होता है, आरूढ के अवलम्बन से वाहन (सवारी) होता है ॥२९॥ शुक्र में चन्द्रमा नीसरे अथवा चन्द्रमा से शुक्र तीसरे भाव में हो। अथवा चन्द्र शुक्र परस्पर देगते हो तो वाहन तथा सम्पत्तिशाली होता है ॥३०॥

आरूढोपि तृतीयस्थे तथा सबधकारक ॥ जन्मलग्नोपि सप्तमे जायते वाहनार्थवान् ॥३१॥ शुभे लग्ने शुभे त्वर्यं तृतीये पापक्षेचरः ॥ चतुर्यं तु शुभे प्राप्ते राजा वा तत्समीपि वा ॥३२॥ उच्चो वा हरिणाकौ वा जीवो वा युक्त एव वा ॥ एको बली धनगतः श्रियं दिशति देहिन् ॥३३॥ लग्न पश्यति ये खेटास्ते सर्वे शुभदायिनः ॥ नीचखेटोपि लग्ने चेत्यस्येद्राजा प्रकीर्तितः ॥३४॥ पष्ठाष्टमे तृतीये च लाभे सबधनीचकृत् ॥ यो ग्रहः पश्यते लग्न राजयोगप्रदायकः ॥३५॥ राजयोगो जन्मलग्न पश्येदुच्चग्रहो यदि ॥ पष्ठाष्टमगते नीचे लग्ने पश्यति योगकृत् ॥३६॥ पष्ठाष्टमाधिपे नीचे लग्न पश्यति वाय वा ॥ तृतीये लाभे नीचे लग्न पश्यति राज्यदः ॥३७॥ पष्ठाष्टमाधिपौ खेटौशुभौयौ कौ च नाथितौ ॥ पश्यतो जन्मलग्न च राजयोग उदाहृतः ॥३८॥ घटे तु पचमे घटे स्थिरे तु नवमे द्विन ॥ उभये केन्द्रसदृष्टे राजयोगप्रदायकः ॥३९॥

इसी प्रकार चन्द्र, शुक्र आरूढ से तृतीयभाव में हों और स्थान सम्बन्ध हो, और यदि यह योग न होकर अन्य राशि में स्थित होकर भी सम्बन्ध करते हो तो पूर्वोक्त योग करने है ॥३१॥ लग्न, द्वितीय, चतुर्थ भाव में शुभ तथा तृतीयभाव में पापग्रह हो तो राजा या राजा के समान होता है ॥३२॥ चन्द्रमा, गुरु या शुक्र अथवा उच्चस्थ ग्रह द्वितीय भाव में हो तो जातक मन्थीवान् होता है ॥३३॥ जो कोई भी यह लग्न को देखते हैं, वे सब शुभमन्थक है। (शुभमन्थ दाता है) नीचगनिग्न ग्रह भी लग्न में हो या लग्न को देगे तो राजा होता है ॥३४॥ ६।८।३।११ म्नातो मे नीचम्य ग्रह भी सम्बन्ध कारक हो और लग्न को देगा तो तो राजयोग कारक होता है ॥३५॥ यदि उच्चगनिग्न ग्रह जन्म लग्न को देगा तो और ६।८



स्थान मे नीचराशिगत ग्रह लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक है॥३६॥ ६।८ का स्वामी नीच मे हो लग्न को देखता हो तो अथवा ३।११ स्थान मे नीच का यह लग्न को देखता हो तो राज योग कारक होता है॥३७॥ ६।८ के स्वामी शुभ या पाप कोई भी हो किन्तु आश्रित = बलहीन, आक्रान्त न हो और जन्मलग्न को देखते हो तो भी राजयोग होता है॥३८॥ चर राशि पञ्चम भाव मे तथा षष्ठभाव मे स्थिर राशि हो और नवम भाव मे द्विस्वभाव राशि हो और इनके स्वामी केन्द्रेश से दृष्टि सम्बन्ध करते हो तो राजयोग होता है॥३९॥

चतुर्थे शुभलेटश्रेद्राजयोग प्रकीर्तित ॥ बलपुस्तचतुर्योपि राजादिवु यथोत्तरम् ॥४०॥ चतुर्थे स्वल्पफल स्थिरे तुर्ये च मध्यमम् ॥ द्वि स्वभावे पूर्णफल राजयोगप्रदायक ॥४१॥ अप्रहात्सग्रहो ज्यायानिति रीत्या विचिन्तयेत् ॥ उच्चयुक्ती ग्रह कश्चित्त्लामगो वा चतुर्यग ॥४२॥ धनस्थितो वा लग्न चेत्यश्वेद्वाहनकारक ॥ राजयोगाद्यभावे तु धनघान्यविनिर्णय ॥४३॥ शुभपापदृशा लग्ने तत केन्द्रादियोगत ॥ यस्य लग्नाशके सौम्या प्रबल्य तस्य निश्चितम् ॥४४॥ कुबेरश्च पतगश्च हालाशश्च किरीटक ॥ विह्वलाशसमायाशनोहन किन्नराशक ॥४५॥ भुजगेन्द्रांशकौ लीलाकोकिलाशोत्तम स्मृत ॥ राशीना द्वादशाशेषु ग्रहस्थित्या फल वदेत् ॥४६॥ केन्द्राशाश्रेषु शुभदा राजयोगफलप्रदा ॥ द्विपड्यैकादशाशा मध्यमा परिकीर्तिता ॥४७॥

चतुर्थ भाव मे शुभग्रह हो तो राजयोग होता है। चतुर्थ भाव भी बलयुक्त हो और ग्रह भी हो तो राजयोग होता है॥४०॥ किन्तु चतुर्थभाव मे चर राशि हो तो स्वल्प फल, और स्थिर राशि हो तो मध्यम फल तथा द्विस्वभावरशि हो तो पूर्ण फल होता है॥४१॥ 'अप्रहात् सग्रहो ज्यायान्' इसी नियम से विचार करना चाहिए। उच्चराशि स्थित ग्रह यदि धन (२) नाम (११) चतुर्थ भाव मे हो और लग्न पर दृष्टि हो तो (यहा द्वितीय भावस्थ ग्रह लग्न को किस दृष्टि से देखेगा यह तो भगवान् ही जाने) वाहन कारक योग है। राजयोग न होने पर धनघान्य युक्त होता है॥४३॥ लग्न मे शुभ या पापग्रह की दृष्टि हो तथा केन्द्रस्थानो से भी संयोग हो तथा लग्न के नवाशे मे सौम्यग्रह हो तो योग की प्रबलता जानना॥४४॥ भावरशिषो के द्वादशाश मे क्रमश ये नाम निर्देश करना। कुबेर पतग (सूर्य) हालाश किरीटक विह्वलाश समायाश उत्तमाश मोहन किन्नर भुजग शन्द्र कोकिल, ये द्वादश नाम हैं। इनमे ग्रहस्थित होने पर फलदायक होते है। इनमे केन्द्रस्थ अश शुभ और राजयोग कारक होते है। २।६।८।११ मध्यम और बाकी अश अघम है॥४०—४७॥

अन्याशास्त्वधमा ज्ञेया एवमशविनिर्णय ॥ ग्रहाणा चैव लग्नानामरागत्या फल वदेत् ॥४८॥ लग्नोष्वमगोष्वेषु जायते यदि मानव ॥ यस्य जन्मनि चद्रो वा युक्त स्वाशेषु सस्थित ॥४९॥ तस्यैते कथिता योगा सकला परिकीर्तिता ॥ पूर्ण न्यूनफल विप्र ग्रहयुक्तानुसारत ॥५०॥ अथ राजचिह्नयोगानाह—कारकाचतुर्यभावस्थी सितेन्दू द्विजसत्तम ॥ आदायते विशेषश्च राजचिह्नेन सपुत ॥५१॥ ध्वजा वा दुदुभेनादास्तिष्ठति च दिवानिशम् ॥ सर्वेषा चैव योगानामविकृद्धान् विचिन्तयेत् ॥५२॥

ग्रहो तथा लग्नो का अश के नामानुसार ही फल कहना ॥४८॥ इव अश युक्त लग्न मे जिसका जन्म होता है अथवा जिसके जन्म मे चन्द्रमा अपने अश मे हो उसी जातक के लिए ये योग सफल है ॥ हे विप्र! पूर्ण फल या न्यून फल ग्रह के बलावल के अनुसार जानना ४८-५० ॥

राजचिह्नयोग-हे द्विजोत्तम! आत्मकारक से शुक्र और चन्द्रमा चौथे भाव मे हो, वह जातक राजचिह्न युक्त होगा ॥५१॥ उसके महल पर ध्वजा अथवा दुदभी (नगाडा आदि) वाद्य आदि रहते है। उपर्युक्त सभी योगो का फल देश, काल, परिस्थिति, पात्र आदि का विचार करके जो और जैसा फल सम्भव हो वैसा ही फल का निर्देश करना चाहिए ॥५२॥

अथ धीयोगानाह-कारके वा तथाख्ये त्रिपष्ठे चागता ग्रहाः ॥ वीक्षते कारकाल्प मातृनाथेन दृष्टियुक् ॥५३॥ बुद्धिमाञ्जायते बालस्तीव्रबुद्धिर्विचक्षणः ॥ तथा तृतीयैलेदेश कारकलग्ना वीक्षते ॥५४॥ तथापि पूर्ववद्योगात्सुधोमाञ्जायते मरः ॥ शास्त्रवेत्ता कविर्वैदो भवत्यत्र न संशयः ॥५५॥

बुद्धियोग-कारक लग्न तथा आरूढ लग्न ३।६ यह हो और कारक लग्न को देखते हो, तथा चतुर्थेश भी देखता हो तो वासक तीव्रबुद्धि और चतुर होता है ॥ तथा तृतीयेश भी कारक लग्न तथा आरूढ लग्न को देखते हो तो भी वासक बुद्धिमान्, शास्त्रवेत्ता, कवि और हर काम मे चतुर होता है। यह निश्चय है ॥५३ - ५५॥

अथ सुखयोगमाह-लग्नाच्च कारकाद्वापि चतुर्थे यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या भवति सुखिनो नराः ॥५६॥

सुखयोग-जन्मलग्न तथा कारकलग्न से चतुर्थ भाव मे ग्रह हो, और लग्न तथा कारक को देखते हो जो जातक सुखी होता है ॥५६॥

अथ सेनाधीशयोगमाह-कारके वा तथा ख्ये लग्नाद्वा सप्तमाद्द्विज ॥ तृतीये षष्ठ्ये पापाः सेनाधीशो भवेन्नरः ॥५७॥

सेनाधीश योग-कारकलग्न या आरूढलग्न से तथा जन्मलग्न या सप्तमभाव से ३।६ भाव मे पापग्रह हो तो जातक सेनापति होता है ॥५७॥

अथ प्रधानयोगानाह-राज्येशोपि अनुर्लभ्रादमात्यैरापुतेक्षिते ॥ अमात्यकारकेणापि प्रधानत्व नृपालये ॥५८॥ लाभे च वीक्षिते लाभे पापदृष्टिविचर्जिते ॥ तथा राज्यातये विप्र प्रधानत्व कुलेपि च ॥५९॥

प्रधानमन्त्रीयोग-लग्न (जन्मलग्न) मे दशमेश को अमात्यकारक स्थितराजि देवता हो या युक्त हो तथा अमात्य कारक से भी युत दृष्ट हो तो प्रधान मन्त्री होता है ॥५८॥ अमात्य कारक दशमभाव मे या लाभ मे हो या देसता हो किन्तु पापदृष्टि रहित हो तो प्रधानमन्त्री होता है और कुज मं भी प्रधान होता है ॥५९॥

स्थान मे नीचराशियत ग्रह लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक है॥३६॥ ६।८ का स्वामी नीच मे हो लग्न को देखता हो तो अथवा ३।११ स्थान मे नीच का ग्रह लग्न को देखता हो तो राज योग कारक होता है॥३७॥ ६।८ के स्वामी शुभ या पाप कोई भी हो किन्तु आश्रित = बलहीन, आक्रान्त न हो और जन्मलग्न को देखते हो तो भी राजयोग होता है॥३८॥ चर राशि पञ्चम भाव मे तथा षष्ठभावे मे स्थिर राशि हो और नवम भाव मे द्विस्वभाव राशि हो और इनके स्वामी केन्द्रेश से दृष्टि सम्बन्ध करते हो तो राजयोग होता है॥३९॥

चतुर्थे शुभलेढश्रेद्वाजयोग प्रकीर्तित ॥ बलयुक्तचतुर्थोपि राजादिषु मयोत्तरम् ॥४०॥ चो तुर्थे स्वल्पफल स्थिरे तुर्थे च मध्यमम् ॥ द्विस्वभावे पूर्णफल राजयोगप्रदायक ॥४१॥ अग्रहात्सप्रहो ज्यायानिति रीत्या विचिन्तयेत् ॥ उच्चयुक्तो ग्रह कश्चिस्लामगो वा चतुर्थग ॥४२॥ धनस्थितो वा लग्न चेत्यप्येद्वाहनकारक ॥ राजयोगाद्यभावे तु धनधान्यविनिर्णय ॥४३॥ शुभपापदृशा लग्ने ततः केन्द्रादियोगत ॥ यस्य लग्नाशके सौम्या प्राबल्य तस्य निश्चितम् ॥४४॥ कुबेरश्च पतगश्च हालाशश्च किरीटक ॥ विह्वलाशसमयाशमोहन किन्नराशक ॥४५॥ भुजगेन्द्राशकौ लीलाकोकिलाशोत्तम स्मृत ॥ राशाना द्वादशाशेषु ग्रहस्थित्या फल वदेत् ॥४६॥ केन्द्राशाश्रेषु शुभदा राजयोगफलप्रदा ॥ द्विपड्यैकादशाशा मध्यमा परिकीर्तिता ॥४७॥

चतुर्थ भाव मे शुभग्रह हो तो राजयोग होता है। चतुर्थ भाव भी बलयुक्त हो और ग्रह भी हो तो राजयोग होता है॥४०॥ किन्तु चतुर्थभाव मे चर राशि हो तो स्वल्प फल, और स्थिर राशि हो तो मध्यम फल तथा द्विस्वभावराशि हो तो पूर्ण फल होता है॥४१॥ अग्रहात् सप्रहो ज्यायान्० इसी नियम से विचार करना चाहिए। उच्चराशि स्थित ग्रह यदि धन (२) लग्न (११) चतुर्थ भाव मे हो और लग्न पर दृष्टि हो तो (यहा द्वितीय भावस्थ ग्रह लग्न को किस दृष्टि से देखेगा यह तो भगवान् ही जाने) वाहन कारक योग है। राजयोग न होने पर धनधान्य युक्त होता है॥४३॥ लग्न मे शुभ या पापग्रह को दृष्टि हो तथा केन्द्रस्थानो से भी संयोग हो तथा लग्न के नवाश मे सौम्यग्रह हो तो योग की प्रबलता जानना॥४४॥ भावराशियो के द्वादशाश मे क्रमश ये नाम निर्देश करना। कुबेर पतग (सूर्य) हालाश किरीटक विह्वलाश समयाश उत्तमाश मोहन किन्नर भुजग इन्द्र कोकिल ये द्वादश नाम है। इनमे ग्रहस्थित होने पर फलदायक होते है। इनमे केन्द्रस्थ अश शुभ और राजयोग कारक होते है। २।६।८।११ मध्यम और बाकी अश अधम है॥४०—४७॥

अन्याशास्त्वधमा ज्ञेया एवमशविनिर्णय ॥ ग्रहाणा चैव लग्नानामशगत्या फल वदेत् ॥४८॥ लग्नेष्वराशेषुप्येव जायते यदि मानव ॥ यस्य जन्मनि चद्रो वा युक्तः स्वशेषु सत्स्थित ॥४९॥ तस्यैते षड्विधा योगा सफला परिकीर्तिता ॥ पूर्ण न्यूनफल विप्र ग्रहयुक्तानुसारत ॥५०॥ अथ राजचिह्नयोगानाह—कारकाचतुर्थभावस्थी सितेन्दू द्विजसत्तम ॥ आदावते विरोधश्च राजचिह्नेन सपुत ॥५१॥ ध्वजा वा दुहुभेर्नादास्तिष्ठति च दिवानिशम् ॥ सर्वेषा चैव योगानामविरुद्धान् विचिन्तयेत् ॥५२॥

ग्रहो तथा लग्नो का अश के नामानुसार ही फल कहना ॥४८॥ इन अश युक्त लग्न में जिसका जन्म होता है अथवा जिसके जन्म में चन्द्रमा अपने अश में हो उसी जातक के लिए ये योग सफल हैं ॥ हे विप्र! पूर्ण फल या न्यून फल ग्रह के बलाबल के अनुसार जानना ४८-५० ॥

राजचिह्नयोग—हे द्विजोत्तम! आत्मकारक से शुक्र और चन्द्रमा चौथे भाव में हो, वह जातक राजचिह्न युक्त होगा ॥५१॥ उसके महल पर ध्वजा अथवा दुदभी (नगाडा आदि) वाद्य आदि रहते हैं। उपर्युक्त सभी योगों का फल देश, काल, परिस्थिति, पात्र आदि का विचार करके जो और जैसा फल सम्भव हो वैसा ही फल का निर्देश करना चाहिए ॥५२॥

अथ धीयोगानाह—कारके वा तथारूढे त्रिपल्ले चागता ग्रहाः ॥ बीसते कारकाल्लग्न मातृनाथेन दृष्टियुक् ॥५३॥ बुद्धिमाञ्जापते बालस्तीव्रबुद्धिर्विचक्षणः ॥ तथा तृतीयेऽक्षेदेश कारकलप्री वीक्षते ॥५४॥ तथापि पूर्वबद्योगात्सुधीमाञ्जापते नरः ॥ शास्त्रवेत्ता कविर्वदन्ती भवत्यथ न सशयः ॥५५॥

बुद्धियोग—कारक लग्न तथा आरूढ लग्न ३।६ ग्रह हो और कारक लग्न को देखते हो, तथा चतुर्थेश भी देखता हो तो बालक तीव्रबुद्धि और चतुर होता है ॥ तथा तृतीयेश भी कारक लग्न तथा आरूढ लग्न को देखते हो तो भी बालक बुद्धिमान्, शास्त्रवेत्ता, कवि और हर काम में चतुर होता है। यह निश्चय है ॥५३-५५॥

अथ सुखयोगमाह—सप्राञ्च कारकाद्वापि चतुर्ये यस्य वै द्विजः ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या भवति सुखिनो नरः ॥५६॥

सुखयोग—जन्मलग्न तथा कारकलग्न से चतुर्य भाव में ग्रह हो, और लग्न तथा कारक को देखते हो जो जातक सुखी होता है ॥५६॥

अथ सेनाधीशयोगमाह—कारके वा तथा रूढे लग्नादा सप्तमाद्विजः ॥ तृतीये षष्ठ्ये पाया सेनाधीशो भवेन्नरः ॥५७॥

सेनाधीश योग—कारकलग्न या आरूढलग्न से तथा जन्मलग्न या सप्तमभाव से ३।६ भाव में पापग्रह हो तो जातक सेनापति होता है ॥५७॥

अथ प्रधानयोगानाह—राज्येशोपि जनुर्लप्रादमात्येणपुतेक्षिते ॥ अमात्यकारकेणापि प्रधानत्व नृपालये ॥५८॥ लाभे च वीक्षिते लाभे पापदृष्टिविचरिते ॥ तथा राज्यालये विप्र प्रधानत्व कुलेपि च ॥५९॥

प्रधानमन्त्रीयोग—लग्न (जन्मलग्न) में दशमेश को अमात्यकारक स्थितराजि देयता हो या युक्त हो तथा अमात्य कारक से भी युक्त दृष्ट हो तो प्रधान मन्त्री होता है ॥५८॥ अमात्य कारक दशमभाव में या लाभ में हो या देखता हो किन्तु पापदृष्टि रहित हो तो प्रधानमन्त्री होता है और कुल में भी प्रधान होता है ॥५९॥

अमात्य कारकेणापि कारकेन्द्रेणसयुते ॥ तीव्रबुद्धिभूतो बाल सेनाधीशोऽपि जायते ॥६०॥  
 स्वलेत्रेऽयं च मध्ये वा चार्द्धके द्विजसप्तम ॥६१॥ क्रमेण भाग्यवृद्धिः स्यान्नृपवेशोय वा भवेत्  
 ॥६२॥ पचमात्कारके लग्ने सप्तमे नवमेपि वा ॥ राजयोग इति प्रोक्तो विख्यातो विजयी भवेत्  
 ॥६३॥ कारकात्केद्रकोणेषु तुगर्धे चापि सस्थिते ॥ भाग्यपेन युतो वृष्टो राजमन्त्री प्रजायते ॥६४॥  
 कारके यस्य राशीने लग्ने सयुतेऽक्षिते ॥ मन्त्रित्वमुह्ययोगेऽयं चार्द्धके नात्र तस्य ॥६५॥ कारके  
 शुभसयुक्ते पचमे सप्तमेपि वा ॥ यत्कारके पदा प्राप्ते तत्कारकधन लभेत् ॥६६॥ नीचेक्षेत्रवलैर्युक्ते  
 उक्तस्थानगतेर्द्विज ॥ तदा शुभफलं वाच्यं कारकेणो न दृष्टियुक् ॥६७॥

अमात्य कारक से कारकेन्द्र (आत्मकारक) राशिनाथ (राशिस्वामी) युत हो तो बाल  
 अवस्था से ही तीव्र बुद्धि सम्पन्न तथा सेनापति होता है ॥६०॥ अमात्यकारक स्वगृही हो या  
 दशमभाव में हो तो वृद्धावस्था में प्रधानमन्त्री होता है ॥६१॥ इस योग में या तो क्रम से  
 भाग्यवृद्धि हो या केवल नाममात्र का राजा हो ॥६२॥ पचमभाव से कारकलग्न सप्तमभाव में  
 या नवमभाव में हो तो राजयोग होता है। इस योग में उत्पन्न हुआ विख्यात और विजयी होता  
 है ॥६३॥ आत्मकारक से भाग्येक केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हो अथवा उच्चराशि में हो  
 भाग्येशसे युत अथवा दृष्ट हो तो प्रधानमन्त्री होता है ॥६४॥ कारकभाव कुण्डली में  
 अमात्यकारकराशि का स्वामी लग्न में अथवा अमात्यकारक में युक्त या दृष्ट हो तो वृद्धावस्था  
 में प्रधानमन्त्री होता है ॥६५॥ अमात्यकारक शुभग्रह युक्त होकर पचमभाव या सप्तमभाव में  
 हो तो मन्त्री होता है। यह योग जिस कारक के साथ ही उस जातक को बही पद प्राप्त होता  
 है ॥६६॥ बलवान् पापीग्रह पचम या सप्तमभाव में हो और अमात्यकारक से युत या दृष्ट हो तो भी  
 मन्त्री समान होता है ॥६७॥

भाग्याह्वयपदे लग्ने कारकाग्रवमेपि वा ॥ राज्ययोगप्रदातारी निर्विशक द्विजोत्तम ॥६८॥  
 लाभेशो लाभभवने पापदृष्टिदिवर्जित ॥ कारके शुभसयुक्ते लाभ तस्य नृपालये ॥६९॥ शुभर्धे  
 शुभसयुक्ते शुभदृष्टे च राज्यमाक् ॥ धनुलग्ने तथा रुदे एतस्मिन् राज्यभागभवेत् ॥७०॥

भाग्यस्थान का आरूढ पद लग्नगत हो अथवा अमात्यकारक में नवमभाव में हो तो  
 राजयोग कारक है ॥६८॥ लाभेश लाभस्थान में हो, पापहीनरहित हो तथा आत्मकारक  
 शुभग्रह युक्त हो तो राजा से लाभ होता है ॥६९॥ आत्मकारक शुभराशि में या शुभग्रह अथवा  
 शुभदृष्टि हो और यह योग धनु लग्न में अथवा धनुलग्न के आरूढ स्थान में हो तो राजभोगी  
 होता है ॥७०॥

अथ रसायनसिद्धियोगः—स्वाशे बर्गोत्तम केद्रे पुष्येश कारकोऽयं वा ॥ राज्याह्वयपदे वापि  
 तदा सिध्येदसायनम् ॥७१॥ कारके कारकाह्वये धने स्वर्लोच्चने लग्ने ॥ ऋद्धिर्वा सिद्धिसयुक्ते  
 तथा तत्ररसायनम् ॥७२॥ धर्मकर्माधिनी स्वोच्छे तथा बर्गोत्तमे यदि ॥ नवमे पचमे लाभे  
 राज्याप्तिर्वा रसायनम् ॥७३॥ मूलत्रिकोणगे लग्ने कारकेऽसौ द्विजोत्तम ॥ मन्त्रनाथेन  
 सयुक्तं कीर्तिपुत्ररसायनम् ॥७४॥ धर्मेशो धर्मलाभस्य पचमेशोपि पचमे ॥ कारकेऽयुते दृष्टे  
 स्वच्छापूर्णाधानि च ॥७५॥

रसायन सिद्धियोग-आत्मकारक अथवा नवमेश अपने नवाश में हो या वर्गोत्तमी हो तथा ऐसा होकर केन्द्रस्थानो में हो या दशमभाव के आरूढपद में हो तो रसायन सिद्धि प्राप्त होती है॥७१॥ आत्मकारक कारकलग्न में हो, धनेश स्वगृही या उच्च का हो तो रसायनी होता है॥७२॥ नवमेश तथा दशमेश उच्च के होकर या वर्गोत्तमी होकर नवम, पचम या लाभस्थान में हो तो राज्यप्राप्ति या रसायन सिद्धि होती है॥७३॥ आत्मकारक का स्वामी मूलत्रिकोणी होकर लग्न में हो तथा पचमेश से युक्त हो तो कीर्ति भी होती है और रसायन भी सिद्ध होती है॥७४॥ नवमेश नवम या लाभस्थ हो तथा पचमेश भी पचमभाव में हो और आत्मकारक से युक्त या दृष्ट हो तो इच्छानुसार धन की प्राप्ति होती है॥७५॥

स्वोच्चारि पदसंयुक्ते कारकाः शुभालये ॥ सतत सुखमाप्नोति धातुभस्मरसायनात् ॥७६॥  
 मुखेशे मानभावस्य भानेशे सुखसंयुते ॥ लग्नकारकयोर्दृष्टे मिषयोगोतिसमतः ॥७७॥ कर्मेशो नवमे पश्य मुखेशः पचमेपि वा ॥ परस्पर तदीशो वा स्वर्णाग्निस्तत्र कर्मतः ॥७८॥ वागीश कारके लग्ने स्वोच्चारिपदसंयुते ॥ भौमांशो मृत्युरादित्यः सौख्येशः कालसाकः ॥७९॥ सौम्याशोर्द्धप्रहरकः स्पष्टकर्म स्वदेशतः ॥ एव प्राणपदस्यष्टे पूर्वाध्याये मया कृतम् ॥८०॥ गुलिके कारकांशे च पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज ॥ सत्य चौर्याग्निनीतिश्च स चौरौ जायतेऽप्यवा ॥८१॥ सगुलिके कारकांशे ह्यन्यग्रहयुतेक्षिते ॥ बुधदृष्टियुते वापि अडवृद्धिः प्रजायते ॥८२॥ कारकांशे स्थिते केतो रबिसोमनिरीक्षिते ॥ बलवीर्येण रहितो जायते सोपि मानवः ॥८३॥ सकेतो कारकांशे तु बुधयुक्निरीक्षिते ॥ राजयोनि जन्म चेतयादासोपुत्रोय वा भवेत् ॥८४॥

आत्मकारक का स्वामी स्वोच्च, मूलत्रिकोणी हो और शुभस्थान में स्थित हो तो निरंतर सुखी और पारे की भस्म से रसायन का ज्ञाता हो॥७६॥ मुखेश दशमस्थान में हो एव दशमेश सुखभाव में हो लग्न और कारक को देखते हैं तो राजवैद्य और सम्मानो होता है॥७७॥ जिसके दशमेश नवमभाव में हो और मुखेश पचमभाव में हो अथवा नवमेश दशम में और पचमेश चतुर्थ में हो तो उद्योग करने से मुक्कण सिद्धि होती है॥७८॥ बृहस्पति कारक में या लग्न में उच्चादि राशि का होकर स्थित हो, और मंगल का नवाश अष्टमभाव में हो, सूर्य तथा मुखेश कालाशक में हो॥७९॥ बुध के नवाश 'अर्दयाम' हो तो अपने देश में ही सिद्धि प्राप्त होती है। यह हमने पूर्वाध्याय 'प्राणपद' साधन के विषय में स्पष्ट कहा है॥८०॥ गुलिक लग्न में या कारकाश में आत्मकारक स्थित हो और पूर्ण चन्द्र दृष्ट हो तो चोरी आदिकनीतिमान अथवा चोर होता है॥८१॥ आत्मकारक का नवाश -गुलिक (नग्यश) में हो और विमी में युक्त अथवा दृष्ट हो या बुध की दृष्टि हो तो अडवृद्धि होती है॥८२॥ कारकाश में केतु हो सूर्य, चन्द्र से दृष्ट हो तथा बलहीन हो तो अडवृद्धि होती है॥८३॥ कारकाश में केतु बुध तथा शुक्र दृष्ट हो तो राजकुल में दानी का पुत्र होता है॥८४॥

मकेतो कारकाशे वा मृगुभास्करबीक्षिते ॥ सिद्ध शास्त्रातरे छाह्य विशेष राजयोगकम् ॥८५॥ रुद्रेण यत्पुरा प्रोक्त तन्मया गदितं द्विज ॥ देय स्वशाप्यपुत्रेभ्यो न देयं यस्य कस्यचित् ॥८६॥ कुपुत्राय कुशिल्याय प्राणाने न प्रकाशयेत् ॥ पुह्याद्गुह्यामिदं शास्त्रं प्राप्तं गम्भ्रमादत ॥८७॥

इति श्रीबृहस्पतिराशरहोराशास्त्रे पूर्वषण्ढे रासयोगादिकथन पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥२५॥

कारकाक्ष मे केतु, शुक्र, सूर्य दृष्ट हो तो भी दासीपुत्र होता है। (इन योगों की प्रशंसा) विशेष राजयोग अन्यशास्त्रों से भी ग्रहण करना॥८५॥ प्राचीन काल में जो महादेवजी ने कहा था, हमने तुमको सुनाया है। यह शास्त्र अपने शिष्य या पुत्र को देना चाहिए। जिस किसी को तथा कुपुत्र और कुशिष्य को भी नहीं देना चाहिए। यह अतिगुप्त शास्त्र भगवान् शंकर की कृपा से प्राप्त हुआ है॥८६॥८७॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० ह० भा० प्र० राजयोगादि कथन नाम  
पञ्चविंशोऽध्याय ॥२५॥

### अथ धनयोगाध्यायमाह

पराशर उवाच—अयातः सप्रवक्ष्यामि धनयोग विशेषतः ॥ पचमे तु नृगुक्षेत्रे तस्मिन् शुक्रेण संयुते ॥१॥ लाभे शनैश्चरयुते बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे सौम्यरक्षेत्रे तस्मिन्सौम्ययुते यदि ॥२॥ लाभे च चंद्रभौमी तु बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन्सूर्यसुतो यदि ॥३॥ लाभे सोमात्मजस्य वा बहुद्रव्यस्य नायकः। पचमे तु रविक्षेत्रे तस्मिन्रवियुते यदि॥४॥ लाभे रवींद्रपूज्यस्य बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन् शनियुते यदि ॥ लाभे भीमेन संयुक्ते बहुद्रव्यस्य नायकः ॥५॥ पचमे तु गुरुक्षेत्रे तस्मिन् गुरुयुते यदि ॥ लाभे तु चंद्रभौमी चंद्रहृद्रव्यस्य नायकः ॥६॥ भानुक्षेत्रगते तस्मिन्लघ्रे भानौ स्थिते यदि ॥ भीमेन गुरुणा युक्ते दृष्टौ वास्याद्युतो धनी ॥७॥ चंद्रक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्ध्रयुते यदि ॥ जीवभौमयुते यस्तु दृष्टे जातो धनी भवेत् ॥८॥ भौमक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्भौमयुते यदि ॥ सोमशुक्रार्कजैर्युक्ते दृष्टे श्रीमान्नरो भवेत् ॥९॥ गुरुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्गुरुयुते यदि ॥ सौम्यभौमयुते दृष्टे जातो यस्तु धनीश्वरः ॥१०॥ बुधक्षेत्रयुते तस्मिन् दृष्टे सौम्ययुते यदि ॥ शनिशुक्रयुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः ॥११॥

### धनयोग विचार

अब विशेष धनयोग कहते हैं। पचमभाव में शुक्र की राशि हो और शुक्र युक्त हो। लाभस्थान में शनि हो तो विशेष धनी होता है॥१॥ पचमभाव में बुध स्वगृही हो। लाभस्थान में चन्द्र, मंगल हो तो विशेष धनी होता है॥२॥ पचमभाव में शनि की राशि में सूर्य स्थित हो। लाभस्थान में बुध हो तो महाधनी होता है॥३॥ पचमभाव में सूर्य स्वगृही हो। लाभ स्थान में सूर्य, चन्द्र, गुरु हो तो विशेष धनी होता है॥४॥ पचमभाव में शनि स्वगृही हो। लाभस्थान में मंगल हो तो विशेष धनी होता है॥५॥ पचमभाव में गुरु स्वगृही हो। लाभस्थान में चन्द्रमंगल हो तो विशेष धनी होता है॥६॥ पचमभाव में सूर्य स्वगृही हो मंगल अथवा गुरु में दृष्ट या युक्त हो तो विशेष धनी होता है॥७॥ पचमभाव में सूर्य राशि हो और सूर्य लग्न में हो। मंगल गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥ पचमभाव में शनि स्वगृही हो। लाभस्थान में मंगल हो तो विशेष धनी होता है॥८॥ लग्न में चन्द्रमा स्वगृही हो तथा मंगल गुरु युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥ मंगल स्वगृही लग्न में हो चन्द्र, शुक्र, शनि में युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥९॥ लग्न में गुरु स्वगृही हो, बुध, मंगल में युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥१०॥ लग्न में बुध स्वगृही हो तथा शुक्र शनि में युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥११॥

मृगुलेत्रे गते तप्रे तस्मिन् मृगुयुते यदि ॥ शनिसौम्ययुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः ॥१२॥ ये  
 ये ग्रहा धर्मप बुद्धिपान्यायुक्ताश्च दृष्टाश्च सुखप्रदास्ते ॥ रंभ्रेभरादिभ्यपर्युताः स्युः शोकप्रदा  
 मारकनायकैश्च ॥१३॥ क्रूरसौम्यविभागेन स्वस्यानाहिवसास्तथा ॥ ग्रहाणां स्थानभेदेन  
 राशिदृष्टिवशात्फलम् ॥१४॥

श्रीबृहत्पारासारहोराशास्त्रेपूर्वखंडमारंशे धनयोगविचारकथन नाम  
 षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥

लग्न मे शुक्र स्वगृही हो। बुध शनि युक्त हो तो जातक धनी होता है ॥१२॥ जो २ ग्रह ५१९  
 के स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट हो वे सुखदायक होते है। तथा ८।१२ के स्वामी से युक्त हो तथा  
 २।७ के स्वामी से युक्त हो तो शोक विन्ताकारक होते है ॥१३॥ अन्य ग्रहो का क्रूर तथा  
 सौम्यभाव तथा राशि एव भाव का विचार करके फल कहना चाहिए। और अपने स्थान से  
 समय का निर्देश करना चाहिए ॥१४॥

दति वृ० पा० हो० शा० पू० ख० भा० प्र० धनयोगविचारकथन नाम  
 षड्विंशोऽध्याय ॥२६॥

### अथ दरिद्रयोगाध्यायमाह

लग्नेशे वै रिष्कगते रिष्केशे लग्नमागते ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्यतो नरः ॥१॥  
 लग्नाधिपे शत्रुगृहं गते वा षष्ठेश्वरे लग्नगतेपि वा चेत् ॥ विलग्नये मारकनायदृष्टे जातो  
 भवेन्निर्यतकोपि मुख्यः ॥२॥ लग्नेद् केतुयुक्तौ वा लग्नेशे निधन गते ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातो  
 वै निर्यतो भवेत् ॥३॥ षष्ठाष्टमव्ययगते लग्नेशे पापसयुते ॥ मारकेशयुते दृष्टे राजवशोऽपि  
 निर्यतः ॥४॥ विलग्ननायेरिवितानारिष्कनायेन युक्ते यदि पापदृष्टे ॥ मित्रात्मने नाययुतेऽपि  
 दृष्टे शुभैर्न दृष्टे स भवेद्वरिद्रः ॥५॥ मित्रेशो धर्मनायश्च षष्ठकर्मस्थितौ क्रमात् ॥ दृष्टौ  
 चेन्मारकेशेन जातः स्यान्निर्यतो नरः ॥६॥ पापग्रहे लग्नगते राज्यधर्माधिपौ विना ॥  
 मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्यतो नरः ॥७॥ यद्भ्रातृवेशो रंभ्ररिष्कारिसस्यो यद्भ्रातृवस्था  
 रंभ्ररिष्कारिभेसाः ॥ पापदृष्टो मंददृष्टोऽथ वा चेद्दुःखाक्रान्तश्चंचलो निर्यतः स्यात् ॥८॥  
 चंडाक्रान्तनवाशेशो मारकेशयुतो यदि ॥ मारकस्थानगो वापि जातोऽसौ निर्यतो नरः ॥९॥  
 विलग्नेशानवाशेशो रिष्कषष्ठाष्टयो यदि ॥ मारकेशयुतौ दृष्टौ जातोऽसौ निर्यतो नरः ॥१०॥

दरिद्रयोग-संश्लेष द्वादशभाव मे हो, द्वादशेश लग्न मे हो, मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो  
 जातक निर्यत होता है ॥१॥ लग्नेश षष्ठभाव मे हो और षष्ठेश लग्न मे हो तथा लग्नेश को  
 मारकेश देखता हो तो जातक नामी दरिद्रो होता है ॥२॥ लग्न या चन्द्रमा केतु युक्त हो और  
 लग्नेश अष्टमभाव मे हो तथा लग्नेश को मारकेश देखता हो या युक्त हो तो जातक निर्यत होता  
 है ॥३॥ लग्नेश पापग्रहयुक्त होकर ६।८।१२ भाव मे हो, मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो जातक  
 निर्यत होता है ॥४॥ लग्नेश यदि ६।८।१२ भाव के स्वामी से युक्त हो और पापदृष्ट हो तथा  
 शनि अपने भावेश से युक्त हो तथा शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो जातक दरिद्रो होता है ॥५॥



पक्षमेष पण्डभाव मे और नवमेश दशमभाव मे हो तथा मारकेश से दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥६॥ लग्न मे पापग्रह हो, उनमे ९/१० के स्वामी नही हो तथा मारकेश से युत या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥७॥ जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ भाव मे हो अथवा जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ भाव का भी स्वामी हो और पापग्रह तथा शनिदृष्ट हो तो जातक दुखी चंचल तथा दरिद्री होता है॥८॥ चन्द्रमा जिस नवाश मे हो उस नवाश का स्वामी मारकेश से युक्त हो या मारक स्थान मे हो तो जातक निर्धन होता है॥९॥ लग्नेश और नवाशपति ६।८।१२ स्थान मे हो तथा मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥१०॥

धनसस्यौ च भीमेद्र कथितौ धननाशकौ ॥ बुधेक्षितौ महावित्तं कुस्तस्तत्रग शनि ॥११॥  
निःस्वता कुष्ठे तत्र रविर्नित्य यमेक्षित ॥ महाधनयुत स्यात् शन्यदृष्टं करोत्यसौ ॥१२॥  
धनभावगता सौम्या कुर्वत्येव धन बहु ॥ बुधवृष्टो गुरुस्तत्र निर्धनं कुरुते नरम् ॥१३॥  
बुधश्चेत् क्षितस्तत्र सर्वस्य हति निश्चितम् ॥ क्रूरसेटादियोगेश्च दारिद्र्यं सभवेन्नृणाम् ॥१४॥  
ये ये ग्रहा धर्मपबुद्धिपान्या युक्ता न दृष्टा बहुदुःखदास्तो ॥ रधे चरादिव्ययपैर्घृतास्ते व्ययप्रदा  
मारकनापकेन ॥१५॥ प्रोक्तयोगे यदा भावे दरिद्रे जायते ध्रुवम् ॥ शुभस्थानगता पापा  
पापस्थाने गता शुभा ॥१६॥ धनार्तिर्जायते बालो भोजनेन प्रपीडित ॥ कदापि लभतेऽन्नं च  
वस्यार्पितयान्वित ॥१७॥ कारकाद्वा विलग्राद्वा रधे रिप्के द्विजोत्तम ॥  
लग्नकारकयोर्दृष्ट्या दरिद्रार्तिपुत्रो नरः ॥१८॥

चन्द्र मंगल दूसरे घर म हो तो धननाशक होत है॥ और बुधदृष्टि हो तो धनी होता है यदि शनि धनस्थान मे हो॥११॥ यदि धनस्थान मे सूर्य शनि दृष्ट हो तो दरिद्री और शनि से दृष्ट नही हो तो धनी करता है॥१२॥ धनभाव मे सौम्यग्रह धनवान करते है। किन्तु बुधदृष्ट गुरु निर्धन करते है॥१३॥ बुध चन्द्र से दृष्ट गुरु तो जातक को सर्वस्वहीन करते है। पापग्रहों के योग से मनुष्य दरिद्री होता है॥१४॥ जो २ ग्रह ५/९ भाव के स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट नही होते वे दुःखदायी होते है। तथा अष्टमभाव म तथा व्ययभावेशयुक्त चरराशि मे स्थित तथा मारकेश दृष्ट हो तो बहुत मर्चबारी होते है॥१५॥ उक्त योग अष्टमभाव म होने मे निश्चय दरिद्री होता है। शुभस्थानो मे पापग्रह और अशुभ स्थानो मे सौम्य ग्रह हो तो जातक दरिद्री होता है। भोजन मिले तो वस्त्र की चिन्ता रहे। यह हालत रहती है॥१७॥ आत्मवारक से या लग्न से ८।१२ स्थान म ग्रह हो, लग्न तथा वारकभाव को देखत हो तो जातक दरिद्री होता है॥१८॥

लग्नाद्वा कारकाद्वापि द्वादशे यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या व्ययशीतो भवेन्नरः ॥१९॥  
लग्नेसो वीक्षते लग्न कारकैरपि वारकम् ॥ प्राबल्यव्ययशीलोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥२०॥

अथ बधनयोगमाह

पञ्चास्तप्रात्कारकाद्वा यदा वा वित्तद्वादशे ॥ पचमे नवमे वापि तथा घट्टेपि द्वादशे ॥२१॥

तृतीयेकादशे विप्र चतुर्थे दशमेपि वा ॥ ग्रहसाम्ये तंया विप्र एकमेक द्वय द्वयम् ॥२२॥ तथा  
 त्रय त्रय तिष्ठेदिति रीत्या नमश्चरा ॥ वित्ते द्वौ द्वादशे द्वौ च तथा स्यान्त्र त्रये त्रयम् ॥२३॥  
 इति क्रमेण साम्येन बधकारक उच्यते ॥ श्रृंखलाबधयोगोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥२४॥  
 राशिना राशिना धाना शुभसम्बन्धके द्विज ॥ तदा निरोध सजातस्तनुपीडा विधीयते ॥२५॥  
 द्वादशे द्वितये वापि त्रिकोणे रिष्कयच्छये ॥ ताभे त्रये व्योमतुर्थे पापा वै बधकारका ॥२६॥

लग्न से या कारक से १२ भाव में ग्रह हो लग्नकारक को देखते हो तो व्ययशील होता है ॥१९॥ लग्न से या कारक से १२ भाव में ग्रह हो लग्नकारक को देखते हो तो जातक बहुत सर्वांगी होता है ॥२०॥

### बधन योग

लग्न से या कारक लग्न से २।१२ में ५।९ में ६।१२ में ३।११ में ४।१० में बराबर २ ग्रह हो अपात् १-१ या २-२ अथवा ३।३ ग्रह हो। अथवा २।१२ में २-२ और स्थानों में ३-३ ग्रह हो तो बन्धन (कैद) होने का योग है ॥२१ से २४॥ भाव तथा भावेषो वा शुभसम्बन्ध हो तो कैद तो नहीं हो परन्तु शरीरपीडा अवश्य हो ॥२५॥ तथा २।१२ में ५।९ में ६।१२ में और ३।११ तथा ४।१० में पापग्रह हो तो बन्धन कारक होते हैं ॥२६॥

तथा तत्तदशाना च सषड् सलखेटत ॥ प्रहारश्रृंखलाद्विप्र बधयोगो न सशय ॥२७॥  
 भार्गवात्कारकाद्वापि लग्नारूढपदाद्द्विज ॥ त्रिकोणस्यो घटा राहु सूर्यदृष्टोपि नैत्ररूक् ॥२८॥  
 इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डसाराशे दरिद्रयोगकथन सप्तविंशोऽध्याय ॥२७॥

तथा इन उपर्युक्त भावराशियों की दशा का सम्बन्ध पापग्रह से, हो तो मार तथा कैद दोनों नि सशय होती है ॥२७॥ शुक से या कारक से अथवा लग्नारूढपद से त्रिकोण स्थान में राहु यदि सूर्य दृष्ट हो तो नेत्ररोगी होता है ॥२८॥

इति श्री वृ० पा० हो० शा० पू० ख० भा० प्र० दरिद्रबधनयोग कथन नामसप्तविंशोऽध्याय ॥२७॥

### अथ पूर्वजन्मवर्णनाध्यायः

अथ वस्ये विशेषेण पूर्वपापस्य निश्चयम् ॥ नवाशान्नेपमारम्य मेपादी हि क्माद्देत् ॥१॥  
 निशाकरनवाशाधिपाप निश्चित्य सर्वश ॥२॥ मेये मेयनवाशाकेषु च क्रमान्नेपस्य भूयाद्बध  
 उष्णवेमपराधक च मुघियो निश्चित्य गोसजकम् ॥ इदं चारायधस्तथा मुनियत गर्भेण  
 बवेत्कर्णे, सर्पवधस्तथा मुनियत सिंहे चतुष्पाद्बध ॥३॥ यन्ध्याना मृगजातीना वधो दावा नलेन  
 हि ॥ सिंहे निश्चित्य मतिमान्देवेचाराशोपरि द्विज ॥४॥

### पूर्वजन्मवर्णन

अब विशेषरूप से पूर्वजन्म में पाप के निश्चय की रीति रहते हैं। इसका विचार पूर्व रहे

अनुसार १-१ राशि के ९-९ नवाश हैं। मेष से आरभ होते हैं। क्रम से गणना करना चाहिए। १॥ जन्मलग्न के नवाश से तथा चन्द्रमा के नवाश से एक चन्द्रनवाशश से पूर्व जन्म तथा वर्तमान जन्म एव पर जन्म का विचार करना चाहिए। २॥ मेष राशि में मेष के नवाश में जन्म हो तो जातक ने पूर्वजन्म में भेड़-बकरी का वध किया है। वृष के नवाश में बैल की हत्या अथवा गोहत्या की है ऐसा निश्चय करना। मिथुन के नवाश में गर्भहत्या (भ्रूणहत्या) की है। कर्क के नवाश में सर्प हत्या तथा सिंह के नवाश में चौपाया पशु की हत्या अर्थात् जंगल में आग लगाकर पशुओं की हत्या। ऐसा सिंह के नवाश में निर्णय करो।

कन्याया च वदेद्द्विद्वान्याप स्त्रीत्यागज मुने ॥ धनस्याहरण व्याजात्तुलाया च वदेद्बुधः ॥५॥  
 वृश्चिके ग्रामचटके वध चैवाडजस्य हि ॥ मित्रद्रोहकृते ब्रूयाद्धन्विन्यय विशक्ति ॥६॥ फलाना  
 वृक्षजातीना मकरे चौर्यभेदनम् ॥ कुम्भे चैवानुसूयत वाच्य विप्र विपश्चित ॥७॥ ब्रूयाद्विप्रधन  
 मीने पूर्वार्द्धे तु विपश्चित ॥ उत्तरार्धे धनादान तद्वध परिकल्पितम् ॥८॥ एकाशे  
 चैकजन्मस्याद्द्विद्वघो चैव द्विजन्मनी ॥ त्रशे चैव त्रिजन्म स्याच्छेषे जन्मचतुष्टयम् ॥९॥ एव  
 सर्वत्र निश्चित्य लग्ने चैवेह जन्मनि ॥ कर्काद्या विप्र जन्माद्य वदेत्सर्वत्र निश्चयम् ॥१०॥  
 अन्यथा जारजो भूयाल्लग्रेन्दु नेक्षते पुरु ॥ एव चाष्टोत्तरशत नवाशा परिकीर्तिता ॥११॥  
 क्षत्रिये क्षत्रियादीना वैश्ये चैव पिडादिकान् ॥ शूद्रे शूद्रादिकान्वाच्य विप्रे वै  
 ब्राह्मणादिकान् ॥१२॥

कन्या में विवाहित स्त्री का त्याग तथा तुला के नवाश में ठगी से धनहरण एव वृश्चिक के नवाश में चिडिया आदि पक्षी के अंडों का नाश तथा धनु के नवाश में मित्रद्रोह एव मकर के नवाश में चोरी से फल तथा वृक्षों का छेदन कुम्भ में परद्रोह तथा मीन के पूर्वार्द्ध में विप्रधन की चोरी या बरजोरी (जबर्दस्ती से लेना) और उत्तरार्द्ध में विप्र को मारकर धन लेना। ३ से ८ तक। (इस प्रकार ९ नवाशों में जो राशि हो उसी के अनुसार पूर्वजन्म के पाप का निश्चय करो। यह फल नवाशराशि का वहा। लग्न के अशो से नवाश का ज्ञान सहज है) प्रथम नवाश में एक जन्म का पाप और द्वितीय नवाश में दो जन्म का, तीसरे में तीन और शेष नवाशों में चार जन्म कहना। ९॥ इस प्रकार लग्न से इस जन्म में पूर्वपाप का फल कहना। बर्ष आदि नवाश राशि से ब्राह्मण आदि वर्ण का निर्देश करना। १०॥ लग्न और चन्द्रमा पर गुरु दृष्टि न हो तो जारज सतान कहना। इस रीति से १२X८= १०८ नवाशों का फल वहा। ११॥ नवाश में क्षत्रिय राशि हो तो पूर्वजन्म में क्षत्रिय जाति में जन्म और वैश्य में वैश्य तथा शूद्र में शूद्र कहना चाहिए। १२॥

परे जन्मनि जन्म स्याद्बुद्ध्या चैवैहिक वदेत् ॥ तदीशे स्वोच्चता प्राप्ते मृते स्वर्गे गतो भवेत् ॥१३॥ तदीशे नरीक्षता प्राप्ते नरकादागत्य जन्मिवान् ॥ समत्ये च समात्तोषान्मित्रे तीर्थे तनु त्यजेत् ॥१४॥ तदीशे वारिवेश्मत्ये मृतः प्रेतत्वमाप्नुयात् ॥ तस्मादागत्य जज्ञेस्त्री पाप पुण्य भुनक्ति हि ॥१५॥ तदीशे पापसपुक्ते नौचे वापि स्थिते सति ॥ बृजिन तामस पूर्व कृत तामसनिश्चितम् ॥१६॥ कुजकेतुसामापुक्ते समस्ये राजस वदेत् ॥ शुभेषुच्चस्थिते वाच्य

सात्त्विकं धृजिनं बुधं ॥१७॥ अनेनैव प्रकारेण लग्ने निश्चित्य बुद्धिमान् ॥ इह जन्मनि सयोग्यं क्रूरसाम्यं समत्वकम् ॥१८॥ सर्वस्य मानवस्यापि नक्षत्रत्रयमीरितम् ॥ जन्मनक्षत्रमेकं तु द्वितीयं मनुजन्म च ॥१९॥ त्रिजन्मं च तृतीयं स्याद्भ्रातृव्यं मुनिसत्तमं ॥२०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डसारांशे पूर्वजन्मवर्णनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

इसी प्रकार अपनी बुद्धि से उपर्युक्त शास्त्रानुसार विचार करने पूर्व वर्तमान और आगामी जन्म का फल कहना चाहिए। जैसे नवाशपति उच्चराशि में हो तो मरने पर स्वर्ग में गति (गमन) ॥१३॥ और नीच का हो तो नरक से आकर जन्म लिया है। समम इस लोक में इसी लोक में आना जाना हो रहा है। मित्र राशि में हो तो तीर्थ में मरण होगा ॥१४॥ नवाशेष जलराशि में हो तो मरने के बाद प्रेतगति में था और वह भोगकर अब मृत्यु लोक में जन्म लेकर पाप पुण्य का फल भोगता है ॥१५॥ नवाशेष पापग्रह युक्त हो तो पूर्वजन्म में तामस योनि (पशु-पक्षि) भोग कर आया है। यह निश्चय है ॥१६॥ मंगल बेलु से युक्त (नवाशेष) हो और सम राशि में हो तो समान राजस योनि में था। शुभराशि में उच्चस्व ही तो सात्त्विक योनि में था। इस प्रकार जैसी योनि में था वैसा ही तामस राजस, सात्त्विक पाप भी रहना ॥१७॥ इसी प्रकार से बुद्धिमान को चाहिए कि-लग्न के नवाशेष में निश्चय करके इस जन्म के भी तामस, राजस तथा सात्त्विक कर्म का कथन करे ॥१८॥ सम्पूर्ण मानव समाज के तीन जन्म के तीन नक्षत्र जाने ॥१९॥ दूसरा यह मनुष्य जन्म का नक्षत्र तीसरा बन्धु वर्ग का जानो ॥२०॥

इति श्रीबृ० पा० हा० शा० पू० स०सा० पूर्वजन्मवर्णनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

### जीवानां सुखदुःखवर्णनाध्यायः

मुजन्मोवाच—आजन्ममृत्युर्पपन्नं जयत सुखदुःखकम् ॥ बृहि मे रूपया सौम्य विवाहादि सुतादिकम् ॥१॥ लोमश उवाच—सूर्यांगारापुमदानामशान्मसयोग्यं सस्कृतं ॥ तदापु शरदाद्यस्य भागं कृत्वा वदेत्फलम् ॥२॥ तद्भागं दुर्वृतं वाच्यं दृष्टान्ताप्ले पौंडनं क्वचित् ॥ खेदोनाप्ले सुखं किञ्चित्पुण्ड्रान्ताप्ले स्त्रिया भयम् ॥३॥ दशोनाप्ले हि हृत्पौंडा मूषोनाप्ले हि भयजम् ॥ विशोनाप्ले स्फुटतनु तत्त्वोनाप्ले श्रुती व्यया ॥४॥ त्रिशोनाप्ले शीतलाशीन् द्विवेदोनाप्ले भयं मृते ॥ पचारान्यूनकेनाप्ले वारिभीतिर्निगद्यते ॥५॥

### सुखदुःखवर्णनाध्यायः (लोमश सहिता से)

(मुजन्मा, लोमश सवादा) मुजन्मा न बहा-जन्म से मृत्यु तक के सुख, दुःख विवाह, सन्तान आदि का विचार चाहिए ॥१॥ ऋषि लोमशजी ने कहा-सूर्य, मंगल, राहु तथा शनि के अश यत्ना, विकला अको की जोड़ना पश्चात् आगे वह हुए अको की घटाकर शेष जो रहे उसकी (यहां राशि अक नहीं रहगा। केवल अशादि अक रहगा) अश सख्या ही आयु की

सप्राये मित्रमृत्युः स्याद्गुरुणा सहचारिणाम्। पचमाशे प्राप्तिकरस्तत्पचाशे धन लभेत् ॥१५॥  
 पष्ठाशो दुःखदस्तस्य तत्पष्ठाश च वा दिशेत् ॥ सप्ताशे तद्दशाशे वा घाता वाच्या शिलादित् ॥१६॥  
 लघ्रे वित्ते शिलाघातो जलघातस्त्रितुर्ययो ॥ पुत्रे पठे वृक्षघातो मन्वे मृत्यो चतुष्पदात् ॥१७॥  
 धर्मे कर्मे कर्कघातो व्यये लाभे सरीसृपात् ॥ एव स्थिति स्याद्ग्रहाणा सप्ताशकफल वदेत् ॥१८॥  
 आशाशे पुण्यदानादि रुद्राशे समदुःखकम् ॥ अष्टमाशे मित्रयोगो नवमाशे गुरोर्बदेत् ॥१९॥  
 अकशितिव्ययो वाच्यो विश्वाशो मानहानिद ॥ शक्राशे कलह वाच्य तिव्यशे चौरकान्वदेत् ॥२०॥  
 भूपाशे परजायादिसगावाप्तिर्निगच्छते ॥ अत्यष्टमशे हि नोद्वेगो धृत्यशे शुचमादिशेत् ॥२१॥  
 अतिधृत्य शके यात्रा विशाशे बधनादिकान् ॥ अर्को व्यवस्थितो यत्र तत्रैव पितृज सुखम् ॥२२॥

लघ्राश में गुरु, मित्र आदि की मृत्यु। पचमाश प्राप्तिकरक है। २५ वे भाग में धनप्राप्ति हो। पष्ठाश दुःखदायी है। ३६वा भाग भी दुःखदायी है। सप्ताश या दशाश में शिला आदि से घात हो। १५॥१६॥ लघ्र के तथा धनभाव के भाग में शिला से घात। ३४ वे भाग में जलाघात ५६ में वृक्षघात। ७८ में चीपायेसे घात। १७॥ १९१० से कर्क (केकडा) जलजन्तु से घात। १११२ में सर्प से घात होता है। इस प्रकार १२ भाग करके १२ भावों पर फल समझना। और ७ भाग करके ७ ग्रहों के अनुसार फल समझना। १८॥ १० म अश में पुण्यदान आदि तथा ११वे में साधारण दुःख। ८ म अश में मित्रयोग और नवमाश में गुरुयोग होता है। १९॥ १२ वे अश में अतिखर्च। १३ वे में मानहानि। १४ वे में कलह। १५वे में चौरभय। २०॥ १६ वें अश में परस्त्रीसगा। १७मेंथेष्ठा। १८ में चिन्ता होती है। २१॥ १९ वे में यात्रा। २० वे में बधन होता है। सूर्य स्थित जो अश है उसमें पिता को सुख होता है। २२॥

यत्र चद्र स्थितस्तत्र विवाह परिकल्पितम् ॥ भ्रातृयोगो भवेत्तत्र यत्रागारकतस्थिति ॥२३॥  
 स्वसायोगो हि यत्र ज्ञो यत्र वाचस्पति स्थित ॥ तत्र पुत्रो यत्र मुक्तस्तत्र कन्या प्रकीर्तिता ॥२४॥  
 यत्र मरु स्थितस्तत्र मातृज सुखमादिशेत् ॥ एव ग्रहानुसारेण सुखादि परिचितयेत् ॥२५॥  
 लघ्राधीशमदाधीशी भागादिवेद सगुणौ ॥ कृत्वा तदतरमिते वर्षे वाच्यो विवाहकम् ॥२६॥ तत्पौ  
 यत्र स्थिती भावयोगे चातरके तथा ॥ राशि विवाहद्विगुणौ तद्वर्षे वा विवाहकम् ॥२७॥  
 तत्पत्न्योरतर कार्य राशिभागादिकान्हरत् ॥ सव्याकतुल्यमुद्गहमेपाके वा विनिर्दिशेत् ॥२८॥  
 एव सुतर्कलाभाम्या पुत्रकन्ये विचिन्तयेत् ॥ तथैव भ्रातृभाग्याम्या भ्रातृभगिनीं विचिन्तयेत् ॥२९॥  
 व्ययलाभातर कार्यतत्पत्न्योरपि चातरम् ॥ भावातर व्यय ज्ञेय ताम स्वाम्य-  
 तरकमात् ॥३०॥

जिस अश में चन्द्रमा हो उसमें विवाह हो। मंगल के अश में भ्रातृयोग होता है। २३॥ बुधाश में वहिन और गुरु अश में पुत्र तथा शुक्राश में कन्या हो। २४॥ शन्यश में मातृ सुखा इस प्रकार ग्रहों से सुख की कल्पना करे। २५॥ लघ्र सप्तमेश के अशादि को ४ से गुणा करे तो अशों के वर्ष में विवाह होता है। २६॥ लघ्र सप्तमेश जिन स्वानों में हो उन भावों की राशियों

का योग और अन्तर करे तो विवाह का वर्ष होगा। अथवा द्विगुण अक विवाह का वर्ष होगा॥२६॥ अथवा १।७ के स्वामीके राश्यादि अकका अन्तर करे और भावों के योग में भाग दे तो लब्धाव तुल्य वर्ष में विवाह होता है॥२८॥ इसी प्रकार ५।११ भाव से पुत्रकन्या का विचार करे। तथा आतृ भाग्य से भाई बहन का विचार करे॥२९॥ ११।१२ भाव का अन्तर करे तो व्यवर्ष और भावेशों के अन्तर लाभ वर्ष होते हैं॥३०॥

सूर्येन्द्वारजेज्यशुक्रमदाना भार्गवादय ॥ तत्तत्स्थितभावाना राशिभागादिका युति ॥३१॥  
 तद्योगे द्वादशे तष्टे जन्ममासे मृति वदेत् ॥ त्रिशदगुण्य दिन ज्ञेयमेव नाडीपलादिकम् ॥३२॥  
 लग्नचद्रातर कार्य तत्कला तत्पलादिकम् ॥ जन्मकाले विहीने तु जलप्रसव उच्यते ॥३३॥  
 सूर्यचद्रातर कार्य तनुषुक्त तयोत्तरम् ॥ तत्तत्प्रमितिके वर्षे लाभ वै पुष्कल वदेत् ॥३४॥  
 राशिलप्रपयोर्योगे मृत्युयुक्ते विनिदिशे ॥ ऋण वा ऋणमुक्त वा भवेद्वै चद्रयोगके ॥३५॥  
 सूर्येन्दुलप्रसयोगे राशीशस्पष्टसयुते ॥ तद्वर्षे महती पीडा हीने सौख्य न सशय ॥३६॥  
 मुतभाग्यातर कार्य तद्वर्षे शीतलादिकम् ॥ लग्नस्वातरसयोगे पितुर्मृत्युर्न सशय ॥३७॥  
 राशीशकर्मसयोगे तदा कर्मोदये वदेत् ॥ धर्मव्ययसामायोगे तद्वर्षे ध्यनिश्चय ॥३८॥  
 मदनतरभावेषु सर्वत्रैव विलक्षयेत् ॥ भाग्यादिमृत्युपर्यन्त ग्रहाणा फलमुच्यते ॥३९॥ यत्त्वया  
 खलु मे पृष्ट तदिदं कथितं मया ॥ यस्मै कस्मै न दातव्यं स्ववाक्यपरितिरिद्धये ॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडसारांशे जीवाना सुखदुःखवर्णन  
 नामैकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥२९॥

सू० च० म० बु० वृ० शु० श० इन ग्रहों के ग्रहस्थित भावों का याग करे॥३१॥ इस जोड़ में १२ का भाग दे तो उस वर्ष में जन्म के मास में मृत्यु कहे। तीस ३० से गुनने पर दिन घटी पल समय होगा॥३२॥ लग्न चन्द्रका अन्तर करे। उसमें इष्ट घटावे तो जलप्रसव (गर्भाधान) का इष्ट होता है॥३३॥ सूर्य चन्द्रान्तर में लग्न जोड़े। आगत वर्ष में बहुत लाभ हो॥३४॥ लग्न और लग्नेश की जोड़कर अष्टमभाव भी जोड़े। उस वर्ष में ऋण होता है। चन्द्रयोग के वर्षमें ऋण मुक्त होता है॥३५॥ सप्त सू० च० योगवर्ष में पीडा और अन्तरवर्ष में सुख होता है॥३६॥ ५।९ भावान्तर वर्ष में शीतला तथा १/२ के अन्तर के योग वर्ष में पिता की मृत्यु॥ लग्न दशम सयोग वर्ष में भाग्योदय। ९/१२ योगवर्ष में व्यय होता है। सातवे भाव तक के भावों का पल वहा गया। जो तुमने हमसे पूछा था सो सब हमने तुमसे कह दिया है। अपनी वाकसिद्धि की रक्षार्थ यह ज्ञान जिस किसी को नहीं देना॥३१-४०॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० ख०सा० जीवाना सुखदुःखवर्णन  
 नामैकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥२९॥

### उदाहरणार्थ स्पष्टचक्र

सर्वे एह अशादि भाव राश्यादियोग मे निम्न अक घटाकर १२० का भाग दे। शेष आयु के वर्ष है।

अनाक	धौ			
	२-	पीडा	६०	चौरभय
	४-	मुक्त	७०-	अग्निभय
	६-	स्त्रीभय	८०	अल्पघात
	१०-	हृत्पीडा	९०-	" "
१	१४-	औषधसेवन	१००-	पुत्रसाम
	२०-	स्फुटतनु	१०८-	व्याधि
	२५-	कर्णव्यथा	११६-	विवाह
	३०-	शीतलामय	१२०	मृत्यु (१मातवाद्)
	३२	मृत्युभय	०	
	५०-	वारिसीति	०	

त्रिभागे तुपति	तत्रिभागे—	पाताद् कणानि
	तनुपति—	मात्रादि मरम
	धनागे—	धनहरण
	महतागे—	मृत्यु
	मुक्तागे—	मातृमृत्यु
	मुत्तागे—	मुत्तमृत्यु
	रिपुभागे—	रिपुमृत्यु
	ब्राह्मणे—	नायामृत्यु
	अष्टभागे—	श्वशुरमृत्यु
	भाग्यागे—	प्रभुमृत्यु
	कर्मणि—	पितृमृत्यु
	साधनागे—	जीविषा हाति
	व्यपागे—	पशुघात हाति
	सप्तभागे—	मित्रमृत्यु

बाद—५० व० १० १० १० से (भागयोग से) अमुकवय  
 और ५० वृष० पु० मु० से (भागयोग से) शुभरथ

	पचमाशे—	प्राप्ति
	तत्पचमाशे—	घनप्राप्ति
	षष्ठाशे—	दुःखद
३	तत्षष्ठाशे—	" "
	सप्ताशे—	घात
	दशाशे—	घात

	सप्ते वित्ते—	शिलाघात
	३-४—	जलघात
४	५-६—	वृक्षघात
	७-८—	चतुष्पद घात
	९-१०—	कर्कघात
	११-१२—	सर्पघात

एव स्थिति स्याद् ग्रहाणां सप्ताराकृत्त भवेत्—

	आशाशे—	पुन्यदान
	हृदाशे—	रामदुःख
	अष्टमाशे—	मिश्रयोग
	नवमाशे—	पुरो वंदेत्
	अकृशि—	अतिव्यय
५	१३ विश्वाशे—	मानहानि
	१४ शक्राशे—	कलह
	१५ तिव्यशे—	घोरभय
	१६ भूपशे—	परज्वालासम
	१७ अत्यष्टपशे—	उद्वेगगान्धि
	१८ धृत्यशे—	शोक
	१९ अतिधृत्यशे—	यात्रा
	विशे २० अशे—	व्यय

	सूर्यस्थितिबरात्—	पितृमुख
	चन्द्र " "—	विवाह मुख
	भीम " "—	भ्रातृयोग मुख
	दुष्ट " "—	भगिनी मुख
६	गुप्त " "—	पुत्र योग मुख
	सुक " "—	कन्यायोग मुख
	शनि " "	मातृ मुख



- ७- विवाह- १-नप्रेष, सप्तमेरा के अशादि चतुर्गुणित करके अन्तर करी  
अशमित वर्ष मे विवाह हो।  
२-नप्रेष, सप्तमेरा स्थित भाव योग या अन्तर के वर्ष मे अपवा  
द्विगुण मे  
३-नप्रेष, सप्तमेरा का अन्तर करके अश करे, तत्सुव्य वर्ष मे  
विवाह हो।

१ इसी तरह ५१११ भावेशों से-पुत्र कन्या का विवाह  
कहना।

२-३१९ भावेशों से भाई बहिन का विवाह देखना।

८-

ताम तथा ध्यय भावो के अन्तर से वर्ष,  
और १११२ के स्वागो के अन्तर से ताम

९-

सूर्य से शनि तक के ग्रहों के भागादि तथा ग्रहस्थित भावों के  
राश्यादि (सब) जोड़कर (अश करके १२० का भाग दे, शेष  
अक अल्प, मध्य दीर्घ आयु के अनुसार आयु क वर्ष हैं। तथा जत  
सख्या मे १२ का भाग दे, शेष मास हैं। ३० से दिन और ६० से  
घटी एव पल हैं।

(इसीमे न० १ क्रिया का योग है)

ग्रहयोग से विचार

१-	आद्यान-	सप्त सन्धान्तर से।
२-	अधिकताम-	सूर्य सन्धान्तरमे सप्त योग।
३-	श्रुणमुक्ति-	सन्ध सप्रेष योग से।
४-	श्रुण-	सन्ध अष्टमेश योग से।
५-	महान् कष्ट-	सू० व० स० स० श्रेष सप्तयोग से।
६-	कष्टमुक्ति-	सू० व० स० इनका योग राशीरुते अन्य हो।
७-	शीतला-	५१९ भावेशों अन्तर से (भाग वर्ष)
८-	पितृमुक्त्यु-	११२ के अन्तर, या योग से
९-	भाग्योदय-	स० श्रेष तथा इशाम के योग में
१०-	विशेष ध्यय-	९-१२ के योग वर्ष मे

ग्रहों के शुभांक (जातक ताल से)

सू०	व०	म०	कु०	हृ०	शु०	रा०	रा०
१९,	४,	१९,	१०,	१३,	८,	३०,	१८

### ग्रहाद्यवस्थाफलमाह

मैत्रेय उवाच—आदित्यादि ग्रहाणां च ह्यवस्था च पृथक्पृथक् ॥ भेदाःकृतिविधाःसंति  
कथम्य त्वं कृपानिधे ॥१॥

पराशर उवाच—भास्करादिग्रहाणां च ह्यवस्था विविधापि च ॥ पण्णवत्यामितावस्था  
सारभूतं वदाम्यहम् ॥२॥

### ग्रहादिवस्था फल कथन

मैत्रेयजी ने कहा—सूर्य आदि ग्रहों की अलग अलग अवस्था तथा भेद कितने हैं सो कहिये॥  
पराशरजी ने कहा—सूर्य आदि ग्रहों की अनेक अवस्था है, उनमें मुख्य ९६ अवस्था है। उनमें से  
सारभूत अवस्था कहते हैं॥१-२॥

### अथ जाग्रदाद्यवस्थामाह

अश्रादंश त्रिभाग च कल्पयित्वा पृथक् पृथक् ॥ विपमादिक्रमेणैव समे वै विपरीतकम् ॥३॥  
विज्ञाय प्रथमं पुसां जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिका ॥ विशेषतः परीक्षा स्याज्जागरः कार्यसाधकः ॥४॥  
स्वप्नाऽवस्था मध्यफला उपदेष्टा गुरुर्षदि ॥ निष्फला चरमावस्था ज्ञातव्या  
मुनिसत्तम ॥५॥

### अथ दीप्ताद्यवस्थामाह

दीप्तः स्वस्यः प्रमुदितः शांतो दीनोऽतिदुःखितः ॥ विकलश्च खल कोपी नवघा खेचरो भवेत्  
॥६॥ उच्चस्यः खेचरो दीप्तः स्वस्य स्वोच्चातिमित्रभे ॥ मुदितो मित्रभे शातः समभे दीन  
उच्यते ॥७॥ शत्रुभे दुःखितोऽतीव विकल पापसयुतः ॥ खलः खलग्रहे ज्ञेयः कोपी  
स्पादर्कसंयुतः ॥८॥ पाके प्रदीप्तस्य धराधिपत्यमुत्साहशीर्षं धनवाहने च ॥ स्त्रीपुत्रलाभ  
शुभबधुपूजां क्षितोश्वरान्मा नमुपैति विद्याम् ॥९॥

### जाग्रत आदि अवस्था

राशि के ३० अंशों के ३ भाग कल्पना करें। प्रत्येक भाग में जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति ३  
अवस्था होती हैं। विगम राशियों में पहले १० अंश तक जाग्रत, बाद २० अंश तक स्वप्न,  
उसके बाद ३० अंश तक सुषुप्ति। और सम राशि में १० अंश तक सुषुप्ति और २० अंश तक  
स्वप्न तथा ३० तक जाग्रत अवस्था होती है॥३॥ प्रथम ग्रह की अवस्था जानकर

कथिता प्रहाणाम् ॥१८॥ फलं तु किञ्चिद्वितनोति बालश्राद्धं कुमारो यतते न पुंसाम् ॥ युवा समग्रं  
सचरोऽथ वृद्धः फलं च दुष्टं मरणं मृताख्यम् ॥१९॥

### अथ प्रवासाद्यवस्थामाह

प्रवासनष्टा च मृता जया हास्या रतिर्मुदा ॥ मुप्ता भुक्ता ज्वरा कन्या मुस्थितिर्नमसिन्निभा ॥२०॥  
घष्टिष्टं गतभं भुक्तघटीभुक्तं युगाहृतम् ॥ शराब्धिहृत्लब्धतोऽर्कान्धेवावस्थाद्विजोत्तम ॥२१॥

खल ग्रह की दशा में कलह, वियोग, माता पिता की मृत्यु या वियोग, शत्रु से भय, धन और भूमि का नाश तथा नित्य नई निन्दा होती है ॥१६॥ क्रोधी ग्रह की दशा में अनेक प्रकार के दुःख, धन, स्त्री, सुत, बन्धु इनका नाश, पुत्र आदि को पीडा तथा नेत्र में बीमारी होती है ॥१७॥ बाल आदि अवस्था तथा फल—बाल आदि ५ अवस्था होती हैं। बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृता ६-६ अंशों की १-१ अवस्था होती है। विषम राशि में लिखित क्रम से तथा सम राशि में उल्टे क्रम से सूर्यादि ग्रहों की ये दशाये होती हैं। फल—ग्रह बाल अवस्था में हो तो कुछ फल देता है। कुमार अवस्था में यत्न करने से आधा फल तथा युवा अवस्था में पूरा फल। वृद्ध अवस्था में उद्योग हानि। और मृत्यु अवस्था में मरणकारी है ॥१८॥१९॥

प्रवास आदि अवस्था—प्रवास आदि १२ अवस्थाएँ होती हैं। प्रवास, नष्टा, मृता, जया, हास्या, रति, मुदा, मुप्ता, भुक्ता, ज्वरा, कन्या, मुस्थिति। इन अवस्थाओं का फल इनके नाम के समान है ॥२०॥ वर्तमान नक्षत्र की भुक्त घटी (भयात्) में गत नक्षत्र सस्या को ६० से गुणा करके योग करना। इस योग को पुनः ४ से गुणा करना। फिर ४५ से भाग देना। जो शेष बचे वह यदि १२ से अधिक हो तो १२ से भाग देना। शेष बचे उस सस्या की अवस्था जानना ॥२१॥

प्रवासः प्रवासोपगे जन्मकालेऽर्धनाशस्तु नष्टोपगे मृत्युभीतिः ॥ मृतावस्थिते स्याज्जयायां जयस्तु विलासस्तु हास्योपगे कामिनीभिः ॥२२॥ रतौ स्याद्रतिः क्रीडिता सौख्यदात्री प्रमुत्तापि निद्रां कलि देहपीडाम् ॥ भय तापहानिः मुख स्यात् भुक्त्वा ज्वरा कंठिता मुस्थिता सुक्रमेण ॥२३॥

### अथ लज्जिताद्यवस्थामाह

लज्जितो गर्वितश्चैव क्षुधितस्तुषितस्तथा ॥ मुदितः क्षोभितश्चैव प्रहमावा प्रकीर्तितः ॥२४॥  
पुत्रगेहगतः खेटोः राहूकेतुपुतो भवेत् ॥ रविमदकुजेर्षुक्तो लज्जितो ग्रह एव च ॥२५॥

फल—जन्मकाल में ग्रह की प्रवास अवस्था हो तो मुसाफिरी। नाश अवस्था में धन का नाश। मृत अवस्था में मृत्यु से भया। जया अवस्था में जय। हास्य अवस्था में स्त्रियों से विलास। रति अवस्था में रमण। मुप्त अवस्था में निद्रा। कलि अवस्था में देह पीडा। कामित अवस्था में ज्वरा। भुक्त अवस्था में मुख और चिन्ता—हानि। मुस्थिर अवस्था में ज्ञान्ति—दायिनी होती है ॥२२॥२३॥

लज्जित आदि अवस्था—लज्जित, गर्वित, क्षुधित, तृपित, मुदित क्षुभित ये ६ अवस्थाये भी ग्रहो को होती है। २४॥ पचम भाव मे ग्रह स्थित हो। सूर्य, मंगल, शनि से युक्त हो अथवा राहुकेतु से युक्त हो तो 'लज्जित' अवस्था होती है। २५॥

तुंगस्थानगतो वापि त्रिकोणेपि भवेत्पुनः ॥ गर्वितः सोपि गदितो निर्विरांकं द्विजोत्तम ॥२६॥  
शत्रुगेही शत्रुयुक्तो रिपुदृष्टो भवेद्यदि ॥ क्षुधितः स च विज्ञेयः शनिमुक्तो यथा तथा ॥२७॥  
जलराशौ स्थितः खेटः शत्रुणा चावलोकितः ॥ शुभग्रह न पश्यति तृपितः स चदाहृतः ॥२८॥  
मित्रगेही मित्रयुक्तो मित्रेण चावलोकितः ॥ गुरुणा सहितो यश्च मुदितः स प्रकीर्तितः ॥२९॥  
रविणा सहितो यश्च पापाः पश्यति सर्वथा ॥ क्षोभितं तं विजानीयाच्छत्रुणा यदि वीक्षितः ॥३०॥  
येषु येषु च भावेषु ग्रहास्तिष्ठति सर्वथा ॥ क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखमाजनः ॥३१॥  
एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वभावेषु परिहृतैः ॥ बलाबलविचारेण वक्तव्यः फलनिर्णयः ॥३२॥

उच्च स्थान मे हो अथवा त्रिकोण मे हो तो 'गर्वित' अवस्था होती है। २६॥ शत्रु गृह मे शत्रु ग्रह से युक्त या दृष्ट हो अथवा शनिमुक्त हो तो 'क्षुधित' अवस्था होती है। २७॥ ग्रह जलराशि मे शत्रु से दृष्ट हो, शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो 'तृपित' अवस्था होती है। २८॥ ग्रह मित्र के घर मे मित्रग्रह से युक्त तथा दृष्ट तथा गुरु सहित हो तो 'मुदित' होती है। २९॥ जो ग्रह सूर्य युक्त हो पापग्रह देखते हो तथा शत्रु दृष्ट हो तो 'क्षुभित' है। ३०॥  
फल-जिन २ भावो मे 'क्षुधित' और 'क्षुभित' ग्रह हो उन भावो का फल मनुष्य के लिये दुःखदायी होता है। ३१॥ इसी प्रकार भावो मे बलाबल का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए। ३२॥

अन्योन्यं च मुदा युक्तं फलं मिश्रं वदेत्पुनः ॥ बलहीने तदा हानिः सबले च महाफलम् ॥३३॥  
कर्मस्थाने स्थितो यस्य लज्जितस्तृपितस्तथा ॥ क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखमाजनः ॥३४॥  
मुतस्थाने भवेद्यस्य लज्जितो ग्रह एव च ॥ मुतनाशो भवेत्तस्य एकस्तिष्ठति सर्वदा ॥३५॥  
क्षोभितस्तृपितश्चैव सप्तमे यस्य वा भवेत् ॥ अग्रपते तस्य नारी च सत्यमाहुर्द्विजोत्तम ॥३६॥  
नवालपाराममुखं नृपत्यं कलापदुत्वं विदधाति पुंसाम् ॥ तदार्थलाभं ध्यवहारवृद्धिं फलं विशेषादिह गर्वितस्य ॥३७॥ भवति मुदितप्रोगे वासशालाविशाला विमलवसनमूत्रामूमियोगासु तौस्थम् ॥ स्वजनजनविशालो भूमि-भागारवासो रिपुनिवहविनाशो बुद्धिविद्याविकासः ॥३८॥  
विशति लज्जितभाववशाद्गतिं विगताराममतिं विमतिश्रयम् ॥ मुतगदाममनं गमनं वृथा कसिकयाभिरुचिं न रुचिं सुभे ॥३९॥

मुदित अवस्था मे ग्रह हो तो मिश्रित फल कहना चाहिए। ग्रह बलहीन हो तो हानि, बलवान् हो तो महाफल होता है। ३३॥ जिस जातक के दशमभाव मे लज्जित, तृपित, क्षुधित, क्षोभित ग्रह हो, वह मनुष्य सदा सुखी रहता है। ३४॥ जिसके पचम भाव मे लज्जित ग्रह हो उसके एक ही पुत्र सतान होती है और सतान का नाश होता है। ३५॥ हे मैत्रेय! जिसके सप्तम स्थान मे क्षोभित या तृपित ग्रह हो उसकी स्त्री भी मृत्यु होती है यह निश्चय है। ३६॥ गर्वितग्रह खेट भाव मे होने से नये मकान, बागीचा, धन लाभ, व्यापार वृद्धि, अनेक प्रकार

की विद्या प्राप्त करता है ॥३७॥ मुदित ग्रह के योग से विशाल महल, निर्मल वस्त्र, भूयम्, भूमि, सुख, मित्रो मे आनन्द, शत्रुओ का नाश, विद्या और बुद्धि का विकास करता है ॥३८॥ लज्जित ग्रह भक्ति हीनता, सुबुद्धि, कलहप्रियता, वृथा यात्रा, सतान की बीमारी और शुभ कार्य मे अरुचि करता है ॥३९॥

ससोमितस्यापि फल विशेषाहरिद्रजात कुमति च कष्टम् ॥ करोति वित्तक्षयमाग्निबाधा घनाग्निबाधामयनीशकोपात् ॥४०॥ क्षुधितग्रहवशाद्द शोकमोहादिपातः परिजनपरितापादाधिभोत्या कृशत्वम् ॥ कतिरपि रिपुलोकेर्यबाधा नराणामखिलबलनिरोधो बुद्धिरोधो विषादात् ॥४१॥ तृपितक्षयमवे स्यादंगनास्रगमध्ये भवति गदविकारो दुष्टकार्याधिकार ॥ निजजनपरिवादादर्थहानिः कृशत्व खलकृतपरितापो मानहानि सर्वैव ॥४२॥

क्षोभित ग्रह विशेष दरिद्री, कुमति, रोगी, धन हानि, पैर की बीमारी, राजकोप से व्यापार मे हानि करता है ॥४०॥ क्षुधित ग्रह शोक, मोह, दुःख, चिन्ता, भय, परिताप, कृपता, शत्रुओ से कलह, धन हानि, किकर्तव्यविमूढता तथा दुर्बलता देता है ॥४१॥ तृपित ग्रह स्त्री को बीमारी, बुरे काम मे रति, निन्दा, धन-हानि, मानहानि, कृशता और शत्रु से दुःख पहुंचाता है ॥४२॥

#### अथ शयनाद्यवस्थामाह

शयन चोपवेश च नेत्रपाणिप्रकाशनम् ॥ गमनागमन चाथ समाया बसति तथा ॥४३॥ आगम भोजन चैव नृत्य लिप्ता च कौतुकम् ॥ निद्रा ग्रहाणा चेष्टा च कथयामि तवाग्रत ॥४४॥ यस्मिन्नृक्षे भवेत्खेटस्तेन त परिपूरयेत् ॥ पुनरशेन सपूर्य स्वतन्त्रे नियोजयेत् ॥४५॥ यातदद तथालप्रमेकीकृत्य सदा बुध ॥ रविणा हरते भाग शेष कार्यं नियोजयेत् ॥४६॥ नाक्षत्रिकदशाक्रमेण पुन पूरणमाचरेत् ॥ नामाक्षरेण सयुक्ते हर्तव्य रविणा तत ॥४७॥ रुक्वी पथ तथा देय चद्रे दद्याद्द्वय तथा ॥ कुजे द्वय च सयुक्ते बुधे त्रीणि नियोजयेत् ॥४८॥ गुरौ ज्ञाना प्रदेयाश्च त्रय दद्याच्च मार्गवे ॥ शनी त्रयमयो देय राहौ दद्यान्ततुष्टयम् ॥४९॥ शेष हृत च रामेण ग्रहाणा त्रिविध भवेत् ॥ दृष्टि चेष्टा विचेष्टा च कथयामि तवाग्रत ॥५०॥

शयन आदि अवस्था—शयन, उपवेशन, नेत्र-हस्त प्रकाशन गमन, आगमन, सभा स्थिति, आगम, भोजन, नृत्य, लिप्ता कौतुक और निद्रा; ग्रहो की ये चेष्टायें कहते हैं ॥४३॥४४॥ ग्रह जिस नक्षत्र मे हो उस नक्षत्र सख्या से ग्रह की सख्या की गुणा करना बाद ग्रह के भुक्तान सख्या से गुणा करना। पश्चात् वर्तमान नक्षत्र सख्या जन्म की ईष्ट घटी और जन्म का नक्षत्र ये सब जोड़ना। बाद १२ का भाग देना, जो सख्या शेष रहे उन सख्या की पूर्वोक्त अवस्था जानना। और पूर्वगित सख्या मे ३ का भाग देने से जो शेष बचे वह क्रमशः दृष्टि, चेष्टा और विचेष्टा अवस्था होती है ॥४५॥४६॥ नाक्षत्रिक दशा के लिये क्रम से पूर्वगित सख्या ने सूर्य की दशा के लिये ५, चन्द्रमाका २, मयल का २, बुध का ३, गुरु का ५, शुक्र का ३, शनि का ३, राहु का ४ तथा केतु का ४ होते हैं ॥४७ से ५०॥

स्वरांशचक्रमिदम्				
१	२	३	४	५
अ	इ	उ	ए	ओ
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

सुपादिकोपाःकचक्रम्									
सू०	च०	म०	बु०	वृ०	शु०	श०	रा०	के०	
५	२	२	३	५	३	३	४	४	

### दृष्टिभेदमाह

दृष्टौ स्वल्पफलं ज्ञेयं चेष्टायां विपुलं फलम् ॥  
 विचेष्टायां फलं न स्यादेव दृष्टिफलं विदुः ॥५१॥  
 शुभाशुभ प्रहाणां च समीक्ष्याय यत्तावत्तम् ॥  
 तुंगस्थाने विशेषेण बलं ज्ञेयं यथा बुधैः ॥५२॥

### दृष्टिभेद तथा फल

दृष्टि मे स्वल्प फल, चेष्टा मे पूर्णफल, विचेष्टा मे  
 हीन फल ॥५१॥ इस प्रकार ग्रहों का शुभाशुभ फल  
 देखकर और उच्च स्थान मे विशेष करके बल  
 जानना चाहिए ॥५२॥

### अथ प्रत्येकद्वादशावस्थाफलमाह

मंदाग्निरोगो बहुधा नराणां स्थूलत्वमंघ्रैरपि पित्तकौषः ॥ वर्णं गुदे शूलमुरः प्रवेशे यदोष्णभांती  
 शयनं प्रयाते ॥५३॥ दरिद्रता भारविहारशाली विवादविद्याभिरतो नरः स्यात् ॥ कठोरचित्तः  
 सलु नष्टचित्तः सूर्यो यदा चेदुपवेशनस्थः ॥५४॥ नरः सदानंदघरो विवेकी परोपकारी  
 बलवित्तयुक्त ॥ महामुखी राजकृपाभिमानो दिव्यधिनायो यदि नेत्रपाणौ ॥५५॥ उदारचित्तः  
 परिपूर्णचित्तः सभामु बला बहुपुण्यकर्ता ॥ महाबली सुंदरहृषशाली प्रकाशने जन्वति  
 पद्मिनीशे ॥५६॥ प्रवासशाली क्लिप्त दुःखशाली सदासती धीघनवर्जितश्च ॥ मयातुरः कोपपरो  
 विशेषद्विवाधिनाथे गमने मनुष्यः ॥५७॥ परदाररतो जनतारहितो बहुधामगने गमनाभिर्द्विः  
 कृपणः क्षलताकुशलो मलिनो दिव्यसाधिपती मनुज कुपति ॥५८॥

## द्वादश अवस्था के फल

सूर्य के फल—सूर्य जयन अवस्था मे हो तो मन्दाग्नि, स्थूलता, नेत्ररोग, पित्तप्रकोप, व्रण, छाती मे शूल आदिरोग होते हैं॥५३॥ सूर्य यदि उपवेशन अवस्था मे हो तो दरिद्रता, विहारशाली, (धुमककड) विद्या सम्बन्धी विवाद, कठोर चित्त तथा दरिद्र होता है॥५४॥ सूर्य नेत्रपाणि प्रकम्पन अवस्था मे हो तो मनुष्य आनन्दी, विवेकी, परोपकारी, धनी तथा बलवान्, महामुखी, तथा राजकृपायुक्त होता है॥५५॥ ग्रह यदि प्रकाशन अवस्था मे हो तो उदार, महाधनी, व्याख्याता धर्मात्मा, महाबली तथा सुन्दर होता है॥५६॥ सूर्य गमन अवस्था मे हो तो प्रवासशाली, दुःखी, आलसी, निर्धन, भयातुर, क्रोधी होता है॥५७॥ आगमन अवस्था में पर स्त्रीगामी, समाज बहिष्कृत, प्रवासी, कृपण सल (दुष्ट) कुमति तथा मलिन होता है॥५८॥

सभागते हिते नरःपरोपकारतत्परःसदार्यरत्नपूरितो दिवाकरे गुणाकरः॥ वसुंधरानबांबरासयान्वितो महाबली विचित्रमित्रवत्सलः कृपाकलाधरः परः ॥५९॥ क्षोभितो रिपुगणैः सदा नरश्रंचलः खलमतिः कृशास्तया ॥ धर्मकर्मरहितो मदोद्धतश्राममे विनपती यदा तदा ॥६०॥ सदांसंधिवेदनापरांगनाघनक्षयो बलक्षयः पदे पदे यदा तदा हि भोजने ॥ असत्यता शिरोव्यया तथा वृषाभ्रभोजन खावसत्कपारतिः कुमार्गपाभिनी मतिः ॥६१॥ विज्ञलोकैः सदा भंडितः पंडितः काव्यविद्यानयधप्रलापान्वितः ॥ राजपूज्यो धरामंडले सर्वदा नृत्यलिप्सागते पश्चिनीनायके ॥६२॥ सर्वदानदधर्ता जनो ज्ञानवान्यज्ञकर्ता धराधीरासपस्थितः ॥ पद्यबंधावरसतेर्भयं स्वाननः काव्यविद्याप्रलापी मुदा कौतुके ॥६३॥ निद्राभरारक्तनिभे भवेता निद्रागते लोचनपद्युग्मे ॥ रघो विदेशे बसतिर्जनस्य क्लृप्तहानिः कतिधार्यनाशः ॥६४॥

सूर्य सभा मे हो तो मनुष्य परोपकार तत्पर, धनधान्य पूरित, गुणी, भूमि सम्पत्तियुक्त, महाबली, मित्र-वत्सल और कृपालु होता है॥५९॥ सूर्य आगम अवस्था मे हो तो जातक मनु पीडित, चंचल, दुष्टबुद्धि, दुर्बल, धर्मवर्म रहित तथा घमण्डी होता है॥६०॥ सूर्य भोजन अवस्था मे हो तो संधि-वेदना, परांगना रत, निर्धन, निर्बल, असत्यभाषी, असत्यपारति, (गपाडी) वृषाभ्रभोजी तथा कुमार्गगामी होता है॥६१॥ सूर्य नृत्यलिप्सा अवस्था मे हो तो जातक विद्वत्समाज का मान्य पण्डित, मेधावी तथा राजपूज्य होता है॥६२॥ सूर्य कौतुक अवस्था मे हो तो जातक सदान्दी ज्ञानी, यज्ञकर्ता, राजनिवासी, काव्य विनोदी, तथा सुखी होता है॥६३॥ सूर्य निद्रावस्था मे हो तो निद्रालु, प्रवासी, धार्यरहित, दरिद्री होता है॥६४॥

अथ चद्रफलम्—जनु काले क्षयानाये शयनं चेदुपागते॥मानो शीतप्रधानश्च कामो बितविना-  
शकः ॥६५॥ रोगार्दितो मदमतिर्विशेषाद्विज्ञेन हीनो मनुजः कठोरः ॥ अकार्यकारी परबितहारी क्षपाकरे चेदुपवेशनस्ये ॥६६॥ नेत्रपाणी क्षयानाये महारोगी नरो भवेत् ॥ अनल्पजल्पको धूर्तः शुक्रमनिरतः सदा ॥६७॥ यदा राक्षानाये गतवति विद्याया च जनने विकाराः ससारे विमलगुणराशेरवनिपात् ॥ नवराशामाला स्यात्स्वरितुरगतक्षया परिवृता विनूषा योषामि सुहमनुदिन तीर्यगमनम् ॥६८॥ सितेतेरे पापरतो निशाहरे विरोपत

क्रूरतरो नरो भवेत् ॥ सदाशिरोगैः परिपीडयमानो बलक्षपक्षे गमने भयातुरः ॥६९॥  
विधवागमनो मानी पादरोगी नरो भवेत् ॥ गुप्तपापरतो दीनो मतितोषविंबर्जितः ॥७०॥  
सकलजनवदान्यो राजराजेन्द्रमान्यो रतिपतिधमकांतिः शान्तिकृत्कामिनीनाम् ॥ सपदि सबसि  
पाते चाशुचिबिभे शशाके भवति परमरीतिप्रीतिविज्ञो गुणज्ञः ॥७१॥

चन्द्रफल—जन्मकाल मे यदि चन्द्रमा शयनअवस्था मे हो तो अभिमानी, कफप्रकृति, कानी  
और शात स्वभाव का होता है॥६५॥ यदि चन्द्रमा उपवेशन मे हो तो रोगी, मदमति, दरिद्र,  
कठोर चोर, अकार्यकारी होता है॥६६॥ चन्द्रमा नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो महारोगी,  
बकवादी, धूर्त, कुकर्मी होता है॥६७॥ यदि चन्द्रमा विकाश अवस्था मे हो तो जातक  
विकासवृद्धि राजाश्रयी,ससारप्रसिद्ध महाधनी,भोगी,तीर्थयात्राभिलाषी होता है॥६८॥ यदि  
चन्द्रमा कृष्णपक्ष मे तथा गमनअवस्था मे हो तो मनुष्य पापी, अतिक्रूर, शिर रोग से पीडित होता  
है। और शुक्ल पक्ष मे जन्म हो तो भयातुर होता है॥६९॥ यदि चन्द्रमा आनम अवस्थामे हो तो  
जातक विधवागामी, अभिमानी, पादरोगी, गुप्तपापी, दीन, बुद्धिहीन तथा असन्तोषी होता  
है॥७०॥ यदि जन्मसमय मे चन्द्रमा सभा मे हो तो जातक समाज मे मान्य, राजमान्य, अतिमुन्दर,  
कीर्तिमान्, कामिनीभोगी, रीतिनोति का जानने तथा गुणज्ञ होता है॥७१॥

विधवागमनो मर्त्यो वाचालो धर्मपूरितः ॥ कृष्णपक्षे द्विभार्यः स्याद्रोगी दुष्टतरो हठी ॥७२॥  
भाजनै जनुषि पूर्णचंद्रमा मानयानजनतासुख नृणाम् ॥ आतनोति यनितामुतामुखं सर्वमेव न  
सितेतरे शुभम् ॥७३॥ नृत्यलिप्सागते चद्रे सबने बलवाधरः ॥ गीतज्ञो हि रसज्ञश्च कृष्णे  
पापकरो भवेत् ॥७४॥ कौतुकभवनं गतवति चद्रे भवति नृपत्वं वा धनपत्वम् ॥ कामलासु  
सदा कुशलत्वंवारबधूरतिरमणपदुत्वम् ॥७५॥ निद्रागते जन्मनि मानवाना कलाधरे जीवपुते  
महत्त्वम् ॥ पदांगनासंचितवित्तनाशः शिवालयं रीति विचित्रमुखेः ॥७६॥

चन्द्रमा आगम अवस्था मे हो तो जातक विधवासेवी, वाचाल, धर्मात्मा, दो स्त्रीवाला,  
अतिदुष्ट, रोगी तथा हठी होता है॥७२॥ यदि चद्रमा भाजन अवस्था मे हो तो सम्मान,  
सवारी, स्त्री, धन, सतान का सुख होता है। तथा कृष्णपक्ष मे विपरीत फल होता है॥७३॥  
यदि चद्रमा नृत्यलिप्सा अवस्था मे हो तो मनुष्य बलवान्, गायन विद्या रसिक होता है। और  
कृष्णपक्ष मे पापी होता है॥७४॥ यदि चद्रमा कौतुक भवन मे हो तो मनुष्य राजा, धनपति,  
कुशल, तथा बारवनिता विलासी होता है॥७५॥ यदि चद्रमा निद्रा अवस्था मे हो तो स्त्री,  
धनहीन, संचित धन का नाश करनेवाला तथा शिवालय मे विचित्र प्रकार से शब्द करनेवाला  
होता है॥७६॥

अयं कुजफलम्—शयने वसुधापुत्रे जतुरंगे जनो भवेत् ॥ बहूना फंडुना युक्तो दद्रुषा च विशेषतः  
॥७७॥ बसी सदा पापरतो नरः स्यादसत्यवादी नितरां प्रगल्भ ॥ धनेन पूर्णो निजधर्महीनो  
धरामुतश्रेदुपवेशनस्यः ॥७८॥ यदा भूमिमुते लक्षे नेत्रपाणिमुपागते ॥ दरिद्रता सदा  
पुसाभन्यभे नगरेशता ॥७९॥ प्रकाशो गुणस्यापि धासः प्रकाशे धराधीशमर्तुः सदा मानवृद्धिः  
॥ सुते भूमिमुते पुत्रकातावियोगो भवेद्राहुषा दारणो वा निपातः ॥८०॥ गमनागमने



कुरुतेऽनुदिन वणजालभयं वनिताकलहः ॥ बहुदद्रुककण्डुभयं बहुधा वसुधातनयो वसुहानिकरः ॥८१॥ आगमने गुणशाली मणिमाली करालकरवाली ॥ गजगता रिपुहन्ता परिजनसंतापहारको भौमे ॥८२॥ तुंगे युद्धकलाकलापकुशलो धर्मध्वजो वित्तपः कोणे भूमिसुते सभामुपगते विद्याविहीनः पुमान् ॥ अंतेऽपत्यकलयमित्ररहितः प्रोक्तेतरस्यातनोऽवश्यं राजसभाबुधो बहुधनी मानी च दानी जनः ॥८३॥

मगल का फल—यदि मगल शयन अवस्था मे हो तो मनुष्य खाज, खुजली वाला होता है ॥७७॥ यदि मगल उपवेशन अवस्था मे हो तो मनुष्य बलवान सदा पापरत असत्यभापी, बकवादी, धनहीन, धर्महीन होता है ॥७८॥ मगल जब लग्न मे नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो पुरुष को दरिद्र करता है। वह मगल अन्यराशि मे हो तो नगर का स्वामी करता है ॥७९॥ जब मगल प्रकाश अवस्था मे हो तो तब जातक के गुणो का प्रकाश करता है। राजा से सदा सन्मान की वृद्धि होती है। और पचमभाव मे हो तो पुत्र स्त्री से वियोग करता है। राहु से युक्त या दृष्ट हो तो दुःखदायी पतन होता है ॥८०॥ मगल गमनागमन अवस्था मे हो तो पावो से भय, स्त्री से कलह, दाद, खाज, खुजली तथा धनहानि कारक है ॥८१॥ मगल आगमन अवस्था मे हो तो गुणी, मणि—माणिक युक्त, करवाल (शस्त्र) धारी, हाथी की सवारी तथा शत्रुनाश करी तथा बन्धुओ का दुःखहारी होता है ॥८२॥ मगल तुंग (उच्च) का होकर 'सभा' अवस्था मे हो तो युद्धविद्या निपुण, धर्मिया, धनी होता है। यदि त्रिकोण स्थान मे हो तो विद्याहीन तथा १२ भाव मे हो तो स्त्री पुत्ररहित करता है। अन्य स्थान मे बहुधनी, मानी तथा दानी होता है ॥८३॥

आगमे भवति भूमिजे जनो धर्मकर्मरहितो गदातुरः ॥ कर्णमूलगुरुमूलरोगवानेव कातरमति कुसगमी ॥८४॥ भोजने मिष्टभोजी च जनने सबले कुजे ॥ नीचकर्मकरो नित्य मनुजो मानवर्जितः ॥८५॥ नृत्यलिप्सागते भूमिजे जन्मनामिदिराराशिरायाति भूमिपतेः ॥ स्वर्णरत्नप्रवालैः सवामंडितो वासशाला नराणा मवेत्सर्वदा ॥८६॥ कौतुकी भवति कौतुके कुजे मिश्रपुत्रपरिपूरितो जनः ॥ उच्चगे नृपतिगेहमंडितः पूजितो गुणवरेर्गुणाकरः ॥८७॥ निद्रावस्था गते भौमे शोधी पीघनवर्जित ॥ धूर्तो धर्मपरिभ्रष्टो मनुष्यो गवरोदितः ॥८८॥

यदि मगल आगम अवस्था मे हो तो जानक धर्मवर्म रहित, योगी, कर्णमूल मे योगी, डरपोक तथा कुसगति वाला होता है ॥८४॥ यदि मगल भोजन अवस्था मे हो और कल्पान् हो तो मिष्टान्नभोजी, नीचकर्मकारी, तथा मानहीन होता है ॥८५॥ मगल 'नृत्यलिप्सा' अवस्था मे हो तो बहलभो की प्राप्ति होती है। मूर्ख गन आदि प्राप्ति होता है। रहने को निजी विद्या भवन होता है ॥८६॥ मगल कौतुक अवस्था मे हो तो जानक कौतुक के आभरणजनक मेल जाननेवाला, मित्र—पुत्र युक्त हो तथा राशि मे हो तो राजमन्त्री मे पुत्र गुणियो से पूजित होता है ॥८७॥ मगल निद्रावस्था मे हो तो जानक शोधी, मूर्ख, दण्डी, धूर्त, धर्मभ्रष्ट तथा योगी होता है ॥८८॥

अथ बुधफलम्  
 क्षुधातुरो भवेदंगे संजो गुंजानिभक्षणः ॥ अन्यभे तपटो धूर्तो मनुजः शयने बुदे ॥८९॥  
 राशाकपुत्रे जनुरगनेहे धदोपवेशे गुणराशिपूर्णे ॥ पापेक्षिते पापयुते दरिद्रो हिते शुभे वित्तमुक्षी  
 मनुष्यः ॥९०॥ विद्याविवेकरहितो हिततोपहीनो भानो जनो भवति चद्रमुतेऽक्षपाणौ ॥  
 पुत्रालये सुतकलत्रमुत्सेन हीनः कन्याप्रजौ नृपतिगेहबुधो बरार्यः ॥९१॥ दाता दयालुः क्षत्रु  
 पुण्यकर्ता बिकासने चद्रमुते मनुष्यः ॥ अनेकविद्यार्थवपारगता विवेकपूर्णः सतवर्गहन्ता  
 ॥९२॥ गमनागमने भवतो गमने बहुधा बमुद्याधिपतेर्भवने ॥ भवन च विचित्रमल रमया  
 विदि मुञ्च जनुः समये नितराम् ॥९३॥

बुध का फल-बुध शयन अवस्था में हो तो मनुष्य सजा (सगडा), लाल आसवाला, अन्य  
 राशि में हो तो लम्पट और धूर्त होता है ॥८९॥ यदि बुध उपवेश अवस्था में हो और सप्त में  
 हो तो अनेक शुष्णशाली होता है और यदि पापराशिमें पापग्रह युक्त हो तो दरिद्र तथा मित्र  
 राशि में शुभग्रह युक्त हो तो धनवान् और सुखी होता है ॥९०॥ यदि बुध नेत्रपाणि अवस्था में  
 हो तो जातक विद्या और विवेक से हीन तथा असन्तोषी और अभिमानी होता है। यदि पंचम  
 भाव में हो तो पुत्र व स्त्री सुख से हीन तथा कन्या सन्तान वाला, राजमान्य तथा धनी होता  
 है ॥९१॥ यदि बुध विकास अवस्था में हो तो जातक दयालु, दानी, धर्माला और अनेक विद्या  
 पारंगत, विवेकी तथा दुष्टों का नाश करनेवाला होता है ॥९२॥ यदि बुध गमनागमन अवस्था  
 में हो तो मनुष्य यात्रा प्रेमी, राजभवन में मान्य, बहुलक्ष्मी स्वामी विद्वान् तथा धनी होता  
 है ॥९३॥

सपदि विद्वज्जनानामुच्चगे जन्मकाले सदसि धनसमृद्धिः सर्वदा पुण्यवृद्धिः ॥ धनपतिसमता वा  
 स्रुपता मन्त्रिता वा हरिहरपदभक्तिः सात्त्विकी मुक्तिलब्धिः ॥९४॥ आगमे जनुषि जन्मना  
 यदा चन्द्रजे भवति हीनसेवया ॥ अर्थसिद्धिरपि पुत्रपुण्यमता बालिका भवति मानदायिका  
 ॥९५॥ भोजने चन्द्रमा जन्म काले यदा जन्मिनामर्पहानि, सदा वादतः ॥ राजभोत्या कृगत्व  
 चलत्व मतेरगसागो न जाया न मायासुखम् ॥९६॥ नृत्यलिप्सापते चन्द्रजे मानवो  
 मानयानप्रवालव्रजैः सपुतः ॥ मित्रपुत्रप्रतार्प सभापठितः पापभे वारवामारते सम्पटः ॥९७॥

यदि जन्म समय में बुध उच्च राशि का होकर सभा स्थान में हो तो धन समृद्धि तथा  
 धर्माला, पुत्रों के समान ऐश्वर्यशाली, राजा का मंत्री, ईश्वर भक्ति परायण, सात्त्विक  
 भाववाला होता है तथा अन्त में मुक्ति प्राप्त होती है ॥९४॥ जब जन्मलक्षण में बुध आगम  
 अवस्था में हो तो नीच की सेवा करनेवाला विन्तु धनी और दो पुत्र और एक कन्या होती  
 है ॥९५॥ जन्म काल में बुध जब भोजन अवस्था में हो तो मनुष्य का धन मुकदमे बाजी में खर्च  
 होता है। राजभय से सदा दुःखी रहता है। तबल बुद्धि तथा भायाम्बुल और धन सुख से हीन  
 हो ॥९६॥ जब बुध नृत्य लिप्सा अवस्था में हो तो मनुष्य सन्तान, मदारो, रत्नों में युक्त,  
 मित्र-पुत्रयुक्त, प्रतापी और सभा पण्डित होता है। पाप राशि में हो तो  
 वार-वनिता-विलासी तथा लम्पट होता है ॥९७॥

कौतुके चद्रजे जन्मकाले नृणामगभे गीतविद्याऽनवद्या भवेत् ॥ सप्तमे नैधने वारवध्या रति पुण्यभे पुण्ययुक्ता मति सद्गति ॥९८॥ निद्राश्रिते चद्रमुते न निद्रामुक्त सदा ध्याधिसमाधियोग ॥ सहोत्पद्यैकल्यमनल्पतापो निजेन वादो धनमाननाश ॥९९॥

अथ गुरुफलमाह

घञसामधिपे तु जनु समये शयने बलवानपि हीनरव ॥ अतिगौरतनु खलु बीर्षहनु सुतरामरिभीतियुतो मनुज ॥१००॥ उपवेश गतवति यदि जीवे वाचालो बहुगर्वपरीत ॥ क्षोणीपतिरिपुजनपरितप्त पद्मजघास्यकरवणयुक्त ॥१०१॥ नेत्रपाणि गते देवराजार्चिते रोग युक्तो विद्युक्तो वरार्थधिया ॥ गीतनृत्यप्रिय कामुक सर्वदा गौरवर्णो विवर्णोऽव प्रीतियुक् ॥१०२॥

जब बुध जन्म समय में कौतुक अवस्था में हो तो निष्पाप गायन विद्यायुक्त होता है। ७ वे और ८ वे स्थान में हो तो वेरयागामी होता है। शुभ राशि में हो तो पवित्र बुद्धिवाला होता है और अन्त में सद्गति होती है ॥९८॥ जब बुध निद्रा अवस्था में हो तो जातक सदा रोगी विकल दुःखी कलहकारी और धन मान से हीन होता है ॥९९॥

गुरुफल—जन्म समय में यदि बृहस्पति बलवान् होकर शयन अवस्था में हो तो धीमी आवाज वाला गौर वर्ण लम्बी ठोड़ीवाला तथा शत्रु में भय माननेवाला होता है ॥१००॥ जब बृहस्पति उपवेश अवस्था में हो तो जातक बकवादी घमण्डी राजा और शत्रु से दुःखी तथा पैर जघा हाथ और मूल वणयुक्त होता है ॥१०१॥ जब बृहस्पति नेत्रपाणि अवस्था में हो तो रोगी दरिद्री नाचगानप्रिय कामी गौरवर्ण वर्णशकर तथा प्रेमी होता है ॥१०२॥

गुणानामानन्द विमलगुणकद्व बितनुते सदा तेजः पुज द्रजपतिनिकुजप्रतिगमम् ॥ प्रकाश चेदुज्जे द्रुतमुपगतो चासन्नगुरुर्गुरुत्व लोकाणा धनपतिसमत्व तनुमृताम् ॥१०३॥ साहसी भवति मानव सदा मित्रवर्गमुखपूरितो मुदा ॥ पंडितो विविधवित्तमंडितो वेदविद्यदि गुरो गम गते ॥१०४॥ आगमनेजनता वरजाया यस्य जनुसमये हरिमाया ॥ भुवति नालमिहालयमद्धा देवगुरो परित परिबद्धा ॥१०५॥ सुरगुरुसमयक्ता शुभ्रमुक्ताफलादध सदासि सपदि पूर्णो वित्तमार्णिक्यमाने ॥ यजनुरगरथाडधो देवताधीसपूज्यो जनुधि विविधविद्यार्षितो मानव स्यात् ॥१०६॥ नानावाहनमानयानपटलीसौख्य गुरावागभे भृत्यापत्यकलप्रमित्रजमुख विद्याऽनवद्या भवेत् ॥ क्षोणीपालसमानतानवरत चातीवहृद्या मति काव्यानदरति सदा हितगति सर्वत्र मानोऽप्रति ॥१०७॥

जब बृहस्पति प्रकाश अवस्था में हो तो गुणी सुखी तजस्वी राजमान्य नोबमान्य मद्राधनी होता है ॥१०३॥ जब बृहस्पति गमन अवस्था में होता है तो मनुष्य माहनी मित्रवर्गयुक्त पण्डित धनी तथा विद्वान् होता है ॥१०४॥ जब बृहस्पति जन्मनक्षत्र में आगम अवस्था में होता है तो श्रेष्ठ भार्या तथा स्थिर नदमीवाला हाता है ॥१०५॥ जब बृहस्पति मभा अवस्था में हो तो जातक बृहस्पति के गमान् वता मणिमार्णिक्ययुक्त शश्वर्यशानी तथा

अनेक विद्यापारगत होता है॥१०६॥ बृहस्पति यदि आगम अवस्था मे हो तो मनुष्य के अनेक सवारी तथा नौकर-चाकर, भार्या, पुत्र, मित्र का सुख तथा श्रेष्ठ विद्या होती है। और निरन्तर राजा के समान ऐश्वर्य तथा निर्मल बुद्धि और काव्य विनोद तथा कल्याण एव सन्मान की उन्नति होती है॥१०७॥

भोजने भवति देवपुरोधाः यस्य तस्य सततं सुभोजनम् ॥ नैव भुञ्चति रमालयं तदा वाजिदारणरथैश्च मंडितम् ॥१०८॥ नृत्यलिप्सागते राजमानी धनी देवताधीरावंधः सदा-धर्मवित् ॥ तंत्रविज्ञो बुधैर्मंडितः पंडितः शब्द विद्यामवधो हि सद्यो जनः ॥१०९॥ कुतूहली सकौतुके महाधनी जनः सदा ॥ निजान्वये च भास्करः कृपाकलाधरः सुखी ॥ निविंपराजपूजिते सुतेन भूनयेन वा युतो महाबली धराधिपेन्द्रसप्तपंडितः ॥११०॥ गुरौ निद्रागते यस्य मूर्खता सर्वकर्मणि ॥ दरिद्रतापरिक्रान्तं भवनं पुंष्यवर्जितम्॥१११॥

देवगुरु जब भोजन अवस्था मे हो तो निरन्तर अच्छा भोजन, सदा रहनेवाली लक्ष्मी तथा अनेक प्रकार की सवारी वाला होता है॥१०८॥ बृहस्पति नृत्य लिप्सा अवस्था मे हो तो जातक राजमानी, धनी धर्मत्मा, तन्त्र विद्या विचारद, विद्वद्गोष्ठीगुप्त, पण्डित तथा श्रेष्ठ वैयाकरणी होता है॥१०९॥ जब बृहस्पति कौतुक अवस्था मे हो तो कौतुहल प्रिय, महाधनी, कृपालु, अपने कुल का सूर्य, सुखी, भूमि तथा सन्तानयुक्त, महाबली तथा राजाधिराज की सभा का पण्डित होता है॥११०॥ बृहस्पति यदि निद्रा अवस्था मे हो तो कर्मजानहीन, मूर्ख, पुष्पहीन, दरिद्री होता है॥१११॥

### अथ मृगुफलमाह

जनो बलीयानपि बंतरोगी मृगौ महारोषसमन्वितः स्यात् ॥ धनेन हीनः शपनं प्रयाते चारांगनासंगमसंपटश्च ॥११२॥ यदि भवेदुराना उपवेशने नक्षमणिव्रजकांचनमूषणैः ॥ सुहभजस्रमरिचय आदराद्भवनिपादपि मानसमुन्नतिः ॥११३॥

शुक्र फल-जिस मनुष्य के जन्म लग्न मे शुक्र क्रोधी अवस्था मे होता है तो मनुष्य दन्त-रोषी होता है। और यदि जपन अवस्था मे हो तो अन्हीन, वैश्यापत्नी और लम्पट होता है॥११२॥ यदि शुक्र उपवेश अवस्था मे हो तो मणि, काचन, मूषणयुक्त, निरन्तर सुखी, शत्रु क्षय, राजा से सम्मान पानेवाला होता है॥११३॥

नेत्रपाणिं गते लग्नगोहे कबी सप्तमे मानमे यस्य तस्य ध्रुवम्॥नेत्रपाते निपातो धनानामलं चान्यमे वासरात्ता विरात्ता भवेत्॥११४॥स्वालये तुंगमे मित्रमे भागवे तुंगमातंगलीसाकलापी जनः ॥ भूपतेस्तुल्य एव प्रकाश गते काव्यविद्याकलाकौतुकी गीतवित् ॥११५॥ गमने जनने शुके तस्य माता न जीवति ॥ आधियोगो वियोगश्च जनानामरिभोतितः ॥११६॥ आपमनं नृगुपुत्रे गतवति बितेश्वरे मनुजः ॥ सतीर्थश्चमशाली नित्योत्साही कराधिरोगो च ॥११७॥ अनायासेनालं सपदि महसा याति सहसा प्रगल्भत्व राजः सवसि गुणवित्तः किल क्वचि ॥

सभायामायाते रिपुनिबहहन्ता धनपतेः समत्व वा दाता बलतुरगगता नरवरः ॥११८॥  
 आगमे भार्गविनागमौ जन्मिनामर्थराशेररातेरतीव क्षतिः ॥ पुत्रपातो निपातो जना नामपि  
 व्याधिभीतिः प्रियाभोगहानिर्भवेत् ॥११९॥

यदि शुक्र नेत्रपाणि अवस्था मे लग्न, सप्तम या दशम भाव मे हो तो हर तरह से धन की प्राप्ति हो। अन्य राशि मे हो तो विशाल भवन हो॥१०४॥ यदि शुक्र प्रकाश अवस्था मे अपनी राशि का या उच्च राशि अथवा मित्र राशि मे हो तो उस मनुष्य के हाथी घोड़े हों, राजा के तुल्य ऐश्वर्य हो। काव्य विनोदी एव गायन विद्या रसिक हो॥११५॥ जिस मनुष्य के जन्म लग्न मे शुक्र गमन अवस्था मे हो उसको माता का सुख नहीं होता तथा सदा रोगी, इष्ट जनों का वियोग एव शत्रुभय होता है॥११६॥ शुक्र यदि आगमन अवस्था मे हो तो धनी, तीर्थ यात्रा प्रेमी, उत्साही तथा हाथ पैर का रोगी होता है॥११७॥ यदि शुक्र सभा अवस्था मे हो तो बिना परिश्रम के सहसा लक्ष्मी आती है। राजा की सभा मे चतुर, विद्वान्, कवि और गुणी होता है, शत्रु ज्ञाश करनेवाला, धन कुवेर, सवारीवाला और माननीय होता है॥११८॥ यदि शुक्र आगम अवस्था मे हो तो शत्रु के कारण धन की हानि, पुत्र तथा बन्धुओं की हानि, भार्या हानि एव रोग भय होता है॥११९॥

क्षुधानुरो व्याधिनिपीडितः स्यादनेकधारातिभयार्हितश्च ॥ क्वौ यदा भोजनगे पुवत्या  
 महाधनीः पण्डितमडितश्च ॥१२०॥ काव्यविद्यानवद्या च हृद्या मतिः सर्वदा नृत्यतिप्सागते  
 भार्गवे ॥ शखवीणाभृदंगादिमानध्वनिप्रातनैपुण्यमेतस्य वित्तोप्रातिः ॥१२१॥ कौतुकभवन  
 गतयति शुके शक्रेशत्व सवसि महत्त्वम् ॥ हृद्या विद्या भवति च पुस पद्या निवसति सघादरत  
 ॥१२२॥ परसेवारतो नित्य निद्रामुपगते कवी ॥ परनिदापरो वीरो वाचात्तो भ्रमते  
 महोम् ॥१२३॥

जब शुक्र क्षुधित अवस्था मे हो तो रोगी, शत्रुभय तथा दुःखी होता है। और शुक्र जब भोजन अवस्था मे हो तो महाधनी भार्यामयु और पण्डितो मे मान्य होता है॥१२०॥ जब शुक्र मृत लिप्सा अवस्था मे हो तो निष्पाप कविता बनानेवाला, मुबुद्धि, अनेक प्रकार के वाद्य तथा गान मे निपुण और धनी होता है॥१२१॥ जब शुक्र कौतुक अवस्था मे हो तो सभा मे इन्द्र के समान आदर पानेवाला, विद्वान और मदा लक्ष्मीवाला होता है॥१२२॥ जब शुक्र निद्रा अवस्था मे हो तो दूसरे वर नीकर निन्दक वाचाल और घुमसरत होता है॥१२३॥

### अथ शनिफलम्

क्षुत्पिपासापरिक्रांतो विभ्रांतः शयने शनी ॥ ययसि प्रथमे रोगो ततो भाग्यवता वरः ॥१२४॥  
 भानोः सुते चेदुपवेशनस्ये करालकारातिजनानुत्पत्तः ॥ अपायमाती मनु ददुमाती  
 नरोऽभिमानो नृपदङ्गुक्तः ॥१२५॥ नयनपाणिगते रविनदने परमया रमपारमयापुतः ॥  
 मरुतितो हिततो मतितोपकृद्द्रहकलाकलितो विमलोक्तिः ॥१२६॥ मानागुणप्रामधनाधिमाती  
 सदा नरो बुद्धिबिनोदमाती ॥ प्रकाग्ने भानुमुते मुभानुः कृपानुरक्तो हृत्पादमत्तः

॥१२७॥ महाधनीनन्दनदितः स्वादपायकारी रिपुभूमिहारो ॥ गमे शनौ पडितराजभाव  
धरापतेरापतने प्रयाति ॥१२८॥ आगमने पदगर्दभयुक्त पुत्रकलत्रसुखेन विमुक्तः ॥ भानुसुते  
भ्रमते भुवि नित्य वीनमना धिजनाश्रयभावम् ॥१२९॥ रत्नावलीकाचनमौक्तिकाना वातेन  
नित्य व्रजति प्रमोदम् ॥ सभागते भानुसुते जितात नयेन पूर्णो मनुजो महौजा ॥१३०॥ आगमे  
गदसमागमो नृणामब्जबधुतनये यदा तदा ॥ मदमेव गमन धरापतेर्याचनाविरहिता मति  
सदा ॥१३१॥

शनिफल—यदि शनि शयन अवस्था मे हो तो भूख प्यास से व्याकुल तथा प्रथम अवस्था मे  
रोगी और वृद्धावस्थामे भाग्यशाली होता है ॥१२४॥ शनि यदि उपवेश अवस्थामे हो तो समाज से  
दुखी, कैदी, विप्रवाधायुक्त, दाद, खाजका रोगी तथा राजदडभोगी होता है ॥१२५॥  
शनि यदि नयन पाणि अवस्था मे हो तो परम श्रेष्ठ लक्ष्मीयुक्त राजा तथा बान्धवो का हितैषी  
और सतोष पानेवाला तथा कमाकुशल एव मिष्टभाषी होता है ॥१२६॥ शनि जब प्रकाश  
अवस्था मे हो तो अनेक गुणयुक्त तथा ऐश्वर्यशाली तथा विनोदी, कृपालु तथा हरिभक्त होता  
है ॥१२७॥ शनि गमन अवस्था मे हो तो जातक महाधनी, पुत्रयुक्त, दुष्टबुद्धि तथा शत्रु की  
भूमि का हरण करनेवाला एव राजभवन मे पण्डितराज तुल्य माननीय होता है ॥१२८॥ शनि  
यदि आगमन अवस्था मे हो तो गधे के समान तथा स्त्री-पुत्र सुखहीन, व्यर्थ विचरणशील  
दीन तथा जनाश्रयहीन होता है ॥१२९॥ शनि यदि सभा अवस्था मे हो तो रत्न, सुवर्ण, भोती  
आदि की प्राप्ति का सुख तथा नीतिमान् तेजस्वी होता है ॥१३०॥ शनि आगम अवस्था मे हो  
तो जातक रोगी मन्दगामी, मनरखी एव कभी याचना नहीं करता ॥१३१॥

सगतेजनुधि भानुनदने भोजन भवति भोजन रसै ॥ सयुत नयनमदतातता  
मोहतापपरितापिता मति ॥१३२॥ नृत्यलिप्सागते मन्दे धर्मात्मा वित्तपूरित ॥ राजपूज्यो  
नरो धीरो महावीरो रणागणे ॥१३३॥ भवति कौतुकभावमुपागते रविमुते बसुधाबमुपूरित  
॥ अतिमुखी सुमुखीसुखपूरित कवितयामलया कलया नर ॥१३४॥ निद्रागते वासरनाथपुत्रे  
धनी सदा चाख्युणेरुपेत ॥ पराक्रमी चडविपदाहता सुवारकातारतिरीतिविज्ञ ॥१३५॥

शनि यदि भोजन अवस्था मे हो तो जातक को रसयुक्त भोजन प्राप्त होता है; दृष्टि गाद्य,  
तथा मोह एव दुःख से दुःखी रहता है ॥१३२॥ शनि नृत्यलिप्सा अवस्था मे हो तो धर्मात्मा  
धनी, राजपूज्य, धीर तथा रणाशूर होता है ॥१३३॥ शनि यदि कौतुकभाव मे हो तो जातक  
धन, भूमियुक्त होता है। अतिमुखी तथा स्त्रीसुखयुक्त श्रेष्ठकवित्वशक्ति युक्त होता है ॥१३४॥  
शनि निद्रा अवस्था मे हो तो जातक सदा धनी, सुन्दर गुणयुक्त पराक्रमी, शत्रुनाशकारी तथा  
बारबिलासिनी रति प्रिय होता है ॥१३५॥

अथ राहफलम्

यदागमो जन्मनि पस्थ राहौ क्लेशाधिकत्व शयन प्रयाते ॥ वृषेऽथ युगमेपि च कन्यकायामजे समाजो  
धनधान्यरोगे ॥१३६॥ उपवेशनमिह गतवति राहौ ददुगदेन जन परितप्त ॥ राजस  
माजयुतो बहूमानो विसुखेन सदा रहितः स्यात् ॥१३७॥ नेत्रपाणावगौ नेत्रे भवती

रोगपीडिते ॥ दुष्टव्यासारिचौराणां भयं तस्य धनक्षयः ॥१३८॥

राहु फल—जन्म लग्न मे राहु शयन अवस्था मे हो तो अधिक क्लेशकारी होता है। तथा १।२।३।६ राशि मे हो तो धन, धान्य समूहाधिपति होता है॥१३६॥ राहु उपवेश अवस्था मे हो तो जातक दाट रोग से दुःखी रहता है। राजसभा में गति होने पर भी घमण्डी होने से सदा धनहीन रहता है॥१३७॥ राहु नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो जातक के नेत्र रोगी ही रहते हैं तथा सर्प, चोर, आदि से भय और धन हानि होती है॥१३८॥

प्रकाशने शुभासने स्थितिः कृतिः शुभा नृणां धनोन्नतिर्गुणोन्नतिः सदा विदामगाविह ॥ धराधिपाधिकारता यशोलता तदा भवेन्नवीनमीरदाकृतिर्विदेशतो महोन्नतिः ॥१३९॥ गमने च यदा राहौ बहुसंतानवाप्ररः ॥ पंडितो धनवान्दाता राजपूज्यो नरो भवेत् ॥१४०॥ राहावागमने क्रोधी सदा धीधनवर्जितः ॥ कुटिलः कृपणः कामी नरो भवति सर्वथा ॥१४१॥ सभागतो यदा राहुः पंडितः कृपणो नरः ॥ नानागुणपरिक्रान्तो वित्तसौख्यसमन्वितः ॥१४२॥ चेदगावागमं यस्य याते तदा व्याकुलत्वं सदारतिमीत्याभयम् ॥ महद्वन्धुवादो जनानां निपातो भवेद्वित्तहानिः शठत्वं कृशत्वम् ॥१४३॥ भोजने भोजनेनालं विकलो मनुजो भवेत् ॥ मन्दबुद्धिः क्रियाभीरुः स्त्रीपुत्रमुखवर्जितः ॥१४४॥ नृत्यलिप्सागते राहौ महाव्याधिवर्धनम् ॥ नेत्ररोगो रिपोर्भीतिर्दैनधर्मश्रयो नृणाम् ॥१४५॥

राहु प्रकाशन अवस्था मे हो तो शुभआसन (स्थान) मे स्थिति हो, धनवृद्धि तथा गुणो की उन्नति होती है राजपद का अधिकारी होता है। श्याम वर्ण और विदेश मे उन्नति होती है॥१३९॥ राहु गमन अवस्था मे हो तो सन्तान बहुत होती है। जातक पंडित तथा मेघावी, धनवान्, दानी, राजपूज्य होता है॥१४०॥ राहु आगमन अवस्था मे हो तो जातक निर्मुक्ति, धनहीन, कुटिल, कृपण तथा कामी होता है॥१४१॥ राहु सभा अवस्था मे हो तो पण्डित, कृपण, कामी, नाना गुणयुक्त तथा धनी और सुखी होता है॥१४२॥ यदि राहु आगमन अवस्था मे हो व्याकुल तथा शत्रुभय से पीडित, बन्धुओ से विवादी और धन हानि, शठ, कृश और जनहीन होता है॥१४३॥ राहु भोजन अवस्था मे हो तो जातक को भोजन की ही चिन्ता रहती है। मन्दबुद्धि कामचोर तथा स्त्री पुत्र सुख हीन होता है॥१४४॥ राहु नृत्यलिप्सा अवस्था मे हो तो रोग बढ़ता ही रहता है। नेत्र रोगी ही रहते हैं, शत्रु से भय, धन तथा धर्म का क्षय होता है॥१४५॥

कौतुके च यदा राहौ स्थानहीनो नरो भवेत् ॥परदाररतो नित्य परवितापहारकः ॥१४६॥ निद्रावस्थां गते राहौ गुणघामयुतो नरः ॥ कातासन्तानवान्धीरो गर्वितो बहुवित्तवान् ॥१४७॥

अथ केतुफलम्

मेघे ज्येष्ठ्य वा पुग्मे कन्यायां शयनं गते ॥ केतो धनसमृद्धिः स्यादन्वये रोगवर्धनम् ॥१४८॥

उपवेश गते केतौ बहुरोगविवर्द्धनम् ॥ अरिवातनृपव्यालचौरशका समतत ॥१४९॥ नेत्रपाणि गते केतौ नेत्ररोग प्रजायते ॥ दुष्टसर्पादिभीतिश्च रिपुराजकुलादपि ॥१५०॥ केतौ प्रकाशने सजे धनवान्धार्मिक सदा ॥ नित्य प्रवासी चोत्साही सात्त्विको राजसेवक ॥१५१॥ गमेच्छाया भवेत्केतुर्बहुपुत्रो महाधन ॥ पंडितो गुणवान्वाता जायते च नरोत्तम ॥१५२॥ आगमे च पदा केतुर्नानारोगो धनक्षय ॥ दतघातो महारोगो पिशुन परनिन्दक ॥१५३॥

जब राहु कौतुक अवस्था मे हो तो मनुष्य को रहने का ठिकाना भी नहीं रहता। परस्त्रीगामी तथा चोर होता है॥१४६॥ राहु निद्रावस्था मे हो तो गुण समूह युक्त, स्त्री पुत्र से सुखी धनी, गर्वीला तथा धीर होता है॥१४७॥

केतु फल—केतु शयनअवस्था मे १।२।३।६ राशि मे हो तो धनसमृद्धि हो, और राशियों मे हो तो रोग की वृद्धि हो॥१४८॥ केतु उपवेश अवस्था मे हो तो दाद—खाज आदि रोग तथा शत्रु, सर्प, चोर तथा राज भय रहता है॥१४९॥ केतु नेत्रपाणि अवस्था मे हो जो जातक को नेत्ररोग तथा सर्पभय एव शत्रु और राजकुल से भय होता है॥१५०॥ केतु प्रकाश अवस्था मे हो तो धनवान्, धार्मिक, प्रवासी, उत्साही सात्त्विकभाववाला और राजसेवक होता है॥१५१॥ केतु गमन अवस्था मे हो तो पुत्र ब्रह्म हो तथा धनी पण्डित, गुणी और दाता होता है॥१५२॥ जब केतु आगम अवस्था मे हो जो जातक को नाना रोग धनक्षय, दन्तरोग आदि होते है और चुगलखोर तथा परनिन्दक होता है॥१५३॥

सभावस्था गते केतौ वाचालो बहुगर्वित ॥ कृपणो लम्पटश्चैव धूर्तविद्याविशारद ॥१५४॥ यदागमे भवेत्केतु केतु स्वात्पापकर्मणाम् ॥ बन्धुबादरतो दुष्टो रिपुरोगनिपीडित ॥१५५॥ भोजने तु जन्तो नित्य क्षुधया परिपीडित ॥ दरिद्रो रोगसतत केतौ भ्रमति मेदिनीम् ॥१५६॥ नृत्यलिप्सागते केतौ व्याधिना विकृतो भवेत् । बुद्बुदालो दुराधर्यो धूर्तोजर्षकरो नर ॥१५७॥ कौतुकी कौतुके केतौ नटयामारतिप्रिय ॥ स्थानभ्रष्टो दुराचारी दरिद्रो भ्रमते महीम् ॥१५८॥ निद्रावस्था गते केतौ धनधान्यसुख महत् ॥ नानापुणर्विनोदेन कालो गच्छति जन्मिनाम् ॥१५९॥

केतु 'सभा' अवस्था मे हो तो वाचाल, अभिमानी, कृपण, लम्पट तथा धूर्त होना है॥१५४॥ केतु यदि 'आगम' अवस्था मे हो तो जातक पापी, बन्धु मे बन्धु बर्णनेवान्ना दुष्ट एव शत्रु तथा रोगी होता है॥१५५॥ केतु यदि 'भोजन' अवस्था मे हो तो जातक भिममगा, दरिद्र, रोगी तथा घुमक्कड होता है॥१५६॥ केतु 'नृत्यलिप्सा' मे हो तो गदा रोगी तथा आम की बीमारी वाला, धूर्त तथा अनर्थकारी होता है॥१५७॥ केतु 'कौतुक' अवस्था मे हो तो नटजाति की स्त्री का प्रेमी, स्थानभ्रष्ट, दुराचारी, दरिद्र तथा यात्राप्रेमी होना है॥१५८॥ केतु 'निद्रा' अवस्था मे हो तो धनधान्य का विगण मुग होता है और अनेक गुण विनोद मे गमय यापन होता है॥१५९॥



## अथ सर्वभावफलम्

शयनाद्येषु भावेषु यस्य तिष्ठति सद्ग्रहा ॥ नित्य तस्य शुभ ज्ञान निर्विशक द्विजोत्तम ॥१६०॥ योजनाद्येकभावेषु पापास्तिष्ठति सर्वथा ॥ तदा सर्वविनाशोऽपि नात्र कार्या विचारणा ॥१६१॥ निद्राया च यदा पापो जायास्थाने शुभ वदेत् ॥ यदि पापग्रहैर्दृष्टो न शुभ च कदाचन ॥१६२॥ सुतस्थाने स्थित पापो निद्राया शयनेऽपि वा ॥ तदा शुभ भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥१६३॥ मृत्युस्थानस्थित पापो निद्राया शयनेपि वा ॥ तदा तस्यापमृत्यु स्याद्राजतः परतस्तथा ॥१६४॥ शुभग्रहैर्मदा युक्त शुभैर्वा यदि वीक्षित ॥ तदा च मरण तस्य गमया च विशेषत ॥१६५॥ कर्मस्थाने यदा पाप शयने भोजनेऽपि वा ॥ तदा कर्मविपाक स्यात्प्रानादु लप्रदायकः ॥१६६॥ दशमस्थो निशानाथ कौतुकी च प्रकाशने ॥ तदैव राजयोग स्यान्निर्विशक द्विजोत्तम ॥१६७॥ बलाबलविचारेण ज्ञायते च शुभाशुभम् ॥ एव क्रमेण बौद्धव्य सर्व भावेषु बुद्धिमन् ॥१६८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे ग्रहाद्यवस्थाफलकथन  
नाम त्रिंशोऽध्याय समाप्त ॥३०॥

सर्वभावफल—ऊपर कहे गये भावफलो मे यदि शुभग्रहो का योग हो तो समय समय पर सद्बुद्धि होती रहती है॥१६०॥ भोजन अवस्था मे यदि पाप ग्रह हो तो रात्र प्रकार मे विनाश ही होता है॥१६१॥ पापग्रह निद्रावस्था मे सप्तमभाव मे हो तो शुभफल होता है और यदि पापग्रह से दृष्ट हो तो शुभफल नहीं होता॥१६२॥ पापग्रह निद्रावस्था मे पचमभाव मे हो तो सन्तान के लिए शुभकारी है॥१६३॥ यदि अष्टम भाव मे पापग्रह निद्रावस्था मे हो तो जातव की अकाल मृत्यु राज के कारण या अन्य कारण से होती है॥१६४॥ यदि शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो विशेष करके भगा मे डूबकर मृत्यु होती है॥१६५॥ यदि दशम् भाव मे पापग्रह शयन या भोजन अवस्था मे हो तो जातव को अनेक दुखों का सामना करना पड़ता है॥१६६॥ यदि चन्द्रमा दशमभाव मे कौतुव अथवा प्रकाश अवस्था मे हो तो नि सन्देह राजयोग कारक होता है॥१६७॥ इस प्रकार ग्रहो का बलाबल विचार करके शुभाशुभ फल का निर्देश करना चाहिये। और इसी क्रम से सभी भावों मे विचार करना चाहिए॥१६८॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० ग्रहाद्यवस्था फलकथन  
नाम त्रिंशोऽध्याय ॥३०॥

## मैत्रेय उवाच

दशा कतिविधा सति होतन्नेब्रूहि तत्त्वत ॥ महर्षे त्व समर्थोसि कृपया करुणानिधे ॥१॥

## पराशर उवाच

अथातःसप्रयस्यामि दशामेदानेकया ॥ त्रिंशोत्तरी दशा चोक्ता दशा तु घोडशोत्तरी ॥२॥

द्वादशोत्तरिका ज्ञेया तथैवाष्टोत्तरी दशा ॥ पचोत्तरी दशा तद्दशा शतसमा स्मृता ॥३॥ दशा हि चतुराशीति प्राह चाय द्विसप्तति ॥ तथा षष्टिसमा चोक्ता दशा षड्विंशति समा ॥४॥ नवमाणवदशा राश्यशकदशा स्मृता ॥ दशा कालाभिधा चक्रदशाचक्र मुनीश्वरं ॥५॥ चरपर्या दशा विप्र द्विजोत्तमदशा स्थिरा अथोत्तरदशा विप्र ब्रह्मता चापरा दशा ॥६॥ केन्द्राद्या च दशा ज्ञेया कारकादिग्रहा दशा ॥ माडूकी च दशा प्रोक्ता तथा शूलदशापि वा ॥७॥ योगार्द्धगा दशा विप्र दृग्दशा कथयाम्यहम् ॥ दशा त्रिकोणनामा वै राशीना च दशा तथा ॥८॥ तारादशा तथा ज्ञेया दशा ज्ञेया च वर्णदा ॥ पचस्वरदशा विप्र योगिनी च दशा स्मृता ॥९॥ तत पैण्ड्यदशा ज्ञेया तथाशी च दशा द्विज ॥ नैसर्गिकदशा विप्र अष्टवर्गदशा स्मृता ॥१०॥ सध्या दशा च ज्ञातव्या पाचका च दशा द्विज ॥ द्विचत्वारिंशद्भेदा स्यु कथयामि तवाग्रत ॥११॥

### अनेक दशाभेद कथन

मैत्रेय जी बोले—हे महर्षि! दशा कितने प्रकार की है यह आप कहिये क्योंकि हे करुणानिधि! इस विषय के कहने में आप ही समर्थ हैं ॥१॥ महर्षि पराशरजी ने कहा—अब हम अनेक दशा भिन्न भिन्न रूप से कहते हैं। विशोत्तरी दशा तथा षोडशोत्तरी द्वादशोत्तरी अष्टोत्तरी, पचोत्तरी, शताब्दिका, तथा चतुराशीति वर्षा, द्विसप्तति वर्षा षष्टि समा, तथा षड्विंशति समा, नवमाण दशा, राश्यश दशा तथा कालदशा कालचक्रदशा चरपर्यायदशा स्थिरदशा, ब्रह्मदशा, केन्द्रदशा, कारकदशा माडूकीदशा शूलदशा योगार्द्ध दशा दृग्दशा त्रिकोण दशा, राशि दशा, तारा दशा वर्णदशा पचस्वर दशा योगिनी दशा, पैण्डी दशा अशी दशा, नैसर्गिक दशा, अष्टवर्ग दशा सध्या दशा पाचक दशा आदि ४२ प्रकार की दशा है। उनमें से कुछ प्रसिद्ध प्रसिद्ध दशा का विचार कथन करते हैं ॥ श्लोक २ से ११ तक ॥

### अथ विशोत्तरीदशामाह

आमयनप्रकार च धृगुष्व द्विजपुगव ॥ नामनक्षत्रपर्यन्तमाधार कृत्तिकादित ॥१२॥ दहनात्स्वर्षपर्यन्त गणयेन्नवभिहरेत् ॥१३॥ सूर्येन्दुक्षमाजतमसो वाक्पतिर्मदचक्रजौ ॥ केतुशुक्रौ क्रमादेते जितेपाश्र दशाधिपा ॥१४॥ रसागामुनिघृत्यब्दा भूपतिर्धृतिवत्सरा ॥ सप्तदेवो नगा व्योमबाहवो भास्करावित ॥१५॥

### विशोत्तरी दशा प्रकार

विशोत्तरी दशा स्पष्ट करने का प्रकार यह है कि—कृत्तिका नक्षत्र से गणना करना चाहिये ॥१२॥ कृत्तिका से अपने नक्षत्र तक गणना करके अधिक हो तो ९ का भाग देना चाहिये ॥१३॥ दशा के क्रम से स्वामी कहते हैं। सू० च० म० रा० वृ० श० बु० के० शु० । आई हुई सध्या क अनुसार स्वामी होता है ॥१४॥ क्रम से वर्ष सध्या ६, १०, ७, १८, १६ १९ १७, ७ २० जानना ॥१५॥

उदाहरण—वत्पना किया किसी का जन्म कृत्तिका नक्षत्र में है, अत भयात् १५।१० है भयोग ६०।३० है, पत्रमय भयात् ११० को सूर्य के वर्ष ६ से गुणा किया तो ५४६० हुए,



### विंशोत्तरीदशाचक्रम्

२०१४	२०१८	२०२८	२०३५	२०५३	२०६९	२०८८	
३	९	९	९	९	९	९	सबत्
५	०४	४	४	४	४	४	राशि
८	५९	५९	५९	५९	५९	५९	अश
१३	१८	१८	१८	१८	१८	१८	घटी
							पल

### अथ षोडशोत्तरीदशामाह

एक पञ्चयुतौ वदाधृत्यत बत्तरा क्रमात् ॥ रविर्मासो गुरुमन्दकेतुश्चन्द्रो बुधो मृगु ॥१६॥  
 अष्टौ दशाधिपा प्रोक्ता राहुहीना नवग्रहा ॥ पुष्यमाज्जन्मभ यावद्गणयेद्दशभिर्हरित् ॥१७॥  
 सूर्यहोरागते शुक्ले चन्द्रस्य कृष्णपक्षके ॥ तदा नृण कलापार्याय विहित्या षोडशोत्तरी ॥१८॥

### षोडशोत्तरी दशा प्रकार

षोडशोत्तरी दशा में वर्ष सख्या ११ से १८ तक जानना और दशास्वामी सू० म० गु० म० के० च० बु० शु० होते हैं। ये आठ दशास्वामी ग्रह हैं ॥१६॥ इन दशाधिपों में राहुग्रह की गणना नहीं है। पुष्य नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर आठ का भाग देना चाहिये ॥१७॥ शुक्लपक्ष में सूर्य की होरा और कृष्णपक्ष में चन्द्रमा की होरा से विचार करो। इस प्रकार मनुष्यों का शुभाशुभ विचार षोडशोत्तरी दशा से करो ॥१८॥

उदाहरण—पूर्वोदाहरण में जन्मनक्षत्र कृ० पलमय भयात् ९१० तथा भ्रमोग ३६३० है। दशा बुध की है, अतः ९१० को बुध के वर्ष १७ से भयात् ९१० को गुणा किया तो १५४७० हुआ, इसमें भ्रमोग ३६३० का भाग दिया तो लब्ध ४ वर्ष प्राप्त हुए, शेष ९५० को १२ से गुणा किया और ३६३० का भाग दिया तो ३ मास प्राप्त हुए और आगे भी इतना ३०१६०१६० से गुण कर भ्रमोग ३६३० के भाग से प्राप्त अरु दिन, घटी, पल प्राप्त ४११४१८ हुए, इस प्रकार ४१३४११४१८ वर्षादि दशा का मुक्तमान प्राप्त हुआ, इसको बुध के मान १७ वर्ष में घटाया तो १२।८।२५।४५।४२ यह बुध की भौष्य वर्षादि दशा हुई।

षोडशोत्तरी दशामानम्								
सू०	म०	वृ०	श०	के०	च०	बु०	शु०	घ०
११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	व०
पु०	श्ले०	म०	पूफा	उफा	ह०	वि०	स्वा०	न०
बि०	जु०	ज्ये०	मू०	पूया	उवा	ष०	घ०	न०
श०	पूमा	उमा	रे०	अ०	म०	कृ०	रो०	न०
मृ०	आ०	पुन०	X	X	X	X	X	न०
षोडशोत्तरी दशा चक्रम्								
बु०	शु०	सू०	म०	वृ०	श०	के०	च०	घ०
१२	१८	११	१२	१३	१४	१५	१६	व०
८	०	०	०	०	०	०	०	मा०
२५	०	०	०	०	०	०	०	दि०
४५	०	०	०	०	०	०	०	घ०
४२	०	०	०	०	०	०	०	प०
२०१४	२०२७	२०४५	२०५६	२०६८	२०८१			सवत्
३	००	०	०	०	०			
५	००	०	०	०	०			
८	५३	५३	५३	५३	५३			
१३	५५	५५	५५	५५	५५			

अथ द्वादशोत्तरीदशामाह  
 सूर्यो गुरुः शिखी जौगुः कुजो मदी निशाकरः ॥ शुक्रहीना दशा ह्येतद्वि चयात्सप्तमात्समाः  
 ॥१९॥ जन्मभात्पीणपर्यन्त गणयेवष्टमिर्भजेत् ॥ नवमासो यदा जाता शुक्रस्य  
 द्वादशोत्तरी ॥२०॥

स्वामी ग्रह सू०७ शु०९ के०११ बु०१३ रा०१५ म०१७ ग०१९ च०२१ इनमें शुक्र ग्रह को छोड़ कर बाकी ग्रहों की सात से २-२ बढ़ाकर बर्ष सख्या की दशा जानना ॥१९॥ जन्म नक्षत्र से रेवती नक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग दे, शेष सख्या की दशा जाने, शुक्र के नवाश में जन्म हो तो द्वादशोत्तरी का विचार करो ॥१९॥२०॥

द्वादशोत्तरी दशा

द्वादशोत्तरी दशा क्रम चक्रम्								
सू०	शु०	के०	बु०	रा०	म०	ग०	च०	षष्ठा
७	९	११	१३	१५	१७	१९	२१	वर्षाणि

उदाहरण-भयात भभोग से पूर्ववत् दशा स्पष्ट करना।

अष्टोत्तरीदशामाह

सूर्यश्चन्द्रः कुजः सौम्यः शनिर्जीवस्तमो मृगुः ॥ एते दशाधिपाः प्रोक्ता विना केतु नवग्रहा  
 ॥२१॥ रसाः पचेन्द्वो नागाः शैलवंद्रा नभेन्दवः ॥ गोव्राः सूर्यकुनेत्राश्च समाः प्रद्योतमादयः  
 ॥२२॥ सप्तेशालोन्द्रकोणस्ये राहौ लग्ने स्थित विना ॥ अष्टोत्तरी द्विधा प्रोक्ता शिवाद्या  
 कृतिकादितः ॥२३॥ चतुष्क त्रितय तस्मान्चतुष्कं त्रितय पुनः ॥ यावत्सर्वजन्मस  
 तावद्गणयेच्च यथाक्रमम् ॥२४॥

अष्टोत्तरी दशा

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, शनि, गुरु, राहु, शुक्र ये ग्रह के विना दशास्वामी है ॥२१॥ तथा इनके बर्ष-सू०६ च०१५ म०८ बु०१७ शनि १० गुरु १९ राहु १२ शुक्र २१ इम से है ॥२२॥ सप्तेश से राहु लग्न को छोड़कर केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हो तो अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करना ॥ अष्टोत्तरी की गणना दो प्रकार की होती है, एक आर्द्रा से दूसरी कृतिका से ॥२३॥ कथित नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करो। प्रथम पर्याय में ४ नक्षत्र, दूसरे में तीन, पुनः ४ और पश्चात् ३, इसी प्रकार जन्म नक्षत्र तक गणना करनी चाहिये ॥२४॥ (वक्र में स्पष्ट समझना)

विशेष-“दशामानं चतुर्धा च त्रिधा चैव पुनःपुनः । अशुमानां शुमानाञ्च ग्रहाणां साधयेद्द्विजम् ॥” अर्थात् पापग्रहोके दशा वर्षोके ४ भाग करके प्रति नक्षत्र १ भाग तथा शुभग्रहो के ३ भाग करके प्रतिनक्षत्र १ भाग दशामान ग्रहण करना। इस प्रकार जन्म नक्षत्र का जो मान प्राप्त हो उससे पूर्ववत् भयात भोग से दशास्पष्ट करना चाहिए। तथा उत्तरापाद का चतुर्थ चरण और श्रवण का १५ वां भाग 'अभिजित्' नक्षत्र माना गया है, अतः उत्तरापाद के ३ चरण को ही भोग मानना और श्रवण के आदि के १५वें भाग रहित को भोग मानना तथा उत्तरापाद का चतुर्थ चरण और श्रवण के १५वें भाग को मिलाकर अभिजित नक्षत्र का भोग मानना। और इस भोग के अनुसार ही भयात स्पष्ट करके दशा का साधन करना चाहिये॥२४॥

अष्टोत्तरीदशायन्त्रम्			
सू० म० ७२	सं० भा० म० १८०	मं० १५	बुध २५४
६	१५	८	१७
आ० १८ पु० १८ सु० १८ भा० १८	म० ६० पू० ६० उ० ६० ० ०	ह० २४ वि० २४ स्वा० २४ वि० २४	श० ६८ ज्ये० ६८ सू० ६८ ० ०
श० १२०	बु० २२८	रा० १४४	शु० २५२
१०	१९	१२	२१
पू० ३० उ० ३० मि० ३० श० ३०	घ० ७६ म० ७६ पू० भा० ७६ ० ०	उ० ३६ रे० ३६ म० ३६ म० ३६	ह० ८४ रो० ८४ सू० ८४ ० ०

उदाहरण-कल्पना किया कि-किसी जातक का जन्म उत्तरापाद के द्वितीय चरण में है, और भयात ३०।५ है, तथा भोग ६०।४० है तो यहाँ पर अभिजित् के भाग के नाम का चतुर्धा १५।१८ घटाया तो शेष ४५।३० यह उत्तरापाद का भोग हुआ और भयात वही ३०।५ है, इसके पलात्मक १८०५ को गनिदशा के द्वितीय नक्षत्र (ऊपर चक्र में देखिये) के मान ३०

(मास) से गुणा किया तो ५४१५० हुए, इससे १४।५२।३६ मातादि प्राप्त हुए। यह उत्तराषाढ का भुक्तमान हुआ। इसको ३० (मास) में घटाया तो १५।७।२४ यह उत्तराषाढ का भोग्य मान हुआ, इसमें अभिजित् और श्रवण के मान ३०-३० मास का योग किया तो ७५।७।२४।०० हुआ मास सख्या में १२ का भाग दिया तो ६।३।७।२४।०० यह शक्ति की भाग्य दशा हुई।

विशेष सूचना—केवल अष्टोत्तरी और षष्ठघण्डिका दशामे अभिजित् की गणना है। अतः उषा अभि और श्रवण का भभोग मान पूर्वोक्त रीति से ग्रहण करना। अन्य नक्षत्रों में नक्षत्र के पूर्ण भभोग तथा भयात से विशोत्तरी के समान ही दशा साधन करना किन्तु दशा मान ऊपर चक्र में लिखे अनुसार पापग्रह का १/४ और शुभग्रह का १/३ पूर्ण भभोग के लिये ग्रहण करना चाहिए, मुक्त नक्षत्र के मान को छोड़कर भोग्यनक्षत्रके मानका योग करके भोग्यदशा साधन करना।

अष्टोत्तरी दशा चक्रम्								
श०	बृ०	रा०	सु०	शु०	च०	ध०	बु०	
६	१९	१२	२१	६	१५	८	१७	ब०
३	०	०	०	०	०	०	०	मा०
७	०	०	०	०	०	०	०	दि०
२४	०	०	०	०	०	०	०	घ०
००	०	०	०	०	०	०	०	प०
२०१४	२०२०	२०३९	२०५१	२०७२	२०७८			सम्बत्
३	६	६	६	६	६			रा
५	१२	१२	१२	१२	१२			अ
८	३९	३२	३२	३२	३२			क
१५ अ	१५	१५	१५	१५	१५			वि

### अथ पञ्चोत्तरीदशामाह

तमो विनाशानुराधादि विज्ञेय जन्मभाषधि ॥ गणयेत्सप्तमिर्मते शेषे कल्प्या दशा शुभा ॥२५॥ रविर्नार्किमुती भीमो भार्गवो रजनीकर ॥ याचस्पतिश्च कर्कगि तस्यैव द्वादशागिके ॥२६॥ पञ्चोत्तरी दशा जित्या द्वादशाद्या क्रमात्समा ॥ बलाबलधिवेकेन घपान्यायेन योजयेत् ॥२७॥

### पञ्चोत्तरी दशा

जिस जातक के बृहस्पति कर्कराशि में तथा कर्क के द्वादशाश में हो उसके लिए इस पञ्चोत्तरी दशा का विचार करना चाहिए। अनुराधा नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करना।



### अथ द्विसप्ततिकां दशामाह

लग्नेरो सप्तमे घत्र लग्ने वै मदनाधिपे ॥ चिंतनीया दशा तत्र द्व्यधिकाः सप्ततिः समाः ॥३३॥  
नव वर्षाणि सर्वेषां विकेतूनां प्रहात्मनाम् ॥ मूलान्जन्मर्लपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्हरित् ॥ शेषा  
दशा विचिंत्या च यदेज्जैव महामुने ॥३४॥

### अथ द्विसप्ततिकादशायन्त्रम्

र०	ख०	म०	पु०	वृ०	शु०	श०	रा०	पहा.
९	९	९	९	९	९	९	९	वर्षाणि
मूल०	पूर्वाषा०	उत्तरा०	श्रवण०	घनिष्ठा०	शत०	पूर्वाभा०	उ०भा०	न-
रेवती	अश्वि०	भरणी	कृत्ति०	रोहिणी	मृग	आर्द्रा	पुनर्वसु	स-
पुष्य	भाद्र०	मघा	पूर्वा	उत्तरा	हस्त	चित्रा	स्वाती	त्रा-
विशा०	अनुरा०	ज्येष्ठा	०	०	०	०	०	णि

### द्विसप्ततिका दशा

जिस जातक के लग्नेश सप्तमभाव में अथवा सप्तमेश लग्न में हो उसके लिए ७२ वर्ष की दशा का विचार करना चाहिए ॥३३॥ केतु को छोड़कर क्रम से सूर्यादि प्रह दशास्वामी हैं। सबके ९-९ वर्ष हैं। मूलनक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग देना। शेष सख्या से दशा जानना ॥३४॥

उदाहरण—किसी का जन्म श्रवण नक्षत्र में है तो बुध की दशा हुई, अतः श्रवण का भयात भभोग स्पष्ट करके विशोत्तरी दशा के समान ही दशा स्पष्ट करनी चाहिए।

### अथ षष्टिहायनीदशामाह

गुर्यर्कभूसुतानां च वर्षाणि दशकानि च ॥ ततः शशितशुक्रार्कपुत्रागूनां समाश्च वत् ॥३५॥  
दास्रात्रयं चतुष्कं च त्रयं वेदं पुनः पुनः ॥ यदेको लग्नराशीनांश्चिन्त्या षष्टिसमा तदा ॥३६॥

### षष्टिहायनी दशा

गुरु, सूर्य, मंगल, चंद्रमा, बुध, शुक्र, शनि, राहु ये दशा स्वामी तथा वर्षसख्या क्रम से १०-१०-१०-६-६-६-६ जानना ॥३५॥ अश्विनी नक्षत्र से ३-४-३-४ आदि क्रम से पुनः

पुनः दशा की गणना करना। सप्त की राशि तथा चन्द्र राशि एक ही हो उस जातक के लिए इस दशा का उपयोग है॥३६॥

सूचना—इस दशा की वर्षसंख्या भी अष्टोत्तरी दशा के समान तीन या चार नक्षत्रों पर विभाग करके १-१ भाग १-१ नक्षत्र का जानना। जिस ग्रह के तीन नक्षत्र हो, उसकी दशा के तीन करना, जैसे—बुध के तीन नक्षत्र हैं तो उसके ६ वर्षों के ३ भाग २-२ वर्ष के १-१ नक्षत्र के जानना। और ४ नक्षत्र हो तो ४ भाग करना, जैसे सूर्य के ४ नक्षत्र हैं तो दशा वर्ष १० के भाग २॥-२॥ वर्ष १-१ नक्षत्र के समझना।

उदाहरण—जैसे किसी का जन्म नक्षत्र स्वाती है तो बुध की दशा हुई, और स्वाती नक्षत्र का भयात भयोग क्रमशः २०१०० और ६०१०० है, तो स्वामी के २ वर्ष सख्या से भयात के पलाक को गुणा कर भयोग के पलाक का भाग देने से सन्ध भुक्त ०।८।०।०।० को २वर्षमें घटाया तो १।४।०।०।० हुआ, इसमें विशाखा के २ और अनुराधा के २वर्ष युक्त किये तो ५।४।०।०।० हुए।

अथ षष्टिहायनीदशायंत्रम्								
वृ०	र०	मं०	चं०	बु०	शु०	श०	रा०	घ्राः
१०	१०	१०	६	६	६	६	६	वर्षाणि:
अभि	रोहिणी	पुष्य	पूर्वा	स्वाती	ज्येष्ठा	मिथु	शत	न
मरुती	मृग	आश्ले०	उ०फा०	बिरा०	मूल	धरुण	पूर्वाभा	अ-
कृत्ति	आर्द्रा	मघा	हस्त	अनुरा	पूर्वाभा	एनि	उत्तरा	प्रा-
	पूर्वफल्गु		चित्रा		उत्तरा		रेवती	नि

### अथ षट्त्रिंशत्कांदशामाह

अवध्याज्जन्मर्षं यावदुगणयेदष्टमिर्भजेत् ॥ शशांकाऽर्कसुरेज्यारजाऽर्कजौ शुक्रराहवः ॥३७॥  
 एकोयं च यतश्चेकाद्वर्षांषेष्वां क्रमात्समृताः ॥ दिवसे सूर्यहोरायां चिंत्या वै षट्गुणाब्दिका  
 ॥३८॥ रात्रौ चांशदष्टतष्टाद्रेकास्त नृपजन्मभात् ॥ सूर्येन्दुसूमिजनिशाघीरापुत्रसुरेज्यकाः  
 ॥३९॥ मृगुमंदागुशिखिनो सप्तस्थाच्चिन्तिता दशा ॥४०॥ शेटक्रमादशा चिंत्या यदा सप्रे  
 शानिः स्थितः ॥ क्वचिद्ग्रहस्तदानीं च न चिंत्या बहुतो ज्ञातात् ॥४१॥

### ३६ षट्त्रिंशद् वर्षा दशा

अथन नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग दे, शेष अंक में इय से च०, मू०, वृ०, मं०, बु०, चं०, शु०, रा०॥३७॥ वर्ष सख्या क्रम से १,२,३,४,५,६,७,८, जानना। दिन में जन्म हो तो सूर्य की होरा से विचार करे और इस ३६ वर्षबानी दशा का उपयोग करे॥३८॥

रानि मे जन्म हो तो उपर्युक्त प्रकार से दशा गधत्र लेकर दशास्वामी सूर्य, चन्द्र भगल बुध गुरु, शुक, शनि, राहु, इस क्रम से ग्रहण करना ॥३९॥ लग्न में स्थित ग्रह से दशा का आरंभ करो ॥४०॥ तथा सूर्यादि क्रम से जो वर्ष ऊपर बहे है वे ही देना ॥ यदि लग्न में शनि हो तो इस दशा का विचार करना ॥ और यदि लग्न में दूसरा बलवान ग्रह स्थित भी हो तो भी शनि को ही ३६ वर्षों दशा लेने में कारण माना जाता है ॥ दूसरे ग्रह के कारण दशा का त्याग नहीं होता है ॥४१॥

इसका उदाहरण विशोत्तरी दशा के समान ही जानना ॥

अथ षट्त्रिंशत्यब्दिकादशायत्रम्								
घ०	सू०	शू०	म०	बु०	श०	गु०	रा०	ग्रहा
१	२	३	४	५	६	७	८	वर्षाणि
श०	ध०	न०	पू०भा०	उ०भा०	रे०	अभि०	भर०	न
ह०	रो०	मृ०	आ०	पुन०	पुष्य	भाश्रे०	मघा	श
पू०	उ०	ह०	चि०	स्वा०	वि०	अनु०	ज्येष्ठा	त्रा
मू०	पु०पा०	उ०षा०	०	०	०	०	०	णि

### अथ नवमाशनवदशामाह

अथ राशिक्रम वक्ष्ये शृणुष्व द्विजपुत्र ॥ ग्रहे राश्यादिके चाल्ये दशा तस्यादिमा भवेत् ॥४२॥ ततस्तदधिकस्यैव तुल्ये नैसर्गिकाद्बलात् ॥ राशीशासप्तमागेशाञ्चित्या राशिक्रमाद्दशा ॥४३॥ यस्मिन्नवाशकस्यैके दशा तस्यादिमा मता ॥ अप्रादब्जाच्च ये खेटा केतवता सस्थिता क्रमात् ॥४४॥ दशामान प्रवक्ष्यामि यथोक्त ब्रह्मणा पुरा ॥ लिप्तीकृत्वा ग्रह सोमलाभिमिर्नाजिते फलम् ॥४५॥ पुन सूर्ये ह्येते लग्न्य समाशाशकता दशा ॥ सर्वेषा मानवाना च दशास्त्वेता विचिंतयेत् ॥४६॥

### नवाश नवदशा

हे द्विजश्रेष्ठ! अब हम नवाश दशा का राशिक्रम कहते हैं आप ध्यान कर। प्रथम ग्रहदशा कहते हैं। ग्रहों में—सबसे कम राशि अश वाले की दशा प्रथम होती है इन दशाओं का विन्यस्त विवरण इस प्रकार जानना—

**दशा सख्या**

**विवरण**

प्रथम—जो ग्रह राशि अशु, कला, विकला मे सबसे कम हो उसकी दशा प्रथम होगी तथा बाद उससे अधिक वासे की और बाद उससे अधिक राश्यादिवाले की। इसी प्रकार ९ ग्रहो मे दशा जानना। यदि दो ग्रहो मे राश्यादि समान हो तो नैसर्गिक बल से निर्णय करना।

द्वितीय—जो ग्रह सबसे अधिक राश्यादि हो, उसकी सर्वप्रथम तथा उसके बाद उससे कम और उसके बाद उससे कम, इसी प्रकार ९ ग्रहो की दशा होगी। राश्यादि समान होमे पर नैसर्गिक बल से निर्णय करे।

तृतीय—नैसर्गिक बल से जिसका बल सबसे कम हो उसकी दशा सबसे प्रथम होगी। बाद उससे अधिक बल की, उसके बाद उससे अधिक बल की। इसी प्रकार आगे भी जानना। (यहा "तुल्ये नैसर्गिकाद् बलात्" इस पद की आवृत्ति होती है। जिससे पिछलो दो दशाओ मे तो राश्यादि समान होमे पर नैसर्गिक बल से यह अर्थ प्राप्त होता है। और तीसरे पर्याय मे स्वतन्त्ररूप से दशाक्रम का बोधक होता है।) यह तीन ग्रह दशा है। इनमे वर्ष सख्या प्रत्येक दशा मे १२ वर्ष जानना।

चतुर्थ—जन्मराशि के स्वामी से प्रथम दशा। अर्थात् जन्मराशि की प्रथम दशा बाद राशिक्रम से दशा जानना। जैसे जन्म राशि मेष है तो मेष, वृष, मिथुन इसी प्रकार से आगे भी। इसमे प्रति राशि दशा मे वर्ष सख्या ९ लेना। यह सब दशाएँ १०८ वर्ष की होने से।

पंचम भेद—सप्तमेश की राशि से दशा जानना। क्रमराशि से ही जानना। यथा सप्तमेश राशि तुला है तो तुला, वृश्चिक, धनु, मकर आदि।

षष्ठ भेद—सप्तम की प्रथमदशा, बाद द्वितीयेश की, तब तृतीयेश की, बाद चतुर्थेश की, पञ्चात् पंचमेश की, इसी प्रकार आगे भी जानना। (यहा ग्रहो मे ७ ग्रह ही लेना। राहु केतु की राशीशिता नहीं है अतः उनका ग्रहण नहीं है। वर्ष सख्या ९-९ लेना।)

सप्तम भेद—सप्त मे जो नवाश हो उसके स्वामी से आरम्भ करने राहु केतु सहित मूषादि ग्रहो के नैसर्गिक क्रम से ९ ग्रहो की दशा जानना। वर्ष सख्या १०-१२ लेना।

अष्टम भेद—सप्तम भेद मे जो नवाशेश से दशा ली है उसके नवम नवाश के स्वामी से यथाशय दशा जानना, ग्रहो मे गणना नैसर्गिक क्रम से। वर्ष सख्या १२-१२।

नवम भेद—चन्द्रमा से दशा जानना। मेष पूर्ववत् ॥४२-४४॥

स्युष्ट आयु विवातना—जैसा कि पहले ब्रह्माजी ने कहा है सो कहते है। चन्द्रमा के स्युष्ट राश्यादि को लेकर बलात्मक करे। (राशिजी ३० से गुणा कर अश जोडना, पञ्चात् अशाश मे ६० से गुणा करने पटी घुत् करना तो बलात्मक चन्द्र होना) फिर २० का भाग देकर स्युष्ट अरु मे १२ का भाग देने से जो अंक वर्ष, मास, दिन आदि प्राप्त हो उनको १०८ परमायु मे घटाना जो मेष रहे वह स्युष्ट वर्ष, मास आदि जानने की आयु जानना। सभी मनुष्यो मे यह प्रयोग आयुमान के लिये करना चाहिए॥४५॥४६॥

उदाहरण—अथवा की वि विगी जानने के जन्मकाल मे चन्द्रस्युष्ट ८।२५।२५।३८। है तो

इसकी कलात्मक सख्या १५९२९।३८ हुई। इसमें २० का भाग दिया तो लब्ध ७९६।९ पुन १२ का भाग दिया तो ६६।४।१।८ प्राप्त हुआ। इसको १०८ वर्ष में घटाया तो ४१।७।२८।५२ यह आयु का वर्षादि मान स्पष्ट हुआ।।

### अथ राश्यंशकदशामाह

तन्वादिभावाः संस्पष्टाः प्रोक्तमार्गेण चानयेत् ॥ लग्नेशांशस्थितो यत्र दशास्तस्य इमाः स्मृताः ॥४७॥ द्वितीयेषादितिश्राप्रे ज्ञेया राश्यंशका दशा ॥ चित्या लग्ने बलवति लग्नेषो वा बलान्विते ॥४८॥

### अथ कालदशामाह

संध्या पंचघटी प्रोक्ता दिनपष्ठचंशनादिका ॥ सूर्यबिबाद्धैतःपूर्वं परस्तादुदयादपि ॥४९॥ संध्याद्वयं च विंशत्या घटिकाभिः प्रकीर्तितम् ॥ दिनस्य विंशतिर्घटयः पूर्णसंज्ञा उदाहृताः ॥५०॥ निशाया भुग्धसंज्ञाश्च घटिका विंशतिश्च याः ॥ सूर्योदयस्य या संध्या खण्डाख्या दशनादिकाः ॥५१॥ अस्तकालस्य या संध्या सुधाख्या दश नादिकाः ॥ पूर्णमुग्धे शतघटी पद्गुणे नवधा लिखेत् ॥५२॥ तथा खण्डमुधासूर्ये हते तु नवधा लिखेत् ॥ विभक्तानां द्विययुगैर्मानाख्यानफलानि च ॥५३॥ क्रमात्सूर्यादिकाना वै मानमुक्तं मुनीश्वरैः ॥ स्वस्वमानं स्वसख्याभिर्गुणिते स्युः समादयः ॥५४॥

### राश्यंशक दशा

पहले कही हुई रीति से लग्न आदि १२ भाव स्पष्ट करे। लग्नेश का नवांश जिस भाव में हो वहा से दशा का आरंभ करना॥४७॥ इसी प्रकार आगे भी द्वितीयादि भावों के अधिपति से दशा रखना। यह दशा जहा लग्न या लग्नेश बलवान हो वहा प्रयुक्त करना॥४८॥

### काल (होरा) दशा

यहा दिन शब्द से अहोरात्र का ग्रहण है। अहोरात्र मान ६० घटी का होता है। उसमें सूर्य के अर्द्धोदय काल से ५ घटी तक संध्या (औदयिकी संध्या) होती है और इसकी 'खण्डा' संज्ञा है। इसी प्रकार सूर्यास्त से पूर्व की भी ५ घटी संध्या काल है और उसकी 'मुग्धा' संज्ञा है। इस प्रकार सूर्यास्त (अर्द्धास्त) से पहिले की ५ घटी और बाद की ५ घटी संध्या काल है। इस तरह प्रात की १० घटी पूर्वापर की 'खण्डा' और अस्तकाल की पूर्वापर की १० घटी 'मुग्धा' नाम की संध्या है। और दिन की बाकी २० घटी की 'पूर्णा' संज्ञा है। तथा रात्रि की बाकी २० घटी की 'मुग्धा' संज्ञा है। यदि 'पूर्णा' नामक दिन की २० घटी में जन्म हो तो (अर्थात् सूर्योदय से इष्टकाल यदि ५ घटी से अधिक हो तो प्रात संध्या (खण्डा) की ५ घटी इष्ट में से घटा कर बाकी) ६ से गुणा करना। इसी प्रकार रात्रि की 'मुग्धा' नाम की मध्य घटी में जन्म हो तो संध्याकाल की घटी घटाकर बाकी को ६ से गुणा करना। यदि 'खण्डा' या 'मुग्धा' नाम की संध्या में जन्म हो तो इष्ट घटी को १२ से गुणा करना। गुणित अंक को ९ स्थान में रखना।

और सब जगह अलग ४५ का भाग देना तो लब्ध दशा मान का ध्रुवाक होगा। इसको सूर्यादि ग्रहों की सख्या (सू०१, च०२, म०३, बु०४, शु०५, श०६, रा०७, के०९) से गुणा करने से सूर्यादि ग्रहों की वर्ष, मास आदि दशा स्पष्ट होगी॥४९-५४॥

उदाहरण-इष्ट ८।१६ में प्रातः सध्या की ५ घटी कम करने से शेष ३।१६ को ६ से गुणा किया तो १९।३६ हुआ, इसमें ४५ का भाग दिया तो ००।२६।०८।०।०, इस सूर्यादि ग्रहों की क्रम सख्या से गुणा करके दिनों में ३० और मास सख्या में १२ का भाग देने से नीचे चक्र में दिखाई हुई वर्षादि दशा प्राप्त होगी।

### अथ कालचक्रमहादशायन्त्रम्

सू०	च०	म०	बु०	शु०	श०	रा०	के०	
२	४	६	८	१०	१२	१४	१७	१९
२	४	६	९	११	१	३	६	८
८	१६	२४	२	१०	१८	२४	४	१२
०	०	०	०	०	०	०	०	०
१०	०	०	०	०	०	०	०	०
१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९
००	०३	०७	१३	२२	३२	४५	६१	७८
१७	१७	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८
६५	६८	७२	७८	८७	९८	११	२७	४४
१०	०	४	११	८	८	१	१	७
४	१२	२८	२२	२४	४	२२	१८	२२
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

### अथ कालचक्रदशामाह

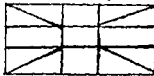
कालचक्रं प्रवक्ष्यामि नराणां हितकाम्यया ॥ यावद्देहादिजोवातमिति चक्रस्य निर्णयः ॥५५॥  
 सप्तविंशतिः क्षाणि अनुलोमविलोमत ॥ वक्ष्येऽह वै तदाशे च अभिन्त्यादि यथाक्रमम् ॥५६॥  
 द्वे द्वे रेखात्मके चक्रे चतुष्कोण लिखेत् क्रमात् ॥ द्वादशग्रहनिर्माणं भेदादिद्वादश न्यसेत् ॥५७॥  
 ईशान्यादिक्रमेणैवमीनात् द्वादश न्यसेत् ॥ एव क्रमेण चक्रं तद्विनितेद्विजननम् ॥५८॥

द्वादशार तिलेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वं समानकम् ॥ गृहाणि द्वादशैर्धं स्पृस्ताव्येषु च यथाक्रमम् ॥५९॥  
द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेपादिकान्वयेत् ॥ एवं द्वादशाराध्याख्यं कालचक्रमुदीरितम्  
॥६०॥ अभिन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गं प्रतिष्ठितम् ॥ तिलोऽपसव्यास्त्युस्तारा रोहिण्याद्या  
यथाक्रमम् ॥६१॥ कालचक्रदशासव्यापसव्यमार्गमग्रे स्फुटं वक्ष्यति ॥

### कालचक्रदशा

कालचक्र नामक दशा का पूर्ण विवरण आगे कहेंगे जिससे मनुष्यों का बड़ा हित होता है। देहग्रह से जीवग्रह पर्यन्त उसका भोग (दशा) होता है, यह उस चक्र में निर्णय किया गया है ॥५५॥ २७ नक्षत्र क्रम से तथा व्युत्क्रम से (सीधे और उलटे क्रम से गणना होना) अश्विनी आदि नक्षत्र उसमें रखे गये हैं ॥५६॥ दो दो रेखा सीधी और तिरछी बनाकर उनके कोणों में १-१ रेखा करके बारह घर का निर्माण करें, इन घरों में १२ राशियां रखें ॥५७॥ अश्विनी आदि नक्षत्र और मीन पर्यन्त राशि लिखें। हे द्विजनन्दन! इस प्रकार लिखें ॥५८॥ अथवा बारह कोठों का गोल चक्र लिखें, पूर्वोक्त रीति से तिरछी और सीधी रेखा करने से १२ कोष्ठक होंगे ॥५९॥ दूसरे ऊपर के कोष्ठक में १२ मेपादि राशि लिखें। इस प्रकार १२ राशियों का कालचक्र नामक चक्र बहा है ॥६०॥ अश्विनी आदि ३ नक्षत्र सीधे क्रम से, उसी क्रम से रोहिणी आदि तीन नक्षत्र उलटे क्रम से रखें ॥६१॥ इसका विशेष विवरण आगे कहेंगे।

### कालचक्रम्



### अथ चक्रदशामाह

राशीभराद्दशा ज्ञेया भूपर्विना क्रमात्पुनः ॥ दिवा रात्रिस्तथा सध्या त्रिकाले त्रिविधा  
दशा ॥६२॥ चक्राख्या च दशा प्रोक्ता तथाग्रे द्विजनन्दन ॥ तत्रस्थस्य दशा चादौ ततो  
वितन्मितादयः ॥६३॥ त्रिधादयो यदेकस्पृष्टादा भागाद्ययोर्धिकात् ॥ तत्रापि तुल्यौ  
नैसर्गाद्विलात्सूयोर्धिकस्य च ॥६४॥ राशिप्रमितवर्षाणि भागाद्यान्वयपाततः ॥ भावानामपि  
सत्राच्च वर्षाणि दिद्मितानि च ॥६५॥

### चक्रदशा

यह चक्रदशा दिन, रात्रि, सध्या इन ३ समयों में भिन्न भिन्न प्रकार से होती है। दिन में जन्म हो तो जातक की राशि के स्वामी की राशि से दशा आरभ होती है ॥६२॥ यह दशा 'चक्रदशा' नाम की है। और रात्रि में जन्म हो तो जन्मलग्न से दशा आरभ होती है तथा सध्याकाल में जन्म हो तो द्वितीयभाव से आरभ होती है ॥६३॥ तीनों प्रकार के स्वामी तथा राशि एक ही स्थान में हों या दो प्रकार एक स्थान में हों तो अथाधिक्य से निर्णय करना। और अथादिक भी समान हों तो नैसर्गिक दल से निर्णय करना। यह भी समान होने पर मूर्ख

से लेना ॥६४॥ अशादि का त्याग करके चक्र मे राशि के समस्थान मे वर्ष सख्या रखना। सभी भावो की वर्ष सख्या १०-१० होती है ॥६५॥

उदाहरण-कल्पना किया कि, किसी का दिन मे जन्म है और राशि का स्वामी गुरु है और वह एकादश भाव मे स्थित है, अत एवादश भाव से चक्र मे दशा आरभ की गई और प्रत्येक भाव की १०-१० वर्ष सख्या रखी गई। चक्र मे देखो।

### अथ चक्रदशामाह

११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	भावा
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	वर्षाणि मासा दय
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
११००	१० १९	२० १९	३० १९	४० १९	५० १९	६० १९	७० १९	८० १९	९० १९	२०००	२०१०	सयत्
१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	१० ४	रक्
१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	१४ २२	

### अथ चरपर्यदिशामाह

मैत्रेय मुमहाराज परोपहितकारक ॥ आपुर्दायविचारो हि गहनं सर्वदा द्विज ॥६६॥  
 आपुर्द्वहप्रकारेण भाषितं ब्रह्मणा पुरा ॥ तत्रर्षीप्रहयोगेन आपुर्दयि वदामि ते ॥६७॥ नक्षत्रामु  
 पुरा विप्र तवाग्रे कथितं मया ॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि राश्यापुर्दिजसत्तम ॥६८॥  
 लग्नादिव्ययपर्यंतं राशयो द्वादश द्विज ॥ आपुर्द्वै प्रदातव्या एभिश्चरपर्यां दशा ॥६९॥  
 ओजसाणां ऋणाद्भिर् समाना व्युत्क्रमात्पुनः ॥ नापातेन समा मेधा निर्विषाक द्विजोत्तम  
 ॥७०॥ मेयो वृथोऽथ नियुनस्तुलातिश्च धनुर्धर ॥ एतेषामोत्तमज्ञा स्यादब्दाना गणनाक्रमत्  
 ॥७१॥ कर्क सिंहश्च कन्या च नक्षत्रभङ्गया द्विज ॥ एतेषा समसज्ञा स्याद्वर्षाणा व्युत्क्रमाद्द्विज  
 ॥७२॥ स्वर्षसंस्थितशेठस्य वर्षाणि द्वादशीव हि ॥ धनस्यै चैकवर्षं तु तृतीये हायनद्वयम् ॥७३॥



हे परहितकारक महाप्राज्ञ मैत्रेय! आयु का विचार बड़ा गहन है॥६६॥ पहिले ब्रह्माजी ने अनेक प्रकार से आयु का वर्णन किया है॥ लग्न आदि राशियों में ग्रहों के योग से आयु का निर्णय करना कहेंगे॥६७॥ हमने पहले नक्षत्र से आयु का विचार कहा है। अब राशि से आयु का विचार कहते हैं॥६८॥ लग्न से व्ययभाव तब १२ राशि है। इन राशियों से आयु के सम्बन्ध में वर्ष ग्रहण करना और इन वर्षों से 'चरपर्याय' नाम की (चरपर्याय) दशा होती है॥६९॥ इन राशियों से वर्ष लेने की रीति यह है कि विषम नाम की राशियों से वर्ष गणना क्रम से होती है, तथा सम राशियों से विपरीत क्रम से वर्ष गणना होती है। यह गणना राशि के भाव से उस राशि का स्वामी जहाँ स्थित हो वहाँ तक गिन कर जो सख्या हो वह वर्ष सख्या लेना॥७०॥ मेष, वृष, मिथुन तथा तुला, वृश्चिक, धनु इनकी ओज (विषम) दशा है। इनके वर्षों की गणना क्रम से होती है॥७१॥ कर्क, सिंह, कन्या तथा मकर कुम्भ, मीन इनकी समदशा है। इनकी वर्ष गणना उलटे क्रम से होती है॥७२॥ (स्पष्ट विवरण) स्वराशि में स्थित ग्रह की वर्ष सख्या १२ होती है। दूसरे भाव में स्थित ग्रह से १ वर्ष होता है। और तीसरे भाव में ग्रह हो तो २ वर्ष लेना॥७३॥

तुर्ये वर्षत्रय विप्र पचमे तुर्यहायनम् ॥ रिपुस्ये पच वर्षाणि षड्वर्षाणि च सप्तमे ॥७४॥  
 रधस्ये नववर्षाणि चाष्टवर्षाणि पुण्यने ॥ नभस्ये चाकवर्षाणि दिग्वर्षाणि तु साम्ये ॥७५॥  
 व्ययस्ये रुद्रवर्षाणि राशयब्दाश्च मयानघ ॥ पूर्वोक्तेन प्रकारेण कथिता वै द्विजोत्तम ॥७६॥  
 वृश्चिकाधिपती द्वी च कुजकेतू द्विजोत्तम ॥ स्वर्भानुपगू कुम्भस्य पती द्वी चितयेद्विज ॥७७॥  
 स्वर्से यदि स्थितौ द्वी व भानुवर्षप्रदायकौ ॥ परसे समतौ द्वी च नायाते न विधितयेत् ॥७८॥  
 परसे भिन्नभिन्नस्थी द्वयोर्नख्ये तु यो बली ॥ तस्य नायातरीत्या च वर्षाणि सतिलेद्विज ॥७९॥  
 अप्रहात्सग्रह प्राणो सप्रहादधिकग्रह ॥ साम्ये चरस्थिरद्वहा क्रमात्स्युर्वलितौ द्विज ॥८०॥

चौथे भाव में स्वामी होने से ३ वर्ष, पंचम भाव में स्वामी हो तो ४ वर्ष। षष्ठ भावस्थित में ५ वर्ष, सप्तम में हो तो ६ वर्ष॥७४॥ अष्टम भाव में ७ वर्ष। नवम भाव में ८ वर्ष। दशम भाव में ९ वर्ष। एकादश भाव में स्वामी हो तो १० वर्ष॥७५॥ व्यय भाव में हो तो ११ वर्ष, इस प्रकार राशियों से वर्ष सख्या लेना, इस प्रकार वर्ष सख्या लेने की रीति तुमसे कही गई है॥७६॥ वृश्चिक राशि के दो ग्रह स्वामी हैं— मंगल और केतु। इसी तरह कुम्भ राशि के भी दो स्वामी हैं— शनि और राहु ॥७७॥ यदि ये स्वराशि में हो तो १२ वर्ष लेना। यदि परराशि में हो तो वहाँ तक की सख्या लेना॥७८॥ यदि परराशि में भिन्न २ राशि में हो, इनमें से जो बलवान् हो उस तक की सख्या लेना॥७९॥ बलवत्ता विचार में नैसर्गिकरूप से ग्रहहीन से तो ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है तथा ग्रहयुक्त राशि से अधिक ग्रहवाली बलवान् होती है। अधिक ग्रहों में भी समान हो तो चर, स्थिर, और द्विस्वभाव राशियाँ उत्तरोत्तर बलवान् होती हैं॥८०॥

राशिसाम्ये यदा विप्र बहुवर्षप्रदो बली ॥ तद्वाप्यादुच्चग सेतो बलवान्नीबली द्विज॥८१॥



उदाहरण—कल्पना किया कि—प्रथम भाव का स्वामी मंगल द्वादश भाव में है अतः ११ वर्ष प्राप्त हुए। इसी प्रकार पूर्वोक्त रीति से तत् २ भाव के स्वामी से भावस्थिति पर्यन्त सख्या गिन कर वर्ष लिखना।

ये दशाएँ अप्रचलित हैं अतः अनुपयुक्त हैं। अतः काल्पनिक उदाहरण ही दिखाये गये हैं।

### अथ नवमाशस्थिरदशामाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि दशास्थिरविशेषतः ॥ नवाशकदशामान तथापि कथयाम्यहम् ॥८८॥  
 प्रतिराशिप्रद्विष्टं बमङ्गाङ्गाब्दा दशा स्थिरा ॥ तन्वादिष्ययभावाना स्पष्टीकृत्वा द्विजोत्तम  
 ॥८९॥ ग्रहनवाशापुरीत्या दशा तुल्या नवाशका ॥ अस्थिरा इति विज्ञेया परपक्षमिदं क्रमम्  
 ॥९०॥ पक्षद्वयं प्रवक्ष्यामि चरस्थिरद्वयं द्विज ॥ पूर्वं चरदशा वक्ष्ये तथापि द्विजानन्दन ॥९१॥  
 ओजस्रे जनुयस्य नवाशकदशा द्विज ॥ सप्रादिकं समारम्य या जन्मप्रभृतिदशा ॥९२॥  
 समराशौ जनुयस्य नवाशकदशा द्विज ॥ राश्यादिकं समारम्य पुरा शमुप्रणोदितम् ॥९३॥  
 ओजराशिगते खेटे क्रमात्तत्तद्दशा नयेत् ॥ तत्तद्वाशिनवाशाद्या समे तु विपरीतत ॥९४॥  
 दशाप्रवर्तकं खेटो विषमर्शगतो द्विज ॥ राशिप्रतिनवाब्दाना सर्वेषां गणयेत्क्रमात् ॥९५॥  
 अष्टोत्तरशताब्दाना सख्यापूर्वं तवाशका ॥ ख्याता स्थिरदशा ज्ञेया निर्विशाकं द्विजोत्तम  
 ॥९६॥ दशाप्रवर्तकं खेटं समराशि गतो द्विज ॥ तत्तद्वाशि समारम्य गणयेद्दृष्टकमेण  
 च ॥९७॥

#### नवाश स्थिरदशा

अब हम नवाशदशा स्थिरस्वरूप वाली कहते हैं। ८८। इस दशा में प्रतिराशि में ९-९ वर्ष होते हैं। प्रथम १२ भाव स्पष्ट करना चाहिए। तब भावों पर विचार करना। ८९। ग्रह के नवाश की आयु की रीति से नवाश के बराबर वर्ष सख्या ग्रहण करना ऐसा दूसरा पक्ष भी है और इसका नाम नवाश अस्थिर दशा है। ९०। हम तुमको स्थिरदशा और चर- (अस्थिर) दशा दोनों ही पक्ष कहेंगे। पहिले नवाश चरदशा ही कहते हैं। ९१। जिसका जन्म विषम राशि में हो तो जन्मलग्न से ही दशा का आरंभ करना चाहिए। ९२। यदि समराशि में जन्म हो तो जातक की राशि से नवाशदशा का आरंभ होता है। ९३। (अब स्थिरदशा की रीति कहते हैं) ग्रह विषमराशि में हो तो क्रम से राशियों की दशा लगाना चाहिए वह विषम नवाशदशा है। यह समराशि में हो तो विपरीत गणना करना। ९४। दशादाता स्थान विषम में होने से प्रतिराशि ९-९ वर्ष रखकर १२ राशियों के १०८ वर्ष रखना। ९५। हे द्विजवर! यह स्थिर दशा का क्रम रहा। ९६। दशादाता ग्रह यदि समराशि में हो तो राशिगणना विपरीत क्रम से करना चाहिए। ९७।

तत्तद्वाशिगताना च नवाशास्ते द्विजोत्तम ॥ अष्टोत्तरशत सख्या ह्यब्दाना च दशा स्थिरा  
 ॥९८॥ विषमर्शं दशाप्राप्ते मेधे मेधादिकं गणेत ॥ वृषे वृषादिकं गण्यं क्रमेण द्विजसत्तम  
 ॥९९॥ समराशिदशाप्राप्ते नवाशकक्रमेण च ॥ समुखं राशिमारम्य गणयेद्द्विजसत्तम





### अथोत्तरदशाचतुर्विधप्राणनाह

अथोत्तरदशाविप्रो' निरूपणमिहोच्यते। प्राणबलेन समुक्ते तत्रादौ राशिद्वयते ॥१११॥ आठ प्राणबलं वाच्य कारके योग समतात् ॥ स्वस्वकारकसबधे तत्तद्व्राशिर्वलप्रदः ॥११२॥ कारकयोगेबलभाम्यग्रहयोगाच्च साम्यता ॥ भूयसा ग्रहयोगेन बल वाच्य द्विजोत्तम ॥११३॥ ग्रहाधीन ग्रहबलमिति न्यःपेन घितयेत् ॥ तदापि साम्यता विप्र यदापि निर्णय वदेत् ॥११४॥ राश्याधिपे स्वतुगस्ये मिश्रश्रेत्रादिकेऽपिवा ॥ एव राशिबल ज्ञेय निर्विशाक द्विजोत्तम ॥११५॥ ततो बलविशेषोर्धो नैसर्गिकमत पुरा ॥ तस्मात्प्रसर्गकबल सप्राह्य द्विजमतम ॥११६॥ अप्रहास्तग्रहो ज्याध्यान्तग्रहादधिकग्रहा ॥ साम्ये चरस्थिरद्विवा क्कमात्स्युर्वलशास्तिनः ॥११७॥ एव चरस्थिरप्राणिस्थिरोद्भवलोद्विज ॥ ध्यापेट्टिलवनेसर्गबितयित्वा न सस्य ॥११८॥ पूर्वोक्तेकारकध्यापेवितयेद्द्विजसत्तम । कारकयोषादि बल तस्मात्प्राणवतो भवेत् ॥११९॥ राशौ कारकयोगेषु निजनाथेन सपुते ॥ स राशिर्वलवान् विप्र कारकेयोगकेमते ॥१२०॥ स्वामिपुक्त कारकेषु यत्तद्व्राशिर्वली द्विज ॥ तत्तद्व्राशौ चितनीयमग्रमपे विरोयत् ॥१२१॥

#### चतुर्विधप्राणदशा

हे मैत्रेय! अब उत्तरदशा या चतुर्विध प्राणदशा का निरूपण करते हैं। उक्त निरूपण में प्रथम प्राणबल से युक्त राशि कहते हैं॥१११॥ प्राणबल चार प्रकार के हैं, उनमें यहुता प्राणबल कारक ग्रह का योग होने से होता है। अर्थात् अपने २ कारक से (जो राशि जिस भाव में है उस भाव का कारक जो ग्रह है उससे) सम्बन्ध होने से वह राशि बलवान् होती है॥११२॥ कारकयोग में भी बल की समानता हो (दो राशियों का बल समान हो) तथा ग्रह योग से भी बल की समानता हो तो अधिक ग्रहयोग से बल का निर्णय बरे॥११३॥ ग्रहयोग से होनेवाला बल ग्रह के आधीन है इस नियम से विचार बरे। जब बल में समानता हो तब निर्णय (विचार) करना चाहिए॥११४॥ (ग्रहबल कहते हैं) राशि का स्वामी उच्च राशि में हो या मिथराशि में (अथवा स्वगृही हो) तो वह राशि बलवान् होती है॥११५॥ और इनके अभाव में पहिले कैसा कहा है, कैसा नैसर्गिक बल देखना। उक्त नैसर्गिक बल से राशि का बलवान् जानना॥११६॥ ग्रहहीन राशि से ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है। ग्रहयुक्त में अधिब ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है। दोनों प्रकार समान होने से चर, स्थिर द्विस्वभाव राशि उत्तरोत्तर निसर्गत (स्वभावतः) बलवान् है। इस प्रकार चर स स्थिर और स्थिर स द्विस्वभाव राशि बलवान् होती है। इस नैसर्गिक बल का विचार बरे॥११८॥ पूर्वोक्त कारकाध्याय में कहे हुए कारकयोग का बल विचार कर उक्त बल से राशि का बल जाने॥११९॥ राशि में कारक ग्रह स्थित हो, या स्वस्वामी हो तो वह राशि कारकयोग से अथवा योग (स्वामी योग से) बलवान् होती है॥१२०॥ यदि स्वामी ही कारक भी हो तो वह राशि बलवान् होती है। यह विचार हर एव राशि में करना चाहिए॥१२१॥

एकराशौ बहुग्रहा समुक्ता द्विजमतम ॥ राशिद्वारा बली ज्ञेयो यदि अग्रमनेधिक् ॥१२०॥ स्वत्याशास्त्रवन्ती ज्ञेयो मध्याशान्मध्यधीर्षक ॥ अशाधिक्वन्ती ज्ञेयो प्राग्बलवितशशत्

॥१२३॥ ओजराशी वैशिके च पुरतः पार्श्वसंस्थिताः ॥ पृष्ठतो वा प्राण इति बलदत्त्वेन कथ्यते॥१२४॥इति प्रथमभेदः ॥ यस्मिन्राशेः स्वामियोगे गुरुवाद्रिनिरीक्षिते ॥ स राशिर्बलवान्प्रोक्तो द्वितीयेषु च प्राणिनि ॥१२५॥ राशीनां द्वादशानां च बलमेव द्वितीयकम् ॥ इति प्रोक्तप्रकारेण द्वितीयं जायते बलम् ॥१२६॥ इति द्वितीयप्राणभेदः ॥ स्वामिवां तृतीय प्राणि तवाग्रे गदितं मया ॥ स्वात्मकारककुण्डल्यां चिन्तयेद्द्विजसत्तम ॥१२७॥ केद्रे पणफरे प्रोक्तं स्वामिदौर्बल्यमेव हि ॥ केन्द्रदुर्बलवांश्रैवं पणफरे चैकसंज्ञकः ॥१२८॥

एक राशि में यदि अनेक ग्रह हो तो वह राशि राशिबल से बली है। यदि अगले भाव में अन्यबल हो तो इस राशि को बलवान् समझे॥१२२॥ इसी प्रकार कम अश वाली राशि अल्पबली है और मध्य अशवाली मध्यबली और अधिक अशवाली अधिकबली होती है। जैसे ग्राम्य शूकर से वन्य शूकर बलवान् होता है॥१२३॥ राशि यदि विपम या 'विशि' सजावाली हो, या २।१२ में शुभग्रह हो अथवा किसी पृष्ठभावं स्थित ग्रह बल प्रदान करता हो तो वह राशि 'बलद' अर्थात् बलवान् है॥१२४॥ यह प्रथम भेद है॥ जो राशि अपने स्वामी से युक्त होकर गुरु या बृध से दृष्ट हो वह राशि भी (द्वितीय प्रकार से) बलवती है॥१२५॥ १२ राशियों का यह द्वितीय बल है। इस प्रकार से दूसरा बल जाना जाता है॥१२६॥ द्वितीय प्राणभेद॥ तीसरा प्राण बल हमने आत्मकारक लग्न में कहा है। उस प्रकार से विचार करना॥१२७॥ तथा इस भेद में स्थान बल से भी विचारना कि-केन्द्र से पणफर में एक विश्वा दुर्बलता है। अर्थात् पणफरभाव स्थित ग्रह केन्द्र से १ दुर्बल है॥१२८॥

आपोक्लिमे द्विगुणितमेव दौर्बल्यमेव च ॥ तृतीय प्राणि इत्येव जानीयाद्द्विजन्दन॥१२९॥ इति तृतीयप्राणभेदः ॥ चतुर्थप्राणि विज्ञेय तवाग्रे च यदाम्यहम् ॥ पापयोगेन रहितः पापक्रांतो न पश्यति ॥ स राशिर्बलवान् विप्र प्राणधारे चतुर्थकः ॥१३०॥ चतुर्विधे प्राणसंज्ञे एतेषां बलवीर्ययुक् ॥ स राशिरत्र भागे च अतः पाके द्विजोत्तम ॥१३१॥ इति चतुर्थभेदः ॥

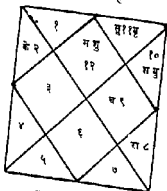
पणफर से आपोक्लिम भावस्थ राशि दुर्बलतर २ बल से न्यून है। इस प्रकार यह तीसरा प्राणबल जानना॥१२९॥ यह तृतीय प्राणबल है। चतुर्थ प्राणबल तुम्हारे सामने कहते हैं। जो राशि पापग्रह युक्त न हो तथा पापदृष्ट भी न हो वह राशि चौथी श्रेणी की बली है॥१३०॥ यह हमने चार प्रकार का प्राणबल कहा। इनमें जो राशि प्राणबल से बली हो उसकी प्रथमदशा तथा द्वितीय प्राणबल से युक्त राशि की चौथी दशा, त० से, स० च० से दशमभाव की दशा जानता॥१३१॥ चतुर्थ भेद समाप्त ॥

उदाहरण तथा चक्र इस कल्पित उदाहरण में आत्मकारक मंगल ही प्रथम प्राण है, द्वितीय शनि प्राण है, तृतीय प्राण शुक्र और चतुर्थप्राण चन्द्रमा है।

अथ चतुर्विधप्राणदशायंत्रम्

१२ म०	१	२	१० श०	११	१२	१२ शु०	१	२	९ च०	१०	११	मा
१ ० ० ०	११ ० ० ०	११ ० ० ०	१२ ० ० ०	१२ ० ० ०	१ ० ० ०	१ ० ० ०	११ ० ० ०	११ ० ० ०	२ ० ० ०	१२ ० ० ०	१२ ० ० ०	वर्ष ० ० ०
१९००	१९०१	१९१२	१९२३	१९३२	१९४०	१९४८	१९५९	१९६०	१९७१	१९७२	१९८५	१९९७
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

कारकालप्रमाह



अस्या दशम्या वर्षाणि  
षडदशावसानौतानि

अथ ब्रह्मप्रहाश्रितपष्ठांत्यब्दिकां दशामाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि ब्रह्मतानपरा दशाम् ॥ तस्या प्रचारो वै विप्र तवाशे गदितो मया ॥३२॥  
पूर्वोक्तलक्षणाकाले यत्र ब्रह्मप्रहे स्थिते ॥ तस्मादन्य दशा ज्ञेया पष्ठांत्यब्दा समानयेत् ॥३३॥



ओजलप्रे रविभ्रंद्रो मंगलादिक्रमेण च ॥ पत्य राशिस्थिते ब्रह्मा तद्ग्रहात्पष्ठलेखरः ॥३४॥  
 रवेर्भृगुं विजानीयाच्छिखिनोगुरिति क्रमः ॥ पष्ठांतिमसमा विप्र गणनीया यथोक्तम् ॥३५॥  
 समलप्रयदा प्राज्ञ ब्रह्मखेटःसमाश्रितः ॥ तत्तद्वाशितमोराशिपर्यतान्दसम नयेत् ॥३६॥

### ब्रह्मग्रहाश्रित दशा

अब हम ब्रह्मा नाम के ग्रह के आश्रित दशा कहते हैं। इसका कुछ विवरण प्रथम भी कर चुके हैं॥३२॥ प्रथम कहे हुए लक्षणों से युक्त ब्रह्मग्रह जिस राशि में हो उस राशि से यह दशा आरभ की जाती है॥३३॥ राशि यदि विषम हो तो क्रम गणना से सूर्य, चन्द्रादि के समान दशाराशि की गणना करे। ब्रह्मा जिस ग्रह की राशि में हो (फलविचार) उससे छोटे ग्रह की राशि से करना चाहिए॥३४॥ छोटी राशि स्वामी का गणनाक्रम इस प्रकार जाने, जैसे सूर्य का छोटा शुक्र है और आगे शनि राहु आदि। और वर्षसख्या भी सब राशियों में ६-६ वर्ष लेना॥३५॥ हे विप्र! जब ब्रह्मग्रह समराशि में हो तो उस लग्नराशि से तमोराशि (सूर्यास्त राशि = सप्तमराशि) सप्तमभाव से दशा आरभ करना॥३६॥

यद्वा ब्रह्मममां राशिमारम्य क्रियते द्विज ॥ पष्ठराशपतमन्दांश्च सप्राह्यपरलकः ॥३७॥ दशा ब्रह्मग्रहपरा राशिमारम्य कीर्त्यते ॥ पदूखेटा यत्र पूर्णाश्च भवति द्विजसत्तम ॥३८॥ तावद्वि राशिपर्यन्त समा प्राह्याः प्रयत्नतः ॥ यत्तत्समायुः सजेय निर्विशंक द्विजोत्तम ॥३९॥ ओजक्रमेण गणना समेषु चितयेत्क्रमः ॥ समोपि सप्तमाच्चेत्तद्वाशिर्ब्रह्मणाश्रितः ॥ ४०॥ ओजब्रह्मग्रहाश्रित्यैतद्ग्रहात्पष्ठमातकः ॥ समाना गणना विप्र पुरा शम्भुप्रणोदिता ॥४१॥ समे ब्रह्मग्रहाश्रिते सप्तमः पष्ठमान्तकः ॥ गणनीया समा ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥४२॥

और दूसरा यह भी पक्ष है कि ब्रह्मग्रहाश्रित राशि से ही दशा आरभ करना और ६-६ वर्ष ग्रहण करना॥३७॥ यह दशा ब्रह्मग्रहाश्रित है, अतः यही से आरभ की जाती है। जिसमें कि ६ वर्ष ही ग्रहराशि के पूर्ण वर्ष होते हैं॥३८॥ उस राशि तक राशियों की वर्ष सख्या लेना, जहां तक स्वल्प, मध्य, दीर्घ आयु की अवधि हो॥३९॥ ओज=विषम राशि में क्रम से गणना करना और समराशि में ब्रह्माश्रित राशि से सप्तमभाव से (व्युत्क्रम) गणना करना॥४०॥ विषम राशि में ब्रह्माश्रित राशि से अन्तिम राशि पर्यन्त ६ वर्ष के हिमाव से गणना होती है, यह जम्भु कथित है॥४१॥ ब्रह्मग्रह के आश्रित यदि समराशि हो तो सप्तम राशि ही गणना में प्रधान है और सप्तम राशि से ही पष्ठान्तक दशा की गणना करनी चाहिए॥४२॥

### अथ बलविशेषं दर्शयति

लग्नेशाल्ताभभावेशौ लग्न इत्यादितो द्विज ॥ स्यातव्य च पितुः प्राण इत्येव ब्रह्मणोदितम् ॥४३॥ पद्बर्गादिस्तु सबधः स्यान्व्यतिकरो द्विज ॥ तथा पूर्वोक्तमवधे तस्याः स्पष्ट धदाम्यहम् ॥४४॥ ओजलप्राश्रिते लग्ने तद्वाशिगणनाक्रममात् ॥ पष्ठस्वाम्यन्तरीत्या च समानीया द्विजोत्तम ॥४५॥ ब्रह्माश्रितसमे लग्ने सप्तमाद्व्युत्क्रमेण च ॥ गणयेत्यष्टिसन्ध्याहि

ह्यन्वामिह द्विजोत्तम ॥४६॥ एकमेकादशे पापे दृष्टियोगे भवत्यपि ॥ ग्रहयोग तथा विप्र  
प्रबले च व्यतीकर ॥४७॥ रुद्रशूलदशादौ च स्वचित्प्राणो भवत्यपि ॥ तदप्रे तुगादिवल  
व्यतिकरार्यचतुर्यक ॥४८॥ तुगमूलत्रिकोणेषु स्वर्धमित्रादिवर्गके।ग्रहयोगबलप्राप्ताश्रत्वारी  
द्विजसत्तम ॥४९॥ इत्यास्थानव्यतिकरो भेदार्या च चतुर्विधा ॥ अथ कारकयोगाना चतुर्दा  
भेद उच्यते ॥१५०॥

### ग्रह तथा राशि का बल

लग्न तथा लग्नेश से लाभ राशि और लाभेश के बलावल विचार से पिता का विचार किया  
जाता है ॥१४३॥ ग्रह का बल व्यतिकर पड़वगादि सम्बन्ध और पूर्वोक्त सम्बन्ध जानना ।  
इसको स्पष्ट कहते हैं ॥१४४॥ लग्न यदि विषम राशि में हो तो दशा राशि की गणना क्रम से  
होती है। और छठे भाव के स्वामी के स्थान तक दशा रखना चाहिए ॥४५॥ यदि ब्रह्माश्रित  
राशि सम हो तो लग्न के सप्तम भाव से दशा रखना चाहिए और वर्ष सख्या सब राशियों की  
६-६ वर्ष होगी। ग्यारहवें भाव में पापग्रह की दृष्टि या पापग्रह का योग हो तो विप्र की  
सभावना होती है ॥४७॥ रुद्र शूल दशा में किसी भाव में बलवान ग्रह हो तो उसके बल का  
विचार चार प्रकार से किया जाता है ॥४८॥ हे मैत्रेय! वे चार प्रकार ये हैं। उच्च में, मूल  
त्रिकोण में, स्व राशि में, मित्रवर्ग में, इस प्रकार ग्रह योग के चार प्रकार होते हैं ॥४९॥ इस  
प्रकार स्थान बल के ४ भेद हुए। चार ही प्रकार कारक योग के भी कहे जाते-  
है ॥१५०॥

चतुर्धा प्राणतज्ञेय पूर्ववद्विजसत्तम ॥ प्राण इत्युपसहारः पुरा शमुप्रणोदित ॥५१॥ पचम  
इत्युपपद केतुपचमक शुभम् ॥ ओजे क्रमेण गणना समे वा व्युत्क्रमेण च ॥५२॥  
दशाऽऽनेयाऽऽदसख्या च पर्यायाष्टक्रमेण च ॥ नायातेन समाज्ञेया पूर्ववद्विजसत्तम ॥५३॥  
त्रिक त्रिक राशिपदमौजे चतु क्रमेण च ॥ समे व्युत्क्रमरौत्या च राशौ पदत्रिक त्रिकम् ॥५४॥  
क्रमेण पचमे केतुर्नवमे व्युत्क्रमेण च ॥ शुभ फल न दत्त्वेन पचमे शिति-  
सीम्यवत् ॥५५॥

इस प्रकार से यह बल जो कि प्राण सजक और जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं, उसी  
को यहाँ समझना ॥५१॥ पाचवा एक बल और होता है जिसको 'उपपद या केतु पचम' कहा  
जाता है। जिस जातक के पचम भाव में केतु हो उसके लिये यह चर-दशा नाम की दशा बही  
जाती है। इस दशा में भी विषम राशि हो तो क्रमशः गणना करना और सम राशि में विपरीत  
क्रम से गणना करनी चाहिए ॥५२॥ और इस दशा में वर्ष सख्या चरपर्या पहले वह अनुसार  
राशि के स्वामी तक जो प्राप्त हो बही जानना, इसका विवरण पहले वह चुने है ॥५३॥  
विषम राशि में ३-३ राशियों के ४ विभाग क्रम से होते हैं। और सम राशि में ३-३ राशि के  
४ विभाग विपरीत क्रम से होते हैं ॥५४॥ क्रम गणना और व्युत्क्रम गणना में इस प्रकार  
समझना चाहिए। जैसे-क्रम गणना से लग्न से पचम भाव में यदि केतु हो तो व्युत्क्रम गणना में  
वह केतु नवम भाव में समझा जायेगा। विपरीत गणना अशुभ फल कारक और क्रम गणना  
शुभ फल कारक होती है ॥५५॥

पंचम इत्युपपदं पदाह्वये विचिंतयेत् ॥ ओजक्रमेण गणना समे लग्ने च व्युत्क्रमः ॥५६॥ नवमे संस्थिते केतावारूढ-राशितो द्विज ॥ विपमे पूर्ववत्तर्हि क्रमेण पचमे स्थिते ॥५७॥ शुभे फलप्रदातारः पचमे चरसप्तकाः ॥ केतोर्दशायां वै पापा दबत्येवं शुभ फलम् ॥५८॥ ग्रहनवांशकरीत्या च समानीत द्विजोत्तमः ॥ चरनवांशाब्दसजेयं भावे बलद्वितीयकम् ॥५९॥

पचम भाव जैसे लग्न से होता है, इसी प्रकार लग्न के आरूढ पद से जो पचम राशि हो उससे भी पूर्वोक्त प्रकार के अनुसार विचार किया जाता है। उस भाव की दशा में भी विपम राशि में क्रम गणना और सम राशि में विपरीत गणना होती है ॥५६॥ यदि लग्न से नवम भाव में केतु हो अथवा आरूढ राशि में नवम भाव में केतु हो तो भी विपम राशि में पूर्ववत् क्रम से गणना और सम राशि में विपरीत गणना होती है ॥५७॥ पचम भाव में चर राशि हो तो शुभ फल देती है। तथा केतु की दशा में भी पचम भाव में पापग्रह होने पर भी शुभ फल होता है ॥५८॥ ग्रह के नवांश की रीति से तथा राशि की नवांश रीति से दशा में अन्तर्दशा का विचार करना चाहिए। और इस दशा का नाम 'चर-नवांश' वर्ष दशा है ॥५९॥

स्वस्वाम्यादि दशा ग्राह्या फलादेशाय हेतवे । स्थिरनवाशे वर्षाणि राशि प्रति नवैव हि ॥६०॥ चरराशिनवांशाब्दे मासान्येव चरस्थिरा ॥ विधेयेद्विफलार्याय बले ग्राह्य द्विजोत्तम ॥६१॥ यस्मिन्काले यस्य राशेर्यदा सा च चरस्थिरा ॥ पर्यायस्तद्दशाया च स राशिर्द्वारिमुच्यते ॥६२॥ लग्नाद्याबद्धूर स्याद्द्वारराशिर्द्विजोत्तम ॥ तस्माच्च तावद्दूरो हि बाह्यराशिर्भवत्यपि ॥६३॥ चरानुक्तितमार्गः स्यादष्टपष्ठादिका स्थिरे ॥ उभये कटका जेया लग्नपचमभागतः ॥६४॥ चरस्थिरद्विःस्वभावे औजेपु प्राक्क्रमोत्क्रमः तेषु च त्रिपु युग्मेपु ग्राह्या द्युतक्रमतोऽस्तिला ॥६५॥ एवमुत्तिरक्षितो राशि पाकराशिरिति स्मृत ॥ स एव भोगराशिश्च पर्यायि प्रथमे स्थिरः ॥६६॥ लग्नाद्यावत्तियःपाकः पर्याय इव दृश्यते ॥ तावन्मात्र ततोभोग पर्यायि तत्र गृह्यताम् ॥६७॥ तद्वि चरपर्यायिस्थिरपर्याययोर्द्वयो ॥ त्रिकोणाख्यदशाया च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६८॥

इस नवांश दशा में भी राशि के स्वामी से दशा आरंभ होती है। और महादशा के वर्ष प्रति राशि ९ जागने चाहिए ॥६०॥ हे मैत्रेय! चर राशि महादशा के नवांश के अन्त में विशेष फल जानने के लिये आधा भाग चर राशि और आधा भाग स्थिर राशि का जानना चाहिए ॥६१॥ जिस समय में जो आयु (अल्प मध्य दीर्घ) प्राप्त हुई हो, उस दशा की उस आयु के लिये वह 'द्वार राशि' है ॥६२॥ लग्न में जितने स्थान मख्या पर द्वार राशि हो, उतनी ही मख्या और आगे 'बाह्य राशि' होती है ॥६३॥ राशि दशा में चर राशि के लिये कोई विशेष स्थान बधित नहीं है। स्थिर राशि के लिये पष्ठ और अष्टम स्थान बधित है। और द्विस्वभाव राशि में केन्द्र तथा त्रिगुण भाव बड़े गये हैं ॥६४॥ ओज राशियों के चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशि में पहले बड़े अनुमात्र पहले क्रम में, पौष्टि व्युत्क्रम से गणना होती है। और शेष की ३-३ राशियों में विपरीत गणना होती है ॥६५॥ उम प्रकार बनाई हुई राशि दशा की राशि है और अपने पर्याय में पहली नवांश की भी राशि है ॥६६॥ लग्न में जितनी मख्या पर द्वार राशि हो भोग में उम लिये की उतनी ही मख्या पर बाह्य दशा जानना ॥६७॥ यह

करना॥७९॥ चर दशा मे पूर्व प्रकार से दशा लगाना। स्थिर दशा मे पष्ठादि क्रम से दशा लगाना। इस प्रकार चारहवो भाव की दशा लगाना॥१८०॥ चर राशि मे एक ही प्रकार है और स्थिर राशि मे पष्ठादि प्रकार है॥८१॥ हे द्विजोत्तम! इस प्रकार यह चरपर्या दशा कही गई और ७।८।९ वर्ष के प्रमाण से स्थिरपर्या दशा कही गई॥८२॥

उदाहरण तथा चक्र—

कल्पना किया कि—बुध ब्रह्मग्रह है अत उपर्युक्त नियमानुसार बुध के स्थान से दशा आरभ की और सब भावो के ६-६ वर्ष योग करके चक्र का निर्माण किया गया।

अथ ब्रह्मदशायंत्रम्												
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	भावा
बु०		के०		बु०		गु०		गु०		ब०		
६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	७२
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	वर्षा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	नि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	
१९००	१९०६	१९१२	१९१८	१९२४	१९३०	१९३६	१९४२	१९४८	१९५४	१९६०	१९६६	१९७२
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

### अथ केद्रादिवशात्माह

अथ केद्रदशादीत्या भेदानाह द्विजोत्तम ॥८३॥ प्रथमे चरराशौ च सप्तमे वा सप्तमेऽपि वा ॥ बलवद्भाशिमारभ्य उत्तमार्गे दशाश्रम ॥८४॥ विषमे ममभेदाच्च प्रथमे प्राक्च मोक्षम ॥ प्रथमादि द्वितीयादि द्वादशाना व्रमेण च ॥८५॥ सप्राक्च मोक्षपदमप्यनुजिज्ञातव मोपरि ॥ दशा द्वादशाराशीनां क्रमव्युत्क्रमभेदत ॥८६॥ स्थिरराशौ द्वितीयेऽपि सप्तमे वा सप्तमे द्विज ॥ पट्यपष्ठादि च रीत्या च दशाश्रम प्रकाशयेत् ॥८७॥ पदाच्च पूर्वमुत्तेन व्रमव्युत्क्रमभेदत ॥ व्रमाद्बुधे वृश्चिरे च व्युत्क्रमात्कर्मभिर्हयो ॥८८॥ पृथक्व्रमेण तृतीयादिव्यभाषदशा द्विज ॥ सप्तमे वा सप्तमे वापि बलवाश्र विनोवृषेत् ॥८९॥ चतुष्केन्द्रादिदिशा सप्तमसप्तभाष्य ॥ केद्रे सप्तमे ततो मेधात्पणकरे पचमादित ॥९०॥ आपोक्विमे भाष्यतश्च दशाश्रमो द्विजोत्तम ॥ नव नव समा प्राज्ञा मीप्रेऽप्यष्ट भाषिते ॥९१॥

### केन्द्रादिदशा

अब केन्द्रदशा की रीति से दशा के चर, स्थिर, तथा द्विस्वभावराशिदशा के भेद कहते हैं (महादेवजी ने) उनमें प्रथम चरराशि दशा में लग्न में चर राशि हो तो लग्न और सप्तम में जो बलवान् राशि हो, उससे दशा का आरम्भ करो॥८३॥८४॥ (लग्न या सप्तम भाव की चरराशि जो बलवान् हो वह) यदि विषम हो तो क्रम गणना से और सम हो तो विपरीत क्रम से दूसरी, तीसरी आदि १२ राशियों तक दशा होती है॥८५॥ प्रथम कहे हुए क्रम का उल्लेख नहीं करना॥१२॥ राशियों की दशा क्रम तथा विपरीतक्रम से ही जानना॥८६॥ (अब स्थिरराशि की दशा कहते हैं) द्वितीय पर्याय में लग्न में स्थिर राशि हो तो लग्न या सप्तम में जो बलवान् हो, लग्न से दशा का आरम्भ होकर उसके बाद उससे छोटे भाव की दशा, बाद उससे छोटे भाव की दशा होती है॥८७॥ पहिले कही हुई रीति से सीधे और उनसे क्रम से दशा रखना। वृष और वृश्चिक लग्न हो तो क्रम से और सिंह कुम्भ हो तो उससे क्रम से दशा की गणना करना॥८८॥ (द्विस्वभावराशि की दशा) द्विस्वभावराशि यदि लग्न में हो तो लग्न सप्तम में जो बलवान् हो उससे देखना॥८९॥ केन्द्र के चार भावों की दशा इस प्रकार रखना कि—प्रथम लग्न आदि चारों केन्द्र भावों की बाद पणफर स्थानों में तो केवल एक पचमभाव की उसके बाद पहनेवाले तीन केन्द्र स्थानों की॥१९०॥ और बाद आपोक्लिम स्थानों में से प्रथम नवमभाव की और बाद में इनेवाले तीन केन्द्र के भावों की दशा होती है। और सब राशियों की दशा में वर्ष सख्या ९-९ ही होती है॥९१॥

### अथ कारककेन्द्रदशामाह

सूर्यादिनवखेटाश्च आयुर्दायनवाशकान् ॥ नवभिर्नवभिर्वर्षे कारककेन्द्रादिका दशा॥९२॥ या नवाशकाना च ह्यब्दाना द्विजसत्तम ॥ कारकेद्रादि सत्याप्य क्रमात्पूर्व समानयेत् ॥९३॥ आदौ केन्द्रस्थराशिश्च तस्याधिपक्रमेण च ॥ नवभिर्नवभिर्वर्षे कारककेद्रादिसंस्थिता॥९४॥ आदौ केन्द्रस्थराशिश्च तस्याधिपक्रमेण च ॥ बलाधिक्येन प्रथमस्ततो दुर्बलसन्नक ॥९५॥ प्रतिभे नव वर्षाणि कारकाश्रितराशितः ॥ जन्मसपद्विपक्षेप्रत्यरीताधको बध ॥९६॥ मैत्रातिमैत्रमित्येव तत्तदतर्दशा नयेत् ॥ स्वकेद्रस्थाधिपाना च सूर्यादीना ग्रहाद्विज ॥९७॥ कारकलघ्ने समानोऽथ लग्नसप्तमयो र्बली ॥ तदारभ्य क्रमेणैव क्रमव्युत्क्रमभेदतः ॥९८॥ गृहकारकपर्यंत राशिमाख्या दशाद्विकारः ५. नतः काउककेद्रादिविजिभ्रगेन बली भवेत् ॥९९॥

### कारककेन्द्रदशा

सूर्यादि नवग्रह इस कारककेन्द्रदशामें ९-९ वर्षों की आयुरूप दशा तथा नवाशरूप में अन्तरदशा देने वाले हैं॥९२॥ उन ग्रहों तथा नवाशरों की वर्षों दशा पहिले स्थापित करनी चाहिए॥९३॥ प्रथम केन्द्रस्थ राशि अपने स्वामी ग्रह के क्रम से ९-९ कारककेन्द्रदशामें लगानी चाहिए॥९४॥ केन्द्रराशियों में अपने स्वामी के क्रम से जो राशि बलवान् होगी उसकी दशा प्रथम रखी जायगी, उसके बाद उससे दुर्बल की (और उसके बाद उससे दुर्बल को) ॥९५॥ प्रति राशि के ९-९ वर्षों होते हैं, उन नौ वर्षों की अन्तरदशा में जन्म, सम्पत् विपत्, क्षेम, प्रत्यदि, साधक बध॥९६॥ मैत्र, अतिमैत्र इन ताराणामों से अन्तर्दशा रखना,

यह अन्तरदशा अपने केन्द्रस्वामी सूर्य आदि ग्रह की कही जाती है ॥१७॥ इस दशा के आरभ करने में भी लग्न और सप्तमभाव में जो बलवान् हो उससे विषम तथा सम राशि के अनुसार क्रम और व्युत्क्रम भेद से दशा रखनी होती है ॥१८॥ अपने स्वामी तक यह दशा केन्द्र के स्थानों में बलवान् ग्रह के विभाग से रखी जाती है ॥१९॥

आदौ केन्द्रस्थिताना च स्थिताना पणफरे तत ॥ आपोक्लिमे स्थिताना च ततोपि बलवद्द्विज ॥२०॥ बलाढ्य प्रथमे विप्र क्रमेण सर्वदुर्बला ॥ केन्द्रादिस्यग्रहाणा च दशाब्दानयन कृतम् ॥२१॥ खेटात्कारकपर्यन्त राशिसंख्याप्रमाणतः ॥ एव दूर महाप्राज्ञ नवत्यब्दाभ्येत्क्रमात् ॥२२॥ यथा कारकग्रहस्याब्दास्तथा कारकयुक्तका ॥ तत्तद्ग्रहाणामब्दानामानेय द्विजसतम् ॥२३॥ एव स्थिरदशास्मात्स्थान दर्शयति द्विज ॥ अतर्दशाब्दमानेय ह्यर्क भाना क्रमेण च ॥२४॥ लग्नादिचतु केद्रेषु वैयम्याधिके वै द्विज ॥ तद्वागो स्थितिमारम्य होकाब्देन क्रमेण च ॥२५॥ चतुःकेद्रेषु विप्रेद्र विषमातिबलाधिका ॥ दशाप्रदत्वात्सराशि कारक पर्यवस्थित ॥२६॥ अतर्दशा तदारम्य द्वादशराशिषु द्विज ॥ प्रतिराशयेक भब्द च सर्वे स्पष्टाधिपा क्रमात् ॥२७॥

प्रथम केन्द्रस्थित राशियों की अपने बलाबल के अनुसार बाद पणफर राशियों की, पञ्चात् आपोक्लिम राशियों की दशा रखनी चाहिए ॥२०॥ हे विप्र! सबसे बली राशि की प्रथम इसी तरह उससे दुर्बल और उससे दुर्बल ग्रह की अर्थात् केन्द्र के चारों भावों में ग्रहों के बलाबल से अन्त में (चौथी) सबसे दुर्बल ग्रह की दशा होगी ॥२१॥ पूर्वोक्त प्रकार से ग्रहों से बलका विचार करते हुए शेष तक १२ भावों की दशा रखना ॥२२॥ जिस कारक ग्रह के वर्ष स्वामी (कारक) के भी समझना ॥२३॥ इस प्रकार अपने २ भावों की दशा स्थिर होने पर अन्तर्दशा भी १२ हों भावों की रखना ॥२४॥ लग्न आदि ४ केन्द्र स्थानों में जो बलाधिक राशि है प्रथम उसीसे अन्तर्दशा भी आरभ होगी। भोग प्रमाण १-१ वर्ष का होगा ॥२५॥ हे विप्रेन्द्र! चारों केन्द्रस्थानों में विषम राशि भी बल में अधिक है अतः प्रथम दशादात्री होनेसे कारककेन्द्र दशा में स्थित है। अर्थात् अपने विषमत्व बल से ही उसका इस दशा में महत्व है ॥२६॥ १२ राशियों में अपने २ स्पष्टक्रम से प्रतिराशि १-१ वर्ष देकर अन्तर्दशा रखनी चाहिए ॥२७॥

एव महादशाब्दाना द्वादशराशिषु भ्रमेत् ॥ तदनन्तर्दशा शेषा भानू राशयोपरिभ्रमन् ॥२८॥ नवाशाख्या दशाब्दानामित्यनुवृत्त्यमेव च ॥ आदिराशिर्नवाब्दाना सप्ताहो द्विजसतम् ॥२९॥ एव केद्रबलाधिक्यमारम्य प्रथमा दशा ॥ दुर्बलाना च सर्वेषामब्दानामानयेत्क्रमात् ॥ १०॥

इस प्रकार महादशा के १२ राशियों में तत्तद् ग्रह की अन्तर्दशा भी भ्रमण करती है (होनी है) ॥२८॥ राशि के ९ वर्षों में अन्तर की अनुवृत्ति से आदि राशि ही अपने २ नवांश वर्षों की स्वामिनी होती है ॥२९॥ पूर्वोक्त प्रकार में इस प्रकार बनावन विचार में केन्द्र में बलाधिक प्रथम होती हुई अन्त तक १२ राशियों की दशा होती है ॥२८-१०॥

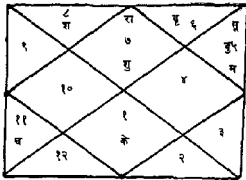
उल्टे क्रम से आत्मकारक ग्रह जिस स्थान में हो वहां तक गिन कर वर्षसंख्या रखना चाहिए ॥११॥ हे विप्र! इस कारक ग्रह की दशा में अन्य दशाओं से भेद है। ग्रह या राशि की दशा के वर्ष विषम और सम राशि में परस्पर विपरीत क्रम से वर्ष संख्या ग्रहण की जाती है ॥१२॥ ऐसा ही पहिले भगवान् शम्भु ने कहा है कि-विषम, सम राशियों में क्रम तथा व्युत्क्रम भेद से वर्षों की संख्या लेना चाहिए ॥१३॥ और आत्मकारक के साथ जो ग्रह हो उनकी दशा के वर्ष भी आत्मकारक के बराबर ही होते हैं ॥१४॥ लग्न से आत्मकारक ग्रह तक गिनकर (विषम, सम में क्रम-व्युत्क्रमभेद से) जो संख्या हो वह आत्मकारक की दशा होती है ॥१५॥ आत्मकारक युक्त ग्रह की आत्मकारक के तुल्य ही जानना। दोनों की संख्या अधिक हो तो अधिक और न्यून हो तो न्यून दशा जानना ॥१६॥ आत्मकारक से युक्त होकर केन्द्रादि शुभस्थान में होने से शुभफल एव इसके विपरीत अशुभ फल होता है ॥१७॥ हे द्विजोत्तम! इस दशा का फल हमने पहिले कहा है। जिस दशा का स्वामी शुभ और बलवान् होता है उस दशा का अधिक शुभ फल होता है ॥१८॥

कारकचक्रम्						
म	च	मू	पु	श	वृ	शु
आत्म- कारक	अमात्य- कारक	भ्रातृ- कारक	मातृ- कारक	पुत्र- कारक	जाति- कारक	वारा- कारक

उदाहरण-उपर्युक्त चक्र में अशानुक्रम से कारक दिखाये गये हैं। इसी क्रम से दशा चक्र में दशा रखी गई है। लग्न से आरंभ करके जितनी संख्या पर ग्रह हो उतने वर्ष समझना चक्र में स्पष्ट है।

कारकदशाचक्रम्							
म०	च०	मू०	पु०	श०	वृ०	शु०	ग्रहा
११	५	११	११	२	१२	१	वर्षाणि
०	०	०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	०	०	
०	०	०	०	०	०	०	
२०१४	२०२५	२०३०	२०४१	२०५२	२०५४	२०६६	संवत् २०६७
४	४	४	४	४	४	४	वर्ष
२३	२३	२३	२३	२३	२३	२३	
२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	
१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	

जन्मलग्नम्



अथ मङ्कदशामाह

मङ्क इति विख्याता त्रिकूटाख्या दशा द्विज ॥ सप्ताष्टनवसख्याश्च क्रमाब्दा स्थिरदशा इति ॥१९॥ चरस्थिरद्विस्वभावे सप्ताष्टनवसख्यया । अब्दास्तु पूर्वरीत्या च ह्यानीय च दशा स्थिरा ॥२०॥ तद्वाशेषाब्दकूटश्च घटितत्वाद्द्विजोत्तम ॥ चरस्थिरद्विस्वभावाना त्रिकोणार्ध प्रवर्तते ॥२१॥ क्रमेण प्रोक्तरीत्या च प्रवृत्तत्वात्त्रिकूटका ॥ मङ्कैति समाख्याता पुरा शम्भुप्रणोदिता ॥२२॥ केद्रात्पणफराच्चैवापोक्लिमलप्रपचत ॥ क्रमेणभागादिति च त्रिकोणाख्या च पूर्ववत् ॥२३॥ त्रिकूटघटितत्वाच्च केद्रादिति द्विजोत्तम समुद्र घटितत्वाच्च दशा स्थूला त्रिकूटका ॥२४॥ वैषम्याद् यदि विप्रेन्द्र तत्प्रसप्तमयोस्तथा ॥ मध्ये बलवती राशिस्तमारम्य प्रवर्तते ॥२५॥

मङ्क दशा

मङ्कदशा नाम ते प्रसिद्ध, तीन समूहवाली (अर्थात् प्रथम केन्द्र से, द्वितीय पर्याय मे पणफर से, तृतीय पर्याय मे आपोक्लिम से होने वाली है) अत त्रिकूट नामवाली दशा है। इसमे ७,८,९ वर्ष क्रम से होने से स्थिर दशाओ की श्रेणी की है ॥१९॥ चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियो मे ७,८,९ वर्ष सख्यायुक्त पूर्व रीत्यनुसार रखना चाहिए ॥२०॥ तत् तत् राशि के वर्ष निश्चित होने से प्रथम केन्द्र से पश्चात् त्रिकोण ५,९ से यह दशा प्रवृत्त होती है ॥२१॥ क्रम से केन्द्र से त्रिकोण मे प्रवृत्त होने से 'त्रिकूटदशा' अथवा मङ्कदशा कही गई है ॥२२॥ अथवा दूसरे शब्दो मे प्रथम केन्द्र से और बाद पणफर से पश्चात् आपोक्लिम से तत्र, पचम, नवम भावो से प्रवृत्त होने से भी 'त्रिकूट' सजा सार्थक है ॥२३॥ तीन समूह- घटित (युक्त) होने से तथा हे द्विजोत्तम! यह दशा ४-४ स्थानो के तीन कूट (समूह) युक्त होने से भी 'त्रिकूटा' है ॥२४॥ हे विप्रेन्द्र! यदि तत्र तथा सप्तम भाव मे विषमराशि हो तो उनमे जो बलवती राशि हो उसी से यह दशा आरम्भ होती है ॥२५॥

पुंसो जातकवान् विप्र सप्तसप्तमयोर्द्वयो ॥ बलादपेन दशा ज्ञेया पूर्वोक्तेन क्रमेण च ॥२६॥ स्त्रीजातकवती विप्र बलवत्सप्तमा दशा ॥ आनीय पूर्वरीत्या च पुनरुक्त प्रणोदितम् ॥२७॥





### अथ नक्षत्रदशामाह

नक्षत्राण्युर्महाप्राज्ञ पूर्णमग्रे प्रभाषितम् ॥ विशोत्तरी पञ्चधा च द्विधा चाष्टोत्तरी मता ॥३५॥  
मनुष्यगोपरि दशा सर्वेषां वितयेद्द्विज ॥ ततो नियोगमालेख्य निर्विराक  
भविष्यति ॥३६॥

### अथ योगार्द्धदशामाह

चरस्विरदशा विप्र य च योग समाचरेत् ॥ तस्यार्धं च समायुर्दा योगार्द्धाख्या तु सा दशा  
॥३७॥ लग्नसप्तमयोर्मध्ये चितयेत्तु बलाश्रयम् ॥ लग्ने बलयुते लग्नाद्दशारभ प्रकाशयेत् ॥३८॥  
तस्मात्सप्तमवीर्यादिषु ॥ दशारभ प्रकल्पयेत् ॥ पुसा स्त्रीजातक वक्ष्ये क्रमभ्युत्क्रमभेदत  
॥३९॥ बलिनस्तु दशाऽऽनेया राशेर्हि शशिशुक्रयो ॥ स्त्रीचेद्दर्पणतो नेया पुरुषश्च ततो  
नयेत् ॥४०॥

#### नक्षत्र दशा

हे महाभाग! नक्षत्र द्वारा प्राप्त होनेवाली ५ प्रकार की विशोत्तरी दशा-अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, सूक्ष्मदशा प्राणदशा भेद से तथा अष्टोत्तरी के २ प्रकार (आर्द्रा तथा कृत्तिका से आरभ) सम्पूर्ण रूप से कही गई हैं। उन सब नक्षत्र दशाओं के फल का विचार मनुष्य वर्गों पर विचार करना तथा फलरूप भोग के समाप्त होने पर मृत्यु का विश्रय करना ॥३५-३६॥

#### योगार्द्ध दशा

चरराशि के दशावर्ष तथा स्थिर राशि के दशा वर्ष जोड़ कर आधे करने से (अर्थात् प्रत्येक राशि के चरदशा के वर्ष लेना और स्थिरदशा के वर्ष लेना योग कर आधा करने से) योगार्द्ध दशा होती है ॥३७॥ लग्न और सप्तमभाव में से जो बलवान् हो उससे दशारभ करना जैसे लग्न बलवान् हो तो लग्न से दशारभ करना ॥३८॥ सप्तमराशि बलवान् हो तो सप्तमभाव से दशा का आरम्भ करना तथा विषम सम भेद से ब्रह्म व्युत्क्रम गणना का भी ध्यान रखना ॥३९॥ जो राशि बलवान् हो उससे दशा का आरम्भ करना। जिस जातक के चन्द्र शुक्र बलवान् हो उसके लिए यह दशा देखना। स्त्री जातक हो तो लग्न तथा सप्तमभाव में जो राशि बलवान् हो उससे जो सप्तमभाव है, उससे दशा लेना। और पुरुष जातक हो तो लग्न सप्तम में जो बलवान् हो उसी से दशारभ लिया जाता है ॥४०॥

उदाहरण-इस 'योगार्द्धदशा' में वषादि इस रीति से लेना वि-प्रथम 'चरदशा' के तथा 'स्थिर दशा' की वर्षसंख्या या योग करके आधा करना (२ का भाग देना) लग्न वर्ष मान उसी भाव के 'योगार्द्धदशा' के वर्ष मान लीये। चन्द्र से स्पष्ट समझना।

अथ योगार्द्धदशचक्रम्												
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	योगा
९	९	८	७	७	८	६	७	५	९	१०	५	१२
०	६	०	०	०	६	६	०	६	६	०	०	६
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
१००	१५०	१५१	१५२	१५३	१५४	१५५	१५६	१५७	१५८	१५९	१६०	१६१
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

### अथ द्वादशमाह

कुजादिति च ज्ञेया सा वितरणवभाविता क्रमत्रये कूटपद नाम्ना वै द्वादशा द्विज ॥४१॥  
 दृष्टिचक्रे समुल्लस्य राश्यादी नवमस्य च ॥ कुत्रचित्कमरीत्या च कुत्रचिद्भ्युत्क्रमेण च ॥४२॥  
 ततोपि पञ्चमस्तैव क्रमेण कुत्रचिद्द्विज ॥ कुत्रचिद्द्विभुक्तमेणैव राश्याकादशा समुल्लस्य ॥४३॥

#### द्वादशा

द्वादशा के लिए शास्त्र में 'कुजात्' कहा है। अतः लग्न से (कुज=नवम) नवमभाव तथा दशम और एकादश इन तीन भावों से दशा का सकलन होता है। इन तीन भावों के समूह को विकूट नाम से कहा है ॥४१॥ (यहाँ कुज शब्द का अर्थ नवम होता है क्योंकि—'कटपयादि अक्षा ग्राह्या।' इस नियम से क-१ ज-८ इन अक्षों को 'अक्षाना वामतो गति' नियम के अनुसार रखा तो ८१ हुआ। १२ का भाग दिया तो शेष ९ यह राशि या भाव संख्या हुई। इस रीति के अनुसार 'कुजात्' का अर्थ 'नवमात्' किया है।) प्रथम दशारभ नवम के सम्मुखस्थ राशि की दशा होती है। कही क्रम से और कही विपरीतक्रम से दशा जानना ॥४२॥ (यहाँ दृष्टिचक्रकी दृष्टि का कथन है। दृष्टिचक्र चतुर्य अध्यायके आरम्भमें देखे।) इसमें भी राशि, क्रम के अनुरोध से अपने से पञ्चमभाव को देखती है और व्युत्क्रमानुरोध से एकादश भाव को देखती है ॥४३॥

तस्याभावाप्रमाणं हि न प्राह्य द्विजसत्तम ॥ सप्राह्य पञ्चमस्तैव दृष्टिचक्रे विरोधत ॥४४॥  
 अमिपश्यति श्लाघाणि पार्श्वं द्विजसत्तम ॥ पूर्वोक्तस्यैव रीत्या तत्रिकूटपदमुच्यते ॥४५॥

त्रिराश्यात्मकूटपदं ततोपि दशमस्य च ॥ दृग्दशैकादशे ज्ञेया नवमस्यापि दृग्दशा ॥४६॥  
 फलार्थे दृग्दशा विप्र संगृह्यै फादशेषि च ॥ तस्याः प्रकारं वक्ष्येहं पुनरुक्तं विशेषतः ॥४७॥  
 अयौजयुग्मभेदेन गणनाक्रम उच्यते ॥ यथा सामान्यं संज्ञेयं युग्मेषु पञ्चमाययोः ॥४८॥ गणनायां च  
 सामान्यं पंचमैकादशे द्विज ॥ क्वचिदित्यात्मकं ज्ञेयं सामान्यत्रयकूटके ॥४९॥ अयौजपदयोर्विप्र  
 संज्ञेयं विपरीततः ॥ युग्मे च युग्मपदयोर्वथा सामान्ययोजनम् ॥२५०॥

हे द्विजसत्तम! चतुर्थाध्याय में यह दृष्टिक्रम कहा है कि—राशियां अपनी संमुख राशि को  
 तथा पार्श्वराशि को देखती हैं। उस पूर्वोक्त रीति से ही 'त्रिकूट' स्थान कहा जाता है ॥४५॥  
 तीन राशियों के मेल का नाम 'त्रिकूट' है। अतः ९।१०।११ भाव की राशियों से यह 'दृग्दशा'  
 होती है ॥४६॥ फलनिर्देश के लिए यह 'दृग्दशा' कही गई है। इसका प्रकार पुनः स्पष्ट करके  
 कहते हैं ॥४७॥ अब विपम, समभेद से गणना का क्रम कहते हैं। युग्मराशि में सामान्य रीति से  
 ही ५।११ भाव की दशा जानना ॥४८॥ तीनों राशियों ९।१०।११ में पंचम एकादश राशि  
 की गणना सामान्यरूप से जैसे चतुर्थाध्याय में कही है उसी प्रकार करना ॥४९॥ विपमराशि  
 हो तो विपरीत क्रम से और समराशि हो तो क्रमगणना से ५।११ भाव की दशा  
 रखना ॥२५०॥

क्रमो वृषे वृश्चिके च हीत्युक्तेन द्विजोत्तम ॥ अत्रापि ह्योजकूटस्थे पंचमैकादशात्क्रमात् ॥५१॥  
 दृग्योगं च भवेद्विप्र दृग्दशा बलदायिका ॥ युग्मकूटस्थसामान्यं व्युत्क्रमात्सिंहकुंभयोः ॥५२॥  
 पंचमैकादशी विप्र दृग्योगौ भवतस्तथा ॥ राशीनां द्विस्वभावानां पंचमैकादशे स्थिते ॥५३॥  
 दृग्योगस्याप्यभावश्च दृष्टिचक्रे विचिंतयेत् ॥ यत्रभावे भवेद्दृष्टिस्तत्र तस्याश्रयादिकं  
 ॥५४॥ नवमेशानंतरं च विज्ञेया गणिताग्रणीः ॥ सप्तमस्य ततो ज्ञेया नवनादि  
 त्रिकोणणे ॥५५॥

वृष और वृश्चिक राशि विपम वर्ग में होने के कारण प्रथम पंचम पश्चात् एकादशभाव  
 राशि की दशा लेना ॥५१॥ इसी तरह सिंह और कुम्भराशि के समवर्ग में होने के कारण  
 विपरीत क्रम से दृग्दशा ग्रहण करना ॥५२॥ द्विस्वभाव राशि पंचम एकादश में हो तो उनसे  
 भी दशा वर्ण लेना ॥५३॥ दृष्टियोग पूर्वोक्त 'दृष्टिचक्र' से देखना। जिस भाव में दृष्टि हो उस  
 भाव से दशा ग्रहण करना ॥५४॥ नवमभाव के बाद दशम आदि राशि की दशा लेना। सप्त  
 सप्तमभाव में सप्तमभाव बलवान् हो तो सप्तमभाव से नवमादि राशि लेना ॥५५॥

द्विधा राशिर्दृग्दशायां पार्श्वराशिद्वयं दशा ॥ पुराशिर्द्विस्वभावस्य ज्ञेया तस्य क्रमेण च ॥५६॥  
 स्त्रीराशिर्द्विस्वभावेपि व्युत्क्रमेण द्विजोत्तम ॥ चतुर्थदशमी ग्राह्यो पार्श्वं तु न संशयः ॥५७॥  
 चरराशिक्रमेणैव संस्थिते व्युत्क्रमेण च ॥ पंचमैकादशी विप्र दृग्योगं च भवत्यपि ॥५८॥  
 पार्श्वराशौर्महाप्राज्ञ दशा ज्ञेया क्रमोक्तमात् ॥ द्विस्वभावनवमादौ संज्ञेयाः सप्तमस्य च ॥५९॥  
 ओजसंज्ञा द्विस्वभावे क्रमेण तुर्यं व्योमके ॥ समे व्युत्क्रमतो ज्ञेया सा ग्राह्या व्योमनुर्ययोः  
 ॥६०॥ राशीनां द्वादशानान्तु संख्या नवनवाब्दकैः ॥ संपाह्यं द्वादशानां च क्रमं  
 पूर्वप्रकारतः ॥६१॥

यदि जातक पुरुष हो और लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो पार्श्व राशि पचम एकादश नहीं होती, द्विस्वभावराशि की दृष्टि 'दृष्टिचक्र' में चतुर्थ, दशम पर होती है, अतः वही लेना ॥५६॥ इसी प्रकार जातक स्त्री हो तो भी विपरीत क्रम से चतुर्थ, दशम राशि ग्रहण करना ॥२७॥ चरराशि हो तो नियमानुसार क्रमसे या व्युत्क्रमसे पचम तथा एकादश भाव की दशा ग्रहण करना ॥५८॥ हे महाप्राज्ञ! पार्श्वराशि की दशा क्रम और व्युत्क्रम से लेना ॥ द्विस्वभाव राशि के नवमादि भावों में तथा सप्तमभावसे दशारम्भ हो तो पूर्वोक्तानुसार दशा लेना ॥५९॥ द्विस्वभावराशि यदि विपम हो तो प्रथम चतुर्थ भाव की बाद दशम भाव की दशा लेना ॥ मम राशि हो तो प्रथम दशम भाव की, बाद चतुर्थ की दशा लेना ॥६०॥ बारह राशियों की वर्ष सख्या ९-९ वर्ष की ही जाने। यह हमने दृग्दशा कही। इसका फल पूर्वोक्त प्रकार से ही जानना ॥६१॥

### अथ दृग्दशाचक्रम्

१	५	११	५	१	७	३	६	१२	१२	९	३	योग.
१	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	१०८
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
१९००	१९०९	१९१८	१९२७	१९३६	१९४५	१९५४	१९६३	१९७२	१९८१	१९९०	१९९९	२००८
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

उदाहरण—उपर्युक्त कल्पित उदाहरण में लग्न से नवम चरराशि है अतः चरराशि में ही दशा पश्चात् इसकी दृष्ट राशियों की दशा रखी गई है, पश्चात् दशम और उसकी दृष्टराशियों की, इसके बाद एकादश और उसकी दृष्ट राशियों की दशा रखी गई है। दृष्टिविचार मूल में पूर्णरूप से कहा ही गया है। वर्ष सख्या ९-९ स्पष्टरूप से मूल में कही ही है।

### अथ त्रिकोणदशामाह

इशा त्रिकोणताम्रा या यथान्यायप्रकल्पना ॥ चरपर्यायरीत्यादिभूकोक्तेन प्रदर्शित ॥६२॥  
 तत्रात्रिकोणेषु राशिर्बलवानुत्कृष्टे तुभिः । तदारम्भानयेज्जीमंश्चरपर्यायवद्दशा ॥६३॥

युग्मराशिभवां पुंतामोजे मूळोत् समुखः ॥ ओजराशिभुवां स्त्रीणां युग्मे चैव समाश्रयेत् ॥६४॥ क्रमोत्क्रमेण गणयेदोजयुग्मेपु राशियु ॥ संपन्नचरपर्यायदशामिति प्रकल्पयेत् ॥६५॥ ततोपि द्वारबाह्याभ्या फलमेव विचिंतयेत् ॥ पाकभोगद्वयं विप्र पापयोगेन सौख्यदाम् ॥६६॥ तदिदं चरपर्यायस्थिरपर्यायकं द्विज ॥ त्रिकोणाख्यदशायां च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६७॥

### त्रिकोणदशा

त्रिकोण दशा नाम की यह दशा चरपर्यायदशा की रीति से कही गई है ॥६२॥ लग्न से तथा त्रिकोण राशियों से यह दशा आरम्भ होती है। जो राशि पूर्वोक्त हेतुओं से बलवान् हो उसी से दशा आरम्भ करना ॥६३॥ (समराशि में उत्पन्न पुरुष जातक की दशा राशि सम्मुखीन विपन्न राशि में दशा कल्पना होती है। तथैव विपन्नराशि में उत्पन्न स्त्री जातक की दशा की परिकल्पना समराशि में होती है ॥६४॥) यथाक्रम और विपरीतक्रम से विपन्न, समराशियों में चरपर्यायदशा के समान ही दशा की कल्पना करो ॥६५॥ इस दशा से द्वारराशि तथा बाह्यराशि से दशा और अन्तरदशा का विचार करे, द्वार राशि का दूसरा नाम 'पाकराशि' और बालराशि का 'भोगराशि' नाम है ॥६६॥ इस प्रकार चरदशा और स्थिरदशा दोनों से इस त्रिकोणदशा के फलभोग का विचार किया जाता है ॥६७॥

पाकभोगे च पापादधे देहपीडा मनोव्यथा ॥ नृपाद्भूति भय क्लेशमहारुग्ण्यं प्रपीडितं ॥६८॥ अधुना सप्रयस्थानि कारकाणां फल द्विज ॥ सप्तमश्च तृतीयश्च प्रथमो नवमोऽपि च ॥६९॥ नवमात्स्वल्या विज्ञेया पितृसौख्यं विचिन्तयेत् ॥ शरीरारोग्यमैश्वर्यं चित्तधैर्यप्रयत्नाद्द्विज ॥७०॥

राशि की दशा में पापग्रह योग होने पर देहपीडा, मनश्चिन्ता राजभय, क्लेश तथा रोगभय होता है ॥६८॥ अब यह विचार कहा जाता है कि—प्रथमकारक (आत्मकारक) से इसी प्रकार तृतीय, सप्तम, नवम कारक से तत् २ कारकोक्त फल का विचार करना चाहिए ॥६९॥ नवमकारक से पितृसौख्य का विचार तथा प्रथमकारक से अपनी आरोग्यता आदि का विचार करो ॥७०॥

उदाहरण—लग्न से त्रिकोण अर्थात् लग्न, पञ्चम, नवम भाव राशियों में जो बलवान् राशि हो उससे दशा का आरम्भ करना, जैसे—कल्पित उदाहरण में प्रथम बलवान् होने से लग्न की, पश्चात् ५-९ की, एव बाद में २।६।१० की इसी प्रकार ३।७।११ और ४।८।१२ की दशा ही है। इनके पूर्व चर पर्याय के तथा स्थिर पर्याय के समान रखना चाहिए।

### अथ त्रिकोणदशाचक्रम्

१	५	९	२	६	१०	३	७	११	४	८	१२	योगः
११	६	२	११	८	१२	७	६	१२	७	६	१	८९
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
१९००	१९११	१९१७	१९१९	१९३०	१९३८	१९५०	१९५७	१९६३	१९७०	१९८२	१९८८	१९८९
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

### अथ नक्षत्राद्वाशिदशाक्रममाह

जन्मादौ चंद्रनक्षत्रे सर्वत्र घटिकीघके ॥ भानुना दीयते भागशेषनाडीः प्रकल्पयेत् ॥७१॥ प्रथमं खण्डमारम्य द्वादशे खंडके द्विज ॥ लग्नाद्द्वादशराशीनां गणनीयं क्रमेण च ॥७२॥ या घटी कर्मवत्खण्डे जन्मखण्डत्र आदितः ॥ आरम्य गणनायां च जन्मलग्नादितो द्विज ॥७३॥ लग्नाद्द्वादशराशीशमारम्य द्विजसत्तम । क्रमव्युत्क्रममेदेन द्वादशर्षदशा मता ॥७४॥

#### नक्षत्र से राशिदशा

नक्षत्र के भभोग में १२ का भाग देकर बारहवां भाग प्राप्त करके जन्मकाल का कौनसा भाग है यह निम्न करे ॥७१॥ प्रथम खण्ड से बारह खंडों में से जिस खंड में जन्म हो उस खण्ड तक जन्मलग्न से गणना करके जो राशि प्राप्त हो उसीसे १२ राशियों की दशा विषम तथा समराशि में क्रम तथा व्युत्क्रम से दशा का आनयन करे ॥७४॥

उदाहरण—कल्पना किया कि किसीका जन्म पूर्वाषाढा नक्षत्र में है, उसका भभोग ५७।४८ है। १२ का भाग दिया तो लब्ध ४ तथा शेष ९।४८ है, अतः कल्पित लग्न ५ से पञ्चम धनु राशि प्राप्त हुई, इसी से दशा आरम्भ की, और प्रतिराशि ९-९ वर्ष रहे गये। चक्र में देखिये -

पुष्कराशिभवां पुतामोजे गृह्णीत संमुखः ॥ ओजराशिभवां स्त्रीणां पुग्मे चैव समाश्रयेत् ॥६४॥ क्रमोत्क्रमेण गणयेदोजपुष्पेपु राशिपु ॥ संपन्नचरपर्यायदशामिति प्रकल्पयेत् ॥६५॥ ततोपि द्वारवाह्याभ्यां फलमेवं विचिन्तयेत् ॥ पाकभोगद्वयं विप्र पापयोगेन सौख्यदाम् ॥६६॥ तविदं चरपर्यायस्थिरपर्यायिकं द्विज ॥ त्रिकोणाख्यदशायां च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६७॥

### त्रिकोणदशा

त्रिकोण दशा नाम की यह दशा चरपर्यायदशा की रीति से कही गई है ॥६२॥ लग्न से तथा त्रिकोण राशियों से यह दशा आरभ होती है। जो राशि पूर्वोक्त हेतुओं से बलवान् हो उसी से दशा आरभ करना ॥६३॥ (समराशि में उत्पन्न पुरुष जातक की दशा राशि सम्मुखीन विपम राशि में दशा कल्पना होती है। तथैव विपमराशि में उत्पन्न स्त्री जातक की दशा की परिकल्पना समराशि में होती है ॥६४॥) यथाक्रम और विपरीतक्रम से विपम, समराशियों में चरपर्यायदशा के समान ही दशा की कल्पना करे ॥६५॥ इस दशा से द्वारराशि तथा वाह्यराशि से दशा और अन्तरदशा का विचार करे, द्वार राशि का दूसरा नाम 'पाकराशि' और वाह्यराशि का 'भोगराशि' नाम है ॥६६॥ इस प्रकार चरदशा और स्थिरदशा दोनों से इस त्रिकोणदशा के फलभोग का विचार किया जाता है ॥६७॥

पाकभोगे च पापादधे देहपीडा मनोव्यथा ॥ नृपाद्भीति भय क्लेशमहाहर्ष्यां प्रपीडित ॥६८॥ अधुना सप्रबक्ष्यामि कारकाणां फल द्विज ॥ सप्तमश्च तृतीयश्च प्रथमो नवमोऽपि च ॥६९॥ नवमात्स्वल्पा विज्ञेया पितृसौख्यं विचिन्तयेत् ॥ शरीरारोग्यमैश्वर्यं चितयेत्प्रथमा-  
द्विज ॥७०॥

राशि की दशा में पापग्रह योग होने पर देहपीडा, मनश्चिन्ता राजभय, क्लेश तथा रोगमय होता है ॥६८॥ अब यह विचार कहा जाता है कि—प्रथमकारक (आत्मकारक) से इसी प्रकार तृतीय, सप्तम, नवम कारक से तत् २ कारकोक्त फल का विचार करना चाहिए ॥६९॥ नवमकारक से पितृसौख्य का विचार तथा प्रथमकारक से अपनी आरोग्यता आदि का विचार करे ॥७०॥

उदाहरण—लग्न से त्रिकोण अर्थात् लग्न, पञ्चम, नवम भाव राशियों में जो बलवान् राशि ही उससे दशा का आरभ करना, जैसे—कल्पित उदाहरण में प्रथम बलवान् होने से लग्न की पञ्चात् ५-९ की, एव बाद में २।६।१० की इसी प्रकार ३।७।११ और ४।८।१२ की दशा ही है। इनके पूर्व चर पर्याय के तथा स्थिर पर्याय के समान रखना चाहिए।



## अथ नक्षत्रराशिदशाचक्रमिदम्

९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	योगा
९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	१०८
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
१२००	१२०९	१२१८	१२२७	१२३६	१२४५	१२५४	१२६३	१२७२	१२८१	१२९०	१२९९	सम्पत्
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

## अथ तारादशामाह

जन्मसप्तद्विपस्त्रेमप्रत्यरीसाधको घट ॥ सैत्रातिमैत्रमित्येव दशा ज्ञेया द्विजोत्तम ॥  
विशोत्तर्पाक्रमेणैवमब्दानिह विजानत ॥ आदी केद्रग्रहा यस्य विज्ञेया तारका दशा ॥७५॥

## तारादशा

जन्म सम्पत् विपत् क्षेम प्रत्यरि, साधक घट, मैत्र अतिमैत्र य नौ तार है। विशोत्तरी दशा के अनुसार ही इनकी दशा है। जातक की जन्मकुडली में जो ग्रह केन्द्र में है उनमें जो ग्रह बलवान हो सूर्यादि क्रम से उस ग्रह की तारा स दशा आरम्भ होगी और जान की दशाएँ उपर्युक्त ताराक्रम से होंगी। प्रथम की दशा का भोग्य वर्षादिमान गणित द्वारा स्पष्ट निबाल कर रखना तथा आगे के वर्षमान विशोत्तरी दशा के वर्ष ही जानना ॥७५॥

उदाहरण—इस दशा में सूर्य चन्द्र आदि ग्रहों के स्थान में जन्म, सम्पत् आदि नाम रखना और सूर्यादि ग्रहों के विशोत्तरी में कथित वर्ष ही इनके वर्ष हैं, और साधन रीति भी वही है।

## अथ तारादशाचक्रमाह

साधक	बुध	शुक्र	अतिनेत्र	जन्म	सप्त	विषु	शेम	प्रत्यरी	इमादशा
१	१७	७	२०	६	१०	७	१८	१६	१०२
८	०	०	०	०	०	०	०	०	८
१	०	०	०	०	०	०	०	०	१
३८	०	०	०	०	०	०	०	०	३८
६	०	०	०	०	०	०	०	०	६
१९००	१९०२	१९१९	१९२६	१९४६	१९५२	१९६२	१९६९	१९८७	२००३
१०	१०	६	६	६	६	६	६	६	६
४	४	५	५	५	५	५	५	५	५
१४	१४	१४	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२
२२	२२	२२	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६

## अथ वर्णदशामाह

जन्महोरक्षलप्रक्षसख्या प्राह्या पृथक् पृथक् ॥ ओजलप्रे च युग्मे तु चक्रगुदैकसयुता ॥७६॥  
 युग्मौजसाम्ये सयोज्य वियोज्यान्योन्यमन्यथा ॥ मेघादित क्रमादोजे मीनादेशक्रमात्समे  
 ॥७७॥ एव घल्लप्रमायात वर्णद तत्प्रकीर्तितम् ॥ एव द्वादशमावाना वर्णद तत्प्रकीर्तितम्  
 ॥७८॥ एव द्वादशमावाना वर्णद तत्प्रमानयेत् ॥ प्रहाणा वर्णदा नैव राशीना वर्णदा दशा  
 ॥७९॥ वर्णसख्या विजानीयान्वरपयप्रभागत ॥८०॥

## वर्णद दशा

जन्मकाल के होरालेख और जन्मलग्न से (अध्याय १० में कथनानुसार) अलग अलग सख्यायें ग्रहण करना, दोनो राशि विषम सम में हो तो पूर्वोक्तानुसार आगत सख्या १२ में अधिक हो तो १२ से जोधित करके १ जोड़े ॥७६॥ और दोनो राशि एक ही जाति की हो तो सयोजन, अन्यथा वियोजन करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह विषम हो तो मेघादि क्रम में और सम हो तो मीनादि विपरीत क्रम में जो लग्न प्राप्त हो वह 'वर्णद' लग्न है ॥७७॥ इसी रीति से बारहो भावों का 'वर्णद' निकालना। यह 'वर्णदा दशा ग्रहों की नहीं होती, केवल राशियों की होती है ॥७९॥ चरपया दशा के अनुसार राशि के स्वामी तक विषम सम में क्रम, व्युत्क्रम भेद से वर्ण सख्या प्राप्त वने ॥८०॥

उदाहरण—कल्पना किया कि किसी का जन्म मेष लग्न में है, अतः जन्मलग्न विषम है तो सख्या १ प्राप्त हुई और होरा लग्न वृषभ है तो सम होने से विपरीत गणना से सख्या १० प्राप्त हुई दोनों विषम सख्या होने से योग किया तो '११' यह वर्णद दशा राशि प्राप्त हुई, इसी प्रकार प्रत्येक भाव से वर्णद राशि का अंक प्राप्त करना चाहिए।

अथ वर्णददशाचक्रम्												
११	५	८	६	६	४	४	२	२	८	१२	९	योग
१२	६	६	८	८	७	७	११	११	४	३	२	८५
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
१९००	१९१२	१९१८	१९२४	१९३२	१९४०	१९४७	१९५४	१९६५	१९७६	१९८०	१९८३	१९८५
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

### अथ पचस्वरदशामाह

पचाकान्प्रथमे दत्त्वा स्वरान्वर्णाश्च विन्यसेत् ॥ आदावकच्छडाघाश्च अत ओच्छद्वावप  
॥८१॥ कादिहातांलिखेद्वर्णांस्वराधोऽज्जोत्तिताम् । तिर्यक्पत्तिक्रमेणैव पच पच विभागत  
॥८२॥ न प्रोक्ता उज्जगा वर्णा नामादौ सति तेन हि ॥ चेद्भवति तदा ज्ञेया गजद्वान्ते  
पयाक्रमम् ॥८३॥ यदि नास्ति स्युस्तद्वर्णा सयोगाक्षरलक्षणा ॥ प्राह्यस्तदादिमो वर्ण इत्युक्त  
ब्रह्मणा पुरा ॥८४॥

### पचस्वरदशा

(छ लाइन सीधी और १० लाइन तिरछी लिखने से, सडे ५ कोष्टक और तिरछे ९ कोष्टक होते हैं। यह चक्र हुआ, अब इसमें वर्ण विन्यास करते हैं।) ऊपर की तिरछी लाइन में १ से ५ तक के अक्षर लिखो। उनके साथ ५ स्वरो आ, ई, ऊ, ए, ओ, लिखो (यह दो लाईन हुईं)। प्रथम की खड़ी पंक्ति में अ, क, छ, ड, घ आदि अब लिखो और अत की पंचम खड़ी पंक्ति में

ओ, च, छ, द, व आदि अक्षर लिखे ॥८१॥ पश्चात् आदि की सही पक्ति के वर्णों से मिलान करते हुए 'क' से 'ह' तक के अक्षर लिखे, प्रत्येक स्वर के नीचे पक्तिवार अक्षर लिखे। ड, ङ, ण इनको नहीं लिखे। तिरछी पक्ति में क्रम से ५-५ अक्षर लिखे ॥८२॥ ड, ङ, ण ये वर्ण नहीं कहे गए क्योंकि—नाम के आदि में ये वर्ण नहीं होते। यदि हो तो उनके स्थान में क्रमशः ग, ज, ङ इन अक्षरों को मानना चाहिए ॥८३॥ यदि नाम के आदि में समुक्त अक्षर हो तो उसके आदि का एक अक्षर लेना, यह कहा है ॥८४॥

अकाराद्या स्वरा पञ्च ब्रह्माद्या पञ्च देवता ॥ निवृत्त्याद्या कला पञ्च इच्छाद्य शक्तिपञ्चकम् ॥८५॥ मायाद्याश्चरुभेदाश्च धराद्या भूतपञ्चकम् ॥ शब्दादिविषयास्ते च कामबाणा इतीरिता ॥८६॥ प्रभववादिक्रमेणैषा स्वराणामस्वरादिक ॥ उदयो द्वादशाब्दानां प्रत्येकं द्वादशाब्दिकं ॥८७॥ अस्यात्तरादयो वर्षमेको मासो दिनद्वयम् ॥ लोकाब्धिनाडिका प्रोक्तं अष्ट त्रिंशत्पलानि च ॥८८॥ द्वादशाब्दादिनाडयता स्वस्थानाच्च स्वकालतः ॥ उदयाते पुनस्त्वत्रातरैरेकादशोदये ॥८९॥ जन्मकर्माधानपिण्ड छिद्रा सज्ञा स्वरादिषु ॥ यत्र नामाक्षर प्राप्तं तत्रैव उदितं स्वरः ॥९०॥ तस्माद्वर्षान्विजानीयाद्वर्षान्मासो भवेत्पुनः। मासद्वयं च विज्ञेयं दिनद्वादशाब्दाधिकम् ॥९१॥ एव क्रमेण जानीयाद्वर्षान् मासाश्च पञ्चम् ॥९२॥

आकार आदि ५ स्वरो के ब्रह्मा आदि ५ देवता हैं। निवृत्ति आदि ५ कला इच्छा आदि ५ शक्ति है ॥८५॥ माया आदि ५ भेद और पृथ्वी आदि ५ भूत तथा शब्द आदि ५ विषय हैं इच्छा आदि ५ शक्ति हैं ॥८६॥ प्रभव आदि ६० वर्षों में से १२-१२ वर्ष एक एक स्वर में हैं ॥८७॥ इसके अन्तरोदय में १ वर्ष १ मास २ दिन ४७ घटी ३८ पल (अतरदशा) ॥८८॥ १२ वर्ष की दशा में तथा अन्तरोदय अपने पर्याय तथा अपने काल में ११ अन्तर होते हैं ॥८९॥ प्रत्येक स्वर की सज्ञा जन्म कर्म आधान पिण्ड, छिद्र ये हैं। जिस स्वर के नीचे नाम का आक्षर होगा, उस जातक का वही उदित स्वर है ॥९०॥ उस उदित स्वर से दशा का आरंभ होता है। वह दशा १२ वर्ष की और उसके अन्तरोदय के ११ अन्तर है। और उनमें प्रत्येक अन्तरोदय में पाचो स्वरो का भोगकाल होता है। जिसमें प्रत्येक स्वर का भोगकाल २ मास १२ दिन होते हैं ॥९१॥ इस क्रम से ५ स्वरो के वर्ष और मास जानना ॥

मार्गनीचमासौ तु आद्यास्यादिदिनव्ययम् ॥ एव विभागश्चाद्वादशे सप्रदायानुसारतः ॥९३॥ त्रियम् प्रतिपत्पूर्वा कुजादेर्बार्निर्णयः ॥ नदा भद्रा जया रिक्ता पूर्णा चापि पयाक्रमम् ॥९४॥ क्रमेणाकां प्रदातव्या प्राह्याश्वाकसमुच्चयाः ॥ चद्राष्टावस्वरे श्रेया ईश्वरे नागकुजराः ॥९५॥ उस्वरे रामरक्षाणि एस्वरे चद्रलेखराः ॥ ओस्वरे पञ्चदशभिः स्थितियोगसमुद्भवः ॥९६॥ अस्वरे कौर्व्यसिहाजा ईस्वरे जैपुराशयः ॥ उस्वरे चापजलजायेस्वरे तु तुलायुवी ॥९७॥ ओस्वरे मृगकुम्भौ च रासोगाद्द्वारजा स्वराः ॥ स्वराद्य स्यापयेत्लेहान् रासोर्व्यं यस्य नायकः ॥९८॥

इन पांच स्वरो में क्रम से २-२ मास और १२-१२ दिन के विभाग में एक वर्ष का

भोगमान कहा है। अस्वर मे मार्गशीर्ष और पौष मास तथा माघ के १२ दिन है। आगे इसी प्रकार ७२-७२ दिन ईकार आदि के है। १३॥ तथा प्रतिपदा आदि ३-३ तिथि क्रम से, एव मंगल आदि वार जानना। तिथियो मे नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा ये अकारादि स्वरो की जानना। १४॥ आगे कहे जाने वाले अब अकारादि स्वरो के नीचे देना और जिस स्वर के अब की आवश्यकता हो उसको ग्रहण करना। 'अ' स्वर के नीचे ८१ और 'ई' स्वर के नीचे ८७ देना। १५॥ 'ऊ' स्वर मे ९३ तथा 'ए' स्वर मे ९१ एव 'ओ' स्वर मे १०५ स्थापन करना। १६॥ इसी प्रकार 'अ' स्वर मे वृश्चिक सिंह तथा मेष और 'ई' स्वर मे ३। ४। ६ तथा 'उ' स्वर मे १। १२ एव 'ए' स्वर मे २। ७ एव 'ओ' स्वर मे १०। ११ तथा इन राशियो के स्वामी भी राशि के समान जानना, अर्थात् जिस राशि का जो स्वामी है वह राशि स्वर के नीचे ही रखना। १८॥

अथ पंचस्वरचक्रम्					
अ	ई	उ	ए	ओ	
१२	१२	१२	१२	१२	
क	ख	ग	घ	च	
छ	ज	झ	ट	ठ	
ड	ड	त	थ	द	
ध	न	प	फ	ब	
भ	म	य	र	ल	
व	श	ष	स	ह	

अथ पचस्वरदशाचक्रमाह					
ई	उ	ए	ओ	अ	योग
१२	१२	१२	१२	१२	६०
०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०
१९००	१९१२	१९२४	१९३६	१९४८	१९६०
१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२

उदाहरण—जल्दना किया कि 'ईकार' स्वर मे किसी का जन्म है, तो ईकार से ही दशा आरम्भ की गई। इसका विशेष विवरण दशा अन्तर्दशा आदि 'नरपतिजयचर्या' नामक ग्रन्थ मे है जिज्ञामु को वही देखना चाहिए।

### अथ योगिनीदशामाह

मगला पिगला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ॥ योगिन्योऽष्टौसमाख्याता उल्का सिद्धा च  
सकटा ॥९९॥ पिगलातो ष्येत्सूर्यो मगलातो निशाकरः ॥ भ्रामरीतो भवेद्भूमो भद्रिकानो



अथ पिडांशनैसर्गिकाष्टकवर्गचतुर्णामायुः परिदशामाह

पैडघाशनैसर्गिदशामायु परिविचितयेत् ॥ तथा ह्यष्टकवर्गं च विजानीहि द्विजोत्तम ॥५॥

पिडादि चतुर्बिध दशा

पिडायु, अशायु, नैसर्गिकायु तथा अष्टकवर्गायु इन चार प्रकार की दशाओ से आयु का विचार करे ॥५॥ इनके उदाहरण आगे कहेगे।

अथ संध्यादशामाह

परामुद्वादिशोभाग स्फुट सध्या भवेत्तत ॥ स्वल्पप्रस्यदशाचादी ततोऽन्येषु गृहेषु च ॥६॥

सध्यादशा

परमायु (१२०) वर्ष का जो बारहवा भाग है वह सध्या दशा का भोगकाल है और प्रथम लग्न की दशा उसके बाद क्रमशः दशा जानना ॥६॥

सन्ध्यादशाचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
२०००	२०१०	२०२०	२०३०	२०४०	२०५०	२०६०	२०७०	२०८०			
३	३	३	३	३	३	३	३	३			
४	४	४	४	४	४	४	४	४			

अथ पाचकदशामाह

सध्या रसगुणा कार्या चद्रवह्निहृता फलम् ॥ सस्वाप्य प्रथमे कोष्ठे ह्यर्द्धमर्द्धत्रिकोष्ठे ॥७॥  
त्रिभाग वसुकोष्ठेषु तिलेद्विद्वान्प्रपल्लत ॥ एष द्वादशमावेयु पाचकानि प्रकल्पयेत् ॥८॥

पाचकदशा

सध्यादशा के बर्षादि मान को ६ से गुणा करने ३१ वा भाग देने पर जो फल प्राप्त हो वह प्रथम कोष्ठक में रखे। बाद उसका आधा २ भाग आने में ३ कोष्ठों में और तीसरा भाग बाकी के ८ कोष्ठों में रखने से पाचकदशा होती है ॥७॥८॥

## महादशा फलकथनाध्याय

श्रीपराशरजी ने कहा—सूर्यनारायण को नमस्कार करके तथा सब चराचर जगत के स्वामी, सबके हृदयदेश में (साक्षी रूप से) रहनेवाले तेज स्वर्ण्य पार्वती पति श्री पशुपति तथा कल्याणकारी शम्भु को प्रणाम करके तीनों लोको की उत्पत्ति स्थिति तथा नाश करनेवाले भगवान् विष्णु को नमस्कार करके महेश्वर की कृपा से दाय (दशा) के फलप्रकाश प्रकरण कहते हैं॥१॥

## अथ विंशोत्तरीपञ्चविधांतरमाह

अथ वक्ष्ये खगेशाना भुक्ति पञ्चविधामहम् ॥ दशा चातर्दशाचैव तत्तदतर्दशा तथा ॥२॥  
सूक्ष्मभुक्तिप्राणदशाप्येव पञ्च दशा स्मृता ॥३॥ मार्तण्डेन्दुकुजाहिजीवशनिवित्केतु सितोते  
क्रमात्पद्मशक्तिर्मुनयो धृतिर्धरणिपा एकोनिता विशति ॥ अत्यष्टिर्मुनयो नखा इति विदुर्नाया  
इमे खेचरा सप्तार्च्यर्मविश्वमादिनयकक्षाणा दिनेसादय ॥४॥

## विंशोत्तरी दशा के पांच प्रकार—

अब हम सूर्यादि ग्रहों के पांच प्रकार भोगकाल कहते हैं। महादशा, अतर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा सूक्ष्मदशा, प्राणदशा॥२॥३॥ क्रम से सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक ये विंशोत्तरी दशा के स्वामी हैं। तथा दशा के वर्ष भूषादि ग्रहों के क्रम से ६, १०, ७, १८, १६, १९, १७, ७, २०। ये दशा वर्ष हैं। कृत्तिका रोहिणी, मृगशिरा आदि नक्षत्रों पर तीन बार आवृत्ति करने से उपर्युक्त दशापरति ग्रह ज्ञात होगा॥४॥

## अथ विंशोत्तरीमहादशावर्षनक्षत्राणि

सू	च	म	रा	वृ	श	बु	के	शु	ग्रह
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्षाणि
कृ	रो	मृ	भा	पु	पुष्य	आश्ले	म	पू	इमानि-
उ	ह	चि	स्वा	दि	अशु	ज्ये	पू	पूर्वाणि	नक्षत्राणि
उषा	म	घ	श	पू भा	उ भा	रेवती	अश्वि	भरणी	

## अथ भुक्तभोग्यानयनमाह

स्फुटतरो हिमगु कलिकात्मक सप्तगजैर्विभजेद्गतश्रुत्तवम् ॥ तदुदुवर्षगुण च समादि  
सप्तगजैर्विभजेत्कलमत्र च ॥५॥



दशाभुक्त योग्य साधन

जन्मकालीन स्पष्ट चन्द्रमा को घटयात्मक करके ८०० का भाग देने से लब्ध गतनक्षत्र प्राप्त होगा। शेषांक से दशावर्ष गुणा कर पुन ८०० का भाग देने से वर्ष, मास, दिन, घटी, पलरूप भुक्त दक्षा प्राप्त होगी। उसको दशा के वर्ष में घटाने से भोग्यदशा प्राप्त होगी॥५॥

अथ सूर्यस्य दशावर्षाणि ६ तत्फलम्

सूर्योऽकृष्टदशा करोति मुतधीप्रजाधिकारोच्छ्रयजानार्थागमकीर्तिवीर्यसुखप्राप्तीश्वरानुग्रहान् ॥ भानोपापदशा करोति विफलोद्योगार्थहान्यामघान्नाजशोभमहीशकोपजनकारिष्टाग्निबाधो-  
दयान् ॥६॥ भूतत्रिकोणे स्वक्षेत्रे स्वोच्चे वा परमोच्चगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभस्ये  
भाग्यकर्माधिर्षयुते ॥ बल सूर्ये समायुक्ते रघी वर्गे बलैर्षुते ॥ तस्मिन्दाये महासौख्य  
घनलाभादिक शुभम् ॥७॥ अत्यन्त राजसम्मातमन्त्रादोल्यादिक शुभम् ॥ सुताधिपसमायुक्ते  
पुत्रलाभ च विवति ॥८॥ धनेशस्य च सद्ये गजातैश्वर्यमादिशेत् ॥ बाहनाधिपसद्ये  
बाहनप्रपलाभकृत ॥९॥

सूर्य दशाफल वर्ष ६

सूर्य की श्रेष्ठ दशा हो तो पुत्र प्राप्ति, धेष्ठ बुद्धि, अच्छे अधिकारो की प्राप्ति ज्ञान का उदय, धनप्राप्ति यश विस्तार, पौरुष वृद्धि, सुख प्राप्ति और ईश्वरानुग्रह होता है। और यदि सूर्य की पापदशा हो तो मनोरथ की विफलता उद्योग और धन की हानि अनेक रोगों की उत्पत्ति, राजशोभ, परिवार कलह, पिता को अरिष्ट अग्नि बाधा आदि उपद्रव होते हैं॥६॥ सूर्य अपने मूल त्रिकोण में अपनी राशि में उच्च में अथवा परमोच्च में केन्द्र त्रिकोण या लाभ में स्थित हो और भाग्येश अथवा दशमेश स युक्त हो तथा बलवान् हो एव अपने वर्गों में हो तो उसकी दशा में महान् सुख और पूर्वोक्त धन लाभ आदिक होते हैं॥७॥ और विशेष करके राजकुल में सम्मान, घोडा मोटर आदि की सवारी प्राप्त होती है। यदि सूर्य पञ्चमेश से युक्त हो तो सुभेस्व होता है॥८॥ यदि धनेश से सम्बन्ध हो तो विशेष ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। यदि बाहनेश से सम्बन्ध हो तो कम में कम ३ सवारी होती है॥९॥

नृपालतुष्टिर्बितादेष सेनाधीश सुखी नर ॥ वस्त्रबाहनलाभश्च इति दामे रघी बली ॥१०॥  
नीचे पहलके रिष्के दुर्बले पापसयुते ॥ राहुकेतुसमायुक्ते दुःस्थानाधिपसयुते ॥११॥  
तस्मिन्दाये महापीडा धनधान्यविनाशकृत् ॥ राजकोप प्रवास च राजदड घनस्रपम् ॥१२॥  
ज्वरपीडा यशोहानिर्बन्धुमित्रविरोधकृत् ॥ प्रवास रोगचिद्वेषो हृणपृत्युभय भवेत् ॥१३॥  
चौराहिवणमीतिश्च ज्वरबाधा भविष्यति ॥ मित्रसयभय चैव गृहे त्वयुभमेव च ॥१४॥  
पितृवर्गे मनस्ताप जनद्वेष च विवति ॥ शुभदृष्टियुते सूर्ये मध्ये तस्मिन्व्यवित्पुत्रम् ॥  
पापग्रहेण सदृष्टे वदेत्यापकल नरः ॥१५॥

और राजा की प्रमत्तता विशेष धन लाभ या मेना पतित्व, उत्तम वस्त्र आदि लाभ होता है

और मनुष्य सुखी रहता है। (यह तो उत्तम फल कहा अब अधम फल कहते हैं) ॥१०॥ सूर्य नीच का हो, ६।८।१२ वे स्थानों में हो, बलहीन और पापग्रहयुक्त हो अथवा राहु-केतु से युक्त हो या त्रिपट्टय के स्वामी से युक्त हो ॥११॥ तो उस दशा में महान् पीडा, धनधान्य का नाश, राजकोप और प्रवास, राजदण्ड, ज्वरपीडा, अपकीर्ति, बन्धु और मित्रों से विरोध तथा अपमृत्यु का भय होता है ॥१२॥१३॥ चौर, सर्प, घाव का भय, पिता के मरने का भय, घर में अशुभ कार्य, पितृवर्ग में चिन्ता तथा परिवार में कलह होती है ॥१४॥ सूर्य पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो कुछ सुखा पापग्रहों की दृष्टि हो तो अधिक दुःख होता है ॥१५॥

### अथ चंद्रस्य महादशावर्षाणि १० तत्फलम्

चन्द्रोत्कृष्टदशा करोति जननीश्रेयस्तटागादिक क्षेत्रारामगृहासनद्विजवरधीशोभनादोलिका ॥ इन्दो पापदशान्नहीनकृपणानतार्थनारासामयप्रजाहीनमुपुप्तमातृमरणलोभातिशीतज्वरान् ॥१६॥ स्योच्चे स्वक्षेत्रगे धैव केद्रे लाभत्रिकोणगे ॥ शुभग्रहेण सयुक्ते वृद्धिचन्द्रबलेयुते ॥१७॥ कर्मभाग्पाधिपे चद्रे बाहनीये बलैयुते ॥ आद्यतेश्रोत्रभाग्येशधनधान्यादिलाभकृत् ॥१८॥ गृहे तु शुभकार्याणि वाहन राजदर्शनम् ॥ यत्नकार्यार्थसिद्धिः स्याद्गृहे लक्ष्मीकटासकृत् ॥१९॥ मित्रप्रभुवशाद्भूय राज्यलाभ महत्सुखम् ॥ अन्धादोल्पादिलाभ च श्वेतवस्यादिलाभकृत् ॥२०॥ पुत्रलाभादिसतोप गृहेगोधनसकुलम् ॥ धनस्थानगते चद्रे तुगे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥२१॥ अनेकधनलाभ च भाग्यवृद्धिर्महत्सुखम् ॥ निक्षेपराजसन्मान विद्यालाभ च विदति ॥२२॥

### चन्द्रदशा फल वर्ष १०

चन्द्रमा की श्रेष्ठ दशा हो तो माता को सुख ममान वाग-वगीचा, तलाव आदि, ममाज में श्रेष्ठता, उत्तम सवारी आदि प्राप्त होती है। चन्द्रमा की पापदशा हो तो धन हीनता, कृपणता, बहुधननाश, रोग विकर्तव्यविमूढता निन्दा मातृ मरण, दुःख, शीतज्वर आदि होता है ॥१६॥ (विशेष रूप से फल) चन्द्रमा यदि उच्च में अपनी राशि में, मूल त्रिकोण आदि में, केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो और शुभ ग्रह से युक्त हो, बलवान तथा शुभ पक्ष का हो, अथवा ९वें दशवें वा मानिव हो अथवा बलवान् शुभग्रह से युक्त हो तो उसकी दशा में भाग्य की बहुत वृद्धि होती है, धन-धान्य का लाभ होता है ॥१७॥१८॥ और घर में विवाह आदि शुभ कार्य होते हैं। वाहन वा लाभ होता है। राज दर्शन, उद्योग की सिद्धि, मनोरथ सिद्धि, घर में लक्ष्मी की चचाचौध रहती है। मित्र या स्वामी की कृपा में भाग्य वृद्धि राज्य में लाभ तथा महान् सुख होता है। घोडा, मोटर आदि मवागी प्राप्त होती है ॥१९॥२०॥ पुत्र लाभ होता है। और यदि चन्द्रमा उच्च राशि का या स्वक्षेत्री होकर धन स्थान में हो ॥२१॥ तो अनेक धन का लाभ, भाग्य वृद्धि, महान् सुख विद्या लाभ, अवम्मात् विशेष धन की प्राप्ति तथा राज सम्मान होता है ॥२२॥

नीचे वा क्षीणचद्रे वा धनहानिर्भविष्यति ॥ दुःखिष्ये बलमयुते स्वचित्तोत्थ स्वचिद्वनम् ॥२३॥ दुर्बले पापसयुक्ते देहजाड्य मनोरजम् ॥ मृत्यपीडा वित्तहानिर्मानुषवर्गजननाद्य

॥२४॥ पञ्चदशमव्यये चन्द्रे दुर्बले पापसमुत्ते ॥ राजद्वेषो मनोदुःखं धनघान्यादिनाशनम् ॥२५॥  
मातृबलेश मनस्ताप देहजाड्य मनोरुजम् ॥ दुःस्ये चद्रबलैर्युक्ते क्वचित्त्नाम क्वचित्सुखम् ॥  
देहजाड्य क्वचिच्चैव शात्यर्थेन विनाशनम् ॥२६॥

चन्द्रमा नीच राशि का या क्षीण हो तो धन हानि होती है। तीसरे भाव में यदि बलवान् होकर स्थित हो तो कभी सुख कभी धन होता है ॥२३॥ चन्द्रमा बल रहित, पापग्रह से युक्त हो तो बरीर में बात व्याधि, मन में चिन्ता, नौकर द्वारा धन हानि मातृ वर्ग की मृत्यु होती है ॥२४॥ चन्द्रमा ६।८।१२ वे स्थान में बलरहित तथा पापग्रह युक्त हो तो राजद्वेष, मन में दुःख, धनघान्य का नाश ॥२५॥ माता को बलेश, देह में जडता आदि फल होता है। बलवान् चन्द्रमा यदि तीसरे भाव में हो तो कभी २ लाभ तथा तथा देह में जडता होती है। शान्ति करने से सुख होता है ॥२६॥

### अथ कुजदशावर्षाणि ७ तत्फलम्

भौमोत्कृष्टदशा करोति बहुधाप्राप्तिं धनस्यागमान्प्रजास्वच्छमनं पराक्रमदधत्यारिषयान्दान्-  
नुजान् ॥ पापो भौमरुजार्तिदं च कल्हं चौराग्निबधवणमक्षिणीणमहोशपीडनरजं क्षोभसति  
दास्यति ॥२७॥ परमोच्चगते भौमे स्वोच्चे मूलत्रिकोणे ॥ स्वर्षे केन्द्रत्रिकोणे वा लाभे वा  
धनप्रेरपि वा ॥२८॥ सपूर्णबलसयुक्ते शुभदृष्टे शुभाशके ॥राज्यलाभ भूमिलाभ धनघान्या-  
दिलाभकृत् ॥२९॥ आधिक्यं राजसन्मानं वाहनावरभूषणम् ॥ विदेशे स्थानलाभं च  
सोवराणां सुखं लभेत् ॥३०॥ केन्द्रं गते सवा भौमे दुश्चिक्ये बलसमुत्ते ॥ पराक्रमाद्विजिताभो  
युद्धे शत्रुजयो भवेत् ॥३१॥ कलत्रपुत्रविभवं राजसन्मानमेव च ॥ दशादौ सुखमाप्नोति दशाते  
कष्टमादिशेत् ॥३२॥ नीचादिदुःस्थगे भौमे वलावलविवर्जिते ॥ पापयुक्ते पापदृष्टे सा दशा  
नेष्टदायिका ॥३३॥

### भौम दशाफल वर्ष ७

मंगल की श्रेष्ठ दशा हो तो भूमि की प्राप्ति, धन का आगमन, सुवृद्धि चिन्तारहित मन, पराक्रम का उदय, भाइयों से लाभ आदि फल होते हैं। यदि मंगल पापी हो तो रोग और कष्ट देनेवाला तथा बलह, चोरी, अग्नि, कैद, घाव, दृष्टि मन्दता, राजा में पीडा क्रोध आदि होते हैं ॥२७॥ मंगल उच्च का या परमोच्च वा अथवा मूल त्रिकोण में, स्वगृही केन्द्र त्रिकोण, लाभ या धन स्थान में हो ॥२८॥ सम्पूर्ण बलयुक्त हो, शुभग्रह से दृष्ट हो, शुभ नवाश में हो तो बहुत भूमि लाभ, राजा से लाभ, धन लाभ, ऐश्वर्य वृद्धि ॥२९॥ अधिक राज सम्मान, मवागी, बस्त्र, भूषण, तालाब विदेश में भूमि, मकान का लाभ, भाइयों का सुख होता है ॥३०॥ मंगल बलवान् होकर केन्द्र या तीसरे भाव में हो तो अपने उद्योग से धन का लाभ, युद्ध में शत्रु में जय होती है ॥३१॥ स्त्रीपुत्र म मुख्य तथा राज में सम्मान होता है। दशा के आदि म मुख परन्तु अन्त में कष्ट होता है। मंगल यदि नीच वा, ६।८।१२ वे हो, बलरहित हो, पापयुक्त या दृष्ट हो तो नेष्ट फल होता है ॥३२॥३३॥

## अथ राहुदशावर्षाणि १८ तत्फलम्

राहृत्कृष्टदशा करोति सकलश्रेयो महद्वाज्यकुट्टमार्थागमपुण्यतीर्थचलनज्ञानप्रभावोच्छ्रयान् ॥  
 राहो पापदशा हि भीतिविषयो सर्वांगरोगार्तिकृच्छराघातविरोधवृक्षपतन नारातिपीडो-  
 दयान् ॥३४॥ राहोस्तु वृषभ केतोर्वृश्चिक तुगसन्नकम् ॥ मूलत्रिकोणकर्क च युग्मचाप तथैव च  
 ॥३५॥ कन्या च स्वगृह प्रोक्त मीन च स्वगृह स्मृतम् ॥ तद्दाये बहुसौख्य च धनधान्यादि-  
 सपदाम् ॥३६॥

### राहु दशाफल वर्ष १८

राहु की श्रेष्ठ दशा महान् कल्याणकारी राज्यवृद्धि धनप्राप्ति धर्म वृद्धि, तीर्थयात्रा  
 ज्ञान और प्रभाव की उन्नति करता है। राहु की पापदशा भय तथा सर्वांग रोग कष्ट वस्त्र से  
 घात, विष से भय स्वजन विरोध वृक्ष स गिरना शत्रु स पीडा आदि नेष्ट फल कारक  
 है ॥३४॥ (विशेष फल) राहु का वृष राशि उच्च तथा कर्क राशि मूल त्रिकोण है। केतु का  
 वृश्चिक राशि उच्च और मिथुन राशि मूल त्रिकोण है। और राहु का कन्या राशि और केतु  
 का मीन राशि स्वगृह है। राहु की श्रेष्ठ दशा म बहुत सुख धन-धान्य का लाभ होता  
 है ॥३५॥३६॥

मित्रप्रभुवशादिष्ट वाहन पुत्रसम्भव ॥ नूतनगृहनिर्माण धर्मचितामहोत्सव ॥३७॥  
 विदेशराजसन्मान वस्त्रालकारभूषणम् ॥ शुभयुक्ते शुभेदृष्टे योगकारकसमुत्ते ॥३८॥ केन्द्रत्रि-  
 कोणलाभे वा वृश्चिक्ये शुभराशिगे ॥ महाराजप्रसादेन सर्वसपत्सुखावहम् ॥३९॥ यवनप्रभुस-  
 न्मान गृहे कल्याणसम्भवम् ॥ रधे वा व्ययगे राही तद्दाये कष्टदो भवेत् ॥४०॥ पापग्रहेण  
 सबधे मारकग्रहसमुत्ते ॥ नीचराशिगते वापि स्थानभ्रश मनोरुजम् ॥४१॥ विनश्येद्द्वारपुत्राणा  
 कुत्सिताना च भोजनम् ॥ दशादौ देहपीडा च धनधान्यपरिच्युति ॥४२॥ दशामध्ये तु सौख्य  
 स्यात्सबदेशे धनलाभकृत् ॥ दशाते कष्टमाप्नोति स्थानभ्रशो मनोव्यया ॥४३॥

राहु की श्रेष्ठ दशा म मित्र वा स्वामी के द्वारा मनारथ मिद्धि वाहन का लाभ पुत्रोत्पत्ति  
 नये मवान का बनाना धार्मिक कार्य करना विवाहादि उत्सव होते है ॥३७॥ विदेश यात्रा  
 राज सम्मान, अलकार भूषणादि की प्राप्ति और यदि शुभ ग्रह युक्त अथवा वृष्ट हो  
 राज्ययोग वारक ग्रह स युक्त हो ॥३८॥ केन्द्र त्रिकोण या लाभ म हो, तीमरे स्थान मे वा  
 शुभग्रह की राशि मे हो तो राजा अथवा बडे आदमी के सम्पर्क स बहुत लाभ हो। यवन जानि  
 स लाभ हो घर म बल्याण हो ॥३९॥ आठये या वारहये स्थान मे हो तो कष्टदायी होता  
 है ॥४०॥ पापग्रह स सम्बन्ध हो या मारक ग्रह स युक्त हो, नीच राशि मे हो तो म्यात हानि  
 सम्पत्ति हानि, मन म धोर चिन्ता स्त्री पुत्र वा नाश, हीन भोजन प्राप्त होता है। तथा दशा  
 की आदि मे दह पीडा धन धान्य का नाश होता है ॥४१॥४२॥ दशा ने मध्य मे सुख अपन दश  
 मे ही धन लाभ होता है। अन्त मे कष्ट स्थान हानि, चिन्ता होनी है ॥४३॥

### अथ गुरुमहादशावर्षाणि १६ तत्फलम्

जीवोत्कृष्टदशा करोति विपुलश्रामधिकारात्मजश्रीसौभाग्यगुणकराश्रितजनाद्यांदोलिकावैभवात् ॥ जैव्या पापदशा महीश्वरभयाद्वाधि च धैर्यच्युतिं धान्यानर्थमहीमुत्तार्तिजनकलोभाश्रितार्तिभयान् ॥४४॥ स्वोच्चे स्वप्नेत्रगे जीवे केद्रे लाभत्रिकोणपणे ॥ मूलत्रिकोणलाभे वा तुंगाशे स्वांशगेऽपि वा ॥४५॥ राज्यलाभं महत्सौख्यं राजसन्मानकीर्तनम् ॥ गजवाजिसमायुक्तं देवब्राह्मणपूजनम् ॥४६॥ दारपुत्रादिसौख्यं च वाहनांबरलाभगम् ॥ यज्ञादिकर्मसिद्धिः स्याद्देवांतरध्वणादिकम् ॥४७॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखाबहा ॥ आंदोलिकादिलाभश्च कल्याणं च महत्सुखम् ॥४८॥ पुत्रदारादिलाभश्च अन्नदानं महत्प्रियम् ॥ नीचास्तपापसंयुक्ते जीवे रिष्णाष्टसंयुक्ते ॥४९॥ स्थानभ्रंशं मनस्तापं पुत्रपीडामहद्भयम् ॥ पश्चादिघनहानिश्च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ॥५०॥ आदौ कष्टफलं चैवं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ मध्यांते सुखमाप्नोति राजसन्मानवैभवम् ॥५१॥

#### गुरु महादशा फल वर्ष १६

बृहस्पति की श्रेष्ठ दशा मे विपुल धन लाभ, अधिकार प्राप्ति, पुत्रप्राप्ति, सौभाग्य वृद्धि, गुणो का उदय, अनेक नौकर, मोटर आदि सवारी बहुत विभव होता है। और पाप दशा मे राजभय, व्याधि, धैर्य, हानि, धन हानि, पृथ्वी और पुत्र की हानि, पिता को कष्ट, चोरी आदि का भय होता है ॥४४॥ (विशेष फल) बृहस्पति उच्च का या स्वगृहि होकर नेन्द्र, लाभ या त्रिकोण मे ही, मूल त्रिकोण मे या उससे लाभ मे हो अथवा परमोच्च हो या अपने नवमाश मे हो तो ॥४५॥ राज्य से लाभ, महान् सुख, सम्मान और कीर्ति, हाथी, घोडे आदि सवारी, देव-ब्राह्मण की पूजा, स्त्री-पुत्र का सुख, यज्ञ आदिक श्रेष्ठ कर्म, वेदान्त ज्ञान का ध्वण होता है ॥४६॥४७॥ महाराज की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। मोटर आदि सवारी का लाभ। घर मे कल्याण और सुख होता है। स्त्री पुत्र का लाभ होता है। अन्न आदिक का दान होता है ॥४८॥ बृहस्पति नीच का, अस्त या पापग्रह युक्त हो, ८।१२ वे स्थान मे हो तो स्थान हानि, चिन्ता, पुत्र-पीडा, महान् भय, धन-हानि, तीर्थ यात्रा आदि होती है ॥४९॥५०॥ गुरुदशा में पहले कुछ कष्ट, मध्य और अन्त मे लाभ, सुख, राज सम्मान और वैभव होता है ॥५१॥

### अथ शनिमहादशावर्षाणि १९ तत्फलम्

मदोत्कृष्टदशा करोति विभवप्रतानयनादिकक्षेत्रश्रामपुरादिनायकत्वदृष्यापारदसोत्सुकान् ॥ मन्दः पापविषप्रयोगधनहृद्देहार्तिव्यथोदयान् राजभोधिबिरुद्धकार्यविवलोद्योगापौढोदयान् ॥५२॥ स्वोच्चे स्वप्नेत्रगे भन्दे मित्रसेत्रेऽप्य वा यदि ॥ मूलत्रिकोणभाष्ये वा तुङ्गामे स्वांशगेऽपि वा ॥५३॥ दुश्चिक्ये लाभगे चैव राजसन्मानवैभवम् ॥ सत्कीर्तिर्धनलाभश्च विद्यावादविनोदकृत् ॥५४॥

#### शनिदशाफल वर्ष १९

शनि की श्रेष्ठ दशा मे सम्पत्ति, ज्ञान यज्ञादि, श्राम नगर आदि का नायक होना, व्यापार

वृद्धि आदि तथा उत्सव होते हैं। शनि की पापदशा में विप प्रयोग, धन की चोरी, देह में कष्ट, रोग, राजकोप, कार्य की विरुद्धता, उद्योग की हानि और शरीर पीडा होती है॥५२॥ (विशेष फल) शनि यदि उच्च वा, स्वगृही, मित्र क्षेत्री, मूल त्रिकोणी अथवा भाग्य स्थान में हो, परमोच्च या अपने नवमाश में हो, ३।११ वे स्थान में हो तो राज से सम्मान और विभूति की प्राप्ति हो। अच्छी कीर्ति या धन का लाभ हो। महाराज की कृपा से हाथी, घोडा भूषण का लाभ हो॥५३॥५४॥

महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ॥ राजयोग प्रकुर्वीत सेनाधीनान्महत्सुखम् ॥५५॥  
लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभ करोति च ॥ गृहे कल्याणसपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत्॥५६॥  
पष्ठाष्टमव्यये मदे नीचे वास्तगतेऽपि वा ॥ विषयस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रश महद्भयम्  
॥५७॥ पितृमातृविभोग च दारपुत्रादिपीडनम् ॥ राजवैयम्यकार्याणि ह्यनिष्ट बधन तथा  
॥५८॥ शुभयुक्तेषिते मदे योगकारकसपुते ॥ फेड्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शतौ ॥५९॥  
राज्यलाभ महोत्साह गजाश्वारसकुलम् ॥६०॥

यदि शनि राजयोग करता हो तो सेनापति से सुख हो। घर में खूब लक्ष्मी हो तथा कल्याण, सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र लाभ आदिक होते हैं॥५५॥५६॥ शनि ६।८।१२ वे हो, नीच अथवा अस्त हो तो विप और शस्त्र से पीडा होती है। स्थान हानि और महान् भय होता है॥५७॥ माता-पिता का विभोग, स्त्री-पुत्र को पीडा होती है। राजकोप से अनिष्ट और बन्धन होता है॥५८॥ शनि शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होकर तथा राजयोग कारक ग्रह से समुक्त होकर केन्द्र या त्रिकोण में हो, मीन अथवा धनराशि में हो तो महान् उत्साहयुक्त हो और राज्य से बहुत बड़ा लाभ हो॥६०॥

### अथ बुधमहादशावर्षाणि १७ तत्फलम्

सौम्योत्कृष्टदशा करोति यत्नानतादिधान्योच्छ्रयाञ्छ्रेय सौख्यगृहस्ववपुविजयप्राप्तीष्टव-  
स्वागमान् ॥ बोध्या पापदशाविदेशगमन क्षोभ स्वबधुक्षय प्रज्ञाहीनमतिर्धनार्तिकलह-  
क्षेपार्थनाशपद ॥६१॥ स्वोच्चे स्वदोत्रसयुक्ते केदलाभत्रिकोणगे ॥ मित्रदोत्रसमायुक्ते सौम्ये  
दाये महत्सुखम् ॥६२॥

#### बुधमहादशाफल वर्ष-१७

बुध की श्रेष्ठ दशा में सुन्दर बन्ध, अनन्त धान्यराशि प्राप्ति, बल्याण सुय स्वजन परिवार सुख, विजय प्राप्ति, इष्ट वस्तु की प्राप्ति आदि फल होता है। तथा नेष्ट दशा में विदेश यात्रा, दुःख, बन्धुक्षय, बुद्धिहीनता धनक्षय कष्ट आपत्ति, कनह भूमि तथा धन का नाश होता है॥६१॥ बुध उच्चराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र या त्रिकोण में अथवा साभस्थान में हो, मित्रक्षेत्र में स्थित या युक्त हो तो दशा में महान् सुखा॥६२॥

धनधान्यादिलाभ च सत्कीर्तिधनसपदाम् ॥ ज्ञानाधिक्य नृपप्रीति सत्कर्मगुणवर्द्धनम् ॥६३॥  
 पुत्रदारारि सौख्य च देहारोग्य महत्सुखम् ॥ क्षीरेण भोजन सौख्य व्यापारेण धनागमम्  
 ॥६४॥ शुभदृष्टियुते सौम्ये भाग्ये कर्माधिपे यदा ॥ आधिपत्ये बलवती सपूर्णफलवायिका  
 ॥६५॥ पापग्रहयुते वृष्टे राजद्वेष मनोरुजम् ॥ बधुजन विरोध च विदेशगमन तथा ॥६६॥  
 परप्रेष्य च कलह सूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये लाभभोगार्थनाशनम् ॥६७॥  
 वातपीडा धन चैव पाङ्कुरोग तथैव च ॥ नृपचौराग्रिमीति च कृपिगोभूमिनाशनम् ॥६८॥  
 दशादौ धनधान्य च विद्यालाभ महत्सुखम् ॥ पुत्रकल्याणसंपत्ति सन्मार्गे धनलाभकृत् ॥६९॥  
 मध्ये नरैर्द्रसन्मानमते दुःख भविष्यति ॥७०॥

धनधान्यलाभ, सत्कीर्ति, धन, सम्पत्ति की प्राप्ति, ज्ञानवृद्धि, राजप्रीति, सत् कर्म तथा गुण की वृद्धि होती है ॥६३॥ स्त्री पुत्र का सुख, देह की आरोग्यता, क्षीरभोजन, सौख्य तथा व्यापार से लाभ होता है ॥६४॥ बुध शुभ ग्रह की दृष्टि से युक्त होकर भाग्यस्थान में या दशमेश से युक्त हो। अथवा नवम-दशम का स्वामी हो तो फल पूर्ण होता है ॥६५॥ यदि बुध पापयुक्त अथवा दृष्ट हो तो राजद्वेष, मन में चिन्ता बन्धुओं से विरोध विदेश यात्रा होती है ॥६६॥ दूसरे की नौकरी, कलह, सूत्रकृच्छ्र की बीमारी होती है। ६८।१२ भाव में हो तो लाभ, सुख तथा धन का नाश करता है ॥६७॥ वातरोग, पाण्डुरोग, राजा चोर अग्नि से भय, सेती गौ भूमि का नाश होता है ॥६८॥ दशा के आदि में-धन विद्या का लाभ, महान् सुख, पुत्र-प्राप्ति तथा घर में कल्याण, सम्पत्ति, सन्मार्ग प्रवृत्ति, धन का लाभ होता है ॥६९॥ दशामध्य में राजसन्मान प्राप्त होता है और अन्त में दुःख होता है ॥७०॥

### अथ केतुभुक्तिमहादशावर्षाणि ७ तत्फलम्

केतुकृष्टदशा करोति विजयकूरक्रियार्थागम म्लेच्छरामपतिलब्धभाग्यकवनप्रारमशश्रद्धयान्  
 ॥ केतौ पापदशातिकष्टविकलानर्थक्रियायोगहृच्छूलास्थिज्वरकपनद्विजजनद्वेषातिमूर्खक्रियान्  
 ॥७१॥ केदलाभत्रिकोणे वा शुभराशी शुभेक्षिते ॥ स्वोच्चे वा शुभवर्गे वा राजप्रीति  
 मनोरुजम् ॥७२॥ देशप्रामाधिपत्य च बाहन पुत्रसभयम् ॥ देशांतरप्रयाण च अन्यदेशे  
 मुदावहम् ॥ ७३॥ पुत्रदारसुख चैव चतुष्पाज्जीवलाप्यकृत् ॥ दुश्चिक्ये षष्ठलाभे वा केतुदपि-  
 सुख भवेत् ॥७४॥ राज्य करोति मित्रास गजवाजिसमन्वितम् ॥ दशादौ राजयोगाभ्र  
 दशामध्ये महद्भयम् ॥७५॥ अते दूरान्त चैव देहविश्रमण तथा ॥ धने रद्रे व्यपे केतौ  
 पापदृष्टियुतेक्षिते ॥७६॥ निगड बधुनाश च स्थानभ्रस मनोरुजम् ॥ शूद्रशून्यादिलाभ च  
 नानारोगाकुल भवेत् ॥७७॥

#### केतुदशा फल वर्षो

केतु की श्रेष्ठदशा में विजय, कूर कर्म से धनप्राप्ति यवन या म्लेच्छराज से भाग्यवृद्धि और शत्रुनाश होता है। केतु की पापदशा में अतिकष्ट विकल मनोरथ धनप्राप्ति के योग की हानि, शूलरोग, अस्थिज्वर कपनरोग, ब्राह्मणद्वेष, तथा अति मूर्खता होती है ॥७१॥ केतु यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में शुभराशि में शुभग्रह दृष्ट हो और स्वोच्च में वा शुभवर्ग में हो तो राज में

वृद्धि आदि तथा उत्सव होते हैं। शनि की पापदशा में विप प्रयोग, धन की चोरी, देह में कष्ट, रोग, राजकोप, कर्म की विरुद्धता, उद्योग की हानि और शरीर पीडा होती है। ५२॥ (विशेष फल) शनि यदि उच्च का, स्वगृही, मित्र क्षेत्री, मूल त्रिकोणी अथवा भाग्य स्थान में हो, परमोच्च या अपने नवमाश में हो, ३।११ वे स्थान में हो तो राज से सम्मान और विभूति की प्राप्ति हो। अच्छी कीर्ति या धन का लाभ हो। महाराज की कृपा से हाथी, घोडा भूषण का लाभ हो। ५३। ५४॥

महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ॥ राजयोग प्रकुर्वीत सेनाधीशान्महत्सुखम् ॥५५॥  
लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभ करोति च ॥ गृहे कल्याणसपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत् ॥५६॥  
षष्ठाष्टमव्यये मदे नीचे वास्तगतोऽपि वा ॥ विपशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रश महद्भयम् ॥५७॥  
पितृमातृवियोग च दारपुत्रादिपीडनम् ॥ राजवैपम्यकार्याणि ह्यनिष्ट बधन तथा ॥५८॥  
शुभयुक्तेषिते मदे योगकारकसयुते ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शनौ ॥५९॥  
राज्यलाभ महोत्साह गजाश्वारसकुलम् ॥६०॥

यदि शनि राजयोग करता हो तो सेनापति से मुक्त हो। घर में खूब लक्ष्मी हो तथा कल्याण सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र लाभ आदिक होते हैं। ५५। ५६॥ शनि ६।८। १२ वे हो, नीच अथवा अस्त हो तो विप और शस्त्र से पीडा होती है। स्थान हानि और महान् भय होता है। ५७॥ माता-पिता का वियोग, स्त्री-पुत्र को पीडा होती है। राजकोप से अनिष्ट और बन्धन होता है। ५८॥ शनि शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होकर तथा राजयोग कारक ग्रह से समुक्त होकर केन्द्र या त्रिकोण में हो मीन अथवा धनराशि में हो तो महान् उत्साहयुक्त हो और राज्य से बहुत बड़ा लाभ हो। ६०॥

### अथ बुधमहादशावर्षाणि १७ तत्फलम्

सौम्योत्कृष्टदशा करोति वसन्तानताविधान्योच्छ्रयाञ्छ्रेय सौख्यगृहस्ववभुविजयप्राप्तीष्टव-  
स्त्वागमान् ॥ बोध्या पापदशाविदेशगमन क्षीभ स्ववधुक्षय प्रज्ञाहीनमतिर्घनार्तिकतह-  
क्षेत्रार्थनाशपद ॥६१॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रसमुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणने ॥ मित्रक्षेत्रसमायुक्ते सौम्ये  
दाये महत्सुखम् ॥६२॥

#### बुधमहादशाफल वर्ष-१७

बुध की श्रेष्ठ दशा में सुन्दर वस्त्र, अनन्त धान्यराशि प्राप्ति, बल्याण सुख, स्वजन परिवार सुख, विजय प्राप्ति, इष्ट वस्तु की प्राप्ति आदि फल होता है। तथा नेष्ट दशा में विदेश यात्रा, दुःख, बन्धुक्षय, बुद्धिहीनता धनदाय, बृष्ट आपत्ति, बलह भूमि तथा धन का नाश होता है। ६१॥ बुध उच्चराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र या त्रिकोण में अथवा लाभस्थान में हो, मित्रक्षेत्र में स्थित या युक्त हो तो दशा में महान् सुखा। ६२॥



तो आत्मीय स्वजनो से द्वेष स्त्री आदि को पीडा हो, व्यापार से होनेवाले फल की हानि गौ-भैस आदि का नाश ॥८४॥ स्त्री-पुत्र को पीडा, आत्मीय-बन्धु से वियोग होता है १।१० का स्वामी होकर लघ्न तथा तृतीय भाव में हो ॥८५॥ तो शुक्र की दशा में महान् सुख एव देश या नगर का आधिपत्य, देवालय (देवमन्दिर) तालाब आदि धर्म कार्य में रुचि ॥८६॥ अन्नदान हो तथा महान् सुख हो, नित्य मिष्टान्न भोजन हो। उल्ताह की वृद्धि, कीर्ति, सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र धन सम्पत्ति हो ॥८७॥ अपने अन्तर में तो उपर्युक्त फल होता है। अन्यान्य अन्तर अपना २ विभेय फल देते हैं। द्वितीय तथा सप्तम भाव का स्वामी हो तो देहपीडा होती है ॥८८॥ उस दोष के नाश के लिए रुद्रपाठ या त्र्यम्बक मन्त्र का जप करो। तथा श्वेत वर्ष की गौ दूधवाली का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है ॥८९॥

### अथ द्वादशभावाधीशदशाफलमाह

लग्नेशस्य दशा बल बहुधन वित्तेशितु पचता कष्ट बेति सहोदरालयपते पाप फल प्रायश ॥  
 तुर्मस्वामिन आत्म्य किन्न मुताधीशस्य विद्यामुख रोगागारपतेररातिजभय जायापते शोक-  
 ताम् ॥९०॥ मृत्यु मृत्युपते करोति नियत धर्मेशितु सत्क्रिया चित्त राजपतेर्नृपाश्रयमथो लाभ  
 हि लाभेशितु ॥ रोग इव्यविनाशन च बहुधा कष्ट व्ययेशस्य वै पूर्वैरगमृतामुदीरितमिद  
 तन्वादिभावेशजम् ॥९१॥ भावाधिपो बलपुतो निजगेहपामी तुङ्ग त्रिकोणशुभवर्गगतोपि पूर्णम्  
 ॥ जतोफल खलु करोति यदारिनीचस्थानस्थितोऽशुभफल विबलो विशेषात् ॥९२॥ आहु  
 शुभा-शुभफल नृणा कालविदो जना ॥ एतद्भूत विनिर्गीतमायुषा निश्रयो नृणाम् ॥९३॥  
 पचमेशदशाया तु धर्मपस्य दशा तु या ॥ अतीव शुभदा प्रोक्ताकालविद्भूमिनीश्वरै ॥९४॥  
 समप्रनायस्य तपोधिपस्य दशा शुभा राज्यमुत्प्रदा स्यात् ॥ सत्कीर्तिनायस्य सुखेश्वरस्य दशा  
 तथा प्राहुर्हदार चित्ता ॥९५॥ पचमेशेन युक्तस्य ग्रहस्य शुभदा दशा ॥ नाये धर्मपयुक्तस्य  
 दशा परमशोभता ॥९६॥

### द्वादशभावाधीश दशाफल

लग्नेश की दशा आरीरिक बल देती है। धनेश की दशा शुभ हो तो धनदाता, अणुभ हो तो कष्ट और मृत्यु। तृतीयेश की दशा प्रायः नेष्ट फल दायक होती है। सुखेश की दशा में भूमि और मकान का विचार। पचमेश की दशा में विद्या सम्बन्धी और सतान सम्बन्धी विचार किया जाता है। षष्ठेश की दशा में शत्रु का भय तथा सप्तमेश की दशा में रोग और कष्ट का विचार होता है। अष्टमेशकी दशामें मृत्यु का विचार। नवमेशमें सत्कार्य का विचार। दशमेश से राज्य से लाभ का विचार। लाभेश से लाभ तथा व्ययेश की दशा में रोग धन हानि और कष्ट का विचार होता है। मनुष्यों के नियम इस प्रकार वृण्वन्ती में १२ भावों के विचार करने योग्य पदार्थों का निर्णय किया है ॥९१॥ किसी भी भाव का स्वामी बलवान् हो स्वगृही हो उच्च तथा त्रिकोण में अथवा शुभ वर्ग में हो तो सम्पूर्ण शुभ फल करता है। और यदि शत्रु राशि में, नीच राशि में तथा निर्बल हो तो अशुभ फलकारक है ॥९२॥ और प्राचीन आचार्यों ने कहा है कि शुभग्रह प्रायः शुभ फल देते हैं। और आयु का भी निर्णय किया है ॥९३॥ पचमेश और नवमेश की दशा बहुत श्रेष्ठ होती है, एसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है ॥९४॥ पचमेश

प्रीति, मन भे चिता ॥७२॥ देश या ग्राम का आधिपत्य, सवारी, पुत्रोत्पत्ति, देशान्तर यात्रा, तथा अन्य देश में सुख ॥७३॥ स्त्री पुत्र का सुख, गौ आदि का लाभ होता है। ३।६।११ भाव में हो तो केतुदशा में सुख होता है ॥७४॥ राज्य समान वैभव, मित्र प्राप्ति, सवारी आदि प्राप्त होती है। दशा के आदि में राजयोग और मध्य में महान् भय, अन्त में दूर की यात्रा तथा देहकष्ट या मृत्यु होती है ॥७५॥ केतु यदि २।८।१२ में हो और पापयुक्त तथा दृष्ट हो तो कैद, बन्धुनाश, स्थानहानि, चिन्ता, रोग और नीच जाति से लाभ होता है ॥७६॥७७॥

### अथ शुक्रमहादशावर्षाणि २० तत्फलम्

शौकी श्रेष्ठदशा करोति सुखसौभाग्योच्छ्रयादोलिकाऽऽर्धैश्वर्यैर्पुतधर्मबुद्धिकनकारामाश्वगीतो-  
त्सवान् ॥शौकी पापदशा फलत्रभयकृत्रीचार्यहानिप्रदा तिर्यग्जतुसामुत्यदोपशिवुलस्त्रीवर्गरोगो  
द्भवान् ॥७८॥ परमोच्चगते शुके स्वोच्चे स्थलेत्रकेदने ॥ नृपाभिपेकसप्राप्तिविहनाबरभूषणम्  
॥७९॥ गजाश्वशुलाभ च नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ असडमडलाधीशराजसन्मानवैभवम्  
॥८०॥ मृदगवाद्यघोष च गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥ त्रिकोणस्थे मीनशुके राज्यार्थगृहसपद ॥८१॥  
विवाहोत्सवकार्याणि पुत्रकल्याणवैभवम् ॥ सेनाधिपत्य कुरुते इष्टवधुसमागमम् ॥८२॥  
नष्टराज्याद्धनप्राप्तिर्गृहे गोधनसग्रहम् ॥ पष्ठाष्टमव्यये शुके नीचे वा व्ययराशिने ॥८३॥

### शुक्रमहादशा फल वर्ण २०

शुक्र की श्रेष्ठ दशा में सुख सौभाग्य की उन्नति मोटर आदि सवारी तथा अष्टविध ऐश्वर्य  
धर्मबुद्धि सुन्दर वागीचा घोडा आदियुक्त सवारी गीतोत्सव आदि श्रेष्ठ फल होता है। शुक्र  
की पापदशा में स्त्री-पुत्र से भय नीचसग स धनहानि पशु आदि से भय तथा स्त्रीवर्ग को  
रोग आदि नेष्ट फल होता है ॥७८॥ शुक्र उच्च या परमोच्च में या स्वक्षेत्र में होकर केन्द्र में  
हो तो राजकुलोत्पन्न को राज्यप्राप्ति होती है। वाहन, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते हैं ॥७९॥  
हाथी-घोडे आदि पशुओं का लाभ होता है। नित्य सुन्दर भोजन और अखण्ड मण्डल (जिना)  
का अधीनत्व तथा राजा से सन्मान और वैभव प्राप्त होता है ॥८०॥ मृदग आदि वाद्यों का  
शब्द (गाना बजाना) होता रहता है। घर में लक्ष्मी की वृषा रहती है। यदि शुक्र मीनराशि  
का त्रिकोण में हो तो राजा के समान धन-व्ययति होती है ॥८१॥ विवाह आदि उत्सव के  
कार्य, पुत्रोत्पत्ति तथा सेनापतित्व, इष्ट-मित्र सम्मिलन ॥८२॥ नष्ट हुआ राज्य भी प्राप्त  
होता है। घर में गोधन होता है। यदि शुक्र ६।८।१२ स्थान में हो अथवा नीच का वा  
व्ययेशराशि में हो ॥८३॥

आत्मवधुजनद्वेष दारवर्गादिपीडनम् ॥ व्यवसायात्फल नष्ट गोमहिष्यादिहानिकृत् ॥८४॥  
दारपुत्रादिपीडा वा आत्मबधुवियोगकृत् ॥ भाग्यकर्माधिपत्येन सश्रवाहनराशिने ॥८५॥  
तद्दशाया महत्सीस्य देशग्रामाधिपत्यताम् ॥ देवालयात्तडागादिपुण्यकर्मसु सग्रहम् ॥८६॥  
अन्नदाने महत्सीस्य नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ उत्साह कीर्तिसपत्नी स्त्रीपुत्रधनसपद ॥८७॥  
स्वभुक्तौ फलमेव स्याद्दत्तान्यन्यानि भुक्तिषु ॥ द्वितीयचूनाये तु देहपीडा भविष्यति ॥८८॥  
तद्दोषपरिहारार्थं रुद्र वा श्यबक जपेत् ॥ श्रेता या महिषी दद्यादारोग्य च  
भविष्यति ॥८९॥

तो आत्मीय स्वजनो से द्वेष, स्त्री आदि को पीडा हो, व्यापार से होनेवाले फल की हानि सौ-भैस आदि का नाश॥८४॥ स्त्री-पुत्र को पीडा, आत्मीय-बन्धु से वियोग होता है। ९।१० का स्वामी होकर लक्ष तथा तृतीय भाव में हो॥८५॥ तो शुक की दशा में महान् सुख एव देश या नगर का आधिपत्य, देवालय (देवमन्दिर) तालाब आदि धर्म कार्य में रुचि॥८६॥ अन्नदान हो तथा महान् सुख हो, नित्य मिष्टान्न भोजन हो। उत्साह की वृद्धि, कीर्ति, सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र धन सम्पत्ति हो॥८७॥ अपने अन्तर में तो उपर्युक्त फल होता है। अन्यान्य अन्तर अपना २ विशेष फल देते है। द्वितीय तथा सप्तम भाव का स्वामी हो तो देहपीडा होती है॥८८॥ उस दोष के नाश के लिए रुद्रपाठ या त्र्यम्बक मन्त्र का जप करे। तथा श्वेत वर्ण की गौ दूधवाली का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है॥८९॥

### अथ द्वादशभावाधीशदशाफलमाह

लग्नेशस्य दशा बल बहुधन वित्तेशितु पचता कष्ट वेति सहोदरालयपते पाप फल प्रायश ॥  
तुर्यस्वामिन आलय फिल सुताधीशस्य विद्यासुख रोगागारपतेररातिजभय जायापते शोक-  
ताम् ॥९०॥ मृत्यु मृत्युपते करोति नियत धर्मेशितु सत्क्रिया चित्त राजपतेनृपाश्रमयो लाभ  
हि लाभेशितु ॥ रोग द्रव्यविनाशन च बहुधा कष्ट व्ययेशस्य वै पूर्वैरामृतामुदीरितमिद  
तन्वादिभावेशजम् ॥९१॥ भावाधिपो बलपुतो निजगैहगामी तुङ्गत्रिकोणशुभवर्गगतोपि पूर्णम्  
॥ जतो फल खलु करोति यदारिनीचस्थानस्थितोऽशुभफल विबलो विशेषात् ॥९२॥ आहु  
शुभा-शुभफल नृणा कालविदो जना ॥ एतदृत विनिर्णयमायुषा निश्चयो नृणाम् ॥९३॥  
पचमेशदशाया तु धर्मपस्य दशा तु या ॥ अतोव शुभदा प्रोक्ताकालविद्भिर्मुनीश्वरैः ॥९४॥  
समन्ननाथस्य तपोधिपस्य दशा शुभा राज्यमुत्प्रदा स्यात् ॥ सत्कीर्तिनाथस्य सुलेश्वरस्य दशा  
तया प्राहुरदार चित्ता ॥९५॥ पचमेशेन पुक्तस्य ग्रहस्य शुभदा दशा ॥ नाथे धर्मपयुक्तस्य  
दशा परमशोभना ॥९६॥

### द्वादशभावाधीश दशाफल

लग्नेश की दशा शारीरिक बल देती है। धनेश की दशा शुभ हो तो धनदाता, अशुभ हो तो कष्ट और मृत्यु। तृतीयेश की दशा प्रायः नेष्ट फल दायक होती है। सुलेश की दशा में भूमि और फलान् कर्ष विचार। पचमेश की दशा में विद्या सम्बन्धी और सत्तान् सम्बन्धी विचार किया जाता है। षष्ठेश की दशा में शत्रु वा भय तथा सप्तमेश की दशा में रोग और कष्ट का विचार होता है। अष्टमेशकी दशामें मृत्यु का विचार। नवमेशमें सत्कार्य का विचार। दशमेश से राज्य से लाभ का विचार। नाभेश से लाभ तथा व्ययेश की दशा में रोग, धन हानि और कष्ट का विचार होता है। मनुष्यो के लिये इस प्रकार कुण्डली में १२ भावों के विचार करने योग्य पदार्थों का निर्णय किया है॥९१॥ किसी भी भाव का स्वामी बलवान् हो, स्वगृही हो उच्च तथा त्रिकोण में अथवा शुभ वर्ग में हो तो सम्पूर्ण शुभ फल करता है। और यदि शत्रु राशि में, नीच राशि में तथा निर्बल हो तो अशुभ फलकारक है॥९२॥ और प्राचीन आचार्यों ने कहा है कि शुभग्रह प्रायः शुभ फल देते है। और आयु का भी निर्णय किया है॥९३॥ पचमेश और नवमेश की दशा बहुत श्रेष्ठ होती है, ऐसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है॥९४॥ पचमेश

और दशमेश की दशा सन्तान और ऐश्वर्य देनेवाली होती है। सुखेश तथा नवमेश की दशा सुख तथा कीर्तिदायक होती है॥९५॥ कोई भी दशा पचमेश से युक्त हो तो शुभदायक होती है। नवमेश से युक्त हो तो अति सुखदायक होती है॥९६॥

पापदृष्टस्य खेटस्य दशा राजप्रदायिनी ॥ शुभयुक्तस्य खेटस्य दशा द्रव्यप्रदायिनी ॥ सपचमेशलग्ने वा दशा राज्यप्रदायिनी॥९७॥सपचमेशस्य तपोधिपस्य दशा भवेद्राज्यमुद्धार्थलाभदा ॥ तथैव मानाधिपसपुतस्य सुतेश्वरस्यापि दशा शुभा स्यात् ॥९८॥ पचमेशेन युक्तस्य मानेद्रस्य दशा शुभा ॥ सुखेशसहितस्यापि धर्मेशस्य दशा शुभा ॥ पञ्चमस्थानास्यपि मानेशस्य दशा शुभा ॥९९॥ शुभाशुभस्थानगमा न यस्य तथैव मानार्थमुद्धान्विता स्यात् ॥ तदा नृणा सौख्यकरी भवेद्वि सुखेशयुक्तस्य च मानवस्य ॥१००॥

पचमेश से दृष्ट या युक्त हो तो ऐश्वर्य देनेवाली तथा द्रव्यदाता होती है। पचमेश लग्न में हो तो राज्य देनेवाली होती है॥९७॥ पचमेश और दशमेश की दशा राज्य, सुख और धन लाभ देती है। पचमेश, दशमेश से युक्त हो तो बहुत श्रेष्ठ होती है॥९८॥ पचमेश से युक्त दशमेश की दशा शुभ होती है। सुखेश से युक्त नवमेश की दशा शुभ होती है। दशमेश पचमभाव में हो तो भी उसकी दशा शुभ होती है॥९९॥ ऊपर कही हुई दशाये अशुभ स्थान में न हो तो मान, धन, सुख देनेवाली होती है। तब ये दशाये सुख भाव के स्वामी से युक्त हो तो विशेष सुखकारी होती है॥१००॥

षष्ठस्य सप्तमस्यैको नायको मानराशिस ॥ दशा तस्य शुभा ज्ञेया तथा तेन युतस्य च ॥११॥ एको द्विसप्तमस्थाननायको यदि सौख्यग ॥ तेन युक्ता दशा ज्ञेया शुभा प्राहूर्ध्वनीषिण ॥२॥ षष्ठाष्टमव्ययाधीशा पञ्चमाधिसयुता ॥ तेषा दशा च शुभदा प्रोच्यते कालवित्तमै ॥३॥ सुखेशो मानभावस्यो मानेशमुखराशिस ॥ तयोर्दशा शुभा प्राहुर्ज्योति शास्त्रविदो जना ॥४॥ सुतेगमानेशसुखेशधर्मपा एकत्र युक्ता यदि यत्र कुत्र ॥ तेषा दशा राज्यफलप्रदा तैर्युक्तग्रहणात्मपि द्वे बदेद्वा ॥५॥ ब्राह्मनस्थानसयुक्तमत्रनाथदशा शुभा ॥ मुखराशिस्यकर्मश-दशा राज्यप्रदायिनी ॥६॥

छठे, सातवें स्थान का यदि एक ही स्वामी होकर दशम भाव में हो तो उसकी दशा शुभ होती है। यदि सुखेश से युक्त हो तो अधिप शुभ होती है॥१०१॥ (यह योग केवल सिंह लग्न में ६-७ का स्वामी शनि होने से प्राप्त होता है।) एक ही ग्रह दूसरे सातवें घर का मालिक होकर चतुर्थ भाव में हो और चतुर्थेश से युक्त हो तो उसकी दशा शुभ होती है॥१०२॥ (यह योग मेष लग्न में शुक्र तथा तुला लग्न में मंगल से होता है।) ६।८।१० के स्वामी पचमेश से युक्त हो तो उनकी दशा शुभ होती है॥१०३॥ सुखेश दशम में दशमेश सुखभाव में हो तो दोनों दशाये शुभ होती हैं, ऐसा ज्योतिषशास्त्र के जाननेवाले कहते हैं॥१०४॥ ४।५।९।१० वा के स्वामी यदि किसी भी भाव में मिलकर म्रियत हो तो उनकी दशा राज्य देनेवाली होती है। और इनमें मन्वन्धित दशा भी शुभ होती है॥१०५॥ तृतीयेश पचमेश के साथ युक्त हो तो शुभ तथा दशमेश चतुर्थ भाव में हो तो ऐश्वर्य दानी होती है॥१०६॥

तान्मां युक्तस्य खेटस्य दृष्टियुक्तस्य चेतयोः ॥ राज्यप्रदां दशां प्राहुर्विद्वांसो दैवर्षितकाः ॥७॥  
 कर्मस्थानस्य बुद्धीशदशा संपत्करो भवेत् ॥ मानस्थिततपोधीशदशा राज्यप्रदायिनी ॥८॥  
 यस्मिन्भावे शुभस्वामिसंबंधस्तुङ्गखेचरः ॥ स्यात्तद्भावदशायां तु अत्यैश्वर्यमसंशितम् ॥९॥  
 यद्भावेशः स्वार्थराशिभ्रतिष्ठति पश्यति ॥ स्यात्तद्भावदशाकाले धनलाभो महत्तरः  
 ॥११०॥ यस्माद्द्वयगतौ यस्तु तद्दशायां धनसयम् ॥ यस्मात्त्रिकोणगाः पापास्तत्रात्मशम-  
 नाशनम् ॥११॥ पुत्रहानिः पितुः पीडा मनस्तापो महान् भवेत् ॥ यस्मात्त्रिकोणगा  
 रिःकरंघ्रेशाकैन्दुसूर्पजाः ॥१२॥

पचमेश दशमेश से युक्त तथा दृष्ट ग्रह की दशा ज्योतिषियों ने शुभ कही है। १०७॥ इसी प्रकार पचमेश दशमभाव में ही तो उसकी दशा सम्पत्ति देनेवाली और नवमेश दशम भाव में ही तो राज्य दायिनी होती है। १०८॥ जिस भाव में शुभग्रह युक्त उच्च राशि का ग्रह हो उस भाव की राशि की दशा अखण्डित महान् ऐश्वर्य देनेवाली होती है। १०९॥ जिस भाव का स्वामी अपने राशि में स्थित है उस भाव की दशा के समय महान् धन लाभ होता है। ११०॥ जिस भाव से उस भाव का स्वामी १२ वे भाव में हो उस भाव की दशा में धन हानि होती है। और जिस भाव से पापग्रह त्रिकोण भाव में हो तो चित्त चिन्तित और दुःखित रहता है। १११॥ जिस भाव में सूर्य, चन्द्रमा, शनि तथा व्ययेश और अष्टमेश त्रिकोण भाव में हो तो उस भाव राशिकी दशामें पुत्र हानि, पिताको पीडा तथा महान् दुःख होता है। ११२॥

पुत्रपीडा द्रव्यहानिस्तत्र केत्वहितगमे ॥ विदेशभ्रमण क्लेशो भयं चैव पदे पदे ॥१३॥  
 यस्मात्खेटाष्टमे क्रूरनीचखेटादयः स्थिताः ॥ रोगशय्युनृपाद्वा स्यान्मुहुः पीडा मुहुःसहा ॥१४॥  
 यस्मात्खेतुर्युः क्रूरः स्याद्भ्रूगृहक्षेत्रनाशनम् ॥ पशुहानिस्तत्र मौमे गृहेदाहप्रमातृधृक् ॥१५॥  
 शनी हृदयशूलं स्यात्सूर्यं राजप्रकोपनम् ॥ सर्वस्वहरणं राहौ विषचौरादिजं भयम् ॥१६॥  
 यस्माद्बृशभमे राहुः पुष्यतीर्यटनं भवेत् ॥ तस्मात्कर्माविभाष्यर्षगताः  
 शोभनखेचराः ॥१७॥

जिस भाव में राहु या केतु हो, उस भाव की दशा में पुत्र पीडा, धनहानि, विदेशभ्रमण, भय तथा क्लेश होता है। ११३॥ जिस भाव से ६।८ वे पापग्रह तथा नीचम्यग्रह ही तो रोग, शत्रु, राजा से अत्यन्त पीडा होती है और बार बार होती है। ११४॥ जिस भाव से पापग्रह चौथे स्थान में हो तो उसकी दशा में भूमि, मकान, खेत का नाश और पशु हानि होती है। यदि मंगल चौथे हो तो गृह स्वामीयुक्त मकान अग्नि से नष्ट होता है। ११५॥ शनि चौथे हो तो हृदयशूल, सूर्य से राजभय, राहु से सर्वस्व हानि तथा विष, चोर आदि का भय होता है। ११६॥ जिस भाव में दशम भाव में राहु हो और राहु में ९।१०।११ में शुभ ग्रह हो तो शुभ मंगलकारी, तीर्थयात्रा होती है। ११७॥

विद्यार्थधर्मसत्कर्मस्थानिपौरुषसिद्धयः ॥ यतः पचमकामारिगताः स्वोच्चशुभग्रहाः ॥१८॥

पुत्रदारादिसंप्राप्तिर्नृपपूजा महत्तरा ॥ यस्मिन् ज्ञानाय कर्मधुनवलश्राधिपा स्थिता ॥१९॥  
तत्तद्वावार्थसिद्धिं स्याच्छ्रेयो योगानुसारत ॥ यस्मिन् गुरुर्वा शुभो वा शुभेशो वापि सस्थित  
॥ २०॥ कल्याणोत्सवसप्ततिर्देवब्राह्मणतर्पणम् ॥ यच्चतुर्थे तुगखेटा शुभस्वामी प्रहृष्ट  
वा ॥२१॥

जिस भाव से पाचवे छठवे, सातवे उच्च राशि स्थित शुभ ग्रह हो तो विद्या धन धर्म सत्कर्म स्याति और पीरुप की सिद्धि होती है ॥१९८॥ जिस भाव म ४।५।९।१०।११ भावों के स्वामी हो उस दशा म पुत्र स्त्री आदि प्राप्ति तथा राजकुल में महान आदर होता है ॥१९९॥ जिस भाव में बृहस्पति अथवा शुक्र या शुभभाव का स्वामी हो उस भाव की सिद्धि तथा योगानुसार कल्याण होता है ॥२०॥ जिस भाव के चौथे स्थान के उच्चराशिगत ग्रह हों या शुभ ग्रह हो तो उसकी दशा में कल्याण उत्सव सम्पत्ति तथा देव-ब्राह्मण की पूजा होती है ॥२१॥

वाहनग्रामलाभश्च पशुवृद्धिश्च भूयसी ॥ तत्र चद्रेशलाभ स्याद्बहुधान्यरसान्युत ॥२२॥ पूर्ण  
विधी निधिप्राप्तिर्लभेद्वा मणिसचयम् ॥ तत्र गुरुं मृदगादिवाद्यगानपुरस्कृत ॥२३॥  
आदोलिकापतिर्जंबि तु कनकाडोलिका ध्रुवम् ॥ लग्नकर्मेशभाग्येशतुगस्थशुभयोगत ॥२४॥  
सर्वोत्कर्षमहेश्वर्यसाम्राज्यादिमहत्फलम् ॥ एव तत्तद्वावदायफल यत्स्याद्विचित्रयेत् ॥२५॥  
एकैकोद्दश स्वोया गुणैरष्टादशात्मना ॥ भिन्ना फलविपाकस्तु कुर्याद्विचित्रसपुतम ॥२६॥  
परमोच्चे तुगमात्रे तदवर्तकदुपर्यपि ॥ मूल त्रिकोणभे स्वर्गं स्वाधिभिन्नप्रहस्य मे ॥२७॥

तथा वाहन और भूमि का लाभ होता है पशुओं की वृद्धि होती है। चन्द्र या चन्द्रेण युक्त हो तो बहु धान्य रस (ची चीनी) प्राप्त होती है ॥२२॥ जिस भाव स चतुर्थ स्थान म पूर्ण चन्द्रमा हो और उच्चराशि का हो तो भूमिगत द्रव्य अथवा मणि आदि की प्राप्ति होती है। और यदि शुक्र हो तो नाच गान का आनन्द रहता है ॥२३॥ बृहस्पति हो तो मोटर आदि की सवारी। लग्नेश कर्मेश भाग्येश और उच्चस्थ शुभग्रह का योग हो तो सुवर्ण रत्न-युक्त सिंहासन प्राप्त होता है ॥२४॥ और उच्चस्थ बृहस्पति का योग हो तो सर्वोत्कर्ष युक्त महान् ऐश्वर्यशाली साम्राज्य प्राप्त होता है। इस प्रकार भाव की दशा का फल अच्छी तरह विचार कर कहना चाहिए ॥२५॥ एक २ ही राशि की दशा अपने शुभग्रह और पापग्रहों के १८ प्रकार के योगों से भिन्न २ विचित्र फलदायक होती है ॥२६॥ (अब अठारह प्रकार के योग दिखाते हैं) प्रथम शुभयोग-परमोच्च ग्रह वा सम्बन्ध केवल उच्च का सम्बन्ध अथवा उम भाव स सम्बन्धित प्रथम अथवा द्वितीय भाव म उच्च ग्रह का सम्बन्ध या मूल त्रिकोण स्वगृही अधिभिन्नगृही या मित्र गृही अथवा दृष्टियुक्त रामगृही हो ॥२७॥

तत्कालमुद्गदो मेहे उदासीनस्य मे तथा ॥ शत्रोर्भेदधि रिपोर्मे च नीचातादूर्ध्वदेशभे ॥२८॥  
तस्मादवर्द्ध नीचमात्रे नीचाते परमाशके ॥ नीचारिवर्गे शकले स्वर्गं केद्रकोणभे ॥२९॥  
अवस्थितस्य खेटस्य समरे पीडितस्य च ॥ गाढमूढस्य च दशापचिति स्वगुणं फलम् ॥ ३०॥  
परमोच्चगतो यस्तु योजितवीर्यपरप्रदान् ॥ सपूणाख्या तदृसा तु राज्यभोग्यशुभप्रदा ॥३१॥

पूर्वखण्डे द्वात्रिंशोऽध्यायः

लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानां चिदावासग्रहप्रदा ॥ तुंगमात्रगतस्यापि तथा वीर्याधिकस्य च ॥३२॥  
 पूर्णाख्या बहुधैर्यवर्धयित्वापि रजप्रदा ॥ अतिनीचगतस्यापि दुर्बलस्य ग्रहस्य तु ॥३३॥  
 रिक्तासानिष्टफलदा व्याध्यन्त्यमृतिप्रदा ॥ अत्युच्चादतिनीचांश्च मध्यगतस्य च  
 रोहिणी ॥३४॥

अब अशुभ सम्बन्ध दिखाते हैं—शत्रु की राशि में, अधिशत्रु की राशि में, नीच और परम नीच में अथवा पिछली अगली राशि में पापग्रह का योग, नीच अश में, नीच वर्ग में और बलहीन होना ये पाप योग-के ९ भेद हुए ॥ शुभयोग में विशेष कहते हैं। अपने वर्ग में, केन्द्र या त्रिकोण में शुभ होता है। ऐसे ही पापग्रहों से पीड़ित और पराजित ग्रह सुपुष्टि अवस्था में अथवा मूढ़ अवस्था में होने से अशुभ होता है और उसकी दशा नेष्ट होती है ॥ जो ग्रह परमोच्च राशिगत तथा पूर्ण बलवान् हो उसकी दशा सम्पूर्ण राज्यभोग और शुभफल दायक होती है ॥१३१॥ उस दशा में घर में लक्ष्मी का भण्डार भरा रहता है। श्रेष्ठ भवन आदि का सुख होता है। उच्च राशि गत होने पर भी यदि पूर्ण बलवान् हो ॥१३२॥ तो उस दशा में अनेक प्रकार के ऐश्वर्य रहते हुए भी कुछ रोगों की चिन्ता रहती है। अति नीचगत दुर्बल ग्रह की दशा में ॥१३३॥ जो अपने उच्च से नीच राशि की तरफ आता हुआ ग्रह मध्य में हो, उस ग्रह की दशा अयरोहिणी कहलाती है। (अयरोहण = नीचे उतरना) फल—व्याधि, अर्थहानि, क्लेश आदि तथा मृत्युदायक है ॥१३४॥

मित्रोच्चभावप्राप्तस्य मध्याख्या ह्यर्धदा दशा ॥ नीचातादुच्चभागान्त भपटके मध्यगतस्य च ॥३५॥ दशा चाऽऽ रोहिणी नीचरिपुभासगतस्य च ॥ अधमाख्या मयक्लेशज्याधिदुःखविबर्द्धिनी ॥३६॥ नामानुरूपफलदा पाककाले दशा इमा ॥ भाग्येशगुरुसवधा योगदूर्केऽभारिणि ॥३७॥ परेषामपि दायेषु भाग्योपक्रममुद्गयेत् ॥ जातको यस्तु फलदो भाग्ययोगप्रदोऽयं च ॥३८॥ सफलो वक्रिमादूर्ध्वमन्यातपि च सेचरान् ॥ दुर्बलानसमर्थाश्च फलदानेऽपि योगतः ॥३९॥ तारतम्यात्सुखसवधा दशा होता फलप्रदा ॥ स्वकेऽदिजुषा तेषा पूर्णाद्वर्तिप्रव्यवस्थया ॥४०॥

अपनी नीच राशि में उच्च राशि की तरफ जाता हुआ मध्य में जो ग्रह है अथवा जो मित्र की उच्च राशि में हो तो वह मध्या नाम की दशा है और धनदातृ है। और इस दशा का नाम आरोहिणी है ॥१३५॥ (आरोहण = उपर चढ़ना) जो ग्रह नीच राशि में या शत्रु की राशि में हो उसकी दशा अधमा नाम की है। वह दशा भय, क्लेश, व्याधि और दुःख देनेवाली होती है ॥१३६॥ अपने दशाकाल में नाम के अनुसार फल देनेवाली ये दशाएँ हैं ॥१३७॥ यदि ग्रह भाग्येश अथवा बृहस्पति में सुख अथवा दृष्टि सम्बन्ध रखता हो तो दूरी ग्रहों की दशा में भी अपने अन्तर में भाग्य वृद्धि कारक होता है ॥१३८॥ जो ग्रह भाग्य योग देनेवाला है, वह मार्गी हो अथवा होन पर और जो बलहीन ग्रह है उनमें दृष्टि आदि सम्बन्ध करता हो तो उनको भी श्रेष्ठ फलदान में समर्थ कर देता है ॥१३९॥ बलाबल के अनुगम यथामन्बन्ध में उन ग्रहों की दशा शुभफल दान में समर्थ होती है ॥१४०॥

प्रसह्यकार इत्येतत्सतत सपदा बलात् ॥ शीर्षोदयस्यगा स्वस्वदशादीं स्वफलप्रदा ॥४१॥  
 उदयोदयराशित्वदशा मध्यफलप्रदा ॥ पृष्ठोदयर्षगा सेदा स्वदशाते फलप्रदा ॥४२॥  
 जन्मकाले दशानायस्त्रेष्टगाना विचारणे ॥ निसर्गतश्च तत्काले सुहृदा हरणे शुभम् ॥४३॥  
 सपादयेत्तदा कष्ट तद्विपर्ययगाभिनाम् ॥ दशेशाकृतभावाना दारस्य द्वादशार्क्षम् ॥४४॥  
 भुक्त्वा द्वादशराशीना दशामुक्ति प्रकल्पयेत् ॥ एकैकराशेषां तत्र सुहृत्स्वसेत्रगामिनी ॥४५॥  
 तस्या राज्यादिसप्तपूर्वक शुभमोरयेत् ॥ दुःस्थानरिपुनीचस्यनीचरूपता च या ॥४६॥  
 तस्यामनर्षकालह रोगमृत्युभयादिकम् ॥ विदुभूयस्त्वशून्यत्ववशत्वीयाष्टवर्गके ॥४७॥ वृद्धि  
 हानि च तद्वाशि भावस्य स्वग्रहात्कामात् ॥ भावयोजनया विद्यास्तुताद्यादि  
 शुभाशुभम् ॥४८॥

यदि ग्रह स्वगृही अथवा केन्द्र आदि शुभस्थान में हो तो अपने विश्वावल के अनुसार पूरा, आधा या चौथाई जितना फल देने में समर्थ हो तथा शीर्षोदयी राशि में हो तो निरन्तर ही सम्पत्तियों को जबरदस्ती खींचकर लानेवाला तथा अपनी दशा के आदि में पूरा फल देनेवाला होता है ॥४१॥ सूर्योदयी राशि में जो दशा हो वह मध्यम काल में फल तथा पृष्ठोदयी राशि की दशा मध्यम फल देनेवाली होती है। वह फल भी दशा के अन्त में ही देती है ॥४२॥ मनुष्य के जन्म समय में दशा के स्वामी ग्रह तथा अन्य ग्रहों के विचार करने में नैसर्गिक बल तथा तात्कालिक बल और मैत्रीबल का विचार करो ॥४३॥ इस बल के अनुसार शुभ और अशुभ फल का निर्णय करो। और ग्रह के शत्रु सम ग्रहों का भी निरीक्षण करो। दशा के स्वामी से विपरीत भाववाले ग्रहों वा सम्बन्ध तथा दशास्वामी से सम्बन्धित भावों का विचार वारही राशियों में करो ॥४४॥ बारह राशियों की दशा तथा अन्तर-दशा की कल्पना करो। जिस भाव की राशि अपने मित्र या स्वगृही ग्रह से युक्त हो ॥४५॥ उस दशा में राजा के समान सम्पत्ति और सुख होता है और जो राशि शत्रु नीचत्व, अथवा नीच तथा पापग्रह युक्त हो उसकी दशा में अनर्थ बलह रोग और मृत्युभय होता है। इसी प्रकार उस राशि के अष्टवर्ग के विचार में यदि बिन्दु अधिक हो अथवा केवल शून्य हो अथवा रेखा अधिक हो ॥४७॥ तो हानि या वृद्धि भाव के ग्रह के अनुसार जाने। भावराशि की दशा में सन्तान आदि पदार्थों का भी शुभाशुभ विचार करो ॥४८॥

घात्वादिराशिभेदाच्च घात्वादिग्रहयोगत ॥ शुभपापदशाभेदाञ्जुभपापयुतैरपि ॥४९॥  
 इष्टानिष्टस्थानभेदात्फलभेदात्सामुन्नयेत् ॥ एव सर्वग्रहाणा च स्वा स्वामतर्दशामपि ॥१५०॥  
 स्वराशितो राशिभुक्ति प्रकल्प्य फलमोरयेत् ॥ अन्तरतर्दशा स्वोया विभज्यैव पुन पुन  
 ॥५१॥ कालसंक्षेपत भूभ्रमफल कृयाद्दिन प्रति ॥ स्वाधारभृत्तो होराप्रयेज्यमपि वाग्मुना  
 ॥५२॥ केन्द्रे कोणे कारका भावनाथा भावप्रान्तिर्दुःस्थिता भावहृत्यै ॥ अर्थे लाभे विद्वमा वा  
 पदा ते भावात्सार्थमातृपित्रादिनुल्या ॥५३॥ भाव पश्यति भावेशो भावस्ये सप्रणैऽपि वा ॥  
 बलिन स्वोच्चगे वाऽपि तद्भावात्स्विष्टपुष्टया ॥५४॥

राशि के बलावल भेद में तथा बलवान ग्रहों के योग आदि में शुभ या अशुभ ग्रहों के योग



## अथान्तर्दशाकरणमाह

दशा दशाहता कार्या दशभिर्भागमाहरेत् ॥ लब्धाकाश्च भवेन्मासास्त्रिंशत्त्रिंशत् च दिनानि च ॥१॥

अथ सूर्यविशोत्तरीवर्षाणि ६ तन्मध्येन्तरमाह										अथ चंद्रविशोत्तरीवर्षाणि १० तन्मध्येन्तरम्									
सू	ष	म	रा	भू	श	कु	के	गु	घ	च	ष	रा	भू	श	कु	के	गु	घ	प्र
०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	१	१	१	१	०	१	०	०
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	०	१०	७	६	४	७	५	७	८	६	०
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ शीतविशोत्तरीवर्षाणि ७ तन्मध्येन्तरम्										अथ राहुविशोत्तरीवर्षाणि १८ तन्मध्येन्तरम्									
ष	रा	भू	श	कु	के	गु	घ	प्र	प्र	रा	भू	श	कु	के	गु	घ	प्र	प्र	प्र
०	१	०	१	०	०	१	०	०	०	२	२	२	२	१	३	०	१	१	०
४	०	११	१	११	४	२	४	७	०	८	४	१०	६	०	०	१०	६	१	०
२७	१८	६	९	७	२७	०	६	०	०	१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

## अन्तर्दशाकरण

जिम्बी दशा में जिसका अन्तर माघन करना हो उन दोनों ग्रहों की दशाओं को परस्पर गुणा करना। गुणितत्व में १० का भाग देने पर मासमन्वय प्राप्त होगी। शेष को ३० में गुणा कर १० का भाग देने पर दिन सन्ख्या प्राप्त होगी। १॥

(सरल रीति—जिम् ग्रह में जिम् ग्रह का अन्तर जानना हो उन दोनों ग्रहों की दशा परस्पर गुणा करना तो गुणित अंक की दहाई के अंक मास होते हैं। और इक्कीस का अंक त्रिगुणित दिन होते हैं।)

उदाहरण—सूर्यदशा में सूर्य का अन्तर जानना है सूर्य दशा की वर्ष सन्ख्या ६-६ को परस्पर गुणा किया तो ३६ हुए, १० का भाग दिया तो ३ मास लब्ध हुए, शेष ६ को ३० में गुणा किया तो १८० हुए, १० का भाग दिया तो लब्ध १८ दिन हुए।

अथवा—सूर्यदशावर्ष परस्पर गुणा किया तो ३६ हुए, इस सन्ख्या में दहाई का अंक ३ मास है, और इक्कीस का अंक ६ त्रिगुणित १८ दिन है।

## पूर्वसप्तमे त्रयस्त्रिंशदोऽध्यायः

अथ विंशोत्तरीपुत्रवर्षाणि १९ तन्मध्येन्तरम्										अथ विंशोत्तरीशनिवर्षाणि १९ तन्मध्येन्तरम्									
शु०	म०	बु०	के०	गु०	घ०	च०	म०	रा०	प०	शु०	कु०	के०	गु०	घ०	च०	म०	रा०	हृ०	प०
२	२	२	०	२	०	१	०	२	०	३	२	१	३	०	१	०	२	२	०
१	६	३	११	८	१	४	११	४	०	०	८	१	०	११	७	१	१०	६	०
८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीबुधवर्षाणि १७ तन्मध्येन्तरम्										अथ विंशोत्तरीशुक्रवर्षाणि ७ तन्मध्येन्तरम्									
शु०	के०	गु०	घ०	च०	म०	रा०	हृ०	ग०	प०	के०	गु०	घ०	च०	म०	रा०	हृ०	ग०	बु०	प०
२	०	२	०	१	०	२	२	२	०	०	१	०	०	४	०	१	०	१	०
४	११	१०	१०	५	११	६	८	९	०	४	२	४	७	५	१८	६	१	११	०
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	०	०	२७	०	६	०	२७	१८	६	१	२७	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीभृगुवर्षाणि २० तन्मध्येन्तरम्								
शु०	म०	बु०	के०	गु०	घ०	च०	म०	रा०
३	१	१	१	३	२	२	२	१
४	०	८	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०

## भावयोगफलमाह

स्वढावशाशके लग्नाथे वा स्वदुःकाण्ये ॥ तस्य भुक्ति शुभामाहुर्मुनयः कालचितका ॥२॥  
 स्वत्रिंशदोऽथ वा नित्रिंशदो वा स्थितो यदि ॥ तस्य भुक्ति शुभा प्रोक्ता  
 कालविद्भिर्मनीषिभिः ॥३॥ मित्रक्षेत्रे नवाशास्ये मित्रस्य द्विरसाशके ॥ तस्य भुक्ति शुभा  
 प्रोक्ता कालविद्भिर्मनीषिभिः ॥४॥ बुद्धिलेत्रनवाशास्ये पुत्रस्य द्विरसाशके ॥ मित्रद्रेष्काण्ये  
 वापि तस्य भुक्तिशुभावहा ॥५॥ तयो राशिनवाशास्ये धर्मस्य द्विरसाशके ॥ गृहद्रेष्काण्ये  
 वापि तस्य भुक्तिशुभावहा ॥६॥ सुखराशिनवाशास्ये वाहनद्विरसाशके ॥ सुखद्रेष्काण्ये वापि

तस्य भुक्ति शुभावहा ॥७॥ विलप्रनायस्थितमाशनाये मित्राशने मित्रसंगेन दृष्टे ॥  
गुहृद्दृकाणस्थनवाशके या तदास्य भुक्ति शुभदा यदति ॥८॥

### भावयोगफल

लग्नेश अपने द्वादशाश मे अथवा ट्रेष्काण मे हो तो उसकी अन्तर्दशा शुभ होती है, ऐसा त्रिकालज मुनि कहते हैं ॥२॥ अथवा अपने त्रिशाश या मित्र के त्रिशाश मे हो तो उतवा भी अन्तर शुभ होता है ॥३॥ अथवा मित्र के घर में या मित्र के नवाश मे या मित्र के द्वादशाश मे हो तो उस ग्रह का अन्तर शुभ होता है ॥४॥ अथवा लग्नेश पचमभाव मे या नवाश मे अथवा पचम भाव के १२ अश मे या मित्र ट्रेष्काण मे हो तो भी अन्तर शुभ होता है ॥५॥ लग्नेश पचमेश की राशि या नवाश मे अथवा नवमभाव के द्वादशाश मे हो तो अन्तर शुभ होता है ॥६॥ लग्नेश चतुर्यभाव मे या चतुर्य के नवाश मे अथवा चतुर्य के द्वादशाशमे या चतुर्यके ट्रेष्काण मे हो तो उसका अन्तर शुभ होता है ॥७॥ लग्नेश जिस राशि मे हो उस राशि के नवाश का स्वामी अपने मित्रग्रह के नवाश मे हो तथा मित्रदृष्ट हो तो अन्तर शुभ होता है। अथवा मित्र के ट्रेष्काण मे स्थित नवाशे के मित्राश मे हो और मित्र दृष्ट हो तो अन्तर शुभ होता है ॥८॥

अथ वक्ष्ये विशेषेण दशा कष्टप्रदा नृणाम् ॥ षष्ठाष्टमव्यशेषाना दशा कष्टप्रदायिनी ॥९॥  
एषा भुक्तिर्हि कष्टा स्यान्मारकस्य दशा यदि ॥ भारकेशेन पठ्ठेशे युक्ते लग्नाधिपे यदि ॥१०॥  
तस्य भुक्तौ ज्वरप्राप्ति प्राहु कालविदो जना ॥ सरोगे सरारीरेशभ्रद्रपङ्कगो यदि ॥११॥  
जलदोषस्तस्य भुक्तौ स्यादजीर्णो न सशय ॥ पठ्ठेशमुत्तलग्नेशो बुधपङ्कगो यदि ॥१२॥ तस्य  
भुक्तौ भवेद्वायुवर्ततो वा देहजाड्यकृत् ॥ सारिनायविलग्नेशो गुरु पङ्कगो यदि ॥ तस्य भुक्तौ  
भवेद्गो पीडा वा ब्राह्मणेन तु ॥१३॥ नक्षत्रेशो विलग्नेशो भृगुपङ्कगो यदि ॥ तस्य भुक्तौ  
भवेत्पीडा रोगस्त्री सगमेन च ॥१४॥ सरोगे सविलग्नेश शनिपङ्कगो यदि ॥ तस्य भुक्तौ  
भवेद्वात सन्निपातोय वा नृणाम् ॥ लग्नेशरोगेशयोर्भवेन्मारकभुक्तिषु ॥१५॥ मृत्यौ स्थितं  
सैहिकमदकेतुभिर्मनोहिकाश्वासविषूचिकाभि ॥ रोगो नराणामथ तस्य भुक्तौ भवेत्तदा  
मारकसमुत्तिश्च ॥१६॥ एव भ्रात्रादिभावाना नायकौ यत्र सस्थित ॥ तत्तत्पङ्कगोयोगेन  
तत्तद्भावफल वदेत् ॥१७॥

अद कष्टकारी दशा कहते हैं। ६।८।१२ भाव के स्वामी की दशा कष्टदायक होती है ॥९॥  
यदि लग्नेश, मारकेश से युक्त अथवा पठ्ठेश से युक्त या दृष्ट हो तो अन्तर कष्टकारी होता  
है ॥१०॥ उसके अन्तर मे ज्वर होता है। लग्नेश रोगेश युक्त होकर चन्द्रमा के पङ्कग मे हो तो  
ज्वर होता है ॥११॥ अथवा जलदोषयुक्त बीमारी या अजीर्ण की बीमारी होती है। यदि बुध  
के पङ्कग मे हो तो ॥१२॥ उसके अन्तर मे वातव्याधि या देहजाड्य की बीमारी होती है।  
यही यदि गुरु के पङ्कग मे हो तो उसके अन्तर मे ब्राह्मण द्वारा पीडा प्राप्त हो ॥१३॥ चन्द्रमा  
और लग्नेश यदि शुक्र पङ्कग मे हो तो अन्तर मे स्त्रीसंग से रोग या कष्ट होता है ॥१४॥  
पठ्ठेश युत लग्नेश यदि शनि पङ्कग मे हो तो उसके अन्तर मे वातव्याधि या सन्निपात होता

पूर्वखण्डे प्रयत्नशोऽध्यायः

है॥१५॥ मारकेश ग्रह की दशा में रोगेशयुक्त लग्नेश का अन्तर हो तथा अष्टमभाव में राहु, शनि, केतु हो तो हिचकी, खासी, दमा या हैजा की बीमारी होती है॥१६॥ जिस प्रकार ये योग लग्नेश के साथ बताये गये हैं, उसी प्रकार अन्य सभी भावों से भी विचारने चाहिए॥१७॥

### अथाग्रे फलमाह

केन्द्राधीश्वरकोणनायकदशाश्रातर्दशा शोभना सामान्याश्च धनत्रिलाभभवनाधीशग्रहाणा वशा ॥ दृष्टाष्टव्ययभावनायकदशा कष्टा भवेद्युसदा नेतुर्लग्नमवेक्ष्य तत्तदधिपाततद्दशा- भुक्तियु ॥१८॥

रविमहादशायां खेरंतर्दशा मास ३ दिन १८ तत्फलम्

उच्चक्षेत्रे गते सूर्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ रविदयि स्वमुक्तौ च धनधान्यादिलाभकृत् ॥१९॥  
देहुरोग वितलाभ राजप्रीतिकर शुभम् ॥ सर्वकार्यार्थसिद्धिं स्याद्विवाह राजदर्शनम् ॥२०॥  
द्वितीयदूननाये नु अपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥२१॥  
सूर्यप्रीतिकरीं शांतिं कुर्यादारोग्यमादिशेत् ॥२२॥

केन्द्रेश तथा त्रिकोणेश की दशा और अन्तर्दशा शुभ होती है। धनेश, तृतीयेश, लाभेश की दशा, अन्तर्दशा मध्यम होती है। ६।८।१२ भावों के स्वामी की दशा कष्टकारी होती हैं। इस प्रकार से उपर्युक्त सभी योगों से फल विचार करना चाहिये॥१८॥

सूर्यदशा में सूर्यान्तर मास ३ दिन १८ फल

सूर्य उच्च राशि का हो स्वगृही हो। केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो तो धन, धान्य आदि का लाभ होता है॥१९॥ शरीर में निरोगता, धन का लाभ, राजा से प्रीति, सम्पूर्ण कार्य और अर्थ की सिद्धि तथा विवाह आदि शुभ कार्य होता है॥२०॥ द्वितीय तथा सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु होनेका भय होता है। इस दोष को दूर करने के लिये महामृत्युजय का जप करना या कराना चाहिए॥२१॥ सूर्य की शांति करने से आरोग्यता प्राप्त होती है॥२२॥

रविदशायां चंद्रभुक्तिमासाः ६ दिना० तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते चद्रे लग्नकेन्द्रत्रिकोणगे ॥ विवाह शुभकार्यं च धनधान्यसमृद्धिकृत् ॥२३॥  
गृहक्षेत्राभिवृद्धिं च पशुवाहनसपदाम् ॥ तुये वा स्वर्लगे वाऽपि दारसौख्यं धनायमम् ॥२४॥  
पुत्रलाभमुल्लंघनं सौख्यं राजसमागमम् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिमुलायहम् ॥२५॥ क्षीणे वा पापसयुक्ते दारपुत्रादिपीडनम् ॥ वैषम्यजनसयादभृत्यवर्गविनाशनम् ॥२६॥ विरोध राजकलहं धनधान्यपशुलायम् ॥ दृष्टाष्टमध्यमे चद्रे जलभीति मनोरजम् ॥२७॥

### सूर्य वशा मे चन्द्रान्तर ६ मास फल

सूर्य के अन्तर मे चन्द्रमा हो, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो विवाह आदि शुभकार्य होते है। धन-धान्य की वृद्धि होती है ॥२३॥ भूमि और मकान मे वृद्धि, पशु और वाहन आदि सम्पत्ति प्राप्त होती है। चन्द्रमा यदि उच्च वा मा स्वगृही हो तो स्त्री वा सुख, और धन की प्राप्ति होती है ॥२४॥ पुन सन्तान की प्राप्ति और सुख तथा राज-समाज मे आना-जाना होता है। महाराज वा बडे आदमी की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि और सुख होता है ॥२५॥ चन्द्रमा यदि क्षीण वा पापग्रह युक्त हो तो स्त्री-पुन को कष्ट होता है। परिवार मे विषमता, बन्धुओ से विरोध तथा नौकर चले जाते है ॥२६॥ राज से मुकदमा, धन और पशु की हानि होती है। चन्द्रमा ६।८।१२ मे हो तो जल मे डूबने का भय अशान्ति होती है ॥२७॥

बधन रोगपीडा च स्थानविच्युतिकारकम् ॥ दुःस्थान चापि चित्तेन दायादजनविग्रहम् ॥२८॥  
निर्धन कुत्सितान्न च चौरादिनृपपीडनम् ॥ मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च देहपीडाक्षयो भवेत् ॥२९॥  
वापेशाल्लाभंभाष्ये च केद्रे वा शुभसयुते ॥ भोगभोग्यादिसतोषदारपुत्रादिवर्द्धनम् ॥३०॥  
राज्यप्राप्ति महत्सौख्य स्थानप्राप्ति च शाश्वतीम् ॥ विवाह यज्ञदीक्षा च मुग्धान्याबरनूपणम् ॥३१॥  
वाहन पुत्रपौत्रादि लभते सुखवर्द्धनम् ॥ दापेशादिपुर धस्ये ध्यये वा बलवर्जिते ॥३२॥  
अकाले भोजन चैव देशादेश गमिष्यति ॥ द्वितीयघ्ननाथेन अपमृत्युर्भविष्यति ॥ श्वेता गा महिषी दद्याच्छाति कुर्यात्सुख लभेत् ॥३३॥

बन्धन रोग और पीडा तथा स्थान भ्रम होता है। नेष्ट स्थान वा रहना तथा परिवार मे विग्रह होता है ॥२८॥ धनहीन, कुभोजन, चोर, शत्रु, राजा आदि से पीडा होती है। मूत्र-कृच्छ्र की विमारी तथा दर्द की विमारी होती है ॥२९॥ चन्द्रमा सूर्य से यदि लाभ अथवा भाग्यस्थान मे हो, केन्द्र या त्रिकोण मे तथा शुभग्रह युक्त हो तो उत्तम भोग प्राप्त होते है। भाग्य की वृद्धि होती है। मन मे सन्तोष, घर मे स्त्री पुन की वृद्धि होती है ॥३०॥ राज्य से प्राप्ति, महान सुख, स्थान वा भूमि की प्राप्ति स्थायी रूप से होती है। घर मे विवाह आदि मंगल कार्य तथा यज्ञ आदि धर्म कार्य, दीक्षा मूपण वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है। वाहन की प्राप्ति, पुन पौत्र आदि का उत्सव होने से सुख वृद्धि होती है। सूर्य से ६।८।१२ स्थान मे हो और बल रहित हो ॥३२॥ तो कुममय भोजन देश-विदेश की यात्रा आदि होती है। चन्द्रमा यदि द्वितीय सप्तम वा स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।

उपाय - दूध देनेवाली मफेद गाय वा दान करने मे सुख होता है ॥३३॥

### रविदशायां कुजभुक्तिमासाः ४ दिना ०६ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते भीमे स्वोच्चे स्वसेत्रलाभगे ॥ लग्नात्केद्रत्रिकोणे वा शुभकार्य शुभादिकम् ॥३४॥  
मूलाभ कृषियलाभ च धनधान्यादिवृद्धिदम् ॥ गृहक्षेत्रादिलाभ च रक्तवस्त्रादिलाभकृत् ॥३५॥  
लग्नाधिपेन सयुक्ते सौख्य राजप्रिय सुखम् ॥ भाग्यलाभाधिपैर्भुक्ते लाभश्रेयभविष्यति ॥३६॥  
बटुसेनाधिपत्य च शत्रुनाश मनोदृढम् ॥ आत्मबधुमुक्त चैव भ्रातृवर्द्धनक तथा ॥३७॥

पूर्वखण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

दायेशादिपुरधस्थे पापयुक्ते च वीक्षिते ॥ आधिपत्यबलैर्हीने क्रूरबुद्धि मनोरुजम् ॥३८॥  
कारागृहे प्रवेशे च निर्गल बहुनाशनम् ॥ भ्रातृवर्गविरोधे च कर्मनाशमथापि वा ॥३९॥ नीचे वा  
बहुले भीमे राजमूलाढनक्षय ॥ द्वितीयघननाथे तु देहे जाड्य मनोरुजम् ॥४०॥ सुबह्यजपदान च  
अनड्वाह तथैव च ॥ शांति कुर्वीत विधिवदापुरारोग्यसिद्धिदाम् ॥४१॥

सूर्य दशा मे भौमान्तर ४ मास ६ दिन फल

सूर्य मे मंगल का अन्तर हो और मंगल उच्च का स्वगृही केन्द्र त्रिकोण या लाभ मे हो तो  
घर मे मंगल कार्य होते है ॥३४॥ पृथ्वी का लाभ खेती का लाभ धन-धान्य वा लाभ मकान  
खेत आदि का लाभ होता है। व्यापार मे लाल वस्त्र से अधिक लाभ होता है ॥३५॥ लग्नेश से  
युक्त हो तो सुखकारी, राजप्रिय होता है। भाग्येश तथा लाभेश से युक्त हो तो विधेय  
लाभकारी होता है ॥३६॥ सेनापति की पदवी मिलती है शत्रु का नाश होता है। मन मे दृढता  
तथा बल वृद्धि होती है। परिवार मे सुख तथा वृद्धि होती है ॥३७॥ सूर्य रा ६।८ के स्थान मे  
हो पापग्रह से युक्त दृष्ट हो तो अधिकार से हीन क्रूर बुद्धि मन मे अशान्ति होती है ॥३८॥  
कारागृह मे वास वेडी तथा हथकडी बन्धु वा नाश, भ्रातृ वर्ग मे विरोध तथा इच्छा का  
नाश होता है ॥३९॥ मंगल नीच का या बलहीन हो तो राजवार्ग से धन की हानि होती है  
और द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो देह मे जडता, मन मे दुःख होता है ॥४०॥ मंगल का दान  
तथा जप और वेल का दान करने से आयु और आरोग्य प्राप्त होता है ॥४१॥

अथ रविदशाया राहुभुक्तिमासा. १० दि० २४ तत्फलम्

सूर्यस्थातर्गते राहौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणमे ॥ आदौ द्विमासपर्यन्तं घननाश महद्भयम् ॥४२॥  
चौराहिव्रणभोतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥ तत्पर सुखमाप्नोति शुभयुक्ते शुभाशके ॥४३॥  
बेहारोग्य मनस्तुष्टी राजप्रोतिकर सुखम् ॥ लग्नाद्युपचये राहौ योगकारकसमुत्ते ॥४४॥  
दायेशाच्छुभराशित्ये राजसन्मानकीर्तिदम् ॥ भाग्यवृद्धिं यशोलाभं दारपुत्रादिपीडनम् ॥४५॥  
पुत्रोत्सादादिसतोष गृहे कल्याणशोभनम् ॥ दायेशात्पृच्छरिष्कस्थे रक्षे वा बलवर्जिते ॥४६॥  
वधन स्थाननाशश्च कारागृहनिवेशनम् ॥ चौराहिव्रणभोतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥४७॥  
चतुष्याज्जीवनाशश्च गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥ गुल्मक्षयादिरोगश्च अतिसारादिपीडनम् ॥४८॥  
द्विसप्तत्ये तथा राहौ तत्स्थानाधिपसमुत्ते ॥ अपमृत्युभयं चैव सर्वभोतिश्च समवेत् ॥४९॥ दुर्गाजप च  
कुर्वीत छागदान समाचरेत् ॥ कृष्णा गा महिषी दद्याच्छान्तिमाप्रोत्यसशयम् ॥५०॥

सूर्य दशा मे राहु अन्तर १० मास २४ दिन फल

सूर्य के अन्तर मे राहु हो, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो पहले २ मास मे घन वा नाश,  
महान भय ॥४२॥ चौर, सर्प घाय आदि वा भय, स्त्रीपुत्र वा पीडा होती है। ० मास के बाद  
सुख होता है। मंगल आदि शुभग्रह युक्त शुभ नवाश मे हो तो ॥४३॥ नीरोगता, मनोप,  
राजप्रोति और सुख होता है। यदि मंगल रा केन्द्र स्थान मे हो, योग कारक ग्रह मे युक्त  
हो ॥४४॥ सप्तमेश मे शुभ स्थान मे हो तो राजसन्मान, कीर्ति, भाग्यवृद्धि, लाभ होता है तथा  
स्त्री-पुत्र वा कुछ पीडा भी होती है ॥४५॥ और पुत्रोन्मव आदि मंगल कार्य, घर मे सुख

शान्ति होती है। मंगल यदि बलहीन होकर सूर्य से ६।८।१२ स्थान में हो तो ॥४६॥ बन्धन, स्थान-नाश, कैद, चोर, सर्प, धाव से भय, स्त्री पुत्र को पीडा होती है ॥४७॥ पशु की हानि मकान और खेत की हानि, गुल्म का रोग तथा क्षय रोग तथा अतिसार आदि रोग होते हैं ॥४८॥ राहु यदि २ या ७वे स्थान में स्थानेश से युक्त हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है तथा अन्य प्रकार के भी भय होने सम्भव है ॥४९॥

उपाय — दुर्गामित्र का जप एव छाग (बकरा) दान करे तथा काली गाय का दान करे तो निश्चय शान्ति रहती है ॥५०॥

### अथ रविमध्ये गुरुभुक्तिमा० १९ दि० १८ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे मित्रस्य वर्गस्थे विवाह राजदर्शनम् ॥५१॥  
 धनधान्यादिलाभ च पुत्रलाभ महत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टकार्यविलाभकृत् ॥५२॥  
 ब्राह्मणाप्रियसन्मान प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ॥ भाग्यकर्माधिपवशाद्ब्राह्मणलाभ महोत्सवम् ॥५३॥  
 नरवाहनयोगाश्च स्थानाधिक्य महत्सुखम् ॥ दायेशाच्छुभराशिस्ये भाग्यवृद्धि सुखावहा ॥५४॥  
 दानधर्मक्रियायुक्तो देवताराधना प्रिय ॥ गुरुभक्तिर्मन सिद्धि पुण्यकर्मादिसग्रह ॥५५॥  
 दायेशाद्रिपुरधस्थे नीचे वा पापसपुते ॥ बारपुत्रादिपीडा च देहपीडा महद्भूषम् ॥५६॥  
 राजकोप प्रकुरुते इष्टवस्तुविनाशनम् ॥ पापमूलाद्द्रव्यनाश देहभ्रष्ट मनोरजम् ॥५७॥  
 स्वर्णदान प्रकुर्वीत इष्टजाप्य च कारयेत् ॥ गवा कपिलवर्णानि दानेनारोग्यमा-  
 दिशेत् ॥५८॥

### सूर्य में गुरु का अन्तर मास १९ दिन १८ फल

सूर्य में गुरु का अन्तर हो तथा गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, उच्चराशि में हो या मित्र वर्ग में हो तो विवाह, राजदर्शन होता है ॥५१॥ धन-धान्य का लाभ, महान सुख होता है। राजा या बड़े आदमी की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि और विशेष लाभ होता है ॥५२॥ देव ब्राह्मण की पूजा और सम्मान, प्रियबन्धु का मिलन वस्त्र-भूषण का लाभ होता है। नवम्, दशम् स्वामी से युक्त हो या दृष्ट हो तो राज्यलक्ष तथा महोत्सव होता है ॥५३॥ नीचे, चाकर तथा मोटर आदि सवारी होती है, बड़ा मकान होता है महान सुख होता है। सूर्य में शुभग्रहान और शुभराशि में हो तो भाग्य वृद्धि और मंगल होता है ॥५४॥ दान, धर्म, क्रिया से युक्त, देवता की आराधना में प्रीति, गुरुभक्ति मन में मन्तोष, दान धर्म आदि पुण्य कार्य का मग्न होता है ॥५५॥ सूर्य से ६।८ स्थान में हो, नीचे वा हो या पापग्रह युक्त हो तो स्त्री पुत्र को पीडा, देह को पीडा तथा महान भय होता है ॥५६॥ राजकोप होता है, इष्ट वस्तु का नाश होता है, पाप के कारण द्रव्य का नाश, देह में रोग, मन में अशान्ति होती है ॥५७॥

उपाय — गुरु का जप और दान, सुवर्ण का दान तथा बपिना गऊ का दान करने में आगेयता होती है ॥५८॥

### अथ रविदशायां शनिभुक्तिमा० ११ दि० १२ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते मदे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणने ॥ शत्रुनाश महत्सौख्य स्वल्पधान्यार्थलामकृत् ॥५९॥  
 विवाहोत्सवकार्याणि शुभकार्यं शुभावहम् ॥ स्वोच्चे स्वलेत्रने मदे मुहूर्त्प्रहसमन्यते ॥६०॥  
 गृहे कल्याणसंपत्तिर्विवाहादिषु सत्क्रियाम् ॥ राजसन्मानकीर्तिश्च नानावत्प्रधानगम् ॥६१॥  
 दायेशाद्रिपुरधस्ये व्यये वा पापसयुते ॥ वातशूलमहाव्याधिज्वरातोसारपीडनम् ॥६२॥  
 बधन कार्यहानिश्च वितनारा महद्भयम् ॥ अकस्मात्कलहश्चैव दाय्यादजनविग्रहम् ॥६३॥  
 भुक्त्यादौ मित्रहानि स्थानमध्ये किञ्चित्सुखावहम् ॥ अते क्लेशकर चैव नीच तेषा तथैव च ॥६४॥  
 पितृभ्रातृवियोग च गमनागमन तथा ॥ द्वितीयदूननाये तु अपमृत्युभय भवेत् ॥६५॥ कृष्णा रा  
 मर्हिषी दद्यान्मृत्युजयजप चरेत् ॥ छागदान प्रकुर्वीत सर्वसपत्प्रदायकम् ॥६६॥

#### सूर्य दशा मे शनि का अन्तर ११ मास १२ दिन फल

सूर्य को दशा मे शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से, त्रिकोण स्थान मे हो तो शत्रु का नाश, सुख धन-धान्य का साधारण लाभ करता है ॥५९॥ विवाह आदि उत्सव शुभ कार्य होते हैं। शनि उच्चराशि का या स्वगृही हो, अपने मित्रग्रह से युक्त हो ॥६०॥ तो घर मे कल्याण सुख, सम्पत्ति, विवाह आदि उत्सव, राज से सम्मान, कीर्ति, नानाप्रकार वस्त्रभूषण आदि की प्राप्ति होती है ॥६१॥ सूर्य से ६।८।१२ स्थान मे हो, पापग्रह युक्त हो तो वायु, शूल, तपेदिक, ज्वर, अतिसार आदि बीमारिया होती है ॥६२॥ बधन, कार्य-हानि, धननाश तथा महान भय होता है। परिवार मे अकस्मात् फलह तथा लडाई होती है ॥६३॥ अन्तर के आदि मे मित्र की हानि हो, मध्य मे कुछ सुख हो तथा अन्त मे क्लेश हो। यदि शनि नीच राशि का तथा पाप सयुक्त हो ॥६४॥ वो माला-पिता का वियोग यात्रा होती है। शनि यदि द्वितीयसप्तम का स्वामी हो वो अकाल मृत्यु का भय होता है ॥६५॥

उपाय - दूधवाली कालीगजका दान करे, मृत्युजप का जप करावे तथा छाग (बकरा) का दान करे तो यही दशा सभी सम्पत्ति की देनेवाली होती है ॥६६॥

### अथ रविदशायां बुधभुक्तिमा० १० दि० ६ तत्फलम्

सूर्यास्यातर्गते सौम्ये स्वोच्चे वा स्वर्लगेऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभस्ये युधे वर्गबलेर्पुति ॥६७॥  
 राज्यलाम महोत्साह दारपुत्रादिसौख्यकृत् ॥ महाराजप्रसवेन वाहनाबरभूषणम् ॥६८॥  
 पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्गृहगोधनसकुलम् ॥ भाग्ये लाभार्थिर्पुत्ते लाभवृद्धिकरो भवेत् ॥६९॥  
 भाग्यपचमकर्मस्ये सन्भाषो भवति ध्रुवम् ॥ स्वकर्मधर्मबुद्धिश्च मुहूर्त्पर्यद्विजावर्नम् ॥७०॥  
 धनधान्यादिसयुक्त विवाह पुत्रसम्भवम् ॥ दायेशात्कृमराशिस्ये सौम्यमुक्ती महत्सुखम् ॥७१॥  
 वैवाहिक यज्ञकर्म दानधर्मनपादिकम् ॥ स्थनाभासितपद्यानि नामद्वयमयाऽपि वा ॥७२॥  
 भोजनाबरभूषणपतिभरेशो भवेत्प्रर ॥ दायेशादशुभस्थाने रिच्छगे नीचगेऽपि च ॥७३॥  
 देहदोषा मत्तरतयो दारपुत्रादिपीडनम् ॥ भुक्त्यादौ दुःसमान्नेति मध्ये किञ्चित्सुखावहम् ॥७४॥  
 अते तु राजकीर्तिश्च गमनागमनतथा ॥ द्वितीये दूननाये तु देहदोषश्च ज्वरादिकम् ॥  
 विष्णुनाभसहस्र च ह्यप्रदान च कारयेत् ॥ रजतप्रतिपादान बुभुदासोऽप्यभासितो ॥७५॥



सूर्य दशा मे बुध का अन्तर १० मास ६ दिन

सूर्य की दशा मे बुध का अन्तर हो और बुध उच्च का या स्वगृही हो, लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान मे हो, शुभ वर्ग मे हो॥६७॥ तो राज्य लाभ, महान् उत्साह, स्त्री पुत्र आदि का सुखकारक होता है। राजा या बड़े आदमी की कृपा से बाहन, भूषण आदि की प्राप्ति होती है॥६८॥ पुण्य और तीर्थ फल की प्राप्ति, घर मे गौ आदि पशु होते है। आग्य स्थान मे बुध लाभेश से युक्त हो तो बहुत लाभदायक होता है॥६९॥ पचम, नवम, दशम स्थान मे बुध हो तो अपने व्यापार और धर्म की वृद्धि होती है तथा धर्म-कर्म मे निष्ठा होती है एव गुरु, ब्राह्मण की पूजा होती है॥७०॥ धनधान्य सयुक्त सुख होता है, विवाह तथा पुत्रोत्पत्ति होती है। सूर्य से शुभ राशि मे हो, सौम्य ग्रह युक्त हो तो महान् सुख होता है॥७१॥ विवाह सम्बन्धी मंगल कार्य, यज्ञ कर्म, दान, धर्म, जप आदिक होते है। तथा अभिनन्दन होता है॥७२॥ उत्तम भोजन, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते है। देवोपम सुख होता है। सूर्य से बुध १२ वे स्थान मे हो अथवा नीच राशि का हो॥७३॥ तो देह पीडा मन मे चिन्ता जलन और स्त्री पुत्र को पीडा होती है। अन्तर के आदि मे दुःख होता है। मध्य मे कुछ सुख प्राप्ति होती है॥७४॥ बुधान्तर के अन्त मे राजभय, यात्रा होती है। बुध यदि द्वितीय, सप्तम वा स्वामी हो तो वात, व्याधि, ज्वर आदि की बीमारी होती है।

उपाय -विष्णुसहस्रनाम स्तोत्र पाठ अन्नदान तथा बुधकी चादी की प्रतिमा का दान करना चाहिए। उससे आरोग्यता और सुख होगा॥७५॥

रविमध्ये केतुभुक्तिमासाः ४ दिना० ६ तत्फलम्

सूर्यस्पातर्गति केतौ देहपीडा मनोव्यथा ॥ अर्पव्यय राजकोप स्वजनादेरुपद्रवम् ॥७६॥  
 लग्नाधिपेन सयुक्ते आदौ सौख्य धनागमम् ॥ मध्ये तत्त्वेशमाप्नोति मृतवार्तागम वदेत् ॥७७॥  
 पलायनमध्यमे चैव दापेशात्यापसयुते ॥ कपोलदतरोगश्च भूजङ्घुलस्य समवम् ॥७८॥  
 स्थानविच्युतिरर्थस्य मित्रहानि पितुर्मुक्ति ॥ विदेशगमन चैव शत्रुपीडा महद्भयम् ॥७९॥  
 लग्नाधिपचये केतौ योगकारकसयुते ॥ शुभाशे शुभवर्गश्च शुभकर्मफलप्रदम् ॥८०॥  
 पुत्रदारादिसौख्य च सतोय प्रियवर्द्धनम् ॥ विचित्रवस्त्रलाभ च यशोवृद्धि सुखावहा ॥८१॥  
 द्वितीययून नाथे वा हृष्यमृत्युभय वदेत् ॥ दुर्गाजप च कुर्वीत छागदान तथैव च ॥८२॥  
 महामृत्युञ्जयजप कुर्याच्छान्तिमवाप्नुयात् ॥८३॥

सूर्य दशा मे केतु अन्तर मास ४ दिन ६ फल

सूर्य की दशा मे केतु का अन्तर हो तो देह मे पीडा, मन मे व्यथा, धन का नर्न, राज वा कोप तथा उपद्रव होते है॥७६॥ केतु यदि लग्नेश मे युक्त हो तो आरम्भ मे सुख और धन की प्राप्ति होती है। मध्य पूर्वोक्त क्लेश होते है। तथा अन्त मे मृत व्यक्ति (स्वसम्बन्धी) की खबर मिलती है॥७७॥ किन्तु ६।८।१२ स्थान मे हो अथवा सूर्य से ६।८।१० स्थान मे एव पापग्रह युक्त हो तो कपोल और दात की बीमारी होती है। तथा भूजङ्घुल की बीमारी भी नभव है॥७८॥ स्थान हानि, धन हानि, मित्र हानि, पिता की मृत्यु, विदेश गमन, शत्रु पीडा तथा महान् भय होता है॥७९॥ लग्न से केन्द्र मे कारक ग्रह मे युक्त केतु हो, शुभ नयमात्र मे और

शुभ वर्ग में हो तो किये हुए शुभ कर्म का फल होता है॥८०॥ और पुत्र, स्त्री का सुख, सन्तोष, विचित्र वस्त्र का लाभ, यश और सुख होते हैं॥८१॥ केतु द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है।

उपाय—दुर्गमिन्त्र जप तथा छाग दाना॥८२॥ अथवा महामृत्युञ्जय का जप करने से शान्ति होती है॥८३॥

### रविदशायां शुक्रान्तरदशा मा० १२ दि० तत्फलम्

सूर्यस्यातमति शुक्रे त्रिकोणे चन्द्रोऽपि वा ॥ स्वोच्चे मित्रस्ववर्गस्ये द्वाष्टस्त्रीभोग्यसपदाम् ॥८४॥  
 प्राभातरप्रमाणं च ब्राह्मणप्रभुदर्शनम् ॥ राज्यलाभं महोत्साहं छत्रचामरवैभवं ॥८५॥ गृहे  
 कल्याणसंपत्तिर्नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ विद्वुमादिरत्नलाभं मुक्तावस्त्रादिलाभकृत् ॥८६॥  
 चतुष्पाज्जीवलाभं स्याद्बहुधान्यघन्यादिकम् ॥ उत्साहं कीर्तिसंपत्तिर्नरवाहनसपदाम् ॥८७॥ सप्रात्  
 घघ्छाष्टमव्यये, शुक्रे वा बलवर्जिते ॥ राजकोपं मनःक्लेशं पुत्रस्त्रीघननाशनम् ॥८८॥ मुक्त्यादौ  
 वाहन मध्ये लाभं शुभकरो भवेत् ॥ अन्ते यशोनाशनं च स्थानभ्रंशमथापि वा ॥८९॥ बहुद्वेषनत  
 च स्वकुलाद्भोगनाशनम् ॥ द्वितीयघूननाये तु देहे जाड्यं मनोरुजम् ॥९०॥  
 रघ्नरिष्कसमायुक्तैरपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजपं चरेत् ॥९१॥ श्रेतो गा  
 महिषीं दद्याद्ब्रह्मण्यं च कारयेत् ॥९२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे सूर्यान्तरदशाफलकथन  
 नाम त्रयास्त्रिशोऽध्यायः ॥३३॥

### सूर्य दशा में शुक्र का अन्तर भास १२ फल

सूर्य की दशा में शुक्रका अन्तर हो, शुक्र लग्ने त्रिकोणमें या चन्द्रमाकी राशिमें हो, उल्बका अथवा मित्रकी राशिमें अथवा मित्रके या अपने वर्गमें हो तो इच्छित स्त्री, धन आदि प्राप्त होते हैं, प्रामान्तरकी यात्रा होती है, राजदर्शन होता है, अधिकारका लाभ, महान् उत्साह तथा पदवृद्धि होती है॥८५॥ घर में कल्याण, सम्पत्ति और नित्य मिष्टान्न भोजन प्राप्त होता है। हीरा, पत्रा आदि रत्न का लाभ, कीमती वस्त्र का लाभ होता है॥८६॥ बीपामा जीव का लाभ, बहुत धनधान्य का लाभ होता है। उत्साह, कीर्ति, सम्पत्ति, मोटर आदि सवारी का लाभ होता है॥८७॥ लग्न से १।८।१२ वे स्थान में शुक्र हो। (पाठक यह जान ले कि—बुध और शुक्र सूर्य से छठे आठवे अथवा केन्द्र, कोण ४।५।७।९।१० भावों में कभी भी नहीं होते) और बलहीन हो तो राजकोप, क्लेश, स्त्री, पुत्र घन की हानि॥८८॥ शुक्रान्तर के आदि में सवारी का लाभ और मध्य में शुभ, लाभ तथा अन्तउ के अन्त में अपमश (मिन्दा) अथवा स्थान हानि हो॥८९॥ तथा बन्धुओं से द्वेष, परिवार से बलह हो और २।७ का स्वामी शुक्र हो तो देहजाड्य की बीमारी होती है। मन में अशान्ति भी होती है॥९०॥ २।७ का स्वामी होते हुए भी ८।१२ के स्वामी में भी युक्त हो तो अकालमृत्यु होती है। इस दोष के निवे उपाय—महामृत्युञ्जयजप या रुद्रमन्त्र जप तथा श्वेत गौ का दान करो॥९१॥९२॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० सूर्यान्तरदशाफलकथन

१२ — नाम त्रयास्त्रिशोऽध्यायः ॥३३॥

१ टिप्पणी—सूर्य, बुध, शुक्र के अन्तरो मे यह ध्यान रखना चाहिए कि—सूर्य के बाद बुध की तथा बुध के बाद शुक्र की कथा है, अतः सूर्य से बुध का अन्तर अधिक से अधिक २८ अंश (दोनों तरफ) और शुक्र का ४८ अंश, इससे अधिक अन्तर नहीं होता, तब सूर्यसे बुध २-१२ से अधिक दूर नहीं होता और शुक्र ॥१११२२।२।३। से अधिक दूर नहीं होता। इसलिये सूर्यसे बुध, ३।४।५।६।७।८।९।१०।११ भावोंमे कभी नहीं होता और शुक्र ४।५।६।७।८।९।१० भावों मे कभी नहीं होता।

बुध और शुक्र परस्पर १०।११।१२।१।२।३।४ मे होते हैं, परन्तु ये भी परस्पर ५।६।७।८।९ भावों मे नहीं होते।

### अथ चन्द्रदशायां चन्द्रभुक्तिमासाः १० दि०तत्फलम्

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चंद्रे त्रिकोणेलाभगेपि वा ॥ भाग्यकर्माधिर्पर्युक्ते गजाश्रांवरसंकुलम् ॥१॥  
 देवतागुरुभक्तिश्च पुण्यश्लोकदिकीर्तितम् ॥ राज्यलाभं महत्सौख्यं यशोवृद्धिः सुखावहा ॥२॥  
 पूर्णचंद्रे पूर्णब्रह्मं सेनाधिपमहत्सुखम् ॥ पापयुक्तेऽथवा चंद्रे नीचे वा रिणक्षयच्छमे ॥३॥ तत्काले  
 धननाराः स्यात्स्थानच्युतिमयापि वा ॥ देहालस्यं मनस्तापं राजमंत्रिविरोधकृत् ॥४॥  
 मानुक्त्वंशंमनोदुःख निगडं बन्धुनाराणम् ॥ द्वितीयघ्ननाये तु रंघ्ररिणक्षयमन्विते ॥५॥  
 देहजाडघं महाभागमपमृत्योर्भयं भवेत् ॥ श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दानारोग्यमादिशेत् ॥६॥

#### चन्द्रदशा मे चन्द्रान्तर मास १० फल

चन्द्रमा स्वगृही, उच्च का तथा त्रिकोण या लाभस्थान मे हो और १।१० भाव के स्वामी से युक्त हो तो जातक का घर हाथी घोड़े आदि से युक्त हो ॥१॥ देवता गुरु की भक्ति तथा पवित्र वेद आदि का पाठ, राज्यलाभ, महान् सुख, यशोवृद्धि तथा सुख होता है ॥२॥ चन्द्रमा यदि पूर्णवली हो तो सेनाधिपति हो और महान् सुख हो ॥ चन्द्रमा पापयुक्त या नीच का हो और ६।१२ भाव मे हो ॥३॥ तो चन्द्रान्तर मे धननाश हो या स्थान हानि हो ॥ देह मे आलस्य, मन अशान्त, राजा या मन्त्री से विरोध होता है ॥४॥ माता को क्लेश, मन मे दुःख, कैद तथा बन्धु की हानि होती है ॥ यदि २।७ का स्वामी हो और ८।१२ के स्वामी से युक्त हो तो देह मे जड़ता, हानि तथा अपमृत्यु का भय होता है ॥ उपाय-दूधवाली श्वेत गौ का दान करे तो शान्ति आरोग्यता होती है ॥५॥६॥

#### अथ चन्द्रदशायां कुजभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते भौमे त्रिकोणेत्रिकोणगे ॥ सौभाग्यं राजसम्मानं वस्त्राभरणभूषणम् ॥७॥ यत्न-  
 कार्यार्थिर्षतिद्विस्तु मविष्यति न सशयः ॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च व्यबहारे जपो भवेत् ॥८॥  
 कार्यलाभं महत्सौख्यं स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे फलम् ॥ पच्छाष्टमव्यये भौमे पापयुक्तेऽथवा यदि ॥९॥  
 दायेशादगुमस्थाने देहार्तिपववीक्षिते ॥ गृहक्षेत्रादिहानिश्च व्यबहारं तपैव च ॥१०॥  
 मृत्यवर्गेषु ब्रह्मह् मूपालस्य विरोधनम् ॥ आत्मबंधुदिवीर्गं च नित्यं निष्ठुरभाषणम् ॥११॥  
 द्वितीय घ्ननाये तु रंघ्रे रंघ्राधिपो यदा ॥ तद्दोषपरिहारार्थं ब्राह्मणस्यार्चनं चरेत् ॥१२॥

चन्द्रदशा मे मंगल का अन्तर ७ मास फल

चन्द्रमा की दशा मे मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो ऐश्वर्य, राजा से सम्मान प्राप्ति, वस्त्र आभूषण की प्राप्ति होती है॥७॥ यत्न करने से कार्यसिद्धि, धनलाभ निःसंदेह होता है। भूकान तथा भूमि की वृद्धि होती है तथा व्यवहार मे जय होती है॥८॥ मंगल उच्चराशि मे या स्वगृही हो तो कार्य की सिद्धि तथा अधिक सुख हाँता है। यदि मंगल ६।८।१२ भाव मे हो॥९॥ अथवा चन्द्रमा से अशुभ स्थान मे हो तो और पट्टेण मे दृष्ट हो तो गृह (मकान), क्षेत्र (भूमि) की हानि तथा व्यापार मे भी हानि होती है॥१०॥ परिवार मे कलह (अथवा नौकरोमे कलह) राजसे विरोध अपने बन्धु का वियोग तथा नित्य बकवाद स्त्री कलह॥११॥ सप्तमेश द्वितीय भाव मे तथा अष्टमेश अष्टमभाव मे हो तो विशेष अनिष्ट की सम्भावना है। इस दोष की निवृत्ति के लिए ब्राह्मणो की पूजा तथा दान देना चाहिए॥१२॥

### अथ राहुमुक्तिमासाः १८ तत्फलमाह

चद्रस्यातन्ते राहौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोण्ये ॥ आदौ स्वल्पफल ज्ञेय शत्रुपीडा महद्भयम् ॥१३॥  
 चौराहिराजभीतिश्च चतुष्पाञ्जीवपीडनम् ॥ बन्धुनाश मित्रहानि मानहानि मनोव्यथाम् ॥१४॥ शुभपुत्रे शुभदृष्टे लग्नादुपचयेपि वा ॥ योगकारकसन्धे पत्र कार्पाससिद्धिकृत् ॥१५॥ नैर्ऋत्ये पश्चिमे भागे कञ्चित्प्रभुसमागमम् ॥ घाहनावरलाभ च इष्टकार्यसिद्धिकृत् ॥१६॥ दायेशाद्रिपुरधस्ये व्यये वा बलवर्जिते ॥ स्थानधरा मनोदुःख पुत्रक्षेप महद्भयम् ॥१७॥ राजकार्यकलाप च दरपीडा महद्भयम् ॥ वृश्चिकादिविषाद्द्वीतिशौराहिनृपपीडनम् ॥१८॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा वृश्चिक्ये सामोपि वा ॥ पुण्यतीर्थफलावगतिर्देवतादर्शनं महत् ॥१९॥ परोपकारधर्मादिपुण्यधर्मादिसप्रहम् ॥ द्वितीयदूनराशिस्ये देहबाधा भविष्यति ॥२०॥ छागवान प्रकुर्वीत देहारोग्य प्रजापते ॥२१॥

चन्द्रदशा में राहु अन्तर १८ मास फल

चन्द्रमा की दशा मे राहु का अन्तर हो, राहु लग्न से केन्द्र या त्रिकोणस्थान मे हो तो दशारम मे कुछ श्रेष्ठ, पश्चात् शत्रुपीडा तथा महान् भय हो॥१३॥ चोर, सर्प तथा राज से भय, गौ आदि पशु की पीडा, बन्धु नाश, मानहानि, मित्रहानि तथा मन मे अगानि होनी है॥१४॥ शुभपुत्रहोते सुख या दृष्ट हो अथवा लग्ने उपचय स्थान मे (३,५,११,१३) कारकहो से सम्बन्ध हो तो उद्योग की सिद्धि तथा धनलाभ होना है॥१५॥ नैर्ऋत्य दिशा या पश्चिम दिशा मे निमी बडे आदमी से मेल हो और उममे इच्छित कार्य की निधि तथा सवारी आदि वा लाभ हो॥१६॥ दायेश - चन्द्रमामे ६।८वे हो या १२ वे मे हो और बलरहित हो तो स्थान हानि, मन क्षेप, सन्तान से दुःख, महान् भय॥१७॥ राजकार्य हानि, स्त्री को पीडा, भय, मर्षादि मे भय, चोरभय तथा राजा मे भी पीडा होती है॥१८॥ चन्द्रमा मे केन्द्र या त्रिकोण मे तीमरे या साभस्थान मे हो तो पवित्र तीर्थ यात्रा देवदर्शन होना है॥१९॥ परोपकारी कार्य, पुण्य, दान, आदि श्रेष्ठ कार्य होने है। राहु दूमरे या मातवे भाव मे हो तो शरीर बच्य होता है॥२०॥ इसको शान्ति छाग (बकरा) के दान मे होनी है और दान के पत्र मे आगेव्यना होनी है॥२१॥

### अथ गुरुभुक्तिमासाः १६ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्गते जीवे लग्नात्केन्द्र त्रिकोणगे ॥ स्वगेहे लाभस्वोच्चे वा राज्यलाभ महोत्सवम् ॥२२॥  
 वस्त्राञ्जकारभूषाप्ति राजप्रीति धनागमम् ॥ इष्टदेवप्रसादेन गर्भाधानादिक फलम् ॥२३॥  
 शुभशोभनकार्याणि गृहेलक्ष्मी कटाक्षकृत् ॥ राजाश्रय धन भूमिगजवाजिसमन्वितम् ॥२४॥  
 महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ पष्ठाष्टमध्यये जीवे नीचे वाऽस्तगते यदि ॥२५॥  
 पापयुक्तेऽशुभ कर्म गुरुपुत्रादिनाशनम् ॥ स्थानभ्रश मनोदुःखमकस्मात्कलह ध्रुवम् ॥२६॥  
 गृहक्षेत्रादिनाश च वाहनावरनाशनम् ॥ दापेशात्केन्द्रकोणे वा बुध्निक्ये लाभगैःपि वा ॥२७॥  
 भोजनावरपञ्चादि महोत्साह करोति च ॥ आशादि सुखसप्ततिर्धैर्य वीर्यपराक्रमम् ॥२८॥  
 यज्ञवीर्यविवाहश्च राज्यधीधनसपद ॥ दापेशाद्रिपुरध्रुव्ये व्यये वा बलवर्जिते ॥२९॥ करोति  
 कुत्सिताश्च च विदेशगमन तथा ॥ भुक्त्यादौ शोभन प्रोक्तमते क्लेशकर भवेत् ॥३०॥  
 द्वितीय-यून-नाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्यं शिवसाहस्रक जपेत् ॥ स्वर्णदानमिति  
 प्रोक्त सर्वसपत्प्रदायकम् ॥३१॥

### चन्द्रदशा मे गुरु का अन्तर १६ मास फल

चन्द्रदशा मे बृहस्पति का अन्तर हो, लग्न से गुरु केन्द्र या त्रिकोण मे हो या स्वगृही, उच्च का, लाभ भाव मे हो तो राज्यलाभ तथा महोत्सव होता है ॥२२॥ वस्त्र, अलंकार, आभूषण की प्राप्ति, राजप्रीति, धनलाभ होता है। इष्टदेव की कृपा से सन्तान सुख होता है ॥२३॥ मंगल कार्य सम्पन्न होते है। घर मे लक्ष्मी की कृपा रहती है। राजा के आश्रय से धन, भूमि तथा सवारी का लाभ होता है ॥२४॥ इच्छित कार्य सिद्ध होते है। गुरु यदि लग्न से ६।८।१२ मे हो या नीचराशि मे अस्त हो ॥२५॥ पापग्रह युक्त हो तो अशुभ कार्य होते है। गुरु-पुत्र या गुरु तथा पुत्र आदि की हानि होती है। स्थानहानि चिन्ता तथा अचानक ही बलह होती है ॥२६॥ मकान, भूमि आदि की हानि, सवारी आदि का नाश होता है। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण मे तीसरे या लाभ स्थान मे हो ती ॥२७॥ उत्तम भोजन वस्त्र पशु आदि की प्राप्ति होती है। उत्साह बढ़ता है। भाई आदि से और सम्पत्ति धैर्य बल प्राप्त होता है ॥२८॥ यज्ञ आदि पुण्य कार्य, विवाह आदि मंगलकार्य, राजा के समान ऐश्वर्य, धनसम्पत्ति होती है। चन्द्रमा से ६।८।१२ स्थान मे तथा बलहीन हो ॥२९॥ तो कुभोजन और विदेशयात्रा होती है। अतर्दशा के आरंभ मे शुभ हो और अन्त मे क्लेश हो ॥३०॥ २।७ वा स्वामी यदि गुरु हो तो अपमृत्यु होती है ॥ इसकी शान्ति के लिए शिवसहस्रनामका पाठ बरे या करावे। भुवर्ण का दान बरे तो मय सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥३१॥

### अथ शनिभुक्तिमासाः १९ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्गते भवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वश्रेष्ठस्वाशगे चैव मदे तृणाशसपुते ॥३२॥  
 शुभदृष्टियुते वाऽपि लाभे वा बलसपुते ॥ पुत्रमिश्रायसपत्ति शूद्रप्रभूत्समागमम् ॥३३॥  
 व्यवसायात्कृताधिक्य गृहक्षेत्रादिवृद्धिदम् ॥ पुत्रलाभ च कस्यापि राजानुग्रहवैभवम् ॥३४॥  
 पष्ठाष्टमध्यये मदे नीचे वा धनगैःपि वा ॥ तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थे ज्ञान चैव तु वर्तनम्

॥३५॥ अनेकजनत्रासश्च शस्त्रपीडा भविष्यति ॥ दायेशाल्केन्द्रराशिस्ये त्रिकोणे बलमेपि वा  
 ॥३६॥ स्वचित्तसौख्य घनाप्तिश्च दारपुत्रविरोधकृत् ॥ द्वितीयचूनर घ्नस्ये देहबाधा भविष्यति  
 ॥३७॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥ कृप्या या महिषी दद्याद्दानेनारोग्य-  
 मादिशेत् ॥३८॥

### चन्द्रदशा मे शनि का अन्तर १९ मास फल

चन्द्रमा की दशा मे शनि का अन्तर हो और शनि लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे अथवा स्वक्षेत्र या उच्च मे हो एव परमोच्च का हो ॥२३॥ तथा शुभ दृष्टि या युक्त हो अथवा बलवान् होकर लाभस्थान मे हो तो पुत्र, मित्र, धन, सम्पत्ति प्राप्त होती है। तथा धनी शूद्र (या पषन आदि) से मेल होता है ॥३३॥ व्यापार से अधिक लाभ होता है। मकान भूमि आदि की वृद्धि होती है। पुत्रलाभ तथा कल्याण एव राजकृपा से ऐश्वर्य प्राप्त होता है ॥३४॥ शनि ६।८।१२ स्थान मे नीचराशि मे, द्वितीय भाव मे हो तो इसके अन्तर मे प्रथम तो पवित्र तीर्थ मे स्नान, देवदर्शन होता है ॥३५॥ अनेक शत्रुओं से भय तथा शस्त्राघात होता है। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण राशि मे बलवान् हो ॥३६॥ कुछ सुख, धनलाभ होकर स्त्री पुत्र से विरोध होता है। २।७।८ इन स्थानों मे हो तो देहकष्ट होता है ॥३७॥ इसकी शान्ति के लिए मृत्युञ्जय जप करो। काली गौ का दान देने से शान्ति और आरोग्यता होती है ॥३८॥

### अथ बुधभुक्तिमासाः १७ तत्फलम्

षट्स्यात्प्रति सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणो ॥ स्वर्स नवाराके सौम्ये तुगे वा बलमयुते ॥३९॥  
 घनायम राजमान प्रियवस्त्रादि लाभकृत् ॥ विद्याविनोदसङ्गोष्ठी ज्ञानवृद्धि मुखावहा  
 ॥४०॥ सत्तानप्राप्तिं सतोप वाणिज्याद्धनलाभकृत् ॥ याहनच्छत्रसयुक्त नानालकारनूपितम्  
 ॥४१॥ दायेशाल्केन्द्रकोणे वा लाभे वा धनमेऽपि वा ॥ विवाह यतदीक्षा च दानधर्मशुभादिषु  
 ॥४२॥ राजप्रोतिकर संघ विद्वज्जनसमागमम् ॥ मुक्तामणिप्रदानानि बहूनाबरमूषणम्  
 ॥४३॥ आरोग्यप्रोतिसौख्य च सोमपानादिक मुषम् ॥ दायेशाद्रिपुर घ्नस्ये व्यये वा नीचमेऽपि  
 वा ॥४४॥ तद्भुक्तिर्देहबाधा च कृपिणोऽभिमिनाशनम् ॥ कारागृहप्रवेश च दारपुत्रादिपीडनम्  
 ॥४५॥ द्वितीयचूननापे तु ज्वरपीडा महद्भयम् ॥ छागदान प्रकुर्वीत विष्णुमाहसञ्ज  
 जपेत् ॥४६॥

### चन्द्रदशा मे बुधान्तर १७ मास फल

चन्द्रदशा मे बुधान्तर हो, बुध लग्न मे केन्द्र, लाभ, त्रिकोण मे हो, स्वगृही म्वनवास, उच्च का शुभराशि मे तथा बली हो ॥३९॥ तो धनप्राप्ति, राजमान, सुन्दर वस्त्रादि प्राप्ति विद्या, वाच्य विनोद, मित्रगोष्ठी, ज्ञान की वृद्धि, मुखा।४०॥ सत्तानप्राप्ति सन्तोष, व्यापार मे लाभ, मवारो, छात्र, नाना अलंकार की प्राप्ति होती है ॥४१॥ दायेश, चन्द्रमा से केन्द्र मे, त्रिकोण मे, लाभस्थान मे या धनभाव मे हो तो विवाह यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म तथा शुभकर्म ॥४२॥ राजा मे प्रीति, विद्वज्जन का समागम, हीरा मोनी की प्राप्ति मवारो, आभूषण, आरोग्यता प्रीति, मुग् तथा आनन्दर पेय आदि की प्राप्ति होती है ॥४३॥

चन्द्रमा से ६।८।१२ में या नीचराशि में हो॥४४॥ तो बुधान्तर में देहवृष्ट, सेती, पशु, भूमि का नाश होता है। बँदखाने में बास, स्त्रीपुत्र को पीडा होती है॥४५॥ २।७ का स्वामी हो तो ज्वरपीडा तथा महान् भय होता है। उपाय-छाय दान करे मा विष्णुसहस्र नाम स्तोत्र का पाठ करे या करावे॥४६॥

### अथ केतुभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्गते केतौ केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ दुश्चिक्वे बलसयुक्ते धनलाभ महत्सुखम् ॥४७॥  
पुत्रदारारदिसौख्यं च विघ्नकर्म करोति च ॥ भुक्त्यादी धनहानि स्यान्मध्यमे मुखमाप्नुयात् ॥४८॥  
दायेशाल्केन्द्रलाभे वा त्रिकोणे बलसयुते ॥ स्वचित्फल दशादौ तु ह्यल्पसौख्यं धनागमम् ॥४९॥  
गोमहिष्यादिलाभं च भुक्त्यतेचार्थनाराणम् ॥ पापयुक्तेऽथ वा दृष्टे दायेशाद् धरिफौ ॥५०॥  
हीनशत्रुत्वकार्पाणि अकस्मात्कलहं ध्रुवम् ॥ द्वितीयदूनराशित्ये अनारोग्यं महद्भयम् ॥५१॥  
मृत्युजपं प्रकुर्वीत सर्वसपत्प्रवादकम् ॥५२॥

### चन्द्र दशा में केतुन्तर ७ मास फल

चन्द्रदशा में केतु का अन्तर हो केतु केन्द्र, लाभ त्रिकोण में तीसरे भाग में, बलवान् हो तो धनलाभ, महान् सुखा॥४७॥ स्त्रीपुत्र का सुख तथा कुछ विघ्नकारक भी होता है। अन्तरके आदि में धनहानि मध्य में सुख प्राप्त होता है॥४८॥ चन्द्रमा से केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभस्थान में तथा बलवान् हो तो दशा के आदि में कुछ कम रूप में सुख, धन की भी साधारण प्राप्ति होती है॥४९॥ गौ, भैस आदि का लाभ तथा अन्तर के अन्त में धन की हानि होती है। यदि केतु पापग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तथा चन्द्रमा से ८।१२ में हो तो ॥५०॥ हीन कार्य, शत्रु कार्य, अवस्मात् कलह होती है। द्वितीय सप्तम की राशि में हो तो नीरोगता तथा महान् भय होता है॥५१॥ उपाय-महामृत्युञ्जय जप करने से सब प्रकार शुभ होता है॥५२॥

### अथ शुक्रभुक्तिवर्षः १ मासाः ८ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्गते शुक्रे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि राज्यलाभं करोति च ॥५३॥  
महाराजप्रसादेन बाहनाबरभूषणम् ॥ चतुष्पाज्जीवलाभं स्याद्धारपुत्रादिवर्धनम् ॥५४॥  
नूतनागारनिर्माणं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ सुगन्धपुष्पदायादिरम्यस्त्र्यारोग्यसपदाम् ॥५५॥  
वशाधिपेन सयुक्ते वैहृत्सौख्यं महत्सुखम् ॥ सत्कीर्तिमुखसपत्तिगृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ॥५६॥  
मीचे वास्तगते शुक्रे पापग्रहयुतेऽसिते ॥ भूनाशं पुत्रमित्रादिनाशनं पत्निनाशनम् ॥५७॥  
चतुष्पाज्जीवहानिं स्याद्वाजद्वारे विरोधकृत् ॥ धनस्थानगते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुते ॥५८॥  
निधिलाभं महत्सौख्यं भूलाभं पुत्रसम्बन्धम् ॥ भाग्यलाभाधिपैर्दुक्ते भाग्यवृद्धिकरो भवेत् ॥५९॥  
महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिं मुखावहा ॥ देवब्राह्मणभक्तिभ्रमुक्ताविद्रुमलाभकृत् ॥६०॥  
दायेशाल्लाभगे शुक्रे त्रिकोणे केन्द्रगोपि वा ॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च वित्ताभं महत्सुखम् ॥६१॥  
दायेशादिपुरप्रस्थे ध्ये वा पापसयुते ॥ विदेशवासदुःस्तर्तिमृत्युचौरादिपीडनम् ॥६२॥

द्वितीयद्वूननाथे तु अपमृत्युभयं भवेत् ॥ तद्दोषविनिवृत्त्यर्थं रुद्रजापं च कारयेत् ॥६३॥ श्वेतां गां रजतं दद्याच्छांतिमाप्नोत्यसंशयः ॥६४॥

### चन्द्रदशा में शुक्रान्तर १ वर्ष ८ मास फल

चन्द्रमा की दशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र केन्द्र में त्रिकोण में, लाभ में, स्वगृही, उच्च का हो तो राज्यलाभ कारक होता है ॥५३॥ राजा की कृपा से वस्त्र, भूयण, घोडा आदि की प्राप्ति, स्त्री पुत्र परिवार की वृद्धि ॥५४॥ नया मकान बनाना, नित्य मिष्टान्न भोजन, बाग की सैर, सुन्दर स्त्री, आरोग्यता आदि की प्राप्ति होती है ॥५५॥ दशास्वामी चन्द्रमायुक्त हो तो, देहसौख्य, धनप्राप्ति, कीर्ति, सुख, सम्पत्ति, मकान, भूमि आदि की वृद्धि होती है ॥५६॥ शुक्र नीचराशि में, अस्त, पापग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो भूमिनाश, पुत्र मित्रनाश, भायनाश हो ॥५७॥ पशुहानि, राज में विरोध हो। शुक्र यदि स्वगृही, उच्च का होकर धनभाव में हो ॥५८॥ तो धरोहर की प्राप्ति, महान सुख, भूमिलाभ, पुत्रोत्पत्ति होती है। ९।११ के स्वामी से युक्त हो तो भाग्य वृद्धि होती है ॥५९॥ राजा की कृपा से इष्टसिद्धि, सुख, देवदाह्याण भक्ति, हीरा मोती आदि की प्राप्ति होती है ॥६०॥ शुक्र चन्द्रमा से त्रिकोण में, केन्द्र में लाभभाव में हो तो भूमि, मकान की वृद्धि, धनलाभ, अधिक सुख होता है ॥६१॥ चन्द्रमा से ६।८।१२ में पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो विदेशवास, दुःख क्लेश, मृत्यु, चौर तथा सर्पादि से पीडा होती है ॥६२॥ द्वितीय सप्तमभाव का स्वामी शुक्र हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए रुद्रमन्त्रजप या रुद्रि पाठ तथा श्वेत गौ का दान करे तो निश्चय शान्ति होती है ॥६४॥

### अथ रविभुक्तिमासाः ६ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते भानी स्वोच्चे स्वभ्रेप्रसंयुते ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा धने वा सोदरे बले ॥६५॥ नष्टराज्य धनप्राप्तिं गृहे कल्याणशोभनम् ॥ मित्रराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥६६॥ गर्भाधानफलप्राप्तिर्गृहे लक्ष्मीः यदाक्षकृत् ॥ भुक्त्यन्ते देहभालस्यं ज्वरपीडा भविष्यति ॥६७॥ दायेशादिपुरंध्रस्थे ज्येष्ठे वा पापसंयुते ॥ नृपचीरादिभीतिश्च ज्वररोगादिसम्भवम् ॥६८॥ विदेशगमनं चार्तिं लभते फलबैभवम् ॥ द्वितीयद्वूननाथे तु ज्वरपीडा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवपूजां च कारयेत् ॥६९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे चंद्रांतर्दशाफलकथनं

नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४॥

### चन्द्रदशा में सूर्यान्तर ६ मास फल

चन्द्रदशा में सूर्य का अन्तर हो, सूर्य उच्च का, स्वगृही केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभ में, दूसरे या तीसरे भाग में हो ॥६५॥ तो नष्टराज्य की प्राप्ति, धनलाभ, घर में सुगशान्ति, मित्र तथा राजा की कृपा से ग्राम लाभ, भूमिलाभ ॥६६॥ सन्तान की आशा, घर में लक्ष्मी की स्थिति हो, अन्तर के अन्त में आलस्य, वर्महीनता, ज्वर, पीडा होती है ॥६७॥ यदि चन्द्रमा में



पापयुक्त होकर ६।८।१२ में हो तो राजा चौर आदि का भय, ज्वर आदि पीडा ॥६८॥  
विदेशयात्रा तथा दुःख होता है। २।७ का स्वामी यदि सूर्य हो तो ज्वरपीडा होती है। इसकी  
शान्ति के लिए शिवपूजा करनी चाहिए ॥६९॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० भावप्र० चन्द्रान्तर्दशाफलकथन  
नाम चतुस्त्रिंशोऽध्याय ॥३४॥

### अथ कुजदशायां कुजांतरमा० ४ दि० २७ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते भीमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ लाभे वा धनसयुक्ते दुश्चिक्ये धनसयुते ॥१॥  
लग्नाधिपेन सयुक्ते राजाऽनुग्रहवभवम् ॥ लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ॥२॥  
पुत्रोत्सवादिसतोष गृहे गोशीरसकुलम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्शगे भीमे स्वाशे वा बलसयुते ॥३॥  
गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गोमहिष्याविलाभकृत् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिं सुखावहा ॥४॥  
पष्ठाष्टमध्यमे भीमे पापदृष्योगसयुते ॥ मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च प्रेष्ठाधिक्यं व्रणाद्भयम् ॥५॥  
चौरादिराजपीडा च धनधान्यपशुक्षयम् ॥ द्वितीये ह्यूननाथे तु देहजाड्य मनोरुजम् ॥६॥  
सदोषपरिहारार्थं रुद्रजाप्यं च कारयेत् ॥ अनड्वाहं प्रदद्याच्च कुजदोषनिवृत्तये ॥७॥ आरोग्यं  
फुलते तस्य सर्वसंपत्तिदायकम् ॥८॥

### मंगल की दशा में मंगल का अन्तर मा० ४ दि० २७ फल

मंगल दशा में मंगल का अन्तर हो और मंगल लग्न में केन्द्र में त्रिकोण में लाभ में, दूतरे,  
तीसरे भाव में ॥१॥ लग्नेश से युक्त हो तो राजा की कृपा में सम्पत्ति की वृद्धि हो और घर में  
लक्ष्मी स्थिर रहे। मष्ट हुआ ऐश्वर्य और धन का लाभ हो ॥२॥ पुत्र जन्म का उत्सव हो। घर  
में कल्याण, सतोष, गी आदि हो। मंगल उच्च वा स्वगृही, अपने नवाश में तथा बलवान्  
हो ॥३॥ तो मकान, भूमि की वृद्धि, गी, पशु आदि की वृद्धि हो। राजा या बड़े आदमी की  
कृपा से मनोरथ सिद्ध हो ॥४॥ मंगल यदि ६।८।१२ स्थान में पापग्रह की दृष्टि या योग हो तो  
मूत्रकृच्छ्र की बीमारी, पाव से भय हो ॥५॥ चोर आदि का भय राज में भय, धनधान्य, पशु  
का क्षय हो। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो देह जाड्य तथा मन में अशान्ति हो ॥६॥ इसकी  
शान्ति के लिये रुद्र जप करे। जल बैल का दान करे ॥७॥ तो मंगल का दोष दूर होता है।  
आरोग्यता होती है तथा सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥८॥

### अथ राहुभुक्तिमासाः १२ दिना० १८ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते राहौ स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ॥ गुप्तयुक्ते गुप्तेरष्टे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥९॥  
तत्काले राजसन्मानं गृहभूम्यादिलाभकृत् ॥ बन्धुप्रसूत्रलाभं स्थाप्यप्रवसापात्रलाभिकृत् ॥१०॥  
गयाज्जनफलावाप्तिं विदेशगमनं तथा ॥ पष्ठाष्टमध्यमे राहौ पापयुक्तेऽयं बीक्षिने ॥११॥  
चौराहिव्रणमीतिश्चतुष्पाञ्जीवनानाम् ॥ बातपित्तप्रथं चैव कारागृहनिवेशनम् ॥१२॥  
धनस्थानगतते राहौ धननाशं महद्भयम् ॥ द्वितीये सप्तमे वापि ह्यपमृत्युभयं महत् ॥१३॥ नगद्वार

प्रकुर्वीत देवब्राह्मणभोजनम् ॥ मृत्युञ्जयजपं कुर्वादापुरारोग्यमादिशेत् ॥१४॥

राहु का अन्तर मास १२ दिन १८ फल

मगल की दशा में राहु का अन्तर हो तथा राहु लग्न से उच्च राशि में, मूलत्रिकोण में हो ॥१॥ तो दशकाल में राजकुल में सम्मान, मकान, भूमि आदि का लाभ, स्त्रीपुत्र का लाभ तथा व्यापार से अधिक लाभ होता है ॥१०॥ गणा ज्ञान का फल मिलता है। विदेश की यात्रा होती है। ६।८।१२ में राहु पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो ॥११॥ चोर, सर्प, घाव आदि से भय होता है। चौपाया की हानि, वात पित्त व्याधि तथा कैंब होती है ॥१२॥ राहु घन स्थान में हो तो घन का नाश और महान् भय हो। राहु २।७ वे स्थान में हो तो अकाल मृत्यु का भय हो ॥१३॥ उपाय-सुवर्ण सर्प का दात, देवपूजा, ब्राह्मणभोजन, मृत्युञ्जय जप करने से आयु और आरोग्यता होती है ॥१४॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते जीवे त्रिकोणे केन्द्रोपि वा ॥ लाभे वा घनसंपुक्ते तुंगांशे स्वांशोपि वा ॥१५॥ सत्कीर्ती राजसम्मान घनधान्यस्य वृद्धिकृत् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत् ॥१६॥ दापेशात्केन्द्रराशिस्थे त्रिकोणे लाभोपि वा ॥ भाग्यकर्माधिर्पुक्ते वाहनाधिपसंपुक्ते ॥१७॥ सप्राधिपसनायुक्ते शुभारो शुभवर्गे ॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गृहे कल्याणसंपदः ॥१८॥ देहारोग्यं महत्कीर्तिर्गृहे गोकुलसंग्रहः ॥ चतुष्याज्जीवलाभःस्याद्दधवसायात्फलाधिकम् ॥१९॥ कलत्रपुत्रविभव राजसम्मानवैभवम् ॥ पष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वास्तगते यदि ॥२०॥ पापग्रहेणसंपुक्ते दृष्टे वा दुर्बले यदि ॥ चौराहिनुपभीतिश्च नित्ररोगादिसम्भवम् ॥२१॥ प्रेतबाधां भृत्पनाशं सोदराणां विनारानम् ॥ द्वितीयघ्नननाथे तु अपमृत्युज्वरादिकम् ॥ सद्वैद्यपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥२२॥

गुरु अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

मगलकी दशामें गुरुका अन्तर हो, गुरु केन्द्र, त्रिकोण या लाभमें अथवा धनस्थानमें हो अपने उच्चांशमें, अपने अंश में हो ॥१५॥ तो सत्कीर्ति, राजसम्मान, घनधान्यकी वृद्धि, सुख, सम्पत्ति, स्त्रीपुत्रका लाभ होता है। मगलसे युक्त केन्द्रमें, त्रिकोण या लाभमें हो, नवनेश, दशमेश तथा चतुर्थेशसे युक्त हो ॥१७॥ लग्नेश से युक्त, अपने अंश में, शुभ वर्ग में हो तो मकान, भूमि की वृद्धि होती है तथा कल्याण और सम्पत्ति की वृद्धि होती है ॥१८॥ शरीर निरोग, महान् कीर्ति, गौ आदि चौपाया का लाभ, व्यापार से विपुल धन लाभ होता है ॥१९॥ स्त्री और पुत्र, वैभव, राज सम्मान होता है। गुरु यदि ६।८।१२ स्थान में या नीचे का अथवा अस्त हो ॥२०॥ पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो, बलहीन हो तो चोर, सर्पादि, राजभय होता है। पित्त जनित रोग होता है ॥२१॥ प्रेत बाधा, नौकर की हानि, भाइयो का नाश होता है। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो ज्वर आदि रोग तथा अकाल मृत्यु का भय होता है। इगवी शान्ति के लिये 'शिवमहसनाम' स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥२२॥

### अथ शनिभुक्तिमासाः १३ दिना० ९ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते मदे स्वर्शे केन्द्रत्रिकोणगे ॥ मूलत्रिकोणकेन्द्रे वा तुगारो स्वाशगे षवि ॥२३॥  
 सप्राधिपतिना वापि शुभदृष्टियुतेष्वेते ॥ राज्यसौख्य यशोवृद्धि स्वप्राप्ते धान्यवृद्धिकृत् ॥२४॥  
 पुत्रपौत्रसमायुक्ते गृहे गौघनसग्रह ॥ स्ववारे राजसन्मान स्वमासे पुनवृद्धिकृत् ॥२५॥  
 नोचादिलेत्रगे मन्दे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥ भ्लेच्छवर्गप्रभुभय धनधान्यादिनाशनम् ॥२६॥  
 निगड बधन रोगमते क्षेत्रनिवासकृत् ॥ द्वितीयचूननाये तु पापयुक्ते महद्भयम् ॥२७॥ धननाश  
 च सचार राजद्वेष मनोरुजम् ॥ चौराग्निनुपपीडा च सहोदरघिनाशनम् ॥२८॥ बधुद्वेषकर चैव  
 जीवहानिश्च जापते ॥ अकस्माच्च मृतेर्भौति पुत्रदाराविपीडनम् ॥२९॥ कारागृहादिभीतिश्च  
 राजदण्डो महद्भयम् ॥ दायेशात्केन्द्रराशिस्थे लाभस्थे वा त्रिकोणगे ॥३०॥ विदेशयान लभते  
 दुष्कीर्तिर्विधिषा तथा ॥ पापकर्मरतो नित्य बहुजीवादिहिसक ॥३१॥ विक्रय क्षेत्रहानिश्च  
 स्थानभ्रशो मनोव्यथा ॥ मृधेष्वपजय चैव भूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥३२॥ दायेशात्पण्डरद्वे वा  
 व्यपे वा पापसयुते ॥ तदमुक्ती मरण ज्ञेय नृपचौरादिपीडनम् ॥३३॥ वातपीडा च  
 शूलादिजातिशत्रुभय भवेत् ॥३४॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥३५॥

### शनि का अन्तर मा० १३ दि० ९ फल

मंगल की दशा में शनि का अन्तर हो, शनि अपनी राशि में, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में, मूल त्रिकोण अथवा मूलत्रिकोण से केन्द्र में, परमोच्च या नवमाश म हो ॥२३॥ लग्नेश से युक्त, शुभ, दृष्टियुक्त बलवान् हो तो राजा के समान ऐश्वर्य यश की वृद्धि अपने देश में ही धन की वृद्धि हो ॥२४॥ पुत्र, पौत्र से युक्त, घर में गौ और धन का सग्रह हो। शनिवार को राज सन्मान हो। माघ, फाल्गुन में पुत्र हो ॥२५॥ शनि यदि ६।८।१२ स्थान में नीच या शत्रु नृह में हो तो भ्लेच्छ वर्ग के अधिकारी से भय हो धनधान्य का नाश हो ॥२६॥ कैद या हयालात हो। दशा के अन्त में रोग हो जिसके कारण अपने घर में ही रहना हो। द्वितीय मन्तम का स्वामी पापयुक्त हो तो महान् भय हो ॥२७॥ धन का नाश राजद्वेष मन में व्यथा चोर अग्नि, राजपीडा, सहोदर भाई का नाश ॥२८॥ बन्धुओं में द्वेष जीव की हानि अकस्मात् किसी की मृत्यु का भय, स्त्री पुत्र को पीडा हो ॥२९॥ कैद होने का भय हो, राजदण्ड का भय हो। मंगल से शनि केन्द्र में, लाभ या त्रिकोण में हो ॥३०॥ तो विदेश यात्रा हो और इस यात्रा में अनेक प्रकार की गुराइया हो। पाप कर्मरत तथा जीव हिसक होता है ॥३१॥ मकान, भूमि आदि का विक्रय, स्थान हानि, मन में व्यथा, मुकदमे में पराजय, मूनवृच्छ की बीमारी होती है ॥३२॥ मंगल से शनि ६।८।१२ स्थान में, पापग्रह युक्त हो तो गज, चोर से पीडा होती है ॥३३॥ वात व्याधि, शूल रोग, शत्रुभय या मृत्यु होती है ॥३४॥ इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप होना चाहिए ॥३५॥

### अथ बुधभुक्तिमासाः ११ दिना० २७ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते सौम्ये लग्नार्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ सत्कयश्चाजपादान धर्मवृद्धिर्महदश ॥३६॥  
 नीतिमार्गप्रसगश्च नित्य मिष्ठाप्रभोजनम् ॥ वाहनावरपश्चादिराजकर्म मुक्तानि च ॥३७॥  
 कृषिकर्मफल सिद्धिवारिणावरभूषणम् ॥ नीचे वास्तगते वापि षष्ठाष्टव्ययनेपि वा ॥३८॥

हृद्रोग मानहानिश्च निगड बहुमाशनम् ॥ दारपुत्रार्थनाश स्याच्चतुष्पाञ्जीवनाशनम् ॥३९॥  
 दशाधिपेन सयुक्ते शत्रुवृद्धिर्महद्भूषणम् ॥ विदेशगमनं चैव नानारोगस्तथैव च ॥४०॥ राजद्वारे  
 विरोधश्च कलहः सौम्यभुक्तिषु ॥ दायेशात्केद्रकोणे वा स्योन्वे युक्तार्थलाभकृत् ॥४१॥  
 अनेकधननाभ्यः राजसन्मानमेव च ॥ भूपालयोगे कुर्वते धनावरविभूषणम् ॥४२॥

**बुध का अन्तर मा० ११ दि० २७ फल**

मंगलकी दशा मे बुध का अन्तर हो, बुध लगने केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो सत्कथा धवण,  
 अज्ञापान्त्र का ग्रहण, धर्म बुद्धि तथा महान् यश होता है॥३६॥ नीति मार्ग मे प्रवृत्ति,  
 मिष्टान्न भोजन, वाहन वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, राजकर्म का सुयोग और सुख होता  
 है॥३७॥ खेती से अच्छा लाभ, सवारी, वस्त्र-भूषण प्राप्त होता है। बुध यदि मंगल से  
 ६।८।१२ भावो मे, नीच राशि मे, अस्त हो॥३८॥ तो हृदय रोग, मानहानि, बन्धुनाश, कैद,  
 स्त्रीपुत्र का नाश, चौपाया का नाश होता है॥३९॥ मंगल से युक्त हो तो शत्रु वृद्धि, महान्  
 भय, विदेश यात्रा तथा अनेक रोग होते है॥४०॥ राज द्वार मे विरोध, कलह होती है। मंगल  
 से बुध केन्द्र, त्रिकोण मे हो, उच्च का हो तो उचित धन का लाभ होता है॥४१॥ अनेक  
 सम्पत्ति का दृस्टी, राज सम्मान और धन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है॥४२॥

सूरिवाद्यमृदगादि सेनापत्य महत्सुखम् ॥ विप्राविमोढविमला वस्त्रवाहनभूषणम् ॥४३॥  
 दारपुत्रादिविभवगृहेलक्ष्मी कटाक्षकृत् ॥ दायेशात्पृष्ठरि फल्धेरध्रैवापापसयुते ॥४४॥ तद्वापे  
 मानहानि स्यात्क्रूरबुद्धिस्तु क्रूरवाक् ॥ चौराग्निनृपपीडा च मार्गे चौरभयादिकम् ॥४५॥  
 अकस्मात्कलहश्चैव बुधभुक्तौनसराय ॥ द्वितीयशूननापे तु महाव्याधिर्भयकरा ॥४६॥ अन्नदान  
 प्रकुर्वीत विष्णोर्नामसहस्रकम् ॥ सर्वसप्तप्रदं सौम्य सर्वारिष्टप्रशातये ॥४७॥

अनेक प्रकार के वाद्य यन्त्र तथा गान विद्या से सुख तथा सेनापति होता है। स्त्रियो का  
 सुल, वस्त्र भूषण प्राप्ति होती है॥४३॥ स्त्री पुत्र का सुख लक्ष्मी की स्थिरता होती है। मंगल  
 से बुध ६।८।१२ स्थान मे, पापग्रह युक्त हो॥४४॥ तो मानहानि क्रूर बुद्धि तथा जगडालू  
 होता है। चोर, अग्नि, राजा से पीडा और मार्ग मे चोर का भय होता है॥४५॥ अकस्मात्  
 कलह होती है। द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो भयकर व्याधि होती है॥४६॥ इसकी शान्ति  
 के लिये अन्नदान, विष्णुसहस्रनाम जप करने से सुख, सम्पत्ति और अरिष्ट शान्ति होती  
 है॥४७॥

**अथ केतुभुक्तिमासाः ४ दिना० २७ तत्फलम्**

पुत्रस्यातर्पते केतो त्रिकोणे केद्रगेपि वा ॥ दुःशिक्ष्ये लाभगेवापि शुभयुक्ते शुभेक्षिते ॥४८॥  
 राजानुग्रहातिश्च बहुसौख्य धनागमम् ॥ किञ्चित्कल दशादौ तु भूलाभ पुत्रलाभकृत् ॥४९॥  
 राजसलाभकार्याणि घतुष्याञ्जीवलाभकृत् ॥ योगकारकसस्थाने बलवीर्यसमन्विते ॥५०॥  
 पुत्रलाभो यशोवृद्धिर्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥ भृत्यवर्गधनप्राप्ति सेनापत्य महत्सुखम् ॥५१॥  
 भूपालमित्र कुर्वते पागावरविभूषणम् ॥ दायेशात्पृष्ठरिः फल्धेरध्रैवा पापसयुते ॥५२॥

कलहो दतरोगश्च चौरव्याघ्रादिपीडनम् ॥ ज्वराती सारकुण्डादिदारपुत्रादिपीडनम् ॥५३॥  
द्वितीयसप्तमस्थाने देहे व्याधिर्भविष्यति ॥ सन्मान जनसताप धनधान्यस्य  
प्रच्युतिम् ॥५४॥

केतु का अन्तर मा० ४ दि० २७ फल

मगल की दशा मे केतु का अन्तर हो, केतु लग्न से निकोण या केन्द्र मे, तीसरे अथवा  
लाभ स्थान मे हो, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो ॥४८॥ तो राजा का अनुग्रह हो, बहुत सुख और  
धन की प्राप्ति हो। दशा के आदि मे साधारण फल हो। भूमि और पुत्र का लाभ हो ॥४९॥  
राजा से मैत्री हो। चौपाया का लाभ होता है। यदि केतु बरक स्थान मे बलवान् होकर स्थित  
हो ॥५०॥ तो पुत्र लाभ यश वृद्धि लक्ष्मी की स्थिरता मुनीम आदि नौकर के द्वारा धन की  
प्राप्ति, राजकुल मे अधिवार तथा महान् सुख होता है ॥५१॥ राजा से मैत्री यज्ञ आदि धर्म  
कार्य होते है। मगल से बुध ६।८।१० स्थान मे पापग्रह युक्त हो ॥५२॥ तो बलह दन्तरोग,  
चोर, व्याघ्र आदि से पीडा ज्वर अतिसार कुष्ठ आदि की बीमारी तथा स्त्री पुत्र को पीडा  
होती है ॥५३॥ द्वितीय सप्तम स्थान मे हो तो अपन शरीर मे व्याधि परिवार मे सन्ताप,  
धनधान्य की हानि तथा सन्मान होता है ॥५४॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः १४ दिना० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गते शुभे केन्द्रलाभत्रिकोणमे ॥ स्योच्चे वा स्वर्सगे वापि शुभस्थानाधिपेऽप वा ॥५५॥  
राज्यलाभ महत्सौख्य यज्ञाश्चावरभूषणम् ॥ सप्राधिपेन सबधे पुत्रदारादिवर्धनम् ॥५६॥  
आयुषो वृद्धिरैश्वर्य भाग्यवृद्धिसुख भवेत् ॥ दार्यशात्केन्द्रलाभस्थे लाभे वा धनपेऽपि वा  
॥५७॥ तत्काले श्रियमाप्नोति पुत्रलाभ महत्सुखम् ॥ स्वप्रमोश्च महत्सौख्य श्वेतवस्त्रादिलाभ-  
कृत् ॥५८॥ महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभदम् ॥ भुक्तयतेफलमाप्नोति गीतनृत्यादिलाभ-  
कृत् ॥५९॥ पुण्यतीर्थगानलाभ कर्माधिपसमन्विते ॥ पापधर्मदयापुण्य तडाग कारयिष्यति  
॥६०॥ दार्यशाद्रघ्नरिष्कस्थे पटे वा पापसपुते ॥ करोति दुःखबाहुल्य बेहपीडा धनक्षयम् ॥६१॥  
राजचौरादिभीतिश्च गृहे कलहमेव च ॥ वारपुत्रादिपीडा च गोमहिष्यादिनामकृत् ॥६२॥  
द्वितीयदूमनाये तु देहवाधा भविष्यति ॥ श्वेता गा महिषी दद्यादापुरारोग्यमादिशत् ॥६३॥

शुक्र का अन्तर मा० १४ फल

मगल की दशा मे शुक्र का अन्तर हो शुक्र लग्न मे केन्द्र त्रिकोण या लाभ मे हो, उच्च वा  
स्वराशि मे या शुभ स्थानाधिपति हो ॥५५॥ तो राज्य लाभ महान् सुख हाथी, घोडा, वस्त्र  
आभूषण का लाभ होना है। लपेश मे सम्बन्ध हो तो स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है ॥५६॥ आयु  
वृद्धि, ऐश्वर्य, भाग्य वृद्धि और सुख होना है। मगल मे शुक्र केन्द्र, लाभ, केन्द्र मे लाभ स्थान या  
धन स्थान मे हो ॥५७॥ तो दशावान मे लक्ष्मी की प्राप्ति, पुत्र लाभ, महान् सुख होता है।  
श्वेत वस्त्र मे लाभ होता है। वन वृद्धि होती है ॥५८॥ राजा की कृपा मे ग्राम, भूमि का लाभ  
होता है। अन्तर दशा के अन्त मे विजय फल होता है। गाना, यज्ञाना आदि आनन्द के कार्य

होते है ॥५९॥ पुण्य तीर्थे मे ज्ञान का लाभ होता है। दशमेश से युक्त हो तो दया धर्म आदि पुण्य कार्य होते है ॥ जलाशय बनाता है ॥६०॥ मंगल से शुक्र ६।८।१२ स्थानो मे पापग्रह युक्त हो तो बहुत क्लेश दायक देह पीडा, धन क्षय ॥६१॥ राज-चौर का भय, परिवार मे कलह, स्त्री-पुत्र को पीडा, चौपाया की हानि होती है ॥६२॥ द्वितीय सप्तम का स्वामी होने से देह बाधा (बीमारी) होती है। दूध वाली सफेद गौ का दान करने से आरोग्य होता है ॥६३॥

### अथ रविभुक्तिमासाः ४ दिन ६ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेद्रेगे ॥ मूलत्रिकोणलाभे वा भाग्यकर्मेशसयुते ॥६४॥ तद्भुक्तौ वाहन कीर्ति पुत्रलाभ च विदति ॥ धनधान्यसमृद्धिं स्याद्गृहे कल्याणसपदं ॥६५॥ क्षेमारोग्य महद्वैर्यं राजपूज्य महत्सुखम् ॥ व्यवसायात्फलाधिक्यं विदेशे राजदर्शनम् ॥६६॥ दायेशात्वच्छरिणे वा व्यये वा पापसयुते ॥ देहपीडा मनस्ताप कार्यहानिर्महद्भयम् ॥६७॥ शिरोरोग ज्वरादिश्च अतीसारमथापि वा ॥ द्वितीयदूननाये तु सर्पज्वरविधाद्भयम् ॥६८॥ सुतपीडाकर चैव शान्तिं कुर्याद्यथाविधि ॥ देहा रोग्य प्रकुरुते धनधान्यसमृद्धिदम् ॥६९॥

### सूर्य का अन्तर मा० ४ दि० ६ फल

मंगल मे सूर्य का अन्तर हो सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण लाभ स्थान मे, अपने उच्च राशि मे स्वगृही, भाग्येश, कर्मेश से युक्त हो ॥६४॥ तो वाहन प्राप्ति, कीर्ति, पुत्र लाभ, धनधान्य वृद्धि, घर मे कल्याण, सम्पत्ति ॥६५॥ आरोग्यता हिम्मत, सुख, राज पूजा प्राप्त होती है। व्यापार से अधिक लाभ, विदेश यात्रा, राज दर्शन होता है ॥६६॥ मंगल से सूर्य ६।८।१२ स्थान मे पापग्रह युक्त हो तो देह पीडा, मन मे चिन्ता, कार्य हानि, महान् भय होता है ॥६७॥ सिर मे दर्द, ज्वर, अतिसार की बीमारी होती है। यदि सूर्य द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो ज्वर और सर्प के विष से भय होता है ॥६८॥ सन्तान को भी पीडा होती है। इसकी यथा विधि शान्ति करने से आरोग्यता धनधान्य की वृद्धि होती है ॥६९॥

### अथ चद्रभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

कुर्जस्यातर्गते चद्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेद्रेगे ॥ भाग्यवाहनकर्मेशालप्राधिपसमन्विते ॥७०॥ करोति विभुल राज्य गधमाल्याबरारविकम् ॥ तडाग योपुरादीनां पुण्यधर्मादिसग्रहम् ॥७१॥ विवाहोत्सवकर्माणि दारपुत्रादिसौख्यकृत् ॥ पितृमातृमुखावाप्ति गृहे लक्ष्मी षटाक्षरुत् ॥७२॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिसुखादिवम् ॥ पूर्णचद्रे पूर्णफल क्षीणे स्वल्पफल भवेत् ॥७३॥ नौचारित्थेष्वेष्टमे षष्ठे दायेशाद्रिपुरभ्रके ॥ मरण दारपुत्राणां कष्ट भूपतिनाशनम् ॥७४॥ पशुग्रान्यस्य चैव चौरादिरणभीतिकृत् ॥ द्वितीयदूननाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥७५॥ देहजाड्य मनोदुःख दुर्गालक्ष्मीजपचरेत् ॥ श्वेता मा महिषी दद्याद्दानेनारोग्यमादिरोत् ॥७६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भौममहादशांतरफलकथननाम  
पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५॥

## चन्द्रमा का अन्तर मा० ७ फल

मंगल की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा स्वराशि में उच्च का या केन्द्र में हो, ४।९।१० के स्वामी से युक्त तथा लग्नेण युक्त हो॥७०॥ तो विपुल ऐश्वर्य, सुन्दर वस्त्रादि की प्राप्ति, तालाब भकान आदि का बनाना, धर्म व्रतादि का सग्रह होता है॥७१॥ विवाहादि उत्सव कार्य, स्त्री-पुत्र का सुख, माता पिता का सुख तथा घर में लक्ष्मी की स्थिरता होती है॥७२॥ राजा की कृपा से मनोरथ की सिद्धि तथा सुख होता है। चन्द्रमा पूर्ण हो तो फल पूर्ण होता है। क्षीण हो तो फल साधारण होता है॥७३॥ चन्द्रमा नीच का, शत्रु गृह में, लग्न से या मंगल से ६।८ स्थान में हो तो स्त्री-पुत्र की मृत्यु, कष्ट, राजकोप, पशु, धान्य का क्षय, चोर, भय, लडाई, झगडा आदि होते हैं। चन्द्रमा द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥७५॥ अथवा देह जाड्य, चिन्ता, दुःख होता है।  
उपाय-दुर्गा-लक्ष्मी मन्त्र का जप, श्वेत गौ का दान करने से आरोग्य होता है॥७६॥

इति शीघ्र० पा० हो० शा० पू० भा० प्रका० भौमदशान्तरफलकथन नाम  
पञ्चत्रिंशोऽध्याय ॥३५॥

## अथ राहुदशायां राहुभुक्तिमासाः ३२ दिना० १२ तत्फलम्

कुलीरे वृश्चिके चैव कन्याया चापगोऽपि वा ॥ तद्भुक्ती राजसन्मान वस्त्रवाहनभूषणम् ॥१॥  
व्यवसायात्फलाधिक्य चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ प्रयाण पश्चिमे भागे वाहनाबरताभकृत् ॥२॥  
तप्राद्युपचयेराहौ शुभदृष्टियुतेऽक्षिते ॥ मित्राशे तुगताभेसे योगकारकसमुते ॥३॥ राज्यलाभ महोत्साह राजप्रीति शुभावहाम् ॥ गृहे कल्याणसपत्तिदारपुत्रादिवर्द्धनम् ॥४॥ पट्टाट्टमे व्यये राहौ पापयुक्तेऽथ क्षीणिते ॥ चौरादिवचनपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥५॥ राजद्वारजनद्वेष-  
दृष्ट बधुविनाशनम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥६॥ द्वितीयचूननाथे तु सप्तम-  
स्थानमाश्रित ॥ सदा रोग महाकष्ट शान्ति कुर्याद्यथाविधि ॥ आरोग्य सपदश्रेव भविष्यन्ति  
न सशय ॥७॥

## राहुदशा में राहु का अन्तर २ व ८ मा १२ दिन फल

राहु की महादशा में राहु का अन्तर हो, राहु ४।६।९।८ राशियों में हो तो अन्तर्दशा में राजसन्मान, मवारी, भूषण वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है॥१॥ व्यापार में लाभ अधिक हो। चौपाया का लाभ हो। पश्चिम दिशा की यात्रा हो। यात्रा से विशेष लाभ हो॥२॥ लग्न आदि केन्द्रस्थान में शुभदृष्टियुक्त या दृष्ट राहु हो। मित्रनवाश में, उच्च राशि में, लाभ हो, कारकग्रहयुक्त हो॥३॥ तो राज्य से लाभ, महान् उत्साह, राजप्रीति, तथा सुख होता है। घर में सुख शान्ति, स्त्री पुत्र की वृद्धि॥४॥ राहु यदि ६।८।१२ स्थान में पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो चोर आदि द्वारा आघात का भय तथा सर्वत्र अशान्ति होती है॥५॥ राज भय, बन्धु द्वेष, द्रष्टवन्धु की हानि, स्त्री पुत्र को पीडा तथा जनमात्र से पीडा होती है॥६॥ राहु २।७ भाव का स्वामी होकर सप्तमभाव में स्थित हो तो सदा रोगी तथा महाकष्ट होता है। इसकी यथाविधि शान्ति करना चाहिए। शान्ति करने से आरोग्यता और मपत्ति होती है॥७॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः २८ दिना० २४ तत्फलम्

राहोर्तर्गतं जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चै स्वक्षेत्रगे वापि तुगे स्वांशोशनेपि वा ॥८॥ स्थान-  
लाभं मनोघैर्यं शत्रुनाशं महत्सुखम् ॥ राजप्रीतिकरं सौख्यं महतीव समवनुते ॥९॥ दिने दिने  
वृद्धिरपि सितपक्षे शशी यथा ॥ बाह्नादिघनं भूर्गुं गृहे गोघनसंकुलम् ॥१०॥ नैर्ऋत्याः पश्चिमे  
भागे प्रयाणं राजदर्शनम् ॥ सुतकार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ॥११॥ उपकारो  
ब्राह्मणानां तीर्थयात्रादिकर्मणाम् ॥ बाहनं ग्रामलाभं च देवब्राह्मणपूजनम् ॥१२॥  
पुत्रोत्सवादिमतोषं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥१३॥  
शत्रुक्षेत्रे पापयुक्ते धनहानिर्भविष्यति ॥ कर्मविभ्रो मनोहानिः सा पतिश्री भविष्यति ॥१४॥  
कलत्रपुत्रपीडा च हृद्रोगं राजकार्यकृत् ॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा धनगेपि वा ॥१५॥  
बुध्रिष्ये बलसंपूर्णे गृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ॥ भोजनांबरपश्चादिवानधर्मजपादिकम् ॥१६॥ भुक्त्यते  
राजकोणच्च द्विमासं देहपीडनम् ॥ ज्येष्ठभ्रातुर्विनाशं च भ्रातृपित्रादिपीडनम् ॥१७॥  
दायेशात्पृष्ठरंघ्रे वा रिःके वा पापसंयुते ॥ तद्भुक्तौ धनहानिः स्याद्देहपीडा भविष्यति ॥१८॥  
द्वितीयचूननाये वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ स्वर्णस्य प्रतिमादानं शिवपूजा च कारयेत् ॥१९॥  
देहारोग्यं प्रकुले शांतिं कृपाद्विचक्षणः ॥२०॥

गुरु का अन्तर द० २ मा० ४ दि० २४ फल

राहु की दशा में गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र में, त्रिकोण में, स्वगृही, उच्चराशि में,  
अपने नवांश में हो ॥८॥ तो भक्तान का लाभ, मन में धैर्य, शत्रुनाश, महान् सुख, राज से प्रीति  
तथा आनन्द होता है ॥९॥ शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान सम्पत्ति की प्रतिदिन वृद्धि होती है।  
सवारी, धन तथा गौ आदि से घर भरा रहता है ॥१०॥ नैर्ऋत्य या पश्चिम दिशा में यात्रा,  
राजदर्शन, उचित कार्य की सिद्धि होकर पुन स्वदेश में आना होता है ॥११॥ ब्राह्मणों का  
उपकार, तीर्थयात्रा, बाहन, ग्रामलाभ तथा देव, ब्राह्मणपूजा ॥१२॥ पुत्रोत्सव में आनन्द,  
नित्य उत्तम भोजन होता है। यदि गुरु नीच राशि में, अलगत, ६।८।१२ भाव में हो ॥१३॥  
शत्रु राशि में, पापग्रह युक्त हो तो धनहानि होती है। काम में बाधा, मन में अशान्ति, यह  
अन्तर्दशा जातक की नाशकारक होती है ॥१४॥ स्त्री, पुत्र को पीडा, हृदय रोग तथा  
राजकार्यकारी होता है। दशास्वामी से केन्द्र, त्रिकोण में, लाभ तथा धनस्थान में ॥१५॥  
तीसरे स्थान में बलयुक्त हो तो गृह, भूमि की वृद्धि, वस्त्र, भूषण, पशु आदि का लाभ, दान,  
धर्म, जप आदि पुण्यकार्य होते हैं ॥१६॥ अन्तर के अन्त में राजकोप तथा दो मास तक  
देहपीडा ज्येष्ठभ्राता को मृत्यु, भ्राता, पिता आदि को पीडा होती है ॥१७॥ दशास्वामी राहु  
से ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो धनहानि, देहपीडा होती है ॥१८॥ द्वितीय, सप्तम का  
स्वामी गुरु हो तो अपमृत्यु होती है। उपाय-सुवर्ण मूर्ति (गुरु की) का दान तथा शिव की  
पूजा-अभिषेक करावे ॥१९॥ तो शरीर की आरोग्यता प्राप्त होती है ॥२०॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३४ दिना० ६ तत्फलम्

राहोर्तर्गतं मंदि लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चै मूलत्रिकोणे वा बुध्रिष्ये नामराशिगे ॥२१॥



तद्भुक्तिवाहन सेवा राजप्रोतिकर शुभम् ॥ विवाहोत्सवकार्याणि कृत्वा पुण्यानि भूरिश ॥२२॥  
 आरामकरणे युक्त तडाग कारयिष्यति ॥ शूद्रप्रभुवशादिष्ट लाभ गोधनसग्रहम् ॥२३॥ प्रयाग  
 पश्चिमे भागे प्रभुनूलाद्घनसय ॥ देहायास फलात्यत्व स्वदेशे पुनरेष्यति ॥२४॥ नीचारिक्षेत्रगे मदे  
 रध्रे वा व्यपेपि वा ॥ नीचारौ राजभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥२५॥ आत्मबधुमनस्ताप  
 दायावजनविग्रहम् ॥ व्यवहारे च कलहभक्तस्माद्भूषण लभेत् ॥२६॥ दायेशात्यच्छरि-फे वा  
 व्यपे या पापसपुते ॥ हृद्रोग मानहानि च विवाहे शत्रुपीडनम् ॥२७॥ अन्यदेशादिसार च  
 गुल्मबन्धाधिभागभवेत् ॥ कुमोजन कोडवादि जातिदुःखाद्भूय भवेत् ॥२८॥ द्वितीयघ्ननाये तु  
 ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ कृष्णां गा महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ॥२९॥

राहुवशा मे शनि का अन्तर व० २ मा० १० दि० ६ फल

राहु की दशा मे शनि का अन्तर हो, लग्न से शनि केन्द्र, त्रिकोण मे, उच्चराशि मे, मूलत्रिकोण मे, तीसरे भाव या लाभराशि मे ॥२१॥ शनि के अन्तर मे सवारी तथा नौकर चाकरो का सुख होता है। राजा से मैत्री तथा शुभकार्य होता है। विवाह आदि उत्सव के कार्य तथा अनेक पुण्यकार्य होते है ॥२२॥ बगीचा तथा तालाब करता है। शूद्र स्वामी द्वारा विशेष लाभ तथा गोधन का सग्रह होता है ॥२३॥ पश्चिम दिशा की यात्रा तथा स्वामी के कारण धनक्षय होता है। देहकष्ट, अधिक फल कम तथा पुन स्वदेश मे वापस आता है ॥२४॥ शनि यदि नीचराशि मे, शत्रुराशि मे ६।८।१२ भाव मे हो तो राजभय तथा स्त्री, पुत्र को पीडा होती है ॥२५॥ अपने बन्धु तथा मन को असतोष, परिवार मे विग्रह व्यापार मे कलह तथा अकस्मात् भूषण का लाभ होता है ॥२६॥ राहु से शनि ६।८।१२ मे पापयुक्त हो तो हृदय का रोग, मानहानि तथा विवाह मे शत्रुकृत बाधा हो ॥२७॥ अन्य देश यात्रा तथा उदर आदि मे गुल्मव्याधि होती है। सराव कोदव (कोदो) आदि अन्न का भोजन तथा जाति म अपमान का भय होता है ॥२८॥ २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। काली गौ के दान से आरोग्यता प्राप्त होती है ॥२९॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ३० दिना० १८ तत्फलम्

राहोरतर्पति सौम्ये भाग्ये वा स्वर्क्षणेपि वा ॥ तुगे वा केद्रराशित्ये पुत्रे वा बलनेपि वा ॥३०॥  
 राजप्रोग प्रकुरते गृहे कल्याणवर्धनम् ॥ व्यापारेण धनप्राप्तिर्विद्यावाहनमुत्तमम् ॥३१॥  
 विवाहोत्सवकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ सौम्यमासे महत्सीस्य स्ववारे राजदर्शनम् ॥३२॥  
 मुग्धपुण्यशय्यादि स्त्रीसौख्य चातिशोभनम् ॥ महाराजप्रसादेन धनलाभो महदृश ॥३३॥  
 दायेशात्केद्रलाभे वा दुश्चिन्त्ये भाग्यकर्मगे ॥ देहारोग्य हृदुत्साह इष्टसिद्धि सुलाबहा ॥३४॥  
 पुण्यश्लोकदिकोर्तिश्च पुराणश्रवणादिकम् ॥ विवाहो यज्ञदीला च दानधर्मदयादिकम् ॥३५॥  
 पष्ठाष्टमव्यये सौम्ये मदे राशिपुतेसिते ॥ दायेशात्यच्छरि-फे वा रध्रे वा पापसपुते ॥३६॥  
 देवब्राह्मणनिदा च भोगभाग्यविहीनभाक् ॥ सत्यहीनश्च दुर्बुद्धिश्चौराहितृपीडनम् ॥३७॥  
 अकस्मात्कलहश्रेव गुरुपुत्रादिनाशनम् ॥ अर्थव्ययो राजकोपो दारपुत्रादिपीडनम् ॥३८॥  
 द्वितीयघ्ननाये वा ह्यपमृत्यु तथाग्रथियम् ॥ तहोपपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रक जपेत् ॥  
 स्वगृहोक्तविधानेन शान्तिं कुर्याद्विचक्षणः ॥३९॥

राहुदशा मे बुधान्तर मा० ३० दि० १८ फल

राहु की दशा मे बुध का अन्तर हो। बुध लग्न से भाग्यस्थान मे, स्वराशि मे, उच्च मे, केन्द्र मे, पचम मे, बलवान् होकर स्थित हो॥३०॥ तो राजयोगकारक होता है। घर मे कल्याण की वृद्धि तथा व्यापार से धनप्राप्ति एव विद्या प्राप्ति तथा सकारी प्राप्ति होती है॥३१॥ विवाह आदि उत्सव के कार्य चौपाया (गौ आदि) पशु की प्राप्ति तथा बुध की राशि ३।६ के सौरमास मे महान् सुख और बुधवार को राजा या बडे आदमी से मेल होता है॥३२॥ सुगन्धित पुष्पयुक्त शय्या तथा सुन्दर स्त्री-सुख प्राप्त होता है। राजकृपा से धनलाभ तथा पशु प्राप्त होता है॥३३॥ राहु से बुध केन्द्र मे, लाभ मे, तीसरे ९।१० भाव मे हो तो देह मे आरोग्यता, हृदय मे उत्साह तथा इच्छित कार्य की सुख कर सिद्धि होती है॥३४॥ उसकी कीर्ति तथा यशमान होता है। पुराण आदि सद्गुणदेशो का श्रवण, विवाह, यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म, दया आदि शुभगुण प्राप्त होते है॥३५॥ बुध यदि ६।७।८।९ स्थान मे हो या इनके स्वामी से युक्त या दृष्ट हो अथवा राहु से ६।८।९ स्थान मे पापग्रह युक्त हो॥३६॥ तो देवब्राह्मण की निन्दा, उत्तमभोग तथा भाग्य से हीन होता है। सत्यहीन, दुर्बुद्धि तथा चौर, सर्प, राजा से पीडा होती है॥३७॥ अकस्मात् कलह तथा युध और पुत्र आदि का नाश होता है॥३८॥ द्वितीयेश तथा सप्तमेश हो तो धनहीन और अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए विष्णुसहस्रनाम का पाठ तथा गृह्यसूत्रोक्त विधान से शान्ति करना चाहिए॥३९॥

अथ केतुभुक्तिमा० १२ दिनानि १८ तत्फलम्

राहोरतर्गते केतौ भ्रमण राज्यकृद्धनम् ॥ वातज्वरादिरोगश्च चतुष्पाज्जीवहानिकृत् ॥४०॥  
अष्टमाधिपसयुक्ते देहजाड्य मनोरुजम् ॥ शुभयुक्ते शुभेर्दृष्टे देहसौख्य धनागम ॥  
राजसन्मानभूपाप्तिर्गृहे शुभकरो भवेत् ॥४१॥ सप्राधिपेन संबधे इष्टसिद्धिं मुखावहा ॥  
तामाधिपसमायुक्ते लाभो वा भवति ध्रुवम् ॥४२॥ चतुष्पाज्जीवलाभस्यात्केन्द्रे वायु त्रिकोणगे  
॥ १६स्थानगतं केतौ व्यये वा बलवर्जिते ॥४३॥ तद्भुक्तौ बहुरोगं स्याज्ज्वराहिरुपपोदनम् ॥  
पितृमातृवियोगश्च भ्रातृद्वेष मनोरुजम् ॥४४॥ स्वप्रभौश्च महत्काष्ठ वैषम्य चित्तहितकम् ॥  
द्वितीयसूननाये तु देहयाधा भविष्यति ॥ तद्वैषपरिहारार्थं छामदानं च कारयेत् ॥४५॥

राहुदशा मे केतु अन्तर १२ मा० १८ दिन फल

राहुकी दशामे केतुका अन्तर हो तो भ्रमण, राजसाहाय्यसे धनप्राप्ति, वातज्वर आदि रोग तथा चौपाया पशु आदि की हानि होती है। अष्टमेश युक्त हो तो देहजाड्य तथा क्लेश हो। शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो देहसौख्य, धनप्राप्ति, राजमान्यता, आभूषण प्राप्ति तथा घर मे शुभकारी होता है॥४१॥ सप्तेश मे युक्त हो तो मुषकर, इष्टसिद्धि होती है। लाभयुक्त हो तो निश्चय लाभ होता है॥४२॥ चौपाया जीव का लाभ होता है। यह शुभ फल केतु के केन्द्र या त्रिकोण मे होने से होते है। केतु ८।१२ मे बलहीन होकर स्थित हो॥४३॥ तो अन्तर मे अनेक रोग, चौर, सर्प, याव मे कष्ट हो। माता पिता वा वियोग हो। भ्रातृद्वेष, चिन्ता हो॥४४॥ अपने स्वामी से दृष्ट, विषमता, हिसावृत्ति होती है। २।७ का स्वामी हो तो देहकष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिये छाम (बकरा) वा दान करना चाहिए॥४५॥

### अथशुक्रभुक्तिमासाः ३६ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते शुके सप्राक्केन्द्रत्रिकोणे ॥ लाभे वा बलसयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत् ॥४६॥  
 विप्रमूलाद्भनप्राप्तिर्गौमहिष्यादिलाभकृत् ॥ पुत्रोत्सवादिस्तोष गृहे कल्याणसम्भवम् ॥४७॥  
 सन्मान राजसन्मान राज्यलाभ महत्सुखम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्षमे वापि तुगाशे स्वाशयेऽपि वा ॥४८॥  
 नूतन गृहनिर्माण नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ कलत्रपुत्रविभव मित्रसयुक्तभोजनम् ॥४९॥  
 अन्नदानप्रिय नित्य दानधर्मादिसप्रहम् ॥ महाराजप्रसादेन बाहनाबरभूषणम् ॥५०॥  
 व्यवसायात्फलाधिक्य विवाहो मीजिबधनम् ॥ यष्टाष्टमव्यये शुके नौचे शत्रुगृहे स्थिते ॥५१॥  
 मदारफणिसयुक्ते तद्भुक्ती रोगमादिशेत् ॥ अकस्मात्कलह चैव पितृपुत्रवियोगकृत् ॥५२॥  
 स्वबधुजनहानिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ॥ दायादिकलह चैव स्वप्रभो स्वस्य मृत्युकृत् ॥५३॥  
 कलत्रपुत्रपीडा च शूलरोगादि सभयम् ॥ दायेशात्केन्द्रराशिस्ये त्रिकोणे वा समन्विते ॥५४॥  
 लाभे वा धर्मराशिस्ये क्षेत्रपालमहत्सुखम् ॥ सुगन्ध-वस्त्रशय्यादि गानविद्यापरिधमम् ॥५५॥  
 छत्रचामरबाद्यादिगन्धपद्मरामन्वितम् ॥ दायेशाद्रिपुरधस्थे व्यये वा पापसयुते ॥५६॥  
 विषाहिन्पचौरादिभूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥ प्रमेहाद्दधिर रोग कुत्सितान्न शिरोरुजम् ॥५७॥  
 कारागृहप्रवेश च राजदडादनक्षयम् ॥ द्वितीयदूतनाथे वा दारपुत्रादिनाशनम् ॥५८॥  
 आत्मपीडा भय चैव ह्यपमृत्युस्तथा भवेत् ॥ दुर्गतिधमीजप कुर्षान्मृत्युनाशकरो भवेत् ॥५९॥

राहु मे शुक्र का अन्तर वर्ष ३ मास ० फल

राहु की महादशा मे शुक्र का अन्तर ही तथा शुक्रलग्न से केन्द्र त्रिकोण, लाभस्थान मे बलसयुक्त हो तो प्रबल शुभ योग होता है॥४६॥ किसी ब्राह्मण के कारण धन की प्राप्ति तथा गाय-भैस आदि की प्राप्ति होती है। पुत्रजन्म आदि उत्सव घर मे सुख शान्ति हो॥४७॥ समाज मे तथा राज मे प्रतिष्ठा, राजा के समान ऐश्वर्य तथा महान् सुख होता है। शुक्र यदि उच्च मे, स्वगृही, परमोच्च मे या अपने नवाश मे हो॥४८॥ तो नये मवान बने तथा नित्य मिष्टान्न भोजन, स्त्री, पुत्र का सुख एव मित्रगौष्ठी का सुख होता है॥४९॥ नित्य अन्नदान, धर्म होता है। राजा की वृषा से बाहन वस्त्र, भूषण होते है॥५०॥ व्यापार से अधिक लाभ तथा विवाह आदि मंगलकार्य, दीक्षा, आदि शुभकार्य होते है। यदि शुक्र ६।८।१२ मे ही, शत्रुराशि मे हो॥५१॥ मगल, शनि, राहु युक्त हो तो उसके अन्तर मे रोग होता है। अकस्मात् कलह होता है। पिता पुत्र वा वियोग होता है॥५२॥ अपने बन्धुजन की हानि होती है। स्वजाति से पीडा, परिवार मे कलह तथा गृहस्वामी की मृत्यु होती है॥५३॥ स्त्री पुत्र को पीडा, शूलरोग होता है। राहु से शुक्र केन्द्र या त्रिकोण मे हो॥५४॥ लाभ मे या नवम मे हो तो बडे अधिकारी के समान सुख ही, सुगन्धित वस्त्रयुक्त शय्या तथा गान विद्या वा रसिक होता है॥५५॥ छत्र-चमर युक्त सिंहासन एव सुगन्ध पुष्पयुक्त रहता है। राहु से शुक्र ६।८।१२ स्थान मे पापग्रह युक्त हो तो॥५६॥ विष, मर्ष, राज, चौर से भय तथा मूत्र वृच्छ्र आदि बीमारी मे महान् भय होता है। प्रमेह मे रक्तस्राव तथा निकृष्ट अन्न वा भोजन, शिरदर्द॥५७॥ वैदधानो मे वाम, राजदड से धनक्षय होता है। द्वितीय मन्त्र वा स्वामी हो तो स्त्री पुत्र वा नाश होता है॥५८॥ अपने शरीर मे पीडा, भय, तथा अपमृत्यु होती है। 'दुर्गतिधमी' मन्त्र के जप से रक्षा होती है॥५९॥

अथ रविभुक्तमासाः १० दिनानि २२ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेद्रेण॥ त्रिकोणे लाभे वापि तुगाशे स्वाशयेऽपि वा ॥६०॥

शुभग्रहेण सदृष्टे राजप्रीतिकर शुभम् ॥ धनधान्यसमृद्धिश्च ह्यल्पसौख्यं सुखावहम् ॥६१॥  
 अल्पशामाधिपत्यं च स्वल्पलामो भविष्यति ॥ भाग्यलप्रेषसयुक्ते कर्मणो निर्रीक्षिते ॥६२॥  
 राजाश्रयो महाकीर्तिर्विदेशगमनं महत् ॥ देशाधिपत्यमोगं च गजाश्रावरसूयणम् ॥६३॥  
 मनोभीष्टप्रदानं च पुत्रकल्याणसम्बन्धम् ॥ दापेशादिकरधस्ये षष्टे वा नीचगेऽपि वा ॥६४॥  
 ज्वरातिसाररोगं च कलहं राजवृद्धिपत्नम् ॥ प्रमाणं शत्रुवृद्धिं च नृपचौराग्निपीडनम् ॥६५॥  
 दापेशात्केद्रकोणे वा दुश्चिन्त्ये लाभोऽपि वा ॥ विदेशे राजसन्मानं कल्याणं च शुभावहम् ॥६६॥  
 द्वितीयदूतनाथे तु महारोगो भविष्यति ॥ सूर्यप्रमाणशान्तिं च कुर्यादारोग्यसम्भवात् ॥६७॥

### राहुदशा मे सूर्यान्तर मास १० दिन २२ फल

राहु की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो और सूर्य जप्त से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ, स्थानो मे, उच्चराशि, स्वराशि या परमोज्व अथवा अपने नवाग मे हो ॥६०॥ शुभग्रह से दृष्ट हो तो राजप्रीति प्राप्त होती है। धनधान्य की वृद्धि, साधारण सुख होता है ॥६१॥ साधारण अधिकार, मध्यम लाभ होता है। भाग्येश तथा लोभेश से युक्त हो, दक्षमेज से दृष्ट हो ॥६२॥ तो राजा का आश्रय, महान् कीर्ति, विदेश यात्रा होती है। देशाधिपति का सम्योग होता है तथा हाथी, घोडा, आदि आदि ऐश्वर्य होता है ॥६३॥ मनोरथ सिद्ध होते हैं, पुत्र का सुख प्राप्त होता है। राहु से सूर्य ६।८।१२ मे नीच राशिगत हो तो ॥६४॥ ज्वर, अतिसार रोग, कलह, राजद्वेष, यात्रा, शत्रुवृद्धि, सजा, चोर तथा अग्नि से हानि होती है ॥६५॥ राहु से सूर्यकेन्द्र, त्रिकोण मे या तीसरे तथा लाभस्थान मे हो तो विदेश मे राजा से सन्मान, कल्याण तथा शुभ होता है ॥६६॥ दूसरे मातवे का स्वामी हो तो महारोग होता है। सूर्य की यथायोग्य शान्ति करने से आरोग्यता प्राप्त होती है ॥६७॥

### अथ चंद्रभुक्तिमासाः १८ तत्फलम्

राहोरतगति चन्द्रे स्वक्षेत्रे स्वोज्ज्वलेऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मित्रसौ शुभसयुते ॥६८॥ राजत्व राजपूज्यत्व धनार्थं धनलाभकृत् ॥ आरोग्यभूषणं चैव मित्रस्त्रीपुत्रसपत्न ॥६९॥ पूर्णचर्दं पूर्णफलं राजप्रीत्या शुभावहम् ॥ अश्वबाहनलाभं स्याद्गृहक्षेत्रादि वृद्धिकृत् ॥७०॥ दापेशात्सुखसाग्यस्ये केन्द्रे वा लाभोऽपि वा ॥ सन्मीकटाक्षसिद्धिनि गृहे कल्याणसम्भवं ॥७१॥ षष्ठत्कार्यसिद्धिं स्याद्वनधान्यसुखावहम् ॥ सत्कीर्तिलाभसन्मानं देव्याराधनमाचरेत् ॥७२॥ दापेशात्षष्ठरत्नस्ये ध्यये वा बलसयुते ॥ पिशाचभुद्रव्याघ्रादिगृहक्षेत्रार्थनाशनम् ॥७३॥ मार्गे चौरमयं चैव षष्ठाधिक्यं महोदरम् ॥ द्वितीयदूतनाथे तु अपमृत्युस्तथा भवेत् ॥७४॥ श्वेता वा महिषी दद्याद्दानमारोग्यमाचरेत् ॥७५॥

### राहुदशा मे चन्द्रातर १८ मास फल

राहु की दशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण तथा लाभस्थान मे उच्चराशि वा या स्वगृही, मित्रगृही अथवा शुभग्रहयुक्त हो तो ॥६८॥ राजा के समान वा राजपूज्य तथा धन लाभकारी होता है। आरोग्यता तथा आभूषण की प्राप्ति, मित्र, स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥६९॥ चन्द्रमा पूर्ण हो तो पूर्णसुख तथा राजा की कृपा मे शुभ होता है। पौंड्रे की मयारी तथा मरान, भूमि की वृद्धि होती है ॥७०॥ राहु मे चन्द्रमा ६।९ मे केन्द्र मे या लाभ मे हो तो घर मे सन्मी का वास होता है तथा मुग प्राप्ति रहती है ॥७१॥ मनोरथ सिद्ध होने है। धनधान्य का सुख होता है। सत्कीर्ति लाभ सन्मान तथा देवी का देवता का आराधन होता है ॥७२॥ राहुमे चन्द्रमा ६।८।१२ मे बलयुक्त हो तो पिशाच प्रादि षष्ठ्याघ्रादि तथा गृह,

भूमि, धन की हानि होती है ॥७३॥ मार्ग में चोरी तथा फोडा-फुन्ती एव उदरवृद्धि होती है।  
द्वितीय सप्तमाधीश हो तो अपमृत्यु होती है ॥७४॥ श्वेत गौ का दान करने से आरोग्यता प्राप्त  
होती है ॥७५॥

### अथ कुजभुक्तिमासाः १२ दिना० १९ तत्फलम्

राहोरतर्गते भीमे लग्नात्साम्रिकोणगे ॥ केद्रे वा शुभसंयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेणि वा ॥७६॥  
नष्टराज्यधनप्राप्तिर्वृहक्षेत्राभिवृद्धिकृत् ॥ इष्टदेवप्रसादेन सतानमुखभोजनम् ॥७७॥ निप्रमो-  
ज्यान्महत्सौख्य भूषणाश्चावरादिकृत् ॥ दायेशात्केद्रकोणे वा दुश्चिक्ये सामगेऽपि वा ॥७८॥  
रक्तवस्त्रादिलाभः स्यात्प्रयाणः राजदर्शनम् ॥ पुत्रवर्गेषु कल्याण स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ॥७९॥  
सेनापत्य महोत्साह भ्रातृवर्गधनानाम् ॥ दायेशाद्घरिफे वा षष्ठे पापसमन्विते ॥८०॥  
पुत्रदारादिहानिश्च सोदराणां च पीडनम् ॥ स्थानभ्रश बहुवर्गदारपुत्रविरोधनम् ॥८१॥  
चौराहिव्यभूतिश्च सोदराणां च पीडनम् ॥ आदौ क्लेशकरं चैव मध्याते सौख्यमाप्नुयात् ॥८२॥  
द्वितीयघननाथे तु देहालस्य महद्भयम् ॥ अनङ्वाह च गा दद्यादारोग्यं च भविष्यति ॥८३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे विशोत्तर्या राहोरतर्दशाफलकथन  
नाम षट्त्रिंशोऽध्याय ॥३६॥

### राहुदशा मे भीमान्तर मास १२ दिन १८ फल

राहु की महादशा में मंगल का अन्तर हो और मंगल लग्न से केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह युक्त  
उच्च का या स्वगृही हो ॥७६॥ तो नष्टराज्य तथा धनप्राप्ति हो। मवान भूमि की वृद्धि हो।  
इष्टदेव की कृपा से पुत्र सन्तान का सुख तथा सुन्दर भोजन हो ॥७७॥ भोग सामग्री से महान्  
सुख, भूषण घोडा आदि की सवारी हो। राहु से मंगल केन्द्र त्रिकोण लाभ तथा तृतीयभाव में  
हो ॥७८॥ तो जाल वस्त्र से लाभ हो यात्रा तथा राजदर्शन एव पुत्रवर्ग में कल्याण तथा अपने  
स्वामी से महान् सुख होता है ॥७९॥ सेनापतित्व महान् उत्साह हो भ्रातृवर्ग से धनप्राप्ति हो।  
राहु से मंगल ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो ॥८०॥ तो स्त्री पुत्र की हानि भ्राता से पीडा  
स्थानहानि तथा बहुवर्ग स्त्रीपुत्र से विरोध होता है ॥८१॥ चौर सर्प फोडा-फुन्ती का भय,  
भ्राताओं को पीडा होती है। अन्तर के आदि में क्लेश तथा मध्य और अन्त में सुख होता है ॥८२॥  
द्वितीय सप्तम का स्वामी होने से आलस्य तथा भय होता है। बैल का दान करने से आरोग्यता  
होती है ॥८३॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भाष्यप्रवा० विशोत्तरीदशाया  
राहोरन्तर्दशा कथन नाम षट्त्रिंशोऽध्याय ॥३६॥

### अथ गुरुदशाया गुरुभुक्तिमासाः २५ दिना० १८ तत्फलम्

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे लग्नात्केद्रत्रिकोणगे ॥ अनेकराजाधीशश्च सपन्नो राजपूजित ॥१॥  
गोमहिष्यादिलाभश्च वस्त्रवाहनभूषणम् ॥ नूतनस्थाननिर्माणं हर्म्यप्रारारसयुतम् ॥२॥  
गजातैर्भयसपत्तिभाग्यकर्माणि सयुते ॥ ब्राह्मणप्रभुसन्मान सभानप्रभुदर्शनम् ॥३॥ स्वप्रभो  
स्वफलाधिक्य दारपुत्रादिलाभकृत् ॥ नीचाशे नीचराशिस्ये षष्ठाष्टव्यदराशिगे ॥४॥

नीचसग महादुःख दायदजनविग्रहम् ॥ कलह न विचारोऽस्य स्वप्रमुष्वपमृत्युकृत् ॥५॥  
पुत्रदारवियोग च धनधान्यार्थहानिकृत् ॥ सप्तमाधिपदोषेण देहबाधा भविष्यति ॥६॥  
तदोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रक जपेत् ॥ रुद्रजाप्य च गोदान कुर्यादिष्ट समाप्नुयात् ॥७॥

गुरुमहादशा मे गुरु का अन्तर मा० २५ दि० १८ फल

गुरुमहादशा मे गुरु का ही अन्तर ही और गुरु सप्त से केन्द्र त्रिकोण मे उच्चराशि मे, स्वराशि मे हो तो अनेक राजाओ का राजा ऐश्वर्यवान् राजपूज्य होता है॥१॥ गौ, भैस आदि का लाभ, वस्त्र, वाहन, भूषण का लाभ नये महल तथा अन्य स्थानों का निर्माण होता है॥२॥ हाथी, घोड़े रहे, इतना ऐश्वर्य, महान् सम्पत्ति सम्पन्न होता है। ब्राह्मण, साधु का सम्मान, राजाओं से मित्रता होती है॥३॥ अपने स्वामी से अधिक फल होता है। स्त्री, पुत्र का लाभ होता है। बृहस्पति यदि नीचग्रह के साथ हो नीच नवमास मे हो ६।८।१२ राशि मे हो॥४॥ तो नीच जाति के मनुष्यों से सग महान् दुःख परिवार मे विग्रह तथा कलह और इतने नीच विचार हो जाते है कि अपने स्वामी को मारने मे भी नहीं हिचकते॥५॥ स्त्री, पुत्र से वियोग, धनधान्य की हानि होती है। गुरु यदि सप्तमेश हो तो देह बाधा होती है॥६॥ इसकी शान्ति के लिये 'शिवसाहस्रनाम' का पाठ, रुद्र जप तथा गोदान करे तो इच्छित मनोरथ सिद्ध हो॥७॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३० दिना० १२ तत्फलम्

जीवस्यातर्गते भदे स्वोऽस्य स्वलेत्रमित्रगे ॥ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणस्ये लाभे वा बतसपुते ॥८॥  
राज्यलाभ महत्सौख्य वस्त्राभरणसपुतम् ॥ धनधान्यादिलाभ च स्त्रीलाभ बहुसौख्यकृत् ॥९॥  
वाहनाबरपश्वादिमूलाभ स्थानलाभगम् ॥ पुत्रमित्राविसौख्य च नरबाहनयोगकृत् ॥१०॥  
नीलवस्त्रादिलाभश्च नीलाभ लभते च स ॥ पश्चिमा दिशमाश्रित्य प्रयाण राजदर्शनम् ॥११॥  
अनेकपानलाभ च निर्दिश्य भद्रभुक्तिषु ॥ लग्नात्पञ्चाष्टमे भदे व्यये नीचेऽन्तेऽप्यरी ॥१२॥  
धनधान्यादिनाशश्च ज्वरपीडा मनोहलम् ॥ स्त्रीपुत्रादियु पीडा वा वणात्यादिकमुद्भवेत् ॥१३॥  
गृहे स्वगुप्तकार्याणि भृत्यवगादि पीडनम् ॥ गोमहिष्यादिहानिश्च बहुद्वेषो भविष्यति ॥१४॥  
दायेसात्केन्द्रकोणस्ये लाभे वा धनतोऽपि वा ॥ मूलाभश्चार्थलाभश्च पुत्रलाभमुख भवेत् ॥१५॥  
गोमहिष्यादिलाभश्च शूद्रमूलाद्धनप्रदम् ॥ दायेदशाद्रिपुरघस्ते व्यये वा पाप सपुते ॥१६॥  
धनधान्यादिनाश च बहुमित्रविरोधकृत् ॥ उद्योगभगो वेहार्ति स्वजनाना महद्भयम् ॥१७॥  
द्विसप्तमाधिपे भदे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ सद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रक जपेत् ॥१८॥ कृष्णा गा महिषीं दद्याद्दानेनातोऽन्यमादिशेत् ॥१९॥

बृहस्पति की दशा मे शनि का अन्तर मा० ३० दि० १२ फल

बृहस्पति की दशा मे शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान मे हो तथा उच्च का स्वदेशी या मित्र राशि मे हो एव बलवान् हो॥८॥ तो राज्य लाभ, महान् सौख्य, वस्त्र आभरण की प्राप्ति, धन धान्य का लाभ, स्त्रीलाभ तथा बहुत सुख होता है॥९॥ वाहन, वस्त्र, पशु भूमि, स्थान, मकान का लाभ होता है॥ पुत्र, मित्र वा सुख होता है॥ नर

वाहन (पालकी, रिक्सा) का योग होता है॥१०॥ नीले रंग के उत्तम वस्त्र की प्राप्ति तथा नीले रंग का घोडा प्राप्त होता है। पश्चिम दिशा की यात्रा तथा गजदर्शन होता है॥११॥ अनेक सवारी भी प्राप्त होती है। यदि शनि लग्न से ६।८।१२ स्थान में नीचराशि का अथवा शत्रु राशि में तथा अस्त हो॥१२॥ तो धनधान्य का नाश, ज्वर पीडा, मन में चिन्ता, स्त्री पुत्र को रोग, फोडा, फुन्सी, दर्द आदि की बिमारी होती है॥१३॥ घर में अशुभ कार्य, नौकरो में बीमारी, गौ आदि की हानि तथा बन्धुओं से द्वेष होता है॥१४॥ बृहस्पति से यदि शनि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धनभाव में हो तो भूमि और धन का लाभ तथा पुत्र का लाभ होता है॥१५॥ गौ भैस आदि चौपाया का लाभ होता है। किसी शूद्र जाति के पुरुष द्वारा लाभ होता है। गुरु से शनि ६।८।१२ में पापग्रहयुक्त हो॥१६॥ तो धनधान्य का नाश, भाई और मित्र से विरोध, व्यापार भग देह में पीडा स्वजनो से महान् भय होता है॥१७॥ शनि यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये विष्णुसहस्रनाम का पाठ॥१८॥ तथा काली गौ का दान करो॥१९॥

### अथ बुधभुक्तिमासा २७ दिना० ६ तत्फलम्

नीचस्यातमति सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्धगे वापि दशाधिपसमन्विते ॥२०॥ अर्थलाभ देहसौख्य राज्यलाभ महत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धि सुखावहा ॥२१॥ वाहनावरपश्चादिगोधनैस्सकुल गृहम् ॥ महीसुतेन सद्दृष्टे शत्रुवृद्धि सुखसयम् ॥२२॥ व्यवसायात्फल मेषे ज्वरातीसारपीडनम् ॥ दायेशाङ्गाप्यकोणे वा केन्द्रे वा तुगनायके ॥२३॥ स्वदेशे धनलाभश्च पितृमातृसुखावहम् ॥ गजवाजिसमायुक्तो राजमित्रप्रसादक ॥२४॥

### गुरु दशा में बुधान्तर मा० २७ दि० ६ फल

गुरु दशा में बुध का अन्तर हो बुध लग्न से केन्द्र त्रिकोण लाभ में उच्च राशि का या स्वगृही तथा गुरु युक्त हो॥२०॥ तो धन लाभ देह सौख्य राज्यलाभ महान् सुख राजा की कृपा से मनोरथ पूर्ण होता है॥२१॥ सवारी गौ आदि पशु होते हैं। मंगल की दृष्टि हो तो शत्रु वृद्धि तथा सुख हानि होती है॥२२॥ व्यापार में धन हानि ज्वर अतिसार की बीमारी होती है। गुरु से बुध केन्द्र त्रिकोण तथा भाग्य स्थान में हो॥२३॥ तो अपने देश में ही धन लाभ माता पिता का सुख, हाथी घोडा युक्त सवारी राजा की मित्रता प्राप्त होती है॥२४॥

दायेशात्यण्डरधस्ये व्यये वा पापसयुते ॥ शुभदृष्टिविहीनश्रेद्धनधान्यपरिच्युति ॥२५॥ विदेशगमन चैव मार्गे चौरभय तथा ॥ वणदाहाक्षिरोगश्च नानादेशपरिच्युतम् ॥२६॥ लग्नात्पण्डाट्टरिक्के वा व्यये वा पापसयुते ॥ अवस्मात्कलहश्चैव गृहे निष्ठुरभाषणम् ॥२७॥ चतुष्पाज्जीयहानिश्च व्यवहारस्तथैव च ॥ अपमृत्युभय चैव शत्रूणा कलहो भवेत् ॥२८॥ शुभदृष्टौ शुभैर्भुक्ते द्वारसौख्य धनागमम् ॥ आदौ शुभ देहसौख्य वाहनाम्बरलाभगम् ॥२९॥ अते तु धनहानिश्च स्वात्मसौख्य च जायते ॥ द्वितीयद्वन्द्वनाये वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥३०॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसहस्रक जपेत् ॥ बुधप्रीतिकर चैव दान शक्ति च कारयेत् ॥ आयुर्वृद्धिकर चैव सर्वसौभाग्यसपदम् ॥३१॥

गुरु से बुध ६।८।१२ में पापयुक्त शुभ दृष्टि रहित हो तो धनधान्य की हानि होती है। २५॥ विदेश यात्रा, मार्ग में चोरी, घान, अग्नि से भय, आस्र में रोग, अनेक देशों में परिभ्रमण होता है। २६॥ बुध यदि लग्न में ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो तो अकस्मात् कलह तथा रोपपूर्ण व्यवहार होता है। २७॥ चौपाया जीव की हानि, व्यापार में हानि, अपमृत्यु का भय, शत्रु से कलह होती है। २८॥ यदि बुध शुभग्रह से युक्त और दृष्ट भी हो तो दशा के आरम्भ में स्त्री को सुख, धनलाभ आरोग्यता, वाहन आदि का लाभ होता है। २९॥ दशा के अन्त में धन हानि होती है। यदि बुध २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये 'विष्णु सहस्रनाम' का जप तथा दान करे तो आयु की वृद्धि तथा सुख-सम्पत्ति प्राप्त होती है। ३०॥ ३१॥

### अथ केतुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

जीवस्यातर्गते कर्ता शुभग्रहसमन्विते ॥ अन्यसौख्यघनावाप्ति कुत्सिताभ्रस्य भोजनम् ॥ ३२॥ परात्र चैव श्राद्धात्र पापमूलाद्धानि च ॥ दायेशाद्रिपुरध्रस्ते व्यये वा पापसमुते ॥ ३३॥ राजकोप धनच्छेद वधन रोगपीडनम् ॥ बलहानि पितृद्वेषो भ्रातृद्वेषो मनोरुज ॥ ३४॥ दायेशात्सुतमाग्नस्ये वाहने कर्मोपरि वा ॥ नरबाहनयोगश्च गजाश्राबरसकुलम् ॥ ३५॥ महाराजप्रसादेन इष्टकार्यार्थलाभकृत् ॥ व्यवसायात्कलाधिक्य गोमहिष्यादित्ताभकृत् ॥ ३६॥ यवनप्रभूमूलाद्वा वस्त्रभूषाविलाभकृत् ॥ द्वितीयदूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ॥ ३७॥ छागदान प्रकुर्वीत मृत्युञ्जयजप चरेत् ॥ सर्वदोषोपरामर्णी शान्ति कुर्वाद्धिघानत ॥ ३८॥

### गुरुदशा में केतु का अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

गुरुदशा में केतु का अन्तर हो और केतु शुभग्रहयुक्त हो तो अन्य व्यक्ति के साहाय्य से सुख और धन की प्राप्ति होती है तथा निकृष्टभोजन प्राप्त होता है। ३२॥ धर्म में प्राप्त अथवा श्राद्धीय-भोजन प्राप्त होता है। पापदोष से धन हानि होती है। गुरु में नेतु ६।८।१२ में पापयुक्त हो तो। ३३॥ राजकोप, धनहानि, वधन, रोग तथा पीडा, बलहानि, पिता तथा भाई से द्वेष, मन में अशान्ति होती है। ३४॥ गुरु में नेतु ५।९।४।१० स्थान में हो तो शय्यी, घोड़े, पालकी (मोटर) युक्त होता है। ३५॥ राज साहाय्य से इच्छित लाभ व्यापार में अधिक लाभ, गौ भैस आदि का लाभ। ३६॥ यवन जाति के अधिकारी द्वारा लाभ, वस्त्रभूषण आदि का लाभ होता है। २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। ३७॥ शान्ति के लिए छाग (बकरा) का दान, मृत्युञ्जय मन्त्र जप कर और सर्वदोष नाशक शान्ति करे। ३८॥

### अथ शुक्रभुक्तिमासाः ३० दिनानि० तत्फलम्

जीवस्यातर्गते शुके भाग्यकेन्द्रेणसमुते ॥ लाभे वा मुतराशित्ये स्वसेत्रे शुभसमुते ॥ ३९॥ नरबाहनयोगश्च गजाश्राबरसमुते ॥ महाराजप्रसादेन देगाधिक्य महत्सुखम् ॥ श्रीलाभरानि शस्त्राणि सामश्रेव भविष्यति ॥ ४०॥ पूर्वस्था दिशि आश्रित्य प्रमाण धनलाभगम् ॥ बत्स्यान च महत्प्रीति पितृभ्रातृमुखावहा ॥ ४१॥ देवतागुरुभक्तिश्च अप्रदान महत्तया ॥ तद्भागोपुरादीनि कृत्वा पुण्यानि मूर्तिना ॥ ४२॥ दृष्ट्वाष्टमध्यमे नीचे दायेशाद्वा तर्पण च ॥



कलहो बंधुवैद्यम्यं दारपुत्रादिपीडनम् ॥४३॥ मंदारराहुसंयुक्ते कलहो राजविग्रहम् ॥  
स्त्रीमूलात्कलहं चैव अशुरात्कलहं तथा ॥४४॥ सोदरेण विवादः स्याद्वनधान्यपरिच्युतिः ॥  
दायेशात्केद्रराशिस्ये धने वा भाग्येऽपि वा ॥४५॥ धनधान्यादिलाभश्च स्त्रीलाभं राज-  
दर्शनम् ॥४६॥

गुरुदशा मे शुक्र का अन्तर मास ३० दि. ० फल

गुरुमहादशा मे शुक्र का अन्तर हो, शुक्र भाग्येश तथा केन्द्रेश से युक्त हो, लाभभाव मे या पञ्चमभाव मे हो तथा स्वगृही, शुभग्रह युक्त हो तो ॥३९॥ नरवाहन (पालकी या रिक्सा) का योग तथा हाथी, घोडा, वस्त्र, भूषण की प्राप्ति होती है। राजकृपा से अधिकार भूमि महान् सुख, नीलवर्ण पोशाक, तथा हथियार प्राप्त होते है ॥४०॥ पूर्वदिशा मे यात्रा, धनलाभ, कल्याण तथा समाज मे प्रेम एव मातापिता को सुख होता है ॥४१॥ देवता, गुरु मे भक्ति तथा अन्नदान, तालाब, महल, मन्दिर आदि का पुण्य प्राप्त होता है ॥४२॥ बृहस्पति से शुक्र ६।८।१२ मे नीच राशि का हो अथवा लग्न से हो तो कलह, बन्धुगो मे वैमनस्य, स्त्री पुत्र को पीडा होती है ॥४३॥ मंगल, शनि राहु युक्त हो तो घर मे कलह तथा राजवर्ग से विग्रह होता है। विशेष करके स्त्री के कारण कलह और अशुर से भी कलह होता है ॥४४॥ भाई से विवाद, धन सम्पत्ति की हानि होती है। यदि शुक्र, गुरु से केन्द्र, धनस्थान, भाग्यस्थान मे हो ॥४५॥ तो धन सम्पत्ति का लाभ, स्त्री लाभ तथा राजदर्शन होता है ॥४६॥

बाहनं पुत्रलाभ च पशुवृद्धिमहत्सुखम् ॥ गीतवाद्यप्रसगादिविद्वज्जनसमागमम् ॥४७॥  
दिव्यान्न भोजन सौख्य स्वबधुजनपोषकम् ॥ द्विसप्तमाधिपे शुके तद्दशायां युतेक्षिते ॥४८॥  
अपमृत्युभय तस्य स्त्रीमूलादीषधादिभिः ॥ तस्य रोगस्य शात्यर्थं शातिकर्म समाचरेत् ॥४९॥  
श्वेतां गा महिषीं दद्यादापुरारोग्यवृद्धिकृत् ॥५०॥

सवारी, पुत्र लाभ, पशु वृद्धि, महान् सुख होता है। नवि, गायक, वादक, पण्डित गोष्ठी एव मित्र गोष्ठी होती रहती है ॥४७॥ उत्तम भोजन सुख, परिवार सुख होता है। शुक्र २।७ का स्वामी हो, पापयुक्त तथा दृष्ट हो ॥४८॥ अपमृत्यु का भय और यह अपमृत्यु भी किसी स्त्री द्वारा औषधि मे विष देने से होती है। इसकी शान्ति के लिये ग्रह शान्ति करना चाहिए तथा सफेद गौ का दान करे तो आयु वृद्धि और आरोग्यता होती है ॥४९॥५०॥

अथ रविभुक्तिमासाः ९ दिना० १८ तत्फलम्

जीवस्यातर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रेऽपि वा ॥ केन्द्रेऽथ त्रिकोणे च दुश्चिक्वे लाभेऽपि वा ॥५१॥ भाग्ये वा बलसंयुक्ते दायेशाद्वा तथैव च ॥ तत्काले धनलाभः स्यादांजसन्मानवैभवं ॥५२॥ बाहनावरपश्वादिमूषण पुत्रसम्भवम् ॥ मित्रप्रभुवशादिष्ट सर्वकार्ये शुभावहम् ॥५३॥ पष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वा तथैव च ॥ शिरोरोगादिपीडा च ज्वरपीडा तथैव च ॥५४॥ सत्कर्मणि विहीनत्व पापकर्म तथैव च ॥ सर्वयजनविद्वेषो ह्यात्मवधुविशोगकृत् ॥५५॥ अकस्मात्कलहं चैव जीवस्यातर्गते रथौ ॥ द्वितीयप्लूतनाथे तु देहपीडा भविष्यति ॥५६॥

पूर्वखण्डे सप्तत्रिंशोऽध्यायः

तद्दोषपरिहारार्थमादित्यहृदयं जपेत् ॥ सर्वपीडोपशमनं सूर्यप्रीतिं च कारयेत् ॥५७॥

गुरु वशा में सूर्य का अन्तर मा० ९ दि. १८ फल

बृहस्पति की दशा में सूर्य का अन्तर हो, सूर्य लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में, तीसरे या लाभ में, उच्च का या स्वगृही हो अथवा बलवान् होकर भाग्य स्थान में हो अथवा पूर्वोक्त प्रकार से बृहस्पति से ऐश्वर्य योग हो तो इस अन्तर में धन का लाभ, ऐश्वर्य, राज सम्मान होता है॥५१॥५२॥ सवारी, गी आदि पशु, सम्पत्ति तथा पुत्र होता है। किसी मित्र के कारण उन्नति, मनोरथ पूर्ति तथा समस्त कार्य सिद्ध होते हैं॥५३॥ सूर्य लग्न से या बृहस्पति से ६।८।१२ में हो तो सिर दर्द, ज्वर पीडा होती है॥५४॥ धार्मिक कार्य की हानि, पापकर्म की वृद्धि, समाज विरोध, परिवार में कलह होता है। तथा अकस्मात् विशेष कलह होता है॥५५॥ सूर्य यदि २।७ का स्वामी हो तो देह पीडा होती है॥५६॥ इसकी शान्ति के लिये 'आदित्य हृदय' का पाठ तथा हवनादि करे॥५७॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १६ दिनानि० तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते चंद्रे केन्द्रे लाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्धराशिस्ये पूर्णचंद्रयत्नेयुते ॥५८॥  
वापेशाब्जुभराशिस्ये राजसन्मानवैभवम् ॥ दारपुत्रादिसौख्यं च क्षीराणां भोजनं तथा ॥५९॥  
सत्कर्म च तथा कीर्तिः पुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ॥ महाराजप्रसादेन सर्वसौख्य घनागमम् ॥६०॥  
अनेकजनसौख्यं च दानधर्मादिसंग्रहः ॥ पष्ठाष्टमव्यये चंद्रे त्रिकोणे पापसंयुते ॥६१॥  
वापेशास्वप्ठरंप्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥ मानार्थबंधुहानिश्च विदेश परिविच्युतिः ॥६२॥  
नृपचौरादिपीडा च दायादिजनविद्वरम् ॥ मातुलादिबिषयोगश्च मातृपीडा तथैव च ॥६३॥  
द्वितीयपष्ठमयोरीशे देहपीडा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गापाठं च कारयेत्॥६४॥

चन्द्रमा का अन्तर मा० १६ फल

गुरु महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा लग्न से या बृहस्पति से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो, स्वगृही या उच्च का अथवा शुभ राशि में हो॥५८॥ तो राजा के समान वैभव, स्त्रीपुत्र का सुख, प्रतिदिन दूध का भोजन प्राप्त होता है॥५९॥ मत्कर्म तथा कीर्ति, पुत्र पौत्र की वृद्धि, राजा की कुशा से धन लाभ और सर्वसुख होता है॥६०॥ दान आदिक धर्म के कार्य होते हैं, जिससे समाज का उत्थान होता है। यदि चन्द्रमा लग्न में ६।८।१२ में या त्रिकोण में पापग्रह युक्त हो॥६१॥ अथवा बृहस्पति से ६।८।१२ में बलहीन हो तो प्रतिष्ठा, धन और बन्धु की हानि होती है। विदेश यात्रा होती है॥६२॥ राज, चौर से पीडा होती है। परिवार में विग्रह, मामा पक्ष का वियोग तथा माता को पीडा होती है॥६३॥ चन्द्रमा यदि २।७ का स्वामी हो तो देह, पीडा होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गा पाठ करना चाहिए॥६४॥

अथ कुजभुक्तिमासाः ११ दिनानि ६ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते श्रीमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्धराशि वापि तुङ्गशि स्वांशगेऽपि वा

॥६५॥ विद्याविवाहकार्याणि ग्राम भूम्यादिलामकृत् ॥ जनसामर्थ्यमाप्नोति सर्वकार्यार्थसिद्धिद  
म् ॥६६॥ दायेशात्केन्द्रलामस्थे लाभे वा धनगोपि वा ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे धनधान्यादिसंपदम्  
॥६७॥ मिष्टान्नदानविभवं राजप्रीतिकरं शुभम् ॥ स्त्रीसौख्यं च मुतावाप्तिः  
पुष्यतीर्थफलप्रदम् ॥ ६८॥ दायेशात्पृष्ठरंघ्रे वा व्यये वा नीचगोपि वा ॥ पापयुतेक्षिते वापि  
धान्यार्थगृहनाशनम् ॥६९॥ नानारोगभयं दुःखं नेत्ररोगादिसंभवम् ॥ पूर्वार्द्धे क्लेशमधिकम-  
परार्द्धे महत्सुखम् ॥७०॥ द्वितीयघ्ननाथे तु देहजाड्यं मनोरुजम् ॥ अनड्वाहं प्रकुर्वीत  
सर्वसंपत्प्रदायकम् ॥७१॥

मंगल का अन्तर मा० ११ वि० ६ फल

बृहस्पति की दशा में मंगल का अन्तर हो, मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में उच्च राशि का, स्वगृही या परमोच्च हो अथवा अपने नवाश में हो ॥६५॥ तो विद्या प्राप्ति, विवाह कार्य, ग्राम भूमि का लाभ तथा जनबल प्राप्त होता है जिससे सब कार्य सिद्ध होते हैं ॥६६॥ बृहस्पति से केन्द्र तथा लाभ स्थान में, धन स्थान में, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥६७॥ मिष्टान्न, दान, वैभव, राजप्रीति, स्त्री सौख्य, पुत्र प्राप्ति तथा तीर्थयात्रा होती है ॥६८॥ बृहस्पति से मंगल ६।८।१२ स्थान में नीच राशि गत हो, पापयुक्त या दृष्ट हो तो धन सम्पत्ति और मकान का नाश होता है ॥६९॥ अनेक रोग से भय, दुःख, नेत्र रोग भी संभव है। अन्तर के पूर्वार्ध में अधिक क्लेश हो। उत्तरार्ध में सुख हो ॥७०॥ मंगल यदि २।७ का स्वामी हो तो वात व्याधि, क्लेश होता है। वैल का दान करने से सुख सम्पत्ति होती है ॥७१॥

अथ राहुभुक्तिमासाः २८ दिनानि २४ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते राहौ स्वोच्चे वा केद्रगोपि वा ॥ मूलत्रिकोणभाग्ये च केद्राधिपसमन्विते ॥७२॥ शुभयुक्तेक्षिते वापि योगप्नोति समादिशेत् ॥ भुक्त्यावो शरमासाश्च धनधान्यपरिश्रमम् ॥७३॥ बेशपामाधिकारं च धनप्रभुदर्शनम् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्बहुसेनाधिपत्यताम् ॥७४॥ दूरयात्राधिगमन पुष्यधर्मादिसंग्रहः ॥ सेतुब्रानफलावाप्तिरिष्टसिद्धिगुणबहम् ॥७५॥ दायेशात्पृष्ठरंघ्रे वा व्यये वा पापयुते ॥ चौराह्विषणमीतिश्च राजवैषम्यमेव च ॥७६॥ गृहे कर्मकलापेन व्याकुले भवति ध्रुवम् ॥ सोद्रेण विरोधः स्पाहायादिजनविग्रहम् ॥७७॥ गृहे त्वशुभकार्याणि दुःस्वप्नादिभयं ध्रुवम् ॥ अकस्मात्कलहश्चेव क्षुद्रशून्यादिरोगकृत् ॥७८॥ द्विसप्तमस्मिते राहौ बेहवायां विनिर्विशेत् ॥ तदोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजप चरेत् ॥७९॥ छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसौख्यादिमादिशेत् ॥८०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे विशोक्तव्यां गुरोस्तर्दशाफलकथनं  
नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥

समझना। अन्तर के आरम्भ के ६ महीने में धन सम्पत्ति प्राप्त होती है। ७३॥ नगर या देश में अधिकार प्राप्ति, यवन जातीय स्वामी का दर्शन, घर में सुख सम्पत्ति अथवा सेनापति होता है। ७४॥ दूर देश की यात्रा, पुष्प धर्म के कार्य, रामेश्वर की यात्रा तथा मनोरथ सिद्धि होती है। ७५॥ बृहस्पति से मंगल ६।८।१२ में पापमुक्त हो तो सर्प, चोर, आदि से आघात का भय, राज से विपमता। ७६॥ घर के झगड़ से व्याकुलता, सहोदर भाई से विरोध, परिवार में विग्रह होता है। ७७॥ घर में अशुभ कार्य, अकस्मात् कलह, दुःस्वप्न, फौड़ा-फुन्ती अथवा गून्थ रोग होता है। ७८॥ राहु यदि २।७ स्थान में हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप कराये। ७९॥ तथा छाग (बकरा) का दान करे तो सर्वप्रकार सुख होता है। ८०॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० विशोक्त्या गुरोरन्तर्दशा  
फलकथन नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥

### अथ शनिदशायां शनिमुक्तिमासाः ३६ दिनानि० तत्फलम्

मूलत्रिकोणस्वर्से वा तुलायामुच्चगोऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा राजयोगादिसप्तमे ॥१॥  
राज्यलाभ महत्सौख्य दारपुत्रादिवर्धनम् ॥ याहनप्रयत्नयुक्त गजाश्वारसकुलम् ॥२॥  
महाराजप्रसादेन अश्वदौत्यादिलाभकृत् ॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्याद्ग्रामभूम्यादिलाभकृत्  
॥३॥ षष्ठाष्टमध्यमे भेदे नीचे वा पापसप्तमे ॥ तद्भुक्त्यादौ राजभोतिर्विपशास्त्रादिपीडनम्  
॥४॥ रक्तघ्राव गुल्मरोगमत्सारादिपीडनम् ॥ मध्ये चौरादिभोतिश्च देशत्याग मनोरजम्  
॥५॥ अते शुभकर चैव ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥ द्वितीयघननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥६॥  
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युञ्जयजप चरेत् ॥७॥

शनिमहादशा में शनि की अन्तर्दशा मास ३६ दि० फल

अन्तर्दशा में शनि जन्म लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ (११) में या तुलाराशि में, परमोच्च में, मूलत्रिकोण में, स्वराशि में एव योग कारक ग्रहयुक्त हो तो ॥१॥ राजा से लाभ या राज्य का लाभ, महान् सुख, स्त्रीपुत्र की वृद्धि, तीन मोटर की सबारी, हाथी घोड़े तक ऐश्वर्य ॥२॥ राजानुग्रह से पुढसवार दूत हो, गौ आदि चौपाया पशु की स्थिति, ग्राम या विपुल भूमिलाभ होता है। ३॥ यदि शनि ६।८।१२ स्थान में नीचे वा ही पापग्रहयुक्त हो तो राज में भय, विप भस्त्र द्वारा पीडा। ४॥ रक्तघ्राव, गुल्मरोग, अतिमार आदि रोग, चोर आदि से भय, स्वदेश वा त्याग, मन में अशान्ति हो। ५॥ दशा के अन्त में शुभपत्न हो, ग्राम भूमि वा लाभ हो। यदि शनि २।७ वा स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। ६॥ इसकी शान्ति के लिए महामृत्युञ्जय मन्त्र वा जप करना चाहिए। ७॥

### अथ बुधभुक्तिमासाः ३२ दिनानि ९ तत्फलम्

मन्दास्यान्तर्गते सौम्ये त्रिकोणे केन्द्रेपि वा ॥ सन्मान च यशःकीर्तिर्विद्यालाभ धनागमम् ॥८॥  
 स्वदेशे सुखमाप्नोति याहनादिफलैर्युते ॥ यज्ञादिकर्मसिद्धिश्च राजयोगादिसम्भवम् ॥९॥  
 देहसौख्यं हृदुत्साहं गृहे कल्याणसम्भवम् ॥ सेतुदानफलावाप्तिस्तोत्रयात्रादिकर्मणा ॥१०॥  
 वाणिज्याद्धनलाभश्च पुराणश्रवणादिकम् ॥ अन्नदानफलं चैव नित्यमिष्टान्नभोजनम् ॥११॥  
 षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये नीचे वास्तगते सति ॥ रव्यारफणिसंयुक्ते दापेशाद्वा तथैव च ॥१२॥  
 नृपामियेकमवाप्तिर्देशग्रामाधिपत्यता ॥ फलमीदृशमादीं तु मध्याते रोगपीडनम् ॥१३॥  
 नष्टानि सर्वकार्याणि व्याकुलत्व महद्भयम् ॥ द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ॥१४॥  
 तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥ अन्नदानं प्रकुर्वीत सर्वसप्तप्रदायकम् ॥१५॥

#### बुध का अन्तर मास ३२ दिन ९ फल

शनि की महादशा में बुध का अन्तर हो। बुध केन्द्र, त्रिकोण में हो तो सन्मान, यश, विद्यालाभ, धनलाभ ॥८॥ तथा स्वदेश में सुखप्राप्ति, सवारो आदि का सुख, यज्ञ आदि धर्मकार्य, राजयोग के समान ऐश्वर्य होता है ॥९॥ देहसौख्य, परिवार में सुख, रामेश्वरजी की यात्रा, तीर्थाटन होता है ॥१०॥ व्यापार से धनलाभ पुराण आदि का श्रवण, अन्नदान तथा नित्य उत्तम भोजन ॥११॥ यदि बुध ६।८।१२ भाव में हो, नीच राशि में, तथा अस्त हो या सूर्य, मंगल, राहुयुक्त हो। ये सब योग लग्न से या शनि से किसी से भी हो ॥१२॥ तो अन्तर्दशा के आदि में तो राज्याभिषेक में प्राप्ति, देश या नगर में पदाधिकार आदि शुभ फल होकर मध्य में तथा अन्त में रोग पीडा (दर्द) ॥१३॥ सम्पूर्ण कार्य में हानि, व्याकुलता, महान् भय होता है। द्वितीय सप्तम भाव का स्वामी हो तो देह में बीमारी होती है ॥१४॥ इसकी शान्ति के लिए, 'विष्णुसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ होना चाहिए। तथा अन्नदान करने से सर्वसम्पत्ति प्राप्त होती है ॥१५॥

### अथ केतुभुक्तिमासाः १३ दिनानि ९ तत्फलम्

मन्दास्यान्तर्गते केतौ शुभप्रहपुर्तेक्षिते ॥ स्वोच्चे वा शुभराशित्ये योगकारकं सयुते ॥१६॥  
 लग्नाधिपते सयुक्ते आदौ सौख्यं धनागम ॥ गंगादि सर्वतीर्थेषु स्थानदैवत दर्शनम् ॥१७॥  
 दापेशात् केन्द्रकोणे वा शुभयोग-समन्विते ॥ समर्थो धर्म बुद्धिश्च सौख्यं नृप समागम ॥१८॥  
 षष्ठाष्टमव्यये केतौ दापेशाद्वा तथैव च ॥ दारिद्र्यं बधनं भीतिं पुत्रदारादिनाशनम् ॥१९॥  
 स्थानभ्रमं महद्भ्रमं कुत्सिताग्रस्य भोजनम् ॥ शीतज्वरातिसारश्च व्रणचौरादिपीडनम् ॥२०॥  
 पुत्रदार-वियोगश्च ससारे भवति ध्रुवम् ॥ स्वप्नभ्रमश्च महाक्लेश-विदेश गमनं तथा ॥२१॥  
 द्वितीयद्वय राशित्ये अपमृत्युर्भविष्यति ॥२२॥ छागदानं प्रकुर्वीत हृष्यमृत्युभयं हरेत् ॥२३॥

#### केतु का अन्तर मास १३ दिन ९ फल

शनि की महादशा में केतु का अन्तर हो तथा केतु स्वोच्चराशि में शुभदृष्टि या शुभयुत हो अथवा शुभराशि में योगकारक से युक्त हो ॥१६॥ लग्न से सयुक्त हो तो प्रथमादर्दनाम

मुक्त तथा धनलाभ हो। गंगा आदि तीर्थों में स्नान, देवदर्शन हो॥१७॥ शनि से केन्द्र या त्रिकोण स्थान में शुभयोग युक्त हो तो सामर्थ्य की प्राप्ति तथा धर्मवृद्धि हो, सुखवृद्धि तथा राजा से मेल हो॥१८॥ लग्न से या शनि से ६।८।१२ स्थान में केतु हो तो दरिद्रता, बधन, भय, स्त्री पुत्र का नाश होता है॥१९॥ स्थान हानि महत् भय निकृष्ट भोजन, शीतज्वर, अतिसार, घाव, चोर आदि से पीडा होती है॥२०॥ स्त्रीपुत्र का वियोग होता है। स्वामी से कष्ट होता है। विदेश यात्रा होती है॥२१॥ यदि केतु द्वितीय तथा सप्तम राशि में हो तो अपमृत्यु होती है॥२२॥ इसकी शान्ति के लिए छाग (बकरा) का दान करना चाहिए। यह दान करने से आगमृत्यु का भय दूर होता है॥२३॥

### अथ शुक्रभुक्तिमासाः २६ दिनानि० तत्फलम्

मन्दस्यातर्गते शुके स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥ केद्रे वा शुभसयुक्ते त्रिकोणे लाभगेपि वा ॥२४॥  
 दारपुत्रधनप्राप्तिर्देहारोग्य महोत्सव ॥ गृहे कल्याणसपत्नी राज्यलाभ महत्सुखम् ॥२५॥  
 महाराजप्रसादेन हीष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ सन्मान प्रभुसन्मान प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ॥२६॥  
 द्वीपातराष्ट्रस्त्रलाभ श्वेताश्वो महिषी तथा ॥ गुरुचारवशाद्भ्रातृभ्य सौख्य च धनसंपद ॥२७॥  
 शनिचारान्मनुष्योत्ती योगमाप्नोत्यसशायम् ॥ शत्रुनीचास्त्ये शुके पट्टापट्टव्यपराशयो ॥२८॥  
 दारनाश मनःक्लेश स्थाननाश मनोरुजम् ॥ दाराणां स्वजनक्लेश सतापो जनविग्रहम् ॥२९॥  
 दापेशाद्भ्रातृभ्यगेनैव केद्रे वा लाभसयुते ॥ राजप्रीतिकर चैव मनोपीष्टप्रदायकम् ॥३०॥  
 दानधर्मदयायुक्तस्तीर्थयात्रादिक फलम् ॥ शास्त्रार्थकाव्यरचना वेदातथवणादिकम् ॥३१॥  
 दारपुत्रादिसौख्य च बाहनच्छत्रलाभकम् ॥ दापेशाद्भयगे शुके पट्टे वा ह्यष्टमेपि वा ॥३२॥  
 नैत्रपीडा ज्वरभय स्वकुलावारवर्जित ॥ कपोले वन्तसूलादि हृदि गुह्ये च पीडनम् ॥३३॥  
 जलभीतिर्मनस्तापो वृक्षात्पतनसमय ॥ राजद्वारे जनद्वये सोदरेण विरोधनम् ॥३४॥  
 द्वितीयसप्तमाधीशे आत्मक्लेशो भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुगादिवीजप चरेत् ॥३५॥  
 श्वेता गा महिषी दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥३६॥

### शनिदशा में शुक्रान्तर मास २६ दिन ० फल

शनि की दशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र लग्न से केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो। उच्चराशि में हो या स्वगृही और शुभ ग्रहयुक्त हो तो॥२४॥ स्त्री पुत्र, धन की प्राप्ति हो, देह की आरोग्यता, महोत्सव, घर में सुख सम्पत्ति, राज से लाभ तथा महान् सुख होता है॥२५॥ तथा राजदृष्टा से मुमदायक इच्छित फल होता है। प्रतिष्ठा तथा स्वामी में घर में आदर, तथा प्रिय वस्त्रादि का लाभ हो॥२६॥ और द्वीपान्तरसे वस्त्र (या वस्त्र व्यापार से) लाभ हो तथा श्वेतरग का अश्व (घोडा) एवं भैरव हो। (गुरुमचार में भाग्योदय, मुग, धन संपत्ति होती है॥२७॥ जनिमचार में जातक अवश्य योग प्राप्त करता है॥२७॥  
 (सूचना-यह दो अर्द्धश्लोक वास्तव में एक ही श्लोक है और यह प्रकरण भी दूसरा ही है। लेखकों के प्रमाद से सम्मिलित हो गया है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मादि कारकों के अगादि पर में जब गुरु संचार करता है तो उक्त पत्र तथा शनि मचार करता है तो शनि के लिए बड़े हुए दुष्पन होते हैं। यह विषय स्पष्टरूप में देवदेवर्ग आदि पन्थों में देमना चाहिए।)

शुक्र यदि शत्रु राशि मे, नीचराशि मे अथवा अस्त होकर ६।८।१२ वे स्थान मे हो॥२८॥ तो स्त्री की मृत्यु मन मे क्लेश, स्थानहानि, मन मे अशान्ति, स्त्रियो को क्लेश, बन्धुदुःख, सताप, परिवारिक कलह होती है॥२७॥ यदि शुक्र शनि से भाग्य, लाभ या केन्द्र मे हो तो राजप्रीति हो, इच्छित कार्य सिद्ध होता है॥३०॥ दान, धर्म, दया, तीर्थयात्रा आदि फल होता है। शास्त्रविचार, काव्यरचना, वेदान्तश्रवण॥३१॥ स्त्री पुत्र का सुख, वाहन (मोटर आदि सवारी) छत्र का लाभ होता है। शनि से शुक्र ६।८।१२ स्थान मे हो तो॥३२॥ नेत्रपीडा, ज्वरभय, कुलाचारहीनता, कपोल या दात मे शूल, हृदय तथा गुह्यदेश मे (पेट के नीचे का भाग) पीडा होती है॥३३॥ जल से भय, मन मे सन्ताप तथा वृक्ष से गिरना भी संभव है। राजकीय अधिकारी तथा सहोदर भाई से विरोध होता है॥३४॥ द्वितीय सप्तम भाव का स्वामी यदि शुक्र हो तो आत्मक्लेश होता है। इसकी शान्ति के लिए दुर्गादेवी का जप करना चाहिए॥३५॥ श्वेत रंग की गाय का दान करने से आयु और आरोग्यता की वृद्धि होती है॥३६॥

### अथ रविभुक्तिमासाः ११ दिनानि १२ तत्फलम्

मदस्यातर्गते सूर्यं स्वोल्चे स्वक्षेत्रेण वा ॥ भाग्याधिपेन सयुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणमे ॥३७॥ शुभदृष्टियुते वापि स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ॥ गृहे कल्याणसंपत्ति पुत्रादिसुखवर्द्धनम् ॥३८॥ वाहनावरपत्न्यादिगोक्षीरसकुल गृहम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये सूर्यं दायेराद्वा तथैव च ॥३९॥ हृद्रोगो मानहानिश्च स्थानभ्रशो मनोरुजा ॥ इष्टबन्धु वियोगश्च उद्योगस्य विनाशनम् ॥४०॥ तापज्वरादिपीडा च व्याकुलत्व भय तथा ॥ आत्मसबधमरणमिष्टबन्धुवियोगकृत् ॥४१॥ द्वितीयदूशननाये तु देहवाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यपूजा च कारयेत् ॥४२॥

### शनिदशा मे सूर्यान्तर मास ११ दिन १२ फल

शनि की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो। सूर्य उच्चराशि मे स्वगृही, तथा भाग्येशयुक्त हो। केन्द्र, लाभ या त्रिकोण मे हो॥३७॥ शुभदृष्टियुत हो तो अपने स्वामी से महान् सुख हो। घर मे कल्याण, सुख तथा सम्पत्ति हो तथा पुत्र आदि सुख की वृद्धि हो॥३८॥ सवारी गुरुर वस्त्र, गौ आदि पशुजो से गृह सम्पन्न हो। शनि से सूर्य ६।८।१२ मे, अथवा लग्न मे ६।८।१२ मे हो॥३९॥ तो हृदयरोग, मानहानि, स्थानविच्युति, मन मे दुःख, इष्टबन्धु का वियोग तथा उद्योग का नाश होता है॥४०॥ ज्वर आदि पीडा, भय और व्याकुलता, अपने सम्बन्धी का मरण तथा इष्ट बन्धु से वियोग होता है॥४१॥ यदि सूर्य २।७ वा स्वामी हो तो देहवाधा होती है। इसकी शान्ति के लिए सूर्य की आराधना करनी चाहिए॥४२॥

### अथ चंद्रभुक्तिमासाः १९ दिनानि ० तत्फलम्

मदस्यातर्गते चन्द्रे जीवदृष्टिसमन्विते ॥ स्वोल्चे स्वक्षेत्रकेद्रस्ये त्रिकोणे लाभोपि वा ॥४३॥ पूर्णचन्द्रे सौम्ययुक्ते राजप्रीतिसमागमम् ॥ महाराजप्रसादेन वाहनावरभूषणम् ॥४४॥ सौभाग्य सुखवृद्धि च मृत्यानां परिपालनम् ॥ पितृमातृकुले सौख्य पशुवृद्धिं मुखावहा ॥४५॥ क्षीणे वा

पापसंयुक्ते पापदृष्टौ विनीचगे ॥ क्रूरांशकगते वापि क्रूरसैत्रागतेपि वा ॥४६॥ जातकस्य महत्कष्ट  
 राजकोपो धनक्षयः ॥ पितृमातृवियोगश्च पुत्रीपुत्रादिरोगकृत् ॥४७॥ व्यवसायात्फलं नेष्टं  
 नानामार्गं धनव्ययम् ॥ अकाले भोजनं चैवमौषधस्य च भक्षणम् ॥४८॥ क्लामिदृष्ट्यभावी तु  
 आदौ सौख्यं धनागमम् ॥ दायेशात्केदराशिस्ये त्रिकोणे लाभेपि वा ॥४९॥  
 बाह्यावरपश्चाद्विभ्रातृवृद्धिः सुखावहा ॥ पितृमातृसुखावाप्तिः स्त्रीसौख्यं च धनागमम् ॥५०॥  
 मित्रप्रभुयशादिष्टं सर्वसौख्यं शुभावहम् ॥ दायेशात्पृष्ठरिष्के वा रघ्रे वा बलवर्जिते ॥५१॥ शयनं  
 रोगमालस्यं स्थानभ्रष्टं सुखावहम् ॥ शत्रुवृद्धिविरोधं च इष्टबन्धुवियोगकृत् ॥५२॥  
 द्वितीयद्यूननार्थे तु देहालस्यो भविष्यति ॥ तद्दोषशमनार्थं च तिलहोमादिकं चरेत् ॥५३॥ गुडं पृतं  
 च दध्नाक्तं तदुलं च यथाविधि ॥ श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिकृत् ॥५४॥

शनिदशा में चन्द्रान्तर मास १९ दिन ० फल

शनि की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभस्थान में  
 गुरुदृष्टियुक्त, स्वोच्च राशि में या स्वगृही तथा गुरुयुक्त या दृष्ट हो ॥४३॥ यदि पूर्णचन्द्र  
 सौम्यग्रहयुक्त हो तो राजासे प्रीति तथा मैत्री और आना जाना होता है। और उसकी कृपा से  
 सवारी, वस्त्र, आभूषण ॥४४॥ मीमांस्य, सुख वृद्धि और आश्रित का पालन, मातृकुल तथा  
 पितृकुल में सौख्य तथा सुखदायक पशुवृद्धि होती है ॥४५॥ यदि चन्द्रमा क्षीण हो, पापग्रहयुक्त,  
 पापदृष्ट, नीच राशिगत, पावग्रह के नवाश में हो या पापराशि में हो ॥४६॥ तो जातक को  
 महान् कष्ट, राजकोप और धन का क्षय होता है। माता पिता का वियोग होता है। पुत्र, बन्धा  
 को बीमारी होती है ॥४७॥ व्यापार में हानि तथा अनेक प्रकार से धनव्यय, कुसमय भोजन,  
 औषधसेवन होता रहता है ॥४८॥ इस नेष्ट योगयुक्त में भी यदि चन्द्रमा एक क्लारूप (मुदी  
 द्वितीया का) हो तो अन्तर के आदिकाल में सुख और धनलाभ होता है। यदि चन्द्रमा शनि में  
 केन्द्र, त्रिकोण, या लाभस्थान में हो ॥४९॥ तो सवारी, वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, भ्राता की  
 वृद्धि, माता पिता का सुख, स्त्री का सुख, धनलाभ ॥५०॥ मित्र या स्वामी द्वारा इष्टपूर्ति,  
 सर्वसौख्य, शुभ होता है। शनि में चन्द्रमा ६।८।१२ स्थान में ॥५१॥ हो तो अतिनिद्रा, रोग,  
 आलस्य, स्थानहानि, सुख, प्रभुवृद्धि, विरोध तथा बन्धुवियोग होता है ॥५२॥ २।७ का स्वामी  
 हो तो आलसी करता है, रोगी होता है। इसकी शान्ति के लिए तिलहोम, गुड, घी, दही-भात,  
 चावल का दान करे। श्वेत गौ का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है ॥५४॥

अथ कुजभुक्तिमासाः १३ दिनानि ९ तत्फलम्

भवंस्थांतर्गते भौमे केदलाभत्रिकोणगे ॥ तुगे स्वक्षेत्रगे वापि दशाधिपसमन्विते ॥५५॥  
 सप्राधिपेन सयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमम् ॥ राजप्रीतिरुत्तं सौख्यं बाह्यावरभूषणम् ॥५६॥  
 सेनाधिपस्य नृपप्रीतिः कृपिणोऽध्यात्मसंपदः ॥ नूतनस्थाननिर्माणं भ्रातृवर्गोऽसौख्यकृत् ॥५७॥  
 नीचे चास्तगते भौमे षष्ठाष्टप्यपरराशिगे ॥ पापदृष्टियुक्ते वापि धनहानिर्भविष्यति ॥५८॥  
 घौराहिल्लगशास्त्रादिप्रंयिरोणादिपोहनम् ॥ भ्रातृविप्रतिर्षीश . च दायदहनविषहम् ॥५९॥  
 चतुष्पादमौषहानिश्च कुत्सिताप्रस्य भोजनम् ॥ विदेगगमनं चैव नानामार्गं धनव्ययः ॥६०॥  
 अष्टमद्यूननार्थे तु द्वितीयस्येव वा घटि। अपनृत्सुमयं चैव नानादृष्टपरामवम् ॥६१॥



तद्दोषपरिहारार्थं शांतिहोमं च कारयेत् ॥ अनङ्वाहं प्रकुर्वीत सर्वांरिष्टनिवारणम् ॥६२॥

मंगल का अन्तर मा० १३ दि० ९ फल

शनिदशमे मंगल का अन्तर हो। मंगल केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में, उच्चराशि में, स्वगृही, तथा शनि से युक्त हो तो ॥५५॥ और लग्नेश से युक्त हो तो प्रथम सुख और धनप्राप्ति, राजप्रीति, सुख, वाहन, वस्त्र, भूषण की प्राप्ति होती है ॥५६॥ सेनापतित्वं, राजा से प्रीति, कृषि, गौ, संपत्ति, तथा नूतन स्थान का निर्माण, भ्रातृवर्ग को सुख देनेवाला होता है ॥५७॥ यदि अस्त हो और ६।८।१२ स्थान में पापदृष्टियुक्त हो तो धनहानि होती है ॥५८॥ चोर आदि का उपद्रव, शस्त्राघात, ग्रथिरोग, पीडा, तथा भ्राता, पिता आदि को पीडा, परिवार में विग्रह होता है ॥५९॥ गौ आदि पशु की हानि निकृष्ट भोजन विदेशयात्रा, विशेष सर्ष होता है ॥६०॥ यदि मंगल ७।८ का स्वामी होकर द्वितीय भाव में स्थित हो तो अपमृत्यु का भय होता है, अनेक कष्ट तथा हार होती है ॥६१॥ इसकी शान्ति के लिए होम करे, बैल का दान करे तो सर्वथा अरिष्ट का निवारण होता है ॥६२॥

अथ राहुभुक्तिमासाः ३४ दिनानि ६ तत्फलम्

मदस्यातर्गते राहौ कलहश्च मनोव्यथा ॥ देहपीडा मनस्ताप पुत्रद्वेषो मनोरुज ॥६३॥ अर्षव्यय राजभयं स्वजनादिह्युपद्रवम् ॥ विदेशगमनं चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥६४॥ लग्नाधिपेन सयुक्ते योगकारकसंयुते ॥ स्वोच्चै स्वक्षेत्रे केद्रे दायेशाल्लाभराशिगे ॥६५॥ आदौ सौख्यं घनावाप्ति गृह क्षेत्रादिसंपदम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिं च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ॥६६॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्याद्गृहे कल्याणवर्द्धनम् ॥ मध्ये तु राजभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम् ॥६७॥ मेयादिकन्यका चैव कुलीरे वृषभे तथा ॥ मीनकोदडसिहेषु गजातैर्भयमादिशेत् ॥६८॥ राजसन्मान-भूषाप्तिं मृदुलाबरसौख्यकृत् ॥ द्विसप्तमाधिर्षयुक्ते देहबाधा भविष्यति ॥६९॥ मृत्युं जप प्रकुर्वीत् छागदानं च कारयेत् ॥ अनङ्वाहं प्रकुर्वीत सर्वसपत्सुखावहम् ॥७०॥

राहु का अन्तर मास ३४ दिन फल

शनिदशा में राहु का अन्तर हो तो (यदि शुभयोग युक्त न हो तो) कलह, मनोव्यथा, देहपीडा, सन्ताप, पुत्र से द्वेष, मन में अशान्ति ॥६३॥ धन का अधिक सर्ष, राजभय, स्वजनों से उपद्रव, विदेश यात्रा तथा गृह भूमि का नाश होता है ॥६४॥ और यदि राहु लग्नेश से युक्त और योगकारक युक्त हो और उच्च राशि में, स्वगृही, केन्द्र या लाभसे (शनि से) ॥६५॥ हो तो प्रथम धनप्राप्ति, सुख, भूमि मवान आदि सम्पत्ति, देवब्राह्मणभक्ति तथा तीर्थयात्रा होती है ॥६६॥ गौ आदि चपाया की प्राप्ति, घर में सुख शान्ति होती है। मध्य में राजभय, पुत्र मित्र से विरोध होता है ॥६७॥ यदि राहु, मेघ कन्या, कर्क, वृष, मीन, धन और सिंह में हो तो हाथी होने योग्य ऐश्वर्य होता है ॥६८॥ राज सन्मान, भूषण प्राप्ति, सुन्दर वस्त्र का सुख होता है। २।७ के स्वामी से युक्त हो तो देहबाधा होती है ॥६९॥ मृत्युञ्जय मन्त्र जप और छागदान या बैलदान करने से गर्वसम्पत्ति का सुख होता है ॥७०॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ३० दिनानि १४ तत्फलम्

मदस्यातर्गते जीवे केद्रे सामत्रिकोणगे ॥७१॥ लग्नाधिपेन सयुक्ते स्वोच्चै स्वक्षेत्रोपि वा ॥

सर्वकार्यार्थसिद्धिं स्याच्छोभन भवति ध्रुवम् ॥७२॥ महाराजप्रसादेन धनवाहनमूपणम् ॥  
 सन्मान प्रभुसन्मान प्रियवस्त्रार्थतामकृत् ॥७३॥ देवतागुरुभक्तिश्च विद्वज्जनसमागम ॥  
 दारपुत्रादिलामश्च पुत्रकल्याणवैभवम् ॥७४॥ षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वा पापसयुते ॥  
 देहसबन्धमरण घनघान्यविनाशनम् ॥७५॥ राजद्वेष स्थानहानि कार्यहानिर्भविष्यति ॥  
 विदेशगमन चैव कुष्ठरोगादिसभव ॥७६॥ दायेशात्केद्रकोणे वा घने वा लाभोपि वा ॥  
 विभव दारसौभाग्य राजश्रीघनसपद ॥७७॥ भोजनाबरसीस्य च दानधर्मादिक भवेत् ॥  
 ब्रह्मप्रतिष्ठासिद्धिश्च क्रतुकर्मफलप्रदम् ॥७८॥ अन्नदान महाकीर्तिर्वेदातश्रवणादिकम् ॥  
 दायेशात्षष्ठरेधे वा व्यये वा ब्रतवर्जिते ॥७९॥ बधुद्वेष मनोदुःख ब्राह्मण पदविच्युतम् ॥  
 कुभोजन कर्महानी राजदंडाद्धनव्ययम् ॥८०॥ कारागृहप्रवेश च पुत्रदारादिपीडनम् ॥  
 द्वितीयघूननाये तु देहबाधा मनोरुजम् ॥८१॥ आत्मसबधमरण भविष्यति न सद्य ॥  
 तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रक जपेत् ॥८२॥ स्वर्णदान प्रकुर्वीत ह्यारोग्य भवति  
 ध्रुवम् ॥८३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विशोत्तरीशान्यतर्दशाफलकथन  
 नाम अष्टत्रिंशोऽध्याय ॥३८॥

शनिदशा मे गुरु अतर मा० ३० दि० १४ फल  
 नपेश युक्त उच्च राशि मे स्वगृही हो तो सर्वकार्य सिद्धि धनलाभ तथा शुभ होता है ॥७२॥  
 राजकृपा से धन वाहन, भूषण, सन्मान, स्वामी मे मान, इच्छित धन प्राप्त होता है ॥७३॥ देव  
 गुरु मे भक्ति तथा विद्वानो मे आदर, स्त्री पुत्रादि वा लाभ तथा परिवार मे उत्भव होता  
 है ॥७४॥ यदि गुरु ६।८।१२ स्थान मे हो नीचराशि मे पापयुक्त हो तो मृत्यु तथा घनघान्य  
 वा नाश होता है ॥७५॥ राजभोग, स्थान हानि, कार्य हानि होती है, विदेशयात्रा तथा कुष्ठ  
 आदि की बीमारी होती है ॥७६॥ यदि गुरु शनि मे केन्द्र, त्रिकोण, घनभाव या लाभभाव मे  
 हो तो वैभव, स्त्रीमुख राजसमान नटमी, धन-सम्पत्ति प्राप्त होनी है ॥७७॥ भोजन, वस्त्र वा  
 सुख तथा दान धर्म आदि होता है, ब्राह्मणो वा सन्मान करने मे सिद्धि होती है यज्ञ वा फल  
 होता है ॥७८॥ अन्नदान, महान् भग्न वेदान्तज्ञान धवण मे प्रवृत्ति होती है। शनि मे गुरु  
 ६।८।१२ मे बलरहित हो ॥७९॥ तो बधुद्वेष, मन मे अशान्ति ब्राह्मणचार हानि, पदहानि  
 कुभोजन, कर्महानि राजदण्ड मे घनहानि ॥८०॥ वैद, स्त्री-गुरु को पीडा होनी है। यदि गुरु  
 २।३ भाव वा स्वामी हो तो देहपीडा होनी है ॥८१॥ दसकी शान्ति के लिए शिवसहस्रनाम  
 स्तोत्र वा पाठ करे ॥८२॥ सुवर्ण वा दान कर तो आरोग्यता प्राप्त होती है ॥८३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखण्ड भावप्रनाशिरामा वि०दशाया  
 शान्यतर्दशा फल कथन नाम अष्टत्रिंशोऽध्याय ॥३८॥

## अथ बुधदशायांबुधभुक्तिमासाः २२ दिन २७ तत्फलम्

मुक्ताविद्रुमलाभश्च ज्ञानकर्मसुखादिकम् ॥ विद्यामहत्त्व कीर्तिश्च नूतनप्रभुदर्शनम् ॥१॥ विभव वारपुत्रादिवितृमातृमुखावहम् ॥ नीचोपश्लेषयुक्ते दृष्टाष्टव्ययराशिगे ॥२॥ पापयुक्तेऽथवा दृष्टे धनधान्यपशुक्षयम् ॥ आत्मबधुविरोधं च शूलरोगादिसंभवम् ॥३॥ राजकार्यकलापेन व्याकुलो भवति ध्रुवम् ॥ द्वितीयदूननाथे तु दारक्लेशो भविष्यति ॥४॥ आत्मसंबन्धमरण वातशूलादिसंभवम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥५॥

### बुध दशा मे बुधान्तर मास २२ दिन २७ फल

बुध की महादशा मे बुध का अन्तर हो तथा शुभग्रह योग युक्त हो तो रत्नो का लाभ, ज्ञान तथा सुख प्राप्ति कर्मनिद्रि विद्यावृद्धि कीर्ति तथा नये स्वामी का योग होता है ॥१॥ अनेक वैभव तथा स्त्री पुत्र, माना पिता को सुख होता है। नीचराशि मे पापग्रह युक्त ही। ६।८।१२ भाव मे हो। २॥ पापदृष्ट हो तो धन-सम्पत्ति की हानि अपने बन्धुओ से विरोध, शूलरोग आदि होते है ॥३॥ राजकार्य समूह से व्याकुल रहता है। २।७ का स्वामी हो तो स्त्री को दुःख होता है ॥४॥ अपने सम्बन्धी का मरण होता है। वातव्याधि होती है। इसकी शान्ति के लिए विष्णुसहस्रनाम का पाठ होना चाहिए ॥५॥

## केतुभुक्तिमासा. ११ दिनानि २७ तत्फलम्

बुधस्यातर्गते केतौ लग्नात्केद्रत्रिकोणगे ॥ शुभयुक्ते शुभेर्दृष्टे लग्नाद्यपसमन्विते ॥६॥ योगकारकसंबन्धे दायेशात्केद्रलाभगे ॥ देहसौख्य धनाल्पत्व बधुश्लेहसहायकृत् ॥७॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्यात्ससारे देहतापनम् ॥ विद्याकीर्तिप्रसंगश्च समानप्रभुदर्शनम् ॥८॥ भोजनावरसौख्यं च ह्यादौ मध्ये मुखावहम् ॥ दायेशाद्रिपुरधस्थे अष्टमे पापसयुक्ते ॥९॥ बाह्यनात्पतनं चैव पुत्रक्लेशसमाकुलम् ॥ चीरादिराजभीतिश्च पापकर्मरत सदा ॥१०॥ वृश्चिकादिविषाद्भूतिनीचै कलह सयुत ॥ शोकरोगादिदुःखं च ससारादिचल भवेत् ॥११॥ द्वितीयदूननाथे तु देहजाड्य भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहाराय छागदानं तु कारयेत् ॥१२॥

### केतु अन्तर मास ११ दिन २७ फल

बुध दशा मे केतु का अन्तर हो, केतु लग्न से केन्द्र त्रिकोण भाव मे शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो और लक्षेण मे युक्त हो ॥६॥ योगवारक यह मे सम्बन्ध हो तथा बुध से भी केन्द्र या लाभ में हो तो देहसौख्य, सामान्य धन, बन्धु का श्लेह तथा साहाय्य ॥७॥ चौपाया पशु का लाभ तथा ससार से विरक्ति, विद्या की प्रसिद्धि, कीर्ति समान आयुवाले प्रभु का दर्शन ॥८॥ उत्तम भोजन आदि प्रथम और मध्य अवधि मे प्राप्त होत है। बुध मे केतु ६।८।१२ स्थान मे पापयुक्त हो तो ॥९॥ सवारी मे गिरना तथा पुत्र को क्लेश चोर तथा राजभय, पाप बुद्धि ॥१०॥ सर्प, बिच्छू आदि से भय, नीचो में कलह, शोक रोग आदि दुःख तथा जनसमाज मे क्लेश होता है ॥११॥ केतु यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो देह जाड्य रोग होता है। इसकी शान्ति के लिए छागदान करना चाहिए ॥१२॥

पूर्वसन्धे एकोनवात्वारिंशोऽध्यायः

अथ शुक्रभुक्तिमासाः ३४ दिनानि ० तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते शुके केंद्रे सामत्रिकोण्ये ॥ सत्कयापुष्यधर्मादिसंप्रहः पुष्यकर्मकृत् ॥१३॥  
मित्रप्रभुवशादिष्टं क्षेत्रलाभः सुखं भवेत् ॥ दशाधिपात्केंद्रगतेऽयवात्स्लामणेपि वा ॥१४॥  
तत्काले श्रियमान्नोति राजश्रीधनसंपदः ॥ वापीरूपतडागादिदानधर्मादिसंप्रहः ॥१५॥  
व्यवसायात्कलाधिक्यं धनधान्यसमृद्धिदम् ॥ दायेशादशुभस्थाने व्यये वा बलवर्जिते ॥१६॥  
हृद्रोगो मानहानिश्च ज्वरातीसारपीडनम् ॥ आत्मबधुविषयोश्च संसारो देहनिःशाम् ॥१७॥  
आत्मदुःखं मनस्तापमायदायादिक तथा ॥ द्वितीयघूननाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥१८॥  
तद्दोषपरिहारार्थं दुगादिवीजपं चरेत् ॥१९॥

बुध दशा में शुक्र का अन्तर मास ३४ दिन ० फल

बुधमहादशा में शुक्र का अन्तर हो, शुक्र लग्न से केन्द्र, लाभ त्रिकोणभाव में हो तो मत्कया  
ध्वज, धर्मकार्य आदि होते हैं ॥१३॥ मित्र या प्रभु के कारण इच्छित कार्यसिद्धि, भूमिलाभ  
तथा सुख होता है। यदि शुक्र, बुध में चतुर्थ दशम या लाभ में हो तो अन्तरकाल में लक्ष्मी की  
प्राप्ति, राजा के समान ऐश्वर्य, कूप, वापी (बावडी), तडाग (तालाब) दान, धर्म आदि पुण्य  
कार्य होते हैं ॥१५॥ व्यापार से अधिक लाभ, धन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। बुध में शुक्र  
अशुभस्थान या १२ में बलहीन हो तो ॥१६॥ हृदयरोग, मानहानि, ज्वर, अतिसार आदि  
पीडा, आत्मबधु का वियोग, तथा अशान्ति रहती है ॥१७॥ आत्मकलत्र, मन में कष्ट,  
आमदनी तथा परिवार की स्थिति भी अमन्तोष पूर्ण रहती है। शुक्र यदि २७ का स्वामी हो  
तो अपमृत्यु होती है ॥१८॥ इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा देवी' का उष करना  
चाहिए ॥१९॥

अथ रविभुक्तिमासाः १० दिनानि ६ तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रो ॥ त्रिकोणे धनलाभे तु तुंगसि स्वांशोपि वा ॥२०॥  
राजप्रसादसौभाग्यं मित्रप्रभुवशात्सुखम् ॥ भूम्यात्मजेन सदृष्टे आदौ भूलाभमेव च ॥२१॥  
लप्राप्तियेन सदृष्टे बहुसौख्यं धनागमम् ॥ धामभूम्याविलाभं च भोजनाबरसौख्यकृत् ॥२२॥  
पष्ठाष्टमव्यये वापि शन्यारफणिसंयुते ॥२३॥ चौराप्रिशस्त्रपीडा च पिताधिक्यं भविष्यति ॥  
शिरोरुध्मनसत्ताप इष्टबंधुविषयगृह्णत् ॥२४॥ द्वितीयसप्तमाधीरो ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥  
तद्दोषपरिहारार्थं शान्तिं कुर्याद्यवाविधि ॥ सूर्यप्रीतिकर्तुं चैव दशाद्देनु हिरण्यकम् ॥२५॥

सूर्य का अन्तर मास १० दिन ६ फल

बुध की दशा में सूर्य का अन्तर हो। सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, धनभाव, लाभस्थान में  
स्वगृही, उच्चराशि में, स्वनवाश में या उच्चराशि में हो तो ॥२०॥ राजा के समान महल में  
रहने या बनाने का सौभाग्य हो। मित्र या प्रभु के महयोग में इच्छित कार्य की सिद्धि होती है।  
मंगल की दृष्टि हो तो प्रथम भूमि का लाभ होता है ॥२१॥ लग्ने भी देसना हो तो बहुसौख्य,  
धनलाभ। धामभूमिलाभ तथा उत्तम भोजन, वस्त्र, भूयस लाभ होता है ॥२२॥ यदि सूर्य लग्न से  
६।८।१० स्थान में शनि, मंगल, राहु युक्त हो तो चोर, अप्रि, शत्रु से पीडा होती है।

पित्ताधिपत्य, शिरोवेदना, सताप,<sup>१</sup> प्रियवन्धु का वियोग होता है॥२४॥ यदि सूर्य २१७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए सुवर्ण तथा गौ का दान और सूर्य की शान्ति करनी चाहिए॥२५॥

### अथ चंद्रभुक्तिमासाः १७ दिनानि ० तत्फलम्

सौम्यस्यातर्गते चन्द्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणयो ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षणे वापि गुरुदृष्टिसमन्विते ॥२६॥ योगस्थानाधिपत्येन योगप्राबल्यमादिशेत् ॥ स्त्रीलाभ पुत्रलाभ च वस्त्रवाहनभूषणम् ॥२७॥ नूतनालयसाम च नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ गीतवाद्यप्रसंग च शास्त्रविद्यापरिश्रमम् ॥२८॥ दक्षिणा दिशमाश्रित्य प्रयाण च भविष्यति ॥ द्वीपातरादिवस्त्राणा लाभश्चैव भविष्यति ॥२९॥ मुक्ताविद्रुमरत्नानि धौतवस्त्रादिलाभगम् ॥ नीचारिक्षेत्रसयुक्ते देहबाधा भविष्यति ॥३०॥ दायेशात्केन्द्रकोणस्थे दुश्चिन्त्ये लाभोऽपि वा ॥ तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थस्थानदेवतदर्शनम् ॥३१॥ मनोधैर्यं हृदुत्साहं विदेशघनलाभकृत् ॥ दायेशात्पण्डरग्रे वा ध्ये वा पापसयुते ॥३२॥ चौराग्निनृपभीतिश्च स्त्रीसंगे गमन भवेत् ॥ दुष्कृतिर्घनहानिश्च कृषिगोश्यादिनासकृत् ॥३३॥ द्वितीयचूननायेतु देहबाधाभविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गविबीजप चरेत् ॥३४॥ वस्त्रदान प्रकुर्वीत आयुर्वृद्धिमुखावहम् ॥३५॥

### चन्द्रमा का अन्तर मास १७ दिन ० फल

बुध की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में, स्वगृही, उच्च राशि में, गुरुयुक्त या दृष्ट हो॥२६॥ चन्द्रमा यदि कारकेश हो तो बलवान् शुभयोग होता है। इसमें स्त्री पुत्र का लाभ, सवारी वस्त्रभूषण प्राप्त होते हैं॥२७॥ नया मकान बनाना उत्तम भोजन, गानवाद्य का प्रसंग शास्त्रीय विद्या में परिश्रम होता है॥२८॥ दक्षिण दिशा की यात्रा तथा द्वीपान्तर से व्यापार और उसमें लाभ होता है। मोती, मूषा आदि रत्न से तथा कपड़े के व्यवसाय से लाभ होता है॥२९॥ यदि चन्द्रमा मीचराशि या शत्रुराशि में हो तो शरीर में अरिष्ट होता है॥३०॥ यदि चन्द्रमा बुध से केन्द्र, त्रिकोण, तृतीय, लाभ स्थान में हो तो उसके अन्तर में पवित्र तीर्थ तथा देवदर्शन होते हैं॥३१॥ मन में धैर्य हृदय में उत्साह एवं विदेश में धन की प्राप्ति होती है। बुध से चन्द्रमा ६।८।१२में पापग्रह युक्त हो तो चोर, अग्नि, राज से भय, स्त्रीसंग में प्रवृत्ति, दुश्चरित्रता, घन हानि, सेतो, गौ आदि पशु का नाश होता है॥३३॥ चन्द्रमा २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गामन्त्र जप करना चाहिए॥३४॥ श्वेत वस्त्र का दान करने से आयु वृद्धि और सुख होता है॥३५॥

### अथ कुजभुक्तिमासाः ११ दिनानि २७ तत्फलम्

सौम्यस्यातर्गते भीमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणयो ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षणे भीमे लग्नाधिपसमन्विते ॥३६॥ राजानुग्रहगति च गृहे कल्याणसमर्थम् ॥ लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ॥३७॥ पुत्रोत्सवादिस्तोय गृह गोधनसकुलम् ॥ गृहक्षेत्रादिलाभचण्डगजाजिसमन्वितम् ॥३८॥

राजप्रीतिकर चैव स्त्रीसौख्य चातिशोभनम् ॥ नीचक्षेत्रसमायुक्ते ह्यष्टमे वा घ्येषि वा ॥३९॥  
 पापदृष्टियुते वापि देहपीडा मनोव्यथा ॥ उद्योगभगो देहादौ स्वप्नामे धान्यनाशनम् ॥४०॥  
 ग्रथिशस्त्रवपादीना भय तापज्वरादिकम् ॥ दायेपात्केद्रेगे भौमे त्रिकोणे लाभगेपि वा ॥४१॥  
 शुभदृष्टेश्च सप्राप्तिर्देहसौख्य घनागमम् ॥ पुत्रलाभ यशोवृद्धि भ्रातृवर्गो महाप्रिय ॥४२॥  
 दायेशास्त्रिपुर धस्ये व्यये वा पापसयुते ॥ तद्भुक्त्यादौ महाक्लेश भ्रातृवर्गे महद्भयम् ॥४३॥  
 नृप्राग्निचौरभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम् ॥ स्थानभ्रंशे महद्वैर्ये मध्ये सौख्य घनागमम् ॥४४॥ अत्रे तु  
 राजभीति स्थात्स्थानभ्रंशो ह्यथापि वा ॥ द्वितीयघ्ननाये च ह्यपमृत्युभय भवेत् ॥४५॥  
 अनड्वाह प्रकुर्वीत मृत्युजग्रजप चरेत् ॥४६॥

### मंगल का अन्तर मास ११ दिन २७ फल

बुध की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र त्रिकोण में स्वगृही या उच्चराशि वा हो और लग्नेश से युक्त हो। ३६॥ तो राजा का अनुग्रह, घर में सुख शान्ति लक्ष्मी की स्थिरता, नष्ट सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। ३७॥ पुत्रोत्पन्न, घर, गौ आदि की स्थिति, मकान, भूमि का लाभ होता है। हाथी-घोड़े आदि सवारी तथा राजमैत्री, स्त्री से सुख होता है। ३८॥ यदि मंगल नीच राशि में स्थित ८।१२ स्थानों में हो तो। ३९॥ तथा पाप दृष्टियुक्त हो तो देह पीडा, मनोव्यथा, उद्योग भग, अपने देश में धनहानि होती है। ४०॥ शस्त्र से घाव, ग्रन्थी आदि रोग, भय, ज्वर आदि होते हैं। बुध से मंगल केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में। ४१॥ शुभ दृष्टि युक्त हो तो धन लाभ देह सौख्य पुत्र लाभ यश वृद्धि तथा भ्राताओं से प्रेम होता है। ४२॥ बुध से मंगल ६।८।१२ भाव में पापग्रहयुक्त हो तो अन्तर के आदि में महान् क्लेश, परिवार में महान भय होता है। ४३॥ राज, अग्नि, चोर वा भय, पुत्र और मित्र से विरोध, स्थान हानि तथा धैर्य होता है। अन्तर के मध्य भाग में धनप्राप्ति होती है। ४४॥ अन्त में राजभय, स्थानहानि होती है। मंगल २।७ वा स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। शान्ति के लिए मृत्युञ्जय जप तथा दान का दान करे। ४५-४६॥

### अथ राहुभुक्तिमासाः ३० दिना १८ तत्फलम्

बुधस्यातर्गते राहौ केदलाभत्रिकोणगे ॥ कुलीरकुभगे वापि कन्याया वृषभेपि वा ॥४७॥  
 राजसम्मानकीर्ति वा समये राजपिष्यति ॥ बुधपतिर्षेव्यापत्तम् देवतादर्शनं तथा ॥४८॥  
 इष्टापूर्तं च महतो मानभ्रावरत्ताभकृत् ॥ मुक्त्यादौ देहपीडा च अते सौख्य विनिर्दिनेत ॥४९॥  
 यथाष्टव्ययराशिस्ये तद्भुक्ता घननाशनम् ॥ मुक्त्यादौ देहनाश च वातज्वरमजीर्ण-  
 कृत् ॥५०॥ सप्राद्युपघये राहौ शुभग्रहसमन्विते ॥ राजसत्तापसतोप नूतनप्रभुदर्शनम् ॥५१॥  
 दायेसात्पृच्छति के वा ह्यष्टमे पापसयुते ॥ निन्दुर राजकार्याणि स्थानभ्रंशो महद्भयम् ॥५२॥  
 बधन रोगपीडा च आत्मबधुमनोव्यथा ॥ हृदोगो मानहानिश्च घनहानिर्भविष्यति ॥५३॥  
 द्वितीयसप्तमस्ये वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ तदोषपरिहारार्थं दुर्गात्स्त्रीजप घरेन् ॥५४॥  
 भेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यदायिनीम् ॥५५॥

### राहु का अन्तर मा० ३० दि० १८ फल

बुध की महादशा में राहु का अन्तर हो, राहु लग्न में केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो, बुध,

कर्क, कन्या तथा कुम्भ राशि में हो ॥४७॥ तो राज सम्मान, कीर्ति तथा राजा के समान ऐश्वर्य, तीर्थयात्रा, देवता दर्शन, स्थान लाभ ॥४८॥ चान्द्रायण आदि व्रत, यज्ञ, दान आदि शुभ कर्म होते हैं। समाज में प्रतिष्ठा, वस्त्र से लाभ, अन्तर के आदि में देह पीडा, अन्त में मुक्त होता है ॥४९॥ राहु ६।८।१२ भाव में हो तो उसके अन्तर में धननाश, वातज्वर, अजीर्ण रोग होता है ॥५०॥ लग्न आदि केन्द्र स्थान में शुभग्रह युक्त राहु हो तो राजा से मेलजोल, सन्तोष, किसी बड़े आदमी से मिलाप हो ॥५१॥ बुध से राहु ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो राजकार्य में त्रुटि, अतएव राजा का निष्ठुर व्यवहार, स्थानभ्रम, महान् भय हो ॥५२॥ वधन, रोग और पीडा, परिवार में चिन्ता, हृदय में रोग, मानहानि, धनहानि हो ॥५३॥ राहु २।७ स्थान में हो तो अपमृत्यु होती है। इसका उपाय दुर्गालक्ष्मी मंत्र का जप है ॥५४॥ सफेद गौ का दान करने से आयु वृद्धि तथा आरोग्यता होती है ॥५५॥

### अथ गुरुभक्तिमासाः २७ दिना० ६ तत्फलम्

बुधस्थान्तर्गते जीवे लक्ष्मात्केद्रत्रिकोणे ॥ स्वोच्छे वा स्वर्षगे वापि लाभे वा धनराशिगे ॥५६॥ देहसौख्यं धनप्राप्तिं राजप्रीतिं तथैव च ॥ विवाहोत्सवकार्याणि नित्यमिष्टान्नभोजनम् ॥५७॥ गोमहिष्याविलाभं च पुराणश्रवणादिकम् ॥ देवतागुरुभक्तिं च दानधर्ममसादिकम् ॥५८॥ यज्ञकर्मप्रवृद्धिं च शिवपूजाफलं तथा ॥ नीचे वास्तगते वापि रिःकाष्टव्ययगोऽपि वा ॥५९॥ शन्यारपतिसयुक्ते कलहो राजविग्रहम् ॥ चौरादिदेहपीडा च पितृमातृविनाशनम् ॥६०॥

#### गुरु का अन्तर मा० २७ दि० ६ फल

बुध की महादशा में गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो, उच्च अथवा स्वगृही हो, लाभ या धनराशि में हो ॥५६॥ तो देह सौख्य, धन प्राप्ति, राजप्रीति, विवाहादि उत्सव, उत्तम भोजन ॥५७॥ गौ आदि का लाभ, पुराण श्रवण, देवता-गुरु की भक्ति, दान, धर्म, यज्ञ आदि होते हैं ॥५८॥ उपासना तथा पूजा का फल प्राप्त होता है। गुरु यदि ६।८।१२ स्थान में नीच राशि अथवा अस्तागत हो, ॥५९॥ शनि, मंगल युक्त हो अथवा शनि, मंगल की राशि के स्वामी से युक्त हो तो कलह, राज विग्रह, चोरी, रोग, देह पीडा, माता-पिता की मृत्यु, ॥६०॥

मानहानी राजदण्डे धनहानिर्भविष्यति ॥ विषाहिज्वरपीडा च कृषिभो भूमिनाशनम् ॥६१॥ दापेशात्केद्रकोणे वा लाभे वा बलसयुते ॥ बहुपुत्रहृदुत्साह शुभ शोभनसयुतम् ॥६२॥ पशुबुद्धिपशोलाभमश्रदानादिक फलम् ॥ दापेशात्पच्छरे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥६३॥ अंगतापश्च वैकल्य देहबाधा भविष्यति ॥ कलत्रचपुत्रवपस्य राजकोपो धनलयः ॥६४॥ अकस्मात्कलहाद्भूति प्रमोहो राजविग्रहम् ॥ द्वितीयसप्तमस्ये वा देहबाधा भविष्यति ॥६५॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रक जपेत् ॥ योभूहिरण्यदानेन सर्वारिष्ट व्योहति ॥६६॥

मानहानि, राजदण्ड, धनहानि, विष, सर्प, ज्वर, पीडा, कृषि हानि, भूमि नाश होता है ॥६१॥ बुध से गुरु केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में बलवान् हो तो पुत्र, प्राता के उत्साह की

वृद्धि, शुभ कार्य होता है॥६२॥ पशु वृद्धि, यज्ञ विस्तार, अन्नदान आदि शुभ कर्म होते हैं। बुध से गुरु ६।८।१२ भाव में बलहीन हो तो॥६३॥ ज्वर, विफलता, देह बाधा, परिवार में विषमता, राजकीय, भय, मोह, राज विग्रह होता है। २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है॥६५॥ इसकी शान्ति के लिये शिव सहस्र जप, गौ भूमि सुवर्ण का दान करने से सब अरिष्ट की शान्ति होती है॥६६॥

### अथ शनिभुक्तिमासाः ३२ दि० ९ तत्फलम्

सौम्यस्यातर्जते भन्दे स्वोच्छे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ॥ त्रिकोणताभगे वापि गृहे कल्याणवर्द्धनम् ॥६७॥  
राज्यलाभ महोत्साह गृह गोधनसकुलम् ॥६८॥ शत्रुस्थानफलाबाप्ति भुक्त्या तीर्थविनाशनम् ॥  
॥ घञ्छाष्टमध्यमे मदे दापेसाद्वा तथैव च ॥६९॥ अरातिदुःखबाहुष्य दारपुत्रादिपीडनम् ॥  
बुद्धिभ्रश बधुनाश कर्मनाश मनोरुजम् ॥७०॥ विदेशगमन चैव स्वप्न दूराभिसपदम् ॥  
द्वितीयघ्नननाथे तु ह्यपमृत्युर्मविष्यति ॥७१॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥ कृष्णा  
गा महिषी दद्यादापुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥७२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विशोत्तरीबुधान्तर्शाफलकथन  
नामोत्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९॥

### शनि का अन्तर मा० ३२ दि० ९ फल

बुध की महादशा में शनि का अन्तर ही, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान में, स्वगृही या उच्च राशि का हो॥६७॥ तो राज्य लाभ महाम् उल्हाह होता है। घर में गौ आदि पशु रहते हैं॥६८॥ शत्रु की सम्पत्ति प्राप्त होती है। तीर्थ यात्रा होती है। यदि बुध में शनि ६।८।१२ स्थान में अथवा लग्न से हो तो शत्रु द्वारा अति दुःख प्राप्त हो॥६९॥ स्त्री-शुभ्र को पीडा हो। ज्ञान हानि, बन्धुनाश, कर्मनाश, अमान्ति॥७०॥ विदेश यात्रा घर से दूर रहना होता है। शनि यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥७१॥ इसकी शान्ति के लिये मृत्युजय जप तथा बाली गौ दान करे तो आरोग्यता और वृद्धि होती है॥७२॥

इति श्री बृ० ११० हो० ३२० पू० भा० ३२० विशोत्तरी बुधान्तर दशाफलकथन  
नाम उत्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९॥

### अथ केतुभुक्तिदशायामन्तर्दशामासाः ४ दि० ६ तत्फलम्

केद्रे त्रिकोणताभे वा लग्नाधिपसमन्विते ॥ भाग्यकर्मसुसर्षधे वाहनेशसमन्विते ॥१॥ तद्भुक्ती  
धनधान्यादि चतुष्पाद्भोग्यताभङ्गत् ॥ पुत्रदारादिशील्य च राजप्रीतिमनोरथम् ॥  
धामभूम्यादिलाभश्च गृह गोधनसकुलम् ॥ शीघ्रस्तथेदसपुक्ते ह्यष्टमेज्ययोपि या ॥३॥ दूदोग  
भानहानि च धनधान्यपशुशपम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च मनभ्रातृत्वमेव च ॥४॥  
द्वितीयघ्नननाथेन सवधे तत्रसन्विते ॥ अनारोग्य महत्खष्टमात्मबधुविपोगहृत् ॥५॥  
दुपादिबोजप कुर्यान्मृत्युजपचप चरेत् ॥६॥



## केतु महादशा में केतु की अन्तर्दशा मास ४ दिन ६ फल

केतु यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभस्थान में लग्नेश युक्त तथा ९।१० भावों से सम्बन्ध रखता हो तथा चतुर्थेशयुक्त हो ॥१॥ तो इसके अन्तर में धन सम्पत्ति तथा गौ आदि प्राप्त होती है। स्त्री पुत्र का सुख तथा राजा से प्रीति, इच्छापूर्ति ॥२॥ ग्राम, भूमि का लाभ तथा घर में गोधन होता है। यदि केतु नीच राशि में, अस्तका स्वयं हो या ऐसे ग्रह से युक्त हो अथवा ८।१२ भाव में हो ॥३॥ तो हृदयरोग, मान हानि, तथा धन सम्पत्ति का नाश, स्त्री पुत्र को पीडा, मन की चञ्चलता होती है ॥४॥ यदि केतु २।७ के स्वामी से सम्बन्ध करता हो या २।७ में स्थित हो तो रोग, कष्ट, तथा बन्धुवियोग करता है ॥५॥ उपाय—दुर्गादेवीमंत्र जप या 'मृत्युञ्जय मन्त्र जप ॥६॥

### अथ शुक्रभुक्तिमासाः १४ दिनानि० तत्फलम्

केतोरतर्गते शुके स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुते ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा राज्यनाथेन सयुते ॥७॥ राजप्रीति च सौभाग्य राजत्वावरसकुलम् ॥ तत्काले श्रियमाप्नोति भाग्यकर्मेशसयुते ॥८॥ नष्टराज्यघनप्राप्ति सुखवाहनमुत्तमम् ॥ सेतुद्वानादिक चैव देवतादर्शन महत् ॥९॥ महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥ दायेशात्केद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभोपि वा ॥१०॥ बेहारोग्य शुभ चैव गृहे कल्याणशोभनम् ॥ भोजनाबरनूपाप्तिमश्वदोलादिलाभकृत् ॥११॥ दायेशाद्रिपुर धस्ये व्यये वा पापसयुते ॥ अकस्मात्कलह चैव पशुधान्यादिपीडनम् ॥१२॥ नीचस्थे श्वेतसयुक्ते लग्नात्पष्ठाष्टराशिगे ॥ स्वबधुजनवैषम्य शिरोसिन्नपपीडनम् ॥१३॥ हृद्रोग मानहानि च धनधान्यपशुक्षयम् ॥ कलत्रपुत्रपीडायास्तचार देहविह्वलम् ॥१४॥ द्वितीयदूननामे तुदेहजाड्यमनोरुजम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजप चरेत् ॥ श्वेता गा महिषी दद्यादापुरारोग्यदायिनीम् ॥१५॥

### शुक्र का अन्तर मास १४ दि ० फल

केतु महादशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र केन्द्र, त्रिकोण लाभ में दशमेश युक्त हो ॥७॥ तो राजप्रीति, ऐश्वर्य राजसी पोशाक लक्ष्मी प्राप्त होती है ॥८॥ यदि ९।१० के स्वामी से युक्त हो तो नष्ट ऐश्वर्य की प्राप्ति, उत्तम वाहन सुख, रामेश्वरयात्रा देवदर्शन प्राप्त होता है ॥९॥ राजा की कृपा से ग्राम भूमि का लाभ होता है। केतु यदि केन्द्र त्रिकोण, लाभ तथा तृतीयभाव में हो ॥१०॥ तो देहारोग्य, शुभ तथा घर में सुखशान्ति, उत्तम भोग्य पदार्थ तथा घोडा गाडी आदि का लाभ करता है ॥११॥ केतु यदि ६।८।१२ भाव में पापयुक्त हो तो अकस्मात् कलह तथा अन्न, पशु की हानि होती है ॥१२॥ यदि केतु लग्न से ६।८ भाव में नीचग्रह से युक्त हो तो परिवार में वैमनस्य, सिर आस्र में व्रण से पीडा ॥१३॥ हृदयरोग, मानहानि, धन ऐश्वर्य पशु का क्षय, स्त्री-पुत्र को पीडा, देह विह्वल रहे ॥१४॥ यदि केतु २।७ का स्वामी हो तो देहजाड्य तथा मन में अशान्ति होती है। इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा' मन्त्र का जप करना चाहिए तथा श्वेत गौ का दान करना चाहिए ॥१५॥ (यहां केतु की दशा में ही केतु का अन्तर है। अतः 'दायेशाद्' पद व्यर्थ है।)

### अथ रविभुक्तिमासाः ४ दिना० ६ तत्फलम्

केतोरतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रेणैव वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा शुभयोगनिरीक्षिते ॥१६॥  
घनघान्यादिलाभश्च राजानुग्रहवैभवम् ॥ अनेकशुभकार्याणि चेष्टसिद्धिं मुखावहा ॥१७॥  
पष्ठाष्टव्यपराशित्ये पापग्रहसमन्विते ॥ तद्भुक्तौ राजभीतिश्च पितृमातृवियोगकृत् ॥१८॥  
विदेशगमनं चैव चौराहिविपपीडनम् ॥ राजमित्रविरोधश्च राजदण्डाद्वनक्षय ॥१९॥  
शोकरोगभयं चैव उष्णाधिक्यं ज्वरो भवेत् ॥ यातु कार्यार्यसिद्धिं स्यात्स्वल्पग्रामाधिपत्य ॥२०॥  
देहसौख्यं चार्थलाभं पुत्रलाभं मनोदृढम् ॥ यातु कार्यार्यसिद्धिं स्यात्स्वल्पग्रामाधिपत्य ॥२१॥  
दापेशादष्टरिंके वा पठे वा पापसप्तपुते ॥ अप्रविज्ञो मनोभीतिर्घनघान्यपशुस्य ॥२२॥  
आदीं मध्ये महाक्लेशानन्ते सौख्यं विनिदिशेत् ॥ द्वितीयसप्तमाघीशे ह्यपमृत्युर्मविष्यति ॥२३॥  
दर्शशांतिं प्रकुर्वीत स्वर्णधेनुं प्रदापयेत् ॥२४॥

#### सूर्य का अन्तर मा० ४ दि० ६ फल

केतु महादशा मे सूर्य का अन्तर हो। सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ मे स्वगृही, उच्चराशि का हो शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो ॥१६॥ तो घन सम्पत्ति का लाभ, राज कृपा प्राप्त वैभव, अनेक शुभ कार्य तथा सुखकर इष्टसिद्धि हो ॥१७॥ यदि सूर्य पापग्रह युक्त होकर ६।८।१२ भाव मे हो तो अन्तर मे राजभय, माता पिता से वियोग ॥१८॥ विदेश यात्रा, चोर, सर्प, विप से पीडा तथा राजमित्र से विरोध और राजदण्ड से घनहानि होती है ॥१९॥ भोज, रोग का भय तथा ज्वर की तीव्रता होती है। केतु से सूर्य केन्द्र त्रिकोण या २।११ भाव मे हो ॥२०॥ तो देहसौख्य, घनलाभ, पुत्रलाभ मन की दृढता तथा यात्रा वा साफल्य एव शम वा साधारण अधिकार प्राप्त होता है ॥२१॥ यदि सूर्य केतु से ६।८।१२ भाव मे पापयुक्त हो तो भोजन मे भी त्रुटि, घन, सम्पत्ति, पशु की हानि होती है ॥२२॥ प्रथम और मध्य मे महानु दुःख और अन्त मे सुख हो। २।७ वा स्वामी यदि सूर्य हो तो अपमृत्यु होती है ॥२३॥ उपाय-“दर्श यज्ञ” तथा “सुवर्ण धेनु” का दान करना चाहिए ॥२४॥

### अथ चन्द्रभुक्तिमासाः ७ दिना० ० तत्फलम्

केतोरतर्गते चन्द्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्राशिते ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा घने शुभसमन्विते ॥२५॥  
राजप्रोतिर्महोत्साहं कल्याणचमहत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन गृहभूम्यादिलाभकृत् ॥२६॥  
भोजनावरपश्चादिव्ययसापेऽधिकं फलम् ॥ अश्वबाहनलाभश्च धरमाभरणभूषणम् ॥२७॥  
देवान्यतडागादिपुण्यधर्मादिसग्रहम् ॥ पुत्रदारादिसौख्यं च पूर्णचन्द्रस्तर्पणं च ॥२८॥ नीते वा क्षीणो चन्द्रे पष्ठाष्टव्यपराशिते ॥ आत्मदौस्थ्यं मनस्तापं कार्याविघ्नं महद्दुःखम् ॥२९॥  
पितृमातृवियोगं च देहनाशं मनोव्यथाम् ॥ व्यसायात्फलं नष्टगोमहिष्यादिनाशकृत् ॥३०॥  
दापेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा बलसप्तपुते ॥ कृषिगोभूमिताभं च इष्टवधुसमागमम् ॥३१॥  
ताम सात्कार्यसिद्धिं च गृहे गोक्षीरमेव च ॥ भ्रूहृत्य शुभमारोग्यं मध्ये राजप्रियं शुभम् ॥३२॥  
अते तु राजभीतिं च विदेशगमनं तथा ॥ दूरयात्राविमचारं सर्वाघजनपूजनम् ॥३३॥  
दापेशात्पठरिंके वा रन्ध्रे वा बलवर्जिते ॥ घनघान्यादिहानिश्च मनोव्याकुलमेव च ॥३४॥  
स्ववधुजनदानृत्यं भ्रातृपीडा तपेव च ॥ निघनाधिपदोषेण द्विमन्तमाधिपे मुने ॥३५॥  
अपमृत्युमयं तस्य भानिं कुर्यात्कार्याधि ॥ चन्द्रानिन्करं चैव ह्यापुरारोग्यमभवम् ॥३६॥

## केतु दशा में चन्द्रान्तर मास ७ दि० फल

केतु की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धनस्थान में स्वोच्च या स्वगृही और शुभ ग्रहयुक्त हो॥२५॥ तो राजप्रीति, महान् उत्साह, कल्याण, महान् सुख एवं राजकृपा से गृह भूमिका लाभ होता है॥२६॥ उत्तम भोजन, सुन्दर वस्त्र, गौ आदि पशु, व्यापार से अधिक लाभ, घोड़े की सवारी, श्रेष्ठ आभूषण,॥२७॥ देवमन्दिर, तालाब, पुण्य, धर्म आदि का राग्रह, स्त्री-पुत्र का सुख यह सुलभ होते हैं, यदि चन्द्रमा पूर्ण हो तो॥२८॥ चन्द्रमा नीच तथा क्षीण और ६।८।१२ राशि में हो तो कि कर्तव्यविमूढता, मन में असन्तोष, कार्य में विघ्न, महान् भय,॥२९॥ पिता-माता का वियोग, देह की जडता, मन में व्यथा, व्यापार में हानि, गौ आदि पशुनाश होता है॥३०॥ केतु से चन्द्रमा केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में बलवान् हो तो कृषि गौ, भूमि का लाभ, प्रेमी बन्धु का दर्शन॥३१॥ कार्यसिद्धि, गौरव भोज्य, भूमि से सुन्दर खेती आरोग्यता, तथा अन्तर के मध्यकाल में राजानुग्रह प्राप्त होता है॥३२॥ अन्तर के अन्त में राजा से भय विदेशयात्रा, तथा दूर की यात्रा, सबन्धियों में आदर॥३३॥ होता है। केतु से चन्द्रमा बलहीन तथा ६।८।१२ भाव में हो तो धन सम्पत्ति की हानि मन में व्याकुलता॥३४॥ स्वीयबन्धुओंसे साहाय्य आताओ से पीडा होती है। चन्द्रमा अष्टमाधिपति हो और २।७ भावाधीन से युक्त हो तो ॥३५॥ अकालमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति करना चाहिए। चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए दानादि करे तो आयु और आरोग्यता होती है॥३६॥

## अथ कुजभुक्तिमासः ४ दिना० २७ तत्फलम्

केतोरतर्मते भीमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे भीमे शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥३७॥ आदौ शुभफल चैव ग्राम्यभूम्यादिलाभकृत् ॥ धनधान्यादिलाभश्च चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥३८॥ गृहारामक्षेत्रलाभ राजानुग्रहैर्भवम् ॥ भाग्य कर्मशक्तये भूलाभ सौख्यमेव च ॥३९॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्श्रिक्ये लाभयेषि वा ॥ राजप्रीतियशोलाभ पुत्रमित्रादिसौख्यकृत् ॥४०॥ पष्ठाष्टमव्यये भीमे दायेशाद्द्वनयेषि वा ॥ द्रुत करोति भरण विदेश चापव भ्रमम् ॥४१॥ प्रमेहमूत्रकुष्ठ्यादिचौरादिनृपपीडनम् ॥ कलहादौ व्यथापुक्तः खितित्सुखयिपर्दनम् ॥४२॥ द्वितीयद्वयनाथे तु तापञ्चरविषाद्भयम् ॥ दारपीडा मनःक्लेशमपमृत्युभयभवेत् ॥४३॥ अनर्ह्याह प्रदद्यात्तु सर्वसपत्सुलावहम् ॥४४॥

## मंगल का अन्तर मास ४ दि० २७ फल

केतु की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न में केन्द्र, त्रिकोण, अग्ने उच्च में या स्वगृही हो शुभग्रहदृष्टि युक्त या दृष्ट हो॥३७॥ तो अन्तर में पूर्वादि में शुभफल होता है। ग्रामभूमि का लाभ होता है, धन सम्पत्ति तथा गौ आदि प्राप्त होते हैं॥३८॥ मन्त्रान, बागीचा, खेत की भूमि आदि सब राजकृपा में प्राप्त होती है। ९।१० में मन्वन्ध हो तो पृथ्वी का लाभ और सुग होता है॥३९॥ केतु में मंगल केन्द्र, त्रिकोण, तृतीय तथा लाभभाव में हो तो राजप्रीति, यशोविस्तार, पुत्र मित्र आदि का सुख होता है॥४०॥ मंगल ६।८।१२ भाव में तो विदेश में भ्रमण, आपत्ति तथा मृत्यु का भय होता है॥४१॥ प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी,

चोर तथा राजा से पीडा कलह, दुःख तथा कभी कुछ सुख होता है ॥४२॥ २।७ का स्वामी हो तो ज्वर और विष से भय हो, स्त्री को पीडा, मन में क्लेश तथा अपमृत्यु का भय होता है ॥४३॥ बैल का दान करने से सब सुख होता है ॥४४॥

### अथ राहुभुक्तिमासाः १२ दिना . १८ तत्फलम्

केतोरतर्गते राहौ स्वोच्चे मित्रस्वराशिगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये धनसङ्गके ॥४५॥  
तत्काले धनलाभ स्यात्ससारो भवति ध्रुवम् ॥ म्लेच्छप्रभुवशात्सौख्य धनधान्यफलादिकम् ॥४६॥ चतुष्पाञ्जीवलाभ स्याद्वायामभूम्यादिलाभकृत् ॥ भुक्त्यादौ क्लेशमाप्नोति मध्याते सौख्यमाप्नुयात् ॥४७॥ रक्षे वा व्यपने राहौ पापसङ्घटिसप्तुते ॥ बहुपुत्र कृश देह शीतज्वरविषाद्भयम् ॥४८॥ चातुर्थिकज्वर चैव क्षुद्रोपद्रवपीडनम् ॥ अकस्मात्कलह चैव प्रमेह शूलमेव च ॥४९॥ द्वितीयसप्तमस्थे वा तदा क्लेशमहद्भयम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजप चरेत् ॥ अपुतहोम कर्तव्य सर्वसौख्यप्रदायक ॥५०॥

केतु की दशा में राहु का अन्तर भा० १२ दि० १८ फल

केतु की महादशा में राहु का अन्तर हो। राहु स्वोच्च या मित्रराशि में केन्द्र त्रिकोण, लाभ, तथा २।३ भाव में हो तो ॥४५॥ अन्तर में धन लाभ समार सुखमय होता है। यवन आदि अधिकारी द्वारा सुख तथा धन मर्पति होती है ॥४६॥ चौपाया पशु का लाभ, तथा ग्राम भूमि का लाभ होता है। अन्तर के आदि में क्लेश तथा मध्य और अन्त में सुख होता है ॥४७॥ ८।१० में पापग्रह में युक्त राहु हो तो बहुत मन्तान के भरण पोगण में असमर्थता, शीतज्वर, विषभय, ॥४८॥ चौथीया ज्वर तथा उपद्रवों से पीडा, अकस्मात् कलह, प्रमेह तथा शूल ॥४९॥ होता है। और यदि राहु २।७ वी राशि में हो तो महान् भय और क्लेश होता है। उसको शान्ति के लिए 'दुर्गा' मन्त्र का जप करा और दश हजार आहुति में होम करे तो सब प्रकार का सुख होता है ॥५०॥

### अथ गुरुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

केतोरतर्गते जीवे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि लग्नाधिपसमन्विते ॥५१॥  
कर्मभागधाधिपैर्युक्ते धनधान्यार्थसप्तदम् ॥ राजप्रीति मनोत्साहमन्त्रादौल्यादिलाभकृत् ॥५२॥  
गृहे कल्याणसर्पति मुत्रलाभ महोत्सवम् ॥ पुष्पतीर्थ तयोत्साह सत्कर्म च सुखावहम् ॥५३॥  
दृष्टदेवप्रसादेन विजय वार्यलाभकृत् ॥ राजसंल्लापकार्याणि नूतनप्रभुदर्शनम् ॥५४॥  
घष्ठाष्टमध्यमे जीवे दायेशान्नीचगेपि वा ॥ चौराहिवर्णभीति च धनधान्यादिनाशनम् ॥५५॥  
पुनदारविषोग च अतीवक्लेशसंभवम् ॥ आदौ शुभफल चैव अते क्लेशकर भवेत् ॥५६॥  
दायेशात्केद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ॥ शुभयुक्ते नृपाद्भौतिर्विचित्रावरभूषणम् ॥५७॥  
दूरदेशप्रयाण च स्वयंपुजनपोषणम् ॥ भोजनावरपश्चादिभुक्त्यादौ देहपीडनम् ॥५८॥ अते तु स्वानचलनमकस्मात्कलहो भवेत् ॥ द्वितीयदूननाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥५९॥  
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकः जपेत् ॥ महामृत्युजय जाप्य सयौपद्रवनाशनम् ॥६०॥

गुरु का अन्तर भास ११ दि० ६ फल

केतु महादशा में गुरु का अन्तर हो। गुरु केन्द्र त्रिकोण तथा लाभ में उच्च राशि का वा

स्वगृही या लग्नेश युक्त हो॥५१॥ गुरु ९।१० भाव के स्वामी में युक्त हो तो धनसम्पत्ति होती है। राजप्रीति, मन में उत्साह तथा घोडा गाडी या मोटर की सवारी होती है॥५२॥ घर में वत्पाण, सम्पत्ति, पुत्रलाभ से महोत्सव तथा पवित्र तीर्थ यात्रा, उत्साह और सुख होता है॥५३॥ इष्ट देव कृपा से विजय और कार्य से लाभ होता है। राजा से मेलमिलाप, नये प्रभु का दर्शन॥५४॥ यदि गुरु ६।८।१२ में (लग्न से या केतु से) नीचस्वित हो तो चौर, सर्प, घाव से भय और धन-सम्पत्ति का नाश होता है॥५५॥ स्त्री-पुत्र से वियोग और बहुत क्लेश होता है। आदि में शुभ फल और अन्त में क्लेशकारी होता है॥५६॥ यदि केतु से गुरु केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव तथा तृतीयभाव में शुभयुक्त हो तो राजभय, सुन्दर विचित्र भूषण॥५७॥ दूरदेश की यात्रा, परिवार का भरण-पोषण, उत्तम भोजन, सुन्दर गौ आदि पशु की प्राप्ति हो। अन्तर के आदि में कुछ देहपीडा हो॥५८॥ अन्त में स्थानविच्छ्युति हो, अचानक कलह हो। गुरु यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥५९॥ इसकी शान्ति के लिए 'शिवसहस्रनाम' का पाठ और 'महामृत्युञ्जय' का जप करे तो सब उपद्रवों का नाश होता है॥६०॥

### अथ शनिभुक्तिमासाः १६ दिना० ९ तत्फलम्

केतोरक्षर्गते मदे स्वदशाया तु पीडनम् ॥ बधो क्लेशे मनस्तापश्चतुपाञ्जीवलाभकृत् ॥६१॥  
 राजकार्यकलापेन धननाश महद्भयम् ॥ स्थानाच्च्युति प्रवासश्च मार्गं चौरभय भवेत् ॥६२॥  
 आलस्य मनसो हानिश्चाष्टमे व्यथराशिगे ॥ मीनत्रिकोणगे मदे तुलाया स्वर्गोपि वा ॥६३॥  
 केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये वा शुभाशके ॥ शुभदृष्टिसमाप्तौ च सर्वकार्यसिद्धिनाम् ॥६४॥  
 स्वप्रभोश्च महत्सौख्य भ्रमण रणलाभगम् ॥ स्वग्रामे सुखसंपत्ति स्ववर्गे राजदर्शनम् ॥६५॥  
 दायेशात्यच्छरि के वा अष्टमे पापसयुते । देहतापो मनस्ताप कार्ये विप्रो महद्भयम् ॥६६॥  
 आलस्य मानहानिश्च पितृमात्रोर्बिनाशनम् ॥ द्वितीयचूननाथे तु ह्यपमृत्युभय भवेत् ॥६७॥  
 तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोम च कारयेत् ॥ कृष्णा गा महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥६८॥

शनि का अन्तर मास १६ तथा दिन ९ फल

केतु की दशा में शनि का अन्तर हो तो पीडा, बधन, क्लेश, सताप, पशुहानि होती है॥६१॥ राज कार्य के कारण धन हानि, महान् भय, स्थानभ्रम, परदेश में वास, यात्रा में चोरो का भय॥६२॥ आलस्य, चिन्ता हो। यदि शनि ८।१२ भाव में मीन राशि के त्रिकोणभाव में या तुलाराशि में अथवा स्वराशि में हो॥६३॥ केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में या तीसरे भाव में शुभग्रह के नवाश में हो, शुभदृष्टि हो तो सम्पूर्ण कार्य तथा मनोरथ सिद्ध होते हैं॥६४॥ अपने स्वामी द्वारा महान् सुख भ्रमण तथा रण में लाभ होता है, अपने ग्राम में सुख सम्पत्ति प्राप्त हो और यदि शनि अपने वर्ग में हो तो राजदर्शन हो॥६५॥ केतु में यदि शनि ६।८।१२ भाव में पापग्रह युक्त हो तो देह में ज्वर, मन में अशान्ति, कार्य में विघ्न तथा महान् भय होता है॥६६॥ आलस्य, मानहानि, माता पिता का निधन होता है। और २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है॥६७॥ इसकी शान्ति के लिए 'तिल-होम' तथा काली गौ का दान करे तो आयु तथा आरोग्यता होती है॥६८॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ११ दि० २७ तत्फलम्

केतोरतर्गते सौम्ये केदलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुक्ते राज्यलाभो महत्सुखम् ॥६९॥  
 सत्कथाश्रवण दान धर्मसिद्धि सुखावहा ॥ मूलाभ पुत्रलाभश्च शुभगोष्ठीघनतागम ॥७०॥  
 अयत्नाद्धर्मलब्धिश्च विवाहश्च भविष्यति ॥ गृहे शुभकर चैव घस्त्राभरणभूषणम् ॥७१॥  
 भाग्यकर्मधिर्पुङ्के भाग्यवृद्धि सुखावहा ॥ विद्वद्गोष्ठीकलापेन सलापो भूषणादिकम् ॥७२॥  
 पष्ठाष्टमध्यमे सौम्ये मदाराहियुतीक्षिते ॥ विरोधराजकार्याणि परगोहनिवासनम् ॥७३॥  
 वाहनावरपश्चादिघनधान्यादिनाशकृत् ॥ भुक्त्यादौ शोभन प्रोक्त मध्ये सौख्य घनतागमम् ॥७४॥

बुध का अन्तर मा० ११ दि० २७ फल

केतु की महादशा में बुध का अन्तर हो। बुध लग्न में केन्द्र, लाभ त्रिकोण में उच्चराशि का या स्वगृही हो तो राजा में लाभ और महान् सुख होता है ॥६९॥ इसके अन्तर में सत्कथा श्रवण, दान, धर्म, तथा सुख और भूमिलाभ पुत्र लाभ, मित्रगोष्ठी तथा धन प्राप्ति होती है ॥७०॥ प्रायः विना परिश्रम ही धर्मलब्धि विवाह तथा धर में वस्त्राभरण, मंगल होता है ॥७१॥ ९।१० भाव का स्वामी भी युक्त हो तो भाग्य की वृद्धि हो, विद्वद्गोष्ठी का आनन्द रहे, भूषण आदि की प्राप्ति हो ॥७२॥ यदि बुध ६।८।१२ भाव में मंगल गति राहु युक्त हो तो राजकार्य में विरोध परगृह में निवास होता है ॥७३॥ वाहन वस्त्र पशु, धन, सम्पत्ति आदि का नाश होता है। अन्तरवे आदिमें शुभ तथा मध्यमे सुख और धनप्राप्ति हो ॥७४॥

अते क्लेशकर चैव दारपुत्रादिपीडनम् ॥ दायेशात्केदगे सौम्ये त्रिकोणे लाभगेरि वा ॥७५॥  
 देहारोग्य महालाभ पुत्रकल्याणवैभवम् ॥ भोजनावरपश्चादिध्यवसायेऽधिक फलम् ॥७६॥  
 दायेशात्पष्ठरध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥ तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशो दारपुत्रादिपीडनम् ॥७७॥  
 राजभीतिकर चैव मध्ये तीर्थकर भवेत् ॥ द्वितीयदूननाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥  
 तदोपपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रक जपेत् ॥७८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे वि० केत्वतर्दशाफलकथन नाम  
 चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥

अन्तर के अन्त में दुःख, स्त्री पुत्र को पीडा हो। केतु में बुध केन्द्र में त्रिकोण में या लाभभाव में हो तो ॥७५॥ आरोग्यता, महान् लाभ पुत्र कल्याण वैभव, उत्तम भोजन, वस्त्रादि गौ आदि पशु तथा लाभकारी व्यापार होता है ॥७६॥ केतु में बुध ६।८।१२ में वसहीन हो तो उसके अन्तर के आदि में महाक्लेश, म्यो, पुत्र को पीडा ॥७७॥ गजभय होता है, मध्य में तीर्थयात्रा होती है। ७।७ का स्वामी बुध हो तो अपमृत्यु होता है। इसकी शान्ति के लिए 'विष्णुसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ करे ॥७८॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० केत्वन्तर्दशाफलकथन नाम  
 चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥

### अथ शुक्रदशायां शुक्रभुक्ति मासाः ४० दिना०० तत्फलम्

भृगोरतर्गते शुके लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ लाभे वा बलसयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत् ॥१॥  
 विप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गोमहिष्यादिलाभकृत् ॥ पुत्रोत्सवादिसतोप गृहे कल्याणसम्भवम् ॥२॥  
 सन्मान राजसन्मान राज्यलाभो महत्सुखम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्धगे वापि तुगाशे स्वाशोषे वा  
 ॥३॥ नूतनालघनिर्माणं नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ कलत्रपुत्रविभव मित्रसयुक्तभोजनम् ॥४॥  
 अन्नदानं प्रियं नित्यं दानधर्मादिराग्रहं ॥ महाराजप्रसादेन बाहूनावरनूपणम् ॥५॥  
 व्यवसायात्फलाधिक्यं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ प्रयाण पश्चिमे भागे वाहूनावरलाभकृत् ॥६॥  
 लग्नाद्युपचये शुके शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥ मित्राशे तुगलाभेशयोगकारकसयुते ॥७॥ राज्यलाभो  
 महोत्साहो राजप्रीतिः शुभबहू ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिवर्द्धनम् ॥८॥ पष्ठाष्टमव्यये  
 शुके पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ॥ चौरादिव्रणभीतिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ॥९॥ राजद्वारे जनद्वेष  
 इष्टयधुविनाशनम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥१०॥ द्वितीयद्वानाथे तु स्थिते  
 चेन्मरणं भवेत् ॥ शुके दुर्गाजिप कुर्याद्विनुदानं च वारयेत् ॥११॥

### शुक्रदशा मे शुकान्तरं वर्षं ३ मा० ४ दि० ० फलं

शुक्र की महादशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र लग्न स पन्द्र त्रिकोण में या लाभ में बलवान् होकर स्थित हो तो प्रबल योग होता है ॥१॥ ब्राह्मण के द्वारा धन प्राप्ति हो, गौ आदि पशु का लाभ तथा पुत्रोत्सव आदि सन्तोष हो घर में सुख शान्ति हो ॥२॥ समाज में सन्मान राजा से मान तथा लाभ एवं महान् सुख होता है। यदि शुक्र अपन उच्चस्थान में स्वराशि वा, उच्चाश में अपने नवाश में हो ॥३॥ तो नया मकान बन तथा नित्य उत्तम भोजन, स्त्री पुत्र का वैभव इष्टमित्रों सहित भोजन (मित्रगोष्ठी) ॥४॥ अन्नदान, दान-धर्म आदि का सप्रह होता है। राजकृपा में वाहूनादि प्राप्त होता है ॥५॥ व्यापार में अधिप लाभ, चौपाया जीव का लाभ तथा पश्चिम दिशा की यात्रा में भी वाहूनादि का लाभ होता है ॥६॥ लग्नादि केन्द्र में शुभदृष्टियुक्त शुक्र हो या मित्र नवाश में उच्च में तथा लाभयोग हो या वारवेश का योग हो तो ॥७॥ राजा में लाभ महान् उत्साह, राजप्रीति, घर में सुख शान्ति, स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है ॥८॥ शुक्र यदि ६।८।१० भाव में पापयुक्त या दृष्ट हो तो चोर चर्ष घाव आदि में भय तथा जनपीडा होती है ॥९॥ राजद्वार में पराजय इष्ट वन्धुओं में द्वेष तथा हानि, स्त्री पुत्र आदि की पीडा प्रायः समाज में निन्दा होती है ॥१०॥ शुक्र २।७ का स्वामी हो तो मृत्यु होती है। इनकी शान्ति के लिये दुर्गा मन्त्र जप तथा गौदान करना चाहिए ॥११॥

### अथ रविभुक्तिमासाः १२ दिना . ० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गते सूर्ये सताप राजविद्वजम् ॥ दायादिकसह चैव व्यवहारमयापि वा ॥१॥  
 स्वोच्चे स्वोत्प्रेगे सूर्ये मित्रसे केन्द्रकोणगे ॥ दायेशाशुमभावे वा लाभे वा धनगोषे वा ॥२॥  
 तद्भुक्तौ धनलाभं स्याद्दान्यस्त्रीधनसंपदं ॥ स्वप्रमोश्च महत्सौख्यमिष्टवधौ समागम्य  
 ॥३॥ पितृमात्रो मुखप्राप्तिं भ्रातृलाभं गुणावहम् ॥ मत्कीर्तिं सुतमौभाग्यं पुत्रलाभं च

विदति ॥१५॥ पष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाब्दादशे तथा ॥ नीचे वा पापवर्गस्ये देहताप मनोरुजम् ॥१६॥

### शुक्र दशा मे सुपान्तर मा० १२ फल

शुक्र की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो, सूर्य सप्त से केन्द्र, त्रिकोण मे अथवा शुक्र से शुभस्थान मे लाभ, धन भावो मे हो, उच्च राशि, स्वगृही या मित्र राशि मे हो तो धनलाभ, ऐश्वर्य, स्त्री, धन सम्पत्ति, स्वामी से मुक्त प्राप्ति, इष्ट बन्धु का समागम, माता पिता को मुक्त प्राप्ति, भ्रजता का लाभ, सत्कीर्ति, सुख, सौभाग्य तथा पुत्र लाभ होता है ॥१२॥१३॥१४॥ शुभ योग तथा पापयोग रहित सूर्य की दशा सताप, राजविग्रह, रोग, परिवार मे कलह, व्यापार मे साधारण लाभ करती है ॥१५॥ सूर्य लग्न से ६।८।१२ मे या शुक्र से १२ के नीचे अथवा पापवर्ग मे हो तो ज्वर, चिन्ता होती है ॥१६॥

स्वजनान्परिसक्लेशो नित्य निष्ठुरभाषणम् ॥ पितृपीडा बधुहानी राजद्वारे विरोधकृत् ॥१७॥ व्रणपीडाहिबाधा च स्वर्गो मे च भय तथा ॥ नानारोगभय चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥१८॥ सप्तमाधिपदोयेण ग्रहबाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यप्रोति च कारयेत् ॥१९॥

स्वजनो से क्लेश, नित्य लड़ाई झगडा, पिता की पीडा, बन्धु की हानि, राजद्वार मे विरोध होता है ॥१७॥ घाव जनित पीडा, सर्प बाधा तथा भय होता है। नानारोग से भय, मकान, भूमि का नाश होता है ॥१८॥ सूर्य यदि सप्तमेश हो तो ग्रह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये सूर्य का दान, जप आदि करना चाहिए ॥१९॥

### अथ चन्द्रभुक्तिमासाः २० दिना ०० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गति चद्रे केन्द्रलाभत्रिकोणमे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रमे चैव भाग्यकर्मशतयुते ॥२०॥ शुभयुक्ते पूर्णचद्रे राज्यनाथेन सयुते ॥ तद्भुक्ता वाहनाधिक्येनापत्येन महत्सुखम् ॥२१॥ महाराजप्रसादेन गजातैश्वर्यमादिशेत् ॥ महानदोशानपुष्य देवब्राह्मणपूजनम् ॥२२॥ गीतवाद्यप्रसगादिविद्वज्जनविभूषणम् ॥ गौमहिय्यादिवृद्धिश्च व्यवसायैःधिक फलम् ॥२३॥ भोजनादरसौख्य च बधुसयुक्तभोजनम् ॥ नीचे वास्तपते वापि पष्ठाष्टव्यपरासिमे ॥२४॥

### चन्द्रमा का अन्तर मा० २० फल

शुक्र की महादशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा केन्द्र, लाभ, त्रिकोण मे उच्च राशि या स्वगृही अथवा ९।१० के स्वामी मे युक्त हो ॥२०॥ शुभग्रह युक्त पूर्ण चन्द्र हो अथवा वाक् ग्रह मे युक्त हो तो बहुत सवारियां तथा मत्तानो मे बहुत सुख होता है ॥२१॥ राजरूपा मे शशी पर्यन्त ऐश्वर्य हो। गंगा आदि नदी का स्थान, देव ब्राह्मण पूजा ॥२२॥ गानवाद्य का प्रमग, विद्वज्जन गोष्ठी होनी है। गौ आदि पशु की वृद्धि, व्यापार मे लाभ अधिक होना है ॥२३॥ उत्तम भोग पदार्थ, मित्र गोष्ठी होनी रहती है। चन्द्रमा यदि नीचे वा अग्र होकर ६।८।१२ भाव मे हो ॥२४॥



दायेशात्प्लुष्टमे वापि रंघ्रे वा व्ययराशिगे ॥ तत्काले धननाशः स्यात्संचरेत् महद्भयम् ॥२५॥  
 देहाप्यासो मनस्तापो राजद्वारे विरोधकृत् ॥ विदेशगमनं चैव तीर्थयात्रादिकं फलम् ॥२६॥  
 दारपुत्रादिपीडा च आत्मबधुवियोगकृत् ॥ दायेशात्केद्रलाभस्थे त्रिकोणे व्ययगेपि वा ॥२७॥  
 राजप्रीतिकरं चैव देशग्रामाधिपत्यता ॥ धैर्यं यशः सुखं कीर्तिर्बाह्नावरनूपणम् ॥२८॥  
 कूपारान्तडागादिनिर्माणं धनसंप्रहः ॥ भुक्त्यादौ देहसौख्यं स्यादन्ते क्लेशकर भवेत् ॥२९॥

शुक्र से ६।८।१२ में हो तो अन्तर में धन नाश, भ्रमण, महान् भय होता है ॥२५॥ देह, दुःखी, मन चिन्तित, राजद्वार में विरोध, विदेश यात्रा तथा तीर्थ यात्रा होती है ॥२६॥ स्त्री पुत्र आदि की पीडा, बन्धु वियोग होता है। शुक्र से चन्द्रमा केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या व्यय भाव में हो ॥२७॥ तो राजा की प्रसन्नता, देश या ग्राम का अधिकार, धैर्य, कीर्ति, सुख, वाहन आदि प्राप्त होते हैं ॥२८॥ कूप, तडाग, बागीचा आदि निर्माण होता है। धन का सग्रह होता है। अन्तर के आदि में सुख, अन्त में क्लेश होता है ॥२९॥

### अथ कुजभुक्तिमासाः १४ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गते भीमे लग्नात्केद्रत्रिकोणगे स्वोच्चे वा स्वर्क्षणे भीमे लाभे वा बलसयुते ॥३०॥  
 लग्नाधिपेन सयुक्ते कर्मभाष्येन सयुते ॥ तद्भुक्तौ राजयोगादिसपद शुभशोभनम् ॥३१॥  
 वस्त्राभरणभूम्यादेरिष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ पष्ठाष्टमव्यये वापि दायेशाद्वा तथैव च ॥३२॥  
 शीतज्वरादिपीडा च पितृमातृभयावहा ॥ ज्वराद्यधिकरोगाश्च स्थानभ्रशो मनोरुजा ॥३३॥  
 स्वबन्धुजनहानिश्च कलहो राजविग्रहम् ॥ राजद्वारजनद्वेषो धनधान्यव्ययोधिकम् ॥३४॥  
 व्यवसायात्फल नेष्ट ग्रामभूम्यादिहानिकृत् ॥ द्वितीयद्यूननाये तु देहवाधा भविष्यति ॥३५॥

### मंगल का अन्तर मा० १४ दि० ० फल

शुक्र की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में स्वोच्च या स्वराशि का हो या बलवान होकर लाभ में हो ॥३०॥ अथवा लग्नेन युक्त हो या ९।१० के स्वामी से युक्त हो तो अन्तर में राजयोग के समान सम्पत्ति और शुभ है ॥३१॥ उत्तम वस्त्रादि से इष्ट सिद्धि और शुभ होता है। लग्न से या शुक्र से ६।८।१२ भाव में ॥३२॥ हो तो शीत ज्वर आदि पीडा, माता पिता को भय तथा ज्वर आदि रोग, स्थानभ्रश, मन में चिन्ता, बन्धु हानि ॥३३॥ कलहादि, राज से विरोध, राजद्वार के जन से विरोध, अधिक खर्च ॥३४॥ व्यापार में हानि, ग्राम भूमि की हानि होती है। यदि मंगल २।७ का स्वामी हो तो देहवाधा होती है ॥३५॥

### अथ राहुभुक्तिमासाः ३६ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गते राहौ केद्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा शुभसद्वृत्ते योगकारकसयुते ॥३६॥ तद्भुक्तौ बहुसौख्यं च धनधान्यादिलाभकृत् ॥ इष्टवधुसमाकीर्णं भोजनावरलाभगम् ॥३७॥ यानु कार्थार्थसिद्धिः स्यात्समुक्षेत्रादिमभवः ॥ लग्नाद्युपजये राहौ तद्भुक्तिः सुखदा भवेत् ॥३८॥

### राहु का अन्तर मास ३६ दिन ० फल

शुक्र की महादशा में राहु का अन्तर हो। राहु लग्न में केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में हो, उच्च राशि में,

शुभ दृष्ट अथवा कारकग्रह से युक्त हो ॥ ३६ ॥ तो अंतर में बहुत सुख, धन सम्पत्ति का लाभ, इष्ट मित्रों से युक्त, उत्तम भोगों का लाभ हो ॥ ३७ ॥ यदि यात्रा करे तो कार्य तथा धन की सिद्धि हो, पशु तथा भूमि की प्राप्ति होती है। यदि राहु केन्द्र में हो तो अन्तर शुभ होता है ॥ ३८ ॥

शत्रुनाशो महोत्साहो राजप्रीतिकरी शुभा ॥ भुक्त्यादौ शरभासाञ्च अते ज्वरमजीर्णकृत् ॥ ३९ ॥ कार्यं विघ्नमदाप्रोति सचर च मनोव्यथाम् ॥ परं मुखं च सौभाग्यं महानिव समश्नुते ॥ ४० ॥ नैर्ऋतीं दिशमाश्रित्य प्रयाणं प्रभुदर्शनम् ॥ यातु कार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ॥ ४१ ॥ उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्राफल भवेत् ॥ दायेशास्त्रपुरास्ये व्ययेवापासयुते ॥ ४२ ॥ अशुभ सभते कर्म पितृमातृजनावधि ॥ सर्वत्र जनविद्वेष तानारुपाविसभवम् ॥ ४३ ॥ द्वितीये सप्तमे वापि देहात्स्य विनिर्दिशेत् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युञ्जयजप चरेत् ॥ ४४ ॥

शत्रु का नाश, महान् उत्साह, राजा से प्रीति होती है। आरम्भ में ६ महीने तक शुभ है। अन्त में ६ मास ज्वर और अजीर्ण की विमारी हो ॥ ३९ ॥ कार्य में विघ्न, व्यर्थ की यात्रा, मन में चिन्ता होती है। शुभ योग में परम सुख और सौभाग्य होता है ॥ ४० ॥ नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा, बड़े आदमी से मिलाप तथा मनोरथ सिद्ध करके पुनः देश में आना होता है ॥ ४१ ॥ ब्राह्मणों का उपकार, तीर्थयात्रा होती है। शुरु से राहु ६।८।१२ स्थानों में पापयुक्त हो ॥ ४२ ॥ तो अशुभ होता है। संपूर्ण परिवार तथा समाज में नेष्ट फल होता है ॥ ४३ ॥ राहु यदि २।७ में हो तो आत्स्य और कार्य हानि होती है। इसकी शान्ति के लिये 'मृत्युञ्जय' जप होना चाहिए ॥ ४४ ॥

### अथ गुरुभुक्तिमासाः ३२ दिना० ० तत्फलम्

गुरुस्यातर्गते जीवे स्वोल्बे स्वक्षेत्रकेन्द्रे ॥ दायेशास्त्रमराशिस्ये भात्ये वा कर्मरारिगे ॥ ४५ ॥ नष्टराज्याद्धनप्राप्तिमिष्टार्याम्बरसपदम् ॥ मित्रप्रभोश्चतन्मानधनधान्यपरा पतिम् ॥ ४६ ॥ राजसन्मानकीर्तिं च अश्वादोलादिलाभकृत् ॥ विद्वत्प्रभुसमाकीर्णं शास्त्रापार परिश्रमम् ॥ ४७ ॥ पुत्रोत्सवाविसत्तोयमिष्टबधुसमागमम् ॥ पितृमातृसुखप्राप्तिं भ्रातृपुत्रादि-सौख्यकृत् ॥ ४८ ॥ दायेशास्त्रमराशिस्ये व्यये वा पापसयुते ॥ राजचौरादिपीडा च देहपीडा भविष्यति ॥ ४९ ॥ आत्मभुग्बधुकष्टः स्यात्कलहेन मनोव्यथा ॥ स्थानच्युति प्रवासच नानारोग समामुयात् ॥ ५० ॥ द्वितीयेसप्तमाधोशे देहबाध भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं महामृत्युञ्जय चरेत् ॥ ५१ ॥

गुरु का अन्तर मा० ३२ दि० फल

गुरु की महादशा में वृहस्पति का अन्तर हो वृहस्पति मग्न में या शुक्र में उल्बराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र में, त्रिकोण में, भाग्य या दशम में हो ॥ ४५ ॥ तो नष्ट हुआ ऐश्वर्य प्राप्त होता है। मनोरथ पूर्ति तथा सम्पत्ति, मित्र तथा प्रभु में सम्मान, धन सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥ ४६ ॥ राजा से सम्मान और कीर्ति तथा सवारी प्राप्त होती है। विद्वद्जन-मोक्षी होती रहती है। शास्त्र में अपार परिश्रम होता है ॥ ४७ ॥ पुत्रोत्सव आदि मन्त्रों, इष्ट बन्धु वा

तमागम होता है। माता पिता को सुप्त तथा भ्राता को पुत्र का मुग्ध होता है ॥४८॥ शुक्र से गुह्य ६।१२ भाव में पापमुक्त हो तो राज, चोर आदि से पीडा तथा देह पीडा होती है ॥४९॥ अपने पास रहनेवाले बन्धु को कष्ट होता है। पारिवारिक कलह से मन में चिन्ता रहती है। स्थान हानि, प्रवास तथा अनेक रोग होते हैं ॥५०॥ गुरु यदि २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये 'महामृत्युञ्जय' का जप करना चाहिए ॥५१॥

### अथ शनिभुक्तिमासाः ३८ दिना ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते मदे स्वोच्चे तु परमोच्चग्रे ॥ स्वर्सेकेन्द्रत्रिकोणस्थे तुगाशे स्वराशेपि वा ॥५२॥ तद्भुक्ती बहुसौख्य स्याद्विष्टबधुसमन्विते ॥ सन्मान बहुसम्मान पुत्रिकागमन शुभम् ॥५३॥ पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्दानधर्मादिपुण्यकृत् ॥ स्वप्रभोश्च विशेष स्यादति वा बलेसमाभवेत् ॥५४॥ देहालस्यमवाप्नोति आदायादधिकव्ययम् ॥ पष्ठाष्टमव्यये मदे दायेशाद्वा तथैव च ॥५५॥ भुक्त्यादी देहआरोग्य पितृमातृजनावधि ॥ डारपुत्रादिपोडा च सहारे देहविभ्रमम् ॥५६॥ व्यवसायात्फल नष्ट गोमहिष्यादिहानिकृत् ॥ द्वितीयसप्तमाधीने देहबाधा भविष्यति ॥५७॥ तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोम च कारयेत् ॥५८॥ यो गा ददाति भृगुजस्य दशाविपाके सौख्य सदा नृपतितुल्य उपैति सस्त्रीम् ॥ श्रेयो यश सुविजयो बहुराज्यताम श्रीसूर्यपाराकज-निर्वहभाग्यभाक् स्यात् ॥५९॥

### शनि का अन्तर मा० ३८ दि ० फल

शुक्र की दशा में शनि का अन्तर हो शनि लग्न ग बन्ध या त्रिकोण में, म्बराशि, उच्चराशि, परमोच्च में या अपने अश में हो तो ॥५२॥ अन्तर में बहुत मुग्ध इष्ट बन्धु में मिलाप, सम्मान, समाज में प्रतिष्ठा, परिवार में बन्धा का जन्म होता है ॥५३॥ पवित्र तीर्थ यात्रा, दान धर्म आदि पुण्य कार्य आदि शुभ फल के बाद दशा के उत्तमार्ध में अपने स्वामी में वैमनस्य अथवा बलेज हो ॥५४॥ देह में आलस्य आमदनी में अधिक मर्ब होना है। शनि लग्न से या शुक्र से ६।८।१० में हो ॥५५॥ तो अन्तर के आदि में परिवार में आरोग्यता, उत्तमार्ध में स्त्रीपुत्र को पीडा और अपने शरीर में विभ्रम (चकर आना) होता है ॥५६॥ व्यापार में लाभ नष्ट, पशु आदि की हानि होती है। यदि शनि २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है ॥५७॥ इसकी शान्ति के लिये तिल का हवन करना चाहिए ॥५८॥ जो मनुष्य शुक्र दशा में शनि के अन्तर में गी का दान करता है वह राजा के समान मुग्ध और लक्ष्मी प्राप्त करता है। बन्धाण, यश, विजय तथा राज्य लाभ होता है ॥५९॥

### अथ बुधभुक्तिमासाः ३४ दिना ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते सौम्ये केन्द्रे साभित्रिकोणगे ॥ ध्वोच्चे वा म्बरांते वापि रात्रप्रान्तिरान् शुभम् ॥६०॥ सौभाग्य पुत्रताम च सम्मार्गे धनलाभकृत् ॥ पुराणधर्मप्रवण धृगार्जिनसमगमम् ॥६१॥ इष्टबधुजनावीर्ष विप्रभूमगमागमम् ॥ स्वप्रभोश्च महन्मोक्ष विष्णु मिष्टाप्रभोक्तम् ॥६२॥ लप्रेशाम्यापत्तरक्षे ध्यये वा बन्धवर्जिते ॥ पापपट्टी तथा युने जनुणाज्जीवहानिकृत् ॥६३॥ अन्यालपनिवागश्च मनोवैकल्यसमव ॥ शान्तिरामभुक्त्वा च श्रुद्रव्याप्यमेव च

शिरोवेदना, चिन्ता, कलह तथा बेकारी होती है॥७१॥ प्रमेह आदि बीमारी, धन का अपव्यय, भार्या पुत्र से विरोध, यात्रा, कार्य हानि होती है॥७२॥ केतु यदि २।७ स्वान में हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप ॥७३॥ तथा छाग दान करे तो सब सम्पत्ति प्राप्त होती है॥७४॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० विशो० भृगोरत्तर्दशाफल कथनं नाम  
एकचत्वारिंशोऽध्याय ॥४१॥

### अथोपदशाप्रकरणमाह

स्वांतर्दशाब्दबृद्धं च हन्यात्स्वाब्दैर्गृहस्थ च ॥विशोत्तरशतेनाप्त घन्नाः शेष  
कलादिकम्॥१॥

#### प्रत्यन्तरदशाध्याय

ग्रह के अन्तरदशा के वर्ष, मास, दिन के एकरम (अर्थात् दिनमख्या) करके जिस ग्रह का अन्तर निकालना हो उसको वर्ष सख्या से गुणा करके १२० का भाग देकर दिन, घटी, पल अक लेकर दिन में ३० का भाग देकर भाग प्राप्त करें॥१॥

उदाहरण-यथा, सूर्य महादशा में सूर्य का अन्तर मा० ३ दि० १८ है। इसके दिन विये तो १०८ हुए। अब इसमें सूर्य का प्रत्यन्तर निकालना है, इसलिये सूर्य के वर्ष ६ की मख्या में गुणा किया तो ६४८ हुए। इसमें १०० का भाग किया तो सन्धि ५ तथा शेष ४८ रहे। घटी अब लेना है, इसलिये ६० से गुणा किया तो २८८० हुआ। पुन १२० का भाग किया तो सन्धि २४ तथा शेष कुछ भी नहीं रहा। अतः सूर्य प्रत्यन्तर दशा ५ दिन २४ घटी हुई। इसमें चन्द्रमा का प्रत्यन्तर निकालने के लिये चन्द्रमा के वर्ष १० से १०८ को गुणा किया जायेगा और १०० का भाग करने में दिन आदि दशा होगी। इसी प्रकार भगन आदि का प्रत्यन्तर निकालने के लिये सूर्य की अन्तर दशा के दिन १०८ को सत्तन् ग्रह के वर्ष मख्या में गुणा करना और १२० का भाग देना। तो तत्तन् ग्रह की प्रत्यन्तर दशा प्राप्त होगी।















































अथ मृगुमध्ये केतुव्यतरम्

के०	गु०	मू०	चं०	म०	रा०	बु०	श०	दु०	ग्रहा
०	२	०	१	०	२	१	२	१	मासाः
२४	१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	दिनाति
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पट्टपः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पत्तानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपत्तानि

अथ विदशाफलं प्रारभ्यते

लप्रेशरोगतापी च निघ्नैरेन संयुतौ ॥ मारकेशयुतौ वृष्टौ रोग नायांशगौ षदि ॥२॥ तस्य भुक्ती विजानीयाव्याया शस्त्रेण वैनृणाम् ॥ शुभयोगेन बाधः स्यात्पापयोगेन मृत्युकृत् ॥३॥ जीवांशे जीववर्गेण मूलांशे मूलवर्गितः ॥ रोगादिप्रवदेत्त्र तेषां भुक्तिवशात्फलम् ॥४॥ विलग्रनाथस्य नवाशनाथो रघ्नोशकस्याधिपतिश्च युक्तौ ॥ भेषस्य पद्वर्गगती यदा तौ भुक्ती तयोर्जंबुकभीतितो बुधः ॥५॥ बृधवर्गगती तौ चेद्बृश्रिकाद्भयमाविशेत् ॥ युग्मवर्गगती भोतिः कपिजा नात्र संशयः ॥६॥ कुलीरवर्गगौ तौ चेद्वासभाद्भूतिमादिशेत् ॥ सिंहवर्गगती तौ चेद्भुक्ती स्याद्वाघ्रज भयम् ॥७॥ कन्यावर्गगती तौ चेद्भुक्ती स्याद्भयजसा ॥ वणिग्वर्गगती तौ चेतद्भुक्ती स्याद्गजाद्भयम् ॥८॥ अश्विर्गगती तेषां तेषां स्याद्गजतो भयम् ॥ यदि कार्मुकवर्गस्यौ भुक्ती स्याद्भयजं भयम् ॥९॥ मृगवर्गगती तौ चेद्भुक्ती करभजं भयम् ॥ कुम्भवर्गगती तौ चेद्गोलांगूलाद्भय भवेत् ॥१०॥ मीनवर्गगती भुक्ती तेषां स्याद्घाहज भयम् ॥ एव देहादिभावानां पद्वर्गगतिभिः फलम् ॥ सम्यग्विचार्य मतिमान्प्रबदेत्कालवित्तमः ॥११॥

विदशाफल

लप्रेश और पट्टेश अष्टमेश युक्त हो और मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तथा षष्ठेश के नवाश में हो तो ॥२॥ उसके प्रत्यन्तर में शस्त्र के आघात से कष्ट होता है। शुभग्रह के दृष्टि अथवा योग से बाध (आघात नहीं होता या सामान्य होता है) और पापयोग से मृत्यु होती है ॥३॥ जीवांश में होने से जीव वर्ग से तथा मूलांश में होने से मूलवर्ग से रोग, आघात या मृत्यु होती है। सो प्रत्यन्तर में योगानुसार कहना चाहिए ॥४॥ लप्रेश जिस नवाश में हो उस राशि का स्वामी, अष्टमेश के या अष्टमभाव के नवाशपति से युक्त यदि भेषराशि के पद्वर्ग युक्त (एक साथ) हो तो जंबुक (मियार) का भय होता है ॥५॥ पूर्वोक्त दोनो वृश्रिक राशि के पद्वर्ग में हो तो बिच्छू से भय होता है। मिथुन के वर्ग में बदर से भय होता है ॥६॥ कर्क के वर्ग में गर्दभ (गधे) से भय और सिंह वर्ग में व्याघ्र (बाघ) से भय होता है ॥७॥ कन्यावर्ग में भालू से भय एव तुला राशि के वर्ग में हाथी से भय होता है ॥८॥ वृश्रिक के वर्ग में हाथी से भय तथा धनुराशि के वर्ग में रथ से भय होता है ॥९॥ मृगवर्ग में हाथी के सूड से भय एव

कुम्भ वर्ग में हो तो बैल या गौ की पूँछ से भय होता है॥१०॥ मीन वर्ग में हो तो ग्राह (मगर) से भय होता है। इस प्रकार लग्न से चारहो भावों का फल षड्वर्ग के विचार से कहा जाता है, ज्योतिर्विस्त को चाहिए की भली प्रकार से विचार करके फल का निर्देश करे॥११॥

### अथ सूर्यादिसर्वग्रहाणां विदशाफलमाह

(सू० सू०) उद्वेगोय बल वित्तदारार्ति शिरसि व्यथा ॥ ब्राह्मणेन विवादश्च सूर्यं स्वविदशा गतं ॥१२॥ (सू० च०) उद्वेग कलह वित्तपीडा स्वहृतिमद्भुताम् ॥ मणिमुक्तादिनाशश्च विदशासु रवे शशी ॥१३॥ (सू० म०) राजभीति शस्त्रभीति बधन बहुसकटम् ॥ शत्रुबहिष्कृता पीडा स्वदशासु रवे कुज ॥१४॥ (सू० रा०) श्लेष्मव्याधि शस्त्रभीति घनहानि महद्भयम् ॥ राजभगस्तथा त्रासो विदशासु रवेस्तम ॥१५॥ (सू० गु०)

#### सूर्यादिग्रहों का प्रत्यन्तर्दशाफल

(सू० सू० सू०) सूर्य अपनी विदशा (प्रत्यन्तर्दशा) में उद्वेग, बल, स्त्री घन कष्ट, शिरदर्द, ब्राह्मण से विवाद करता है॥१२॥ (सू० च०) उद्वेग, कलह, पीडा, विक्षेप, रत्ननाश यह फल सूर्य की विदशा में चन्द्रमा का है॥१३॥ (सू० म०) सूर्य में भौम की विदशा में, राजभय, शस्त्रभय, बधन, बहुसकट, शत्रु तथा अग्नि से पीडा होती है॥१४॥ (सू० रा०) सूर्य की विदशा में राहु कफरोग, शस्त्रभय, घनहानि, महाभय, ऐश्वर्यनाश तथा त्रास करता है॥१५॥ (सू० गु०)

शत्रुनाश जय वृद्धि वस्त्रहेमादिभूषणम् ॥ अभयानादि ददते गोधन च रवेर्गुरु ॥१६॥ (सू० श०) घनहानि पशो पीडा महोद्वेगो महारुज ॥ अशुभ सर्वमाप्नोति विदशासु रवे शनि ॥१७॥ (सू० बु०) विद्यालाभो बधुसगो भोज्यप्राप्तिर्धनगम ॥ धर्मलाभो नृपात्पूजा विदशासु रवेर्बुध ॥१८॥ (सू० के०) प्राणभीतिर्महाहानी राजभीतिश्च विग्रह ॥ शत्रुणा च महावादो विदशासु रवे शिखी ॥१९॥ (सू० शु०) दिनानि समरूपाणि लाभोऽप्यत्यो भवेदिह ॥ स्वल्पा च सुखसपत्तिर्विदशासु रवेर्भृगु ॥२०॥

सूर्य की विदशा में गुरु शत्रुनाश, जय, वृद्धि, वस्त्रभूषणप्राप्ति, सुखसवारी देता है॥१६॥ (सू० श०) सूर्य विदशा में शनि घनहानि, पशुपीडा, उद्वेग, महारोग आदि सर्वप्रकार से अशुभ करता है॥१७॥ (सू० बु०) सूर्य की विदशा में बुध विद्यालाभ, बधुसग, भोगलाभ, धनलाभ, धर्मलाभ, राजपूजा, फल देता है॥१८॥ (सू० के०) सूर्य की विदशा में बेटु प्राणभय, महाहानि राजभय, लडाई, विवाद करता है॥१९॥ (सू० शु०) सूर्य की विदशा में शुक सभान है, साधारण लाभ, सम समय, साधारण सुख सम्पत्ति करता है॥२०॥

#### अथ चंद्रविदशाफलमाह

(च० च०) भूभोज्यधनसंप्राप्ती राजपूजामहत्सुखम् ॥ महालाभ स्त्रियो भोगो विदशासु स्वय शशी ॥२१॥ (च० म०) मतिवृद्धिर्महापूज्य सुख बहुजनै सह ॥ धनगम शत्रुभय

चन्द्रस्थातगतं कुज ॥२२॥ (च० रा०) भवेत्कल्याणसपत्नी राजवित्तसमायम ॥  
 अशुभैरल्पमृत्युश्च चन्द्रचन्द्रातरे तम ॥२३॥ (च० बु०) वस्त्रलाभो महतीशो ब्रह्मज्ञान च  
 सवपुत्रो ॥ राज्यालकरणावाप्तिश्चन्द्रचन्द्रातरे गुरु ॥२४॥ (च० श०) दुर्दिने लभते पीडा  
 वातपित्तादिशेषत ॥ धनधान्यपशोहानिश्चन्द्रचन्द्रातरे शनि ॥२५॥ (च० बु०)  
 पुत्रजन्महृद्यप्राप्तिर्विद्यालाभो महोन्नति ॥ शुक्लवस्त्राभ्रलाभश्च चन्द्रचन्द्रातरे बुध ॥२६॥  
 (च० के०) ब्राह्मणेन सम पुद्गमपमृत्युः सुखसय ॥ सर्वत्र जायते क्लेशश्चन्द्रचन्द्रातरे शिखी  
 ॥२७॥ (च० शु०) धनलाभो महत्सौख्य कन्याजन्म सुभोजनम् ॥ प्रीतिश्च  
 सर्वलोकैर्म्यश्चन्द्रचन्द्रातरे भृगु ॥२८॥ (च० सू०) अग्नागमो वस्त्रलाभः शत्रुहानि सुतागम  
 ॥ सर्वत्र विजयप्राप्तिश्चन्द्रचन्द्रातरे रवि ॥२९॥

### चन्द्रविदशाफल .

(च० च०) चन्द्रमा की विदशा मे चन्द्रमा भूमि, भोग, धन की प्राप्ति, राजपूजा महान्  
 सुख, महालाभ, ललना भोग प्राप्त करता है ॥२१॥ (च० म०) चन्द्रमा की विदशा मे मंगल  
 मतिवृद्धि महापूज्यता, बन्धुजो के साथ सुख धनलाभ, तथा शत्रुभय करता है ॥२२॥ (च०  
 रा०) चन्द्र विदशा मे राहु, कल्याण, सम्पत्ति, राजा से धन प्राप्ति, दुःख तथा अल्प मृत्यु  
 करता है ॥२३॥ (च० बु०) चन्द्र विदशा मे गुरु वस्त्र लाभ, तेजोवृद्धि गुरु से ब्रह्म ज्ञान की  
 प्राप्ति, राजा से अलङ्कार प्राप्ति करता है ॥२४॥ (च० श०) चन्द्रमा की विदशा मे शनि  
 कष्ट, पीडा, वात पित्त जनित रोग, धन सम्पत्ति यश की हानि करता है ॥२५॥ (च० बु०)  
 चन्द्रमा की विदशा मे बुध पुत्र जन्म का हर्ष प्राप्त करता है। विद्या लाभ, महान् उन्नति, श्रेत  
 वस्त्र तथा अन्न का लाभ करता है ॥२६॥ (च० के०) चन्द्र विदशा मे केतु ब्राह्मण से विवाद,  
 अपमृत्यु, सुख हानि तथा सर्वत्र क्लेश करता है ॥२७॥ (च० शु०) चन्द्र विदशा मे शुक्र धन  
 लाभ, महान् सौख्य, कन्या जन्म सुभोजन तथा सब से प्रीति करता है ॥२८॥ (च० सू०)  
 चन्द्र विदशा मे सूर्य अन्न लाभ, वस्त्र लाभ, शत्रु हानि, सुख प्राप्ति तथा सर्वत्र विजय प्राप्ति  
 करता है ॥२९॥

### अथ भौमविदशाफलमाह

(म० म०) शत्रुभीति कलि घोरमरकस्माज्जायते भयम् ॥ रक्तप्रायोपमृत्युश्च विदशासु स्वय  
 कुज ॥३०॥ (म० रा०) बध्न राजभय च धनहानि कुभोजनम् ॥ क्लृप्तः शत्रुभीतिश्च  
 भौमभौमातरे तम ॥३१॥ (म० गु०) मस्तिनाश तथा दुःख सताप क्लृप्तो भवेत् ॥ विफल  
 चित्तित सर्व भौमभौमान्तरे गुरु ॥३२॥ (म० श०) स्वामिनाशस्तथा पीडा  
 धनहानिर्महाभयम् ॥ वैकल्य क्लृप्तश्चासौ भौमभौमातरे शनि ॥३३॥ (म० बु०) सर्वथा  
 बुद्धिनाशश्च धनहानिर्ज्वरस्तनौ ॥ वस्त्राभ्रमुद्गदा नाशोभौमभौमातरे बुध ॥३४॥ (म०  
 के०) आलस्य च शिर पीडा पापरोगापमृत्युदृष्ट ॥ राजभीति शस्त्रघातो भौमभौमान्तरे  
 शिखी ॥३५॥ (म० गु०) चाडालात्सकटस्त्रासौ राजशस्त्रभय भवेत् ॥ अतिसारोय वमन  
 भौमभौमातरे भृगु ॥३६॥ (म० सू०) भूमिलाभोर्यसपति सतोषो मित्रसगति ॥ सर्वत्र  
 सुखमाप्नोति भौमभौमातरे रवि ॥३७॥ (म० च०) याम्या दिशि भवेत्लाभ  
 सितवस्त्रविभूषणम् ॥ सतिद्धि सर्वकार्याणा भौमभौमातरे शशी ॥३८॥

## मंगल विदशा फल

(म० म०) मंगल अपनी विदशा मे शत्रुभय, घोर कलह, अकस्मात् भय, रक्तस्राव तथा अपमृत्यु करता है॥३०॥ (म० रा०) मंगल विदशा मे राहु बन्धन, राजभय, धन हानि, निकृष्ट भोजन तथा शत्रु से नित्य कलह करता है॥३१॥ (म० बृ०) मंगल विदशा मे गुरु, मति-नाश तथा दुःख, सताप, कलह, चिन्तित कार्य की हानि करता है॥३२॥ (म० श०) मंगल की विदशा मे शनि स्वामी नाश, पीडा, धन हानि, महाभय, विकलता, कलह तथा कष्ट करता है॥३३॥ (म० बु०) मंगल विदशा मे बुध बुद्धिनाश, धनहानि, ज्वर, अन्नघन, वस्त्र का नाश करता है॥३४॥ (म० के०) मंगल की विदशा मे केतु आलस्य, सिरदर्द, रोग, अपमृत्यु, राजभय तथा शस्त्र से घात करता है॥३५॥ (म० शु०) मंगल विदशा मे शुक्र चाण्डाल से सकट की उत्पत्ति, भय राज से भय शस्त्र से भय, अतिसार और वमन की बिमारी करता है॥३६॥ (म० सू०) मंगल विदशा मे सूर्य भूमि लाभ, धन लाभ, सन्तोष, मित्र से सगति सर्वत्र सुख की प्राप्ति करता है॥३७॥ (म० च०) मंगल विदशा मे चन्द्रमा दक्षिण दिशा मे लाभ, श्वेत वस्त्र प्राप्ति भूषण प्राप्ति तथा सर्व कार्य सिद्ध करता है॥३८॥

## अथ राहुविदशाफलमाह

(रा० रा०) बधन बहुधा रोगो बहुघात मुहुर्भयम् ॥ अकस्मादापदो यान्ति भय राहोर्जलाग्नि ॥३९॥ (रा० बृ०) सर्वत्र लभते लाभ गजाश्व च धनागमम् ॥ राजसन्मानद राज्य भवेद्राह्वन्तरे गुरु ॥४०॥ (रा० श०) बधन जायते घोर सुखहानिर्महर्भयम् ॥ प्रत्यह वातपीडा च राहो राह्वतरे शनि ॥४१॥ (रा० बु०) सर्वत्र बहुधा लाभ स्त्रीसमश्च विशेषत ॥ परदेशगत सिद्धि राहो राह्वतरे बुध ॥४२॥ (रा० के०) बुद्धिनाशो भय विभ्र धनहानिर्महर्भयम् ॥ सर्वत्र फलहोद्वेगो राहो राह्वतरे मिथी ॥४३॥ (रा० शु०) योगिनीभ्यो मय भ्रयादश्वहानि कुभोजनम् ॥ स्त्रीनाश कुलज शोक राहो राह्वतरे सित ॥४४॥ (रा० सू०) ज्वररोगो महाभीति पुत्रपौत्रादिपीडनम् ॥ अल्पमृत्यु प्रमादश्च राहो राह्वतरे रवि ॥४५॥ (रा० च०) उद्वेगकलही चित्त मानहानिर्महर्भयम् ॥ पितुर्विकसता वेहे राहो राह्वतरे शशो ॥४६॥ (रा० म०) भगदरकृता पीडा रक्तपित्तप्रपीडनम् ॥ अर्थहानिर्महोद्वेगो राहो राह्वतरे कुज ॥४७॥

## राहु विदशा फल

(रा० रा०) राहुविदशा मे राहु बधन, रोग, घात, मित्र मे भी भय, तथा अचानक आपत्ति और जल तथा अग्नि से भय करता है॥३९॥ (रा० बृ०) राहु विदशा मे गुरु सर्वत्र लाभकारी, हाथी, घोडा, धन सम्पत्तियुक्त राजा के समान प्रतिष्ठा करता है॥४०॥ (रा० श०) राहु विदशा मे शनि, घोर बधनप्रदाता मुखहानिकारक, भयदाता, प्रतिदिन वात वेदना कारक है॥४१॥ (रा० बु०) राहु विदशा मे बुध-प्राय सर्वत्र लाभकारक, स्त्री के समान भीष्म प्रकृति तथा परदेश मे सिद्धि देता है॥४२॥ (रा० के०) राहुविदशा मे केतु-बुद्धिनाश, भय, विभ्र, धनहानि, महान् भय, सर्वत्र कलह तथा उद्वेग करता है॥४३॥

॥५७॥ (श० बु०) बुद्धिनाशः कलेर्भीतिमन्नपानाविहानिकृत् ॥ घनहानिर्मयं शत्रोः शनेः शन्यंतरे बुधः ॥५८॥ (श० के०) बंधुशत्रुगृहे जातो धर्णहानिर्बहुलुघा ॥ चित्ते चिन्ता भयं त्रासः शनेः सौरांतरे शिखी ॥५९॥ (श० शु०) वितिते फलितं वस्तु कल्याणं स्वजनं जने ॥ मनुष्यकृतितो लाभः शनेः शन्यंतरे मृगुः ॥६०॥ (श० सू०) राजतेजोधिकारित्वं स्वगृहे जायते कलिः ॥ ज्वरादिव्याधिपीडा च कोणे कोणांतरे रविः ॥६१॥ (श० चं०) स्फीतबुद्धिर्महारंभो मंदतेजा बहुव्ययः ॥ बहुस्त्रीभिः समं भोगं कोणे कोणांतरे शशो ॥६२॥ (श० मं०) तेजोहानिः पुत्रघातो वह्निभीती रिपोर्मयम् ॥ वातपित्तकृता पीडा कोणे कोणांतरे कुजः ॥६३॥ (श० रा०) घननाशो वस्त्रहानिर्भूमिनाशो भयं भवेत् ॥ विदेशभयं मृत्युः कोणे कोणांतरे कुजः ॥६४॥ (श० बृ०) गृहेषु स्त्रीकृतं छिद्रं ह्यसमर्थो निरीक्षणे ॥ अथ वा कलिमुद्गेगं शनेः सौरांतरे गुरुः ॥६५॥

### शनि विदशा फल

(श० श०) शनि विदशा मे शनि-देहपीडा, कलह तथा शूद्र से भय, विदेश की यात्रा तथा दुःख कारक होता है ॥५७॥ (श० बु०) शनि विदशा मे बुध- बुद्धिनाश, कलह का भय, अन्नपान आदि मे हानि, घन हानि तथा शत्रु से भय करता है ॥५८॥ (श० के०) शनि विदशा मे केतु-बन्धु तथां शत्रु के घर मे आवागमन आचार धर्म की हानि, भूल से व्याकुलता, चिन्ता, भय, त्रास कारक है ॥५९॥ (श० शु०) शनि विदशा मे शुक्र-विचार मात्र से वस्तु की प्राप्ति, स्वजन से कल्याण, मानवनिर्मित वस्तु से लाभ कारक होता है ॥६०॥ (श० सू०) शनि विदशा मे सूर्य-राजा के समान तेजस्वी, परिवार मे कलह, ज्वर आदि व्याधि तथा पीडा कारक होता है ॥६१॥ (श० च०) शनिविदशा मे चन्द्र-शुद्ध बुद्धि, बड़े कार्यों का आरंभ, मन्द तेज, विशेष सर्व, अनेक स्त्रियो से प्रेम कारक है ॥६२॥ (श० म०) शनि विदशा मे मंगल-तेज की हानि, पुत्र द्वारा घात, अग्नि से भय, शत्रु से भय, वात, पित्त से पीडा करता है ॥६३॥ (श० रा०) शनि विदशा मे राहु-घननाश, वस्त्रहानि, भूमिनाश भय, तथा विदेश यात्रा और मृत्यु कारक है ॥६४॥ (श० बृ०) शनि विदशा मे गुरु-घर मे स्त्री के दुष्करिण को जानता हुआ भी देखने मे असमर्थ, यदि देसे तो कलह, उद्वेग कारक होता है ॥६५॥

### अथ बुधविदशाफलमाह

(बु० बु०) बुद्धिर्बिचार्यताभो वा वस्त्रताभो महस्तुलम् ॥ स्वर्णादिघनलाभं स्यात्सौम्यसौम्यांतरे बुधः ॥६६॥ (श० के०) कठिनाग्रस्य संप्राप्तिरुदरे रोगसंभवः ॥ कामलं रक्तपित्तं च सौम्यसौम्यांतरे शिखी ॥६७॥ (बु० शु०) उत्तरस्यां प्रवेत्ताभो हानिः स्यात्तु चतुष्पदात् ॥ अधिकारान्महाप्रीतिः सौम्ये सौम्यांतरे मृगुः ॥६८॥ (बु० सू०) तेजोहानिर्भवेद्भोगस्तनुपीडा तु मांदवी ॥ जायते चित्तवैकल्यं सौम्यसौम्यांतरे रविः ॥६९॥ (बु० चं०) स्त्रीसामभ्रार्यसपतिः कन्यासामो महदनम् ॥ समते सर्वतः सौम्यं सौम्यसौम्यांतरे शशो ॥७०॥ (बु० मं०) धर्मधीर्घनसंप्राप्तिश्चैराग्न्यादिप्रपीडनम् ॥ रक्तवस्त्र शस्त्रघातः सौम्यसौम्यांतरे कुजः ॥७१॥ (बु० रा०) कलहो जायते स्त्रीभिरक्तस्माद्भयसंभवः ॥ राजशस्त्रकृता भीतिः सौम्यसौम्यांतरे तमः ॥७२॥ (बु० बृ०)

राज्यं राज्याधिकारी वा पूजा राजसमुद्भवा ॥ विद्याधराग्रगुल्मश्च सौम्यसौम्यांतरे गुरुः ॥७३॥ (बु० श०) वातपित्तमहापीडा देहघातसमुद्भवा ॥ घननाशमवाप्नोति सौम्यसौम्यांतरे शनिः ॥७४॥

### बुध विदशा में फल

(बु० बु०) बुध विदशा मे बुध-बुद्धि, विद्या, धन का लाभ, वस्त्रलाभ, महान् सुख, सुवर्ण आदि धन का लाभ करता है ॥६६॥ (बु० के०) बुध विदशा मे केतु-कठिन अब्रभक्षण से पेट में रोष होता है। पीलिया रोग तथा रक्तपित्त रोष होता है ॥६७॥ (बु० शु०) बुध विदशा मे मुक-उत्तरदिशा मे लाभ हो और चौपाया पशु से हानि, अधिकार से प्रीति उत्पन्न करता है ॥६८॥ (बु० सू०) बुध विदशा मे सूर्य-तेजो हानि, रोग, शरीरपीडा, अप्रिमाय तथा चित्त मे विकलता करता है ॥६९॥ (बु० च०) बुध विदशा मे चन्द्रमा-स्त्रीलाभ, धनलाभ, कन्यालाभ तथा बहुत धन का लाभ और सुख करता है ॥७०॥ (बु० म०) बुध विदशा मे मंगल-धर्मबुद्धि, धन लाभ, चोर तथा अग्नि-जन्य हानि, रक्तवस्त्र से लाभ तथा शस्त्र चाकू आदि से घात करता है ॥७१॥ (बु० रा०) बुध विदशा मे राहु-स्त्री जाति से कलह तथा अकस्मात् भय होता है। राजा तथा शस्त्र से भय कारक है ॥७२॥ (बु० वृ०) बुध विदशा मे गुरु-राज्य देता है या राज्याधिकारी करता है। तथा राजा से पूजा होती है। विद्याधरण मे समर्पता तथा गुल्मरोगकारक है ॥७३॥ (बु० श०) बुध विदशा मे शनि-वात, पित्त जनित पीडा या घात जनित पीडा हो। तथा घननाश कारक होता है ॥७४॥

### अथ केतोर्विदशाफलमाह

(के० के०) अपो समुद्भवोऽकस्माद्देशांतरसमागमः ॥ घननाशोऽल्पमृत्युश्च केतोः केत्वंतरे शिखी ॥७५॥ (के० शु०) म्लेच्छमीत्यर्चनाशो वा नेत्ररोगः शिरोव्यथा ॥ हानिश्रतुष्यदानां च केतोः केत्वंतरे मृगुः ॥७६॥ (के० सू०) मित्रैः सह विरोधश्च स्वल्पमृत्युः पराजयः ॥ मतिभ्रंशो विबादश्च केतोः केत्वंतरे रविः ॥७७॥ (के० च०) अन्ननाशो घशोहानिर्देहपीडा मतिभ्रमः ॥ आमवातादिवृद्धिश्च केतोः केत्वंतरे शशी ॥७८॥ (के० म०) शस्त्रघातेनपातेन पीडितो वह्निपीडया ॥ नीचाद्भूती रिपोः शंका केतोः केत्वंतरे कुजः ॥७९॥ (के० रा०) कामिनीभ्यो भय भ्रूयात्पया वीरिसमुद्भवः ॥ क्षुद्रादपि भवेद्भूतिः केतोः केत्वंतरे तमः ॥८०॥ (के० गु०) धनहानिर्महोत्पातो वस्त्रमिन्नविनाशनम् ॥ सर्वत्र लभते क्लेश केतोः केत्वंतरे गुरुः ॥८१॥ (के० श०) गोमहिध्यादिमरणं देहपीडा सुतुद्वयः ॥ स्वल्पात्मलाभकरणं केतोः केत्वंतरे शनिः ॥८२॥ (के० बु०) बुद्धिनाशो महोद्देशो विद्याहानिर्महाभयम् ॥ कार्यसिद्धिर्न जायेत केतोः केत्वंतरे बुधः ॥८३॥

### केतु विदशा फल

(के० के०) केतु विदशा मे केतु-अकस्मात् जतोदर आदि बीमारी, देगान्तरयात्रा, घननाश, अल्पमृत्यु कारक है ॥७५॥ (के० शु०) केतु विदशा मे मुक-म्लेच्छ जाति मे भय, घननाश, नेत्ररोग, सिरदर्द, चौपाये पशुओं की हानि कारक होता है ॥७६॥ (के० सू०) केतु

विदशा मे सूर्य-मित्रो वे साथ विरोध, स्वल्पमृत्यु, पराजय, बुद्धिनाश, विवाद कारक होता है॥७७॥ (के० च०) वेतु विदशा मे चन्द्रमा-अघ्ननाश, यशोहानि, देहपीडा, मतिभ्रम, आमवात रोग की वृद्धि करता है॥७८॥ (के० म०) वेतु विदशा मे मंगल-शस्त्र घात से या गिरने से पीडित हो तथा अग्निभय, नीच जाति से भय, शत्रु से भय करता है॥७९॥ (के० रा०) केतु विदशा मे राहु स्त्रियो से भय, तथा शत्रु से भय, एव मामूली आदमी मे भी डरता है॥८०॥ (के० बृ०) वेतु विदशा मे गुरु-घन हानि, महान् उत्पात, बस्त्रनाश, मित्रता की हानि, सर्वत्र क्लेश कारक है॥८१॥ (के० श०) वेतु विदशा मे शनि-गाय भ्रंस आदि की मृत्यु, देह पीडा, मित्र की हत्या माधारण लाभकारक है॥८२॥ (के० बु०) वेतु विदशा मे बुध-बुद्धिनाश, महान् उद्वेग, विद्याहानि महाभय कार्यहानि कारक है॥८३॥

### अथ शुक्रविदशाफलमाह

(शु० शु०) श्वेताश्वस्त्रमुक्ताद्या स्वर्णमाणिक्यसमव ॥ लभते मुन्दरीं नारीं शुके शुक्रातरे सित ॥८४॥ (शु० सू०) घातज्वर शिरपीडा राज पीडा रिपोरपि ॥ जायते स्वल्पतामोपि शुके शुक्रातरे रवि ॥८५॥ (शु० च०) वन्याजन्म नृपाल्तामो वस्त्रामरणसपुत्र ॥ शान्याधिकारसंप्राप्ति शुके शुक्रातरे शशी ॥८६॥ (शु० म०) रक्तपितादिरोगश्च कप्तहस्ताडन भवेत् ॥ महान्क्लेशो भवेदत्र शुके शुक्रातरे वृज ॥८७॥ (शु० बृ०) महद्द्रव्य महद्राज्य वस्त्रमुक्तादिनूषणम् ॥ गजाश्वदिपदप्राप्ति शुके शुक्रातरे गुर ॥८८॥ (शु० रा०) क्लहो जायते स्त्रीभिरवस्माद्भूयसभव राजत शयुत पीडा शुके शुक्रातरे तम ॥८९॥ (शु० श०) शरोद्दृष्टागसंप्राप्तिलोहमायतिलादिबभ ॥ लभते स्वल्पपीडादि शुके शुक्रातरे शनि ॥९०॥ (शु० बु०) धनगानमहांस्तामो राजराज्याधिकारता ॥ निक्षेपाडनतामोपि शुके शुक्रातरे बुध ॥९१॥ (शु० के०) अल्पमृत्युर्महाघोराद्देशादेशातरागम तामोऽपि जायते मध्ये शुके शुक्रातरे मिनी ॥९२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वमण्डे सूर्याष्टपदशास्त्रवचन नाम  
द्विचत्वारिंशोऽध्याय ॥४२॥

### अथ सूक्ष्मदशाफलमाह

लघ्नेश्वरो रंघ्रपतिश्च मुक्तौ वृषे वृषांशे वृषभे वृषाणे ॥ स्थितौ भवेतां यदि तौ वृषे  
यातात्रिमित्तौ भरणस्य वेद्यौ ॥२॥ वृषे पुग्मांशगौ तौ चेद्भूत्सूकेन मृतिर्नृणाम् ॥ वृ  
कर्कांशगौ तौ चेद्भ्रूकादय जले मृतिः ॥३॥ वृषे सिंहांशगौ तौ चेद्दघाघ्राघाघाततो मृतिः वृ  
कन्यांशगौ तौ चेत्कपिना नाऽत्र संशयः ॥४॥ वृषे तुलांशगौ तौ चेद्दघाघ्राघ्रातीति वदेत्तदा ॥ वृ  
कौर्मांशगौ तौ चेद्भ्रूक्तौ चिंता व्ययी भवेत् ॥५॥ वृषे चापांशगौ तौ चेदभेन च मृतिं बवेत्  
वृषे कुम्भांशगौ तौ चेद्दंतव्यापारतो भयम् ॥६॥ वृषे मृगांशगौ तौ चेन्महिषेण मृतिं वदेत्  
वृषे कुम्भांशगौ तौ चेद्गोलांगूलान्मृतिं वदेत् ॥७॥ वृषे मयांशगौ तौ चेदजबस्ताद्भयं भवेत्  
एवं संचिंत्य मतिमान्भ्रात्रादीनां मृतिं वदेत् ॥८॥

### सूक्ष्म दशा फल

लघ्नेश तथा अष्टमेश दोनो वृषराशि मे वृष नवाश मे या वृष द्रेशकाण हो तो वृषभ के घा  
से मरण होता है। तथा लघ्नेशाष्टमेश वृषराशि मे निघुन नवाश मे हो तो भालू से मृत्यु होत  
है, वृष के कर्काश मे हो तो जल मे मगर से मृत्यु हो ॥३॥ वृष के सिंहाश मे हो तो व्या  
आदि के आघात से (आगे इसी प्रकार) कन्याश मे हो तो वानर से मृत्यु हो ॥४॥ तुलाश  
व्याघ्र से, वृश्चिकाश मे हो तो अन्तर मे चिन्ता, चर्च हो ॥५॥ घनाश मे हो तो घोडे के कार  
मृत्यु हो। कुम्भाश मे हो तो हाथीदात के व्यापार के कारण मृत्यु हो ॥६॥ मकराश मे हो त  
महिष (भैसे) से मृत्यु हो तथा कुम्भाश मे गौ की पूछ की आघात से भी मृत्यु सम्भव है ॥७॥  
मीनाश मे बकरे से भय हो ॥ इसी प्रकार भ्राता आदि के लिये भी भावेश और उसके अष्टमेश  
के उपर्युक्त नवमाश की स्थिति से विचार करना ॥८॥

### अथ सूर्यादिग्रहाणां सूक्ष्मदशाफलमाह

(सू० सू०) नृणां भूमिपरित्यागो विगमं प्राणनाशनम् ॥ स्थाननाशो महाहानि  
सूर्यसूक्ष्मदशाफलम् ॥९॥ (सू० चं०) देवब्राह्मणभक्तिश्च नित्यकर्मरतस्तथा ॥ मुप्रीति  
सर्वभिद्रेश्च रवेः सूक्ष्मगते विधौ ॥१०॥ (सू० म०) क्रूरकर्मरतिस्तिग्मशत्रुभिः परिपीडनम् ॥  
रक्तवाक्यदितोगश्च रवेः सूक्ष्मगते क्रुजे ॥११॥ (सू० रा०) चौराप्रिविषमीतिश्च एणे मंग  
पराजयः ॥ दानघर्माविहीनश्च रवेः सूक्ष्मगते ह्यगौ ॥१२॥ (सू० वृ०) नृपसत्कारराजार्ह  
सेवकैः परिपूजितः ॥ राजबभ्रुगतः शांतः सूर्यसूक्ष्मगते गुरौ ॥१३॥ (सू० श०)  
चौर्यसाहसकर्मार्थं देवब्राह्मणपीडनम् ॥ स्थानच्छ्रुतिं मनोदुःखं रवेः सूक्ष्मगते शनी ॥१४॥  
(सू० बु०) दिव्यांबरदिव्यविद्यश्च दिव्यस्त्रीपरिमोगता ॥ अक्षिततार्पसिद्धिश्च रवेः सूक्ष्म गं  
बुधे ॥१५॥



रत रहता है, दुष्ट शत्रुओं से पीड़ित होता है तथा रक्त साव आदि रोग होता है॥११॥ (सू० सू० सू० रा०) चौर अग्नि तथा विष से पीडा हो, रण मे भग तथा पराजय हो, दान धर्म से हीन हो॥१२॥ (सू० ३ बृ०) राजयोग्य सत्कार सेवकरो से पूजा तथा राजसभा मे प्रवेश और आत्म सतोष प्राप्त हो॥१३॥ (सू० ३ श०) चोरी आदि मे उत्साह, देव ब्राह्मण की पीडा, स्थान हानि तथा मन मे दुःख होता है॥१४॥ (सू० ३ बु०) सुन्दर वस्त्राभूषण प्राप्ति, सुन्दरनारी भोग तथा अचिन्तित कार्य सिद्ध होता है॥१५॥

(सू० के०) गुरुकार्तिविमाराश्र मृत्युदारभयस्तथा ॥ स्वचित्सेवकसङ्घो रवे सूक्ष्मगते ध्वजे ॥१६॥ (सू० शु०) पुत्रमित्रकलत्राविस्तीर्यसपन्न एव च ॥ नानाविधा च सपत्नी रवे सूक्ष्मगते भृगौ ॥१७॥

(सू० ३ के०) अधिक बीमारी, हानि स्त्री तथा नोकर से भय तथा सेवक से कभी २ मेल भी रहे॥१६॥ (सू० ३ शु०) स्त्री, पुत्र, मित्र आदि से मुक्त हो तथा अनेक प्रकार की सम्पत्ति प्राप्त हो॥१७॥

### अथ चंद्रसूक्ष्मदशाफलमाह

(च० च०) भूषण भूमिलाभश्च सन्मान नृपपूजनम् ॥ तामसत्त्व गुह्यत्वं च चंद्रसूक्ष्मदशाफलम् ॥१८॥ (च० म०) दुःख शत्रुविरोधश्च कुक्षिरोग पितुर्मृति ॥ वातपित्तकफोद्रेक शक्तिसूक्ष्मगते बुधे ॥१९॥ (च० रा०) क्रोधन मित्रबधूना देशत्यागो धनक्षय ॥ विदेशाग्निगडप्रान्तिरिदुसूक्ष्मगतेप्यहौ॥२०॥ (च० बृ०) छत्रचामरसयुक्त वैभव पुत्रसपत्न्य ॥ सर्वत्र सुखमाप्नोति चंद्रसूक्ष्मगते गुरौ ॥२१॥ (च० श०) राजोपवनारा स्याद्व्यवहारे धनक्षय ॥ चौरत्व विप्रभीतिश्च चंद्रसूक्ष्मगते शनौ ॥२२॥

### चन्द्रसूक्ष्मदशाफल

(च० ३ च०) आभूषण तथा भूमिका लाभ, सन्मान, राजपूजा, तामसी बुद्धि तथा अभिमान होता है॥१८॥ (च० ३ म०) दुःख शत्रु से विरोध, कुक्षिरोग तथा पिता की मृत्यु एव सन्निपात आदि बीमारी होती है॥१९॥ (च० ३ रा०) मित्र बन्धुओं पर क्रोध, देशत्याग, धनहानि, विदेश मे कैद होना आदि होता है॥२०॥ (च० ३ बृ०) छत्र चामर से युक्त विभव, पुत्र आदि सम्पत्ति, तथा सर्वत्र सुख प्राप्त होता है॥२१॥ (च० ३ श०) राज से भय धन का नाश हो व्यापार मे हानि हो चोरी तथा ब्राह्मण से भी भय हो॥२२॥

(च० बु०) राजमान वस्तुलाभो विदेशाद्वाहनादिकम् ॥ पुत्रपौत्रसमृद्धिश्च चंद्रसूक्ष्मगते बुधे ॥२३॥ (च० के०) आत्मनो वृत्ति हनन सत्यभृङ्गवृषादिभिः ॥ अग्निचौर्यादिभीति स्याच्चंद्रसूक्ष्मगते ध्वजे ॥२४॥ (च० शु०) विवाहो भूमिलाभश्च वस्त्राभरणवैभवम् ॥ राज्यलाभश्च कीर्तिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते भृगौ॥२५॥ (च० सू०) क्लेशात्क्लेशकार्यनारा पशुधान्यधनक्षय ॥ गात्रवैद्यम्यभूमिश्च चंद्रसूक्ष्मगते रवौ ॥२६॥

(च० ३ वृ०) राज से सन्मान, वस्तु लाभ, विदेश के वाहन का लाभ, पुत्र पौत्र समृद्धि प्राप्त होती है॥२३॥ (च० ३ वे०) अपनी वृत्तिका नाश, सस्य (वनस्पति) शृंग आदि से हानि, अग्नि चोर आदि से भय हो॥२४॥ (च० ३ शु०) विवाह, भूमिलाभ, वस्त्र आभूषण सम्पत्ति की प्राप्ति, राज्यलाभ और यशलाभ होता है॥२४॥ (च० ३ सू०) दुःख के बाद दुःख तथा कार्यहानि, पशुधान्य और धन का क्षय, शारीरिक स्वास्थ्य की विपत्तता होती है॥२६॥

### अथ भौमसूक्ष्मदशाफलमाह

(म० म०) भूमिहानिर्भन खेदो ह्यपस्मारी च बधुयुक् ॥ पुरस्त्रोममनस्तापो भौमसूक्ष्मदशाफलम् ॥२७॥ (म० रा०) अगदोपो जनाद्भूति प्रमदावशानागनम् ॥ वह्निसर्पभय घोर भौमसूक्ष्मगतेप्यहौ ॥२८॥ (म० वृ०) देवपूजारतिश्रात्र मन्त्राम्युत्थानतत्परः ॥ लोकपूज्य प्रमोद च भौमसूक्ष्मगते गुरौ ॥२९॥

#### भौमसूक्ष्मदशाफल

(म० ३ म०) भूमि की हानि, मन में खेद अपस्मार (गृही) की बीमारी बधुसाहाय्यलाभ, मन में क्षोभ और दुःख होता है॥२७॥ (म० ३ रा०) किसी अग में दोग, भय, स्त्रीहानि, अग्नि सर्प से भय होता है॥२८॥ (म० ३ वृ०) देवताओं की पूजा, भक्ति मन्त्र पुरश्चरणरति, लोक पूजा तथा सुख होता है॥२९॥

(म० श०) बधनान्मुच्यते बद्धो धनधान्यपरिच्छद ॥ मृत्युार्थबहुल धीमान्भौमे सूक्ष्मगते शनौ ॥३०॥ (म० वृ०) वाहन छत्रसयुक्त राज्यभोगपर सुखम् ॥ कासश्वासादिका पीडा भौमसूक्ष्मगते बुधे ॥३१॥ (म० के०) पर प्रेरितबुद्धिश्च सर्वत्रापि च गर्हिता ॥ अशुवि सर्वकालेषु भौमसूक्ष्मगते ध्वजे ॥३२॥ (म० शु०) इष्टस्त्रीभोगसप्ततिरिष्टभोजनसग्रह ॥ इष्टार्थश्चैव लाभश्च भौमसूक्ष्मगते भृगौ ॥३३॥ (म० सू०) राजद्वेषो द्विजात्वलेशं कार्याभिप्रायवचक ॥ लोकेऽपि निद्यतामेति भौमसूक्ष्मगते रवौ ॥३४॥ (म० च०) शुद्धत्व धनसंप्राप्तिर्देषब्राह्मणवत्सल ॥ व्याघ्रना परिनूयेत् भौमसूक्ष्मगते विद्यौ ॥३५॥

(म० ३ श०) वैदी वैद से झूटता है, धन, धान्य वस्त्र प्राप्त होते हैं, मोकर मित्र आदि तथा सम्पत्तिशाही होता है॥३०॥ (म० ३ वृ०) छत्रयुक्त वाहन, राजासमान, सुख के गाम्भ आरा खासी आदि बीमारी भी होती है॥३१॥ (म० ३ वे०) दूसरे की सम्पत्ति में रहना, सर्वत्र निन्दा होना, सदा मलीन रहना होता है॥३२॥ (म० ३ शु०) इच्छानुसार स्त्री, सम्पत्ति, भोग, भोजन, वस्त्र, धन, लाभ आदि होते हैं॥३३॥ (म० ३ सू०) राजासे द्वेष, ब्राह्मणों के लेश, कार्य की हानि, ठगी तथा लोभ में निन्दा होती है॥३४॥ (म० ३ च०) शुद्धता, धनलाभ, देवब्राह्मण पूजा तथा रोगी रहता है॥३५॥

#### अथ राहोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(रा० रा०) लोकोपद्रवबुद्धिश्च स्वकार्ये मतिविभ्रम ॥ मृग्यता चित्तबोध स्याद्ब्राहो

सूक्ष्मदशाफलम् ॥३६॥ (रा० वृ०) दीर्घरोगी दरिद्रश्च सर्वेषां प्रियदर्शनः ॥ दानधर्मतः  
शस्तो राहो सूक्ष्मगते गुरौ ॥३७॥ (रा० रा०) कुमार्गात्कुत्सितोऽप्यथ दुष्टश्च परसेवकः ॥  
असत्सगमतिर्मूर्खो राहो सूक्ष्मगते शनौ ॥३८॥ (रा० शु०) स्त्रीसभोगमतिर्बाग्मी  
लोकसमाबनावृतः ॥ अग्रमिच्छस्तनुग्लानी राहो सूक्ष्मगते बुधे ॥३९॥ (रा० के०) माधुर्यं  
मानहानिश्च बधन चाप्रमारकम् ॥ पारुष्य जीवहानिश्च राहो सूक्ष्मगते ध्वजे ॥४०॥ (रा०  
शु०) बधनान्मुच्यते बद्धं स्थानमानार्थसचयः ॥ कारणाद्द्रव्यलाभश्च राहो सूक्ष्मगते भृगौ  
॥४१॥ (रा० सू०) ध्यक्तार्शो गुल्मरोगश्च क्रोधहानिस्तथैव च ॥ बाहनादिसुखं सर्वं राहो  
सूक्ष्मगते रवौ ॥४२॥ (रा० च०) मणि रत्नघनावाप्तिर्विद्योपासनशीलवान् ॥ देवार्चनपरो  
भक्त्या राहो सूक्ष्मगते विद्यौ ॥४३॥ (रा० म०) निर्जित जनविद्रावो जने क्रोधश्च बधनात्  
॥ चौर्यशीलरतिर्नित्यं राहो सूक्ष्मगते कुजे ॥४४॥

### राहसूक्ष्मदशाफल

(रा० ३ रा०) जनसमाज मे उपद्रवकारी अपने कार्य मे अस्थिरता तथा किकर्तव्य  
विमूढता होती है ॥३६॥ (रा० ३ वृ०) दीर्घरोगी, दरिद्री तथा जनप्रिय एव दान धर्म मे  
रुचि होती है ॥३७॥ (रा० ३ श०) कुमार्गी, दुष्टबुद्धि, उग्रस्वभाव, दुष्ट, परसेवी, असत्सगी  
तथा मूढ होता है ॥३८॥ (रा० ३ बु०) अतिकामी, वाचाल लोक निन्दामुक्त बहुभोजी तथा  
मत्तिन रहता है ॥३९॥ (रा० ३ के०) माधुर्य, मानहानि, बधन उपद्रव, कठोरता एव जीव  
हानि भी होती है ॥४०॥ (रा० ३ शु०) बन्धन से मुक्ति स्थान मान धन का सञ्चय तथा  
कारण से द्रव्य का लाभ होता है ॥४१॥ (रा० ३ सू०) बवासीर तथा गुल्मरोग  
क्रोधरहितता एव बाहन आदि का सुख होता है ॥४२॥ (रा० ३ च०) मणि रत्न धन की  
प्राप्ति, विद्याव्यसन तथा उपामनाशीलता एव भक्ति से देव पूजनकारी होता है ॥४३॥ (रा०  
३ म०) पराजय, जनसमूह से निरादर तथा बन्धुओं पर क्रोध होता है एव सदा चोरी मे चित्त  
रहता है ॥४४॥

### अथ गुरोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(वृ० वृ०) शोकनाशो घनाधिक्यमग्रिहोत्र शिवार्चनम् ॥ बाहन छत्रसयुक्त  
जीवसूक्ष्मदशाफलम् ॥४५॥ (वृ० श०) व्रतहा सूर्य वर्ती च विदेशे वसुनाशनम् ॥ विरोधो  
घननाशश्च गुरो सूक्ष्मगते शनौ ॥४६॥ (वृ० के०) जान विभवपाडित्ये शास्त्रयोक्ता  
शिवार्चनम् ॥ असिहोत्र गुरोर्भक्तिर्गुरो सूक्ष्मगते ध्वजे ॥४७॥ (वृ० शु०) रोगान्मुक्ति सुख  
भोग घनधान्यसमागमम् ॥ पुत्रवारादिक सीष्य गुरो सूक्ष्मगते भृगौ ॥४८॥ (वृ० सू०)  
वातपित्त प्रकोपश्च भ्रूज्जोदेकस्तु वारुणः ॥ रसव्याधिकृत शूल गुरो सूक्ष्मगते रवौ ॥४९॥  
(वृ० च०) छत्रचामरसयुक्त वैभव पुत्रसपत्नः ॥ नेत्रकुशिता पीडा गुरो सूक्ष्मगते विद्यौ  
॥५०॥ (वृ० म०) स्त्रीजनाच्च विद्योत्पत्तिर्बधन चातिनिग्रहम् ॥ देशातरगमो भ्रान्तिर्गुरो  
सूक्ष्मगते कुजे ॥५१॥ (वृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतं स्थान्चौरैररपहृतं महत् ॥  
सर्ववृश्चिकदाष्टत्व गुरो सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ॥५२॥

सत्यहानिः केतोः सूक्ष्मगते शनौ ॥७८॥ (के० बु०) नानाविधजनाप्तिश्च विप्रयोगोऽरि-  
पीडनम् ॥ अर्थसंपत्समृद्धिश्च केतोः सूक्ष्मगते बुधे ॥७९॥

### केतु सूक्ष्मदशा फल

(के० ३के०) पुत्र स्त्री जन्य दुःख तथा शारीरिक अस्वस्थता एव दरिद्रताके कारण भिक्षुवृत्तिसे  
जीवनयापन होता है ॥७१॥ (के० ३ शु०) रोग का नाश तथा धनलाभ एव गुरु तथा ब्राह्मण  
का भक्त, इष्टमित्रो से मेल रहता है ॥७२॥ (के० ३ सू०) युद्ध मे विनाश तथा अन्य देश मे  
प्रवास, मित्रो से विपत्ति, तथा क्लेश हो ॥७३॥ (के० ३ च०) दास और दासिया तथा  
सम्पत्ति हो, युद्ध से लाभ और जय हो एव शुभ कीर्ति हो ॥७४॥ (के० ३ म०) रहने के स्थान  
मे भय, घोड़े आदि चौपाया तथा चोर दुष्ट आदि से पीडा और गुल्मपीडा तथा सिरदर्द होता  
है ॥७५॥ (के० ३ रा०) साम मसुर की मृत्यु तथा दुष्ट स्त्री के सहयोग से लघुता तथा रधिर  
का वमन होता है ॥७६॥ (के० ३ वृ०) वैर विरोध तथा अक्स्मात् राजभय एव पशु तथा  
खेत का नाश और अरिष्ट होता है ॥७७॥ (के० ३ श०) व्यर्थ की पीडा तथा अत्यन्त  
कमजोर सन्तान की उत्पत्ति, लघन, स्त्री से विरोध, सत्य की हानि होती है ॥७८॥  
(के० ३बु०) अनेक अतिथि का आगमन, शत्रुपीडा, धन, सम्पत्ति की वृद्धि होती है ॥७९॥

### अथ शुक्र सूक्ष्मदशा फलमाह

(शु० शु०) शत्रुहानिर्महत्तीक्ष्णं शकरालयसम्भवम् ॥ तडागकूपनिर्माणं शुक्रसूक्ष्मदशाफलम्  
॥८०॥ (शु० सू०) उरस्तापो भ्रमश्चैव गतागतविचेष्टितम् ॥ स्वचिल्लामः  
स्वचिद्धानिर्भृगोः सूक्ष्म गते रवौ ॥८१॥ (शु० च०) आरोग्य धनसंपत्तिः कार्यलाभो गतागतैः  
॥ विद्याबुद्धिविवृद्धिः स्याद्भृगोः सूक्ष्मगते विधौ ॥८२॥ (शु० म०) जडत्व रिपुवैषम्यं  
वेशभ्रशो महद्भयम् ॥ व्याधिदुःखसममुत्पत्तिर्भृगो सूक्ष्मगते कुजे ॥८३॥ (शु० रा०)  
राज्याश्रितसर्पजा भीतिर्बधुनाशो गुरव्यथा ॥ स्थानच्युतिर्महाभीतिर्भृगोः सूक्ष्मगतेऽप्यहौ  
॥८४॥ (शु० वृ०) सर्वत्र कार्यलाभश्च क्षेत्रार्थविभवोऽप्रति ॥ वणिग्भूतेर्महावणिग्भृगोः  
सूक्ष्मगते गुरौ ॥८५॥ (शु० श०) शत्रुपीडा महद्दुःखं चतुष्पादविनाशनम् ॥  
स्वगोश्रुगुहानिः स्याद्भृगोः सूक्ष्मगते शनौ ॥८६॥ (शु० बु०) बाधयादिषु संपत्तिर्व्यवहारो  
धनोऽप्रतिः पुत्रवारा दित सौख्यं भृगोः सूक्ष्मगते बुधे ॥८७॥ (शु० के०) अग्निरोगो महापीडा  
मुखनेत्रशिरोव्यथा ॥ सचितापान्नः पीडा भृगोः सूक्ष्मगते ध्वजे ॥८८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे मूर्धादिसूक्ष्मदशाफलकथनं  
नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥

### शुक्र सूक्ष्मदशा फल

(शु० ३ शु०) शत्रु की हानि तथा महान् गुण, शिवमन्दिर निर्माण, वृष तानाव निर्माण  
होता है ॥८०॥ (शु० ३ सू०) छानी मे जलन, वृद्धि मे भ्रम, निद्रेष्ट पटे रहना, कभी नाभ  
कभी हानि होती है ॥८१॥ (शु० ३ च०) आरोग्यता, धन सम्पत्ति की प्राप्ति, व्यापार मे  
लाभ, यात्रा मे लाभ, विद्या बुद्धि की वृद्धि होती है ॥८२॥ (शु० ३ म०) देश मे जडता, शत्रु मे

**पूर्वखण्डे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः**

विषमता, देशत्याग, महान् भय, व्याधि और दुःख की उत्पत्ति होती है॥८३॥ (शु० ३ रा०) में राज्य, अग्नि, सर्प से भय, बन्धु का नाश, माता पिता की व्यथा, स्थान से हटना तथा महान् भय होता है॥८४॥ (शु० ३ वृ०) सर्वत्र कार्य की सिद्धि तथा लाभ, खेत व्यापार और विभव की उत्पत्ति तथा व्यापार से विपुल लाभ हो॥८५॥ (शु० ३ श०) शत्रु से पीडा, महान् दुःख, पशु का नाश, बन्धु तथा माता पिता की हानि होती है॥८६॥ (शु० ३ बु०) बन्धु में सम्पन्नता तथा मेल, व्यापार से बहुलाभ, स्त्रीपुत्र से सुख होता है॥८७॥ (शु० ३ के०) मन्दाग्नि की बीमारी, मुख, नेत्र और सिर में व्यथा, सञ्चित धन की हानि, शरीर में पीडा, होती है॥८८॥

इति श्रीबृहत्पाराशर हो० शास्त्रे पू० भावप्रका० सूक्ष्मदशाफलकथन  
नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः॥४३॥

**अथ प्राणदशानयनमाह**

स्वसूक्ष्माख्यदशायाश्च पिण्डे विषटिकात्मके ॥ स्वाब्देस्तप्ये पुनस्तप्ये त्रिंशोत्तरशतेन च ॥ तद्य  
विषटिका ज्ञेया विपत्तानि ततः परम् ॥१॥

**प्राणदशानयन**

सूक्ष्मदशा की घटी, पल सख्या को पलात्मक पिण्ड (एकरस) करके जिम ग्रह की प्राणदशा देखना है उसके दशा वर्ग से गुणा करके १२० का भाग देने से सद्य पल, विपल प्राप्त होगी। पलाक ६० से अधिक होने पर ६० का भाग देने पर घटी पल, विपल ये तीन अंक प्राप्त होते हैं॥१॥

अथ सूर्यसूक्ष्मदशा तन्मध्ये प्राणदशाचक्रम्										
ग्रहः	शु०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	गु०	पो०
घटपः	०	१	०	२	२	२	२	०	२	१६
पला०	४८	२१	५६	२५	९	३३	१७	५९	४२	१२
विपला०	३६	०	४२	४८	३६	५४	४२	४२	०	०

**अथ प्राणदशामाह**

शरीरनाथो मरणाधिनेन युक्तो मृगंश्रेण मृगाधिपाशे ॥ तयोर्विपाशे भयमानुनो मृनि मर्षात्तदा

प्राग्द्वारचिताः ॥२॥ सिंह कन्यांशौ तौ चैत्कफकंपादितो मृतिः ॥ मृगराजे तुलासंखे  
तयोर्भुक्ती मृतिं बवेत् ॥३॥ अल्पांशो मृग्रे वा तयोदयि सरीसृपात् ॥ चापांशो मृग्रे तु  
तद्गण्ड्य मृतिं बवेत् ॥४॥ मृगांशौ तौ सिंहे च तयोदयि सरान्मृतिः ॥ कुंभांशौ यदा तौ च  
मृगराजनृपाद्भयम् ॥५॥ मीनांशकण्ठी सिंहे सारंगाद्भयमादिशेत् ॥ सिंहे मेवांशौ तौ  
चेद्गोमायोर्भयमादिशेत् ॥६॥ वृषांशौ तौ सूर्यर्षे तयोदयि शुनो मृतिः ॥ पुष्पांशौ तौ  
सूर्यर्षे गोसांगुलाद्भयं भवेत् ॥७॥

### प्राणदशा का निर्याण में उपयोग

लघ्नेश अष्टमेश युक्त सिंह राशि नवाश मे अथवा सूर्य नवाश मे हो तो उनकी 'प्राणदशा' मे  
मूपक या सर्प के काटने से मृत्यु होती है ॥२॥ यदि लघ्नेशाष्टमेश दोनो सिंह राशि मे कन्या के  
नवमाश मे हो तो कफवृद्धि या कपरोग से मृत्यु होती है। सिंह राशि के तुलाश मे हो तो ॥३॥  
उनकी 'प्राणदशामे' सर्प से मृत्यु होती है। सिंह राशि मे धनुरश मे हो तो भी सर्पवर्ग से ही  
मृत्यु होती है ॥४॥ सिंह राशि मे मकर नवाश मे हो तो उनकी 'प्राणदशा' मे गधे से मृत्यु  
होती है। इसी प्रकार कुभाश मे होने से सिंह से मृत्यु होती है ॥५॥ और सिंह राशि मे मीन  
नवाश मे हो तो सारग (पक्षी) से मृत्यु होती है। सिंह मे मेष नवाश मे हो तो 'गोमायु' गीदह  
(सियार) से मृत्यु होती है ॥६॥ सिंह मे वृष नवाश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे कुत्ते के  
काटने से मृत्यु होती है। इसी तरह सूर्यराशि मे मियुनाश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे  
'गोलागूल' (गी या बैल की पूँछ) से मृत्यु हो ॥७॥

कर्कांशौ तु सिंहे तु ह्यग्निबग्धाद्गृहान्मृतिः ॥ एवं भ्रात्रादिभावानां तत्तद्भुक्ती फलं बवेत्  
॥८॥ बेहाधिपौ मृत्युपतिश्च युक्तभ्रापांशौ कार्मुकराशौ चैत् ॥ बाये तयोर्बाजिकृतं च मृत्यु  
वदति तत्कालविदो महातः ॥९॥ चापे मृगांशौ तौ चेतसारगाद्भयमादिशेत् ॥ ह्ये  
कुंभांशौ तौ चेद्राहाद्भयमादिशेत् ॥१०॥ ह्ये मीनांशौ तौ चेत्याके नकाद्भय तयोः ॥  
मेवांशौ तौ चापे तु तयोदयि चतुष्पदात् ॥११॥ ह्ये वृषांशौ तौ चेद्रासभाद्भयमादिशेत्  
॥१२॥ पुष्पांशौ ह्यांगेषु वानराद्भयमादिशेत् ॥ कर्कांशौ ह्यांगे तु चालुना भयमेतयोः  
॥१३॥ सिंहांशौ ह्यांगेषु जडुकाद्भयमेतयोः ॥ कन्यांशौ ह्यांगे तु सांगुलान्मृतिरुच्यते  
॥१४॥ तुलांशौ ह्यांगे तु सोष्टान्मरणमेतयोः ॥ अल्पांशौ ह्यांगेषु तयोः पाके सरीसृपात् ॥  
एव भ्रात्रादिभावानां फलमाहुर्मनीषिणः ॥१५॥

सिंह मे कर्कांशमे हो तो घर मे आग लगने से जलकर मृत्यु हो। यह निर्देश मात्र है। जैसे  
अष्टमेश लघ्नेश से जातक का निधनकारण कहा है, इसी प्रकार भ्राता, पिता, माता आदि के  
लिए भी उनके भावेश और अष्टमेश से पूर्वोक्त योग होने पर उपर्युक्त कारणानुसार मृत्यु  
होती है ॥८॥ (अब तक सिंह राशिगत का फल कहा। अन्य राशि का फल बहते हैं) लघ्नेश  
और अष्टमेश धनुराशि मे धनु नवाश मे ही हों तो उनकी प्राणदशा मे घुडसवारी से मृत्यु  
होती है ॥९॥ तथा ये दोनो धनुराशि मे मीनाश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे मगरमच्छ से  
मृत्युभय है। मेष के नवाश मे चौपाये पशु से भया ॥११॥ धनुराशि के वृषाश मे गधे से भया  
मियुनाश मे वानर से भय हो ॥१२॥ कर्कांश मे हो तो मूपक से भय हो ॥१३॥ धनु राशि मे

**सूर्यवन्दे चतुर्वारिंशोऽध्यायः**

सिंहाश मे हो तो सियार से भय हो। कन्याश मे हो तो गोलागूल से भय हो। १४॥ इसी प्रकार धनुराशि मे तुलाश मे हो तो पत्थर की चोट से मृत्यु हो। धनुराशि के अन्न अत्यल्प हो तो सर्प से मृत्यु। इसी तरह भ्राता आदि के लिए भी विचार करना। १५॥

विलप्रयोनेर्धननायकश्च मृगे मृगांशे च गतेऽथ युक्ते ॥ भुक्तोऽथ प्रीतिश्च भवेन्नराणां विवाहहेतुः प्रबन्ति संतः ॥१६॥ कुम्भाशगौ मृगांशे च भल्लूकाद्भयमेतयोः ॥ अषांशगौ मृगांशे च सारंगोद्भयमेतयोः ॥१७॥ पुत्रांशगौ मृगास्ये तौ हरिणान्मृतिरेतयोः। कर्काशगौ मृगास्ये तौ तयोदधि मृतिर्गजात् ॥१८॥ कौर्ष्याशगौ मृगाशे तौ नकुलान्मृतिरेतयोः ॥ चापांशगौ मृगांशे तौ मार्जारान्मृतिरेतयोः ॥१९॥ एवं निश्चित्य मतिमान्भ्रात्रादीनां फल बदेत् ॥२०॥

तथा लग्नेश और धनेश, मकर राशिके मकरनवाशमे हो तो मनुष्योमे प्रीति और विवाहका कारण होता है। १६॥ तथा लग्नेश अष्टमेश मकरराशि के कुभाश मे हो तो भालू से भय हो। मकर और मीनाश मे हो तो सारंग से भय होता है। १७॥ मकरराशि मे मिथुनाश मे हो तो हरिण से भय होता है। कर्काश मे हो तो हाथी से मृत्यु होती है। १८॥ मकरराशि मे वृश्चिकाश मे हो तो नेबले से मृत्यु ॥ और धनुराश मे हो तो बिडाल से मृत्यु होती है। १९॥ इसी प्रकार से भ्राता आदि के लिए भी फल निश्चय करो। २०॥  
नोट—यहा सिंह, धन, मकर राशियो मे नवाशो का फल निर्देश किया है। इसी ढंग से अन्य राशि तथा अन्य नवाश मे भी एव अन्यान्य भावो के लिए भी समझना चाहिए। 'प्राणदशा' का उपयोग ऊपर दिखाये गये 'मृत्यु' विचार मे ही मुख्य है।

### अथ सूर्यप्राणदशाफलमाह

(सू० सू०) सौंश्रत्यविषजा बाधा मोषणं विषमेलणम् ॥ सूर्यप्राणदशायां तु मरण  
हृच्छ्रमादिशेत् ॥२१॥ (सू० च०) सुख भोजनसंपत्तिः संस्कारो नृपवैभवम् ॥  
उदारविहृतामिश्च रवेः प्राणगते बिधौ ॥२२॥ (सू० मं०) मूपोपद्रवमन्यार्थं ब्रह्मनाशो  
महद्भयम् ॥ महत्पुत्रयप्राप्ती रवेः प्राणगते बुजे ॥२३॥ (सू० रा०) अप्रोद्भवा महापीडा  
विषोत्पत्तिर्विशेषतः ॥ अर्षाधिराजभिः क्लेशं -रवेः प्राणगतेऽप्यहो ॥२४॥ (सू० वृ०)  
नानाविद्यार्थसंपत्तिः कार्यलाभो गतागतः ॥ जीवप्राणभ्रमे वासो रवेः प्राणगते गुरौ ॥२५॥  
(सू० श०) बधन प्राणनाशश्च वित्तोद्वेगस्तथैव च ॥ बहुबाधा महाहानी रवेः प्राणगते शनौ  
॥२६॥ (सू० बु०) राजान्नभोगः सततं राजतांछनतत्पदम् ॥ भात्या सतर्पयेदेव रवेः प्राणगते  
बुधे ॥२७॥ (सू० के०) अन्योन्यं कलहश्चैव बसुहानिः पराजयः ॥ गुहस्त्रीबसुहानिश्च  
सूर्यप्राणगते ध्वजे ॥२८॥ (सू० ग०) रामपूजा घनाधिक्य स्त्रीपुत्रादिभवं सुखम् ॥  
अन्नपानादिभोगादि सूर्यप्राणगते मृगौ ॥२९॥

**सूर्यसूर्य में प्राणदशा फल**

(सू० ४सू०) सूर्य प्राणदशा मे व्यभिचारिणी स्त्री द्वारा विषप्रयोग, नेत्रपीडा तथा कष्ट से मृत्यु होती है। २१॥ (सू० ४ च०) चन्द्र प्राणदशा में सुख, भोजन में श्रेष्ठता, शुभ संस्कार, राजसमान वैभव तथा उदारभाव होते हैं। २२॥ (सू० ४ मं०) राज से भय, अन्य

निमित्त से धनहानि, महान् भय, उन्नति तथा प्राप्ति होती है।।२३।। (सू० ४ रा०) राहु  
 की प्राणदशा में अन्नजात पीडा, विशेषरूप से विप की उत्पत्ति, अग्नि तथा राजभय होता  
 है।।२४।। (सू० ४ वृ०) गुरुप्राणदशा में नाना विद्या तथा धन सम्पत्ति व्यापार तथा यात्रा से  
 लाभ तथा निज देश में वाग्ज होता है।।२५।। (सू० ४ श०) सूर्य में जनि की प्राणदशा हो तो  
 धन, प्राणहानि, चित्तोद्वेग, बहुबाधा, महान् हानि होती है।।२६।। (सू० ४ बु०) सूक्ष्मसूर्य में  
 बुध प्रा० द० हो तो राजा से निरन्तर प्राप्ति तथा राजचिह्नयुक्त पद एवं आत्मसन्तोष होता  
 है।।२७।। (सू० ४ के०) सूक्ष्म सूर्य में केतु की प्रा० द० हो तो परिवार में कलह, धनहानि,  
 पराजय, स्त्री बहु माता पिता की हानि होती है।।२८।। (सू० ४ शु०) सूर्य सूक्ष्ममें शुक्र की  
 प्रा० द० हो तो राज पूजा, अधिक धन, स्त्री पुत्र से सुख तथा उत्तम खान पान प्राप्त होता  
 है।।२९।।

### अथ चन्द्रप्राणदशाफलमाह

(च० च०) योगान्यास समाधि च वैशिकत्व च पश्यति ॥ इति सर्वं समासेन  
 चन्द्रप्राणदशाफलम् ॥३०॥ (च० म०) क्षय कुष्ठ बधुनाश रक्तस्रावान्महदूष्यम् ॥  
 भूतावेशादि जापेत् चन्द्रप्राणगते कुजे ॥३१॥ (च० रा०) सर्पभीतिर्विशेषेण भूतोपद्रववासदा  
 ॥ दृष्टिक्षोभो मतिभ्रंशश्चन्द्रप्राणगतेऽप्यहौ ॥३२॥ (च० वृ०) धर्मवृद्धिं क्षमाप्राप्तिर्देवब्राह्मण  
 पूजनम् ॥ सौभाग्य प्रियदृष्टिश्च चन्द्रप्राणगते गुरौ ॥३३॥ (च० श०) सहसा देहपतन  
 सन्नोपद्रववेदना ॥ अघत्व च धनक्षतिश्चन्द्रप्राणगते शनी ॥३४॥ (च० बु०)  
 चामरच्छत्रसंप्राप्ती राज्यलाभो नृदातत ॥ समत्य सर्वभूतेषु चन्द्रप्राणगते बुधे ॥३५॥ (च०  
 के०) शस्त्राग्निपुजा पीडा विपाधि कुशिरोगता ॥ पुत्रदारवियोगश्च चन्द्रप्राणगते शिखी  
 ॥३६॥ (च० शु०) पुत्रमित्रकलप्राप्तिर्विदेशाच्च धनगम ॥ सुखसपत्तिरर्थश्च चन्द्रप्राणगते  
 भृगौ ॥३७॥ (च० सू०) तोदवोषी प्रदोषी च प्राणहानिर्मनोविषम् ॥ वेशत्यागी  
 महाभीतिश्चन्द्रप्राणगते रवी ॥३८॥

### सूक्ष्म चन्द्र में प्राणदशा फल

(च० ४ च०) सूक्ष्म चन्द्र में चन्द्र की प्राणदशा हो तो योगान्यास से समाधि प्राप्त हो,  
 गुरु का साक्षात्कार हो। यह सब सर्वोप में हो।।३०॥ (च० ४ म०) सूक्ष्म च० में मंगल की  
 प्रा० द० हो तो क्षय, कुष्ठ, बधुनाश तथा रक्तस्राव से महान् भय एवं भूतावेश आदि होता  
 है।।३१॥ (च० ४ रा०) सूक्ष्म च० में राहु प्रा० द० हो तो विशेष करके सर्पभय तथा भूतो का  
 उपद्रव नेत्र में विकार बुद्धि में विषमता होती है।।३२॥ (च० ४ वृ०) सूक्ष्म चन्द्र में गुरु की  
 प्रा० द० हो तो धर्म की वृद्धि, क्षमा प्राप्ति, देव ब्राह्मण की पूजा, सौभाग्य और प्रिय दृष्टि  
 होती है।।३३॥ (च० ४ श०) सूक्ष्म चन्द्र में जनि की प्राणदशा हो तो देह में जडता, शत्रुओं  
 का उपद्रव तथा शरीर में पीडा, नेत्र विकार तथा धनहानि होती है।।३४॥ (च० ४ बु०) सूक्ष्म  
 च० में बुध की प्रा० द० हो तो छत्र चामर की प्राप्ति, राज्य लाभ तथा सर्वमें महान भाव  
 होता है।।३५॥ (च० ४ के०) सूक्ष्म चन्द्र में केतु की प्रा० द० हो तो अस्त्र अग्नि वनु से पीडा  
 विप से भय, कुशिरोग तथा स्त्री पुत्र से वियोग होता है।।३६॥ (च० ४ शु०) सूक्ष्म च० में



शुक्र की प्रा० द० हो तो स्त्री पुत्र मित्र की प्राप्ति तथा विदेश से धनलाभ एव सुख सम्पत्ति होती है ॥३७॥ (च० ४ सू०) सूक्ष्म चन्द्र मे सूर्य प्रा० द० हो तो तीव्ररोगी तथा वातादि दोषवान्, प्राणहानि, मन मे विकार, देशत्याग एव महान् भय होता है ॥३८॥

### अथ भौमप्राणदशाफलमाह

(म० मं०) क्षेत्रहानिमनोदुःखम् ह्यपस्मारादिरोगकृत् ॥ परिवारकृता पीडा भौमे प्राणदशाफलम् ॥३९॥ (म० रा०) विच्युत सुतदारदिवधूपद्वपीडित ॥ प्राणत्यागो विपणैव भौमप्राणगतेष्यही ॥४०॥ (म० मृ०) देवार्चनपर श्रीमान्मन्त्रानुष्ठानतत्पर ॥ पुत्रपौत्रसुखावाप्तिर्भौमप्राणगते गुरौ ॥४१॥ (म० श०) अप्रिवाधा भवेन्मृत्युर्यनाश पदच्युति ॥ बधुभिर्बधुताहानिर्भौमप्राणगते शनौ ॥४२॥ (म० बु०) दिव्याबरसमुत्पत्तिर्दिव्याभरणभूयित ॥ दिव्यागनाया संप्राप्तिर्भौमप्राणगते बुधे ॥४३॥ (म० के०) पतनोत्पातपीडा च नेत्रलोभो महद्भयम् ॥ भुजगाद्ब्रह्महानिश्च भौमप्राणगते ध्वजे ॥४४॥ (म० शु०) धनघान्यादिसपत्तिलोकपूजा सुखागमा ॥ नानामोमीर्भवेद्रोगी भौमप्राणगते मृगौ ॥४५॥ (म० सू०) ज्वरोन्माद क्षयोर्यश्च राजविज्ञेहसमय ॥ दीर्घरोगी दरिद्रः स्याद्भौमप्राणगते रवौ ॥४६॥ (म० च०) भोजनादिसुखप्रोत्तिर्वस्त्राभरणवाहितम् ॥ शीतोष्णव्याधिपीडा च भौमप्राणगते विधौ ॥४७॥

### सूक्ष्म भौम मे प्राणदशा फल

(म० ४ म०) मगल अपनी प्राणदशा मे छेत की हानि, मन मे चिन्ता तथा मृगी आदि रोग एव परिवार के कलह से क्लेश होता है ॥३९॥ (म० ४ रा०) सूक्ष्म मगल मे राहु की प्राणदशा हो तो स्त्री पुत्र बन्ध आदि के उपद्रव से दुःखित होकर विप के द्वारा प्राणहानि करता है ॥४०॥ (म० ४ मृ०) सूक्ष्म भौम मे गुरु की प्रा० द० हो तो देवपूजा निरत, श्रीमान् तथा मन्त्रानुष्ठान मे तत्पर एव पुत्र पौत्र सुख की प्राप्ति होती है ॥४१॥ (म० ४ श०) सूक्ष्म भौम मे शनि की प्राणदशा हो तो मृत्यु या धननाश एव पदच्युति, तथा बन्धुओ से बन्धुता की हानि होती है ॥४२॥ (म० ४ बु०) सूक्ष्म भौम मे बुध की प्राणदशा हो तो सुन्दर वस्त्र प्राप्ति तथा सुन्दर आभरण युक्ता एव सुन्दरी स्त्री प्राप्त होती है ॥४३॥ (म० ४ के०) सूक्ष्म भौमदशा मे केतु की प्राणदशा हो तो ऊपर से गिरन की पीडा, नेत्र मे विकार, महान् भय तथा सर्प निमित्त से हानि होती है ॥४४॥ (म० ४ शु०) सूक्ष्म म० म शुक्र की प्रा० द० हो तो धनघान्य आदि सपत्ति लोक मे पूजा सुख की प्राप्ति तथा नाना भोगों की प्राप्ति होती है ॥४५॥ (म० ४ सू०) सूक्ष्म भौ० दशामे सूर्य वा प्राणान्तर हो तो ज्वर जन्य उन्माद, घनक्षय, राजद्वेष, दीर्घरोगी और दरिद्र होता है ॥४६॥ (म० ४ च०) सूक्ष्म भौ० दशामे चन्द्र की प्राणदशा हो, तो इच्छित भोजन वस्त्र आभरण की प्राप्ति तथा सर्द गरम विकार होता है ॥४७॥

### अथ राहो. प्राणदशाफलमाह

(रा० रा०) अन्नगाने विरक्तश्च विपत्तीतिस्तथैव च ॥ साहाय्यनानाश्च राहो

पूर्वकण्ठे चतुश्रत्वारिंशोऽध्यायः

(बृ० चं०) छत्र चामरसंयुक्त वैभवं पुत्रसम्पदः ॥ नेत्रकुसिगता पीडा गुरोः प्राणगते विद्यी ॥६३॥ (बृ० मं०) स्त्रीजनाञ्च विद्योत्पत्तिः बंधनं चातिनिग्रहः ॥ देशान्तरगामो भ्रान्ति गुरोः प्राणगते कुजे ॥६४॥ (बृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतश्च चौरैरपहं धनम् ॥ सर्पबुद्धिक- बंशश्च गुरोः प्राणगते प्यहौ ॥६५॥

सूक्ष्म गुर्वन्तर प्राणदशा फल

(बृ० ४ बृ०) गुरु की प्राणदशा में शोकनाश, धनवृद्धि, हवन, शिवपूजा तथा छत्रयुक्त सवारी होती है ॥५७॥ (बृ० ४ श०) गुरु में शनि की प्राणदशा हो तो बतहानि, धर्मलोप, विदेशगमन, धनहानि, बन्धुविरोध होता है ॥५८॥ (बृ० ४ बु०) सूक्ष्मगुरु में बुध की प्राणदशा हो तो विद्या में अनुराग लोक में यश, धन की प्राप्ति, स्त्री पुत्र से सुख होता है ॥५९॥ (बृ० ४ के०) सूक्ष्म गु० दशा में केतु की प्रा० द० हो तो ज्ञान प्राप्ति, ऐश्वर्य, शास्त्रज्ञान, शिवपूजा, अप्रिहोत्र तथा गुरुभक्ति होती है ॥६०॥ (बृ० ४ शु०) सूक्ष्म गुरु में शुक की प्राणदशा हो तो रोग से मुक्ति, सुखभोग, धनधान्यवृद्धि, पुत्रस्त्री से सुख होता है ॥६१॥ (बृ० ४ सू०) सूक्ष्म गु० दशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो त्रिदोष जनित व्याधि तथा आमरस जन्म शूल होता है ॥६२॥ (बृ० ४ ज०) सूक्ष्म गुरु में चन्द्र की प्राणदशा हो तो छत्र चामरयुक्त वैभव, पुत्र तथा सम्पत्ति, नेत्र और कुक्षि में विकार होता है ॥६३॥ (बृ० ४ म०) सूक्ष्म गुरु में भीम की प्राणदशा हो तो स्त्री द्वारा विध प्रयोग, बधन, स्नेहकरनिग्रह, देशान्तर यात्रा तथा भ्रान्ति होती है ॥६४॥ (बृ० ४ रा०) सूक्ष्म गुर्वन्तर में राहु की प्रा० द० हो तो जातक, रोगों से दुस्ती, चोरी से धन की हानि, सर्प बिच्छू से दशन होता है ॥६५॥

अथ शनिप्राणदशाफलमाह

(श० श०) ज्वरेण ज्वलिता कांतिः कुष्ठरोगोदरादिकम् ॥ जसाप्रिकृतमृत्युः स्यान्मंदप्राणदशाफलम् ॥६६॥ (श० बु०) धन धान्यं च मांगल्यं व्यवहारामिपूजनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनोः प्राणगते बुधे ॥६७॥ (श० के०) मृत्युवेदनकुक्षि च मृतोपद्रवसंभवः ॥ परदारामिमृतत्वं शनोः प्राणगते ध्वजे ॥६८॥ (श० गु०) पुत्रार्थविभक्तेः सौख्यं क्षितिमानादिना सुखम् ॥ अप्रिहोत्रं विवाहश्च शनोः प्राणगते मृगौ ॥६९॥ (श० सू०) अक्षिपीडा शिरोव्याधिः सर्परात्रुभवं भवेत् ॥ अर्षहानिर्महास्तेषाः शनोः प्राणगते रवौ ॥७०॥ (श० चं०) आरोग्यं पुत्रलाभश्च शांतिपीडिकबर्धनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनोः प्राणगते विद्यी ॥७१॥ (श० मं०) गुल्मरोगः शत्रुभौतिर्मृगया प्राणनाशनम् ॥ सर्पाप्रिशात्रुतो भौतिः शनोः प्राणगते कुजे ॥७२॥ (श० रा०) देशत्यागो मृषाभौतिर्मोहनं विषमक्षणम् ॥ चातपितृकृता पीडा शनोः प्राणगतेप्यहौ ॥७३॥ (श० बृ०) तेनापत्यं मृषितामं संगमं स्वजनैः सह ॥ गौरवं मृषसम्मानं शनोः प्राणगते गुरौ ॥७४॥

शनि प्राणदशा फल

(श० ४ श०) शनि अपनी प्राणदशा में ज्वर की तीव्रता कुष्ठ तथा जमीदर रोग एवं जम- रोगों से मृत्यु करता है ॥६६॥ (श० ४ बु०) सूक्ष्म शनि में बुध की प्रा० द० हो तो धन,

पूर्वसन्धे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

(बृ० चं०) छत्र चामरसंयुक्त वैभवं पुत्रसम्पदः ॥ नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः प्राणगते विधौ ॥६३॥ (बृ० मं०) स्त्रीजनारुच विधौत्वत्तिः बंधनं चातिनिग्रहः ॥ देशान्तरगमो भ्रान्ति गुरोः प्राणगते कुजे ॥६४॥ (बृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतश्च चौरैरपहृ धनम् ॥ सर्पवृश्चिक- वंशश्च गुरोः प्राणगते प्यहौ ॥६५॥

### सूक्ष्म गुर्वन्तर प्राणदशा फल

(बृ० ४ बृ०) गुरु की प्राणदशा में शोकनाश, धनवृद्धि, हवन, शिवपूजा तथा छत्रयुक्त सवारी होती है ॥५७॥ (बृ० ४ श०) गुरु में शनि की प्राणदशा हो तो व्रतहानि, धर्मलोप, विदेशगमन, धनहानि, बन्धुविरोध होता है ॥५८॥ (बृ० ४ बु०) सूक्ष्मगुरु में बुध की प्राणदशा हो तो विद्या में अनुराग लोक में यश, धन की प्राप्ति, स्त्री पुत्र से सुख होता है ॥५९॥ (बृ० ४ के०) सूक्ष्म गु० दशा में केतु की प्रा० द० हो तो ज्ञान प्राप्ति, ऐश्वर्य, शास्त्रज्ञान, शिवपूजा, अग्निहोत्र तथा गुरुभक्ति होती है ॥६०॥ (बृ० ४ शु०) सूक्ष्म गुरु में शुक्र की प्राणदशा हो तो रोग से मुक्ति, सुखभोग, धनधान्यवृद्धि, पुत्रस्त्री से सुख होता है ॥६१॥ (बृ० ४ सू०) सूक्ष्म गु० दशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो त्रिदोष जनित व्याधि तथा आमरस जन्य शूल होता है ॥६२॥ (बृ० ४ च०) सूक्ष्म गुरु में चन्द्र की प्राणदशा हो तो छत्र चामरयुक्त वैभव, पुत्र तथा सम्पत्ति, नेत्र और कुक्षि में विकार होता है ॥६३॥ (बृ० ४ म०) सूक्ष्म गुरु में मीम की प्राणदशा हो तो स्त्री द्वारा विष प्रयोग, बधन, स्नेहकरनिग्रह, देशान्तर यात्रा तथा भ्रान्ति होती है ॥६४॥ (बृ० ४ रा०) सूक्ष्म गुर्वन्तर में राहु की प्रा० द० हो तो जातक, रोगी से दुस्ती, चोरी से धन की हानि, सर्प बिच्छू से दशन होता है ॥६५॥

### अथ शनिप्राणदशाफलमाह

(श० श०) ज्वरेण ज्वलिता कांतिः कुष्ठरोगोदरद्विषम् ॥ जलाप्रकृतमृत्युः स्यान्मंत्रप्राणदशाफलम् ॥६६॥ (श० बु०) धनं धान्यं च मांगल्यं व्यवहारामिपूजनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनोः प्राणगते बुधे ॥६७॥ (श० के०) मृत्युवेदनदुःखं च मृतोपद्रवसंभवः ॥ परदारामिभूतत्वं शनोः प्राणगते ध्वजे ॥६८॥ (श० शु०) पुत्रार्थविभवः सौख्यं जितिमानादिना सुखम् ॥ अग्निहोत्र विवाहश्च शनोः प्राणगते मृगौ ॥६९॥ (श० सू०) अक्षिपीडा शिरोव्याधिः सर्पशत्रुभयं भवेत् ॥ अर्षहानिर्महाक्लेशः शनोः प्राणगते रवौ ॥७०॥ (श० चं०) आरोग्यं पुत्रत्वामश्च शांतिपौष्टिकवर्धनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनोः प्राणगते विधौ ॥७१॥ (श० मं०) गुल्मरोगः शत्रुभीतिर्मृगया प्राणनाशनम् ॥ सर्पाग्निशत्रुतो भीतिः शनोः प्राणगते कुजे ॥७२॥ (श० रा०) देशत्यागो नृपाङ्गीतिर्मोहनं विषमक्षणम् ॥ वातपित्तकृता पीडा शनोः प्राणगतेप्यहौ ॥७३॥ (श० बृ०) सैन्यापत्यं भूमिलामं सगमं स्वजनैः सह ॥ गौरवं नृपसन्मानं शनोः प्राणगते गुरौ ॥७४॥

### शनि प्राणदशा फल

(श० ४ श०) शनि अपनी प्राणदशा में ज्वर की तीव्रता कुष्ठ तथा जलोदर रोग एवं जल या अग्नि से मृत्यु करता है ॥६६॥ (श० ४ बु०) सूक्ष्म शनि में बुध की प्रा० द० हो तो धन,

धान्य तथा मंगल कार्य हो, व्यापार वृद्धि से यश और देव ब्राह्मण की पूजाभक्ति होती है॥६७॥ (श० ४ के०) सूक्ष्मशनि मे के० की प्रा० द० हो तो मृत्यु के समान कष्ट तथा भूतबाधा एवं परस्त्री मे आसक्ति होती है॥६८॥ (श० ४ शु०) सूक्ष्म शनि मे शुक का अन्तर हो तो धन पुत्रो से सुख, ऐश्वर्यवृद्धि भूमि तथा सम्मान प्राप्ति, अग्निहोत्र एव विवाह आदि मंगल कार्य होते है॥६९॥ (श० ४ सू०) सूक्ष्म शनिदशा मे सूर्य प्राणदशा हो तो नेत्र पीडा, सिर मे दर्द, सर्प तथा शत्रु से भय, घन हानि तथा क्लेश होता है॥७०॥ (श० ४ च०) सूक्ष्म श० मे चन्द्र की प्रा० द० हो तो आरोग्य, पुत्रलाभ, शान्ति तथा पुष्टि की वृद्धि, देव ब्राह्मण भक्ति होती है॥७१॥ (श० ४ म०) सूक्ष्म शनि मे भौम की प्राणदशा हो तो गुल्मरोग तथा शत्रु से भय, शिकार खेलने मे प्राणहानि अथवा सर्प, असि और शत्रुकृत पीडा होती है॥७२॥ (श० ४ रा०) सूक्ष्म श० दशा मे राहु की प्राणदशा हो तो देशत्याग, राजभय, मोह, विपक्षण, तथा वात पित्त जनित पीडा होती है॥७३॥ (श० ४ वृ०) सूक्ष्म श० दशा मे गुरु की प्रा० द० हो तो सेनापतित्त्व, भूमिलाभ, स्वजनो से मेल तथा राजमान्यता का गौरव होता है॥७४॥

### अथ बुधप्राणदशाफलमाह

(बु० बु०) आरोग्यं सुखसंपत्तिर्धर्मकर्मादिसाधनम् ॥ समत्वं सर्वभूतेषु बुधप्राणदशाफलम् ॥७५॥ (बु० के०) दहनं चौर विद्वान्ग परमाधिं वियोद्भवम् ॥ देहातकरणे दुःखं बुधप्राणगते ध्वजे ॥७६॥ (बु० शु०) प्रभुत्व धनसपत्तिः कीर्तिर्धर्मः शिवार्चनम् ॥ पुत्रदारादिक सौख्य बुधप्राणगते मृगौ ॥७७॥ (बु० सू०) अतर्दाहो ज्वरोन्मादौ बाधयान्तरति स्त्रिया ॥ पापनिस्तोषसपत्तिर्बुधप्राणगते रवौ ॥७८॥ (बु० च०) स्त्रीलाभश्चार्यसपत्तिः कन्यालाभो घनागमः ॥ लभते सर्वतः सौख्य बुधप्राणगते विधौ ॥७९॥ (बु० म०) पतितः कुक्षिरोगी च दतनेत्रादिजा व्यया ॥ अपासि प्राणसदेहो बुधप्राणगते कुजे ॥८०॥ (बु० रा०) वस्त्राभरणसपत्तिर्वियोगो विप्रवैरिता ॥ सन्निपातोद्भव दुःख बुधप्राणगतेप्यहौ ॥८१॥ (बु० गु०) गुरुत्व धनसपत्तिर्विद्या सद्गुणसग्रहः ॥ व्यवसायेन सत्त्वाभो बुधप्राणगते गुरौ ॥८२॥ (बु० श०) चौर्येण निघनप्राप्तिर्विघ्नतय दरिद्रता ॥ याचकत्वं विशेषेण बुधप्राणगते शनौ ॥८३॥

### बुध प्राणदशा फल

(बु० ४ बु०) बुध अपनी प्राणदशा मे आरोग्यता, सुख, सम्पत्ति, धर्मकार्य की सम्पन्नता तथा सबसे प्रेमभाव होता है॥७५॥ (बु० ४ के०) सूक्ष्म बु० मे केतु की प्रा० द० हो तो अग्नि से हानि चोरो से धाव, विप जनित पीडा, मृत्युसम दुःख होता है॥७६॥ (बु० ४ शु०) सूक्ष्म बुध मे शुक की प्रा० द० हो तो सम्मान, धन सम्पत्ति, यश, धर्मवृद्धि, शिवाराधन, स्त्री पुत्र से सुख होता है॥७७॥ (बु० ४ सू०) कलेजे मे जलन, ज्वर तथा उन्माद, बाधव तथा स्त्री मे प्रीति, पाप तथा चोरी मे सम्पत्ति की प्राप्ति होती है॥७८॥ (बु० ४ च०) सूक्ष्म बु० मे चन्द्र की प्राणदशा हो तो धन तथा स्त्री की प्राप्ति, कन्यालाभ, धनलाभ तथा सर्वप्रकार सुख होता है॥७९॥ (बु० ४ म०) सूक्ष्म बु० दशा मे मंगल की प्रा० द० हो तो समाज से पतित हो, कुक्षिरोगी, दात तथा नेत्र मे पीडा हो, बवासीर तथा प्राणघातक कष्ट हो॥८०॥ (बु० ४

॥९३॥ (शु० सू०) लोकप्रकाशकीर्तिश्च सुतसौख्यविवर्जितः ॥ उष्णादिरोगज दुःख  
शुक्रप्राणगते रवी ॥९४॥ (शु० चं०) देवार्चने कर्मरतिर्मत्रतोषणतत्परः ॥  
घनसौभाग्यसंपत्तिः शुक्रप्राणगते विद्यौ ॥९५॥ (शु० मं०) ज्वरो मसूरिकास्कोटकंडूत्रिपिड-  
कादिका ॥ देवब्राह्मणपूजा च शुक्रप्राणगते कुजे ॥९६॥ (शु० रा०) नित्य शत्रुकृता पीडा  
नेत्रकुक्षिरुजादयः ॥ विरोध सुहृदां पीडा शुक्रप्राणगतेप्यहौ ॥९७॥ (शु० बृ०)  
आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्रस्त्रीघनवैभवम् ॥ छत्रवाहनसंप्राप्तिः शुक्रप्राणगते गुरौ ॥९८॥ (शु०  
श०) राजोपद्रवजाभीतिः सुखहानिर्महाक्ष ॥ नीचैः सह विषादं च शुक्रप्राणगते शनी  
॥९९॥ (शु० बु०) सतोष राजसन्मान नानादिभूमिसपद ॥ नित्यमुत्साहवृद्धिं  
स्याच्छुक्रप्राणगते बुधे ॥१००॥ (शु० के०) जीवितात्मपशोहानिर्घनघान्पपरिच्छद ॥  
त्यागभोगधनानि स्युः शुक्रप्राणगते ध्वजे ॥१०१॥

१

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे सूर्यादिप्राणदशा फलकथन  
नामचतुश्चत्वारिंशोऽध्याय ॥४४॥

### शुक्र प्राणदशा फल

(शु० ४ शु०) अपनी प्राणदशा मे शुक्र ज्ञान और ईश्वर भक्ति, सन्तोष एव कर्म की  
सफलता तथा पुत्र पीत्र की समृद्धि कारक होता है ॥९३॥ (शु० ४ सू०) सूक्ष्म शु० की दशा  
मे सूर्य की प्राणदशा हो तो लोक मे प्रकाश, कीर्ति तथा पुत्रहीनता एव पित्तज व्याधि होती  
है ॥९४॥ (शु० ४ च०) सूक्ष्म शु० मे चन्द्र की प्राणदशा हो तो देवार्चन मे भक्ति तथा मित्रो  
मे प्रेम, घन और सौभाग्य सम्पत्ति की प्राप्ति होती है ॥९५॥ (शु० ४ म०) सू० शु० मे भीम  
की प्राणदशा हो तो ज्वर, शीतला, सुजली, फोडा-फुन्सी आदि होती है। देव ब्राह्मण पूजा भी  
होती है ॥९६॥ (शु० ४ रा०) सूक्ष्म शुक्र मे राहु की प्रा० द० हो तो नित्य शत्रुबाधा, नेत्र  
तथा कुक्षिरोग, मित्रो मे विरोध तथा पीडा होती है ॥९७॥ (शु० ४ बृ०) सूक्ष्म शुक्र मे गुरु  
की प्राणदशा हो तो आयु वृद्धि, आरोग्यता, ऐश्वर्य, स्त्री पुत्र आदि ऐश्वर्य, छत्र तथा वाहन की  
प्राप्ति होती है ॥९८॥ (शु० ४ श०) शुक्र की सूक्ष्म दशा मे शनि का प्रामान्तर हो तो राजा  
के उपद्रव से भय होता है। सुख की हानि तथा बीमारी एव नीच मनुष्यो से विवाद होता  
है ॥९९॥ (शु० ४ बु०) सूक्ष्म शुक्र मे बुध की प्राणदशा हो तो सन्तोष, राजसन्मान, नाना  
प्रकार की सम्पत्ति तथा नित्य उत्साह की वृद्धि होती है ॥१००॥ (शु० ४ के०) सूक्ष्म शुक्र मे  
केतु की प्रा० द० हो तो स्वास्थ्य तथा यश की हानि, घनादि वस्तु का नाश एव भोग्य पदार्थ  
अप्राप्त होते हैं ॥१०१॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया सूर्यादिप्राणदशा फलकथन  
नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्याय ॥४४॥

### अथ कालखण्डशाप्रकरणमाह

ववेङ्ग गोपिकानाथ भारती गणनायकम् ॥ पार्वत्ये कथितं पूर्वं कालखण्डं पिनाकिना ॥१॥

तत्त्वज्ञसारमुद्धृत्य लघुमार्गेण कथ्यते ॥ शुभाशुभ मनुष्याणां भूत भव्य च भावि तत् ॥२॥ जूतं  
५ कविंश २१ गिरयो ७ नव ९ द्विक् १० षोडश १६ व्यधः ४ ॥ सूर्यादीनां क्रमाद्वापूराशीनां  
स्वामिनो वशात् ॥३॥ नरस्य जन्मकाले वा प्रश्नकाले यदंशकः ॥ तदादि नवपर्यन्तमायुष  
परिचक्षते ॥४॥ अश्विन्यादितिहस्तार्जमूलप्रोष्ठपवामिधाः ॥ अंशकाद्गणयेन्मेघात्प्रादक्षिण्य-  
क्रमेण तु ॥५॥ प्राजापत्यमघेद्राप्रित्रवण च ययाक्रमम् ॥ अप्रदक्षिणाधिष्ण्यानि भवंत्येतानि पार्वति  
॥६॥ अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गे व्यवस्थितम् ॥ रोहिण्यादित्रयं चैव अपसव्ये व्यवस्थितम्  
॥७॥ एषमूखं चतुर्भागं कृत्वा चक्रे समुदरेत् ॥ अंशावसाने जातस्य आपूर्णयोऽस्य कस्यचित् ॥८॥  
सपूर्यासुभिर्वैवादावधमाशास्य मध्यमम् ॥ अपमृत्युसमं कष्टमशाते चापरे जगुः ॥९॥ शास्वैव  
स्फुटसिद्धांतौ राशमंश गणयेद्बुधः ॥ अनुपातेन बक्ष्यामि तदुपायमतः परम् ॥१०॥

### कालचक्र दशा प्रकरण

प्रथम गणेश तथा शारदा एव भगवान् श्रीकृष्ण की बन्दना करते हैं। भगवान् शंकर ने जो  
श्रीपार्वतीजी को कहा था, उस 'बालचक्रदशा' ॥१॥ का साराश लेकर सक्षिप्त रीति से  
मनुष्यो का भूत, वर्तमान तथा भविष्य शुभ और अशुभ का ज्ञापक यह 'कालचक्र'  
(समयचक्र) कहा जाता है ॥२॥ सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ५, २, १, ७, ९, १०, १६, ४ ये दशा वर्ष  
हैं। १२ राशियों की दशा में ये वर्ष अपने अपने स्वामी ग्रह के वर्ष जानना ॥३॥ मनुष्य के  
जन्मकाल या प्रश्नकाल में जो अश (नवाश) हो उससे आरम्भ करके नौवें अश तक ही  
परमायु जानना ॥४॥ अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, मूल, पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों में प्रथमादि पाद  
में मेघादि क्रम से (सव्यः-सीधे क्रम से) प्रति अश आगे कही जानेवाली रीति से गणना  
करे ॥५॥ तथा रोहिणी, मघा, विशाखा, श्रवण में अपसव्य (उलटे मार्ग के) मार्ग के नक्षत्र  
हैं ॥६॥ (और स्पष्ट कहते हैं) अश्विनी आदि तीन नक्षत्र (अश्विनी, भरणी, कृत्तिका)  
सव्यमार्ग के नक्षत्र हैं। और रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा ये अपसव्य मार्ग के नक्षत्र हैं ॥७॥ इस  
उक्त प्रकार के नक्षत्रों के चार भाग करके स्पष्ट समझने के लिए चक्र में लिखे नौवें नवाश की  
दशा में या अश के शेष में जन्म लेने वाले बालकों में कोई ही जीवन लाभ कर सकता है ॥८॥  
अश के आदि में जन्मने वाले की आयु पूर्ण और मध्य भाग में मध्य और अंत में जन्मने वाले  
की आयु अल्प होती है। या अपमृत्यु के समान कष्ट होता है ॥९॥ इस प्रकार प्रथम जानकर  
निश्चित स्पष्ट आयु जानने के लिए अनुपात (गणित) का उपाय कहते हैं ॥१०॥

गततारा त्रिभिर्मत्तार शेष चत्वारिसगुणम् ॥ वर्तमान-पदेनादृश राशीनामशको भवेत् ॥११॥  
ये च जीवांशके जाता गतनाद्विनांशकाः ॥ स्वस्वदशाब्दगुणिताः पंचमूनि १५ विभाजिताः  
॥१२॥ एवं अहादशा ज्ञेयाः सूर्यादीनां यथाक्रमम् ॥ गणयेन्जीवपर्यन्तमायुष्य परिचितयेत्  
॥१३॥

गत नक्षत्र सख्या में तीन (३) का भाग दे, शेष सख्या को ४ से गुणा करे। वर्तमान नक्षत्र  
की चरण सख्या का योग करे तो राशि का 'नवाश' होता है ॥११॥ जिनका जन्म जीवाश में  
है उनकी अशरहित केवल पटिकासख्या को ग्रह के अपने अपने वर्ष सख्या से गुणा करके १५

का भाग देकर ॥१२॥ जो लब्ध वर्षादि अत्र प्राप्त हो वह सूर्यादि ग्रहों की महादशा जीवपर्यन्त जानना चाहिए ॥१३॥

### सव्ये मेघादिरपसव्ये वृश्चिकादिरंशो जातव्यः

ये जीवा अशके जाता गतनाडीपलेन तु ॥ तदशोनहताब्दस्तु पचभूमिविभाजिता ॥१४॥ एव महादशारभो भवेदशाद्यथाक्रमात् ॥ गणपेन्नवपर्यतमायुष्य तत्प्रकीर्तितम् ॥१५॥ सूर्यादीना क्रमावेतद्दशा सर्वदशामु च ॥१६॥ मेघयोग्यमकुलीरराशिषु स्वाशकेषु परमापुरुष्यते ॥ जानक १०० मद्र ८५ गज ८३ स्तद ८६ क्रमात्तत्रिकोणभयनेषु तद्रूवेत् ॥१७॥ द्वादशार तिलेज्वक तिर्यगूर्ध्वसमानकम् ॥ गृहा द्वादश जायते सव्यचक्रे यथाक्रमम् ॥१८॥ द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेघादिकांल्लिखेत् ॥ एव द्वादशाराख्यालयकालचक्रमुदीरितम् ॥१९॥ विश्वर्षपूर्वाभाद्र च रेवती सव्यतारक ॥ एतद्दशोद्दुपादीनामश्विन्यादी च वीक्षयेत् ॥ विशदस्तत्प्रकारस्तु कथ्यते शृणु पार्षति ॥२०॥ देहजीवी मेघक्षायौ दत्ताद्यचरणस्य च ॥ मेघादिचापपर्यंत राशिषुश्च दशाधिपा ॥२१॥ देहजीवी मरुद्युग्मी दिगीशाकर्ण्टभूधरा ॥ षड्वेदशरलोकाश्च राशिषुश्च दशाधिपा ॥२२॥ दद्यादिदशताराणा तृतीयचरणेषु च ॥ गौर्देहो मियुन जीवो द्विकार्कशदशाशका ॥२३॥ अक्षिरामाख्यनायास्ते दशाधिपतय क्रमात् ॥ अश्विन्यादि-दशोद्दूना चतुर्थचरणेषु च ॥२४॥

जिनका जन्म जीवाश मे है। उनके अश की गत नाडी पर दशावर्ष से गुणा करके १५ से भाग देने पर भुक्त महादशा प्राप्त होगी। इसी प्रकार तत् अश से जानना और नौवे अश तक आयु जानना ॥१४॥ १५॥ सर्व राशियों की दशा में स्वामी सूर्यादि ग्रहों के कहे हुए वर्षों के अनुसार ॥१६॥ मेघ, वृष, मियुन वर्ष इन राशियों के अश की परमायु क्रमशः १००, ८५, ८३, ८६ जानना और इनसे त्रिकोण स्थान में (राशि में) भी यही मख्या जानना ॥१७॥ (यहां पर जानक, मद्र, गज तद य मख्यामूचक शब्दकल्प है। इनमें मख्या इस प्रकार ग्रहण की जाती है। 'ब ट प या दि अकाग्राह्या तथा 'अवाना वागतो गति' अर्थात् ब, ट, प, य से गिनकर अत्र लेना और उत्तरोत्तर बाये अर्थात् इबाई, दहाई, सैबडा, ब्रम से रखना। और अ, ड, न श की शून्य मख्या लेना यथा जानक -अ-० न-० क-१ दामतो गति १०० इति प्रकार म मे ५, द से ८ = ८५ आगे भी इसी प्रकार समझे) १२ घर का घर बनाना जो चारों तरफ से समान हो, यह चक्र मध्यमार्ग का होता है ॥१८॥ दूसरे कोष्ठक में मेघ आदि १२ राशिया लिखे। इस प्रकार यह १२ राशियों का 'कालचक्र' तैयार होता है ॥१९॥ उत्तराषाढा पूर्वभाद्रपद, रेवती ये मध्यमार्ग के नक्षत्र हैं। इनकी दशा के नक्षत्रों की दशा की गणना अश्विनी में देगना ॥२०॥ मेघ और धनु राशि देह और जीव राशि है, इनकी दशा अश्विनी के प्रथम चरण में आरभ होती है। और मेघ में धन राशि तक के स्वामी ग्रह ही दशा के स्वामी होते हैं ॥२१॥ (अश्विनी के द्वितीय चरण में) देह और जीव क्रमशः मयन और मियुन हैं और १०, ११, १२, ८, ७, ६, ५, ४, ३ ये दशा राशि और राशियोंके स्वामीग्रह ही दशापति होते हैं ॥२२॥ अश्विनी आदि दस नक्षत्रों के तृतीय चरण में वृष राशि देह और

उत्तराभाद्रपद, अनुराधा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, शतभिषा इन ८ नक्षत्रों के देह जीव और दशाराशि मृगशिर के समान जानना ॥३७॥

देहजीवो कर्किमीनौ मृगाद्यचरणस्य च ॥ व्यस्तमीनाविषकर्कान्तं राशिपाश्र्व दशाधिपाः ॥३८॥  
गौर्देही मियुनं जीव इन्दुमस्य द्वितीयके ॥ त्रिद्व्यर्काफदिगीशार्कचन्द्रर्क्षभवनाधिपाः ॥३९॥  
देहजीवो नक्रपुग्मौ मृगपादे तृतीयके । त्रिवाणाब्धिरसांगाष्टसूर्येशदशराशिपाः ॥४०॥ मेघचापी  
देहजीवाविन्दुभस्य चतुर्थके ॥ व्यस्तं चापादि मेघांतं राशिपाश्र्व दशाधिपाः ॥४१॥ एवं  
व्यस्ततरे त्रेयं देहजीवदशादिकम् ॥ स्पष्टं तवाप्रे कथितं पार्वति प्राणवल्लभे ॥४२॥

मृगशिर के प्रथम चरण के देह-कर्क। जीव मीन मीन से उलटी कर्क तक विपरीत क्रम की राशि दशाधिप है ॥३८॥ मृगशिर नक्षत्र के द्वितीय पाद में देह-वृष। जीव-मियुन। दशाराशि ३।२।१।९।१०।११।१२।१३।१४।१५।१६।१७।१८।१९।२०।२१।२२।२३।२४।२५।२६।२७।२८।२९।३० तथा इनके स्वामी ग्रह राशिपति=दशापति है ॥४०॥ मृगशिर के चौथे चरण में देह-मेघ। जीव-धनु। धनु राशि में मेघ तक विपरीत क्रम से गणना करना चाहिए। राशियों के स्वामी ही दशास्वामी होते हैं ॥४१॥ हे प्राणेश्वरि पार्वति! हमने यह अपसव्यमार्ग के देह, जीव, दशाधिप तुम्हारे सामने स्पष्ट रूप से कहे हैं ॥४२॥

### कालचक्र दशा का उदाहरण

स्पष्ट चन्द्रमा १०।२६।३०।३३ इन राश्यादि की घटी की, तो १९५९०।३३ हुआ, ८०० का भाग दिया तो लब्ध २४ (गत नक्षत्र शतभिषा) यह व्यर्थ है। शेष सख्या ३९० हुई, अतः पूर्वाभाद्रपद का गतकालमान है। इसको ६० से गुणा किया तो २३४०० हुआ, इसमें ८०० का भाग दिया तो २९।१५ यह स्पष्ट 'भयात काल' हुआ। यह १५ घटी से अधिक है अतः १५ का भाग दिया तो शेष १४।१५ रहा, "विश्वर्ष पूर्वाभाद्र च रेवती सव्यतरकः ॥" इत्यादि नियमानुसार सव्यमार्ग में पूर्वाभाद्रपद के द्वितीय चरण में जन्म होने से देहाधिप-शनि तथा जीवाधिप-बुध हुआ, एव वृष नवाश में ८५ वर्ष की 'परमदशा' प्राप्त हुई। अब दशकाल स्पष्ट करने के लिए पूर्वाभाद्रपद के द्वितीय पाद की भुक्त घटी १४।१५ को एकरस किया तो ८५५ हुआ, अब दशा वर्ष ८५ से गुणा किया तो ७२६७५ हुए। इसमें ९०० का भाग दिया तो लब्ध भुक्त वर्षादि ८०।१०।१५ हुआ, इसको ८५ में बराबर किया तो ४।१।१५ वर्षादि बुध के भोग्य वर्षादि हुए। अतः कामचक्रो दशा में जन्म समय में जीवाधिप बुध की यह अन्तिमभोग्य दशा प्राप्त हुई।



अथ काव्यकालसव्यमार्गवशाप्रकरणापञ्चमम्

वशाती मलजनामलि तस्या नसप्तपदादि	वेदा- विधि-	अथ सव्यकालसव्यमार्गवशाप्रकरणापञ्चमम्	कीर्त्तयि मसि	श्रवण	परमार्पूर्वपणि
अ १५ १५ १५ ७ क १५ २५ १६ १३ ३	भो	भो १ २ २ मा ३ सो ४ मा ५ सा ६ म ७ हो ८ वि ९ म ७ म १५ १५ १५ २१ २५ ३५ ४५ ५५ ६५ ७५ ८५ ९५	गुरु	भेषाश	वशा १०० कर्षणि
अ १५ २ ५ १५ २ ५ ७ क २५ २५ २५ २६ १३ ३	श	न १० म ११ म १२ सा १३ सि १४ ख १५ व १६ य १७ मा १८ म १९ म २० म २१ म २२ म २३ म २४ म २५ म २६ म २७ म २८ म २९ म ३०	गुरु	गृध्राश	वशा ८५ कर्षणि
अ १५ ३ ५ १५ ३ ५ ७ क ३ ५ २५ ३ ५ १३ ३	सु	रु २ मा ३ म ४ म ५ म ६ म ७ म ८ मा ९ म १० म ११ म १२ म १३ म १४ म १५ म १६ म १७ म १८ म १९ म २० म २१ म २२ म २३ म २४ म २५ म २६ म २७ म २८ म २९ म ३०	गुरु	सिन्धुनाश	वशा ८३ कर्षणि
अ १५ ४ ५ १५ ४ ५ ७ क ४ ५ २५ ४ ५ १३ ३	वश	वा ३ सि ४ ख ५ ख ६ ख ७ ख ८ सि ९ न १० ला ११ म १२ म १३ म १४ म १५ म १६ म १७ म १८ म १९ म २० म २१ म २२ म २३ म २४ म २५ म २६ म २७ म २८ म २९ म ३०	गुरु	कर्मनाश	वशा ८६ कर्षणि
अ २५ १ वि १४ ५ १५ ८ क १५ २० ५ १३ २५ १	भीम	हे ८ म ९ म १० म ११ म १२ म १३ म १४ म १५ म १६ म १७ म १८ म १९ म २० म २१ म २२ म २३ म २४ म २५ म २६ म २७ म २८ म २९ म ३०	गुरु	सिंहिनाश	वशा १०० कर्षणि
अ २५ ३ ५ २० ५ २ ५ ८ क २५ १५ २५ २५ २५ २	शनि	शु ११ मा १० सि ९ क १ २ २ मी ३ मी ४ मा ५ च ६ म ७ म ८ म ९ म १० म ११ म १२ म १३ म १४ म १५ म १६ म १७ म १८ म १९ म २० म २१ म २२ म २३ म २४ म २५ म २६ म २७ म २८ म २९ म ३०	गुरु	कन्याश	वशा ८५ कर्षणि
अ २५ ३ ५ २० ५ २ ५ ८ क ३५ २५ २५ २५ २५ ३	शुक	शु ७ द ८ सि ९ म १० सा ११ ख १२ ज १३ सि १४ ख १५ म १६ म १७ म १८ म १९ म २० म २१ म २२ म २३ म २४ म २५ म २६ म २७ म २८ म २९ म ३०	गुरु	गुल्फाश	वशा ८३ कर्षणि







अथ कालचक्रमीमांसाशावर्षाणि १०० तन्मध्ये पुरोत्तर्वर्षाणि १० तस्योपदेशावक्रम्

श्रुवाक	शु० १	म० १	शु० २	शु० ३	च० ४	सू० ५	शु० ६	शु० ७	म० ८	योग
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रवृषभाशदावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदेशावक्रम्

श्रुवाक	श० १०	श ११	शु० १२	म० ८	शु० ७	शु० ६	च० ४	सू० ५	शु० ३	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	१	५	११	२	५	०
५६	५	५	१९	२८	१	२	२५	२४	२	०
२८	४३	४५	१४	३५	३	२८	४५	४२	४८	०
१४	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	०

अथ कालचक्रवृषभाशदावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदेशावक्रम्

श्रुवाक	श० ११	शु० १२	म० ८	शु० ७	शु० ६	च० ४	सू० ५	शु० ३	श० १०	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	१	५	११	२	५	०	०
२८	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	७	०
५६	४५	५४	३५	३	१८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रवृषभाशदावर्षाणि ८५ तन्मध्ये पुरोत्तर्वर्षाणि १० तस्योपदेशावक्रम्

श्रुवाक	शु० १२	म० ८	शु० ७	शु० ६	च० ४	सू० ५	शु० ३	श० १०	श० ११	योग
१	१	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	९	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९	०
१०	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	०६	०६	०
३५	४६	१४	४९	३५	४२	५३	३५	४३	४३	०

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भीमातर्वशावर्षाणि ७ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्राक	म०८	शु०७	शु०६	श०४	शु०५	शु०३	श १०	श०११	शु०१२	योगा
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
२९	६	३	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	३१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	२८	०
२४	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगशिरसर्वर्षाणि १६ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्राक	शु०७	शु०६	श०४	शु०५	शु०३	श०१०	श ११	शु १२	म०८	योगा
३	३	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	३	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधशतर्वर्षाणि ९ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्राक	शु०६	श०४	शु०५	शु०३	श १०	श ११	शु०१२	म०८	शु०७	योगा
१	०	२	०	०	०	०	१	०	१	९
८	११	२	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
३	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	३२	१४	१४	३५	२५	५६	०

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शत्रुशतर्वर्षाणि २१ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्राक	श०४	शु०५	शु०३	श १०	श ११	शु०१२	म०८	शु०७	शु०६	योगा
१	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	०	१३	११	५	८	११	०	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	१९	०२	१३	००	०
२८	४५	४२	२८	४०	४५	३४	३५	३	२८	०
११	५३	०१	१४	०३	५३	६३	१७	३०	१४	०

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	२०५	शु०३	श १०	श ११	शु०१२	म०८	शु०७	शु०६	च०४	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२	०
१७	५६	१८	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	शु०३	श १०	श ११	शु०१२	म०८	शु०७	शु०६	च०४	शु०५	योग
१	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	२	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
३१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शुक्रीतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	शु०२	म०१	शु०१२	श ११	श १०	शु०९	म०१	शु०२	शु०३	योग
२	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शीघ्रातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	म०१	शु०१२	श ११	श १०	शु०९	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	योग
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
२१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४१	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अथ कालवक्रमिदुनागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरेतदशवर्षाणि १० तस्योपरदशावक्रम्										
शुक्रांक	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	बृ०३	शु०२	म०१	योगा
१	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
११	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०
अथ कालवक्रमिदुनागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शम्भतर्षवर्षाणि ४ तस्योपरदशावक्रम्										
शुक्रांक	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	बृ०३	शु०२	म०१	बृ०१२	योगा
४	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	२५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०
अथ कालवक्रमिदुनागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शम्भतर्षवर्षाणि ४ तस्योपरदशावक्रम्										
शुक्रांक	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	बृ०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श ११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	२५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०
अथ कालवक्रमिदुनागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरेतदशवर्षाणि १० तस्योपरदशावक्रम्										
शुक्रांक	बृ०९	म०१	शु०२	बृ०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श ११	श १०	योगा
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
११	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	२९	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०



अथ कालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शौभातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
शुक्राक	म०१	शु०२	शु०३	शु०४	म०१	शु०१२	श०११	श०१०	शु०९	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	७६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०
अथ कालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगोस्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
शुक्राक	शु०२	शु०३	शु०४	म०१	शु०१२	श०११	श०१०	शु०९	म०१	योगा
२	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०
अथ कालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुध्रातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
शुक्राक	शु०३	शु०२	म०१	शु०१२	श०११	श०१०	शु०९	म०१	शु०२	योगा
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	९१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०
अथ कालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चद्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
शुक्राक	च०४	शु०५	शु०६	शु०७	म०८	शु०९	श०१०	श०११	शु०१२	योगा
२	५	१	२	३	१	२	०	०	२	२१
२७	१	२	२	१०	८	५	११	११	५	०
२५	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९	०
५४	२	३२	९	३	२०	४	३७	३७	४	०
७	४७	५	४६	४२	५६	११	४१	४१	११	०

अथ कालचक्रकर्काशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातिर्वर्षाणि ५ तस्योपदशावर्षम्

श्रुवाक	सू०५	सू०६	सू०७	स०८	सू०९	स०१०	स०११	सू०१२	स०४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	२	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	३९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	१८	३९	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रकर्काशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातिर्वर्षाणि ९ तस्योपदशावर्षम्

श्रुवाक	सू०६	सू०७	स०८	सू०९	स०१०	स०११	सू०१२	स०४	सू०५	योगा
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
२७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२४	१५	४०	५१	५१	४०	४६	३०	०

अथ कालचक्रकर्काशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये श्रुगोरत्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशावर्षम्

श्रुवाक	सू०७	स०८	सू०९	स०१०	स०११	सू०१२	स०४	सू०५	सू०६	योगा
२	२	१	१	०	१	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६	०

अथ कालचक्रकर्काशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमातिर्वर्षाणि ७ तस्योपदशावर्षम्

श्रुवाक	स०८	सू०९	स०१०	स०११	सू०१२	स०४	सू०५	सू०६	सू०७	योगा
०	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	६	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८	०
८	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४३	५०	०
३२	५९	३४	३३	३३	३४	५६	४३	१६	३९	०

अथ कालचक्रकर्तृशाखावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरत्तर्वर्षाणि १० तस्योपदेशावकम्

श्रुवाक	वृ०९	श०१०	श०११	वृ०१२	च०४	सू०५	सु०६	शु०७	म०८	योगा
१	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५१	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	३६	३६	३६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०

अथ कालचक्रकर्तृशाखावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शम्भुतर्वर्षाणि ४ तस्योपदेशावकम्

श्रुवाक	श०१०	श०११	वृ०१२	च०४	सू०५	सु०६	शु०७	म०८	वृ०९	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	११	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	३१	१५	५१	२६	३३	३०	०

अथ कालचक्रकर्तृशाखावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शम्भुतर्वर्षाणि ४ तस्योपदेशावकम्

श्रुवाक	श०११	वृ०१२	च०४	सू०५	सु०६	शु०७	म०८	वृ०९	श०१०	योगा
०	१	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	३७	०

अथ कालचक्रकर्तृशाखावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरत्तर्वर्षाणि १० तस्योपदेशावकम्

श्रुवाक	वृ०१२	च०४	सू०५	सु०६	शु०७	म०८	वृ०९	श०१०	श०११	योगा
१	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५१	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	१८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०





अथ कालचक्रसिंहाशदावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदेशावङ्गम्

शुक्रात्	गु०१२	म०८	गु०७	बु०६	च०४	गु०५	बु०६	गु०२	म०१	योगा
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रकन्याशदावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदेशावङ्गम्

शुक्रात्	म०४	म०१०	गु०९	म०१	गु०२	बु०३	च०४	गु०५	बु०६	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
०	२	२	५	३	९	५	११	२	५	०
५६	७	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	०
२८	४५	४५	१४	३५	३	२८	४५	४२	२८	०
१४	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	०

अथ कालचक्रकन्याशदावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदेशावङ्गम्

शुक्रात्	म०१०	गु०९	म०१	गु०२	बु०३	च०४	गु०५	बु०६	म०११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
०	२	५	३	९	५	११	२	५	२	०
५६	७	१९	२८	१	२	२५	४४	२	७	०
२८	४५	५४	३५	३	२८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रकन्याशदावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदेशावङ्गम्

शुक्रात्	बु०९	म०१	गु०२	बु०३	च०४	गु०५	बु०६	म०१०	म०१०	योगा
१	०	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	१	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१५	१	२३	१९	१९	०
१०	११	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४	०
३५	४६	१४	४९	३५	४२	४३	३५	४३	४३	०

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भीमातर्षर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	म०१	शु०२	शु०३	च०४	सू०५	शु०६	म०११	म०१०	शु०९	योगा
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
२९	६	६	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	२१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	१८	०
२४	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भ्रुगोरतर्षर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	म०२	शु०३	च०४	सू०५	शु०६	म०११	म०१०	शु०९	म०१	योगा
२	३	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	३	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधातर्षर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	शु०३	च०४	सू०५	शु०६	म०११	म०१०	शु०९	म०१	शु०२	योगा
१	०	२	०	०	०	०	१	०	१	१
८	११	२	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
६	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	२२	१४	१४	३५	२५	५६	०

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चट्टातर्षर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	च०४	सू०५	शु०६	म०११	म०१०	शु०९	म०१	शु०२	शु०२	योगा
३	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	२	११	११	५	८	११	२	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	११	२२	१३	२०	०
२८	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	०
१४	५३	२१	१४	४३	४३	४३	१७	३२	१४	०

अथ कालचक्रकन्यासादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्राक	सु०५	सु०६	श०११	श०१०	सु०९	म०१	श०२	सु०३	स०४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२	०
१७	५६	१७	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रकन्यासादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्राक	सु०६	श०११	श०१०	सु०९	म०१	सु०२	सु०३	स०४	सु०५	योगा
१	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
२१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रकुलासादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगशिरसर्वर्षाणि १६ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्राक	सु०७	म०८	सु०९	श०१०	श०११	सु०१२	म०८	सु०७	सु०६	योगा
२	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	१	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रकुलासादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मीनातर्वर्षाणि ७ तस्योपदेशाचक्रम् सु०५

शुक्राक	म०८	सु०९	श०१०	श०११	सु०१२	म०८	सु०७	सु०६	सु०७	योगा
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	१	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१३	४८	५३	४०	४०	५३	४८	०	१०	०	०



अथ कालचक्रनुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरेतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावर्षम्

ध्रुवांक	वृ०१	श १०	श ११	वृ०१२	म०८	शु०७	वृ०६	शु०७	म०८	योगा
०	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अथ कालचक्रनुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावर्षम्

ध्रुवांक	श १०	श ११	वृ०१२	म०८	शु०७	वृ०६	शु०७	म०८	वृ०९	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अथ कालचक्रनुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावर्षम्

ध्रुवांक	श ११	वृ०१२	म०८	शु०७	वृ०६	शु०७	म०८	वृ०९	श १०	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	८	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अथ कालचक्रनुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरेतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावर्षम्

ध्रुवांक	वृ०१२	म०८	शु०७	वृ०६	शु०७	म०८	वृ०९	श १०	श ११	योगा
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	१	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	सू० ५	सु० ३	सु० २	म० १	सु० २	स० ११	स० १०	सु० ९	स० ४	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	२	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	६	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	३९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	१८	३२	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधरातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	सु० ३	सु० २	म० १	सु० २	स० ११	स० १०	सु० ९	स० ४	सू० ५	योग
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
२७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२६	१५	४०	५१	५१	४०	४६	२०	०

अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये मृगशिरातर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	सु० २	म० १	सु० १२	स० ११	स० १०	सु० ९	स० ४	सू० ५	सु० ३	योग
३	२	१	१	०	०	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६	०

अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये मीमातातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	म० १	सु० १२	स० ११	स० १०	सु० ९	स० ४	सू० ५	सु० ३	सु० २	योग
३	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	६	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२५	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८	०
८	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४२	५०	०
२२	५१	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१५	१४	०

अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावक्रम्										
शुक्राक	शु०१२	श०११	श०१०	शु० ९	श० ४	शु० ५	शु० ३	शु० २	श० १	योगा
१	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५९	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	२६	२६	३६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०
अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपशावक्रम्										
शुक्राक	श०११	श०१०	शु० ९	श० ४	शु० ५	शु० ३	शु० २	श० १	शु० १२	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	११	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	०
अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावक्रम्										
शुक्राक	श०१०	शु० ९	श० ४	शु० ५	शु० ३	शु० २	श० १	शु०१२	श०११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	२३	३०	३७	०
अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावक्रम्										
शुक्राक	शु० ९	श० ४	शु० ५	शु० ३	शु० २	श० १	शु०१२	श०११	श०१०	योगा
१	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५९	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	२८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०



अथ कालचक्रधनोदाहरावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोत्तर्वर्षाणि १० तस्योपवशाचक्रम्

श्रुवांक	गु० १	म० १	गु० २	बु० ३	ब० ४	गु० ५	बु० ६	गु० ७	म० ८	योग
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमकरादाहरावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपवशाचक्रम्

श्रुवांक	म० १०	म० ११	गु० १२	म० ८	गु० ७	बु० ६	ब० ४	गु० ५	बु० ३	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	९	५	११	२	५	०
५६	७	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	०
२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	४५	४२	२८	०
२४	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	२४	०

अथ कालचक्रमकरादाहरावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपवशाचक्रम्

श्रुवांक	म० ११	गु० १२	म० ८	गु० ७	बु० ६	ब० ४	गु० ५	बु० ३	म० १०	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	९	५	११	२	५	२	०
५८	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	७	०
२८	४५	२४	३५	३	२८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रमकरादाहरावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोत्तर्वर्षाणि १० तस्योपवशाचक्रम्

श्रुवांक	बु० १२	म० ८	गु० ७	बु० ६	ब० ४	गु० ५	बु० ३	म० १०	म० ११	योग
०	१	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	९	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९	०
१०	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४	०
३५	४६	१४	४९	३५	४२	५३	३५	४३	४३	०

अथ कालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगोदत्तवर्षाणि १६ तस्योपदेशा चक्रम्

शुक्राक	शु० ७	म० ८	बु० ६	च० ४	मू० ५	बु० ३	श० १०	श० ११	बु० १२	योग
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	१०
२९	६	३	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	२१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	१८	०
२४	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगोदत्तवर्षाणि १६ तस्योपदेशा चक्रम्

शुक्राक	शु० ७	बु० ६	च० ४	मू० ५	बु० ३	श० १०	श० ११	बु० १२	योग	
०	६	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	३	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधोदत्तवर्षाणि ९ तस्योपदेशा चक्रम्

शुक्राक	बु० ६	च० ४	मू० ५	बु० ३	श० १०	श० ११	बु० १२	म० ८	शु० ७	योग
०	०	२	०	०	०	०	१	०	१	९
८	११	२	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
३	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	३२	१४	१४	३५	२५	५६	०

अथ कालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बृहशतवर्षाणि २१ तस्योपदेशा चक्रम्

शुक्राक	च० ४	मू० ५	बु० ३	श० १०	श० ११	बु० १२	म० ८	शु० ७	बु० ६	योग
०	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	२	११	११	५	८	११	२	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	१९	२२	१३	२०	०
२८	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	०
१४	५३	३१	१४	५३	५३	४६	१७	३२	१४	०

अथ कालचक्रमकरासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदेशा चक्रम्

ध्रुवाक	सू० ५	सू० ३	श० १०	श० ११	सू० १२	म० ८	सू० ७	सू० ६	स० ४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४२	३५	४२	०
१७	५६	१८	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रमकरासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदेशा चक्रम्

ध्रुवाक	सू० ३	श० १०	श० ११	सू० १२	म० ८	सू० ७	सू० ६	स० ४	सू० ५	योगा
०	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
३१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रकुमासदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शुभेरातर्वर्षाणि १६ तस्योपदेशाचक्रम्

ध्रुवाक	सू० २	म० १	सू० २	श० ११	श० १०	सू० ९	म० १	सू० २	सू० ३	योगा
०	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
२	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
९	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
२३	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
५१	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रकुमासदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदेशा चक्रम्

ध्रुवाक	म० १	सू० २	श० ११	श० १०	सू० ९	म० १	सू० २	सू० ३	सू० २	योगा
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	५	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अथ कालचक्रकुम्भाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये श्रीमातर्दशावर्षाणि ७ तस्योपदशावर्षम्

श्रुवाक	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	शु०१२	श ११	श १०	बृ०९	योगा
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१६	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अथ कालचक्रकुम्भाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरत्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशावर्षम्

श्रुवाक	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	शु०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०१	योगा
०	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
१	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अथ कालचक्रकुम्भाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधार्त्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशावर्षम्

श्रुवाक	बु०३	शु०२	म०१	शु०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	योगा
०	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अथ कालचक्रकुम्भाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये चट्टार्त्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशावर्षम्

श्रुवाक	म०४	शु०५	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	श १०	श ११	शु०१२	योगा
०	५	१	२	३	१	२	०	०	०	२१
२	१	२	२	१०	८	५	११	११	५	०
२७	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९	०
५४	२	३२	९	३०	२०	४	३७	३७	४	०
२७	४७	५	४७	४२	५६	११	४१	४१	११	०



अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यात्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	सू०५	सू०६	सू०७	स०८	सू०९	श १०	श ११	सू०१२	स०४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	२	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	१०	२२	५३	३०	१८	४३	४३	८	३२	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधत्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	सू०६	सू०७	स०८	सू०९	श १०	श ११	सू०१२	स०४	सू०५	योगा
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
२७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२६	१५	४०	५१	५१	४०	४६	२०	०

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये मृगोत्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदेशा चक्रम्

शुक्रांक	सू०७	स०८	सू०९	श १०	श ११	सू०१२	स०४	सू०५	सू०६	योगा
३	२	१	०	०	०	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६	०

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शौमात्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदेशा चक्रम्

शुक्रांक	स०८	सू०९	श १०	श ११	सू०१२	स०४	सू०५	सू०६	सू०७	योगा
०	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	६	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२५	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८	०
८	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४३	५०	०
२२	५९	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१५	१४	०

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरेतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावक्रम्

शुक्रांक	शु०९	श १०	श ११	शु०१२	च०४	सु०५	शु०६	शु०७	म०८	योगा
१	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५१	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	२६	२६	२६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्रांक	श १०	श ११	शु०१२	च०४	सु०५	शु०६	शु०७	म०८	शु०९	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	१	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	१३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	०

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्रांक	श ११	शु०१२	च०४	सु०५	शु०६	शु०७	म०८	शु०९	श १०	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	५६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	२३	३०	३७	०

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरेतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावक्रम्

शुक्रांक	शु०१२	च०४	सु०५	शु०६	शु०७	म०८	शु०९	श १०	श ११	योगा
१	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५१	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	१८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०

अपसव्यकालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	म०१	शु०२	बु०३	सू०५	च०४	शु०९	श०१०	श०११	शु०१२	योगः
०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२९	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	६	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५९	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	शु०२	बु०३	सू०५	च०४	शु०९	श०१०	श०११	शु०१२	म०१	योगः
२	२	१	०	३	१	२	२	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	शु०३	सू०५	च०४	शु०९	श०१०	श०११	शु०१२	म०१	शु०२	योगः
१	०	०	२	१	०	०	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	८	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	१०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	४७	०
५४	११	२०	४६	४०	५२	५२	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	सू०५	च०४	शु०९	श०१०	श०११	शु०१२	म०१	शु०२	बु०३	योगः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	११	६	०
५५	१४	१९	२९	२३	२३	२९	२६	४	८	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	५	९	१५	१५	९	४२	९	२०	०

अपसव्यकालचक्रमुन्निकाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चद्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	स०४	शु०९	श०१०	श०११	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०५	योगा
०	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	१९	०
५६	२	४	३७	३७	४	२०	३०	९	३२	०
७-	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपवशाचक्रम्

शुक्राक	शु०६	शु०७	म०८	शु०१२	श०१३	श०१०	शु०९	म०८	शु०७	योगा
०	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

-- अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगशतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	शु०७	म०८	शु०१२	श०११	श०१०	शु०९	म०८	शु०७	शु०६	योगा
०	३	१	१	०	०	१	०	३	१	२६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

-- अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	म०८	शु०१२	श०११	श०१०	शु०९	म०८	शु०७	शु०६	शु०७	योगा
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	शु०१२	श०११	श०१०	शु० ९	म० ८	शु० ७	शु० ६	शु० ७	म० ८	योगा
१	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	श०११	श०१०	शु० ९	म० ८	शु० ७	शु० ६	शु० ७	म० ८	शु० १२	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ० तस्योपदशा चक्रम्

श्रुवाक	श०१०	शु० ९	म० ८	शु० ७	शु० ६	शु० ७	म० ८	शु०१२	श०११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

श्रुवाक	शु० ९	म० ८	शु० ७	शु० ६	शु० ७	म० ८	शु०१२	श०११	श०१०	योगा
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२३	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	३९	३९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये क्षीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्राक	म० ८	शु० ७	शु० ६	शु० ७	म० ८	शु० १२	श० ११	श० १०	शु० ९	योगा
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	४
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	३६	३६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शुभोत्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्राक	शु० ७	शु० ६	शु० ७	म० ८	शु० १२	श० ११	श० १०	शु० ९	म० ८	योगा
०	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
१	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधोत्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्राक	शु० ६	शु० ५	शु० ४	शु० ३	शु० २	म० १	शु० ९	श० १०	श० ११	योगा
०	०	०	२	०	१	०	१	०	०	९
८	११	६	२	११	८	८	०	५	५	०
७	१२	१०	२०	१३	९	२६	२१	२	२	०
३	३	३५	२८	३	५२	४९	१०	२८	२८	०
३१	३२	१८	१४	३२	५६	२५	३५	१४	१४	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये श्रुतौत्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्राक	शु० ५	शु० ४	शु० ३	शु० २	म० १	शु० ९	श० १०	श० ११	शु० ६	योगा
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२१	३	२	६	११	४	७	२	२	६	०
१०	१५	२४	१०	८	२८	१	२४	२४	१०	०
३५	५२	४२	३५	४९	१४	४५	४२	४२	४५	०
१७	५६	१	१८	२५	७	५३	२१	२१	१८	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चर्वातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्राक	च० ४	शु० ३	शु० २	म० १	शु० ९	श० १०	श० ११	शु० ६	शु० ५	योग
१	५	२	३	१	२	०	०	२	१	२१
२८	२	२	११	८	५	११	११	२	२	०
५६	७	२०	१३	२२	१९	२५	२५	२०	२४	०
२८	४५	२८	३	३५	२४	४५	४५	१८	४२	०
१४	५३	१४	३२	१७	४३	५३	५३	२४	२१	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा च०

शुक्राक	शु० ३	शु० २	म० १	शु० ९	श० १०	श० ११	शु० ६	शु० ५	च० ४	योग
१	०	१	०	१	०	०	०	०	२	९
८	११	८	८	०	५	५	११	६	२	०
७	१३	९	२६	२१	२	२	१३	१०	२०	०
३	३	५२	४९	१०	५८	२८	३	३५	२८	०
३१	३२	५६	२५	३५	१४	१४	३२	१८	१४	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगशतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्राक	शु० २	म० १	शु० ९	श० १०	श० ११	शु० ६	शु० ५	च० ४	शु० ३	योग
१	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
७	०	३	१०	९	९	८	११	११	८	०
४५	४	२४	१७	१	१	९	१८	१३	९	०
५२	१४	२१	३८	३	३	५२	३९	३	५२	०
५६	७	११	४९	३२	३२	५६	२५	३२	५६	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मीनातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्राक	म० १	शु० ९	श० १०	श० ११	शु० ६	शु० ५	च० ४	शु० ३	शु० २	योग
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
२९	६	९	३	३	८	४	८	८	३	०
३८	२७	२६	२८	२८	२६	२८	२२	२६	२४	०
४९	३१	२८	३५	३५	४९	१४	३५	४९	२१	०
२४	४६	१४	१८	१८	३५	७	१७	२५	१०	०









अपसव्यकालचक्रकशिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	बृ०१२	श०११	श०१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	योगा
१	१	०	०	१	०	१	१	०	२	१०
११	१	५	५	१	९	१०	०	६	५	०
५१	२८	१७	१७	२८	२३	९	१६	२९	९	०
३७	३६	२६	२६	३६	१	४६	४४	१८	४	०
४०	१६	३०	३०	१६	२४	२	४०	९	१३	०

अपसव्यकालचक्रकशिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	श०११	श०१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	बृ०१२	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	८	५	२	११	५	०
४४	६	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	०
३९	५८	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	०
४	३७	३७	३०	३३	२६	५१	३५	४१	३०	०

अपसव्यकालचक्रकशिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	श०१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	बृ०१२	श०११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	४
१६	२	५	३	१	५	२	११	५	२	०
४४	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	६	०
३९	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	५८	०
४	३७	३०	३३	२६	५१	१५	४१	३०	३७	०

अपसव्यकालचक्रकशिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	बृ१२	श०११	श०१०	योगा
१	१	०	१	१	०	२	१	०	०	१०
११	१	९	१०	०	६	७	१	५	५	०
५१	२८	२३	९	१६	२९	९	२८	१७	१७	०
३७	३६	१	४६	४४	१८	४	३६	२६	२६	०
४०	१६	२४	२	४०	९	१६	१३	१६	३०	०

## पूर्वखण्डे पञ्चदशवारिहोत्राभ्याम्

अपसव्यकालचक्रकारिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	वृ० ३	श० २	श० १	बृ० १	योगा
०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२१	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	६	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५८	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रकारिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	वृ० ३	श० २	श० १	बृ० १	म० ८	योगा
०	२	१	०	३	१	०	०	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रकारिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधोतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	बु० ६	सू० ५	च० ४	वृ० ३	श० २	श० १	बृ० १	म० ८	शु० ७	योगा
०	०	०	२	१	०	०	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	२	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	४७	०
५४	११	२०	४६	४०	५१	५१	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रकारिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	सू० ५	च० ४	वृ० ३	श० २	श० १	बृ० १	म० ८	शु० ७	बु० ६	योगा
०	०	१	०	०	०	०	०	११	६	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	४	८	०
५५	१४	१९	२९	२३	२३	२९	२६	५	२२	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	१५	९	१५	१५	९	४२	१	२०	०

अपराध्यकालचक्रकासादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये अष्टातर्वर्षाणि २१ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	च० ४	वृ१२	श०११	श०१०	वृ० ९	म० ८	शु० ७	वृ० ६	सू० ५	योगा
२	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	१९	०
२५	२	४	३७	३७	४	२०	३०	९	३२	०
७	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपराध्यकालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	शु० ३	शु० २	म० १	वृ० ९	श१०	श०११	वृ१२	म० १	शु० २	योगा
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अपराध्यकालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगशिरातर्वर्षाणि १६ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	शु० २	म० १	वृ० ९	श०१०	श११	वृ०१२	म० १	शु० २	वृ० ३	योगा
२	३	१	१	०	०	१	१	३	०	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अपराध्यकालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदेशाचक्रम्

शुक्रांक	म० १	वृ० ९	श०१०	श०११	वृ१२	म० १	शु० २	वृ० ३	शु० २	योगा
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

पूर्वसन्धे पञ्चत्वारिंशोऽध्यायः

अपसव्यकालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोर्तर्षाणि १० तस्योपदशावक्रम्

शुक्राक	शु०१	श १०	श ११	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	म०१	योगा
१	१	०	०	१	१	१	१	१	०	१०
३	२	५	५	२	१०	११	१	१	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	३९	३९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्षाणि ४ तस्योपदशावक्रम्

शुक्राक	श १०	श ११	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	म०१	शु०१	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	१	५	१	४	५	०
२०	१	१	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्षाणि ४ तस्योपदशावक्रम्

शुक्राक	श ११	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	म०१	शु०१	श १०	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	१	५	१	४	५	२	०
२०	१	२३	१	७	६	७	१	२३	१	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोर्तर्षाणि १० तस्योपदशावक्रम्

शुक्राक	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	म०१	शु०१	श १०	श ११	योगा
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४१	३३	५२	६	३८	३८	०

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि तन्मध्ये भीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	शु०९	श १०	श ११	शु०१२	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगोत्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	शु०९	श १०	श ११	शु०१२	म०१	योगा
१	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधोत्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	बु०३	शु०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	शु०१२	श ११	श १०	योगा
१	०	०	२	०	१	०	१	०	०	९
८	११	६	२	११	८	८	०	५	५	०
७	१३	१०	२०	१३	९	२६	२१	२	२	०
३	३	३५	२८	३	५२	४९	१०	२८	२८	०
३१	३२	१८	१४	३२	५६	२५	३५	१४	१४	०

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगोत्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	शु०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	शु०१२	श १०	श ११	बु०३	योगा
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२१	३	२	६	११	४	७	२	२	६	०
१०	१५	२४	१०	८	२८	१	२४	२४	१०	०
३५	५२	४२	३५	४९	१४	४५	४२	४२	३५	०
१७	५६	२१	१८	२५	१७	५३	२१	२१	१८	०

## पूर्वपक्षे पञ्चत्वारिंशोऽध्यायः

अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चद्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	च०४	बु०६	गु०७	म०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	योगा
२	५	२	३	१	२	०	०	२	१	२१
२८	२	२	११	८	५	११	११	२	२	०
५६	७	२०	१३	२२	१९	२५	२५	२०	२४	०
२८	५४	१८	३	३५	२४	४५	४५	२८	४२	०
१४	५३	१४	३२	१७	४२	५३	५३	१४	२१	०

अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	बु०६	गु०७	म०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	च०४	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	२	९
८	११	८	८	०	५	५	११	६	२	०
७	१३	९	२६	२१	२	२	१३	०	२०	०
३	३	५२	४९	१०	२८	२८	३	३५	२८	०
३१	३२	५६	२५	३५	१४	१४	३२	१८	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ त्रयोत्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	गु०७	म०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	योगा
३	३	१	१	०	०	१	०	३	१	१६
७	०	३	१०	९	९	८	११	११	८	०
४५	४	२४	१७	१	१	९	८	१३	९	०
५२	१४	२१	३८	३	३	५२	४९	३	५२	०
५६	७	११	४९	३२	३२	५६	२५	३२	५६	०

अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शीमातर्वर्षाणि तस्योपदशाचक्रम्

शुक्राक	म०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	गु०७	योगा
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
२९	६	९	३	३	८	४	८	८	३	०
३८	२७	२६	२८	२८	२६	२८	२२	३६	२४	०
४९	३१	२८	३५	३५	४९	१४	३५	४९	२१	०
२४	४६	१४	१८	१८	२५	७	१७	२५	१०	०









पूर्ववर्षके पञ्चवारिशातेऽध्याय

अपसव्यकालवक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावक्रम्

शुक्रात्	शु०१२	श ११	श १०	शु०९	म०८	शु०७	शु०६	सू०५	च०४	योगा
१	१	०	०	१	०	१	१	०	२	१०
११	१	५	५	१	९	१०	०	६	५	०
५१	२८	१७	१७	२८	२३	९	१६	२९	९	०
३७	३६	२६	२६	३६	१	४६	४४	१८	४	०
४०	१६	३०	३०	१६	२४	२	४०	०	१३	०

अपसव्यकालवक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावक्रम्

शुक्रात्	श ११	श १०	शु०९	म०८	शु०७	शु०६	सू०५	च०४	शु०१२	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	८	५	२	११	५	०
४४	६	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	०
३९	५८	५८	२६	१३	५४	४१	४३	३७	२६	०
४	३७	३७	३०	३३	२६	५१	१५	४१	३०	०

अपसव्यकालवक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावक्रम्

शुक्रात्	श १०	शु०९	म०८	शु०७	शु०६	सू०५	च०४	शु०१२	श ११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	८	५	२	११	५	२	०
४४	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	६	०
३९	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	५८	०
४	३७	३०	३३	२६	५१	१५	४१	३०	३७	०

अपसव्यकालवक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोतर्वर्षाणि तस्योपदशा वक्रम् ०१

शुक्रात्	शु०९	म०८	शु०७	शु०६	सू०५	च०४	शु०१२	श ११	श १०	योगा
१	१	०	१	१	०	२	१	०	०	१०
११	०	९	१०	१६	२९	९	२८	१७	१७	०
५१	२८	२३	९	४४	१८	४	३६	२६	२६	०
३७	३६	१	४६	४०	९	१३	१६	३०	३०	०
४०	१६	२४	२							

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

श्रुवाक	म०८	शु०७	शु०६	सू०५	च०४	वृ०३२	श ३१	श ३०	वृ०९	योग
०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२१	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	६	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५८	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

श्रुवाक	शु०७	शु०६	सू०५	च०४	वृ०३२	श ३१	श ३०	वृ०९	म०८	योग
१	२	१	०	३	१	०	०	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

श्रुवाक	शु०६	सू०५	च०४	वृ०३२	श ३१	श ३०	वृ०९	म०८	शु०७	योग
१	०	०	२	१	१	१	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	८	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	२७	०
५०	११	२०	४६	४०	५१	५१	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चंद्रतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

श्रुवाक	सू०५	च०४	वृ०३२	श ३१	श ३०	वृ०९	म०८	शु०७	शु०६	योग
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	११	६	०
५५	१४	१९	३९	२३	२३	२९	२६	४	८	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	५	९	१५	१५	९	४२	१	२०	०

पूर्वस्यै पञ्चत्वारिंशोऽध्यायः

अपसव्यकालचक्रमीनारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये ब्रह्मातर्षावर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्रांक	च०४	वृ०१३	श ११	श १०	वृ०९	म०८	शु०७	वृ०६	शु०५	योग
०	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	१९	०
२५	२	४	३७	३७	४	२०	३	९	३२	०
७	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधातर्षावर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्रांक	शु०३	शु०२	म०१	वृ०९	श १०	श ११	वृ०१२	म०१	शु०२	योग
०	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गृहोत्तर्षावर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्रांक	शु०२	म०१	वृ०९	श १०	श ११	वृ०१२	म०१	शु०२	वृ०३	योग
३	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	१३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शमीयातर्षावर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

शुक्रांक	म०१	वृ०९	श १०	श ११	वृ०१२	म०१	शु०२	वृ०३	शु०२	योग
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
१	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	९	०
४१	११	३६	२६	३६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अपसव्यकालचक्रकुभाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	श्रु०१	श १०	श ११	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	म०१	योगा
०	१	०	०	१	१	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१०	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	३९	३९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अपसव्यकालचक्रकुभाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	श १०	श ११	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	म०१	श्रु०१	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४८	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अपसव्यकालचक्रकुभाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	श ११	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	म०१	श्रु०१	श १०	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४८	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अपसव्यकालचक्रकुभाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	शु०१२	म०१	शु०२	शु०३	शु०२	म०१	श्रु०१	श १०	श ११	योगा
०	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४१	३३	५२	६	३८	३८	०

पूर्वखण्डे पञ्चत्वारिंशोऽध्यायः

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये श्रीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

श्रुवाक	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	शु०१	श १०	श ११	शु०१२	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

श्रुवाक	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	शु०१	श १०	श ११	शु०१२	म०१	योगा
२	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
११	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अपसव्यकालचक्रमकरादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शुघातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	बु०३	शु०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	शु०१२	श ११	श १०	योगा
१	०	०	२	०	१	०	१	०	०	५
८	११	६	२	११	८	८	०	५	५	०
७	१३	१०	२०	१३	९	२६	२१	२	२	०
३	३	३५	२८	३	५२	४९	१०	२८	२८	०
३१	३२	१८	१४	३२	५६	२५	३५	१४	१४	०

अपसव्यकालचक्रमकरादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

श्रुवाक	शु०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	शु०९	श ११	श १०	बु०३	योगा
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२१	३	२	६	११	४	७	२	२	१०	०
१०	१५	२४	१०	८	२८	१	२४	२४	६	०
३५	५२	४२	३५	४९	१४	४५	४२	४२	३५	०
१७	५६	२१	१८	२५	७	५३	२१	२१	१८	०



अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चत्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्रांक	शु०४	शु०६	शु०७	म०८	शु०१२	श ११	श १०	शु०३	शु०५	योगा
२	५	२	३	१	२	०	०	२	१	२१
२८	२	२	११	८	५	११	११	२	२	०
५६	७	२०	१३	३२	१९	२५	२५	२०	२४	०
२८	४५	२८	३	३५	२४	४५	४५	२८	४२	०
१४	५३	१४	३२	१७	४२	५३	५३	१४	२१	०

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्रांक	शु०६	शु०७	म०८	शु०१२	श ११	श १०	शु०३	शु०५	शु०४	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	२	९
८	११	८	८	०	५	५	११	६	२	०
७	१३	९	२६	२१	२	२	१३	१०	२०	०
३	३	५२	४९	१०	२८	२८	३	३५	२८	०
२१	३२	५६	२५	३५	१४	१४	३२	१८	१४	०

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्रांक	शु०७	म०८	शु०१२	श ११	श १०	शु०३	शु०५	शु०४	शु०६	योगा
२	३	१	१	०	०	१	०	३	१	१६
७	०	३	१०	९	९	८	११	११	८	०
४५	४	२४	१७	१	१	९	८	१३	९	०
५२	१४	२१	३८	३	३	५२	४९	३	५२	०
५६	७	११	४९	३२	३२	५६	३५	३२	५६	०

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

शुक्रांक	म०८	शु०१२	श ११	श १०	शु०३	शु०५	शु०४	शु०६	शु०७	योगा
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
२९	६	९	३	३	८	४	८	८	३	०
३८	२७	२६	२८	२८	२६	२८	२२	३६	२४	०
४९	३१	२८	३५	३५	४९	१४	३५	४९	३१	०
२४	४६	१४	१८	१८	२५	७	१७	२५	१०	०











### अथाग्रे कालचक्रमाह

मेषांशे चीरको विद्याच्छ्रीमाञ्छुक्रांशके भवेत् ॥ बुधांशे ज्ञानसंपन्नश्रंद्रे च नृपतिर्भवेत् ॥४१॥  
 सिंहाशे राजसः प्रोक्तः सौम्यांशे पंडितो भवेत् ॥ तुलांशे राजमंत्री च मीमांशे निर्धनो भवेत्  
 ॥४२॥ चापाशे ज्ञानसयुक्तो मकरांशे च पापकृत् ॥ कुम्भाशे च वणिक्कर्म मीनांशे क्लिप्त  
 धाम्यवान् ॥४३॥

#### कालचक्र ज्ञातलक्षण

मेषाश मे चोर होता है। वृषाश मे श्रीमान्। मियुनाश मे ज्ञानी तथा कर्काश मे राजा होता है॥४१॥ सिंहाश मे रजोगुपी। कन्याश मे पंडित। तुलाश मे राजमंत्री। वृश्चिकाश मे निर्धन होता है॥४२॥ धनु अश मे ज्ञानी। मकराश मे पापकर्मा। कुम्भाश मे वणिग् वृत्ति। मीनाश मे अन्नपति होता है॥४३॥

### अथोदयफलमाह

आदित्यस्वोदये राज्यं कृषिश्चद्रोदये भवेत् ॥ अगारकस्य सूरः स्यात्पापकर्मणि संगतः ॥४४॥  
 बुधस्य विमत्ता बुधिरत्यंतं पंडितो भवेत् ॥ गुरुशुक्रोदये राज्यं चीरको मंडकोदये  
 ॥४५॥

#### उदय फल

सूर्य राशि के उदय मे जन्म होने से राजा होता है। चन्द्रराशि के उदय मे कृषक। मंगल की राशि के उदय मे सूरवीर तथा पापकर्मरत रहता है॥४४॥ बुधोदय मे निर्मल बुद्धि तथा अति मेधावी होता है। गुरु शुक्रोदय मे राजा और शनि के उदय मे चोर होता है॥४५॥

### अथ देहजीवफलमाह

देहजीवसमायोगे भौमार्करविजादिभिः ॥ एकैकयोगे मरण बहुयोगेषु का कथा ॥४६॥ यत्र  
 स्थानेषु संजीवो देहयोगसामन्वितः ॥ तत्र पापग्रहैर्योगे तद्गामरणं यदेत् ॥४७॥ देहयोगे  
 महाबाधा जीवयोगे तु मृत्युदः ॥ द्वाभ्यां सयोगमात्रेण हन्यते नात्र सरावः ॥४८॥ जीवे जीवो  
 यदा राहुः सौरिर्वकी रविः स्थितः ॥ मृत्युकालपतिं ज्ञात्वा शान्तिं कुर्यात्तथाविधि ॥४९॥ जीवे  
 जीवो यदा सोमे सौम्ये जीवसितः स्थितः ॥ तथा सौख्यं प्रकुर्वन्ति रोगमृत्युविनाशनम् ॥५०॥  
 पापलेत्रदशायोगे देहजीवो तु दुःखिती ॥ गुणलेत्रदशायोगे शुभयोगे शुभं भवेत् ॥५१॥ देहे  
 शुभग्रहैर्युक्ते मूषणादि भ्रुवं भवेत् ॥ जीवे शुभग्रहैर्युक्ते पुत्रवारादिकांस्तमेत् ॥५२॥

### देह जीव फल

देह राशि और जीव राशि में सूर्य मंगल शनि राहु, केतु में से एक एक ग्रह भी यदि हो तो मरण होता है। अनेक ग्रह यदि देह जीवराशि में हो तो क्या कहना ॥४६॥ देहराशि में पापग्रह हो तो महाकष्ट होता है। जीव राशि में पापग्रह हो तो उसकी (उस ग्रह की) दशा में मृत्यु होती है ॥४७॥ किसी एक ग्रह द्वारा देह जीव से योग हो तो उसकी दशा में मृत्यु होती है ॥४८॥ जीवराशि में गुरुराशि तथा राहु बक्री शनि सूर्य हो तो मृत्युयोग जनना और उस दशारम्भ काल में यथाविधि श्रान्ति करना चाहिए ॥४९॥ जीवराशि में गुरु हो और चन्द्रराशि हो। एव बुधराशि में शुक्रशुक्र हो तो सौख्य होता है तथा रोग और शत्रु का नाश होता है ॥५०॥ देह जीवराशि में पापग्रह का योग होने से दुःखदायक और शुभयोग होने से शुभ होता है ॥५१॥ देहराशि में शुभग्रह हो तो भूषण आदि की प्राप्ति होती है। जीव राशि में शुभग्रह हो तो स्त्री पुत्रादि की प्राप्ति होती है ॥५२॥

### अथ गतिप्रकरणमाह

प्रथमे गतिर्मङ्गुकी द्वितीये मर्कटी तथा ॥ बाणायनवपर्यंत गति सिंहावलोकनम् ॥५३॥

#### गति प्रकरण

प्रथम माङ्गुकी' और दूसरी मर्कटी गति तथा तीसरी ५।९।११ तक की सिंहावलोकन गति होती है ॥५३॥

### अथ फलमाह

मङ्गुके तु महाव्याधिर्मर्कट्या तु महद्भयम् ॥ सिंहावलोकने मरण गर्गस्य वचन यथा ॥५४॥

#### गतिफल

माङ्गु की गति महाव्याधि दायिनी होती है। मर्कटी गति में महाभय और सिंहावलोकन गति में मरण होता है। यह गर्गजी का वचन है ॥५४॥

### सिंहावलोकनगतिमाङ्गुकीगतिफलान्याह

कन्याया कर्कटे वापि सिंहमे मियुनेपि च ॥ माण्डूकीगतिसप्तो वं तादृश रोगकारणम् ॥५५॥  
मीने तु क्षत्रिके वापि चाप्यो मेघस्तथैव च ॥ सिंहावलोकनं चैव तादृशं च फलं सप्तैत् ॥५६॥  
सिंहावगतिमार्गे च माङ्गुकीगतिसप्तम् ॥ अपमृत्युकरस्तस्मिन् प्रायश्चित्तेतिशोचति ॥५७॥ मीने



तु वृश्चिके याते ज्वरो भवति निश्चितम् ॥ कन्याया कर्कटे याते मातृबधुविनाशनम् ॥५८॥  
सिंहे तु मिथुने याते स्त्रिया व्याधिर्भवेद् ध्रुवम् ॥ कर्कटे तु रवौ याते बधो भवति देहिनाम् ॥  
पितृबधुमृति विद्याच्चापान्मेपगते पुन ॥५९॥

### गतिफल

मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या ये मातृकी गति सजक है। अतएव महाव्याधिकारक है।५९॥  
मेप, वृश्चिक धन, मीन ये सिंहावलोकन गति सजक है। अत महाभय कारक है।५९॥  
सिंहावलोकन की राशि मे मातृकी गति की राशि हो तो अपमृत्यु कारक योग है। अवश्य  
प्रायश्चित्त कर्तव्य है।५७॥ मीनराशि दशा मे वृश्चिकाधिपग्रह हो तो निश्चय ज्वर होता है।  
इसी प्रकार कन्या की दशा मे बर्केश हो तो माता तथा बन्धु का नाश होता है।५८॥  
सिंहराशि दशा मे मिथुनाश हो अथवा कन्या हो तो अवश्य व्याधि होती है। कर्क राशि दशा  
मे सूर्य हो तो बध (हत्या) होती है। मेप राशि मे धनु होने से पिता, बन्धु की मृत्यु होती  
है।५९॥

### पुन. गतिफलमाह

कन्याया कर्कटे याते पूर्वभागे महत्फलम् ॥६०॥ उत्तर देश माथित्य मुख यात्रा भविष्यति ॥  
सिंहे तु मिथुने याते पूर्वभागे विमृज्यते ॥ बायतिपि च नैर्ऋत्या मुख यात्रा भविष्यति ॥६१॥  
कर्कटे भेषसिंहे च कार्यहानिश्च योगयुक् ॥ दक्षिणा दिशमाथित्य प्रत्यब्द गमन भवेत् ॥६२॥  
कुम्भे व्याधिर्मनोदुःख मिथुने निर्धनो भवेत् ॥ मीने तु वृश्चिके याते ज्वरगच्छति सखटम् ॥  
मकरे सकट दुःख चापात्सकटमुच्यते ॥६३॥ चापे मेधे भय यात्रा बधबधौमृतिर्भवेत् ॥ तुला  
सपट्टिवाहश्च स्त्रीप्राप्तिर्वृश्चिके गति ॥६४॥ मेपे शुभफल विद्यादक्षिणे गमन सुखम् ॥  
बेहजीवसमायोगे भद्र स्थित्वाऽपमृत्युद ॥६५॥ (एव राशिफल मुद्घ्वा नक्षत्रागणभेग तु ॥  
जीवदेहक्रमाल्लेय महादरातरदशा ॥ प्रदक्षिणेन मार्गेण वृश्चिकादि विवसिते ॥)

### पुन-गतिफल

कन्या मे कर्क राशि हो तो प्रयमार्द्ध मे अतिपेच्छ।६०॥ उत्तर दिशा की यात्रा सुखपूर्वक  
होती है। सिंह राशि मे मिथुन हो तो पूर्वादि नेष्ट। और उत्तरार्द्ध मे नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा  
सुखकर होती है।६१॥ कर्क राशि मे मेप और सिंह राशि होने से कार्य हानि होती है। और  
दक्षिण दिशा मे प्रतिवर्ष यात्रा होती है।६२॥ कुम्भ मे व्याधि और महादुःख तथा मिथुन मे  
निर्धन हो। मीन राशि वृश्चिक राशि हो तो उत्तर दिशा मे मखट होता है। मकर राशि में  
सकट दुःख तथा धनु राशि होने से मखट होता है।६३॥ धनु और मेप राशि मे भय और  
यात्रा बध और बधन तथा मृत्यु होनी है। तुलारशि दशा मे विवाह, स्त्रीप्राप्ति तथा वृश्चिक  
में यात्रा होती है।६४॥ मेप राशि मे बन्धवृद्धि और दक्षिण दिशा मे यात्रा होगी है। देह और  
जीवरशि के योग मे यदि शनि हो तो अपमृत्युकारक होता है।६५॥ (इम प्रकार नक्षत्र के

अश से राशि की दशा तथा अतरदशा जानकर जीव और देह का योग विचार करे। गति विचार मे सप्तम्यन्त राशि पद से मूलदशा और प्रथमान्त से अन्तर जानना चाहिए। केवल सप्तम्यन्त से अन्तर दशा जानना। दोनो का देह जीव योग देखना।)

### अथ महादशाफलमाह

रक्तपिताधिकव्याधिर्नृणामर्कफल भवेत् ॥ धनकीर्तिप्रजावृद्धिवस्त्राभरणद शशी ॥६६॥  
ज्वरमाशु विशेषैत्य प्रयिस्फोट कुजस्य तु ॥ प्रजावृद्धिर्धने बुद्धिर्बुधे भोगफल भवेत् ॥६७॥  
धन कीर्ति प्रजावृद्धि नानाभोग बृहस्पति ॥ विद्या विवाह सुस्रेत्र गृह धान्य भृगो फलम् ॥६८॥  
तापाधिक्य महादुःख बन्धुनाश शने फलम् ॥ एवमर्कादियोगेन राशियोगेन सपुते ॥६९॥  
शुभयोगे शुभ ब्रूया दशुभे त्वशुभ फलम् ॥ मिथे मिथफल ब्रूयाद्ग्रहराशिसमुद्भवम् ॥७०॥  
द्वादशाष्टमजन्मर्क्षवशायोगेन निर्णयः ॥ मृत्युकाल इति ज्ञात्वा शांतिं कुर्याद्विचक्षणः ॥७१॥

### कालचक्रमहादशाफल

सूर्य महादशा मे-रक्तपित्त की बीमारी विशेषरूप से होती है।  
चन्द्रमहादशा मे-धन कीर्ति तथा प्रजा की वृद्धि तथा वस्त्राभरण प्राप्त होता है॥६६॥

भौमदशा मे-पित्तज्वर, ग्रन्थि का फटना आदि होता है।  
बुधदशा मे-प्रजा तथा धन की वृद्धि एव ऐश्वर्य प्राप्त होता है॥६७॥  
गुरुदशा मे धन कीर्ति तथा प्रजा की वृद्धि और अनेक भोग मिलते हैं।  
शुक्र दशा मे- विद्या, विवाह सुवास मकान आदि शुभ फल होता है॥६८॥  
शनि दशा मे-विशेष ज्वर महादुःख तथा बन्धुनाश होता है।

इस प्रकार दशा की राशि मे सूर्यादि ग्रहो के योग से॥६९॥ देखकर शुभग्रह के योग से शुभ फल और अशुभ ग्रह के योग से अशुभफल बहना चाहिए। मिश्रित योग हो तो फल भी मिश्रित होता है॥७०॥ अशुभ योग के लिए १२।८ अक्षेशो का योग अक्षरदण्ड है। यदि मृत्यु कारक दशा हो तो शान्ति करना चाहिए॥७१॥

### अथाशायुर्निर्णयमाह

भाद्रिण्यपटिका हतायुषा षाणचद १५ विधिरायुष क्रमात् ॥ स्वस्ववर्षविहता स्वकीयजा कालचक्रविधिरायुष क्रमात् ॥७२॥  
भुक्तनादिहतावर्षास्तियाद्यौ १५ भाजिता ॥  
वर्षमासाहपटिका स्वविकल्पविभाजिता ॥७३॥  
अस्मिप्रवाराके षट् स्थिते तस्मात्प्रवाराणां ॥ न वा नवांशराशेनामते मृत्युर्मविष्यति ॥७४॥

### अंशाद्यु निर्णय

भुक्त तथा भोग्य अणायु स्पष्टीकरण। नक्षत्र के जिस पाद में जातक का जन्म है, उसकी भोग्य घटी पल को एकरस करके अपनी प्राप्त आयु के घुवाक से गुणा करके १५ से भाग देने पर कालचक्र दशा की भोग्य दशा होती है॥७२॥ अथवा इसी प्रकार भुक्त घटी पलको एक रस करके अपने २ दशा वर्ष से गुणा कर १५ का भाग देने से भुक्त दशा होती है॥७३॥ यह विधि चन्द्र स्पष्ट से भी की जा सकती है। यदि इस नवांश राशि के मध्य में मारक नहीं हो तो अत की दशा में मृत्यु होती है॥७४॥

### अथांतर्दशाफलमाह

लघुर्लक्षणीकित्तो यश्च येन केन समायुतः ॥ यस्य राशिः स्थितो जातस्तादृशं फलमाप्नुयात् ॥७५॥ अथाऽतो देवदेवेशि ह्यंशकांतर्दशाफलम् ॥ यथाविधि प्रवक्ष्यामि भूयतां कमलानने ॥७६॥ प्रथमांशे बधो भीमे ज्वरश्च व्रणसम्भवः ॥ बुधशुकेदुर्जीवेषु वस्त्राभरणमादिरोत् ॥७७॥ लभते स्वांशके देवि निश्चय सुरवदिते ॥ राशातिकलह सौरेः शत्रुक्षोभं महद्भयम् ॥७८॥ मेषांशस्थे तथादित्येऽनुक्रमात्फलनिश्चयः ॥ राजप्रसादमाप्नोति मेषस्वांशगते गुरौ ॥७९॥ विद्यालाभो महत्प्रीतिः शारीर सुखमेव च ॥ वृषभस्वांशके देवि गुरौ तत्र गते फलम् ॥८०॥ देशत्यागश्च मरण ज्वर शस्त्रक्षत तथा ॥ वृषभस्वांशके देवि कुजे तत्र गते फलम् ॥८१॥ वस्त्राभरणलाभ तु स्त्रियां योग महत्फलम् ॥ शुकेदुगुतचढाणां स्वांशके वृषभे फलम् ॥८२॥ नृपाद्भय पितृमृतिर्मृगाद्यैश्च महद्भयम् ॥ सुद्वरोग च लभते वृषभस्वांशके रविः ॥८३॥

### अन्तर्दशा फल

जो राशि लघेश दृष्ट हो अथवा शुभ या पाप जैसे ग्रह में युक्त हो, अथवा जिस ग्रह की राशि में जन्म हो इत्यादि सब योग देखकर ही फल कहना चाहिए॥७५॥ हे पार्वति! अब दशा के अन्तरदशाओं का फल यथाविधि बड़ा जाता है॥७६॥ मेष राशि दशा अन्तर में भीम हो तो ज्वर तथा व्रण का सम्भव है। और बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र हो तो (इनकी राशि का अन्तर हो तो) वस्त्र, आभरण आदि प्राप्त होते हैं॥७७॥ हे देवि! शनि अपने अशुभदशा में राजा से कलह करता है। शत्रु में भय करता है॥७८॥ मेष राशि नवांशदशा में मूर्खादि ग्रहों का सम्भव फल का निश्चय करना चाहिए। गुरु अपने अशुभ में राजमहल प्राप्त करता है॥७९॥ यदि गुरु वृषराशि की दशा के अपने अन्तर में हो तो विद्यालाभ, महान् प्रेम तथा शारीरिक सुख करता है ॥८०॥ और वृष के स्वांश में मगल हो तो देशत्याग, मरण, ज्वर, शस्त्राघात करता है॥८१॥ वृष के अन्तर में शुक्र, बुध चन्द्रमा हो तो गुन्दर वस्त्र, आभूषणों का लाभ तथा स्त्री वीर्य देते हैं॥८२॥ वृष के अन्तर में मूर्ख राजभय, पितृमरण, पशु में भय करता है॥८३॥

भौक्तिकामरणादीनि दारावस्त्रफलादि च ॥ लभते स्वांशके देवि मियुनस्वांशके भृगो ॥८४॥  
 पितृमातृभयं चैव ज्वरञ्च वृणसंभवः ॥ प्रयाणं कुरुते देवि मियुनस्वांशके कुजः ॥८५॥  
 विद्यालाभं द्रव्यलाभं महाविभवसंभवम् ॥ समस्तप्रीतिमाप्नोतिमियुनस्वांशके गुरो ॥८६॥  
 प्रयाणं च महाव्याधिर्मरणं चार्थनशनम् ॥ बंधुनाशो भवेद्देवि मियुनस्वांशके शनी ॥८७॥  
 वस्त्रलाभ पुत्रलाभं विद्यालाभं तथैव च ॥ समस्तप्रीतिमाप्नोति मियुनस्वांशके बुधे ॥८८॥  
 ऐश्वर्यं धनलाभं च पुत्रपत्नीसमागमम् ॥ मनः प्रीतिमवाप्नोति कुलीरस्वांशके शशी ॥८९॥  
 नृपाङ्गुलं शत्रुभयं मृगेभ्यश्च महद्भयम् ॥ ज्वरव्याधिश्च दाहश्च कुलीरस्वांशके रवौ ॥९०॥  
 पुत्रलाभं बंधुलाभं रत्नविद्यार्थमेव च ॥ कुलीरस्वांशके देवि बुधशुक्रसमागमे ॥९१॥  
 विषशस्त्रमृति घोरं ज्वरदाहसमुद्भयम् ॥ सर्वदुःखमवाप्नोति कुलीरस्वांशके कुजे ॥९२॥

(मियुन राशि दशा का फल-शुक्र के अन्तर दशा में मोती आदि रत्नों की प्राप्ति स्त्री, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते हैं ॥८४॥ मियुनान्तर में मंगल की राशि दशा हो तो पिता माता को भय, ज्वर, पाव तथा यात्रा का योग होता है ॥८५॥ गुरु हो तो विद्यालाभ, धन लाभ, महान् वैभव तथा सबसे प्रेम होता है ॥८६॥ मियुन के स्वीय अंश में शनि हो तो यावा, महाव्याधि, मृत्यु, धननाश तथा बंधुनाश होता है ॥८७॥ मियुन में स्वाश में बुध हो तो वस्त्रलाभ, पुत्रलाभ, तथा विद्यालाभ और मित्रों में प्रीति होती है ॥८८॥ यदि चन्द्रमा स्वाश में हो तो ऐश्वर्य, धनलाभ तथा स्त्री पुत्र से मिलाप और मन की प्रसन्नता होती है ॥८९॥ (अब कर्क दशा फल कहते हैं) कर्क राशि दशा में मूषाशि हो तो राजभय, शत्रु तथा पशु से भय, ज्वर, व्याधि तथा दाह होता है ॥९०॥ तथा उसमें बुध या शुक्र के अंश की दशा हो तो पुत्र, विद्या, बन्धु, रत्न, धन का लाभ होता है ॥९१॥ यदि मंगल स्वाश में हो तो विष या शस्त्र से मृत्यु तथा घोर ज्वरदाह तथा सर्वप्रकार दुःख होता है ॥९२॥

विभवस्थातित्तामं च धनलाभं तथैव च ॥ नृपप्रसादमाप्नोति कुलीरस्वांशके गुरो ॥९३॥  
 वातव्याधिश्च निर्घातमसुरविषदाहकम् ॥ सर्वक्लेशमवाप्नोति कुलीरस्वांशके शनी ॥९४॥  
 ज्वरपित्तविन्मग्नं च शस्त्रघातविषूचिकाः ॥ मुखरोगमवाप्नोति मृगेंद्रस्वांशके कुजे ॥९५॥  
 वस्त्रामरणविद्याश्च सुतस्त्रीलाभमेव च ॥ मृगेंद्रस्वांशके देवि भाग्वि च बुधगमे ॥९६॥  
 आहृत्पतनं चैव देशत्यागं महद्भयम् ॥ महाघनविघातं च सिंहस्वांशगतः शशी ॥९७॥  
 महाशत्रुभयं चैव ज्वरञ्च व्याधिरेव च ॥ अज्ञानं मरणं रातो मृगेंद्रस्वांशगे च ई ॥९८॥  
 धनधान्यमहालाभं प्रसादं द्विजदेवयोः ॥ विद्यालाभमवाप्नोति मृगेन्द्रस्वांशगे गुरो ॥९९॥  
 प्रयाणं च ज्वरं चैव सुद्भयं वैश्वदेवं तया ॥ व्याधिदुःखमवाप्नोति ज्ञन्यास्वांशगते शनी ॥१००॥  
 नृपप्रसादनं लाभमैश्वर्यं बंधुसंभवम् ॥ विद्यालाभमवाप्नोति ज्ञन्या स्वांशगते गुरो ॥१०१॥ प्रयाण  
 च ज्वरं चैव मन्मुरोर्बहिर्ना भयम् ॥ शस्त्रघातं च मरणं ज्ञन्यास्वांशगते कुजे ॥१०२॥

कर्क के अपने अश मे गुरु हो तो अति विभव लाभ धनलाभ तथा राजमैत्री प्राप्त होती है॥१३॥ इसी प्रकार शनि हो तो वातव्याधि, तथा घात एव मसूर (जगली पशु) का विषयुक्त दशन तथा अन्य अनेक क्लेश प्राप्त होते हैं॥१४॥ (अब सिंह राशि के अन्तर कहते हैं) सिंहदशा मे कुजान्तर मे ज्वर, पित्त, रोग, शस्त्राघात, हैजा तथा मुख के रोग होते हैं॥१५॥ शुक्र तथा बुध मे सुन्दर वस्त्र, भूषण, विद्या, पुत्र, स्त्री का लाभ होता है॥१६॥ सिंह की दशा मे चन्द्र हो तो उन्नत अवस्था से पतन, देशत्याग, महाभय, विशेष धनहानि होती है॥१७॥ महाशत्रु का भय ज्वर तथा व्याधि, अज्ञान और मृत्यु होती है॥१८॥ (सूर्य से उपर्युक्त फल जानना) सिंह राशि की अन्तर दशा मे गुरु अपने अश मे हो तो धन सम्पत्ति का लाभ द्विज, देवता की कृपा तथा विद्या लाभ होता है॥१९॥ (कन्या राशि दशा मे अन्तरदशा फल) शनि स्वाश मे हो तो यात्रा, ज्वर, भूख प्यास से कष्ट तथा रोग दुःख प्राप्त होता है॥१००॥ स्वाश मे गुरु हो तो राजकृपा, लाभ, ऐश्वर्य, बन्धु प्राप्ति तथा विद्या का लाभ होता है॥१०१॥ मंगल स्वाश मे हो तो व्यर्थ की यात्रा, ज्वर, मसूरी रोग, अग्नि भय, शस्त्र से घाव तथा मृत्यु होती है॥१०२॥

मृत्युपुत्रार्थलाभ च वस्त्राभरणमेव च ॥ शुक्रेन्दुसुतचंद्राणां कन्यास्वांशगते फलम् ॥३॥ प्रयाण च ज्वरश्रेय पुत्रहानिस्तथैव च ॥ शस्त्रघातेन मरणं कन्या स्वांशगते रवी ॥४॥ स्त्रीलाभ धनलाभं च पुत्रलाभं तथैव च ॥ वस्त्राभरणलाभं च तुलास्वांशगते भृगौ ॥५॥ पिता सुहृद्घनं चैव शिरोरोगं ज्वर तथा ॥ शस्त्राप्रिक्षतघात च तुलास्वांशगते कुजे ॥६॥ धनं रत्नं महालाभं धर्मं चेष्टा नृपायहम् ॥ सर्वसंपत्समृद्धिश्च तुलास्वांशगते गुरौ ॥७॥ प्रयाणं च महाव्याधि मेवं क्षेत्रभयं तथा ॥ शत्रुबाधा महादुःखं तुलास्वांशगते शनौ ॥८॥ पुत्रलाभ धनं स्त्रीणां लाभं चैव मनः प्रियम् ॥ सौभाग्यं बधुलाभं च तुलास्वांशगते बुधे ॥९॥ व्याधिनाशं महतीस्वं नानासर्वार्थसिद्धिदम् ॥ मृगुसौम्यशशांकानां वृश्चिकस्वांशगते फलम् ॥११०॥

शुक्र, बुध तथा चन्द्रमा स्वाश मे हो, तो स्त्रीपुत्र, नौकर आदि की प्राप्ति तथा वस्त्रभूषण का लाभ होता है॥१०३॥ सूर्य में यात्रा, ज्वर, पुत्रहानि, शस्त्राघात होता है॥१०४॥ (तुला राशि दशा के अन्तर) स्वाश मे शुक्र हो तो स्त्री, पुत्र, धन, वस्त्र, सम्पत्ति का लाभ होता है॥१०५॥ मंगल हो तो पिता, मित्र, धन की हानि, सिर दर्द, दुःखार, शस्त्र से आघात तथा अग्नि का भय होता है॥१०६॥ गुरु स्वाश मे हो तो धन, रत्न, धर्म, मर्ब सम्पत्ति तथा राजकृपा का लाभ होता है॥१०७॥ शनि स्वाश मे हो तो यात्रा, महाव्याधि, शत्रुबाधा तथा हानि होती है॥१०८॥ बुध स्वाश मे हो तो स्त्रीपुत्र, धनलाभ, इच्छित बन्धु की प्राप्ति, सौभाग्य और बन्धु लाभ होता है॥१०९॥ बुध, शुक्र, चन्द्रमा स्वाश मे हो तो व्याधि का नाश, महान् सुख, सम्पूर्ण अर्थ की सिद्धि होती है॥११०॥

शत्रुभोगं भय व्याधिर्मर्धनाशं पितुर्भयम् ॥ मृगाद्भयमवाप्नोति वृश्चिकस्वांशगते रवी ॥१११॥ वातपित्तभयं चैव मसूरीव्याधिमेव च ॥ अधिरास्त्रादिभोतिं च वृश्चिकस्वांशगते कुजे ॥११२॥ धनं रत्नं च धान्यं च देवहाहणपूजनम् ॥ राजप्रसादमाप्नोति वृश्चिकस्वांशगते गुरौ ॥११३॥

घनबधुविनाशश्च मनोबधस्तयाकुलम् ॥ शत्रुबाधा महाव्याधिर्द्विभ्रिकत्वाशगे शनौ ॥१४॥  
 अतिदाह ज्वर छर्दिर्मुखरोग च कष्टताम् ॥ शरीरक्लेशमाप्नोति चापस्वाशगते कुजे ॥१५॥  
 श्रीविद्याना च सौभाग्य शत्रुनाश नृपाद्भयम् ॥ भार्गवेदुजचद्राणा चापस्वाशगते फलम् ॥१६॥  
 स्त्रीनाश वित्तनाश च कलह च नृपाद्भयम् ॥ प्रयाण समवाप्नोति चापस्वाशगते रवौ ॥१७॥  
 वानधर्मतपोलाम राजपूजनमेव च ॥ स्त्रीलाम, धनलाभ च चापस्वाशगते गुरौ ॥१८॥  
 द्विजदेवनृपात्कोप बधुभिश्च विनाशनम् ॥ देशत्यागमवाप्नोति मृगस्वाशगते शनौ ॥१९॥

(वृश्चिक राशि दशा के अन्तर फल) - सूर्य मे शत्रु से क्षोभ, भय, व्याधि, घननाश, पिता से भय होता है। एव पशु से क्षति होती है ॥१११॥ मंगल के अश मे वातपित्त की बीमारी, शीतला की बीमारी, अग्नि तथा मस्त्र से भय होता है ॥११२॥ गुरु के अश मे घनसम्पत्ति रत्न की प्राप्ति, देव ब्राह्मण पूजा तथा राजकृपा प्राप्त होती है ॥११३॥ शनि के अश मे घन, बन्धु का नाश, चिन्ता व्याकुलता, शत्रुबाधा, महाव्याधि होती है ॥११४॥ मंगल के अश मे दाह, ज्वर, वमन, मुख रोग, दर्द और क्लेश होता है ॥११५॥ बुध, शुक्र तथा चन्द्रमा के अश मे घन, विद्या, सम्पत्ति प्राप्त होती है। शत्रु नाश तथा राजभय होता है ॥११६॥ (घन राशि दशा के अन्तर फल) सूर्य के अश मे स्त्रीनाश, घन हानि, कलह, राजभय तथा यात्रा होती है ॥११७॥ गुरु के अश मे दान, धर्म, तप, स्त्रीघन का लाभ तथा राज सन्मान होता है ॥११८॥ (मकर राशि दशा के अन्तर फल) शनि के अश मे देव, ब्राह्मण, राजा का कोप, बन्धुवो से नाश तथा देशत्याग होता है ॥११९॥

देवार्चनै तपो ध्यान द्विजपूजाविसमवम् ॥ भार्गवजेदुजीवाना मृगस्वाशगते फलम् ॥१२०॥  
 शिरोरोग ज्वर चैव करपाद्यगतक्षतम् ॥ रक्तपित्तातिसाराश्च मृगस्वाशगते कुजे ॥१२१॥  
 बधुपुत्रपितुनाश ज्वररोगसमाश्रयम् ॥ नृपरात्रुभय चैव मृगस्वाशगते शनौ ॥१२२॥  
 नानाविद्यार्थलाम च पुत्रस्त्रीमित्रसमवम् ॥ ऐश्वर्यं धनलाभ च घटस्वाशगते मृगौ ॥१२३॥  
 ज्वराग्निचोरघत च शत्रूणा च महद्भयम् ॥ मनोदुःखमवाप्नोति घटस्वाशगते कुजे ॥१२४॥  
 दुःखव्याधिहर चैव देवब्राह्मणपूजनम् ॥ मनःप्रीतिमवाप्नोति घटस्वाशगते गुरौ ॥१२५॥  
 त्रिदोषकुपित चैव कलह देशविभ्रमम् ॥ क्षयव्याधिपवाप्नोति घटस्वाशगते शनौ ॥१२६॥  
 पुत्रमित्रघनस्त्रीणा लाभ चैव मनः प्रियम् ॥ सौभाग्य वस्त्रलाभ च घटस्वाशगते  
 कुजो ॥२७॥

शुक्र, बुध, चन्द्र, बृहस्पति के अशो मे देवार्चन, तप ध्यान, द्विजपूजा आदि होता है ॥१२०॥ मंगल के अश मे सिरदर्द ज्वर हाथ पैर मे घाव, रक्त पित्त, अतिसार की बीमारी होती है ॥१२१॥ शनि के अश मे बन्धु, पुत्र, पिता की हानि, ज्वर, राजा तथा शत्रु से भय होता है ॥१२२॥ (कुम्भ राशि दशा के अन्तर फल) शुक्र के अश मे अनेक विद्या तथा घन लाभ, स्त्रीपुत्र, मित्र का सुख तथा ऐश्वर्य होता है ॥१२३॥ मंगल के अश मे ज्वर अग्नि, चोर से हानि, शत्रु से भय, मन मे दुःख होता है ॥१२४॥ गुरु के अश मे दुःख, व्याधि का नाश, देव ब्राह्मण की पूजा, मन मे सन्तोष होता है ॥१२५॥ शनि के अश मे सत्रिपात, रक्वह, देमयात्रा,

क्षय रोग होता है ॥१२६॥ बुध के अश में पुत्र, मित्र, धन, स्त्री का लाभ, वस्त्र प्राप्ति, मन में सन्तोष और सौभाग्य होता है ॥१२७॥

स्त्रीविद्यालाभमाप्नोति ह्याश्रितव्याधिनाशनम् ॥ महापीडामवाप्नोति मीनस्वांशगतः शशी ॥२८॥ कलहं चौरभीतिं च बंधुभिः क्षयकारणम् ॥ स्थानभ्रशमवाप्नोति मीनस्वांशगते रवौ ॥२९॥ शत्रुनाशं च विजयं नृपगोभूसुतागमम् ॥ रत्नलाभं च मीने च स्वांशगे बुधशुक्रयोः ॥३०॥ विवाद पितरोग च जंतोर्जारणमारणम् ॥ शत्रुक्षयमवाप्नोति मीनस्वांशगते कुजे ॥३१॥ धनधान्यकलत्राणि लभते राजपूजनम् ॥ वस्त्राभरणलाभं च मीनस्वांशगते गुरौ ॥३२॥ ऐश्वर्यस्य प्रणाशश्च वैश्यादीनामुपद्रवैः ॥ देशत्यागो दरिद्रं च मीने स्वांशगते शनौ ॥३३॥ एव यथाक्रमेणैव विज्ञेयं स्वांशगते फलम् ॥ वामक्षेप्येवमेव च फल तत्रैव योजयेत् ॥३४॥ दशाफलमहं वक्ष्ये धर्मकर्मकृतं पुरा ॥ तत्सर्वं प्राणिभिर्नित्यं प्राप्यते नात्र संशयः ॥३५॥ सुहृदतर्दशा भव्या विवृद्धा शत्रुसंभवा ॥ मध्यमा मध्यक्षेप्यस्य दशादीनामिदं विदुः ॥३६॥

चन्द्रमा के अश में स्त्री, विद्या लाभ, आश्रित मनुष्य की व्याधि का नाश तथा पीडा होती है ॥१२८॥ (मीन राशि दशा के अन्तरफल) सूर्य के अश में कलह, चोर भय, बन्धुओं से हानि, स्थान नाश होता है ॥१२९॥ बुध, शुक के अश में शत्रु नाश, विजय, राजा, गौ, ब्राह्मण की कृपा तथा मिलाप एव रत्न लाभ होता है ॥१३०॥ मंगल के अश में विवाद, पितरोग, सीसाधातु का भस्म करना, शत्रु क्षय आदि होते हैं ॥१३१॥ गुरु के अश में धन सम्पत्ति, स्त्री का लाभ, राजपूजा, वस्त्राभरण का लाभ होता है ॥१३२॥ शनि के अश में वैश्या सग से समस्त ऐश्वर्य का नाश, देशत्याग, दरिद्र होता है ॥१३३॥ इस प्रकार क्रम से ग्रहों का फल सव्य मार्ग का कहा गया है। इन्हीं फलों को अप-सव्य मार्ग में भी समझना चाहिए ॥१३४॥ मनुष्यों के पूर्व जन्मकृत धर्म, कर्म के फल से इस जन्म में जो सुख दुःख प्राप्त होते हैं, वे सब इस दशा के रूप में प्राप्त होते हैं यह नि सन्देह है ॥१३५॥ मित्रग्रह की अन्तरदशा शुभ, शत्रुग्रह की अशुभ, समग्रह की मध्यम समझना चाहिए ॥१३६॥

### अथ नवांशफलमाह

मेघे तु रत्नपीडा च वृषभे धान्यवर्द्धनम् ॥ मियुने जानसपद्मभ्रटे धनपतिर्भवेत् ॥१३७॥ सूर्यस्य शत्रुबाधा च कन्यास्त्रीणां च नाशनम् ॥ तीतिके राजमित्रित्य वृश्चिके मरण भवेत् ॥३८॥ अर्यलाभो भवेज्जापे मेघस्य नवभागके ॥ मकरे पापकर्माणि कुंभे वाणिज्यमेव च ॥३९॥ मीने सर्वार्यसिद्धिश्च वृश्चिकेऽप्यप्रितो भयम् ॥ तीतिके राजपूज्यश्च कन्यायां शत्रुवर्धनम् ॥४०॥ शशिभे शरसबाधा सिंहे च त्वक्षिरोगकृत् ॥ मियुने वृलबाधा स्याद्वृषभे च नवांशके ॥४१॥ वृषभे अर्यलाभ, च मेघे तु ज्वररोगकृत् ॥ मियुने मारुतप्रीतिः कुंभे शत्रुप्रवर्द्धनम् ॥४२॥ मृगे चौरस्य संबाधा धनुषि शस्त्रवर्धनम् ॥ मेघे तु शस्त्रांतंबंधो वृषभे बलहृत्प्रियः ॥४३॥ मियुने सुखमाप्नोति मियुनस्य नवांशके ॥ कर्कटे सक्वटप्राप्तिः सिंहे राजप्रकोपकृत् ॥४४॥

नवांश फल

(इन पूर्वोक्त राशि दशाओं में प्रत्येक अन्तर में जो राशि होगी, केवल उम राशि के

अनुसार फल कहा जाता है।) मेष अश में रत्नपीडा। वृष में धान्य वृद्धि मिथुन में ज्ञान। कर्क में धनपति होता है।।१३७।। सिंह में शत्रु बाधा। कन्या में स्त्रीनाश। तुलामें राजमन्त्री। वृश्चिक में मृत्यु हो।।३८।। धनु के अश में धनलाभा। ये मेष के नौ अश की राशियों के फल हैं।।३९।। (वृषराशि के अतर) मकर में पापकर्मा। कुभ में व्यापार।।३९।। मीन में सर्वसिद्धि। वृश्चिक में अग्नि भया। तुला में राजपूज्यता। कन्या में शत्रुभया।।१४०।। कर्क में स्त्री से कलहा। सिंह में नेत्ररोग। मिथुन में वृक्ष ठे हानि। ये वृषराशि के ९ नवाश राशि का फल है।।४१।। (मिथुनान्तर फल) वृष में अर्धलाभा। मेष में ज्वर। मिथुन में मामा वा प्रेमा। कुम्भ में शत्रुभया।।४२।। मकर में चौर भया। धन में शस्त्रवृद्धि। मेष में शस्त्र योग। वृष में कलहा।।४३।। मिथुन में सुख होता है।। ये मिथुनाश दशा के ९ नवाशराशि का फल है। कर्क में सकटा। सिंह में राजकोप।।४४।।

कन्याया भ्रातृपूजा च तौलिके प्रियकृश्रर ॥ वृश्चिके पितृबाधा स्यात्कर्कटस्य नवाशके ॥४५॥  
 वृश्चिके कलह पीडा तौलिके ह्यधिक फलम् ॥ कन्यायामतिलाभश्च शक्ताके मृगबाधिका  
 ॥४६॥ सिंह च पुत्रलाभश्च मिथुने शत्रुवर्द्धनम् ॥ मीने तु दीर्घयात्रा स्यात्सिंहस्य नवभागके  
 ॥४७॥ कुभे तु धनलाभश्च मकरे द्रव्यलाभकृत् ॥ धनुषि भ्रातृससर्गो मेषे मातृविवर्द्धनम्  
 ॥४८॥ वृषभे पुत्रवृद्धि स्यान्मिथुने शत्रुवर्द्धनम् ॥ शशिभे तु स्त्रिया प्रीति सिंह  
 व्याधिविवर्द्धनम् ॥४९॥ कन्याया पुत्रवृद्धि स्यात्कन्याया नवमाशके ॥ तुलायामर्थलाभश्च  
 वृश्चिके भ्रातृवर्द्धनम् ॥१५०॥ चापे च तातसौख्य च मृगे मातृविरोधिता ॥ अती जायाविरोध  
 च तुले च जलबाधताम् ॥५१॥ कन्यावृद्धिकर विशासुलाया नवभागके ॥ कर्कटे ह्यर्थनाशश्च  
 सिंह राजविरोधिता ॥५२॥

कन्या में भ्रातृपूजा। तुला में सुखा। वृश्चिक में पितृबाधा होती है।।४५॥ वृश्चिक में कलह पीडा। तुला में अधिक फल। कन्या में अतिलाभा। कर्क में पशु से हानि।।४६॥ सिंह में पुत्रलाभा। मिथुन में शत्रुवृद्धि। मीन में दीर्घ यात्रा। सिंह राशि के नवाश का फल है।।४७॥ कुभ में धनलाभा। मकर में द्रव्य लाभ। धनु में भ्रातृ सयोग। मेष में मातृकुल में वृद्धि।।४८॥ वृष में पुत्रवृद्धि। मिथुन में शत्रुवृद्धि। कर्क में स्त्री से प्रेमा। सिंह में व्याधिवृद्धि।।४९॥ कन्या में पुत्रवृद्धि। ये कन्या नवाश दशा के अतर के फल है। तुला में धनलाभा। वृश्चिक में भ्राता वृद्धि।।१५०॥ चाप (धनुराशि) में पितृ सुखा। मकर में माता से विरोधा। तुला में जलबाधा। कन्या में वृद्धि। ये तुला के नवाश का फल हुआ। कर्क में धननाश सिंह में राजविरोधा।।५२॥

मिथुने भूमिलाभश्च वृषभे चार्थतामकृत् ॥ चापे तु धनलाभ स्याद्वृश्चिकस्य नवाशके ॥५३॥  
 मेषे तु धनलाभ स्याद्वृषे भूमिविवर्द्धनम् ॥ मिथुने सर्वसिद्धि स्यात्कर्कटे सर्वसिद्धिकृत्  
 ॥५४॥ सिंह तु पूर्ववृद्धि स्यात्कन्याया कलहो भवेत् ॥ तौलिके चार्थलाभ स्याद्वृश्चिके  
 रोगमाप्नुयात् ॥५५॥ चापे तु सुतवृद्धि स्याच्चापस्य नवमाशके ॥ मकरे पुत्रलाभ स्यात्कुभे  
 धान्यविवर्द्धनम् ॥५६॥ मीने कल्याणमाप्नोति वृश्चिके मृगबाधिता ॥ तौलिके त्वर्यलाभश्च  
 कन्याया शत्रुवर्द्धनम् ॥५७॥ शशिभे श्रियमाप्नोति सिंह तु मृगबाधिता ॥ मिथुने वृक्षबाधा च  
 मृगस्य नवभागके ॥५८॥ वृषभे न्वर्यलाभ च मेषस्य त्वर्यरोगकृत् ॥ सिंहमे न्वर्य



स्यात्कुम्भे स्वस्थ विवर्द्धनम् ॥५९॥ मकरे सर्वसिद्धिः स्याच्चापे शत्रुविवर्द्धनम् ॥ मेपे  
सौख्यविनाशश्च वृषभे मरण भवेत् ॥१६०॥

मिथुन मे भूमिलाभा। वृष मे धनलाभा। धन मे अर्थलाभा ये वृश्चिक के नवाश के फल  
हे॥५३॥ मेप मे धनलाभा। वृष मे भूमिवृद्धि। मिथुन मे सर्वसिद्धि। कर्क मे भी सर्व  
सिद्धि॥५४॥ सिंह मे वृद्धि। कन्या मे कलहा। तुला मे धनलाभा। वृश्चिक मे रोग॥५५॥ धन मे  
सुतवृद्धि। ये धनराशि के नवाश के फल है। मकर मे पुत्र वृद्धि। कुभ मे धान्यवृद्धि॥५६॥ मीन  
मे कल्याण। वृश्चिक मे पशु से हानि होती है। तुला मे धनलाभा। कन्या मे शत्रुवृद्धि॥५७॥ कर्क  
मे धनाप्ति। सिंह मे पशु से भय। मिथुन मे वृक्ष से हानि। ये मकर नवाश का फल है॥५८॥ वृष  
मे धन लाभा। मेप.मे आख बी बीमारी। मिथुन मे लवी यात्रा। कुभ मे वृद्धि॥५९॥ मकर मे  
सर्व सिद्धि। धन मे शत्रु वृद्धि। मेप मे सुखनाश। वृष मे मृत्यु॥१६०॥

युग्मे कल्याणमाप्नोति कुम्भस्य नवभागके ॥ कर्कटे धनवृद्धिः स्यात्सिंहे तु राजपूजनम् ॥६१॥  
कन्यायामर्थलाभस्तु तुलाया लाभमाप्नुयात् ॥ वृश्चिके ज्वरमाप्नोति चापे शत्रुविवर्द्धनम्  
॥६२॥ मृगे जायाविरोध च कुम्भे जलविरोधता ॥ मीने तु सर्वसौभाग्य मीनस्य नवभागके ॥६३॥  
दशादशक्रमेणैव ज्ञात्वा सर्वफल वदेत् ॥ क्रूरग्रहदशाकाले शान्तिं कुर्याद्विचक्षणः ॥१६४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे कालचक्रदशाफलकर्मणं नाम  
पञ्चचत्वारिंशोऽध्याय ॥४५॥

मिथुन मे कल्याण। ये कुमराशि के नवाश का फल है। कर्क मे धनवृद्धि। सिंह मे राजा वा  
आदर॥६१॥ कन्या मे धनलाभा। तुला मे लाभ। वृश्चिक मे ज्वर। धन मे शत्रुवृद्धि होती  
हे॥१६२॥ मकर मे भार्या से विरोध। कुम्भ मे जल से हानि। मीन मे गर्व मौभाग्य। ये मीन  
राशि दशा के नवाश राशियों के फल है॥६३॥ दशा के आदि के अंश के क्रम मे फल कहना  
चाहिए। क्रूरग्रह की दशा से गमय जान्ति बग्नी चाहिए॥१६४॥

इति श्रीवृ० पा० हो० ना० पू० भावप्रका० कालचक्रदशाफलकर्मणं नाम  
पञ्चचत्वारिंशोऽध्याय ॥४५॥

### अथ चरदशाफलमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि चरपर्यादशाफलम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण देवतो जायते द्विज ॥१॥  
नराणां सर्वमापुञ्च सुखदुःखशुभाशुभम् ॥ सर्ववेत्ता निर्विशक भवतोह म मगध ॥२॥  
जन्मसम्रात्सपारम्य भानुभावे द्विजोत्तम ॥ आपूर्वप्रदा ज्ञेया फल तस्या वदाम्यहम् ॥३॥  
यदा दशाप्रदो राशित्तस्य रक्षत्रिकोणम् पापछेदयुते विप्र सा दशा दुःखदायिका ॥४॥  
तृतीयपट्ठने पापे जयादिः परिकीर्तिता ॥ शुभ छेदयुते तत्र जायतेऽपि पराजय ॥५॥ सामन्ते  
शुभपापश्च साभो भवति निश्चितम् ॥ यदा दशाप्रदो राशिः शुभछेदयुतो द्विज ॥६॥ शुभसेत्रे

हि तद्वाशिः शुभकर्ता दशाफलम् ॥ पापयुक्ते शुभक्षेमपूर्वयुक्तं सुखोत्तमे ॥७॥ पापसं शुभसंयुक्ते पूर्वसौख्यं ततो न्यसेत् ॥ पापक्षेत्रे पापयुक्ते सा दशा सर्वदुःखदा ॥८॥ शुभक्षेत्रदशा रात्रौ युक्ते पापशुभौ द्विज ॥९॥ पूर्वं कष्टं सुखं पश्चात्त्रिविंशकं प्रजायते ॥ पापसं पापशुभगौ पूर्वसौख्यं सभेन तत् ॥ शुभक्षेत्रे शुभं वाच्यं पापसं त्वशुभं फलम् ॥१०॥

### चरपर्यादशाफल

अब चरपर्यादशा का फल कहते हैं। जिसके जानने से मनुष्य दैवज्ञ होता है ॥१॥ मनुष्यो की सम्पूर्ण आयु के शुभाशुभ सुख दुःख आदि का निश्चय रूप से ज्ञाता होता है ॥२॥ जन्म समय के लग्न से आरंभ करके १२ भावों में पूर्वोक्तानुसार आयु के वर्ष होते हैं, उनका फल कहते हैं ॥३॥ जब जिस भाव का विचार करना है, तब देखना चाहिए कि-उस राशि से ५।८।९ स्थान में पापग्रह हो तो उम राशि की दशा दुःखदायक होती है ॥४॥ विचार्य राशि से ३।६ स्थान में पापग्रह हो तो जय आदि शुभ फल और शुभग्रह युक्त हो तो पराजय होती है ॥५॥ लाभ स्थान में शुभ और पाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो निश्चय लाभ होता है। हे द्विज! जब दशास्वामिनी राशि शुभ ग्रह युक्त हो ॥६॥ तथा राशि भी शुभस्थान में हो तो दशा का फल शुभ होता है। राशि यदि पापग्रह युक्त शुभस्थान में हो तो कल्याणकारी है ॥७॥ राशि पाप हो और उसमें शुभग्रह हो तो पहिले सुख होता है। पापराशि में पापग्रह हो तो वह दशा सर्वदुःख दाता है ॥८॥ शुभक्षेत्र की दशा रात्रि की हो उममें शुभपाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो ॥९॥ पहिले कष्ट और पश्चात् सुख होता है। पापराशि में शुभ और पापग्रह हो तो प्रथम सौख्य होता है। राशि यदि शुभ हो तो शुभ और पाप हो तो अशुभ फल होता है ॥१०॥

द्वितीये पंचमे सौम्ये राजप्रीतिर्जयो ध्रुवम् ॥ पापे तृतीयो सेटे चतुर्निग्रहण जयः ॥११॥  
चतुर्थे तु शुभे सौख्यमारोग्य त्वष्टमे शुभे ॥ धर्मवृद्धिर्गुहजनात्सौख्यं च नवमे शुभे ॥१२॥  
विपरीते विपर्याप्तो मिश्रमिथ प्रकीर्तितम् ॥ पापे भोगे च पापदेवैर्हृषीडा मनोव्यया ॥१३॥  
सप्तमे पापयोगान्यां पापे दारार्तिरीरिता ॥ चतुर्थे स्थानहानिः स्यात्पचमे पुत्रपीडनम् ॥१४॥  
दशमे कीर्तिहानिः स्यान्नवमे पितृपीडनम् ॥ पापाद्दुद्रगते पापे पीडा सर्वाप्यवधिषा ॥१५॥  
उक्तस्थानगतते सौम्ये ततः सौख्यं विनिर्दिशेत् ॥ केदस्थानगते सौम्ये लाभशुभजयप्रदः ॥१६॥  
जन्मकालग्रहः स्थित्वा अगोचरग्रहैरपि ॥ विचारितैः प्रवक्तव्यं तत्तद्वाशिदशाफलम् ॥१७॥  
यस्परानिः शुभाकार्तो यस्य पश्चाच्छुभपहाः ॥ तद्दशा शुभदर प्रोक्ता विपरीते विपर्ययः ॥१८॥

द्वितीय, पचम में सौम्यग्रह हो तो राजप्रीति और जय होती है। तृतीयभाव में पापग्रह हो तो शत्रु की पराजय तथा वधन और अपनी जय होती है ॥११॥ चतुर्थ भाव में शुभग्रह हो तो सुख और अष्टभाव में शुभग्रह हो तो आरोग्यता होती है। और नवमभाव में शुभग्रह हो तो पुत्र जनो में धर्मवृद्धि और सौम्य होता है ॥१२॥ विपरीत परिस्थिति हो तो विपरीत करना। पापराशि में पापग्रह हो तो हृषीडा और मनोव्यया होती है ॥१३॥ सप्तमभाव में पापग्रह के योग में या स्थिति में भार्या तो कष्ट होता है। चतुर्थभाव में पापयोग हो तो स्थान हानि तथा पचमभाव में पापयोग में पुत्र को पीडा होती है ॥१४॥ दशमभाव में पापयोग में कीर्तिहानि

तथा नवम मे पापयोग से पितृपीडा होती है। और यदि पापग्रह से ११वे भाव मे भी पापग्रह हो तो अवाध पीडा होती है॥ १५॥ तथा ११ मे सौम्य ग्रह हो तो सौख्य होता है। यदि केन्द्र स्थान मे सौम्य ग्रह हो तो लाभ और शत्रु पर जय होती है॥ १६॥ इस प्रकार जन्मकाल की ग्रह स्थिति तथा वर्तमान ग्रहस्थिति का विचार करके ही तत् २ राशि दशा का फल कहना चाहिए॥ १७॥ जिस जातक की राशि ग्रह युक्त हो और राशि के पृष्ठभाग मे भी शुभग्रह हो वह दशा शुभ फलदायिनी होती है और विपरीत होने से विपरीत फल होता है॥ १८॥

त्रिकोणरंध्ररिष्कस्थैः शुभपार्षः शुभाशुभम् ॥ तद्दशा प्रदरशीषु वक्तव्यं फलमन्यथा ॥१९॥  
 मेपकर्कतुलानकराशीनां च यथाक्रमम् ॥ बाधास्थानादिसप्रोक्ता कुंभगोसिंहवृश्चिकाः ॥२०॥  
 पाकेश्वरांतराशां वा बाधास्थाने शुभोत्तरे ॥ स्थिते सति महाशोको बंधनं व्ययनाराणम् ॥२१॥  
 उच्चस्वर्क्षग्रहे तस्मिञ्छुभं सौख्य घनागमः ॥ तच्चून्यं चेदसौख्य स्यात्तद्दशा न फलप्रदाः ॥२२॥  
 बाधकव्ययपद्भे राहुयुक्ते महद्भयम् ॥ प्रस्थानं बंधन-प्राप्ती राजपीडा रिपोर्भयम् ॥२३॥  
 रव्यारराहुशनयो भुक्तिराशी स्थिता यदि ॥ तद्वाशियुक्ताः पतनं राजकोपान्महद्भयम् ॥२४॥  
 भुक्तिराशित्रिकोणे तु नीचखेटः स्थितो यदि ॥ तद्वाशौ वा युते नीचे पापे मृत्युभय बदेत् ॥२५॥  
 भुक्तिराशी स्वतुगस्थे त्रिकोणे वापि तुंगमे ॥ यदा भुक्तिदशा प्राप्ता तदा सौख्यं लभेश्वरः ॥२६॥  
 नगरग्रामनाथत्व पुत्रताम घनागमम् ॥ कल्याणभौमभाष्यं च सेनापत्य महोन्नतम् ॥२७॥

'५।८।९।१२' भावो मे शुभ तथा पाप दोनो प्रकार के ग्रह हो तो मिश्रित फल होता है उस राशि दशा मे मिश्रित फल कहना चाहिए॥ १९॥ मेप, कर्क, तुला, मकर राशियों के फल के प्रतिबधक स्थान क्रम से कुंभ, वृष, सिंह, वृश्चिक है॥ २०॥ दशाप्रद राशि स्थिर द्विस्वभाव हो और उसके बाधा स्थान मे पापग्रह हो तो महाकलेश, बंधन, व्यय और नाश होता है॥ २१॥ तथा उस दशाराशि मे उच्च का या स्वगृही ग्रह हो तो शुभ, सौख्य और धनलाभ होता है। यदि वह राशि ग्रह शून्य हो तो अशुभ या फलहीन होती है॥ २२॥ बाधक स्थान से ६।८।१२ राहुयुक्त हो तो महान् भय होता है। यात्रा बंधनप्राप्ति, राजा तथा शत्रु से पीडा और भय होता है॥ २३॥ सूर्य, मंगल, शनि, राहु ये ग्रह यदि दशा राशि मे या अन्तरदशा राशि मे हों तो पतन और राजकोप से भय होता है॥ २४॥ दशाराशि से त्रिकोण मे यदि नीच राशिगत ग्रह हो अथवा उस राशि मे ही नीचस्थ या पापग्रह हों तो उसके भोगकाल मे मृत्यु का भय होता है॥ २५॥ भुक्तिराशि मे उच्चस्थ ग्रह हो अथवा उससे त्रिकोणभाव मे उच्चस्थ ग्रह हो तो उस दशा के भोगकाल मे मनुष्य को बहुत सुख होता है॥ २६॥ वह मनुष्य नगर तथा ग्राम का स्वामी, घन, पुत्र प्राप्ति, सेनापति का बड़ा ऊँचा पद प्राप्ति करता है॥ २७॥

पाकेश्वरो जीवदृष्टः शुभराशिस्थितो यदि ॥ तद्दशाघनप्राप्तिर्भगल पुत्रसप्ततम् ॥२८॥  
 सितासितागुराश्याश्च सूर्यस्य रिपुराशयः ॥ कौर्वितीलिपटश्रेदोर्भीमस्य रिपुराशयः ॥२९॥  
 घटमीननृयुक्तौलिकन्या जस्य ततः परम् ॥ कर्कमीनालिकुंभाश्च राशयो रिपुवत्समृताः ॥३०॥  
 मेघसिंहधनुः कौर्विकर्कटाः शनिशत्रवः ॥ वृषतीलिनृयुक्कन्याराशयो रिपुगुतो ॥३१॥  
 सिहालिकर्कचापाश्च शुक्रस्य रिपुराशयः ॥ एव ग्रहांतरदशां चिंतयेत्कोविदो द्विज

॥३२॥ ये राजयोगदा ये च शुभमध्यगता ग्रहाः ॥ यस्माद्दाऽपित्रिकोणाः स्युः शुभाशुभफल  
ग्रहाः ॥३३॥ तद्दशायां शुभं ब्रूयाद्वाजयोगादिसंभवम् ॥ शुभद्वयांतरगतः पापोपि शुभदः फलम्  
॥३४॥ गताशुभदशामध्यं दशासौम्यस्य शोभना ॥ शुभं यस्य त्रिकोणस्य तद्दशापि शुभप्रदा  
॥३५॥ आरंभांतौ मित्रशुभराशयोर्वदि फलं शुभम् ॥ प्रतिराशैककोब्द स्याच्चासनीयं शुभ  
द्विज ॥३६॥

दशा स्वामी गुरुदृष्ट ही या शुभराशि स्थित हो तो उसकी दशा में धन प्राप्ति तथा पुत्रोत्पत्ति होती है ॥२८॥ (ग्रहों की शत्रुराशि) सूर्य की शत्रुराशि २।५।७।१०।११ हैं। चन्द्रमा की शत्रुराशि ७।८।११ तथा मंगल की शत्रु राशि १२९। ३।६।७।११।१२ हैं। इसके बाद बुध की शत्रु राशि ४।८।११।१२ हैं ॥३०॥ गुरु की शत्रुराशि २।७।३।६ हैं। और शनि की शत्रुराशि १।५।८।९।४ हैं ॥३१॥ तथा शुक्र की शत्रु राशि ४।५।८।९ हैं। इन शत्रु राशियों को ध्यान में रखते हुए अन्तरदशा का विचार करें ॥३२॥ जो ग्रह १-राजयोगकारक है तथा २-जो ग्रह शुभ ग्रहों के मध्य में है एवं ३-जिस ग्रह से त्रिकोण में शुभग्रह हो वह ग्रह शुभफल देता है ॥३३॥ १-राजयोग कारक ग्रह की दशा में राजयोग के अनुसार जो शुभ फल होना संभव है वह शुभ फल होता है। २-इसी प्रकार दो शुभग्रहों के मध्य में जो पापग्रह है वह भी शुभफलकारक ही है ॥३४॥ अशुभग्रह की दशा में शुभ ग्रह का अंतर शुभ होता है। ३-इसी प्रकार जिस ग्रहके त्रिकोणस्य शुभग्रह हो उसकी दशा भी शुभफलदात्री होती है ॥३५॥ जिस पापदशाका आरंभ (दशा) और अंत (दशा) शुभ या मित्रराशिकी दशामें हो तो वह दशा भी शुभफल देनेवाली होती है। इसी प्रकार प्रति राशि एक २ वर्ष चलाना चाहिए ॥३६॥

आरंभात्त्रिकोणे तु सौम्ये तु शुभमावहेत् ॥ शुभराशौ शुभारभे दशा स्यादिति शोभना  
॥३७॥ शुभादिराशौ पापश्रेद्दशारंभे शुभौ द्विज ॥ शुभारंभे वा कथेति आरंभस्य शुभ भवेत्  
॥३८॥ नीचाशौ तद्दशाद्यतं भाग्यविपर्ययः ॥३९॥ ग्रह स्थितो नीचलेटस्त्रिकोणे वाय  
राशियः ॥४०॥ तदा राशेश्चरे नीचे संबधो नीचलेटकैः ॥ भाग्यस्य विपरीतत्व करोत्येव  
द्विजोत्तम ॥४१॥ राहोः केतोश्च कुंभादि वृश्चिकादि चतुष्टयम् ॥ कुंभे तत्र सभारंभस्तद्दशायां  
शुभं भवेत् ॥४२॥ यद्दशायां शुभं ब्रूयात्संचेन्मकरसंस्थितः ॥ यस्मिन् राशौ दशांतः  
स्फुरन्स्मिन्नुष्टे पुतेषु अ ॥४३॥ शुक्रेण विद्युत्वा वा स्याद्वाजकोपाद्दशाय ॥  
दशांतश्रेदरिलेने राहुदृष्टिपुतेषु वा ॥४४॥ इदं फल शनेः पाके न विचिन्त्य द्विजोत्तम ॥  
दशाप्रदे नकरराशौ न विचित्यमिदं फलम् ॥४५॥

आरंभिक राशि में त्रिकोण में शुभग्रह हो तो शुभफल होना है। मूलदशा भी शुभ हो और अन्तरदशा भी शुभ हो तो अतिशुभ फल होता है ॥३७॥ शुभराशि में पापान्तर भी जब शुभ हो सकता है। तब शुभराशि में शुभान्तर के शुभ होने में तो कठना ही क्या है ॥३८॥ दशा के आदि तथा अन्त में नीच, शत्रुस्य ग्रहयोग युक्त राशि का अन्तर हो तो भाग्य का विपर्यय (उलटा निरूपण होना) ही जानना ॥३९॥ त्रिम राशि में अथवा त्रिम राशि के त्रिकोण

नीचस्य ग्रह हो॥४०॥ तथा जब दशाराशि का स्वामी नीच ग्रह हो, अथवा नीचग्रहो से सम्बन्ध हो तब हे द्विजोत्तम! भाग्यभाव की हानि ही करता है॥४१॥ राहु तथा केतु के लिए क्रमशः कुभादि चार तथा वृश्चिकादि चार राशियों में दशा का आरम्भ हो तो दशा शुभ होती है॥४२॥ जिस दशा को शुभ माना जाय वह दशा यदि मकर राशि की हो अथवा दशात राशि यदि राहु केतु से दृष्ट या युक्त हो॥४३॥ अथवा शुक या चन्द्रमा से युक्त या दृष्ट हो तो राजा के कोप से धन क्षयकारी दशा जानना। यही फल जहा शत्रुराशि में दशा का अंत होता हो अथवा राहु की दृष्टि से युक्त या दृष्ट हो तो भी जानना॥४४॥ यह फल शनि की दशा में तथा मकर राशि दशा में नहीं देखना॥४५॥

राहोर्दशाते सर्वस्य नाशो मरणवधने । देशाग्निर्वासनं वा स्यात्कण्टं वा महवद्भुते ॥४६॥  
 तत्रिकोणगते पापे निश्चयाद्दुःखमादिशेत् ॥एयं शुभाशुभं सर्वं निश्चयेन ब्रवेद्बुधः ॥४७॥  
 राह्णाविस्थितराशिः स्याद्दशाप्रदो भवेन्नरः ॥ तत्र कालेपि पूर्वोक्तं चितनीयं प्रपन्नतः ॥४८॥  
 दशारंभो दशातो वा मकरे चेतुशोभनम् ॥ तस्मिन्नेव च राहुश्रेत्रिरोधी ब्रह्मनाशनः ॥४९॥  
 यत्र क्वापि च मे राहो दशार भे विनाशनम् ॥ गृहभ्रंशः समुद्दिष्टो धने राहुधनीभृतः ॥५०॥  
 चंद्रशुक्रौ द्वावशे चेद्राजकोपो भवेद्ध्रुवम् ॥ भौमकेतू तत्र यदि वधाप्रेर्महती ध्याया ॥५१॥  
 चंद्रशुक्रौ धनेष्विप्र यदि राजा प्रयच्छति ॥ दशारभेन्तरध्याश्च द्वितीयस्थमिदं फलम् ॥५२॥  
 एवमर्गलफलार्थे च ब्रह्मदेवप्रदर्शितः ॥ यस्य पापः शुभो वापि ग्रहस्तिष्ठेच्छुभार्गले ॥५३॥ तेन  
 दृष्टेक्षितं लग्नं प्राबल्यापोपकल्पते ॥ यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलस्थितिः॥५४॥ सौमि  
 दृष्टस्थिते लग्ने विपरीते फलं भवेत् ॥ तद्दृष्टेऽपि शुभं सूयाग्निर्विशकं द्विजोत्तमा॥५५॥

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे चरदशाफलकथनं नाम  
 षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥

राहु की दशा के अन्त में सर्वस्य का नाश तथा मरण एवं वधन होता है। या देशत्याग अथवा महान् कष्ट होता है॥४६॥ और राहु या दशाप्रद राशि से त्रिकोण स्थान में पापग्रह हो तो निश्चय ही दुःख होता है। इस प्रकार कही हुई रीति से सब योगायोगों का विचार करके निश्चित फल कहना चाहिए॥४७॥ यदि दशाप्रद राशि राहु आदि पापग्रह युक्त हो तो उस दशा में भी पूर्वोक्त अशुभ फल होता है॥४८॥ दशा का आरम्भ और अन्त मकर राशि में हो तो शुभफल होता है। और उसी राशि में यदि राहु हो तो शुभफल का निरोध करके धननाश कारक होता है॥४९॥ जिस राशि में राहु हो उस राशि की दशा नाशकारक होती है। यदि राहु धन स्थान में हो तो धनी मनुष्य के भी घर का नाश करता है॥५०॥ चन्द्र तथा शुक्र जिस राशि के १२ भाव में हो तो राजकोप होता है। यदि १२ स्थान में भौम और केतु हो तो अग्नि से मृत्यु या व्यथा होती है॥५१॥ चन्द्रमा और शुक्र यदि धन राशि में हो तो राजा से धनलाभ होता है। दशा के आरम्भ तथा अन्त में भी धनलाभ होता है॥५२॥ जैसे स्थान आदि के द्वारा जो योग और फल दशाप्रद राशि के लिए कहे गये हैं, वे सब योग अर्थात् योग के विचार में भी प्रयुक्त करना चाहिए। ऐसा ही प्रथम ब्रह्मा ने कहा है। जिस दशाप्रद राशि में

अर्गला मे पाप या शुभ ग्रह हो ॥५३॥ उस ग्रह से यदि लग्न दृष्ट या युक्त हो तो योग की प्रबलता समझना। इसी प्रकार अर्गला के प्रतिबन्धक योग मे भी यदि कोई ग्रह की दृष्टि हो तो ॥५४॥ वह योग भी दृष्ट या युक्त लग्न के लिए विपरीत योग होने पर विपरीत फलकारक होता है। और शुभयोग यदि प्रतिबन्धित नहीं हो तो शुभ फल निःसन्देह होता है ॥५५॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० चरदशाफलकथन नाम  
पट्टचत्वारिंशोऽध्याय ॥४६॥

### अथ दशावाहनमाह

अधुना सप्रबक्ष्यामिदशावाहनभुक्तमम् ॥ प्राणिना च हितायैव कथयामि तवाप्रत ॥१॥  
गर्दभो घोटको हस्ती महिषो जम्बुसिंहकौ ॥ काको हसो मयूरश्च नवैते नरवाहना ॥२॥  
स्वकीयजन्मनसत्राद्गणयेत्प्रभावधि ॥ नवमिस्तु हरेद्भाग शेष तु राशिवाहनम् ॥३॥  
दशाप्रवेशे खरवाहनश्च उत्पन्नभोगी जडतासमेत ॥ लज्जाविहीनो धनधान्यहीनः स्यान्मानवो  
वस्त्रविदर्जितश्च ॥४॥ चपलचचलता बहुभक्षकः प्रकटबुद्धिसयोज्यधूपति ॥ दृढतनुर्ब  
हुकार्यकर परस्तुरगयोर्पवि वाहनसंस्थित ॥५॥

#### दशावाहन कथन

अब दशा वाहन का उत्तम प्रकरण कहते हैं जिससे प्राणियों का हित हो ॥१॥ गर्दभ घोडा, हाथी, महिष, जम्बु (सियार) सिंह काक (कौवा), हस, मयूर ये नौ दशा के वाहन है ॥२॥ अपने जन्म नक्षत्र से सप्तस्पष्ट के नक्षत्र तक गणना करके ९ का भाग देना। शेष रह सो वाहन जानना ॥३॥ दशाप्रवेश मे यदि गर्दभ वाहन हो तो कमाई होने पर खानेवाला मूर्ख, लज्जाहीन, धनधान्यहीन, वस्त्रादि हीन दीन होता है ॥४॥ यदि अश्व हो तो चपल, चचल, बहुभक्षी, बुद्धिमान्, शब्दकारी, सेनापति तथा रङ्गरीरवाना परम उद्यमी होता है ॥५॥

नानाकार्यकृतो हि मूर्खजननो देवाधिपो वाहनः सतप्तो बहुठानताशुभगतिः सेनापतिः शोभनः ॥६॥ सर्वं सौख्यकरः सुभूषणधरः स्याच्चचलो द्रुपता पाकोय यदि वाहनो गजपतेर्नानाकलाकौशलः ॥७॥ महिषयोर्बलबुद्धिविहीनता जयमयः प्रबलाप्रिभयातुरम् ॥ कटकमो प्रबले बलसप्तुतो महिषयोर्पदि वाहनता भवेत् ॥८॥ जवुके बहुतरैव चचला व्याधिदुःखपरिपीडितागता ॥ स्तेशता रिपुजनाच्च पीडनं धान्यनाशमतिसद्यो भवेत् ॥९॥ दशाप्रवेशे यदि वाहनश्च सिंहो बलिष्ठो विविधे प्रजारः ॥ उत्पन्नभोगी रिपुनाशकारी स्याद्वाहने केतरिणा विशेषः ॥१०॥ काके वाहनसंस्थिते यदि दशा स्याच्चचलो निर्भयो चासारी मलिनः कुबेधपरितो नीचैर्जेन पूजितः ॥ स्थाने राजमय तवारिपुभय मानापमान नरा दुष्टार्तिः क्तह कुचेष्टितनरः स्त्रीद्वेषकारी भवेत् ॥११॥ जनकतानिधिकैलिसमन्वितो द्विजपतेर्बहुजात्मसुखान्वितः ॥ सदशने मतिना प्रबलापिता मुकथिता सलुहसपवाहन ॥१२॥

मधुरवाहनतो बहलं सुखं धृतिफलाकुरालोऽमलकेलिकृत् ॥ मधुरवाक्ययुतो मधुरप्रियः  
सदसमेन नरस्य समन्वितः ॥१३॥

यदि जातक की दशा का वाहन हापी हो तो अनेक कार्याकार्यकारी मूर्ख चिन्तित हठी  
किन्तु शुभगति तथा योग्य सेनापति सुन्दर सजीला ॥६॥ सुखकारी, चचल एव अनेक कला  
कौशल वाला होता है ॥७॥ यदि दशा का वाहन महिष हो तो जातक बुद्धिबल से हीन प्रबल  
अग्निभय से आतुर, दो लडनेवाले साडो की तरह लडाई में सबसे आगे रहता है ॥८॥ यदि  
सियार दशावाहन हो जो जातक अतिचचल व्याधि दुःखपीडित स्त्रीवाला, श्लेशयुक्त तथा  
शत्रु से पीडित तथा धनधान्यहीन होता है ॥९॥ यदि सिंह दशावाहन हो तो जातक बलवान्  
तथा अनेक रीति से भोगो को प्राप्त करनेवाला, शत्रुहन्ता होता है ॥१०॥ यदि कौवा वाहन  
हो तो जातक चचल निर्भय पर्यटनप्रिय मलिन कुवेशधारी नीचजनो में सगतिबाला तथा राज  
एव शत्रुभययुक्त, मानापमान में समान, रोमी, कलह कामी, कुचेष्टाकारी तथा स्त्री का द्वेषी  
होता है ॥११॥ यदि हंस वाहन हो तो अतीव सुन्दर कलाप्रेमी, बहुत सन्तान सुखयुक्त सभा  
चतुर, प्रबल मतिमान् होता है ॥१२॥ मयूर वाहन हो तो बहुत सुखी, धैर्यवान्, कलाकुशल,  
क्रीडा प्रेमी, मधुरभाषी मधुरभोजन प्रिय होता है ॥१३॥

### अथ सुदर्शनचक्रमाह

विश्वचक्र कालचक्र दिव्यचक्र सुदर्शनम् ॥ विष्णोः कराबुजावासमीडे तज्जानमद्भुतम् ॥१४॥

### पुनः समस्तज्योतिःशास्त्रतत्त्वकामधेनुरूपं सुदर्शनचक्रमाह

सुदर्शनं द्वादशारं जन्मभेद्वर्कराशितः ॥ केद्रकोणाष्टगो राहुः पापार्थं च शुभो मुदे ॥१५॥  
तत्त्वाद्यैर्वर्षमासाद्यद्येकघण्टान्प्रवर्तयेत् ॥ विरिष्कारिशुभः पार्ष्णिपडायेषु वै शुभम् ॥१६॥ तं त  
भाव प्रकल्प्यांगं तत्तत्तन्वादिज फलम् ॥ गुरुपदेशात्संवाच्यं भोजन स्वप्नपूर्वकम् ॥१७॥  
भावेशादिद्वादशानां दशवर्षेषु कल्पयेत् ॥ तदाद्यतर्दंशास्तद्गन्मासादी तद्दलैः शुभाः ॥१८॥ सुदर्शन  
द्वादशारं वृत्तत्रयसमन्वितम् ॥ पूर्ववृत्ते जन्मलप्राप्त्वा वा खेचरसयुताः ॥१९॥ तद्दूर्ध्ववृत्ते चद्राच्च  
भावाः खेटसमन्विताः ॥ तद्दूर्ध्ववृत्ते सूर्याच्च भावाः लेख्याः सखेचराः ॥२०॥

### सुदर्शन चक्र

जो विश्व-सत्तार वा चक्र समयफलमूचक है, देवता भी जिसे चाहे ऐसा यह सुदर्शन नामक चक्र  
के समान ज्योतिपशास्त्र का सारभूत चक्र है, अतः सर्वश्रेष्ठ होना से इसकी प्रशंसा करते हैं भगवान्  
विष्णु के करकमल में रहनेवाले चक्र की बन्दना करते हैं ॥१४॥ समस्त ज्योतिपशास्त्र वा तत्त्व  
कामधेनु के समान यह सुदर्शन चक्र है। १२ कोष्टक का चक्र बनावे। उसके (अतर्वाहारूप से तीन  
विभाग करे) अन्तर के भाग में जन्मकुडली, मध्य में चन्द्रकुण्डली, बाह्य चक्र में सूर्यकुण्डली लिखे। उ  
समें देखना कि केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम भाव में राहु या पापग्रह हों तो दुःखदायी और शुभग्रह हो  
तो सुखदायक होते हैं ॥१५॥ प्रत्येक कोष्टक में प्रति कोष्टक १-१ वर्ष तथा मास एवं २॥-२॥ दिन  
की आवृत्ति करे। छठे तथा बारहवें घर में शुभग्रह न हो और ६।३।११ में पापग्रह हो तो शुभ

है। १६॥ प्रत्येक भाव को तद्भावज फल विचारार्थं लग्न कल्पना करके उस उस भाव से उसके फल का निर्देश करे। गुरु के उपदेशानुसार प्रातःकाल से शयनकाल तक का फल कहना चाहिए। १७॥ द्वादश भावों में प्रथम प्रत्येक भाव में १०-१० वर्ष की कल्पना करे। पश्चात् उनमें १०-१० मास की अन्तर्दशा जिस भाव की दशा होगी उसी भाव से आरंभ होगी। १८॥ यह सुदर्शन चक्र बारह कोष्टक का है। तीन वृत्त (धरे) से युक्त है। पहले वृत्त में जन्म लग्न से १२ भाव लिखे और यथास्थान ग्रह लिखे। १९॥ उसके ऊपर के वृत्त में चन्द्रराशि में भाव और ग्रह लिखे। उसके ऊपर सूर्यराशि से भाव और ग्रह लिखे। २०॥

वृत्तत्रयेऽपि ये खेटा यत्र राशो व्यवस्थिता ॥ ते तत्र सत्वेत्यास्तस्माद्भ्रावात्त्रिरीकयेत् ॥२१॥  
यद्यद्दृष्टे तु यद्भ्रावात्केन्द्रकोणाष्टगत्तम् ॥ पापा वा यत्र बहवस्तत्तद्भ्रावविनाशनम् ॥२२॥ यत्र  
भावे संहिकेयोऽवश्य तद्भ्रावहानिद ॥ यस्माद्भ्रावात्केन्द्रकोणाष्टमे सौम्या शुभप्रदा ॥२३॥ तदा  
तद्भ्राववृद्धिं स्यात्त्रिभूतेषु शुभा ग्रहा ॥ केन्द्राद्विस्वान्गाल्ते चेच्छुभाधिस्यफलप्रदा ॥२४॥  
तथा पापक्षणास्तत्र पापारिष्टफलप्रदा ॥ शुभेन वीक्षिता सौम्य फल तद्भ्रावज समम् ॥२५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे चरदशाफलादि कथन  
नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥५७॥

(पूर्वखण्ड समाप्त)

तीनों वृत्तों में जो ग्रह जिस भाव में हो वही लिखे। पश्चात् देखो। २१॥ जिस जिस वृत्त में जिस जिस भाव से केन्द्र त्रिकोण तथा अष्टमभाव में राहु हो या बहुत पापग्रह हो तो उस उस भाव का नाश होता है। २२॥ और जिस भाव में राहु हो उसका अवश्य ही नाश होता है। जिस भाव से केन्द्र त्रिकोण तथा अष्टम में सौम्य ग्रह हो वह भाव श्रेष्ठ है। २३॥ तो उन भाव की वृद्धि होती है। तीनों वृत्तों में यदि शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण भाव में हो तो अधिक शुभ फलप्रद होते हैं। २४॥ यदि उन स्वानों में पापग्रह हो तो दुःख अरिष्ट फल देनेवाले होते हैं। और यदि वे पापग्रह शुभग्रहों में दृष्ट होते तो समान फल होता है। २५॥

उदाहरण चक्र

सुदर्शन चक्र सम्बन्धी श्लोकों का तात्पर्यार्थ—

एक चक्र इस प्रकार बनाना चाहिए जिसमें १२ १२ घरों के ३ चक्र हों जिसका चित्र इसमें दिखाया गया है। उसमें भीतर के १२ घरों में ग्रह सहित लग्नकुण्डली, बीच के १२ घरों में ग्रह सहित चन्द्र कुण्डली तथा ऊपरके १२ घरों सहित सूर्य कुण्डली लिखना। अब यह चक्र तैयार है। इसमें अपने शरीर के लिये लग्न से तथा अन्य विचार के लिये उन उन पदार्थों के भाव को लग्न कल्पना करके तत् तत् भावों से विचार करना चाहिए। यह ऊपर कहा जा चुका है कि केन्द्र त्रिकोण तथा अष्टम भाव में राहु और पापग्रह अशुभ है। तथा शुभग्रह शुभ है। इस ग्रह स्थिति के विचार में स्वगृही मित्रगृहो, उच्च परमोच्चस्थ, मूल त्रिकोणस्थ स्वगवाशस्थ तथा शुभ वर्ग आदि ग्रह से सत्तत् भाव का फल श्रेष्ठ एव नीच परम नीच, शत्रु राशिस्य अन्त, शत्रु



नवाशस्य, शत्रु वर्गस्य, पापयुत अथवा दृष्ट ग्रह अशुभ फलदायक होता है। इस विचार में शुभ, पापग्रहो की दृष्टि का भी विचार करना चाहिए। प्रत्येक ग्रह की दृष्टि जितने पाद हो, शुभ और पाप की अलग अलग योग कर, शुभ और पापग्रहो की दृष्टि का अन्तर करके जो अधिक रहे उसके अनुसार शुभाशुभ फल कहना चाहिए।

इस चक्र में मनुष्य की पूर्णायु १२० वर्ष की सख्या को प्रथम १२ भागों में बाट कर चक्र के १-१ घरमें १०-१० वर्षकी कल्पना करे। प्रत्येक घरके वर्षों में उपर्युक्त ग्रह स्थिति के अनुसार शुभाशुभ फल का निर्णय करे तथा प्रत्येक १० वर्ष में अन्तरदशा रूप से १०-१० मास उस उस भाव से १२वें भाव तक कल्पना करे और ग्रह स्थिति के अनुसार फल का निर्णय करे। यह एक प्रकार है।

दूसरा प्रकार—चक्र के १२ भागों में जन्मलग्न से प्रत्येक भाव में ११ वर्ष की कल्पना करे। इस प्रकार १० आवृत्ति होने से १२० वर्ष की सख्या पूरी होती है। इसकी अन्तरदशा प्रत्येक भाव के १-१ वर्ष के १२ भाग कल्पना करके १-१ मास १-१ भाव पर रागझना चाहिए। इसका आरम्भ अपने उसी भाव से करना चाहिए कि जिसकी अन्तरदशा देखनी हो। इसी प्रकार १ मास के भी १२ भाग करने से २॥-२॥ दिन होते हैं। उनका विचार भी १२ भागों पर पूर्ववत् प्रत्यन्तर दशा के रूप में करना चाहिए। इसी प्रकार सूक्ष्मान्तर १२॥ घटिका और प्राणान्तर प्रायः १-१ घटिका का तत्त्वत् भाव पर कल्पना करके उपर्युक्त ग्रह योगानुसार वर्ष, मास, दिन, घटी तक का शुभाशुभ फल निर्णय कर सकते हैं। यह मुद्दर्शन चक्र सरल रूप से जातक का भूत भविष्य तथा वर्तमान मुख दुःख निर्णय करने में अत्यन्त उपयोगी है। और ज्योतिर्विदों के लिये कामधेनु रूप है।

### अथ राहुदृष्टिमाह

मुतमदननवाते पूर्णदृष्टि तमस्य युगतदशमगेहे चार्धदृष्टि ददति॥ सहजरिपुविपश्यत्याददृष्टि मुनींद्रा निजभवनमुपेतो लोचनाथ प्रदिष्ट ॥२६॥

#### राहु दृष्टि

राहु की दृष्टि पंचम, सप्तम नवम में पूर्ण। २।१० में अर्ध दृष्टि। ३।६ में पाप दृष्टि। और अपने भाव में दृष्टि हीन होता है॥२६॥

### अथ ग्रहाणामुदयवर्षाण्याह

आकृत्यो २२ जिन २४ समिता गजकरा २८ नेत्राग्रय ३२ घोडश १६ स्यत्वा २४ न्यगुणा ३६ द्विवेद ४२ प्रमिता मूर्धादिकाना समा ॥ यखेट स्वग्रहे स्वतुगभवने षड्वर्षाशुद्धश्रपस्त-  
स्याब्दे हि नृणा भवेदतिमुस भाग्योदयो निश्चितम्॥२७॥

#### ग्रहों के भाग्योदय वर्ष

सूर्यादि ग्रहों के य वर्ष भाग्योदय के लिये नियत हैं। २२, २४, २८, ३२, ३६, २४, ३६ और ४२ हैं। जो ग्रह अपने घर में उच्च स्थान में, षड्वर्ष में शुभ हो, उसी ग्रह के अनुसार उम जातक का भाग्योदय ऊपर कथित ग्रह के वर्ष में निश्चित जानना॥२७॥

इति श्रीबृहत्साराशरह राशास्त्रे पूर्वखण्डे ज्योतिर्विदो० श्रीरामनारायणत्नजतराचन्द्र-  
शास्त्रिविरचिताया भावप्रकाशिकाटीकाया सप्तचत्वारिंशोऽध्याय ४७॥

समाप्तश्राव्यं पूर्वखण्डः ॥ श्रीरस्तु ॥

## अथ उत्तरखण्ड प्रारभ्यते

मैत्रेय उवाच—भगवन्सर्वमाख्यातं जातकं विस्तरेण मे ॥ सप्तह्रस्वापुतप्रंयरशीत्याध्यायसंपूर्तः ॥१॥ संकरात्तत्फलानां तु ग्रहाणां गतिसंकरात् ॥ नान्येन हीक्षणस्येदमिति वक्तुमलं नराः ॥२॥ क्लीं पुगे ततोऽल्पैव बुद्धिः पापोत्तरा नराः ॥ अतो न चास्य प्रचयगमनं न प्रयोजनम् ॥३॥ अत्र त्रेतायुगे केचिद्ब्रह्मापरे च कृते युगे ॥ कुशाग्रमतयः सर्वे पुण्यभाजश्चिरायुषः ॥४॥ अतोऽल्पबुद्धिगम्यं यच्छास्त्रमेतद्वदस्व मे ॥ लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ॥५॥

### उत्तरखण्ड प्रारंभ

मैत्रेयजी ने कहा-हे भगवन्! पूर्वभाग में आपने ८० अध्यायों के ११,००० श्लोकों से जातकशास्त्र का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है ॥१॥ किन्तु ग्रहों की गति आदि का विचार अति कठिन होने से फलनिर्णय करना अति कठिन है ॥२॥ क्योंकि-फलनिर्णय के प्रकार अति विस्तृत और दुरूह है, अतः सरल सुबोध प्रक्रिया युक्त फलनिर्देश का प्रकार कहिये कि जिसके अनुसार कार्य करने से फलज्ञानरूप प्रयोजन सिद्ध हो ॥३॥ सत्ययुग, त्रेता, द्वापरयुगी में तो मनुष्य दीर्घायु परम मेधावी तथा पुण्यात्मा थे अतः वे इस गहन ग्रन्थ से फलनिर्देश करने में भी समर्थ थे ॥४॥ परन्तु इस कलियुग में तो (बैसे दीर्घायु और तीक्ष्ण बुद्धि सम्पन्न मनुष्य न होने से) सर्वसाधारण बोधगम्य सरल मार्ग का उपदेश करिये, जिससे मनुष्यों को सुख दुःख का ज्ञान हो और आयु के निर्णय का प्रकार भी विस्तार पूर्वक कहिये ॥५॥

पराशर उवाच-साधु पृष्टं त्वया ब्रह्मन्वदामि तव सुव्रत ॥ लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ॥६॥ सकरस्याविरोधं च शास्त्रस्यापि च सिद्धये ॥ प्रयोजनस्य लोकानामुपकाराय तच्छृणु ॥७॥ सप्रतिदिव्यपर्यता भावाः सत्रानुरूपतः ॥ फलदाः शुभसदृष्टा युक्ता वा शोभना मताः ॥८॥ पापदृष्टयुता भावाः कल्याणोत्तरवायकाः ॥ नितरां शत्रुनीचस्पर्शं च मिश्रोच्चगैश्च तैः ॥९॥ एवं सामान्यतः प्रोक्तं होराविद्भिस्तु मूर्धिरभिः ॥ मर्यतल्लकलं प्रोक्तं पूर्वाचार्यानुवर्तिना ॥१०॥ आयुश्च लोकयात्राश्च शास्त्रेऽस्मिस्तत्प्रयोजनम् ॥ निश्चेतुं तत्र शक्नोति वसिष्ठो वा बृहस्पतिः ॥११॥ किं पुनर्मनुजास्तत्र विशेषात्तु कर्तुं युगे ॥ नष्टादियु च नातीयं द्रेष्काणादिकलेषु च ॥१२॥

पराशरजी ने कहा-हे मैत्रेय! आपने सुन्दर प्रश्न किया है, अब हम वह शास्त्र कहते हैं कि जिससे जातक का शुभाशुभ तथा आयु का ठीक ठीक ज्ञान हो ॥६॥ और तुमने जो यह कहा है कि-पूर्वभाग में वर्णित रीति से फलनिर्णय अतिकठिन हो गया है सो उसकी भी स्पष्टता के लिए तथा विरोध परिहार के लिए भी विशेषरूप से वर्णन करते हैं ॥७॥ इस शास्त्र में लग्न आदि १२ भाव ही फलनिर्देश के मूल हैं। वे शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो शुभफल, अशुभ (पाप) ग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल देते हैं ॥८॥ उसमें भी शत्रु, नीच अस्त में युक्त दृष्ट में नष्ट फल की अधिकता और मित्र, उच्च, स्वर्गही आदि युक्त, दृष्ट में शुभ फल की अधिकता होने

है॥१॥ जैसे पूर्वाचार्यों ने कहा है उसी प्रकार से हमने कहा है॥१०॥ यह ज्यौतिष शास्त्र अति गम्भीर और दुर्बोध है, मनुष्यों का शुभाशुभ तथा आयुनिर्णय में महान् आचार्य भी असमर्थ हैं, साधारण मनुष्य तो कैसे समर्थ हो सकते हैं॥११॥ और नष्ट वस्तु ज्ञान में तो द्रेष्काण, नवाश आदि के विचार द्वारा फल कहना तो अतिकठिन है॥१२॥

आचार्यस्य मुखादेतच्छास्त्रं तु शृणुयाद्बुधः ॥ संप्रदायेन यः श्रांतश्चास्मिञ्छास्त्रे महानतिः ॥१३॥ कर्मज्ञानविदा वेदो द्विधा यद्वत्तदाऽऽह्वये ॥ होराशास्त्रं द्विधा प्रोक्तं सकीर्णनिश्चयादिति ॥१४॥ प्रोक्तः संकीर्णभागस्तु निश्चयांशस्तु कथ्यते ॥ यो वेति सम्यगेतत् देवज्ञः स उदाहृतः ॥१५॥ भावदृष्ट्यादियु प्रोक्तानयान्मसम्यग्विचार्य च ॥ समीचीनास्तु संगृह्य विरुद्धास्तु परित्यजेत् ॥१६॥ आयुर्दायैः परं योगैः फलान्यष्टकवर्गतः ॥ तन्वादीनां तु भावानां सूक्तैर्भावादभिः फलैः ॥१७॥ ज्ञात्वाऽऽदौ करणं स्थानं विंदुरेखे च वर्णणाम् ॥ क्रमादष्टकवर्गस्य पृथक्कृत्य फलं वदेत् ॥१८॥

अतः यह शास्त्र गुरुमुखद्वारा अध्ययन करके परिशीलन करने से उत्तरोत्तर ज्ञान विस्तार होगा॥१३॥ यह शास्त्र वेद के समान ही है, जैसे वेद ज्ञान और कर्म का प्रतिपादक है उसी तरह यह शास्त्र भी १—'सकीर्ण' और २—'निश्चय' भेद से दो प्रकार का है॥१४॥ उसमें सकीर्ण भाग पूर्वखण्ड में कहा जा चुका है और 'निश्चय' भाग अब कहते हैं॥१५॥ जन्मलग्न आदि १२ भावों पर जो सप्तम आदि स्थानों में पूर्णदृष्टि आदि दृष्टि कही गई है, उसका स्पष्ट करके शुभ दृष्टि में पापदृष्टि हीन करके शुभफल निर्णय करना॥१६॥ पश्चात् प्राप्त शुभाशुभ के निर्णय के लिए प्रथम आयु का परिमाण देखना चाहिए (नबोकि आयु ही नहीं होगी तो शुभाशुभ फल को भोगेगा ही कौन?) बाद शुभाशुभयोग और अष्टकवर्ग जन्म फल बलानुसार निश्चित करना॥१८॥

तनुस्यांयुस्त्रिररिणेषु पंच कामे सुखेर्णवाः ॥ अरो भाग्ये त्रयः पुत्रे षट् करी खे भवे च भूः ॥१९॥ लघ्रेदुजीवशुक्रजास्तनी खेमरणेषि च ॥ रविभौमार्किचदार्पा ध्यये जेदुसितार्थकाः ॥२०॥ सुखे होरेदुगुजाश्च धर्मेर्कार्किकुजा अरो ॥ होरजायन्दवः कामे भवे दैत्येद्रपूजितः ॥२१॥ सहजेर्कार्किशुक्रार्थभौमाःखे गुरुभार्गवी ॥ सुतेर्कार्किन्दुलप्रारशुकाः स्युः करणं रवैः ॥२२॥

(अब 'अष्टक वर्ग' का फलाफल निर्णय करने के लिए सूयादि सात ग्रह और लग्न इनकी विन्दु तथा रेखा के स्थान सबके भिन्न भिन्न कहते हैं। इस प्रकरण में विन्दु की 'करण' सजा है। और रेखा की 'स्थान' सजा है) प्रथम सूर्य की करण सख्या वही जाती है। सूर्य में प्रथम, द्वितीय, तृतीय, अष्टम, द्वादश भाव में पांच पांच करण हैं। चतुर्थ, सप्तम में चार चार करण। तथा छ नी में तीन २ करण। पचममें छ करण। दशममें दो करण। एकादशमें एक करण होता है॥१९॥ अब नाम कहते हैं। सूर्य में-प्रथम, द्वितीय, अष्टम में लग्न, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ये ५ करण देते हैं। चतुर्थ में चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ये चार ग्रह करण देते हैं। नवम में-लग्न, चन्द्र, गुरु ये तीन। छठे भाव में सूर्य, मंगल, शनि ये तीन करण देते हैं। सप्तम भाव में लग्न, चन्द्र, बुध,

गुरु ये चार करणदाताः तृतीय मे सूर्य, मंगल, गुरु, शुक्र, शनि ये पाच ग्रहः दशम मे गुरु, शुक्र ये दो पंचभाव मे लग्न, सूर्य, चन्द्र, मंगल, शुक्र, शनि ये छ करण देनेवाले ग्रह है। बारहवे मे सू० च० म० गु० श० ये ५ हैं। ग्यारहवे मे शुक्र १। यह सूर्य की करण सख्या तथा नाम हैं॥२०॥२१॥२२॥

मान्यस्वयोश्च पञ्चवेदम मृतिहोरागु पंच च ॥ मानदुश्चिक्यपोरेकः सुते वेदा अरिस्त्रियो ॥२३॥  
त्रयो व्यपेष्टावापे च शून्य शीतकरस्य तु ॥ होराकारार्किमृगबोग्गात्कैन्द्रार्किमार्गवा ॥२४॥  
जीवोर्काकोन्दुलप्राराहोरेदुगुरुभास्करौ ॥ सितज्ञार्पा कुजतनुर्मदास्ते सितशीतगु ॥२५॥

चंद्रमा की करण सख्या—चंद्रमा से २।९ मे करणसख्या छ है। १।४।८ भाव मे पाचा ३।१० मे १। पंचमभाव मे ४.६।७ भाव मे ३ है। १२ वे भाव मे करण सख्या ८ है। तथा ११ भाव मे करण सख्या नहीं है। २३॥ (करण नाम) करण देनेवाले के नाम-चंद्रमा से प्रथम घर मे लग्न, सूर्य, मंगल, शुक्र, शनि ये पाच हैं। दूसरे घर मे लग्न, सू० च०, वृ०, शु० श० ये छ है। तीसरे मे गुरु एक ही है। चौथे मे लग्न सू० च० म० श० ये ५ हैं। पाचवे घर मे लग्न सू०, च० गु० ये ४ है। छठे घर मे बु० वृ० गुरु ये ३ है। सातवे घर मे लग्न म० श० ये ३ है। आठवे घर मे लग्न च०, शु०, म०, श० ये ५ है। नवे घर मे लग्न सू० म० बु० गु० श० ये ६ है। दसवे घर मे श० १ है। ग्यारहवे घर कोई नहीं तथा बारहवे घर मे लग्न सहित सातो ग्रह करण देनेवाले है। २४॥२५॥

होराकारार्किविज्जीवा शनि स सकला ज्ञामात् ॥ व्यपवेदममुत्तरीषु षट् सप्त धनधर्मयो ॥२६॥ होरागुत्वयो शरा वेदा विक्रमे शे त्रय क्षते ॥ द्वौ भवे मून्यमेव स्यात्करण भूमिबन्ध तु ॥२७॥ कुजस्पर्कदुविज्जीवसिता लग्नशनी च ते ॥ सितारगुरुमदा स्पुर्धर्मोक्तेषु कुज विना ॥२८॥ चंद्रारगुरुशुक्रार्किलप्रानि कुजभास्करौ ॥ जैद्वर्कसितलग्नार्पा एषु शुक्र विना सत ॥२९॥ बिना शनि सप्तधर्म सितेन्द्रा विपतत ॥ अर्कार्किजेदुत्तप्रारा करण प्रोच्यते क्रमात् ॥३०॥

अधोरागुर्णार्थं मयत्तदरभकोत्तरम्										
	ध०	सू०	च०	म०	वृ०	शु०	शु०	म०	म०	स०
१	स०	०	०		०	०	०			५
२	सि०	०	०		०	०	०	०	०	७
३	सू०		०	०	०	०	०			४
४	च०	०	०		०	०	०		०	६
५	म०		०	०		०	०	०	०	५
६	वृ०			०				०		२
७	शु०	०	०		५	०	०		०	६
८	श०	०	०		०	०	०		०	५
९	म०	०	०	०	०	०	०		०	७
१०	वृ०		०	०						३
११	सू०									०
१२	सि०	०	०	०	०			०	०	६

मंगल की करण सख्या—मंगल से ४।५।७।१२ वे भाव में करण सख्या ६, २।९ में ७, १।८ में ५, ३ में ४, २ में ३, ६ में २, ११ में कोई नहीं॥

बिन्दु देनेवाले ग्रहों के नाम—मंगल से पहिले भाव में सू० च० बु० वृ० शु० ये ५। दूसरे में सू० च० बु० वृ० शु० श० और लग्न ये ७। तीसरे घर में म० गु० शु० श० ये ४। चौथे घर में सू० च० बु० वृ० शु० और लग्न ये ६। पाचवे घर में च० म० गु० शु० श० लग्न ये ६। छठे घर में म० श० २। सातवे घर में सू० च० बु० वृ० शु० लग्न ये ६। आठवे घर में सू० च० बु०, गु० लग्न ये ५। नवे घर में सू० च० म० बु० वृ० शु० लग्न ये ७। दसवे घर में च० बु० शु० ये ३, ग्यारहवे में कोई नहीं। बारहवे घर में सू० च० म० बु० श० लग्न ये ६

तनुस्वगृहकर्मारिधर्मेष्वग्निभृती करी ॥ मातृस्त्रियो रसा तामे शून्य पुत्रेष्वप्ये शरा ॥३१॥  
बुधस्यार्केन्दुपुरवो गुरुसूर्यबुधा क्रमात् ॥ लग्नार्कार्किचद्रार्या जार्कार्या हि बुधस्य तु ॥३२॥  
जीवारेन्द्वार्किलग्रानि शुक्रमदधरासुता ॥ जेन्दुलग्नार्कशुक्रार्या जार्कार्या जीवेन्दुलग्नका ॥३३॥

अयोदाहरणार्थं बुधकरणकोष्ठाकम्										
	भा०	सू०	च०	म०	बु०	शु०	शु०	श०	ल०	स०
१	स०	०	०			०				३
२	हि०	०			०	०				३
३	शु०	०	०	०		०		०	०	६
४	च	०			०	०				३
५	प०		०	०		०		०	०	५
६	प०			०		०	०			३
७	स०	०	०		०	०	०		०	६
८	प्र०	०			०					२
९	न०		०							२
१०	व०	०				०	०			३
११	शु०									०
१२	दा०		०	०			०	०	०	५

अकार्यशुक्राः शून्य च होरेन्द्रारार्किभार्गवाः ॥ रूपधनाययोः से द्वौ व्यये सप्तकृतेऽर्णवाः ॥३४॥

बुध की बिन्दु सख्या-बुध से १।२।४।६।९।१० वे घर मे ३, ८ मे २, ३।७ भाव मे ६, ११ मे कुछ नहीं। ५।१२ मे ५ ॥ करण देनेवाले ग्रहो के नाम-बुध से पहिले घरमे सू० च० गु० ३। दूसरे भाव मे सू० बु० गु० ३। तीसरे भाव मे सू० च० म० गु० ३। लघ्न ये ६। चौथे भाव मे सू० बु० गु० ये ३। पाचवे घर मे च० म० गु० ३। लघ्न ये ५। छठे घरमे, म० गु० ३। सातवे घर मे, सू० च० बु० वृ० ३। लघ्न ये ६। आठवे घर कोई नहीं। बारहवे मे च० म० गु० ३। लघ्न ये ५॥

गुरु की करण सख्या-गुरु से २।११ मे १, १० मे २, १२ मे ७, ६ मे ४, ३।८ मे ५, १।४।५।७।९ मे ३-३ सख्या जानना ॥३१-३४॥

मृतिविक्रमयोः पच गुरो शेषेषु बह्वय ॥ शुक्रेन्दुमदा लग्ने स्व आपे मदाश्च विक्रमे ॥३५॥ लघ्नारेन्दु-  
हमृगवः सुतेकार्यकुजा गृहे ॥ शुक्रमदेदवो शून्ये बुधशुक्रार्गवरा ॥३६॥ जीवारार्कन्दव शत्रौ मद  
सर्वे बिना व्यये ॥ कमणोन्दुशानी धर्मे मदारगुरवो मृती ॥३७॥

अपोदाहरणार्थं गुणकरणकोटकम्										
	मा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	ग०	व०	स०
१	त०		०				०	०		३
२	द्वि०							०		१
३	तृ०		०	०	०		०	०		५
४	च०		०				०	०		३
५	प०	०		०		०				३
६	ष०		०	०		०	०			४
७	स०				०		०	०		३
८	ख०		०		०		०	०	०	५
९	न०	०								१
१०	द०	०	०	०	०				०	५
११	ए०									०
१२	झ०		०	०			०	०	०	५

गुरु से करण सख्या देनेवालो के नाम गुरु से पहले घर मे च० शु० ग० ये ३, २।११ मे ग० १, ३ मे लग्न च० म० बु० गु० ये ५, ४ मे च० शु० ग० ये ३, ५ मे ग० म० गु० ये ३, ६ मे च० म० गु० शु० ये ४, ७ वे मे बु० शु० ग० ये ३। आठवे मे लग्न च० बु० शु० ग० ये ५। नवमे मे

म० गु० श० ये३। दसवे मे च० श०२। ग्यारहवे मे श० १। बारहवे मे श० को छोड़ सब॥३५॥३६॥३७॥

लग्नाकिंस्तिचद्वजाः करणं च गुरोरिदम् ॥ सुतायुर्विक्रमेष्वक्षितनुस्वव्ययलेष्विषुः ॥३८॥  
 अष्टौ स्त्रियामरौ षड्भूर्धर्मो मित्रेप्रिलं भवे ॥ तप्रे स्वेऽकारविज्जीवमदाः सर्वे च कामभे  
 ॥३९॥ अकार्या विक्रमस्थाने सुतेऽकारौ शुभे रविः ॥ मुखेऽर्कबुधजीवाः स्युर्भौमजौ मृतिभे  
 द्विज ॥४०॥ शुक्रार्कैन्दार्किलप्रार्थाः शत्रौ शून्य भवे व्यपे ॥ होराकिंबुधशुक्रार्पास्तित्वारजे-  
 न्दिनाश्च से ॥४१॥

अथ उदाहरणार्थं शुक्रकरणकोटकम्										
	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	स०	स०
१	स०	०		०	०	०		०		५
२	दि०	०		०	०	०		०		५
३	तृ०	०				०				२
४	च०	०			०	०				३
५	प०	०		०						२
६	ष०	०	०			०	०	०	०	६
७	स०	०	०	०	०	०	०	०	०	८
८	अ०			०	०					२
९	न०	०								१
१०	द०	०	०	०	०				०	५
११	ए०									०
१२	वा०				०	०	०	०	०	५

शुक्र की करण सख्या-शुक्र से ५।३ मे २ दो करण है। १।०।१०।१२ घर मे ५-५ करण है।  
 मातवे मे ८ है। तथा ६ मे ६ करण है। नवे मे १ तथा चौथे मे २ है। ११ वे मे नहीं हैं। ३८॥

ग्रहो के नाम १२ घर मे सू० म० बु० गु० श० ये ५ है। ७ वे घर मे सब हैं। तीसरे मे सू० बु० ये दो है। ५वे मे सू० म० ये दो हैं। नवे मे सू० बु० गु० ये ३ हैं। ८ में म० बु० ये दो हैं। ६ मे सू० च० गु० शु० श० ल० ये ६ है। ११वे नही है। १२ वे घर मे बु० गु० शु० श० ल० ये ५ है। १० मे सू० च० म० बु० लग्न ये ५ है। ३९॥४०॥४१॥

स्वस्त्रीधर्मेषु सप्ताग मृतिहोरागृहेषु च ॥ आजाभ्रातृव्यये श्वेदा रूप शत्रौ सुते शरा ॥४२॥  
 आपे शून्य शनेरेव करण प्रोच्यते बुधै ॥ गृहे तनी च सप्राकी स्वस्त्रियोश्च रवि बिना ॥४३॥  
 हित्वा धर्मं बुध माने सप्राररविचन्द्रजान् ॥ ततो भ्रातरि जीवार्कबुधमुक्ता शते रवि ॥४४॥  
 व्यये ज्येष्ठमदार्का सिताकेन्दुसप्तप्रका ॥ सुते मृतौ बुधार्का च हित्वाऽऽपे स शनेर्विद ॥४५॥

अयोदाहरणार्थं शनिचिदु कोष्कम्										
	मा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	म०
१	स०		०	०	०	०	०	०		६
२	दि०		०	०	०	०	०	०	०	७
३	तु०	०			०	०	०			४
४	च०		०	०	०	०	०	०		६
५	ष०	०	०		०		०		०	५
६	व०	०								१
७	स०		०	०	०	०	०	०	०	७
८	म०		०	०		०	०	०	०	६
९	न०	०	०	०		०	०	०	०	७
१०	ह०		०			०	०	०		४
११	ए०									०
१२	इ०	०	०					०	०	४



शनि की करण सख्या—शनि से २।७।९ मे ७।७ है। तथा ३।१०।१२ मे ४।४ है। ६ मे १ तथा ५ मे ५ है। तथा १।४।८ मे ६ है। ११ मे नहीं है॥४२॥ वरुणदाता के नाम—शनि से चौथे मे १,४ मे च० म० बु० गु० शु० श० ये छ है। २।७ घर मे च० म० बु० गु० शु० श० ल० ये ७ है। १० मे च० गु० शु० श० ये ४ है। ३ मे सू० बु० गु० शु० ये ४ है। ६ मे सू० यह १ है। वारहवे मे सू० च० श० ल० ये ४ है। ५वे मे सू० च० बु० शु० ल० ये ५ है। ८ मे च० म० गु० शु० ल० ये छ है। ११ वे मे नहीं है॥४३॥४४॥४५॥

उक्ताऽन्ये स्थानदातार इति स्थान विदुर्बुधा ॥ अथ स्थानग्रहान्वक्ष्ये सुखबोधाय स्मरिणान् ॥४६॥  
स्वायुस्तनुषु मदारसूर्याजीवबुधौ सुते ॥ विक्रमे जेन्दुलप्रानि सप्राकारिकुजा गृहे ॥४७॥ ते च जेन्दुस्वभेचाऽऽप्ये सर्वे शुक विना व्यये ॥ सप्रशुकबुधा शत्रौ ते च जीवमुधाकरौ ॥४८॥

अथ उदाहरणार्थं सूर्वरेखाचक्रम्										
गु०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	शु०	शु०	श०	ल०	स०
१	ल०	।		।				।		३
२	द्वि०	।		।				।		३
३	तृ०		।		।				।	३
४	च०	।		।				।	।	४
५	प०				।	।				२
६	ष०		।		।	।	।		।	५
७	स०	।		।			।	।		४
८	अ०	।		।				।		३
९	न०	।		।	।	।		।		५
१०	द०	।	।	।	।			।	।	६
११	ए०	।	।	।	।	।		।	।	७
१२	हा०			।	।		।		।	४



चन्द्रमा के भावो मे रेखा दाताओ के नाम—चन्द्रमा से प्रथम मे च० बु० गु०। दूसरे मे म० गु०। तीसरे मे सू० च० म० बु० शु० श० लग्न। चौथे मे बु० वृ० शु०। पाचवे मे म० बु० शु० श०। छठे मे सू० म० श० लग्न। सातवे मे सू० च० बु० गु० शु०। आठवे मे सू० बु० गु०। नवे मे च० शु०। दशवे मे सू० च० म० बु० गु० शु० लग्न। ग्यारहवे मे सू० च० म० बु० गु० शु० श० लग्न ॥४९-५१॥

लग्नमदकुजा भीमो होराज्ञेन्दुदिनाधिपा ॥ मन्दाराज्ञरविज्ञेन्दुजीवार्कतनुभार्गवा ॥५२॥  
मदारौ ती सितभ्रार्किकुजाकार्पाकिलप्रकाः ॥ सर्वे गुरुसितौ स्थान भीमस्यैव विदुर्बुधा ॥५३॥

अथोदाहरणार्थं मगलरेखाक्रमम्										
गु०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	गु०	श०	ल०	स०
१	ल०			।			।		।	३
२	द्वि०			।						१
३	तृ०	।	।		।				।	४
४	च०			।				।		२
५	प०	।			।					२
६	ष०	।	।		।	।	।			५
७	स०			।				।		२
८	अ०			।			।	।		३
९	ज०							।		१
१०	द०	।		।		।		।	।	५
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	इ०					।	।			२

मगल के १२ भावो मे रेखादाताओ के नाम-प्रथम मे लग्न म० ज० ये ३ है। २ रे मे म० १। ३ रे मे लग्न सू० च० बु० ये ४, ४ घे मे म० श० २, ५ वे मे सू० बु० २, ६ टे मे सू० च० गु०

शु० लग्न ५, ७ वे मे, म० श० २, ८ वे मे म० शु० श० ३, ९ वे मे श० १, १० वे मे सू० म० गु०  
 श० लग्न ५, ११ वे मे सब ८, १२ वे मे गु० शु० २॥५२-५३॥

सप्तमंदारशुक्रजा लग्नारेन्दुसितार्कजाः ॥ शुक्रजौ लग्नचन्द्रार्किसिताराजार्कभार्गवाः ॥५४॥  
 जीवजार्कन्वुलप्रानि भूमिपुत्रशतेश्वरी ॥ तौ च सप्तरेन्दुशुक्रार्पा मंदारार्कजभार्गवाः ॥५५॥  
 लग्नमंदारबिज्ज्वन्द्राः सर्वे जीवजभास्कराः ॥ गुरोर्लग्न सुखे जीवलग्नारार्कबुधा धने ॥५६॥  
 चन्द्रशुक्रौ च बुध्रिक्ये मंदारार्काः शनिर्व्यये ॥ सुते शुक्रन्वुललग्नमन्दाश्रन्दं विना त्वरौ ॥५७॥  
 लग्नारायाऽर्कद्वयोऽस्ते मृतीजीवार्कमूसुताः ॥ धर्मं शुक्रार्कलग्नोन्दुबुधा मद विनाऽऽयमे ॥५८॥

अयोदाहरणार्थं बुधरेतावरुम्

गु०	मा०	सू०	ब०	म०	बु०	गु०	शु०	म०	स०	स०
१	स०	.		।	।		।	।	।	५
२	दि		।	।			।	।	।	५
३	वृ०				।		।			२
४	ब०		।	।			।	।	।	५
५	प०	।			।		।			३
६	घ०	।	।		।			।	।	५
७	स०			।			।			२
८	श०		।	।		।	।	।	।	६
९	न०	।		।	।		।	।		५
१०	र०		।	।	।		।	।	।	५
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	श०	।			।					३

भय उदाहरणार्थं गुरुरेखाचक्रम्										
गु०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	ल०	।		।	।	।			।	५
२	दि०	।	।	।	।	।	।		।	७
३	वृ०	।				।		।		३
४	च०	।		।	।	।			।	५
५	प०		।		।		।	।	।	५
६	ष०	।			।			।	।	४
७	स०	।	।	।		।			।	५
८	म०	।		।		।				३
९	न०	।	।		।		।		।	५
१०	द०	।		।	।	।	।		।	६
११	ए०	।	।	।	।	।	।		।	७
१२	हा०							।		१

बुध के १२ भावोंके रेखादाताओं के नाम—बुध से पहिले घर मे म०, बु०, शु०, श०, लग्न ये ५ रेखा देते है। दूसरे मे लग्न च० म० शु० श० रेखा देते है। तीसरे मे बु० शु० ये दो। चौथे मे च० म० शु० श० ल० ये ५ ५ मे सू० बु० शु० ये ३। छठे मे सू० च० बु० शु० ये ४ है। सातवें मे म० श० ये २ है। आठवें मे च० म० गु० शु० श० ल० ये छ है। नौवें मे सू० म० बु० शु० श० ये ५ है। दशवें मे च० म० बु० श० ल० ये ५ है। एकादश मे आठो ही रेखा देते है। १२ मे सू० बु० गु० ये ३ है। ॥५४॥५५॥

गुरु के १२ भावोंके रेखादाताओं के नाम—गुरु से १।४ घर मे सू० म० बु० गु० ल० ये ५ है। दूसरे मे सू० च० म० बु० वृ० शु० ल० ये ७ है। तीसरे मे सू० गु० श० ये ३ है। ५ वें मे च० बु० शु० श० ल० ये ५ है। छठे मे बु० शु० श० ल० ये ४ है। ७ वें मे च० म० गु० ल० ये ४ है। ८ मे सू० म० गु० ये ३ है। नौवें घर मे सू० च० बु० शु० ये ४ है। ११ वें मे मणि रहित सब रेखा देते है। १० मे सू० म० बु० वृ० शु० ल० ये ६ है। ॥५६॥५७॥५८॥

माने गुरुबुधाराकशुक्रहोरास्तया विदुः ॥ सप्रगुक्रेदवस्ते भाकर्यारास्ते नवर्जिताः ॥५९॥  
 सुतभे सप्रशशिजशशांकार्थिकिभार्गवाः ॥ ज्ञारी सून्यं तिताऽकेन्दुगुह्लप्रमनैश्वराः ॥६०॥ सर्वे  
 रधिं विना गुरुगुरुमन्दाश्च मानभे ॥ सर्वे कुजेन्दुरवयः क्रमाद्मृगमुतस्य च ॥६१॥

अथ उदाहरणार्थं गुरुरेखाचरम्										
गु०	भा०	सू०	चं०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	स०	स०
१	स०		।				।		।	३
२	वि०		।				।		।	३
३	सू०		।	।	।		।	।	।	६
४	च०		।	।				।	।	५
५	प०		।		।	।	।	।	।	६
६	घं०			।	।					२
७	स०									०
८	म०	।	।			।	।	।	।	६
९	न०		।	।	।	।	।	।	।	७
१०	ह०						।	।	।	३
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	हा०	।	।	।						३

शुक्रः के रेखा दाताओ के नाम—गुरु से च० शु० स० ये ३ रेखादाता प्रथम तथा द्वितीय भाव के है। तीसरे मे च० म० बु० श० स० शु० ये ६ है। ४ मे सू० च० म० शु० स० ये ५ है। ५ वे मे म० च० बु० गु० शु० श० ये ६ है। छठे घर मे म० बु० मे दो। मानवे मे नहीं है। ८वे मे सू० च० गु० शु० स० ये ६ है। नौवे मे च० म० बु० मृ० शु० श० न० ये ७ है। १० वे घर मे शु० श० ये दो है। ११वेमे सब रेखा देने है। १२ वे मे सू० च० म० ये ३ है। ५९॥६०॥६१॥

शने रवितनू सूर्यो लघ्रेन्दुकुजसूर्यजाः ॥ लग्नार्को जीवमदाराः सर्वे सूर्ये विना क्षते ॥६२॥  
 अर्कोऽर्कजौ बुधोऽर्करतनुजाः सकलास्ततः ॥ कुजजगुहशुक्राश्च क्रमात्स्थानमिदं विदुः ॥६३॥ तनी  
 सूर्ये च वल्लिः स्याद्दृशिक्ये द्वौ धने शराः ॥ बुद्धिमृत्त्विकरिः फेषु यद् देशक्षतराशिषु ॥६४॥

अधोराहणार्थं शनिरेखाचक्रम्										
प्र०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	स०	स०
१	स०	१							१	२
२	द्वि०	१								१
३	तृ०		१	१				१	१	४
४	च०	१							१	२
५	प०			१		१		१		३
६	ष०		१	१	१	१	१	१	१	७
७	स०	१								१
८	अ०	१			१					२
९	म०				१					१
१०	द०	१		१	१				१	४
११	ए०	१	१	१	१	१	१	१	१	८
१२	हा०			१	१	१	१			४

शनि रेखादाताओ के नाम—शनि मे प्रथम भाव मे सू० म० ० है। द्वागरे मे सू० ए० है। तीन मे च० म० ग० म० ४ है। ४ मे सू० ल० ० है। ५ वे मे म० गु० श० ३ है। ६ मे च० म० बु० वृ० शु० घ० म० ३ है। ८ मे सू० बु० ० है। ७ मे-सू० १ है। ९ वे मे बु० १ है। १० वे मे-सू० म० बु० ल० ४ है। एकादश मे म० ८ है। १० वे मे म० बु० गु० शु० ४ है। ६२॥६३॥

नक्षत्र के बिन्दु तथा रेखा विन्यास—प्रथम बिन्दु विराज-नक्षत्र तथा ४ मे ३ है। तीसरे मे ७ दूसरे मे ५। पाँच, आठ, नौवे द्वादन मे ६ है। छठे, ग्याह्रवे, दसवे मे १-१ है। तथा मान्दवे मे ७ बिन्दु है। ६४॥

रूपं स्त्रिया गुहं त्यक्त्वा तन्नस्य करणं त्विदम् ॥ होरामूर्धेन्दवो तत्रे तप्रारेंद्रिनमूर्धजा ॥६५॥  
 गुरुतो तन्नचद्वारा तन्मूचमबुसौरय ॥ सते शुक्रस्तथा चंका कामे सर्वे गुरव विना ॥६६॥ मृतौ  
 मृगुबुधौ त्यक्त्वा धर्मं गुरुसितौ विना ॥ कर्मण्याये तथा शुक्रो घ्यये मूर्धेन्दुवर्जिता ॥६७॥

अयोदाहरणार्थं तत्रविदुःश्लोक्यम्										
म०	भा०	मू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	ल०	०	०						०	३
२	दि०	०	०	०				०	०	५
३	वृ०				०	०				२
४	च०	०	०						०	३
५	प०	०	०	०	०			०	०	६
६	घ०					०				१
७	स०	०	०	०	०		०	०	०	७
८	अ०	०	०	०		०		०	०	६
९	न०	०	०	०	०			०	०	६
१०	व०						०			१
११	ए०						०			१
१२	इ०			०	०	०	०	०	०	६

तत्र मे विन्दुदाताओ के नाम—तत्र मे-मन्न तथा मू० च० ये ३ है। दूसरे मे न० मू० च०  
 म० न० ये ५ है। ३ मे बु० गु० ये २ है। ४ मे च० म० ल० ३ है। ५ मे न० मू० च० म० बु०  
 न० ये ६ है। ६ मे शु० यह १ है। ७ वे मे मू० घ० म० बु० शु० अ० ये ७ है। ८ मे मू० च०  
 म० गु० न० ल० ये ६ है। ९ वे मे मू० च० म० बु० अ० ल० ये ६ है। १० मे तथा ११ मे शु०  
 यह १-१ ही है। १२ वे मे म० बु० गु० शु० अ० ल० ये ६ है ॥६५॥६६॥६८॥

तत्रस्येव तु सप्तोक्तं करणं द्विजपुण्य ॥ अथ स्वानं प्रवक्ष्यामि तत्रस्य द्विजपुण्य ॥६८॥  
 भार्गवशुक्रगुरुवाराः सौम्यदेवेभ्यर्भावाः ॥ हित्वा सौम्यगुरुः शेषा मूमेज्यमृगुमूर्धजा ॥६९॥



तथा जीवभृगु बुद्धौ सर्वे शुक्रं विना क्षते ॥ जीव एकस्तथा द्यूने मृतौ सौम्यभृगु तथा ॥७०॥ धर्म  
गुहसितावेव से सर्वे शुक्रमतरा ॥ सूर्यचन्द्रौ तथा रिष्के स्थान लग्नस्य कीर्तितम् ॥७१॥

अथ उदाहरणार्थ लग्नरेखाचक्रम्										
गु०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	ल०			।	।	।	।	।		५
२	दि०				।	।	।			३
३	तृ०	।	।	।			।	।	।	६
४	च०	।			।	।	।	।		५
५	प०					।	।			२
६	द०		।		।	।	।		।	५
७	स०					।				१
८	अ०				।		।			२
९	न०					।	।			२
१०	र०	।	।	।	।	।		।	।	७
११	ए०	।	।	।	।	।		।	।	७
१२	इ०	।	।							२

लग्न के १२ भावी में रेखाप्रदो के नाम—लग्न में म० बु० गु० शु० श० ये ५ हैं। दूसरे में बु० गु० शु० ये ३ हैं। तीसरे में सू० च० म० गु० श० ल० ये ६ हैं। चौथे में सू० बु० गु० शु० श० ये ५ हैं। ५ वे में गु० शु० ये दो हैं। ६ में सू० च० म० बु० गु० श० ये ६ हैं। सातवें में गु० यह १ है। ८ वे में बु० गु० ये दो हैं। नौवें में गु० शु० दो हैं। १०-११ भाव में सू० च० म० बु० गु० श० ल० ये ७-७ हैं। १२ वे में सू० च० ये दो हैं। ६८॥६९॥७०॥७१॥

करण बिदुषत्प्रोक्त स्थान रेखा तयोच्यते ॥ मुनिदिग्यमुषेदादिगिष्वद्वष्टघनबेषव ॥७२॥  
रुद्राकार्वागणा मेपाद्विषयेष्वष्टबाषव ॥ पत्तिस्वरेषव सूर्याद्विगणा प्रोच्यते बुधे ॥७३॥ अष्ट



अथ चद्राष्टकवर्गः ४९							
सू०	च०	म०	बु०	ब्र०	शु०	श०	त०
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	२	४	५	६
७	६	५	४	४	५	६	१०
८	७	६	५	७	७	११	११
१०	९	१०	७	८	९	०	०
११	१०	११	८	१०	१०	०	०
०	११	०	१०	११	११	०	०
०	०	०	११	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

उदाहरण रेखास्थापन की विधि यह है कि-जो ग्रह जिम भाव में हो उस ग्रह की रेखा उस भाव में गणना करके चक्र में लिखित स्थानों में रेखा लिखना बाकी स्थानों में शून्य लिखना। जैसे कि- (चक्र में देखें) सूर्याष्टक वर्ग चक्र में सूर्य ११ भावों में है और सूर्य के रेखा स्थान १।२।४।७।८।९।१०।११ है अतः एकादश भाव में इन स्थानों में रेखा और बाकी स्थानों में शून्य रेखा गया है। चन्द्रमा पंचमभाव में है अतः चन्द्रमा में ३।६।१०।११ भावों में रेखा और अन्य भावों में शून्य है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह तथा चक्र के चक्रों में लिखे अंकों के स्थान में रेखा लिखना बाकी में शून्य लिखना। इसका तात्पर्य यह है कि अमुक ग्रह अमुक ग्रह और भाव में अमुक (अर्थात् रेखांकित) स्थानों में शुभफलदाता है और शून्यांकित स्थानों में अनुभक्तदायक है।

भौमस्याष्टकवर्गः ३९							
र०	च०	म०	बु०	दु०	शु०	श०	त०
३							
५	३	१	३	६	६	१	१
६	६	२	५	१०	८	४	३
१०	११	४	६	११	११	७	६
११	०	७	११	१२	१२	८	१०
०	०	८	०	०	०	९	११
०	०	१०	०	०	०	१०	०
०	०	११	०	०	०	११	०





लघुश्लोकवर्गः ५२							
२०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	स०	ल०
३	३	१	१	१	१	१	३
४	६	३	२	२	२	३	६
६	१०	६	४	४	३	४	१०
१०	११	१०	६	५	४	६	११
११	१२	११	८	६	५	१०	०
१२	०	०	१०	७	८	११	०
०	०	०	११	९	९	०	०
०	०	०	०	१०	०	०	०
०	०	०	०	११	०	०	०

डादशभाष्यश्लोकवर्गः												
ल०	स०	घ०	स०	स०	स०	गु०	स०	शु०	स०	श०	स०	भा०
६	७	७	८	८	८	९	९	१०	११	११	०	रा०
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००	अ०
१७	५५	३४	१२	५१	२९	०८	२९	५१	१२	३४	५५	क०
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०	वि०
जा०	स०	शा०	स०	घ०	स०	क	स०	ला०	स०	व्य०	स०	भा०
०	१	१	२	२	२	३	३	४	५	५	६	रा०
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००	अ०
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५	क०
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०	वि०

तात्पर्यविका स्पष्टा षट्								
शु०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	स०	रा०	के०
४	१०	४	४	५	६	७	६	०
२३	२६	२७	२१	१३	०१	१५	२०	२०
२८	३०	४५	३४	२७	५८	०५	०५	०५
१८	३३	३८	४५	३६	३४	१२	१५	१५
५७	७२७	३९	१९	१३	७१	२	३	३
२२	५०	३६	४८	१८	२२	४२	११	११

जमलत्रम्			
८ स०	रा०	शु०	शु०
६	७शु०	६	शु०
१०		६	शु०
व०	के०	१	३
११	१		
१२	२		

## उदाहरण

सूर्यरेखावचम्												
भावा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	१	०	०	१	१	१	१	१	०	१	१
ब०	०	१	१	०	०	०	१	०	०	१	०	०
म०	०	१	०	०	१	१	१	१	१	०	१	१
धृ०	१	०	१	१	०	०	१	१	१	१	०	०
वृ०	०	०	०	१	१	०	०	१	०	१	०	०
शु०	०	०	०	०	०	१	१	०	०	०	०	१
ग०	०	१	१	०	१	०	०	१	१	१	१	१
ल०	०	०	०	१	१	१	०	०	१	१	०	१
यो०	१ ७	४ ४	३ ५	३ ५	५ ३	४ ४	५ ३	५ ३	५ ३	५ ३	३ ५	५ ३

## सूर्यत्रिकोणकाधिकपर्यगोघनचक्रम्

राशि	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
घटा	सू० ५०	वृ०	रा० शु०	ग०			ब०		धे०			
रेखा	५	४	५	५	५	५	३	५	१	४	३	३
त्रि०	४	०	२	२	४	१	०	२	०	०	०	०
एका०	४	०	२	२	२	१	०	०	०	०	०	०

पिण्ड

राशिपिण्ड ८३ ग्रहपिण्ड ९४ यो० १७७

## अन्तरेखावचम्

भावा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०			१	१	१		१	१				१
ब०	१	१	१		१		१	१		१	१	
म०			१				१	१			१	१
धृ०	१	१		१	१		१	१		१		१
वृ०	१		१		१		१	१	१	१	१	१
शु०			१	१	१		१	१	१	१	१	१
ग०			१	१		१	१	१			१	१
ल०			१	१	१		१	१	१		१	१
यो०	३ ५	२ ६	५ ३	५ ३	५ ३	१ ७	७ १	३ ५	३ ५	४ ४	३ ५	६ ३

उत्तरकाञ्चे द्वितीयोऽध्यायः

सम्प्रतिक्रीमीशरिपित्तसोपनवचम्

साम्य	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
पहा.	स०		के०				सु०स०	कु०	स०			
वेला	३	६	३	२	५	५	५	१	७	३	३	४
वि०	०	३	०	१	२	२	२	०	४	०	०	२
दिना०	०	३	०	०	२	२	२	०	३	०	०	२

राशि वि० १२९ पहा वि० ७१ योग २००

वि०

उदाहरण

श्रीमतीमाप्यवचम्

मात्रा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सु०	१	०	०	१	०	०	०	१	१	०	०	०
स०	०	१	०	०	०	०	१	०	०	१	०	०
कु०	१	०	०	१	०	०	०	०	०	१	०	०
कु०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०	१	०
सु०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	१	०	०
स०	०	०	१	०	०	०	०	१	०	०	१	०
के०	२	३	०	०	३	३	०	२	४	६	३	३
वि०	६	५	५	५	५	५	६	६	४	०	५	५

श्रीमतिक्रीमीशरिपित्तसोपनवचम्

साम्य	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
पहा	सु०	स०	कु०	सु०	स०							
वेला	३	०	०	०	४	६	१	५	३	०	३	३
वि०	१	०	०	०	१	४	१	३	०	०	१	०
दिना०	१	०	०	०	१	४	०	३	०	०	१	०

राशि वि० ०६ पहा वि० ३३ योग १३०

वि०



बुधरेखाष्टकचक्रम्												
भा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०			१	१	०		१	०	१	१	०	
च०			१	१		१		१		१		१
म०		१	०		१	१	१	१	१		१	१
बु०	१		१	१	०			१	१	१	१	
वृ०					१		१			१	१	
शु०		१		१	१		१	१	१	१	१	
ग०		१	१		१			१	१	१	१	१
ल०		१		१	१		१	१		१		१
रे०पी०	१	४	४	५	५	२	४	६	५	६	५	४
वि०पी०	७	४	४	३	३	६	४	२	३	२	३	४

## बुधत्रिकोर्णकाधिपत्यगोघनचक्रम्

रासाय	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
घटा	सू०	बृ०	शु०	ग०			च०					
रेखा	५	२	४	६	५	६	५	४	१	४	४	५
त्रि०	४	०	०	२	४	४	१	०	०	२	०	१
येका०	४	०	०	२	४	३	१	०	०	२	०	१
विषद			रासाय विद १४२ गृह विद १५ योग २३७									

## गुरुरेखाष्टकचक्रम्

मावा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	१	१	०	०	१	१	१	१	१	०	१	१
च०	०	१	०	०	०	१	०	१	१	०	०	१
म०	०	१	०	०	१	१	०	१	१	०	१	१
बु०	०	१	१	१	०	०	१	१	१	०	१	१
वृ०	१	१	१	०	०	१	१	०	१	१	०	१
शु०	०	१	०	१	०	१	०	०	१	१	१	०
ग०	१	०	०	१	०	१	१	०	०	०	०	०
ल०	१	१	०	१	१	०	१	१	०	१	१	१
रे०पी०	४	७	२	४	३	६	५	५	६	३	५	६
वि०पी०	४	१	६	४	५	२	३	३	२	५	३	२

गुरुत्रिकोणैकाधिपत्यसौधनचक्रम्												
राशयः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५
पहा	गु०	शु०	म०			च०						सू०म० कु०
रेखा	६	५	५	६	४	७	२	४	३	६	५	५
त्रि०	३	०	३	२	१	२	०	०	०	१	३	१
रेखा	२	०	३	२	०	१	०	०	०	०	३	१
पिण्ड	राशि पिण्ड ८५ ग्रह पिण्ड ५८ योग १४३											

गुरुरेखापदकच०												
भावाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	०	०	०	०	१	०	०	१	१	०	०
च०	१	०	१	१	१	१	१	१	१	०	०	१
म०	१	१	०	१	०	०	१	०	१	१	०	०
कु०	१	०	१	१	०	०	१	०	१	१	०	०
मृ०	०	०	०	१	०	०	१	१	१	१	०	०
शु०	१	१	१	१	१	०	०	१	१	१	१	०
म०	०	०	०	१	१	१	०	०	१	१	१	१
ल०	०	१	१	०	१	०	१	१	१	१	१	०
रेखा	४	३	४	६	४	३	५	४	८	७	३	२
वि०घो	४	५	४	२	४	५	३	४	०	१	५	६

गुरुत्रिकोणैकाधिपत्यसौधनचक्रम्												
राशयः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
पहा	शु	म०			च०						सू०म० कु०	
रेखा	५	४	८	७	३	२	४	३	५	६	५	३
त्रि०	२	२	४	४	०	०	०	०	१	४	०	०
रेखा	२	२	४	४	०	०	०	०	१	४	०	०
पिण्ड	राशि पिण्ड ११० ग्रह पिण्ड २४ योग १३४											

शनिरेखाष्टकचक्रम्												
भावा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	१	०	०	१	१	०	१	१	०	१	१
च०	०	०	१	०	०	०	१	०	०	१	०	०
म०	१	०	१	१	०	०	०	१	१	१	०	०
सु०	१	०	१	१	०	०	०	१	१	१	०	०
दृ०	०	०	०	१	१	०	०	०	०	१	१	०
शु०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०	१	१
ग०	०	०	०	१	०	१	१	०	०	०	०	१
ल०	०	०	०	१	१	०	१	०	१	१	०	१
रे०यो०	२	१	३	५	३	३	३	३	४	५	३	४
वि०यो०	६	७	५	३	५	५	५	५	४	३	५	४

शनित्रिकोपैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

राशय	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
ग्रहा	स०								सू०म०	सु०	शु०	
रेखा	३	४	५	३	४	३	१	३	५	३	३	३
त्रि०	०	३	४	०	१	०	०	०	३	१	२	०
एका	०	१	४	०	०	०	०	०	३	१	२	०

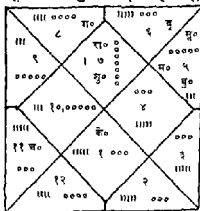
राशि विष्ट ४७ घट्ट विष्ट ३८ योग ८५

सप्तरेखाष्टकचक्रम्

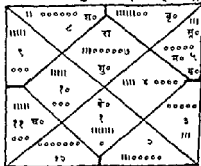
भा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	१	१	०	१	०	०	०	१	१	१	०	०
च०	०	१	१	१	०	०	१	०	०	१	०	०
म०	१	०	०	१	०	०	०	१	१	०	१	०
सु०	१	०	१	०	१	०	१	१	१	०	१	०
दृ०	१	०	१	१	१	१	०	१	१	१	०	१
शु०	१	१	१	१	१	०	१	१	१	०	०	०
ग०	०	१	०	१	१	०	१	०	०	०	१	१
ल०	०	०	०	१	१	०	०	०	१	०	०	१
रे०यो०	५	४	४	६	५	१	३	५	६	३	३	३
वि०यो०	३	४	४	२	३	७	५	३	२	५	५	५

तन्त्रविकीर्णकाधियत्पशोऽनन्तरम्												
राशयः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
ग्रहाः	शु०	श०			व०						सू०म०	वृ०
रेखाः	३	५	६	३	३	३	५	४	४	६	५	१
त्रि०	०	२	१	२	०	०	०	३	१	०	०	०
चै०	०	२	१	२	१	०	०	३	१	३	०	०
विग्रहः	राशि विद ४७ पद विद ३८ योग ८५											

सूर्याष्टकवर्गकुण्डली (उदाहरणम्)



चन्द्राष्टकवर्गकुण्डली (उदाहरणम्)



अथ लग्नत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनम्													
स०								स०	श०	सु०	गु०	म०	घटा
मे०	वृ०	मि०	क०	सि	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	पी०	राशयः	
४	५	५	३	३	२	५	६	३	५	४	४	रेखा	
१	३	१	२	२	२	१	३	०	३	०	१	त्रि०शो	
१	२	०	०	०	०	१	२	०	३	०	१	६०शो०	
ग्रहपिंड ४५ राशि पिंड ७७ उ०योग पिंड २२													

त्रिकोण तु कय प्रोक्तं मेपसिहादय क्रमात् ॥ वृषकन्यामृगाख्येषु तुलाकुम्भयुगेषु च ॥२॥  
 कर्कवृश्चिकमोनास्ते त्रिकोणा स्यु परस्परम् ॥ त्रिकोणेषु च यन्पून तत्तुल्य त्रिषु शोधयेत् ॥३॥  
 एकस्मिन् भवने शून्य तत्रिकोण न शोधयेत् ॥ समत्वे सर्वगोहेषु सर्वं सशोध्य  
 बुद्धिमान् ॥४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उ० छ० त्रिकोणशोधन  
 नाम द्वितीयोऽध्याय ॥२॥

त्रिकोण कैम जानना मो कहते है। मेप सिंह धनु इमी प्रकार वृष कन्या, मकर और  
 मिथुन तुला कुम्भ, कर्क वृश्चिक मीन ये चारो विभाग परस्पर त्रिकोण है। (१) इनमे जो  
 न्यून सख्यावाली राशि है उसकी स्पष्टसख्या अधिक सख्यावाली राशियो की स्पष्ट मे  
 घटाना (२) यदि एक राशि में शून्य है तो नही घटाना (३) और सब राशि मे समान  
 सख्या हो तो सबस्थानो मे शून्य अंक प्राप्त होगा। इन तीन प्रकारो को ध्यान में रखकर  
 त्रिकोण शोधन करे ॥२-४॥

त्रिकोण शोधन का उदाहरण—त्रिकोण शोधन मे जो कम सख्या वाली राशि है, उसका  
 फलक तीनों जगह घटाना (१) यथा-सूर्य के अष्टक वर्ग मे-१-मेप के नीचे ०-मिह के नीचे  
 ३ धन के नीचे ६-यहा ० की सख्या को तीनों जगह घटाया तो मेप के नीचे-० । मिह के  
 नीचे-१। धन के नीचे ० । २-सूत्रग प्रवाहर-पिमी एक राशि के नीचे शून्य हो तो यथास्थित  
 रहता है। जैसे-कल्पित उदाहरण वृष के नीचे का रेखाफल-३ । कन्या के नीचे-५। मकर के  
 नीचे-० । यहा मकर राशि के नीचे रेखाफल-० है, अत यथास्थित अंक रहे ॥ ३-सूत्रग  
 प्रकार-यदि तीनों राशियो मे रेखाफल समान हो तो सबसे नीचे शून्य होगा। जैसे गुरु के  
 अष्टक वर्ग मे वृष के नीचे रेखाफल-५-कन्या के नीचे-५ मर के नीचे भी-५ तो ५ में शोधन  
 होने पर तीनों जगह शून्य प्राप्त हुआ वृष-० । कन्या-० । मकर-० ।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उ० म० भा० प्र० त्रिकोणशोधननाम  
 द्वितीयोऽध्याय ॥२॥

## अर्थकाधिपत्यशोधनमाह

एव त्रिकोण सशोध्य पश्चादेकाधिपत्यता ॥ क्षेत्रद्वये फलानि स्युस्तदा सशोधयेद्बुध ॥१॥  
 क्षीणेन सह चान्यस्मिन्शोधयेद्ग्रहवर्जिते ॥ ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ॥२॥ अनेन  
 सह चान्यस्मिन्शोधयेद्ग्रहवर्जिते ॥ फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन्सर्वमृत्सृजेत् ॥३॥  
 उभयोर्ग्रहसयुक्ते न सशोध्य कदाचन ॥ उभयत्रग्रहाभावे समत्वे सफल त्यजेत् ॥४॥  
 सग्रहाग्रहयोस्तुल्ये सर्वं सशोध्यमग्रहे ॥ कुलीरसिंहयो राश्योऽपृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम् ॥५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे एकाधिपत्यशोधन

नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

पूर्वोक्त प्रकार से त्रिकोण शोधन करने के बाद एकाधिपत्य शोधन करना चाहिए (यहाँ ध्यान रखना चाहिए कि 'फल त्रिकोण-शोधित एक का नाम है।)

एकाधिपत्यशोधन के नियम—

- (१) क्षीणेन सह चान्यस्मिन् शोधयेद् ग्रहवर्जिते ।  
 १-दोनों राशि ग्रहरहित हो तो अधिक में न्यून का शोधन करना।
- (२) उभयोर्ग्रहसयोगे न सशोध्य कदाचन।  
 २-दोनों राशि स्वग्रह हों तो शोधन नहीं करना ।
- (३) ग्रहयुक्ते फलेहीने ग्रहाभावे फलाधिके। ऊनेन सममन्यास्मिन् शोधयेत् ग्रहवर्जिते।  
 ३-ग्रहयुक्तराशि कमफल हो, अग्रह अधिक हो तो अधिक में अल्प घटाना, सग्रह का फल यथावत् रखना।
- (४) फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन् सर्वमृत्सृजेत्।  
 ४-सग्रह राशि फलाधिक हो तो अग्रह राशि का फल शून्य होता है।
- (५) उभयत्र ग्रहाभावे समत्वे सफल त्यजेत्।  
 ५-दोनों अग्रह हो, फल तुल्य हो तो दोनों में शून्य होगा।
- (६) सग्रहाग्रहयोस्तुल्ये सर्वं सशोध्यमग्रहे।  
 ६-यदि एक सग्रह दूसरी अग्रह हो, फल समान हो तो अग्रह के फल का शून्य कर देना।
- (७) कुलीरसिंहयो राश्यो पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम्।  
 ७-कर्क और सिंह अपने स्वामी की १-१ राशि होने से शोधन नहीं होता। १-५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे षाडशराशिकाया एकाधिपत्यशोधन नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

## अथ पिंडोत्पत्तिमाह

शोध्यावशेष सत्पाप्य राशिमानेन बद्धयेत् ॥ ग्रहयुक्तेऽपि तदराशौ ग्रहमानेन बद्धयेत् ॥१॥

## अथ गुणकध्रुवाकानामह

गोसिंही दशगुणितौ वसुभिर्मिथुनातिनी ॥ वणिग्मेपां तु मुनिभिः कन्यकामकरौ शरः ॥ शेषा  
 स्वमानगुणिता राशिमाना इमे जमात् ॥१॥ जीवारशुक्रमौम्याना दशवसुमुनीन्द्रिय  
 क्रमाद्गुणका ॥ बुधस्य सत्या शेषाणां ग्रहगुणैर्गुणयेत् पृथक् पृथक्कार्या ॥२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेऽष्टादशोऽध्यायः पिंडोत्पत्तिश्च

नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अष्टकवर्ग फल

सूर्य में विचारणीय फल, अपना प्रभाव, शक्ति तथा अपने पिता का स्वास्थ्य, जीवन, मरण आदि। चन्द्रमा से मानसिक स्थिति बुद्धि (बोध=ज्ञान) तथा माता के विषय में स्वास्थ्य, जीवन आदि विचारना चाहिए। भग्न में बल साहस, भ्राता सम्बन्धी विचार, भूमि तथा गुणों का विचार। बुध से व्यापार वृत्ति शुभाशुभ कर्म का विचार करना। वृहस्पतिसे शरीरकी पुष्टता तथा पुत्रसन्तान सम्बन्धी विचार धन तथा बुद्धि का विचार करना। शुक से विवाह, भोग तथा बाहन का विचार एवं भार्या का स्वप्न आदि का विचार करना। शनि में आयु का विचार स्वास्थ्य दुःख, शोक भय हानि आदि का विचार करना। ग्रहों में स्थिरकारकता-सूर्य-पिता। चन्द्रमा मातृकारक। भग्न भ्राता। बुध मित्र। वृहस्पति मामा। शुक स्त्री एवं ज्ञान और गुण्या शनि मृत्युकारक है। आगे जो इन ग्रहों के नक्षत्र बताये जायेंगे उनमें उपर्युक्त फल का विचार करना चाहिए। ये बताये गये कारक यह तथा भावोंके गुणक से शोधित पिण्ड सख्या को गुणा करके २७ का भाग देने पर जो शेष रहे उस सख्या के नक्षत्र पर जब शनि हो तब भावानुसार जननी, बधु महोदर भ्राता, पुत्र स्त्री आदि का नाम एवं म्यय जातक की मृत्यु का विचार करना। ७॥ (शार्दूलवित्रीहित)

भाद्रिप्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाराचारिषु ॥ अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ॥८॥  
 तद्वाशिलसख्याभिर्वर्द्धयेद्योगापिडकम् ॥ सप्तविशोद्धृत शेष नक्षत्रं याति भग्नजम् ॥९॥  
 तस्मिन्काले तस्य तस्य भावस्यातिं विनिर्दिशेत् ॥ तस्मिन्काले पितृक्त्वेऽपि भवतीति न तस्य ॥१०॥  
 तत्रिकोणगते वापि पितापितृसमोऽपि वा ॥ मरणं तस्य जानीयाद्दशादिरेषु कल्पयेत् ॥११॥  
 अर्कात्तु तुर्यगे राहो मदे वा भूमिनदने ॥ गुरुशुक्रेशणमृते पितृहा जायते नरः ॥१२॥  
 सप्राक्चन्द्राद्गुणस्थाने याते सूर्यसुते यदि ॥ पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसमुते ॥१३॥  
 दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तम ॥ सप्रात्सुखेशराशीशदराया च पितृक्षय ॥१४॥  
 सुखनायदशाया तु बहुप्राप्तेऽत्र सशय ॥ पितृजन्माष्टमे जातस्तदीशे सप्रागेपि वा ॥१५॥  
 तेनैव पितृकार्याणि कारयेन्नार सशय ॥ सुखेशे सामलप्रत्ये चद्रतप्रादिसोपत ॥१६॥  
 पितृगृहं समायुक्ते जात पितृवशानुग ॥ तेनैव पितृकार्याणां कर्मसोप समापयेत् ॥१७॥

(अब फलाफल विचार की गति कहते हैं यणिन मिष्ट ग्रहों द्वारा सूर्याष्टक वर्ग के पिण्डाच सख्या पर विचार करने के लिए) सूर्य में नवमभावराशि पिता का म्यान है, उन नवमभाव की राशि के फलाच से सूर्याष्टक वर्ग के पिण्ड को गुणा करने २७ का भाग देने पर जो शेष रहे सो सूर्य का नक्षत्र जानना। उम नक्षत्र पर सूर्य वा (गोचर) मचार होने पर सूर्य जब तक उम नक्षत्र पर रहे तब तक कथिन भाव की हानि तथा पिता को क्लेश, या बट्ट होना है इसमें बौद्धे मशय नहीं है। और उम नक्षत्र में ५१९ नक्षत्र पर भी सूर्य मचार होने पर पिता या चाचा, ताऊ (पिता के ज्येष्ठ भ्राता) को मरण या बट्ट निश्चय होता है। यह ममगत विचार सूर्य की दशा अथवा उम भाव की चरणपदिशा के वर्ग में अवश्य बनना चाहिए। (जब कुछ विशेष योग कहते हैं) सूर्य में चतुर्थ भाव में गृह हो या मगत अथवा शनि हो और गुरु तथा शुक की दृष्टि नहीं हो तो (दशानुकूल समय में) पिता की मृत्यु होती है।

लग्न से या चन्द्रमा से नवम स्थान पर शनि हो तो दशानुकूल समय पर पिता की मृत्यु होती है परन्तु पापग्रह की दृष्टि अवश्य होनी चाहिए। इसी प्रकार लग्न से चतुर्थ भाव राशि के स्वामी की दशा में भी पितृक्षय जानना। चतुर्थेश की दशा में बहुत द्रव्य आदि की प्राप्ति में सशय जानना। पिता के जन्म लग्न से ८वीं राशि में जातक का जन्म हो अथवा अष्टमभाव का स्वामी लग्न में हो तो उसीसे पिता सम्बन्धी कार्य हो (पिता की मृत्यु हो)। चतुर्थेश लाभ राशि में हो विशेषकर के चन्द्रमा से चतुर्थेश लाभ भाव में या दशम भाव में हो तो जातक पिता का आज्ञाकारी होता है। और उसी से पिता सम्बन्धी सब कार्य होते हैं ॥८-१७॥

पितृजन्मतृतीयर्षे जातः पितृधनाश्रित ॥ पितृकर्मगृहे जात पितृतुल्यगुणान्वित ॥१८॥  
 तदीशे सप्रसस्येपि पितृश्रेष्ठो भवेत्सुत ॥ सूर्याष्टवर्गं यच्छून्य मास सवत्सर प्रति ॥१९॥  
 विवाहव्यवहारादि मासे ऽस्मिन्वर्जयेत्सदा ॥ कलहो मासदुःखानि शून्यमासे भवति च ॥२०॥  
 एषमादिफल ज्ञात्वा मास प्रति समाचरेत् ॥ सशोध्य पिंड सूर्यस्य रध्रमानेन वर्द्धयेत् ॥२१॥  
 द्वादशादिहृताच्छेष मेपादि गणयेत्पुन ॥ तस्मिन्मासे मृति विद्यात्तत्रिकोणगतेपि वा ॥२२॥  
 सूर्यादि कल्पयेत्स्वन्ये परतो मास्करे स्मृति ॥ विशेषं भावसूत्रेऽपि पितुर्वापादिक दिशेत् ॥२३॥

पिता के जन्म लग्न से तीसरी राशि में जन्म हो तो जातक पिता के धन पर आश्रित रहता है तथा १०वीं राशि पर जन्म हो तो पिता के बराबर विद्या और गुणयुक्त होता है। और वही दशमेश यदि लग्न में हो तो पिता से भी बढ़कर गुणवान् होता है। सूर्याष्टक वर्ग में जो शून्य सख्या है उस सख्या के महीने और वर्ष में विवाहादि, शुभ कार्य नहीं करने चाहिए। क्योंकि उस महीने में कलह दुःख होते हैं। इस प्रकार अष्टक वर्ग के विचार से महीना जानना। सूर्याष्टक वर्ग के पिण्ड की अष्टमभाव के नीचे के अंक में गुणाकर १२ का भाग देने में जो सख्या बाकी रहे, मेघ आदि क्रम से गिनकर जो महीना प्राप्त हो उस महीने में जब सूर्य हो तो पूर्वोक्त कहे हुए सब फल प्राप्त होने की संभावना है। और इसका विशेष विचार आगे कहा जायेगा। १८-२३॥

उदाहरण-सूर्य में ९वीं राशि पिता का घर है यह कह चुके हैं। यहाँ सूर्य बुम्भ राशि में है। उसकी ९वीं राशि तुला है। उसके नीचे अष्टक वर्ग का फल ६ है। और पिण्ड योग ९१ है। ६ से गुणा किया तो ५४६ हुआ। इसमें २७ का भाग किया तो लब्धि २० हुई जिसे छोड़ दिया। बाकी अंक ६ प्राप्त हुआ। अश्विनी में गिना तो आर्द्रा नक्षत्र हुआ। अत आर्द्रा नक्षत्र में शनि के आने पर पिता को कष्ट या मृत्यु हो। इसी तरह आर्द्रा के त्रिकोण नक्षत्र स्वाती और शतभिषा नक्षत्र होने पर भी पिता को कष्ट या मृत्यु हो। अथवा सूर्य का पिण्ड ९१ को ३ से गुणा किया तो २७३ हुआ। इसमें १० का भाग किया तो लब्धि २२ व्यर्थ और शेष ९ बचे, तो धन राशि प्राप्त हुई। अत ज्ञात हुआ कि धन राशि में शनि होने पर और धन के त्रिकोण मेघ और मिह राशि में शनि होने पर पिता को कष्ट या मृत्यु हो। पिता के अभाव में पिता के समान चाचा आदि को कष्ट या मृत्यु हो।



## अथ चन्द्रफलमाह

चन्द्राच्चतुर्यगे मातु प्रासादशामचित्तनम् ॥ चन्द्राष्टवर्गं शून्यं च शून्यराशियते विधी ॥२४॥  
 तत्रक्षत्र परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत् ॥ चन्द्राष्टमे शनिक्षेत्रेऽत्रितयेषु विशेषत ॥२५॥  
 अथामव्याधिदु खानि लभते नात्र सशय ॥ चन्द्रात्सुखफलात्पिण्ड वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ॥२६॥  
 शेषे मृगे शनौ धाते मातृहानि विनिर्दिशेत् ॥ तत्रिकोणेषु वा केचिद्दशाच्छिद्रेषु कल्पयेत् ॥२७॥  
 चन्द्रात्सुखफलात्सुखस्थाने भौमे वा भास्करात्मजे ॥ दृश्यते वा तयो स्थान पूर्वोक्ते  
 कालसंगते ॥२८॥ तदभावे स्वय मृत्युर्दशान्तरगतेऽपि वा ॥ चन्द्रात्सुखेष्टमे रासेत्त्रिकोणे  
 दिवसाधिपे ॥२९॥ मात्रा वियोगश्चास्तीति निर्दिशेल्लप्रत- पितुः ॥ पितुर्वा मातृविन्ताया  
 भास्करादीन् प्रकल्पयेत् ॥३०॥

## चन्द्रमा का फल

चन्द्रमा से चौथे भाव में माता, नकान, ग्राम भूमि आदि का विचार करना चाहिए। चन्द्राष्टक वर्ग में यदि शून्य सख्या हो और चन्द्रमा भी शून्य राशि पर हो तो चन्द्रमा के नक्षत्र को छोड़कर बाकी नक्षत्रों में शुभ काम करो। चन्द्रमा स ८व नक्षत्र स तीन नक्षत्रों में शनि के नक्षत्र है। उनमें रोग, व्याधि दुःख आदि होता है। चन्द्रमा से ४थे भाव के पिण्ड को चौथे भाव के फलसे गुणा करने पर शेष नक्षत्र प्राप्त होगा। शेष नक्षत्र यदि मृगसिंह हो और उसमें शनि आये तो माता की मृत्यु होती है। तथा उसके त्रिकोण नक्षत्रों में भी शनिचारसे माता की मृत्यु होती है। और चतुर्यभाव राशि की दशा में भी ऐसा ही समझना। चन्द्रमा या तत्र से ४थे स्थान में मंगल या शनि हो अथवा पूर्वोक्त रीति से मंगल शनि चन्द्र नक्षत्र पर आते हो तो जातक को कष्ट या मृत्यु प्राप्त होती है। चन्द्रमा स ४थे ८वे भाव अथवा ९वे ५व भाव पर सूर्य हो तो माता से वियोग होता है। ऐसे ही चन्द्रमा से माता और चन्द्रमा से सूर्य पूर्वोक्त इसी रीति से पिता के लिये फलकारक है ॥२४-३०॥

उदाहरण (कल्पित उदाहरण में) चन्द्रमा धन राशि में है। अष्टम सिंह राशि। उसका स्वामी सूर्य धनिष्ठा नक्षत्र में हो, रेवती तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में हो तो रोग, व्याधि, दुःख देता है। इसलिये इन नक्षत्रों में विवाह आदि शुभ कार्य न करो। चन्द्रमा से सुखस्थ स्थान १२ इसका अष्टक वर्ग से प्राप्त हुआ फल ३। योग पिण्ड ९१ को ३ से गुणा किया तो २७३ हुआ। २७ का भाग दिया तो शेष ३ बचा। अतः कृत्तिका नक्षत्र और उसका त्रिकोण उत्तरा फाल्गुनी और उत्तराषाढा नक्षत्र पर शनि होने पर माता को कष्ट या मृत्यु हो। राशि के लिये योग पिण्ड ९१ को २से गुणा किया तो १८२ हुआ। १२ का भाग दिया तो २ शेष रहा। इस प्रकार वृष राशि तथा उसकी त्रिकोण राशि मन्वा और मकर राशि के शनि में माता को कष्ट या मृत्यु हो। माता के अभाव में माता के समान गौरी आदि को फल हो।

## अथ भौमफलमाह

भौमाष्टवर्गं सचिन्त्य भ्रातृविहमर्धयंकम् ॥ भौमस्थितस्य सहजो राशिभ्रातृगृह स्मृतम् ॥३१॥  
 त्रिकोणे शोधन कृत्वा यत्र भूयासि तत्र च ॥३२॥ भौमो बलविहीनश्चेद्दीर्घायुर्भ्रातृको भवेत् ॥

फलानि यत्र क्षीयन्ते तत्र भूमितराः स्मृताः ॥३३॥ तद्वाशिफलसाख्यैश्च वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ॥  
शेषमृक्षं शनौ पाते भ्रातृहानिं विनिर्दिशेत् ॥३४॥

### भौम फल

भौमाष्टक वर्ग में भ्राता, पराक्रम, साहस का विचार करना चाहिए। मंगल से ३ग भाव भ्राता का घर है। त्रिकोण शोधन करके विचार करना चाहिए। मंगल यदि बलहीन हो तो भ्राता दीर्घायु होता है। मंगल बलवान् हो तो भ्रातृभाव की हानि करता है। पूर्ववत् पिण्ड में नक्षत्र निकाल कर देखना चाहिए। उस नक्षत्र पर शनि हो तो भ्राता की मृत्यु होती है ३१-३४॥

उदाहरण (कल्पित) मंगल मीन राशि का है, इससे ३रा राशि वृष हुआ। उसका फल २ है। मंगल का योग पिण्ड ५९ इसको २ से गुणा किया तो ११८ हुआ। २७ का भाग किया तो शेष १० रहे। अतः मघा नक्षत्र और इसका त्रिकोण नक्षत्र मूल और अश्विनी इनमें शनि होने पर भ्राता को कष्ट हो। राशि के लिये पिण्ड ५९ अष्टमभाव राशि अक ३ से गुणा किया तो १७७ हुआ। १२ का भाग किया, शेष ९ धन राशि हुआ। अतः धन, भेष, सिंह राशि के शनि होने पर भ्राता को कष्ट हो।

### अथ बुधफलमाह

बुधतुल्यं कुटुंबं च धनपुत्रादिमातुला तत्पंचमे मन्त्रविद्यालिपिबुद्ध्यादि चिंतयेत् ॥३५॥  
बुधाष्टवर्गं संशोध्य शेषमृक्षयते शनौ ॥ बहुमित्रविनाशादीर्त्तलभते नात्र संशयः ॥३६॥

### बुध फल

बुध से दूसरा और चौथा स्थान धन, पुत्र और मामा का होता है। पाचवा स्थान मन्त्र सिद्धि विद्या, कला-कौशल का है। अतः उपर्युक्त स्थानों से उनके फलों का विचार करना चाहिए। बुध के अष्टक वर्ग का शोधन करके बताये हुए भाव की राशि से गुणाकर २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र में शनि हो तो बन्धु, मित्र आदि का विनाश करता है, इसमें कोई संशय नहीं।

उदाहरण (कल्पित) बुध मकर में है, इसका ४था भेष राशि है। इसके नीचे का फल ४ है। बुध का योग पिण्ड १३२ है। इसे ४ से गुणा किया तो ५२८ हुआ। २७ का भाग किया तो शेष १५ रहा। अतः स्वाती (त्रिकोण नक्षत्र शतभिषा और आर्द्रा) नक्षत्र में शनि होने पर बन्धु, मित्र आदि को कष्ट होता है। राशि निकालने के लिये योग पिण्ड १३२, अष्टम भाव का फलाङ्क ५ से गुणा किया तो ६६० हुआ। १२ का भाग दिया, शेष शून्य रहा। अतः मीन, चर्च वृश्चिक राशि के शनि होने पर बन्धु, पिता, मित्र आदिको कष्ट हो। इसी प्रकार पंचम स्थानसे विचार करना चाहिए।

### अथ गुरुफलमाह

जीवात्पंचमतो ज्ञान पुत्रधर्मधनादिकम् ॥ गुरोरष्टकवर्गेषु सत्ताममपि कल्पयेत् ॥३७॥

## शुक्र फल

शुक्र का अष्टक वर्ग फल निकालना चाहिए। जिन २ भावों में फलाङ्क सख्या अधिक हो उन भावों के देश के अनुसार भूमि, स्त्री, धन, व्यापार आदि का निर्देश करना चाहिए। शुक्र के सातवें घर के स्वामी से युक्त जो राशि हो उस राशि के दिशा से उपर्युक्त भूमि, स्त्री, धन आदि की प्राप्ति हो, ऐसा कहना चाहिए। सप्तमेश स्थित नक्षत्र में जातक की स्त्री का जन्म हो। कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि सप्तमेश की उच्च राशि और नीच राशि में उसका जन्म नक्षत्र ही। अथवा सप्तमेश के नवाश की राशि या उसकी त्रिकोण राशि में जन्म होना चाहिए। लग्न तथा चन्द्रमा के नवम भाव की राशि स्त्री का जन्म लग्न हो। अथवा लग्न चन्द्रमा की सम्बन्धित राशि में जन्म लग्न हो। स्त्री के लक्षण का विचार सप्तमेश स्वक्षेत्र या उच्च का हो अथवा अपने नवमाश में या मित्राश में हो तो उस राशि के अनुसार स्त्री का लक्षण कहा। स्त्री का स्थान शुक्र के ७वें स्थान की राशि का अथवा उसके त्रिकोण राशि का देशकाल व दिशा कहना चाहिए ॥४४-४९॥

प्रोक्तराशिर्यदा दारा जन्मर्क्षं सततित्वादा ॥ अनुक्तराशिर्जन्मर्क्षमस्ति चेन्नस्ति सतति ॥५०॥  
 मृगुवरिशयुक्तरक्षं फल सख्या स्त्रियो विदु ॥ क्षेत्रस्त्रीग्रहणे साम्य नृपस्य द्विगुण तथा ॥५१॥  
 मदाशे मदसयुक्ते मदक्षेत्रेऽथवाभृगी ॥ नीचाशे पापसयुक्ते नीचस्त्रीभोगमिच्छति ॥५२॥  
 मेदिनीतनयभोगनिवासी मेदिनीभवसदालययुक्त ॥ मगलेऽथवायुक्तमित्तस्तदाऽत्यतमुदरपरारण्यारत ॥५३॥  
 भीमाराकगते शुक्रे भीमशेऽथवातेपि वा ॥ भीमेन पुतरष्टे च परस्त्रीभोगमिच्छति ॥५४॥  
 शररागारे मदभागे कुजाशे मदारान्या धीक्षिते यस्य पुंस ॥ स्यात्तद्वारा जारिणी चचला वा  
 वेद्यादासी स्वामिसतोपनिघ्नी ॥५५॥  
 जामित्रे मदभीमाशे तदीशे मदभीमगे ॥ वेद्या वा  
 जारिणी वापि तस्य भार्या न स्यात् ॥५६॥

ऊपर बताई हुई राशि यदि जन्म की राशि हो तो स्त्री सतानवाली और अनुक्त राशि हो तो स्त्री सतान रहित होती है। शुक्र और सप्तमेश की राशि को जोड़ने पर अधिक हो तो १२ से भाग देने पर जो सख्या शेष रहे सम्पत्ति स्त्रियों की उतनी सख्या अधिक में अधिक हो। यह सख्या औरों में उतनी ही तथा राजा में द्विगुण समझना। सप्तम स्थान में शनि का नवमाश हो, शनि युक्त हो तो, अथवा शनि की राशि में शुक्र हो और नीच नवमाश में पापग्रह से युक्त हो तो जातक नीच जाति की स्त्री का भोगी होता है। यदि शुक्र मंगल की राशि में या मंगल से युक्त या मंगल की दृष्टि हो तो सुन्दर परस्त्रीका भोगी होता है। मध्यम भाग में शनि का या मंगल का नवमाश हो। शनि मंगल की दृष्टि हो तो उस जातक की स्त्री चंचल, व्यभिचारिणी अथवा वैद्या होकर स्वामी के निघ्न अगन्तापजनक रहती है। सप्तम स्थान में शनि मंगल का नवमाश हो, सप्तमेश शनि मंगल के घर में हो तो जातक की भार्या वैद्या या व्यभिचारिणी निग्रय होती है ॥५०-५६॥

पापाहृदाशने चट्रे जामित्रे व्यपयेऽपि वा ॥ पापग्रहान्विते शुभे स्त्रीरैतो शुचमावहेत् ॥५७॥  
 शुक्राकाकसमाना स्त्री वर्णहपाणुपान्विता ॥ भवेच्छाशकतुल्या वा शरैरास्य गुणान्विता ॥५८॥  
 सपापभागे विधौ व्यपयेगन्तव्येऽपि चेत् ॥ सपापभागेऽपिगन्तव्येऽपि चेत् ॥ शुभा पदम् ॥५९॥

सिताराकप्रमाणिका स्त्रियो भवति सबुणा ॥ चराशसमितास्तथास्वनापतुल्यसद्गुणा ॥६०॥ शुक्रान्मवे त्रिकोणास्ये नेष्ट जीवे सुखप्रदम् ॥ तेषा बलाबलत्वेन भाषाया लक्षण बवेत् ॥६१॥ एवमादि फल ज्ञात्वा निर्दिशेच्छुक्रवर्गत् ॥६२॥

आरूढ लग्न के नवाश में पापग्रह युक्त चन्द्रमा ७वे या १२ वे स्थान में हो, शुक भी पापग्रहयुक्त हो तो जातक स्त्री के कारण दुखी रहता है। स्त्री का वर्ण, रूप और मुख शुक के नवमाश के समान होना चाहिए। अथवा सप्तमेश के गुणों से युक्त चन्द्रमा के समान होना चाहिए। चन्द्रमा पापग्रह युक्त पापग्रह के नवाश में १२वे या ७वे स्थान में हो और शुक पापग्रह सहित हो तो स्त्री के कारण दुखी रहता है। शुक के नवमाश के अनुसार स्त्रियाँ होती हैं। चर नवमाश के अनुसार उनके गुण होते हैं। अथवा नवमाश स्वामी के अनुसार उनके गुण कहने चाहिए। शुक से शनि त्रिकोण में हो तो नेष्ट है। बृहस्पति त्रिकोण में हो तो सुख देनेवाला होता है। इस प्रकार शनि और गुरु का बलाबल देखकर स्त्रीका लक्षण कहना चाहिए। ऐसे शुक्राष्टक वर्ग का फल कहा गया।

उदाहरण (कल्पित) शुक्राष्टक वर्ग का पिण्ड ४१ है। शुक स सप्तमभाव की राशि कन्या है जिसका फल ४ है उसमें ४१ को गुणा किया तो १६४ हुआ। २७ का भाग देन पर शेष २ रहा। अतः भरणी, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढा नक्षत्र पर शनि होने से स्त्री को कष्ट सभव है। तथा योग पिण्ड ४१ को ४ से गुणा किया तो १६४ हुआ। उसमें १२ का भाग दिया तो शेष ८ रहा। अतः वृश्चिक, मीन, कर्क राशि में शनि होने से स्त्री को कष्ट हो ॥५७-६२॥

### अथ शनिफलमाह

शनेश्वरस्थितस्थानादष्टम मृतिरुच्यते ॥ शनेरष्टकवर्गो च स्वस्यापुष्य विनिर्दिशेत् ॥६३॥ लग्नप्रमृति मदात् फलान्येकप्रकारयेत् ॥ लग्नादिफलतुल्याब्दे व्याधिर्वर समादिशेत् ॥६४॥ मन्दादिलग्नप्रवर्तं फलान्येकत्र सदुत्तम् ॥ मन्दादिफलतुल्याब्दे व्याधि तस्य समादिशेत् ॥६५॥ तयोपयोगसमाब्दे तु मृत्युयोग प्रचक्षते ॥ शोध्यादिगुणन कृत्वा पिड सस्याप्य यत्नत ॥६६॥

#### शनि फल

शनि के अष्टम स्थान से मृत्यु का निर्देश किया जाता है इसलिये शनि के अष्टक वर्ग से जातक की आयु का विचार करे। लग्न स आठवे स्थान तक के फलाकी को जोड़ना, उम जोड़ में आई हुई सख्या के वर्ष में व्याधि या द्वेष (लडाई-अगडा) होना है। शनि के स्थान में लग्न तक की राशियों के फल का योग (जोड़) करे। आई हुई सख्या के वर्ष में व्याधि (रोग) होती है। और आई हुई इन दोनों गख्याओं का जोड़ जो सख्या हो उम वर्ष में मृत्युयोग है। शनि के अष्टक वर्ग के पिण्ड की सख्या को गुणन में गुणा करके ॥६६॥

अष्टमस्यफलैर्हृत्वा सप्तविरातिभाजितम् ॥ शताहूर्ध्वं तु तद्विड शतमेवापतस्यजेत् ॥६७॥ आयुः पिड तु ज्ञानीयात्प्राग्द्वेलां तु कल्पयेत् ॥ त्रिकोणैकदशित्यर्शसोऽन विरचय्य च ॥६८॥ पिड सस्याप्य गुणपेत्सप्तदष्टमरी फले ॥ सप्तविरातिहृत्तेय मृत्युकाल वदेद्गुण ॥६९॥

समूलाष्टकवर्गं च यत्र नास्ति फल गृहे ॥ तत्र नास्ति फल तस्य यदा याति शनैश्चर ॥७०॥ तद्गृहे  
रविचन्द्रौ चेद्दशाछिद्रे मृति वदेत् ॥ दशाछिद्वसमायोगे मृत्युरेष न सशय ॥७१॥  
मदाष्टवर्गाराशीना हीनराशी क्षयो भवेत् ॥ तद्गृहे भास्करे मदे तस्मिन्काले मृति वदेत् ॥७२॥  
मदाष्टवर्गाद्यपरिष्टयोगे दुष्टानि वर्षाणि विचारयति ॥ पूर्वोक्तसशोधनतो हि शुद्ध पिंड  
सुधीमान्विलिखेत्पृथक्स्यम् ॥७३॥ तत्रात्तु मदान्तमयोफलानामैक्य शनेर्लग्नमुपात्यमेव ।  
तद्योगतुल्ये शरदीहकाले व्याधि मृति वा परदेशयानम् ॥७४॥ धनक्षय तत्प्रतितुल्यवर्ष  
तद्योगयोगाब्दसमे तु फष्टम् ॥ सामर्थ्यहीनप्रहृषाककाले प्राप्ते तदा निश्चयतो मृति स्यात् ॥७५॥  
बिलप्रशानिमध्यगानिच फलानि सताडयेन्नगैर्भविहृतानि शेषमितभे खले याति चेत् ॥ तदा  
धनमुखसति तबनुचागभादष्टमस्थितैर्विगुणयेद्गण भपरिशेषमस्थे शनौ ॥७६॥

अर्थात् अष्टमराशि के फलाक से गुणा करके २७ का भाग देने से। और गुणा किया हुआ  
अक सौ (१००) से अधिक हो तो १०० की सख्या घटाने से आयु का पिण्ड होता है।  
(अर्थात् लग्न में शनि के अष्टकवर्ग की राशियों के फलाक योग और शनि में लग्न तक की  
राशियों के फलाक योग का जोड़ आयु के वर्ष है।) इस प्रकार आयु का समय की कल्पना करो।  
त्रिकोण शोधन के बाद एकाधिपत्य शोधन किये हुए भावों की राशियों में पिण्डसख्या लेकर  
अष्टमराशि के फलाक से गुणा करके २७ का भाग देने पर जो सख्या प्राप्त हो उस सख्या के  
नक्षत्र में शनि के संचार में मृत्युकाल जानना। अष्टकवर्ग में जिस राशि के नीचे शून्य  
(फलाक) हो उस भाव की दशा में जब गोचर में शनि का संचार हो। और सूर्य तथा चन्द्रमा  
को योग हो तो राशि की दशा या अन्तर में निश्चय मृत्यु होती है। शनि के अष्टकवर्ग में जो  
हीन (बलहीन) राशि हो तो भी उस दशा में शनि का संचार हो तो मृत्यु जानना। इस  
प्रकार शनि के अष्टकवर्ग में व्याधियोगों के दुष्ट वर्षों का विचार किया जाता है। अतः पूर्वोक्त  
निकोण शोधन और एकाधिपत्य शोधन करके शुद्धता पूर्वक पिण्ड का आगयन करना चाहिए।  
पूर्वोक्त त्रियानुसार लग्नसे शनि तक और शनिसं लग्न तक की जो योग सख्या होती है उस वर्ष में  
रोग मृत्यु या परदेश यात्रा (चिन्ताकारी यात्रा) हाती है। या तो हानि, चोरी आदि में  
धनक्षय होता है या शारीरिक व्याधि होती है। और बलहीन ग्रह की दशा हो तो उगकी दशा  
में मृत्यु होती है। लग्न में शनि तक की फलाक सख्या को ७ में गुणा कर २७ का भाग देने में  
जो नक्षत्रसख्या प्राप्त हो उस नक्षत्र पर शनि (या गृह मंगल) का संचार होने पर धनहानि  
मुखस्य होता है। उन्ही पिण्ड की सख्या को अष्टमराशि के फलाक में गुणा कर २७ का भाग  
देने में जो ज्ञेय सख्या हो उस नक्षत्र पर शनि का संचार होने में उपर्युक्त पत्र जानना  
॥श्लोक ६७ से ७६ तक॥

उदाहरण (कल्पित)-लग्न में शनि तक के फलाक १४,४,३ ४ ३ २ ३ ४ इनका योग २८  
हुआ अतः २८वें वर्ष में रोग या मृत्यु हानि परदण यात्रा हो। शनि में लग्न तक के फलाक  
४५ २ इनका योग ११ हुआ इस वर्ष में भी पूर्व के समान व्याधि हानि यात्रा आदि का  
योग है। और इन २८ ११ सख्या का योग ३९ हुआ इस वर्ष में भी शनि चिन्ता बल  
आदि जानना परन्तु मृत्युरोग नहीं है। लग्न में शनि तक के फल योग २८ का ७ में गुणा किया

उदाहरण- (कल्पित)

चन्द्राष्टकवर्गमे चन्द्रमा से लग्न तक फलयोग १५ और लग्न से चन्द्रमा तक फलयोग ३४ हुआ, अतः १५वें और ३४वें वर्ष में धन, पुत्रादि की प्राप्ति का सुख हो। इसी प्रकार बुध्नाष्टकवर्गमे बुध से लग्न तक का फलयोग १४ और लग्न से बुध तक का फलयोग ४२ हुआ, अतः १४ या ४२वें वर्ष में धन प्राप्ति आदि का योग है। एव गुरु के अष्टकवर्ग में गुरु से लग्न तक का योग ८ लग्न से गुरु तक का फलयोग ४८ है, अतः इन वर्षों में धन, पुत्र, सुख हो। इसी प्रकार शुक्राष्टकवर्ग में शुक्र से लग्न तक योग ४ आदि से तथा लग्न की राशि भी यदि शुभ हो तो उससे भी शुभफल का निश्चय करे। शनि के अष्टकवर्ग को राशियों में फलांक सख्या शून्य उक्त उदाहरण में नहीं है। अतः नहीं लिखा।

### अथ सर्वाष्टकवर्गफलमाह

मेघादिभानां सकलाष्टवर्ग उत्पन्नरेखागणमेव कुर्यात् ॥ धृत्यादि १८ तत्त्वांतमितं कनिष्ठं त्रिंशावसानकित्त मध्यबीर्याः ॥८१॥ त्रिंशाधिकं तूत्तमबीर्यदाः स्युः शरीरसौख्यायवशो- विशेषाः ॥ स्वस्वाष्टवर्गं यदि वेदहीनाः क्लेशाय सौख्याय च वेदपुष्टाः ॥८२॥ दशमभवनरेखाभ्योधिक लाभमान भवति यदि विहीन स्याद्दृष्यास्य ततोपि ॥ अधिकतरविलग्न भोगसंपत्तिमुक्तं विनिमयवशतस्तद्विपरीत्यं जनस्य ॥८३॥ मध्या १० फलाधिको लाभो मध्यात्क्षीणफलो व्ययः ॥ यस्य रेखाधिकं लग्न भोगवानर्ववान् भवेत् विपरीते तु दारिद्र्य भवत्येष न संशयः ॥८४॥ प्रादक्षिण्यादिभानां सकलफलपुति विस्वतुष्कमेण कृत्वा तद्भागतो यः समधिकफलतः शोभन हानिमत्यात् ॥८५॥ सौम्या स्वोच्चस्वगेहोदितसचरयुते दिग्भिभागे स्वकार्ये वित्तेशाशानु वित्त भृतिपतिगतदिग्भागे देहनाशः ॥८६॥

### सर्वाष्टकवर्गफल

सर्वाष्टकवर्ग में मेघ आदि १२ राशियों की रेखा सख्या को एकत्र योग करे। वह योग यदि १८ से २५ तक हो तो 'कनिष्ठ' है। २५ से ३० तक हो तो 'मध्य' है। ३० से अधिक हो तो 'अधिक वाली' है। शरीरसुख, धनसमृद्धि और यश वृद्धि करने वाली है। अपने अपने वर्ग में ४ रेखा से कम रेखा क्लेश और ४ या अधिक हो तो सुखकारिणी है। ॥८२॥ (अन्यमत से-)  
दशमभाव की रेखा सख्या में लाभस्थान की रेखा अधिक हो और उनमें व्यवभाव की कम हो तथा लग्न की भी रेखा अधिक हो तो सम्पत्ति और भोग में युक्त हो। तथा इसमें विपरीत हो तो फल भी विपरीत ही होता है। ॥८३॥ (स्वमत में भी-यही कहा है, अन्य की बेचन सम्मति दी गई है) ॥८४॥

चक्र में दिशाये हुए क्रम में चार दिशाओं में प्रदक्षिण क्रम में ३-३ भाव रखना, जिस दिशा के भावों का फल अधिक हो, वह दिशा लाभकारी होती है और फल अल्प हो तो हानिकारी जाने। और जिस दिशा के भावों में सौम्यग्रह उच्च, स्वर्गही तथा उदित ग्रह हो, वह दिशा अपने व्यापार में धननाभकारी है। इसी प्रकार अष्टमभाव की दिशा भृत्यकारिणी है। ॥८६॥

	ल०	द्रा०	ए०	
दि०		पू	र्व	
वृ०	त्तर			द०
च०	३			लि
			प	
	प०	प०	त्त०	

## अथ भावफलमाह

भाव विलोक्ष्य सदसफलदायक यत्तद्राशिसमवफलैश्च तदुक्तपिडम् ॥८७॥ पिडे रेखाताडिते भावशेषे १२ राशौ तस्मिन्प्राति सौरि समाप्याम् ॥ यस्या तत्तद्भावहानि च विद्याप्राहुर्वैशे वाऽयवा तत्रिकोणे ॥ कृत्वा विदुभ्यन्तु काल मुधोमास्तस्माद्वाच्यप्राप्तिकाल शुभत्वे ॥८८॥

## भावफल

शुभ और अशुभ फलदायक भावों का फल प्राप्त करके पिण्ड करे, उसमें से इष्टभाव के पिण्ड को रेखा की सख्या से गुणा करके १२ का भाग दे, जो सख्या शेष रहे, उस सख्या के क्षय में जब गोचर में शनि, उस भाव की राशि में अथवा त्रिकोण राशि में संचार करे तो उस भाव की हानि होती है, और पिण्ड को बिन्दु मख्या से गुणा करके १२ का भाग देकर भी यह फल जाने। और गुरु आदि शुभग्रह संचार करे तो शुभफल प्राप्त होता है ॥८७॥८८॥

## तथा च

मृत्युभावेशभात् कोणनिघ्नफल, मृत्युज सूर्योर्ध्वपुक्ते रवौ ॥ तत्रिकोणेऽयवा रिष्टमास बवेत्, तातमातृगहाद्येऽयवा कल्पयेत् ॥ सूर्यजात्प्रमृत्प्वीश्वरान्त च तत्, पिण्डक ताडित मृत्युमानेन च ॥ सूर्य शेषर्षगे भास्करे नागन तत्रिकोणेऽयवा स्याद्विधि सवेत् ॥८९॥९०॥

अष्टमभाव का स्वामी जिस राशि में हो उससे त्रिकोण शोधित फल से अष्टमभाव के फल को गुणा करे पश्चात् १२ का भाग दे जो अवसख्या शेष रहे उस राशि में सूर्य हो अथवा उससे त्रिकोण राशि में सूर्य हो उस सौरमास में अरिष्ट कहना चाहिये। इसी रीति से पिता के लिए दशम से अष्टमभाव तथा माता के लिए चतुर्थ से अष्टम भाव एवं भ्राता के लिए तृतीय से अष्टमभाव से अरिष्टमास की कल्पना करे ॥८९॥ अथवा शनि से लग्नपर्यन्त या अष्टमभाव पर्यन्त के त्रिकोणशोधितफल के योग को अष्टमभाव के फल से गुणा करे, पश्चात् १२ का भाग देने से जो सख्या शेष रहे उस सख्याक राशि में सूर्य हो तब अथवा उससे त्रिकोण राशि में सूर्य हो तब हानि तथा वष्ट होता है। यह विधि पिता माता आदि भावों में भी समझना ॥९०॥

पीनाद्य मियुनान्तक प्रथमक प्रोक्त यम प्राक्तनै, कर्काद्य वणिजान्तक तरणतातज च मध्य बुधे ॥ कुम्भान्त स्वविराह्वय च बृह्मिर्वत् तत् फले सयुत तत्सौख्यार्य विरोधक बल पुने नैतद्विरोधाञ्जुमम् ॥९१॥

आयु के तीन भाव के अनुसार 'मौन, मेघ, वृष, मियुन' ये चार राशिया आयु के प्रथमभाग में तथा 'बर्क, मिह, कन्या, तुला' ये चार राशिया आयु के द्वितीयभाग में तथा 'वृश्चि, धनु, मकर, कुम्भ, ये चार राशिया आयु के तृतीय भाग में समझना। जिस भाग की राशि में फल अधिक हो आयु के उस भाग में अधिक सुख, धन आदि विशेष होता है; ऐसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है ॥९१॥

## अथ राहुयुक्तगुरुफलमाह

राहुयुक्तगुरुराशिगे १।१२ गुरौ तत्रिकोणमथ रिष्टकारकम् ॥ अल्पमृत्युरिपुभाषनायको  
योगकृत्तविह मृत्युसंभवः॥१२॥ तत्रेदुतस्त्रिंशतिमे वृकाणे गुरौ त्रिकोणेपि तदौश्वरस्य ॥ वर्षे  
विषादो परदेशायानं शरीरपीडा मृतिसन्निभास्यात् ॥१३॥

### राहुयुक्त गुरुफल

जन्मलग्न यदि गुरुराशि १।१२ हो, और उसमे राहु स्थित हो तो गोचर मे जब बृहस्पति इस  
राहुस्थित राशि मे या उससे त्रिकोण राशि मे संचार करे तब अरिष्ट होता है। और यदि पटेश से  
सम्बन्ध हो तो मृत्यु भी संभव है॥१२॥ जन्मलग्न या चन्द्रलग्न से तीसरे द्वेकाण मे गुरु हो अपवा  
स्त्येश या चन्द्रस्त्येश के साथ ५।९ (त्रिकोण) स्थान मे जिस वर्ष मे गुरु संचार करे तो उस वर्ष मे  
पारिवारिक कलह, विदेश यात्रा, शरीर पीडा व मृत्युतुल्य कष्ट होता है॥१३॥

## अथ निधनार्कमाह

मृत्युपद्मादशाशत्रिकोणेऽगुरो मृत्युनाथत्रिकोणस्थसूर्ये मृतिः ॥ अर्कलिप्ताहतो  
राहुलिप्तागणश्रकलिप्ता २१६०० प्तयुक्तो रविर्मृत्युदः ॥१४॥  
भौममार्तंडलिप्ताहति.कारयेच्चकलिप्ताहताल्लब्धयुक्तो रविः ॥ याति यस्मिस्तदा तत्रिकोणेपि  
या क्लेशमाहु धय मासि धोमान्वदेत् ॥१५॥

## अथ श्लोकद्वयं लग्नविषयकमाह

निधनेशद्वादशाशत्रिकोणे मास्करे मृति' ॥ निधनेशत्रिकोणे वा सूर्याविष्वागतेष्वपि ॥१६॥  
षष्ठाष्टमव्ययेशाना स्फुटयोगगते धनौ ॥ मृति तत्र विजानीयास्तत्रिकोणगतेऽपि वा ॥१७॥

### निधनार्क साधन (अवश्य ज्ञातव्य)

निधनार्क—अर्थात् जातक की मृत्यु किस सूर्य (भौममास) मे होगी, यह निश्चय करना।  
अष्टमेश जिस द्वादशांश मे हो उस राशि से त्रिकोण राशि मे (गोचर मे) जब राहु हो  
तब अष्टमेश से सूर्य जब त्रिकोण राशि मे (गोचर मे) संचार करे तब मृत्यु होती है। (इस  
नियम से मृत्यु का मास परिज्ञान हुआ, अब दिन और समय का ज्ञान कहा जाता है) सूर्य की  
राशि, अश, घटी तथा राहु की राशि, अश, घटी को घटघात्मक एकरस करे, इस घटघात्मक  
सख्या मे से सूर्य के घटघात्मक अंक को पृथक् भी रसे, बाद सूर्य राहु की घटघात्मक सख्या का  
योग करे तथा इस योग पिण्ड मे २१६०० (१२ राशि X ३० X ६०) का भाग दे, भाग देने से  
जो लब्ध घटघात्मक अंक सख्या प्राप्त हो, वह पृथक् स्थित सूर्य की घटघादि मस्या से युक्त  
करे, बाद ६० का भाग देकर अश और अशो मे ३० का भाग देने से राशि, अश, कलादि सूर्य  
स्फुट होगा। उपर्युक्त नियमानुसार सूर्य जिस मास मे जिस दिन और जिस समय उक्त  
राश्यादि के समान हो उस मास के उन दिन में सूर्यागत समय मे जातक की मृत्यु  
होगी॥१४॥

### उदाहरण—(कल्पित)

कल्पना किया कि किसी जन्मपत्र मे सूर्य स्पष्ट ५।३।१४।३० है तथा राहु २।४।३०।१०  
है, इन दोनों को कलादि पिण्ड किया तो सूर्य ९४०० और राहु ३८४० हुआ। इनको परस्पर



नवाश मे हो उससे ५।९ नवाश राशि मे जब चन्द्रमा सञ्चार (गोचर मे) करे तथा चन्द्रराशि की रेखासख्या कम हो तो निश्चय मृत्यु बहना चाहिए। (समयज्ञान रीति पूर्ववत्) ॥९/॥

### निधनलक्षणान

१-जन्म लग्न अथवा जन्मकालीन चन्द्रमा जिस नवाश मे हो, उससे ६४वीं नवाश राशि क लग्न मे मृत्यु हो। २-अथवा लग्न या अष्टमभाव के त्रिकोण ५।९ राशि के लग्न मे मे जिस राशि मे कम रेखा हो उस राशि के स्वामी की दशान्तर्दशा मे मृत्यु जानना ॥९९॥

इसी प्रकार यात्रा तथा विवाह समय मे भी इस समुदायाष्टक वर्ग चक्र के अशुभ या शुभ राशियो के रेखा बिन्दु के फलाफल जन्मचक्र के समान ही विचार करना चाहिए ॥१००॥

सर्वकर्मफलोपेते ह्यष्टवर्गक उच्यते ॥ अन्यथा फलविज्ञान दुर्ज्ञेय गुणदोषजम् ॥१०१॥  
त्रिशाधिकफला ये स्यु राशयस्ते शुभप्रदा ॥ त्रिशात पचविशादिराशयो मध्यमा स्मृता ॥१०२॥ अतिशीघ्रफला ये च राशय कष्ट दुःखदा । श्रेष्ठराशिषु सर्वेषु शुभकार्याणि कारयेत् ॥१०३॥ श्रेष्ठान् राशीन्मुहूर्तेषु योजयेन्मतिमाश्र ॥ तत्तज्जन्मप्रभावास्तु पुंसस्ती सार्द्धमाचरेत् ॥१०४॥ कष्टराशिमुहूर्तेषु वर्जयेन्मतिमाश्र ॥ मध्यात्फलाधिके लाभो लाभालीनफले व्यय ॥१०५॥ लग्न फलाधिक यस्य भोगधानर्यवान् हि स ॥ विपरीतेन दारिद्र्य भविष्यति न सशय ॥१०६॥ लग्ने यावत्फल चास्ति तद्दशया फल वदेत् ॥ मूर्त्यादिद्वयपर्यन्त इद्वा भावफलानि च ॥१०७॥

इस सर्वाष्टकचक्रमे त्रिकोणशोधनादि सम्पूर्ण क्रिया कर सब राशियो की सख्या वा योग करके विचार करना चाहिए। अन्यथा शुभाशुभफल का ज्ञान होना कठिन है ॥१०१॥ फलाफल-३० की सख्या से अधिक फलवाली राशिया (भाव) शुभ है और २५ स ३० तक की सख्यावाली राशि मध्यम है। इससे कम सख्या की राशिया बनिष्ठ है। जो राशिया बहुत कम फलवाली हो वे कष्ट और दुःख देनेवाली होती हैं। अतः श्रेष्ठ राशियो में ही शुभकर्म करना चाहिए ॥१०२॥ १०३॥ तथा मुहूर्तों में भी (तात्कालिक ग्रहस्पष्ट और भावस्पष्ट तथा अष्टकवर्गस्पष्ट करके तद्वारा) श्रेष्ठ राशि निश्चित करके लेना चाहिए जन्मकाल से ज्ञात श्रेष्ठ राशि का ही योग करना ॥१०४॥ और जन्मकाल से ज्ञात हुई नेष्टराशि का परित्याग करना चाहिए। जिसके जन्मकालिक अष्टकवर्ग मे दशमभाव से एकादशभाव के राशि फल अधिक हो और लाभ भावसे रेखाफल व्ययभावका कम हो ॥१०५॥ तथा लग्नका भी रेखाफल अधिक हो तो वह मनुष्य अपने जीवन मे भोगी और धनी होता है। विपरीत हो तो निश्चय ही दरिद्री होता है ॥१०६॥ लग्न से व्यवभाव पर्यन्त के फल (रेखासख्या) देखकर जिस भाव की अधिक सख्या हो उसका श्रेष्ठ और न्यून वा न्यून फल बहना चाहिए, यदि अल्पफल हो तो क्षय और मृत्यु होती है ॥१०७॥

अधिके शोभन विद्यालीने हीने च मृत्यवे ॥ मध्यमे मध्यम याति विचार्य भावसप्तमम् ॥१०८॥  
सदृश्य विनिश्चय दशानयनवत्तया ॥ पापग्रहसमाहृद सष्ट श्लेशरर स्मृतम् ॥१०९॥

सौम्यैर्जुष्ट शुभ ज्ञेय मिश्रीर्मिश्रफल वदेत् ॥ खण्डत्रयफल ज्ञात्वा दशाफलमुदीरयेत् ॥११०॥  
 लग्नात् प्रभृति मदात्तमेकीकृत्य फलानि वै।सप्तभिर्गुणयेत्यश्नात्सप्तविशोद्धृतात्फलम् ॥१११॥  
 तत्समानगते पापे दुःख वा रोगमाविशेत् ॥ मन्दात्प्रभृति लग्नान्तमेवमेव प्रकल्पयेत् ॥११२॥ भीमा  
 च्चलप्रपर्यन्तमेकीकृत्य तु बिन्दवः।पूर्ववद्गुणित कृत्वा वर्षमेव प्रकल्पयेत् ॥११३॥ तद्वर्षे पापसयुक्ते  
 व्याधिमृत्युभय भवेत् ॥ वर्षेण हीनभागेषु तद्भाव वर्जयेत्तदा ॥११४॥ गोष्ठ क्षेत्र कुपि वापि  
 श्रेष्ठराशौ स्थित शुभम् ॥ क्षीणराशौ स्थित द्रव्य तद्द्रव्य नाशता व्रजेत् ॥११५॥

मध्यम श्रेणी का फल हो तो भाव के अनुसार मध्यम फल होता है ॥१०८॥ अष्टवर्ग के  
 १२ भावों के ३ खण्ड कल्पना करे, लग्न से ४ पर्यन्त प्रथम खण्ड, तथा ५ से ८ तक द्वितीय  
 खण्ड और ९ से १२ तक तृतीय खण्ड कल्पना करे एवं इन खंडों में पापग्रह युक्त खण्ड को  
 क्लेशकारी समझना ॥१०९॥ तथा शुभग्रहयुक्त खण्डको शुभ एवं शुभ पापमिश्रितसे मिश्रित फल  
 जानना ॥ इस प्रकार तीनों खंडों के फल जानकर दशा का फल कहना चाहिए ॥११०॥ लग्न स  
 शनिराशि तक के रेखा फल का योग करके सात से गुणा करके २७ का भाग देना ॥१११॥  
 भाग से जो लब्ध संख्या हो उस संख्या के वर्ष में दुःख या रोग होता है, इसी प्रकार शनि स  
 लग्न तक देखना ॥११२॥ तथा भौम से लग्न तक की बिन्दुसंख्या का योग करने ७ से गुणा कर  
 २७का भाग देना ॥११३॥ और लग्न (तथा शेष) वर्षमें पापग्रहका संचार होने पर व्याधि तथा  
 मृत्युभय होता है ॥ जित वर्षों में पापफल हो, उन वर्षों में शुभकार्य नहीं करना  
 चाहिए ॥११४॥ जमीन मुधारना तथा खेती आदि कार्य श्रेष्ठ राशि में शुभ होते हैं ॥ क्षीण  
 राशि में व्यापार आदि कार्यों में लगाया हुआ द्रव्य नष्ट होता है ॥११५॥

वितेश्वरस्य विभागे वित्तमाप्नोति निर्भ्रतम् ॥ रश्मेश्वरस्य दिग्भागे देहस्तत्र विनश्यति  
 ॥११६॥ मेघादिवद्गृहगता वसुसंख्यया तास्तद्भावपुष्टिबलबुद्धिकरा भवति ॥ पटपक्षसप्तस  
 हितानि शुभप्रदानि त्रिद्वेषेकर्णयुतभानि न शोभनानि ॥११७॥ मिश्र फल भवति  
 सागरकर्णयोगे रोगापवादावभयदा यदि शून्यभावा ॥ एकादिकर्णयुतभानुमुखप्रहाणा  
 भिश्चाष्टवर्गजनि सर्वफल प्रवर्ध्मि ॥११८॥

### अथ मासफलमाह

सकर्मदिने प्रहाणामष्टकवर्गेषु चारवशात् ॥ रेखेक्याच्छुभमशुभ मासफल तद्वशाद्दिनफल  
 च ॥११९॥

द्वितीय भाव या स्वामी जिस दिशा में हो उस दिशा से अवश्य धन की प्राप्ति होती है, एवं  
 अष्टमेज जिस दिशा में हो उस दिशा में देह का नाश (मृत्यु) होता है ॥११६॥ अब इस  
 अष्टकवर्ग के प्रत्येक भाव का मिश्र मिश्र फल कहते हैं कि—योग आदि ६ राशियों में यदि आठ  
 रेखाएँ हो तो उस भाव की पुष्टि तथा ऐश्वर्य की बुद्धिकारक होती है, और इमम काम ५-६-७  
 रेखाएँ भी शुभफलदायक ही हैं। एक दो और तीन रेखाएँ अथवा बिन्दु शुभ नहीं है ॥११७॥  
 और सुख दुःख मिश्रित फल होता है और यदि ७ बिन्दु हो तो रोग, निन्दा तथा भयकारक  
 होती है। इसी प्रकार एक आदि बिन्दु के अनुसार फल जानना ॥११८॥

## मासफल

सूर्य-के राशि संचार के समय अष्टवर्ग म फल का विचार पूर्वोक्त रीति म करना रेखाओ के योग से एक मास के फल का निर्णय तथा चन्द्रसंखार स दिन व फल का निर्णय करना चाहिए॥११९॥

## अथ रेखाशातिफलमाह

रेखाभि सप्तभिर्युक्ते मासे मृत्युर्नृणा भवेत् ॥ सुवर्णं विशतिपल दद्याद्द्वौ तिलपर्वतौ ॥१२०॥  
 वसुभिर्जातिहीन स शीघ्र मृत्युवशो नर ॥ असत्फलविनाशाप दद्यात्कूर्पूरजां तुलाम ॥१२१॥ रेखाभिर्नवमि सर्पांनिग्रयते मनुजो ध्रुवम् ॥ अश्वैश्चतुर्भि सयुक्त रथ दद्याच्छुभाप्तये ॥१२२॥ रेखाभिर्दशभि शस्त्रात्प्राणास्त्यजति मानव ॥ दद्याच्छुभफलावाप्तये कवच वज्रसयुतम् ॥१२३॥ रुद्रै प्राप्याभिशाप च प्राणैर्मुक्तो भवेन्नर ॥ विष्पले स्वर्णघटिता प्रदद्यात्प्रतिमा विधो ॥१२४॥ आदित्यैर्जलदोषेण मानवस्य मृति वदेत् ॥ भूमि दद्याद्ब्राह्मणाय दद्याच्छुभफल भवेत् ॥१२५॥ त्रयोदशमितैर्ध्याद्घ्रात्मानवो मृत्युमाप्नुयात् ॥ विष्णोर्हिरेण्यगर्भस्य दान कुर्याच्छुभाप्तये ॥१२६॥

## रेखा के बुष्ट फल की शान्ति

जिस मास म ७ रेखा हा तो मृत्यु का भय होता है उराकी शान्ति के लिए २० पल सुवर्ण और दो डेरी तिल को दान करे॥१२०॥ यदि आठ रेखा हा तो स्वजाति स अपमान और मृत्युभय हाता है। इस दोष की शान्ति के लिए बपूर स तुलादान करे॥१२१॥ यदि नौ रेखा हो तो सर्प से मृत्यु का भय होता है शान्ति के लिए ४ घोडे युक्त ग्य वा दान करे॥१२२॥ दस रेखा हो तो शस्त्राघात स मृत्यु होती है शुभफल प्राप्ति के लिए हीरा म युक्त कवच का दान करे॥१२३॥ ११ रेखा हो ता किसी क शाप स मृत्युभय होता है शान्ति क लिए १० पत्र की सुवर्णनिर्मित चन्द्रमाकी मूर्ति का दान करे॥१२४॥ १२रेखा ही तो जलसे मृत्युका भय है शान्ति के लिए ब्राह्मण को भूमि का दान करे॥१२५॥ तर्ह रेखा स व्याघ्र वा भय होता है शान्ति के लिए विष्णु की सुवर्ण की प्रतिमा का दान करे॥१२६॥

अचिराज्जीवित जह्याच्छक्रे कालेन मक्षित ॥ बराहप्रतिमा दद्यात्कनकेन विनिर्मिताम ॥१२७॥ रातो भय तिर्यमितैस्तथ हस्ती प्रदीयते ॥ रिष्टभूपै कल्पतरु प्रतिमा च निवेदयेत् ॥१२८॥ ऋचिचंद्रव्याधिभय गुडघेनु निवेदयेत् ॥ कलहोष्टेदुर्भिर्यद्दद्यात्प्रतगोमू हिरण्यकम् ॥१२९॥ वेशात्यागोर्कचंद्रै स्याच्छाति कुर्याद्विघानत ॥ विगत्या बुद्धिना स्यात्कुर्यात्सप्तमित जपम् ॥१३०॥ भूमिपक्षे रोगपीडा दद्याद्वायस्य पर्वतम् ॥ यमाश्विभिर्वधुपीडा दद्यादादर्शक बुध ॥१३१॥ रामपक्षयुते मासे नानाक्लेशा प्रपद्यते ॥ सौवर्णं प्रतिमा दद्याद्ब्रवे सप्तपले क्रमात् ॥१३२॥ वेदाश्विभिर्वन्धुहीनो दद्याद्गोदानक दत्ता ॥ सर्वरोगादिनाशार्थं जपहोमादि कारयेत् ॥१३३॥

यदि १४ चीदह रेखा हा ता शीघ्र ही मृत् का भय है। शान्ति क लिए सुवर्ण की बराह मूर्ति का दान करे॥१२७॥ पन्द्रह रेखा हो तो राजा से भय होता है शान्ति के लिए

हापी का दान करना चाहिए। १६ रेखा से अरिष्ट होता है, शान्ति के लिए कल्पतरु की सुवर्ण मूर्ति का दान करे। १७ रेखा से सत्रह रेखाओं से व्याधि का भय होता है, शान्ति के लिए गुड की गौ का दान करे। १८ रेखाओं से कलह होती है, शान्ति के लिए रत्न, गौ, पृथ्वी तथा सुवर्ण का दान करे। १९ रेखाओं से देशत्याग होता है, उसकी विधिबत् शान्ति करनी चाहिए। २० रेखाओं से बुद्धि का नाश होता है। शान्ति के लिए लक्ष जप करना चाहिए। २१ रेखाओं से रोग और दर्द आदि पीडा होती है, शान्ति के लिए धान्य की ढेरी का दान करना चाहिए। २२ से बन्धुओं से पीडा होती है, शान्ति के लिए दर्पण का दान करे। २३ रेखा से नाना प्रकार के क्लेश होते हैं, शान्ति के लिए ७ पल की सुवर्ण मूर्ति का दान करे। २४ रेखाओं से बन्धु की हानि होती है, शान्ति के लिए १० गौ का दान करे, तथा सम्पूर्ण रोग आदि की निवृत्ति के लिए जप होम आदि करे। २५ रेखा

ऋतुपक्षेर्बुद्धिहीनः पूज्या वागोश्वरो तथा ॥ धनक्षयः स्यान्नसत्रेः श्रीमूक्त तत्र सजपेत् ॥ २४ ॥  
 वसुपक्षे पुते मास न लाभो हानिसेचरेः ॥ सूर्यहोमश्च विधिना कर्तव्यः शुभकाक्षिभिः ॥ २५ ॥  
 एकोनत्रिंशता चापि चिताभ्याकुलितो भवेत् ॥ घृतवस्त्रसुवर्णानि तत्र दद्याद्विचक्षणः ॥ त्रिंशता  
 धनघान्यान्तिरिति जातकनिर्णयः ॥ २६ ॥ नूवह्निभिर्महोद्योगः पुत्रसंपदगणाग्निभिः ॥  
 सहेमवस्त्रतामश्न चतुस्त्रिंशत्समन्विते ॥ २७ ॥ पचरामैर्मवेद्वीमान्यद्भ्रिशात्सुतवित्तदा  
 ॥ २८ ॥ सप्तत्रिंशद्धनस्याप्तिरष्टत्रिंशत्सुखार्थदा ॥ द्रव्यरत्नान्तिरेकोनचत्वारिंशद्भि विद्यते  
 ॥ २९ ॥ धनवान्कीर्तिमांश्चैव चत्वारिंशति वर्द्धते। अत ऊर्ध्वं यशोयप्तिः पुण्यश्रीरुपचीयते  
 ॥ ३० ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अष्टकवर्गफलकथन  
 नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

२५ तथा २६ रेखाओं से बुद्धिहीनता होती है, शान्ति के लिए सरस्वती का पूजन करे। २७ हो तो धनक्षय होता है, शान्ति के लिए 'श्रीमूक्त' का पाठ करे। २८ रेखा से लाभ नहीं होता और हानि होती है, शान्ति के लिए विधिपूर्वक सूर्य का होम करे। २९ रेखा से चिन्ता की वृद्धि हो, शान्ति के लिए घृत, वस्त्र और सुवर्ण का दान करे ॥ ३० रेखा से धन और धान्य की प्राप्ति होती है, ऐसा जातक शास्त्र का निर्णय है। ३१ रेखा से भारी उद्योग (बड़े व्यापार) हो, ३३ से पुत्र, सपतिके द्वारा सुवर्ण वस्त्रका लाभ होता है। ३३ रेखा यदि ३४-३५ रेखा हो तो श्रेष्ठ बुद्धि हो, ३६ रेखा हो तो धन-पुत्र हो। ३७ रेखा हो तो धनप्राप्ति और ३८ हो तो धन सुख हो। ३९ हो तो द्रव्य-रत्न की प्राप्ति हो। ४० रेखा हो तो धनवान् तथा यगस्वी होता है। इससे अधिक रेखा हो तो यज्ञ और धन की प्राप्ति तथा श्रेष्ठ सक्ष्मी की वृद्धि होती है। ४० ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिन्याया  
 पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

अथ पहल्यत्ताबलमाह

सद्यं सुखात् सुखं कामात् कामं ज्ञात् खं च तपतः ॥ अशमेकदिगुणितं मुंम्यास्तप्रविपु इमात्  
 ॥१॥ पूर्वापरपुतेर्यं संधिस्थाद्भावयोर्दोषोः ॥ एवं द्वावरा भावास्तु भवन्ति च सततयः ॥२॥

ग्रह तथा भावों के बलाबल का लक्षण कहा जाता है। बल ६ प्रकार के होते हैं। (१) दृष्टिबल (२) स्थानबल (३) दिग्बल (४) कालबल (५) निसर्गबल (६) चेष्टाबल इन ६ प्रकार के बलों के लिये प्रथम ग्रहस्पष्ट तथा भावस्पष्ट जानना आवश्यक है। अतः जन्मसमय के इष्टघटी, पलपर नवग्रहस्पष्ट तथा स्पष्ट सूर्य से लग्नस्पष्ट एवं नत तथा उन्नत से दशम भावस्पष्ट पूर्वखण्ड में कहे अनुसार करना चाहिए। पश्चात् लग्न और दशम भाव में छ छ राशि का संयोग करके क्रमशः सप्तम और चतुर्थ भाव स्पष्ट करना। इस रीति से लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम ये चार भाव स्पष्ट हुए। अब चतुर्थ में लग्न घटाकर जो शेष रहे उसका तृतीयांश भाग लग्न में जोड़ने से द्वितीय भाव तथा तृतीयांश को दो से गुणा कर लग्न में जोड़ने से तृतीय भाव होता है। इसी प्रकार सप्तम भाव में चतुर्थ, दशम भाव में सप्तम और लग्न में दशम भाव घटाकर पूर्वोक्त रीति से तृतीयांश लेकर चतुर्थ में जोड़ने से पाचवां द्विगुणित तृतीयांश चतुर्थ में जोड़ने से छठा भाव होगा। इसी प्रकार आगे के ६ भाव स्पष्ट करना। यह बारह भाव स्पष्ट हुए। इन भावों की सन्धिस्पष्ट करने के लिए प्रथम और द्वितीय दो भावों को जोड़कर आधा करने से प्रथम द्वितीय भाव की सन्धि होगी। इसी प्रकार आगे भी द्वितीय तृतीय भाव को जोड़कर आधा करने से, इसी प्रकार बारह भावों की सन्धि करना। बतार्ई हुई रीति के अनुसार जन्मलग्न कुण्डली सूर्यादि नवग्रहों का स्पष्ट तथा सन्धि सहित बारह भावों का स्पष्ट सिद्ध होता है॥१॥२॥

दृष्ट्याद्विशोध्य द्रष्टार षड्राशिभ्योऽधिकं भवेत् ॥ दिग्भ्यो विशोध्य द्वान्यां तु भागीकृत्य च दृष्टयः ॥३॥ शराधिके बिना राशि भागाद्विभ्राश्च दृष्टयः ॥ वेदाधिकं त्यजेद्भूताद्भाग-  
दृष्टित्त्रिभाधिके ॥४॥ विशोध्यार्णवती द्वान्या सध्वत्रिशद्युत भवेत् ॥ करारधिकेबिना-  
राशिभागास्तिथियुतास्तथा ॥५॥

अब दृष्टिबल कहा जाता है। ग्रहों की ग्रहों पर तथा भावों पर दृष्टि स्पष्ट करने की रीति देखनेवाले का नाम दृष्टा है। जो देखा जाय, वह दृश्य कहा जाता है। जैसे-सूर्य, चन्द्रमा को देखता है तो सूर्य दृष्टा और चन्द्रमा दृश्य है। दृश्य में से दृष्टा को घटाना चाहिये। शेषांक ६ राशि से अधिक हो तो दस राशि में घटाना। जो शेष रहे उसके अंश करके २ का भाग देना, यही स्पष्ट दृष्टिबल है। (१) यदि शेषांक ५ में अधिक हो तो राशि अंक को त्यागकर अशादि को द्विगुणित करना दृष्टि होती है। (२) इसी प्रकार शोधित अंक चार में अधिक हो तो पांच में घटाना। शेष रहे वही दृष्टि है। (३) शोधित अंक तीन में अधिक हो तो चार में घटाकर आधा करना तथा तीन और मिलाना तो दृष्टि होती है। (४) शेषांक २ में अधिक हो तो राशि अंश छोड़कर अंश में १५ और मिलाना तो दृष्टि होती है। (५) शेषांक १ में अधिक हो तो राशि को त्यागकर अशादि अंक को आधा करना तो दृष्टि स्पष्ट होगी है॥३॥४॥५॥

ह्यधिके बिना राशि भागा द्वान्यां विभाजिताः ॥ त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्रे इमादय ॥६॥ शरवेदाःशरामाश्च तिथयो योजिताः इमात् ॥ शनिरेवेज्यमीमानामादी दृष्टिःस्पृष्टा भवेत् ॥७॥

अथ ग्रहदृष्टिचक्रमाह

	सु०	ब०	म०	बु०	गु०	शु०	रा०	मि०
सु०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
ब०	४ २२	० ०	४४ १३	० ०	१० ४	२६ ४५	० ०	० ०
म०	० ० ०	१५ ४७	० ०	८ १५	० ०	० ०	१ ११	० ०
बु०	० ० ०	० ०	३१ ३४	० ०	० ०	१३ २०	० ०	० ०
गु०	० ० ०	० ०	० ०	० ०	० ०	० ०	० ०	० ०
शु०	० ० ०	२ ५ ५२	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
रा०	० ० ०	० ०	५७ ३७	० ०	० ०	५२ २२	० ०	० ०
मि०	४ २२	५ ५२	१५ ३२	० ०	१० ४	४० ५	० ०	१५ ३५
वा०	० ० ०	१५ ४७	५० ३७	८ १५	० ०	५७ ५४	१ ११	३ १० ४२

नीचोत्तं तु ग्रहं भार्गोधिके शक्राद्विशोधयेत् ॥ भागीकृत्यत्रिभिर्भक्तं फलमुच्चबलं भवेत् ॥८॥

शनि, गुरु, मंगल की दृष्टि का विशेष प्रकार कहा जाता है। पहले कही हुई रीति से यदि शनि की दृष्टि सिद्ध करना हो तो शनि से ३ और दसवे भाव की प्राप्त दृष्टि में ४५ और मिलाना। गुरु से पंचम, नवम भाव की दृष्टि हो तो ३० और मिलाना। मंगल से चौथे, आठवे भाव की दृष्टि हो तो १५ और मिलाना तो स्पष्ट दृष्टि होती है।

अब उच्चबल कहा जाता है। ग्रहस्पष्ट में उसी ग्रह की नीच राशि और अश घटाकर शेषांक ६ से अधिक हो तो १२ राशि में घटाना। शेष का अशादि करके ३ का भाग देना। लब्ध अशादि उच्चबल होता है ॥६-८॥

### अथोच्चबलचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	घ०
०	०	०	०	०	०	०	३
३८	१७	४०	२१	१३	६३	३३	३८
४	२९	१९	२९	३२	२४	५४	२

### अथ सप्तवर्ग बलचक्रम्

सू०	स्व०	जि०	मि०	स०	श०	जा०
०	०	०	०	०	०	०
४५	३०	२०	१५	१०	४	२
०	०	०	०	०	०	०

### अथ तात्कालिकमैत्रीचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	घ०
सू०	सू०	सू०	सू०	सू०	सू०	सू०	सू०
च०	च०	च०	च०	च०	च०	च०	च०
म०	म०	म०	म०	म०	म०	म०	म०
बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०
गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०
श०	श०	श०	श०	श०	श०	श०	श०
घ०	घ०	घ०	घ०	घ०	घ०	घ०	घ०

### अथ नैसर्गिकमैत्रीचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	घ०
च म०	सू बु०	सू च०	सू शु०	सू च०	बु०	बु.गु०	मित्र
गु०	गु०	गु०	गु०	म०	श०		
बु०	म शु०	शु०	म.गु०	श०	म०	गु०	सम०
	गु श०	श०	श०		गु०		
शु०				बु०	सू.च०	म०	मनु
श०	०	बु०	च०	शु०	च०	म०	

मूलत्रिवेणस्वर्भाधिभिन्नमित्रसमाप्त्यु ॥ अधिशत्रुगृहेचापि स्थितानां क्रमशो बलम् ॥९॥

अब सप्तवर्ग बल कहा जाता है। जिस ग्रह का वर्गबल मंगना हो, वह यदि मूल त्रिवेण में हो तो बल ४५ (घटी) होता है। स्वराशि में हो तो बल ३०, अधिमित्र में हो तो बल २० मित्रराशि में हो तो बल १५, समराशि में हो तो बल १०, शत्रुराशि में हो तो बल ४, अधिशत्रु में हो तो बल ० होता है ॥९॥

## अथ पचधा मैत्रीचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	प्रहा
च म०	सू बु०	सू च गु०	सू शु०	च म०	बु श०	शु०	ऽपित्र
बु०	म गु शु श०	बु श०	म गु०	श०	गु०	शु०	मित्र
गु शु श०	०	०	च०	सू शु बु०	सू च०	य बु सू च०	सम
०	०	शु०	श०	०	म०	०	शत्रु
०	०	०	०	०	०	०	ऽतिशत्रु

## अथ सप्तवर्गचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	प०
११ श० स्व०	१ गु० चि०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	११ श० स्व०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	गु०
५ सू० स्व०	४ च० स्व०	५ सू० स्व०	४ च० मि०	५ च० मि०	५ च० मि०	५ च० मि०	ही०
११ श० स्व०	५ सू० श०	८ म० ऽमि०	२ शु० मि०	३ बु० श०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	हे०
११ श० स्व०	२ गु० मि०	१२ गु० मि०	६ बु० श०	२ गु० मि०	७ गु० मि०	५ सू० श०	म०
८ म० ऽमि०	८ म० ऽमि०	१२ गु० मि०	६ बु० श०	११ श० स्व०	६ बु० श०	१२ गु० मि०	न०
१३ गु० मि०	७ गु० मि०	१० म० स्व०	२ गु० मि०	५ सू० श०	२ गु० मि०	१ म० ऽमि०	हा
१ म० ऽमि०	७ गु० ऽमि०	८ म० ऽमि०	६ बु० श०	१ गु० मि०	६ बु० श०	६ बु० श०	वि०



## अथ सप्तवर्गबलचक्रम्

सू०	च०	स०	शु०	गु०	गु०	श०	पहा
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	गृ०
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	हो०
० ३० ०	० १० ०	० २० ०	० १५ ०	० ४ ०	० १५ ०	० ३० ०	वे०
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ४ ०	० १५ ०	० १५ ०	० १५ ०	स०
० ३० ०	० २० ०	० १५ ०	० २० ०	० ३० ०	० ४ ०	० १५ ०	न०
० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० १५ ०	० १० ०	० १५ ०	० २० ०	दा
० २० ०	० १५ ०	० २० ०	० ४ ०	० १५ ०	० ४ ०	० ४ ०	त्रि०
३ ५ १	१ ४५ ०	२ १० ०	१ ५८ ०	२ १४ ०	१ २३ ०	१ २४ ०	योग

मृताब्धयः सराभाश्च नखास्तिथिर्दिशो युगा ॥ द्वाविदुशुको युग्मासो तिथिरोजासयाः  
परे ॥१०॥

सम विषम बला चन्द्रमा और शुक्र ये दो ग्रह समराशि और समनवाश में हो तो बल १५, विषम राशि और विषम नवाश में हो तो बल शून्य होता है। विषम ग्रहों का बल इससे विपरीत अर्थात् विषमराशि नवाश में हो तो बल १५ एव समराशि नवाश में हो तो बल शून्य होता है ॥१०॥

अथ युगायुग्मबलचक्रम्							
मू०	च०	म०	बु०	शु०	गु०	श०	मी०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	१५	०	१५	१५	१५	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

अथ केन्द्रादिवलचक्रम्							
मू०	च०	म०	बु०	शु०	गु०	श०	मी०
०	०	०	१	०	०	१	३
३०	१५	१५	०	३०	१५	०	४५
०	०	०	०	०	०	०	०

केन्द्रादिषु स्थिता सप्तत्यष्टिस्त्रिंशत्तिथिः क्रमात् ॥ आदिनध्यावसानेषु द्वाेषाणेषु स्थिताः  
क्रमात् ॥११॥ युग्मपुसकयोपार्या द्युस्तिथिषल गहा ॥ स्वपद्वर्गगतास्त्रिंशदेव स्थानबल  
विदुः ॥१२॥

ग्रहो वा केन्द्र बल-जगत् तत्र मे ग्रह केन्द्र मे (१४।७।१०) हो तो बल ६० होता है। तथा पूर्णफल (२।५।८।११) मे हो तो बल '३०' होता है। एव आपोक्लिप्त (३।६।९।१२) में हो तो बल '१५' होगा।

द्वाेषाण बल पुरय घट (मू० म० गु०) प्रथम द्वाेषाण मे (दम अश तक) हो तो बल '१५' इममे अधिक अश हो तो बल शून्य। तथा नपुसक घट (बु० म०) द्वितीय द्वाेषाण मे (१० अश मे अधिक २० अश तक) हो तो बल '१५' अन्यथा शून्य। तृती घट (च० गु०) तीसरे द्वाेषाण मे (२० अश मे अधिक) हो तो बल '१५' अन्यथा बल शून्य होगा है।

विशेष-जो ग्रह घट बर्ग में अपने ही बर्ग वा हो तो उसका बल '३०' होगा है ॥११॥१२॥

अथ द्रेष्काणबलचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
०	०	०	०	०	०	०	०
१५	१५	०	१५	०	०	०	४५
०	०	०	०	०	०	०	०

अथ पंचानां योगचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
४	२	३	३	३	२	३	२४
२८	४७	२५	४५	१२	४६	५७	२७
४	२९	१९	२९	३३	२४	५४	१२

अर्कत्कुजात्सुल जीवाज्जाज्वास्त लग्नमार्कितः ॥ मध्यलग्न भृगोश्चंद्रादित्वा षड्भाधिके सति ॥१३॥

अथ दिग्बलचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
०	०	०	०	०	०	०	३
४९	१	३२	३१	४३	२१	२९	२८
१	५६	२५	३०	१२	५८	१५	१७

चक्राद्विशोध्य रामान्तं भागीकृत्य च तद्वलम् ॥ आमप्याह्नादर्धरात्राद्विबाराश्रितिति इमान् ॥१४॥ अर्कभार्गवसूरीणाद्विष्ठा नाडधो गता विवा ॥ भीमघटशानीनां तु षट्पिण्डो बर्जयेदिमाः ॥१५॥

दिशाबल-सूर्य तथा मंगल के राश्यादि में चतुर्य भाव घटाना, बुध, गुरु में मत्तम भाव घटाना और शनि में लग्न तथा चन्द्र, शुक में दशम भाव घटाना। शेष अर्क ६ राशि में अधिक

हो तो १२ राशि में घटाना और ३ का भाग देना। लब्धाक 'दिवाबल' होता है॥१३॥

नतोनत बल-(प्रथम 'नत' का ज्ञान होना आवश्यक है। नतसाधन "पूर्व नत स्याद् दिन-रात्रिसण्ड, दिवानिशोरिष्टघटी विहीनम् ।" अर्थात् दिनार्द्ध या रात्र्यर्द्ध में इष्टघटी पल घटाने से पूर्व नत या 'नत' होता है। और नत (घटी पल) को ३० (घटी) में घटाने से उन्नत होता है) (श्लोकार्थ) मध्याह्न से मध्यरात्रि तक इष्टकाल हो तो दिनबल और मध्यरात्रि से मध्याह्न तक इष्टकाल हो तो रात्रि बल कहा जाता है। उन्नत की घटी पल को द्विगुणित करने से (दिवाबल में) सूर्य, गुरु, शुक्र का दिवाबल होता है। और ६० में घटाने से चन्द्र, मंगल, शनि का दिवाबल होता है। और ६० में घटाने से चन्द्र, मंगल शनि का दिवाबल होता है। यदि रात्रिबल हो तो इससे विपरीत - अर्थात् उन्नत द्विगुणित चन्द्र, मंगल, शनि का रात्रिबल और ६० में से घटाने पर सूर्य, गुरु, शुक्र का रात्रिबल होता है। बुध का दिवाबल और रात्रिबल ६० ही रहता है॥१४॥१५॥१६॥

दिवाबलमिति प्रोक्त बल नैरा ततोऽन्यथा ॥ षष्टिरेव सदा ज्ञस्य ॥ चन्द्रादकं विमोघ्य च ॥१६॥ अगाधिके विशोध्यार्काद्भ्रागीकृत्यत्रिभिर्मजेत् ॥ पक्षज बलमिदुप्तशुक्रार्दाणां तु षष्टित् ॥१७॥

अथ नतोनतबलचक्रम्							
सु०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	म०	पो०
०	०	०	०	०	०	०	४
४८	११	११	०	४८	४८	१६	०
४४	१६	१६	०	४४	४४	११	०

अथ पक्षबलचक्रम्							
सु०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	म०	पो०
०	०	०	०	०	०	०	३
४०	१२	४७	१२	१२	१२	४७	११
५	५५	५	५५	५५	५५	०	१५

पक्ष बल-चन्द्रस्पष्ट राश्यादि मे सूर्य स्पष्ट राश्यादि घटाना (यदि सूर्यस्पष्ट राश्यादि अधिक हो तो चन्द्रराशिमे १२ राशि बडाकर सूर्य घटाना) शेष अकसख्या ६ राशिते अधिक हो तो १२ राशी मे घटाना। शेषाक को अश करके ३ का भाग देना जो लब्ध हो वह चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र का पक्षबल होता है। उस बलको ६० मे से घटाने से सूर्य, मंगल, शनि का बल होता है॥१६॥१७॥

हित्वान्येषामहोरात्रि त्रिभागीकृत्य यत्र तु ॥ जन्मलक्षतदशाधिपते यष्टिबल भवेत् ॥१८॥  
आधाने चित्प्रवेशे तु त्रिशद्भूतार्णवा बलम् ॥ जाडर्कमवेदुशुकारा पतय सर्वदा गुरु ॥१९॥

अथ दिनरात्रिर्त्रिभागचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१	०	०	०	१	०	०	२
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

अथ वर्षमासादि चक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
०	०	०	०	०	०	०	०
३०	०	०	०	४५	०	१५	३०
०	०	०	०	०	०	०	०

दिन रात्रि बल दिन तथा रात्रिके ३-३ भाग करो। दिन के तीन भागों के स्वामी ब्रह्म बुध, सूर्य, शनि है। और रात्रि के तीन भागों के स्वामी ब्रह्मश चन्द्र, शुक्र, मंगल है। जिन भाग में जातक का जन्म हो उस भाग के स्वामी ग्रह का बल ६० होता है। तब आधान बल के बल विचार मे ६० की जगह ३० बल होता है तथा चित् प्रवेश या चैतन्य काय के विचार मे ४५ बल होता है। इस बल मे गुरु का मदा ६० (घटी) अथवा १ (अश) बन होता है॥१८॥१९॥

वर्ष पति, मास पति दिनपति का वन (वर्ष पति तथा मासपति मिद्व बरन के त्रि अर्हण की तथा तदग चक्र की आवश्यकता है) अर्हण बनाने की गीति ग्रह नाथव म त्रिगी जाती है॥

अहर्गण साधन, प्रहलाधव मध्यमाधिकार श्लोक ४१५

छषब्धोन्वोनित शक ईश कृत् फल स्या, चक्राख्यं रविहृतशेषकं तु युक्तम् । चैत्रांशौ पृथगमुत्त  
सहस्र चक्रा, द्विगुस्तादमरफलाधिनासयुक्तम् ॥४॥ सत्रिभ्रं गततिथि युद् निरप्रचक्रां, गांशा  
द्वय पृथगमुत्तोऽब्धिषट्कलधैः । ज्नाहैर्विपुत महर्गणो भवेद्वै, वारः स्याच्छर-हृतचक्रयुग्  
गणोऽब्जात् ॥५॥

अर्थ-शालवाहनीय शक सख्या मे १४४२ कम करना जो शेष रहे उसमे ११ का भाग देना। जो लब्धि प्राप्त हो वह 'चक्र' कहाता है। भाग देने से जो वर्ष सख्या शेष है उसको १२ से गुणा करना और अपने इष्ट से शुक्ल प्रतिपदादि जो गत मास में हो, सो युक्त करना पश्चात् दो जगह रखना। एक जगह चक्र को द्विगुण करके १० जोडकर ३३ का भाग देना जो लब्ध हो वह 'अधिमास' है। इस अधिमास सख्या को पृथक् स्थित मे युक्त करना तो 'मासगण' होता है॥४॥ पश्चात् ३० से गुणा करे तथा शुक्ल प्रतिपद से इष्ट काल की गततिथि युक्त करे और चक्र का छठा भाग युक्त करे वाद दो जगह रखे। एक जगह ६४ का भाग देने से 'ज्नाह' सख्या प्राप्त होगी वह दूसरी जगह की सख्या में घटाने से 'अहर्गण' होता है। वार जानने के लिए चक्र को ५ से गुणा करके जोडकर ७ का भाग दे शेष सख्या वार है। सोमवार से गणना करे। नभी २ एक कम या अधिक भी होता है॥५॥

उदाहरण -धीस० २०१८ शक सम्बत् १८८३ है। शकारम मे वैशाख कृष्ण १३ गुरुवार को अहर्गण स्पष्ट करना है। शक १८८३ मे १४४२ घटाया तो शेष ४४१ रहा, इसमे ११ का भाग दिया तो लब्ध '४०' यह 'चक्र' हुआ। शेष १ है। इसको १२ से गुणा किया तो १२ हुआ इसमे चैत्र शुक्ल प्रतिपद से गतमास '०' से युक्त किया तो १२ हुआ, इसको २ जगह रखा एक जगह चक्र को द्विगुण ८० मे १० युक्त ९० करके १२ मे योग किया तो १०२ हुआ ३३ का भाग दिया ३ अधिमास प्राप्त हुआ इसको दूसरे मे युक्त किया तो १५ हुआ। इसको ३० से गुणा किया तो ४५० और चक्र ४० का छठा भाग ६ युक्त किया तो ४५६ हुआ अथवा उक्त तिथि मे ही माना गया है अत गततिथि ० युक्त की तो यही रहा, दो जगह रखा एक जगह ६४ का भाग दिया तो ७ 'ज्नाह' प्राप्त हुए, इसको दूसरी जगह घटाया तो ४४९ शेष रहा। यह अहर्गण हुआ। वार जानने के लिए चक्र ४० को ५ से गुणा करके २०० अहर्गण मे युक्त किया तो ६४९ हुआ। इसमे ७ का भाग दिया तो शेष ५ यह वार हुआ। इसमे १ कम करने सोमवार गणना किया तो गुरुवार हुआ।

वर्षमासदिनेशाना तिथिस्त्रिंशच्छरार्णवः॥कालहोराधिपस्यैव पूर्ण बतपुदादृतम्॥२०॥

अथ कालवत्तचक्रम्							
गु०	श०	म०	पु०	दु०	गु०	म०	यो०
३	०	०	१	२	२	१	१२
४५	२४	५८	४०	४९	१	१३	१०
४९	११	२१	५	३९	३८	२१	४

वर्षपति तथा मासपति स्पष्ट—केशवी जातक बलाध्याय से-

“द्विष्टोऽयं ग्रहलाघवद्युनिचय श्रक्नाहतैः पट्शरैः पट् दसैश्च पुतः सबाणतपनः सेषुश्च  
खांगाग्निभिः । खाग्रैश्च विहृतं फले गुणयमद्रे चक्रनिघ्नाक्षंसोपेते, सत्रियुगे नगोर्वरितके  
स्तोऽकात् समासासपौ ॥”

वर्षपति-अर्थ-इष्ट चक्र को ५६ से गुणा कर अहर्गणा में युक्त करना। पुन. १२५ जोडकर ३६० का भाग देना। लब्ध अंक को ३ से गुणा करे अब इसमें-चक्र को ५ से गुणा करके ३ जोडकर जो सख्या हो वह जोड कर ७ का भाग दे, जो शेष रहे वह रविवार से गिनकर 'वर्षपति' प्राप्त करो।

मासपति स्पष्ट-अहर्गण मे-२६ से गुणित चक्र सख्या युक्त करना। पुन ५ और जोडना, ३० का भाग देना। लब्ध्याक द्विगुणित करना ४ और जोडकर ७ का भाग देना, शेषाक रविवार मे मासपति होता है।।

दिनपति स्पष्ट-जिस दिन जो वार हो वही ग्रह दिनपति होता है। और दिनपति का बल ४५ होता है। दिनबल चक्र में ग्रहो का बल शून्य रखना।।

होरा बल-इष्ट काल में जिस ग्रह की होरा हो वह होरापति होता है। उसका बल पूर्ण (१) होता है। इस प्रकार वर्ष, मास, दिन, होरा, ये चारो प्रकार के प्रत्येक ग्रह के स्पष्टकर के चारो बलो का योग करता, तब चक्र में जिस ग्रह का जितना बल प्राप्त हो सो लिखना। यह काल बल सम्पन्न हुआ।।२०।।

अयन बल-तात्कालिक ग्रह स्पष्ट करके अयनाश युक्त करना। (अयनाश “वेदाब्जव्यून खरसहूत शकोयनाशा ।” (ग्रहला०) अर्थात् शाका में ४४४ घटाकर ६० का भाग देने में लब्ध अंश और शेष घटी। यह अयनाश होते है।) पश्चात् 'भुज' करो। (भुज साधन-ग्रह लाघव-द्वितीय अधिवार-श्लोक १ “दो स्वभोन त्रिभोर्द्धे विगेष्य रसे, श्रब्रतोऽजाधिक स्याद् भुजोन त्रिभम् ।” ग्रहस्पष्ट सायन करने पर तीन राशि में कम हो तो वही भुज है। तीन राशि से अधिक हो तो ६ राशि में शोधित करने से भुज होता है।

आधाने चित्रबेषो तु त्रिंशच्छरजलाकरा. ॥ सायनांशग्रहभुजराशोनिष्वब्धिभिः सुरैः ॥२१॥  
सूर्यैर्हत्वा क्रमाद्राशिभागः स्यादनुपाततः ॥ एवं राश्यादिके युंज्यादर्काराशोशनः सु च ॥२२॥  
राशित्रयमयो युज्यान्नेपादिस्थेषु तेष्वथ ॥ तुलादिस्थेषु राश्यादींस्त्रिराशिम्यस्तु घर्तयेत् ॥२३॥  
चद्रास्योर्विपरोति स्यात्तदा युंज्याद्बुधस्य तु ॥ भागीकृत्य त्रिभिर्मत्तं ग्रहाणामायन बलम् ॥२४॥

छ राशि से अधिक हो तो छ राशि कम करना तो भुज होगा ९ राशि में अधिक हो तो १२ राशि में घटाना तो भुज होता है। ध्रुवाक तीन है-४५।३३।१० भुज में जो राशि हो उस ध्रुवाक में (अर्थात् राशिस्थान में शून्य हो तो ४५ में, १ हो तो ३३ में, और ० हो तो १० में) यह के अंशदि अंक को गुणा करना। और गुणित अंश में २० का भाग देना। जो लब्ध

अशादिक ही सो गत खड मे जोडना। बाद राश्यादि अक करके ग्रह यदि तुलादि छ राशि मे हो तो तीन राशि घटाना तथा मेपादि छ राशि मे हो तो ३ राशि जोडना। यह मेप तुलादि सस्कार चन्द्रमा तथा शनि मे विपरोत करना। और बुध के अयन बल मे ३ राशि सदा जोडना। पश्चात् अशादि करके ३ का भाग देना तो अयन बल स्पष्ट होता है। केवल सूर्य का अयन बल द्विगुण करना॥२१॥२२॥२३॥२४॥

अथ अयनबलचक्रम्							
सू०	च०	म०	सु०	गु०	शु०	श०	यो०
०	०	०	०	०	०	०	०
२७	५७	३९	५५	१८	१८	५५	२३
१५	४०	३२	९	५०	४५	५३	४

रवोर्द्विगुणमेव स्याद्युध्यतोर्ग्रहयोरथ ॥ विभूष्य बलयोश्चापि निर्जितस्य बल भवेत् ॥२५॥  
अपनीते योजिते तु जितस्य च बल भवेत् ॥ घटित्वरुगतेर्वीर्यभनुवरुगते दलम् ॥२६॥ पाद  
विकलभूक्त स्याद्वलमेव समागमे ॥ पाद मदगतेस्तस्य दल मन्दतरस्य च ॥२७॥

ग्रहो का युद्ध बल इष्टकाल के ग्रहस्पष्टो मे कोई भी २ ग्रह राशि अश कला विकला म समान हो तो उन दोनो ग्रहो का युद्ध ममझना चाहिण। इस युद्ध बन के जानन की गति यह है कि उन दोनो ग्रहो का आधा हुआ बल परस्पर घटाकर जो अन्तर हो वह हीन बन मे घटाना और अधिन बल मे युक्त करना। तो हीनबली यह दक्षिण दिशा का निर्जित बन कहनाता है। और बधाधिकग्रह उत्तर दिशा का विजयी कहलाता है॥२५॥

गतिबल जो ग्रह बली है उसका बल ६०। और मार्गो ग्रह का बल ३०। तथा सूर्य युक्त का बल १५। चन्द्रयुक्त का ३०। मदगति का १५। अन्य गति का ७। ३०। शीघ्रगति का ६५। अति शीघ्रगति का ३० बल लेता चाहिए॥२६॥२७॥

शीघ्रभूक्तेस्तु पादोन दल शीघ्रतरस्य तु ॥ मध्यमस्पृष्टविभूषदलयुक्तोनित स्पृष्टात् ॥२८॥  
मध्यमे त्वधिषे न्यूनै शीघ्रावप्रास्पृष्ट त्पजेत् ॥ चेष्टाकेद्र भवेदानीं त्वीद्वोरपनांशयुक् ॥२९॥

सूर्यादिग्रहो का चेष्टाबल—प्रथम सूर्यादि ग्रहो को "मध्यम" करना और पश्चात् स्पष्ट करना। ग्रहो के मध्यम तथा स्पष्ट करने की गति 'ग्रह लापव या गार्गियो मे करना हो तो 'बिगवी जातक' मे करना। पश्चात् मध्यम और स्पष्ट यह का अन्तर करने जो अन्तर हो उगको आधा करे। मध्यम ग्रह स्पष्ट ग्रह मे अधिन हो तो मध्यम ग्रह मे जोरना और कम हो तो घटाना पश्चात् शीघ्रोच्च पत्र मे घटाना तो चेष्टा चेष्ट होना है। बाद अश करने ३ का भाग देना तो चेष्टाबल हीना है। सूर्य चन्द्र के यह विधि करने ३ राशि मितान म चेष्टा बन होता है॥२८॥२९॥



अथ चेष्टाकेन्द्रचक्रम्					
म०	बु०	गु०	शु०	श०	पह
० १६ ४१	१० २ ३२	१० २१ ४७	१० २ ३२	९ ११ १८	मध्यम
११ २७ ४	९ १० ३४	१० १५ ३९	११ ७ १४	९ ८ ४७	स्पष्ट
११ १० २२	० २१ ५८	० ६ ८	१ ४ ४२	० २ ३१	अतर
५ २० ११	० १० ५९	० ३ ४	० १७ २१	० १ १५	बल
१० २ ३२	५ १३ ३०	१० २ ३२	० २५ १६	१० २ ३२	शीघ्रोच्च
३ ६ २	१ २१ ५७	५ १३ ४९	३ २४ ३७	५ ७ १५	केन्द्र

अगाधिकेऽर्कात्सशोध्य भागीकृत्य त्रिभिर्भजेत् ॥ सूर्यचद्री सत्रिराशीकृत्या प्रोक्तविधिस्तथा ॥३०॥ एव चेष्टाबल प्रोक्त नैसर्गिकमयो भृशु ॥ यष्टिरेकेष्व सप्त दरा षड्विरातिस्तत् ॥३१॥

निसर्ग (स्वाभाविक) मन—सूर्यादिग्रहो वा ब्रमण ६०।५।१।१७।०३।३।४।४।३।९ यह निमर्ग बन होता है ॥३०॥३१॥

चतुस्त्रिरात्रिबेदाका सूर्यादीना निमर्गजा ॥ शुभपापराग्यसापुतहीनानि तानि च ॥३२॥

पञ्चबल (स्थान बल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, नैसर्गिकबल) के योगमे युक्त करना और पापदृष्टि अधिक हो तो चतुर्थांश पञ्चबल योग में हीन करना। यह दृष्टिक्रम वा संस्कार है। इस प्रकार सूर्य आदि ग्रहों का षड् (प्रकार) बल विचार समाप्त हुआ ॥३२॥

षड्बलानि प्रहाणा स्पुरेयमेकीकृतानि तु ॥ शुभदृष्टिचतुर्थांशयुत स्वतार्यदर्शने ॥३३॥  
हीनपाप हाद्यशैर्युत स्वामिबल बलम् ॥ गुरुज्ञान्या तु युक्तस्य पूर्णमेकतु योजयेत् ॥३४॥  
मदाररविपुक्तस्य बलमेकेन वर्जितम् ॥ दिवा शीघ्रोदयाश्रैव सध्यायानुभयोदय ॥३५॥

## अथ षड्बलचक्रमाह

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह०
४ २८ ४	२ ४७ २९	३ ५ २९	४ ४९ २९	३ १२ ३३	२ ४६ २४	३ ५७ ५४	स्थान
० ४९ १	० १ ५६	० ३१ २५	० ३१ ३०	० ४३ १२	० २१ ५८	० २९ १५	दिग्बल
३ ५ ४९	० २४ ११	० ५८ २१	० ४७ ५	२ ४६ ३९	२ १ ३८	२ १३ २१	कालबल
० २७ १५	० ५७ ४०	० ३२ ०	१ १२ २८	१ १३ २६	० ५६ ५७	१ ४८ ४८	चेष्टाबल
१ ० ०	१ ५१ ०	१ १७ ०	१ २६ ०	१ ३४ ०	१ ४३ ०	० ९ ०	नैसर्गिक बल
० ५ ३०	० २ ३९ ४०	० ६ १३ ३०	० २ ४ ४०	० २ ३१ ३०	० ४ २७ ४०	० २ १८ ४०	स्वामि
९ ५१ १४	४ ४९ ४०	५ ३० १८	४ ४४ २८	८ ३२ २१	६ ४५ ३०	७ ३९ ३०	देषबल

अब भावबल कहा जाता है जिस भाव में बुध या गुरु स्थित हो उसके पूर्वोक्त भावबल १ युक्त करना और शनि, मंगल युक्त हो तो भावबल में १ कम करना॥३३॥३४॥  
 भाव का कालबल-दिन का जन्म हो तो शीर्षोदय राशि-मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक कुम्भ ये राशि बलवान् होती है। रात्रि का जन्म हो तो मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर भावराशि बलवान् होती है। प्रातः सायं जन्म हो तो मोन बली है। कथित समय में कथि राशि बलवान् और अन्य राशि बलहीन होती है॥३५॥

अथ भाववृष्टिचक्रम्													
	म०	घ०	स०	पु०	मृ०	रि०	जा०	भु०	श०	क०	म०	म०	
म०	० १५ ४९	० ३० ५३	० ३० ४१	० २ २५	० ५० १८	० ४४ ५३	० २९ ६	० १४ ५३	० ० ४२	० ० ४२	० ० ०	० ० ०	० ० ७
घ०	० ३९ ४३	० २१ १	० १४ २८	० ५० ५	० ४१ १८	० २५ ३१	० १ ४३	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ३ ४५	० ० ४५	० २३ ५९
स०	० ० ०	० ३ ४३	० ३३ ४४	० ५५ ४५	० २४ १९	० १४ ४८	१ ० ०	० ५२ ३६	० २० ६	० १२ ५३	० ० ०	० ० ०	० ० ०
पु०	० ४० २९	० ३३ ३	० ७ ४१	० ४१ ३०	० ४८ ५१	० ३ ३३	० १० १६	० ३ ३	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ११ ५७
मृ०	० १० १२	० ३३ ४९	० ५३ ३०	० २८ ४०	० ३४ २८	० ५० ३६	० ५५ १२	० ३१ ४६	० ६ २३	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
रि०	० ० ०	० १३ ३७	० ४० ३९	० ३२ ५८	० १ १	० ५४ २८	० २५ ३६	० २८ ३१	० १० ११	० २ ५८	० ० ०	० ० ०	० ० ०
जा०	० ४६ ७	० ३१ ५५	० ५ २४	० ४६ ४	० ४० ४२	० ३१ ५५	० ५४ १४	० ७ २८	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ५२ २२
भु०	१ ३० २८	१ ४१ ३०	१ ५६ २५	२ ४० १३	२ ९ ३८	२ १४ १०	२ ७ ४७	१ ३ २०	१ ३ ३४	० २ ५८	० ३ ४२	० ३ ४२	१ ५ ४६
श०	१ २ ५६	१ १३ ३०	० ५९ ४५	१ ४४ १४	२ ९ ५१	१ ३० ३६	३ २१ २७	१ १५ ७	० २७ ४७	० १२ ५३	० ० ०	० ० ०	० ५२ ५९
क०	० २७ ३२	० २८ ०	० ५६ ४०	० ५५ ५१	० ० १३	० ४३ २४	० १३ ३३	० ११ ५३	० १० १३	० ९ ५५	० ३ ४२	० ३ ४२	० १३ १७

नक्त पृष्ठोदयाश्रय बलाधिक्य उदीरिता ॥ नृपुन्यज्जकारायोनचापपूर्वाद्धिं कुभभात् ॥३६॥  
 मृगबापपराधार्थस्यमेवसिहवृषादपि ॥ अस्ते कर्कट काच्चापि मृगात्पार्धाच्च मीनभात् ॥३७॥  
 अस्त सुख क्रमाल्लप्र ख हित्वागाधिके सति ॥ चक्राद्विशोध्य रामैश्च भजेद्भ्रागीकृत  
 बलात् ॥३८॥

भावो का दिग्बल—मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वाद्धिं, कुभ इन राशियों के भाव मे राप्तमभाव कम करना, गोपाक छ राशि से अधिक हो तो १२ राशि मे घटाना, शेष के अश करके ३ का भाग देना। लब्ध अक 'दिग्बल' होता है। इसी प्रकार मकरराशि का पूर्वाद्धिं, धन का उत्तरार्द्धिं, मेष, वृष, सिंह इन राशियों के भावो मे चतुर्थ भाव घटाकर और कर्क, वृश्चिक राशि के भावो मे लग्न घटाकर तथा मकर का उत्तरार्द्धिं और मीन मे दशमभाव घटाकर छ राशि से अधिक हो तो १२ मे शुद्ध करके अश कर ३ का भाग देने से दिग्बल प्राप्त होता है ॥३६॥३७॥३८॥

भावाना च ग्रहाणा च बलान्येव विदुर्बुधा ॥ अकाग्रयोऽगरामाश्च साग्नि करजलाकरा ॥३९॥ नवाग्रय सुरा साग्निर्दशसगुणिता क्रमात् ॥ रव्यादय सुबलिनो राशीनां स्वाग्निनो  
 घशात् ॥४०॥ अधिक पूर्णमेव स्याद्वल चेद्वलिनो मता ॥ गुहसौम्यरवीना तु भूतपट्केददो  
 द्विज ॥४१॥ पचाग्रय खमूतानि करमूमिसुघाकरा ॥ साग्रयश्च क्रमात्स्थानदिक्चेष्टासमया  
 यने ॥४२॥ सितेन्द्रोऽस्त्र्यग्निचक्राश्च शेषव साग्रय शतम् ॥ चत्वारिंशत् क्रमाद्भूमिभन्वयो यण  
 बक्रमात् ॥४३॥

सात ग्रहो तथा १२ भावो का 'सुबल' तथा 'पूर्णबल' विचार

सूर्य आदि ग्रहो के पूर्णबल के ध्रुवाक—मू० ३९ च० ३६ म० ३०, बु० ४० गु० ३९, शु० ३३, श० ३०, इन अको को १० गुणित ध्रुवाक जानना। यथा मू० ३९०। च० ३६०। म० ३००। बु० ४२०। शृ० ३९०। शु० ३९०। श० ३०० य पूर्णबल के ध्रुवाक है। (इन अको मे ६० से अधिक होने से ६० का भाग देकर क्रम से सूर्यादि ग्रहो के—मू० (६।३०) च० (६।०), म० (५।०), बु० (७।०), वृ० (६।३०), शु० (५।३०), श० (५।०) पूर्ण बलाक हुए। इतने या इसमे अधिक हो तो पूर्ण बली और कम हो तो सुबली जानना। ये बल सूर्यादि ग्रहो के है। तथा १२ भावो का बल अपने अपने स्वामी के बल से जानना। भावो मे भी कथित ध्रुवाको से कम बल हो तो बली समान हो तो सुबल अधिक हो तो पूर्ण बल जानना। भावो का बल ग्रहो के समान ही जानना क्योकि—राशि का बल अपने स्वामी के आधीन होता है ॥३९॥४०॥ अथ भिन्न भिन्न ग्रहो का स्थानबल, दिग्बल, चेष्टाबल, बालबल तथा अपने बल के पूर्णत्व के ध्रुवाक बहते है। इ मैत्रेय! सूर्य, बुध, शुक्र का स्थानबल ध्रुवाक १६५ है। (६० से भाग देव पर २।४५) इतने अधिक हो तो पूर्ण बली होता है। इसी प्रकार दिग्बल अक ३५ है। इससे अधिक हो तो पूर्ण बनी। चेष्टा बलाक ५० है अधिक हो तो पूर्णबली। बालबल ११० है, अधिक हो तो पूर्णबली (६० से भाग देने पर १।५० होता है) अग्न बल ३० है। इसी प्रकार शुक्र, चन्द्रमा के क्रमज १३३ (२।१३) ५०।३०।४०।४० है। और मंगल, शनि के क्रमज ९६ (१।२६) ३०।४०।६७ (१।७) २० ये पूर्ण बनाय है।

## अथ भावषड्वलचक्रम्

त०	ध०	स०	मु०	मु०	रि०	जा०	घृ०	घ०	क०	आ०	व्य०	नाम
८ ४ २०	६ ४५ ३०	८ ४४ २८	४ ४९ ४७	९ ४१ १४	८ ४४ २८	६ ४५ ३०	८ ४ २०	८ ३२ २१	७ ३५ ३०	७ ३५ ३०	८ ३२ २१	भाव- स्वाभि- बल
० २८ २५	० १८ ५७	० ४१ ३	० २८ २५	० १० ३१	० १० ३१	० ० ०	० ५० ३१	० १८ ५६	० ० ०	० ३८ ५६	० ११ ३	दिग्बल
८ ३२ ४५	७ ४ २७	९ २८ ३१	५ २८ १२	९ ५१ ४५	८ ५४ ५९	६ ४५ ३०	८ ३२ ४५	८ ५१ १७	७ ३५ ३०	८ १४ २६	८ ४३ २४	योगबल
० ६ ५३ ध०	० ७ ० ध०	० १४ १० ध०	० १३ ५९ ध०	० ३ ३ ऋ०	० १० ५३ ध०	० ३ २३ ऋ०	० २ ५८ ऋ०	० २ ३३ ऋ०	० ९ २१ ऋ०	० ० १५ ध०	० ३ १९ ऋ०	वृबल
९ २९ ३८	७ ११ २७	९ ३९ ४१	५ ४२ ११	९ ५१ ४२	९ ५ ५२	६ ४२ ७	९ २९ ३८	८ ४८ ४४	७ ३३ १	८ १४ ४१	८ ४६ ४३	घ० योगबल भ०
० ५० ४१	१ ६ ५२	१ १ १८	१ १० १०	१ २७ १९	० ५४ ९	१ १२ २८	० ३४ ४९	० ६ २३	० ० ०	० ० ०	० ४८ ४३	जेन्द्राण- बल
१० २० १९	८ १८ १९	१० ४० ५९	६ ५२ २१	११ १५ १	१० ० १	७ ५४ ३५	१० २० १९	६ ५५ ७	७ ३३ १	८ १४ १४	९ ३० २८	पद्मलक्ष्य

अथ चेष्टारश्मिवक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२	५	३	२	६	४	६	२८
५२	१७	८	४३	२७	४९	१४	२३
३०	३०	४०	५४	३८	१४	३०	५६

उच्चरश्मिबल—जिस ग्रह का उच्चरश्मि बल स्पष्ट करना हो उसके राश्यादि स्पष्ट में से उसकी नीचराशि अश घटाना, शेष अंक ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में से घटाना, बाद राशि में १ जोड़ना और अशादि द्विगुण करना (अश कलादि में ३०-६० का भाग देकर यथास्थित करना) तो 'उच्चराशि' स्पष्ट होती है। १॥ चेष्टारश्मि बल—चेष्टारश्मि साधन के लिए प्रथम चेष्टाकेन्द्र कहते हैं। स्पष्टसूर्य को सायन करके ३ राशि जोड़ने से सूर्य का 'चेष्टाकेन्द्र' होता है। सूर्य में चन्द्रस्पष्ट घटाने से चन्द्रमा का चेष्टा केन्द्र होता है। मंगल आदि ५ ग्रहों का चेष्टाकेन्द्र पहिले कहा गया है। २॥

उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मि द्वयोर्भुते ॥ दत्त तु शुभरश्मि स्यादष्टम्यो वर्जितोऽशुभः ॥ ३॥  
उच्चचेष्टाकरी व्येकौ दिग्भिर्हत्वा तु योजयेत्। दत्तयेदिष्टमन्यत्स्यात्पठिन्म्यो वर्जित फलम्। ४॥

अथ इष्टवक्रम्								अथ कष्टवक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२८	१५	३०	१९	३४	४५	४३	२१६	३१	४४	२९	४०	२५	१४	१६	२०२
५४	१२	५२	२३	४	४८	१९	५६	३५	४७	७	३६	५५	११	४०	५३
५०	२०	५०	५०	४०	३०	४०	४०	१०	४०	१०	४०	१०	३०	२०	१०

चेष्टारश्मि, शुभरश्मि, अशुभरश्मि स्पष्टीकरण—चेष्टाकेन्द्र से चेष्टारश्मि साधन करने का प्रकार उच्च रश्मि की तरह ही जानना। इस प्रकार स्पष्ट की हुई चेष्टा रश्मि और उच्च रश्मि दोनों को जोड़कर आधा करना तो शुभ रश्मि होती है। और ८ में घटाने से अशुभ रश्मि होती है। ३॥

इष्ट बल और कष्ट बल—उच्च रश्मि में १ घटाना, बाद १० से गुणा करना तथा चेष्टा रश्मि में भी १ घटाकर दससे गुणा करना, बाद दोनों को जोड़कर आधा करना तो इष्टबल होता है। इसको ६० में घटाने से काट बल होता है। ४॥

स्वोच्चे भूतश्रिकोणे च स्वर्षोऽधिसुहृदि क्रमात् ॥ मित्रर्षे च समर्षे च शत्रुषु चातिशत्रुषु ॥ नीचे च पठिन्म्यो वर्जिताश्रिते गिष्ट स्यादशुभ फलम् ॥ तवर्धं तु फल प्रोक्तमन्यवर्णे शुभाऽशुभम् ॥ ७॥

त्रिंशत्खवेदाः सप्तांगा नखाश्च यत्नितो विदुः ॥ भायस्यानग्रहैः प्रोक्तयोगे ये योगहेतवः ॥४४॥  
 तेषां यतो यः कर्तासौ स एवास्य फलप्रदः ॥ योगव्याप्तोपु बहुषु न्याय एवं प्रकीर्तितः ॥४५॥  
 गणितेषु प्रवीणश्चशब्दशास्त्रे कृतभ्रमः ॥ न्यायविद्वद्धिमान् होरास्फंधश्रवणसम्मतः ॥४६॥  
 देवविद्वेशिको देवसंमतो देशकालवित् ॥ ऊहापोहपटुः प्राज्ञः पटुः स्वजनसमतः ॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भायपद्मलादिवर्णननाम पष्ठोऽध्यायः॥६॥

यदि अनेक ग्रह पूर्णवली हो तो ग्रह के स्वगृही, उच्चराशिस्य, मूलत्रिकोणस्थादि से विशेष  
 बल का निश्चय करना चाहिए॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥  
 अधिकारी लक्षण—गणित में कुशल, व्याकरण में व्युत्पन्न न्याय निपुण, साहित्यविद्वान्,  
 देवाराधन तत्पर, देशकालज्ञान में चतुर तर्क समर्थ, जनहितैपी, मधुरभाषी दैवज्ञ इस शास्त्र  
 के पठन तथा फलादेश कहने में समर्थ होता है॥४६॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकाया भायपद्मलादिवर्णननाम पष्ठोऽध्यायः॥६॥

अथ रश्मीष्टकष्टवर्णनाह

नीचोर्न तु ग्रहं भार्धाधिक्ये चक्राद्विशोधयेत् ॥ उच्चरश्मिर्भवेद्वाशिः सैको द्विजांशसंपुतः ॥१॥

अयोच्चरश्मिचक्रम्							
सू०	ष०	म०	कु०	गु०	शु०	श०	यो०
४	२	५	३	२	६	४	२८
४८	४४	१	८	२१	२०	२३	४९
२८	५८	५२	५२	१८	२८	२६	२२

सायनाशार्क इदुश्च सत्रिमो भानुवर्जितः ॥ ज्येष्ठाकेंद्रः कुजादीनां पूर्वाध्याये समीरितम् ॥२॥

अथ शुभरश्मिचक्रम्								अथाशुभरश्मिचक्रम्							
सू०	ष०	म०	कु०	गु०	शु०	श०	यो०	सू०	ष०	म०	कु०	गु०	शु०	श०	यो०
३	२	४	२	४	५	५	२८	८	५	३	५	३	२	२	२६
५०	१	५	५६	२४	३४	१८	४१	९	२८	५४	३	५	२५	११	१८
२०	१४	१६	२३	२८	५१	५८	३९	३१	४६	४४	३७	३९	९	२	२१

अथ चेष्टारश्मिवक्रम्							
सू०	च०	म०	दु०	गु०	शु०	श०	यो०
२	२	३	२	६	४	६	२८
५२	१७	८	४३	२७	४९	१४	२३
३०	३०	४०	५४	३८	१४	३०	५६

उच्चरश्मिवल-जिस ग्रह का उच्चरश्मि बल स्पष्ट करना हो उसके राश्यादि स्पष्ट में से उसकी नीचराशि अश घटाना, शेष अंक ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में से घटाना, बाद राशि में १ जोड़ना और अशादि द्विगुण करना (अश कलादि में ३०-६० का भाग देकर पथास्थित करना) तो 'उच्चराशि' स्पष्ट होती है। १॥ चेष्टारश्मि बल-चेष्टारश्मि साधन के लिए प्रथम चेष्टाकेन्द्र कहते हैं। स्पष्टसूर्य को सामन करके ३ राशि जोड़ने से सूर्य का 'चेष्टाकेन्द्र' होता है। सूर्य में चन्द्रस्पष्ट घटाने से चन्द्रमा का चेष्टा केन्द्र होता है। मंगल आदि ५ ग्रहों का चेष्टाकेन्द्र पहिले कहा गया है। २॥

उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मि द्वयोर्भुतेः ॥ दलं तु शुभरश्मिः स्यादष्टम्यो वर्जितोऽशुभः ॥ ३॥  
उच्चचेष्टाकरी व्येकौ विनिर्हृत्वा तु योजयेत्। दलपेविष्टमन्यत्स्यात्पष्टिन्यो वर्जितं फलम् ॥ ४॥

अथ इष्टवक्रम्							अथ कष्टवक्रम्								
सू०	च०	म०	दु०	गु०	शु०	श०	यो०	सू०	च०	म०	दु०	गु०	शु०	श०	यो०
२८	१५	३०	१९	३४	४९	४३	२१६	३१	४४	२९	४०	२५	१४	१६	२०२
५४	१२	५२	२३	४	४८	१९	५६	३५	४७	७	३६	५५	११	४०	५३
५०	२०	५०	५०	४०	३०	४०	४०	१०	४०	१०	४०	१०	३०	२०	१०

चेष्टारश्मि, शुभरश्मि, अशुभरश्मि स्पष्टीकरण-चेष्टाकेन्द्र से चेष्टारश्मि साधन करने का प्रकार उच्च रश्मि की तरह ही जानना। इस प्रकार स्पष्ट की हुई चेष्टा रश्मि और उच्च रश्मि दोनों को जोड़कर आधा करना तो शुभ रश्मि होती है। और ८ में घटाने से अशुभ रश्मि होती है। ३॥

इष्ट बल और कष्ट बल-उच्च रश्मि में १ घटाना, बाद १० से गुणा करना तथा चेष्टा रश्मि में भी १ घटाकर दससे गुणा करना, बाद दोनों को जोड़कर आधा करना तो इष्टबल होता है। इसकी ६० में घटाने से कष्ट बल होता है। ४॥

स्वोच्चे मूलत्रिकोणे च स्वर्क्षेऽधिमुहुरि कमात् ॥ मित्रक्षे च समक्षे च शत्रुमे चात्रिशत्रुमे ॥ नीचे च पश्चिरिच्छत्रिः क्षात्रिः करकरास्तिथिः ॥ नागा वेदाः करौ शून्यं शुभमेतत्फलं विदुः ॥ ६॥  
पष्टिन्यो वर्जिताश्रेते शिष्ट स्यादशुभ फलम् ॥ तदर्थं तु फल प्रोक्तमन्यवर्णं शुभाऽशुभम् ॥ ७॥



बृहत् इष्ट-कष्ट फल-उच्च राशि के ग्रह का बल ६०। मूल त्रिकोण का ४५। स्वराशि का ३०। अतिमित्र का २२। मित्र राशि का १५। समराशि का ८। शत्रुराशि का ४। अतिशत्रु का २। नीच का ०। यह शुभग्रह का इष्ट बल कहा। इस बल को ६० में घटाने से अशुभ या कष्टबल होता है। और होरा, त्रेष्काण, सप्तमाश, नवमाश, द्वादशाश, त्रिंशाश इन वर्गों की राशियों में उच्चादिक ही तो जितना बल कहा है उसका आधा लेना। और पापवर्ग में ही तो पापग्रह का आधा लेना। इसप्रकार शुभवर्ग में ही तो शुभग्रह का आधा और अशुभ वर्ग में ही तो अशुभ ग्रह का आधा बल लेना।॥५॥६॥७॥

अथ अशुभसप्तकवर्गकष्टबलवक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	शु०	शु०	श०	पहा
०	०	०	०	०	०	०	०
३०	४५	४५	३०	३०	४५	३०	ग्रहः
०	०	०	०	०	०	०	०
२८	२२	२२	२६	२२	२२	२२	होरा
०	०	३०	०	३०	३०	३०	०
१५	२६	१२	२२	२८	२२	१५	त्रेष्का
०	०	०	३०	०	३०	०	०
१५	०	२२	२८	०	०	२६	सप्ता
०	०	३०	०	०	०	०	०
१९	१९	२२	१८	१६	२८	२२	नवा
०	०	३०	०	०	३०	३०	०
२२	०	१५	०	२६	०	१९	द्वाद
३०	०	०	०	०	०	०	०
१९	०	१९	२८	२२	२८	२८	त्रिंशा
०	०	०	०	३०	०	०	०

अथ शुभसप्तकवर्गइष्टबलवक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	शु०	शु०	श०	पहा
०	०	०	०	०	०	०	०
३०	१५	१५	३०	३०	१५	३०	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०
३	७	४	७	७	७	७	होरा
०	३०	०	३०	३०	३०	३०	०
१५	४	११	७	२	७	१५	त्रेष्का
०	०	०	३०	०	३०	०	०
१५	३०	७	२	३०	३०	४	सप्ता
०	०	३०	०	०	०	०	०
११	११	७	११	१५	२	७	नवा
०	०	३०	०	०	३०	३०	०
७	३०	१५	३०	४	३०	११	द्वाद
०	०	०	०	०	०	०	०
११	३०	११	२	७	२	२	त्रिंशा
०	०	०	३०	०	०	०	०

पचस्विष्टफल चादौ षष्ठं सममुदाहृतम् ॥ अशुभास्तु त्रयं प्रोक्ता इति शास्त्रेषु निश्चयः ॥८॥  
 दिग्बल दिक्फल तस्य तथा दिनफलं भवेत् ॥ तयोः फलं शुभं प्रोक्तं षष्ठ्या वर्ज्यं तथैतरत् ॥९॥  
 शुभादिके शुभनेष्टमशुभे चादिके शुभात् ॥ बलैरेव हले स्याता दृष्टिं हन्यात्स्फुटैव सा ॥१०॥ बलैः  
 षड्भिः समेधित्वा समानोतं पृथक् पृथक् ॥ बलिनश्चोक्तसङ्गैश्च बलैरेव हरेतत ॥११॥  
 तत्तद्वत्फलानि स्युरशुभानि शुभानि च ॥ शुभयापफलान्या च दृष्टिं हन्याद्वन तथा ॥१२॥

प्रथम जो उच्चादि ९ प्रकार का बल कहा है उसमें इतना विशेष जानना कि उच्च, मूलत्रिकोण, स्वगृह, मित्रक्षेत्र, अतिमित्र क्षेत्र, इन ५ स्थानों के ग्रहों का बल शुभ होता है। और सम क्षेत्री ग्रह का बल सम एव नीच शत्रु अति शत्रु राशियत ग्रह का बल अशुभ जानना ॥८॥

दिग्बल आदि से बृहत् इष्ट-कष्ट बल लाने का प्रकार-

दिग्बल का दशम भाग लेकर फल स्पष्ट करना। इसी तरह दिग्बल का १५ में भाग लेकर फल लेना। दोनों को जोड़ने से जो अंक आये वही इष्ट बल होता है। ६० में घटाने से कष्टबल होता है। इनमें शुभ बल अधिक हो तो शुभ एव अशुभ बल अधिक हो तो अशुभ होता है। इष्ट-कष्ट दृष्टि साधन-प्रथम सख्या ४५ श्लोक में जो दृष्ट कष्टबल कहा है उससे दृष्टि को गुणा करने से इष्ट दृष्टि, कष्ट दृष्टि होती है ॥९॥१०॥ प्रथम जो होरा, द्रेष्काण आदि पदबल कहा गया है वह प्रत्येक ग्रह का भिन्न भिन्न जोड़ने से जो अंक होगा उसकी पिण्डक सङ्गा है। पूर्वोक्त इष्ट कष्ट बल से भाग देने से जो फल प्राप्त हो वह बृहत् इष्ट एव बृहत् कष्ट बल होता है। इष्टबल को शुभ तथा कष्ट बल को अशुभ समझना। इस शुभ और अशुभ फलाङ्क से दृष्टि को गुणा करना और बल को गुणा करना ॥११॥१२॥

दृष्टेश्चशुभपापोस्त्ये बले स्याता तथैव च ॥ भावाना च फले प्रोक्ते पतीना च फले उभे ॥१३॥  
 सराशिर्ग्रहयुक्तश्चेद्भावसाधनसगुणे ॥ फले तस्य शुभे युज्यावाशुभे वर्जयेच्छुभे ॥१४॥  
 पापश्रेयदान्या चैव बले दृष्ट्या च तेऽत्र तु ॥ युज्यादुच्चाविषु फलममित्रादिषु  
 वर्जयेत् ॥१५॥

जो फल प्राप्त हो वह दृष्टि का और बल का शुभ तथा अशुभ फल होता है। प्रथम जो ग्रहबल और भाव बल कहा है उसमें जो भाव जिस ग्रह से युक्त हो उस ग्रह वी राशि बल स भाव के बल को गुणा करना। यदि शुभ बल हो तो गुणन फल जोड़ना अशुभ फल हो तो घटाना। बल के फल में विपरीत करना। पाप हो तो युक्त करना और शुभ हो तो हीन करना। दृष्टि बल में भी यही क्रिया करना। अर्थात् फल उच्चादिक का हो तो युक्त करना शत्रु आदि का हो तो हीन करना ॥१३॥१४॥१५॥

स्थाने चैव क्रमात्प्रोक्तं करणे चास्याया क्रमः ॥ राशिद्वयगते भावे तत्राश्वघ्निते क्रिया ॥१६॥  
 स्थानाधिकस्तु भावेन नामभाव प्रकीर्तितः ॥ तत्समाने च तद्भावे तदानीं स्थानदान्  
 प्रधान् ॥१७॥ सयोज्य स्थानसख्याया बलमेतत्सम भवेत् ॥१८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे इष्टकष्टवर्जनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अष्टक वर्ग में जो रेखा का फल कहा है बिन्दु में उससे विपरीत जानना। और भावों में जो ग्रह सधिगत हों उस भाव की राशि को ग्रह के बल में जोड़ने से स्थान बल के समान हो तो लाभदायक होता है और आघात करने से यह फल स्पष्ट होता है।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० इष्ट कष्ट  
वर्णन नाम सप्तमोऽध्याय ॥७॥

### अथ रश्मिफलवर्णनाध्याय

विधातृलिखिता या सा ललाटक्षरमालिका ॥ तस्या शरीरकथनं बध्नामि च पृथक्पृथक् ॥  
सप्राञ्छरीरचिता च द्वितीयात्स्व च पैतृकम् ॥ मरणाय कुटुंब च पश्चादि च वदेद्बुध ॥२॥  
तृतीयात्सोदर बुद्धि दुःपूर्वा विक्रम विदु ॥ चतुर्थीत्यंतर वेश्म सुख लालित्यमेव च ॥३॥  
सौमनस्यमपत्यानि प्रजा मेधा च पंचमात् ॥ हानि व्याधिपरि षष्ठान्मैथुन स्त्री जय  
तत ॥४॥

#### रश्मि फल वर्णन

जातक के ललाट में विधाता की लिखी हुई प्रारब्ध भोग की जो अक्षर माला है वह प्रत्यक्ष नहीं देखी जा सकती। अतः उसके ज्ञान के लिये लग्न आदि १२ भावों का फल कहा जाता है। लग्न से शरीर के सुख दुःख का विचार करना। धन भाव से स्वोपार्जित धन का तथा पितृधन संवक परिवार पशु स्त्री आदि का विचार करना ॥१॥२॥ तीसरे भाव से भ्रातृवर्ग दुष्ट बुद्धि और पराक्रमका विचार। चौथे भाव से मकान भूमि सुख सुन्दरता तथा पिताका विचार पंचम भाव से मन की प्रसन्नता पुत्रादिका वा सदविचार का स्मृति शक्ति का विचार। छठे भाव से हानि रोग और शत्रु का विचार। सप्तम भाव में भार्या का भार्या सुग का जय का विचार करना ॥३॥४॥

मृति पराजय दुःख हानि व्याधि तथाष्टमात् ॥ सौशील्यभाग्य धर्माश्च नवमाद्दशमात्तया ॥५॥  
मानास्वदाज्ञाकर्माणि आयादर्थं व्ययाद्विषयम् ॥ दिग्भवेष्विषुसप्लाष्टशरा स्वोच्छेदरा रवे  
॥६॥ नीचे न चातरा प्रोक्ता रश्मयस्त्वनुपातजा ॥ नीचोन तु ग्रह भार्याधिके चक्राद्विशो-  
धयेत् ॥७॥

#### अथ रश्मिचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	शु०	शु०	श०	धो०
५	२	३	१	१	६	२	२४
४०	३१	४५	४३	२२	५३	२६	२३
२३	१२	४६	४१	२५	३८	२६	३०

अ० न० मा० मू० त्रिकोणरश्मि चक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	घो०
१३	०	८	५	२	०	५	३३
१४	०	२	१०	५६	०	१३	३८
१३	०	४७	४३	३६	०	४७	६

अथ द्वेषकाणरश्मिक्रमम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	घो०
०	५	११	४	०	०	०	२१
०	५९	१७	१०	०	०	०	२७
०	३०	१८	२२	०	०	०	१०

अथ होरारश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	घो०
१७	७	८	०	०	०	०	३४
१	३३	४६	०	०	०	०	२१
१	३९	४७	०	०	०	०	३५

अथ त्रिंशशरश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	घो०
०	५	११	०	६	०	०	२२
०	२४	१७	०	५२	०	०	३३
०	२	१८	०	५	०	०	२५

अरावध्परिनीचे च वेदद्वयसित्तहीनकाः ॥ उच्चै च त्रिगुणं प्रोक्तं स्वत्रिकोणे द्विसंगुणम् ॥११॥ स्वर्ले त्रिधा द्विसंभक्तास्त्वधिमित्रगृहेषि च ॥ वेदघ्ना रामसंभक्ता मित्रमे षड्गुणास्ततः ॥१२॥ पंच मत्तास्तथा शत्रुगृहे द्विधाश्रतुर्हताः ॥ अतिरात्रोः करघ्नाश्च पंचमत्ता न नीचमे ॥१३॥

मित्रराशिमे ५/६ शत्रुराशिमे २/४ अतिशत्रुमे २/५ भाग। यहा ऊपर का अक गुण और नीचे का अक भाग का द्योतक है।

उक्त रश्मि स्पष्ट मे अन्य विशेष सस्कार—

अशपति उच्च वर्ग मे हो तो प्राप्त रश्मि बलको ३ से गुणा करना। तथा रश्मिपति त्रिकोण मे हो तो पूर्वरश्मि को द्विगुणित करना। यदि अतिमित्र वर्ग मे हो तो चतुर्गुणित कर तीन का भाग देना तो रश्मि स्पष्ट होती है। इसी प्रकार मित्रगृह मे हो तो छ से गुणा कर ५ का भाग देना। शत्रु राशि मे हो तो दो से गुणा कर चार का भाग देना। अतिशत्रु के वर्ग मे हो तो दो से गुणा कर पाचका भाग देना तथा नीचवर्ग मे हो तो कोई विशेष सस्कार नहीं करना। सञ्ज्ञे—उच्च मे X ३। मूल त्रिकोण मे X २। अतिमित्र मे ३/४ ॥११-१३॥

शनिं सित विना ताराग्रहा अस्तगता यदि ॥ विरडमयो भवंत्येव वक्रादौ द्विगुणास्ततः ॥१४॥ अनुपातोऽन्तरे वक्र त्यागेऽष्टांशविहीनकाः ॥ मदापां दशभागोना वस्वशोनाः कराः स्मृताः ॥१५॥ तथा शीघ्रतरायां च वेदाशोनाः कराः स्मृताः ॥ अयांशोनाश्च शीघ्रायां केचिदेवं वदन्ति हि ॥१६॥

अथ मतांतररश्मिचक्रम्							
मू०	च०	म०	बु०	शु०	गु०	श०	मो०
०	३	५	०	१	२०	३	३४
०	१	१	५१	३८	४०	३९	५१
०	२७	१	५१	५४	५४	३९	४६

वक्रानुवक्रा विकला शीघ्रा शीघ्रतरा गतिः ॥वृद्धिहीने तु शिल्डे डे बर्जनीये समासमा ॥१७॥

मतान्तर से हानि वृद्धि—

म०, बु० गु० अस्त हो तो रश्मि बलहीन होते है, किन्तु शुक्र, शनि रश्मिबल हीन नहीं होने एव रश्मिपति वक्रारभ में हो तो रश्मिबल द्विगुण होगा। वक्रान मे अष्टमाशः मध्य मे त्रैराशिकमे स्पष्ट करना। रश्मिपति मव हो तो दशमाश हीन होता है। अतिमन्द हो तो अष्टमाश हीन। शीघ्रगति पट्टाश हीन। शीघ्रतर हो तो चतुर्थाश हीन करना ॥१४॥१५॥१६॥

ग्रह-गति के आठ भेद—

वक्र, अनुवक्र, विकल, शीघ्र, शीघ्रतर मन्द, मन्दतर, सम ये आठ प्रकार की ग्रहो की गति होती है। इनमें दो गति वर्ज्य है, क्योंकि-शीघ्रतर गति वृद्धि हीन होने से मन्द और शीघ्रगति वृद्धिहीन होने से मन्दतर कही जा सकती है॥१७॥

योगेषु ये ग्रहाः प्रोक्तास्तेषां योगे च रश्मयः ॥ पापसौम्यारिभिर्ग्राणां योगे हानिश्च कीर्तिता ॥१८॥ उच्चादिषु च पूर्वोक्तं पापो बलवशाद्भवेत् ॥१९॥ चतुर्गुणा राजयोगे पूर्वन्यायेन शोधिता ॥ पचाष्टपञ्चवाष्टाकवेदा स्तु रश्मयः स्वका ॥२०॥ द्विप्रहादिषु योगेषु ग्रहभावफलाहता ॥ गतिसंज्ञानुहयेण फलानां निर्णयः स्मृतः ॥२१॥ इष्टकष्टफलसंगुणा-स्ततस्तत्करानयच सपुतास्तुतान् ॥ निश्चितार्थमखिलं समीक्ष्य तत्प्रस्तुतं तु सत्सं वदेद्बुधः ॥२२॥

राजयोग, दरिद्रयोग वारक आदि में विशेष सस्वार—

राजयोग वारक तथा दरिद्रयोग वारक ग्रहों का यदि एक राशि में सम्बन्ध हो तो दरिद्रयोग वारक ग्रह की रश्मि राजयोग वारक ग्रह में पडाना, जो बायीं रहे तो राजयोगवारक की रश्मि होती है॥१८॥

उच्चादिस्थानगत रश्मिनिर्णय—

शुभग्रहों की उच्चादि स्थानगत रश्मि यथावत् रसना किन्तु पापग्रहों की रश्मि में बमोवेशी बनावल के अनुसार होती है॥१९॥ प्रथम बहे गये (श्लोक म० ६७ में) राजयोग के सम्बन्धों में प्राप्त रश्मि में विशेष मन्वार

यदि राजयोग वारक ग्रह हो तो सूर्य के ५ चन्द्र के ८ भीम के ६, बुध के ७, गुरु के ८, शुक्र के ९, शनि के ४ इन ध्रुवों में पूर्व बधित गति में रश्मि स्पष्ट करने चतुर्गुणित बना में रश्मि स्पष्ट होती है॥२०॥ जो योग दो तीन या चार आदि ग्रहों में होता है वहा उन ग्रहों की रश्मियों में भावाव गुणा करने ६० का भाग देना जो खलि प्राप्त हो वह पत्र होगा। आगे कहा गया रश्मि का पत्र गति के अनुसार बनाया चाहिए॥२१॥

इष्ट, कष्ट बल का गुणन में उपयोग—

इष्टपत्र और कष्ट पत्र में रश्मि को गुणा करने परन्तर गुण बन्ध उस पत्र के अनुसार आगे कहा गया इष्ट या अनिष्ट पत्र रहना चाहिए॥२२॥

एवमि पञ्चर भावहरिद्रा मृगदुत्तिना ॥नीचानां दामनां घाता अवि जाना कुतोत्तमे ॥२३॥

अथ इष्टबलचक्रमाह							
सू०	ख०	ग०	दू०	पू०	शु०	म०	के०
२	०	१	०	०	५	१	१४
५१	३८	५६	३३	५६	१८	५५	३७
१२	१८	१७	३१	५७	५४	५३	२७

अथ कण्ठबलरश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	जु०	पु०	शु०	ग०	यो०
२	१	४	१	०	१	०	१०
५९	५२	४९	१०	३५	३७	४०	४५
१०	५१	२३	९	३६	४७	४०	४६

परती वशके यावत्केवल जठराद्य वै ॥ निःस्वाः कदाचिद्वासाश्च भारवाहाः कदाचन ॥  
स्त्रीपुत्रगृहहोनाश्च वशायोग्यक्रियापारताः ॥२४॥ एकादशोऽल्पपुत्राः स्वल्पधनाः स्त्रीविमानिता  
मनुजाः ॥ बिभ्रति कृच्छ्रेण निज स्वल्पं च कुटुम्बमेव तदा ॥२५॥ द्वादशे निर्धना मूर्खा धूर्ताः  
सत्यविनाशकाः ॥ त्रयोदशे च चोराः स्युर्निर्धनाः कुलपांसनाः ॥२६॥

रश्मिफल कथन—

रश्मि सख्या १ से ५ तक हो तो जातक दरिद्र तथा महादुःखी रहता है। उत्तमकुल में जन्म होने पर भी नीच आदमी का नौकर ही होता है ॥२३॥ और ५ से '१०' रश्मि तक रश्मियोग हो तो केवल उदर भरणयोग्य ही रहता है कभी दरिद्री, कभी दास, कभी भारवाही तथा कुल को अपकीर्ति कारक कार्यरत रहता है ॥२४॥ यदि रश्मियोग '११' हो तो कम पुत्रवाला साधारण आमदनीवाला, और सम्पत्तिरहित, अपने परिवार के भरण पोषण में भी असमर्थ रहता है ॥२५॥ यदि रश्मियोग '१२' हो तो मनुष्य, निर्धन, मूर्ख, धूर्त, असत्यभाषी होता है। '१३' रश्मियोग हो तो चोर, दरिद्री तथा कुलहीन होता है ॥२६॥

विद्वांश्चतुर्विंशे धर्म रतो मर्षा धनार्जकः। कुटुम्बभरणे सक्तः कुलयोग्यक्रियो भवेत् ॥२७॥  
रश्मिभिः पंचदशभिरेवं गुणपुतोऽपि सन् ॥ स्ववंशमुख्यो धनवानित्याह भगवान्मुनिः ॥२८॥  
आविंशतेः कुलेशाना बहुमृत्याः कुटुम्बिनः ॥ कीर्तिर्मतश्च पूर्णाश्च स्वजनेन च घोडरा ॥२९॥  
एकविंशतिविल्यातः पंचाशन्नजनपोषकः ॥ दामशीलः कृपायुक्तो द्वाविंशे लोभसंयुतः ॥३०॥  
धनवानल्परिपुश्च प्रभुः स्वल्पगुणी भवेत् ॥ त्रयोविंशे तु मुख्यश्च विद्याहीनो धनी मुनी ॥३१॥  
आत्रिंशत्परतः श्रीमान्सर्वसत्त्वतमन्वितः ॥ राजप्रियश्च चंद्रश्च जनश्च बहुभिर्दत्तः ॥३२॥

योग '१४' हो तो धर्मात्मा, शान्तस्वभाव, उद्यमी, कुटुम्बपालक, तथा उचित धर्म करनेवाला होता है ॥२७॥ '१५' योग हो तो धर्मात्मा, ज्ञान्, उद्यमी, परिवार पालन में समर्थ, धनी तथा कुल मुख्य होता है ॥२८॥ १६ से २० तक रश्मि योग हो तो परिवार पोषण समर्थ कीर्तिमान, धनी, प्रसिद्ध होता है ॥२९॥ रश्मि योग '२१' हो तो ५० मनुष्यों तक का पालन करनेवाला, दानी, दयावान् होता है। '२२' योग हो तो लोभी, धनी, शत्रुहीन, समर्थ तथा अल्पगुणी होता है ॥३०॥ रश्मियोग २३ हो तो विद्याहीन होने पर भी समाज में आदरणीय, धनी तथा सुखी होता है ॥३१॥ २४ से ३० तक रश्मियोग हो तो धन, ऐश्वर्यवान्, सर्वत्र सम्पन्न, राजप्रिय, प्रतापी तथा समाज सेवित होता है ॥३२॥

एकत्रिंशो च सच्चिवो द्वात्रिंशो वाहिनीपति ॥ पूर्वभागे समुद्दिष्टफलानि परतो विदु ॥३३॥  
 पक्ति सूर्या तिथिनुपात्यष्टिधृतिश्च विशति ॥ नखा भूर्च्छा जिनास्तत्त्व त्रिशदद्वात्रिंशदेव च  
 ॥३४॥ पचाशन्धैव षष्टिश्च शत चैव सुतादय ॥ आरभ्य विश्वसख्याया क्रमात्स्वजनपोषका  
 ॥३५॥ अत ऊर्ध्वं नृपे श्वात आपचत्रिशत क्रमात् ॥ शतपचकमारभ्य सहस्रावधि पोषक  
 ॥३६॥ अत ऊर्ध्वं तु देशाना सख्या स्यु पचविशति ॥ षड्विंशतिश्च भानि स्युस्त्रिंशत्  
 षट्त्रिंशदेव च ॥३७॥

रश्मियोग ३१ हो तो प्रधान मन्त्री तथा ३२ हो तो सेनापति होता है। इससे अधिक रश्मियोग का फल पूर्वखण्ड में कहा है ॥३३॥

रश्मियोग के अनुसार सन्तान सख्या का विचार—

३३ रश्मियोग हो तो १० पुत्र हो। इसी प्रकार ३४ योग से १२। ३५ से १५। ३६ से १६।  
 ३७ से १६। ३८ से १७। ३९ से १८। ४० से १८। ४१ से २०। ४२ से २१। ४३ से २४। ४४ से  
 २५। ४५ से ३०। ४६ से ३२। ४७ से ५०। ४८ से ६०। ४९ से १०० से सन्तान होती है। १००  
 से ऊपर सख्या कही नहीं गई है तथापि ५० या ५० से अधिक रश्मियोग हो तो सन्तान भी  
 १०० से अधिक समझना चाहिए ॥३४॥३५॥

रश्मि के प्रमाण से बहुजन पोषक योग—

३२ रश्मि के योग से ४५ मनुष्यो तक पोषक होता है। ३५ रश्मियो से ५०० से १०००  
 मनुष्यो तक का पोषण करनेवाला होता है ॥३६॥

रश्मियोग से देशाधिपतित्व विचार—

३६ रश्मि योग हो तो २५ गावों का अधिपति हो। ३७ रश्मि योग हो तो २६ गावों का  
 अधिपति हो। इसी प्रकार ३८ योग से २७ गाव ३९ योग से ३० गाव, ४० रश्मियोग से ३६  
 गावों का अधिपति होता है ॥३७॥

अत ऊर्ध्वं नृपा क्षात्रधर्मिणः क्षत्रियोऽय वा ॥ भूद्विश्यन्धीषु षट्सप्तभूमृज्जनपदाधिया  
 ॥३८॥ पचाशद्रश्मितयोगे सभ्राट् स्यादनुपातत ॥ अतऊर्ध्वं तु देवेन्द्रतुल्या स्युरिति पद्यमू  
 ॥३९॥ उच्चचेष्टोत्थयोगार्धगुणिता षष्टिभाजिता ॥ नरादीना तु सख्या स्यु स्पष्टा  
 इत्याह पद्यमू ॥४०॥ सुतादय वली राजधर्मिणो म्लेच्छधर्मिण ॥ त्रिप्राश्रेच्छीधर्मेयुता  
 यत्तकर्मक्रियारता ॥४१॥

४१ रश्मि योग से एक देश वा राज्या ४२ रश्मियोग से २ देशों वा राज्या ४३ से ३ देशों वा  
 ४४ से ४ देशों का। ४५ से ५ देशों का। ४६ से ६ देशों का। ४७ रश्मियोग से ७ देशों का राज्य  
 करनेवाला होता है ॥३८॥ ५० रश्मियोग से सार्वभौम राजा। इसी प्रकार ४८ और ४९ रश्मि योग  
 हो तो ७ देश और सार्वभौम के मध्य में जानना। ५० ग ऊपर रश्मियोग हो तो इन्द्र के मानान  
 विभूतिवाला होता है ॥३९॥ अब रश्मि सम्बन्ध में विशेष पत्र कहा जाता है। उच्च रश्मि और  
 चेष्टा रश्मि दोनों का योग करना उसे दो जगह रखना एक जगह आधा करना उस आधे निय हूए  
 अङ्कसे दूसरे जगह रमे हुए योगको गोमूत्रिका न्याय से गुणा करना। बाद ६० का भाग देना नक्षत्र  
 जो अङ्क हो उतनी ही सख्या के नीचे चार चार गी घोड़े आदि होंगे ऐसा जानना ॥४०॥ पूर्व वर



राजयोग कलियुगमे धर्महीन क्षत्री आदिक के लिये जानना। यदि वे राजयोग ब्राह्मण के हो तो उनके प्रताप से यज्ञ याग आदि कर्मनिष्ठ होकर विद्वान् और सुखी होगा। और ज्ञान तथा पुण्य के प्रताप से अन्त में स्वर्ग राज्य भोगनेवाला होगा ऐसा जानना॥४१॥

योगरश्मिसमायोगे तदातीं तत्फल विदुः ॥ नामसादियु योगेषु राजयोगे स्थित तु तत् ॥४२॥  
योगकर्तारमारभ्य बलिन च विनिर्णयेत् ॥ पुर्य भागे समुद्दिष्टभाग्यकर्मफलानि तु ॥४३॥  
अनुपातेन विज्ञाय योजयेद्वर्जयेद्बुधः॥ स्थानबीमादिके देशे मुख्यः स्यादनुपाततः ॥४४॥  
दिग्बले विजयश्रेष्ठो वीर्ये तु प्रभुता भवेत् ॥ कालवीर्याधिके कार्ये सदेत्साही तयायने ॥४५॥

जो रश्मियोग का फल कहा गया है वह फल राजयोग सहित रश्मि योग हो तो राज्य फलदायक होगा, ऐसा समझना चाहिए। और नाभस आदिक जो योग है उनमें भी रश्मियोग होने से यथार्थ फल प्राप्त होगा॥४२॥ प्रथम भाग में भाग्य और कर्मभाव का जो फल कहा गया है वह फल रश्मियोग के अनुपात से न्यूनाधिक शुभाशुभ समझना चाहिए॥४३॥

सप्तबल विचार—

स्थान बल १, दिग्बल २, चेष्टाबल ३, कालबल ४, अयन बल ५, उच्चबल ६, नैसर्गिक बल ७ ये सात बल होते हैं। इनका फल—स्थान बल अधिक हो तो देश में मुख्य पुरुष हो। दिग्बल अधिक हो तो विजयी हो। चेष्टाबल अधिक हो तो नेता हो। कालबल अधिक हो तो सर्वकार्य में चतुर हो। अयन बल अधिक हो तो जीवन भर सुखी रहे॥४४॥४५॥

स्ववंशोत्कर्षता स्वोच्चे नैसर्गे जातिनिर्णयः ॥ राशीनां च ग्रहाणां च स्वभावाः कथिता मया ॥४६॥ ये चात्र योजनीयाश्च दैवजेन मुमुक्षिता ॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे रश्मीष्टकण्टादिशासने  
अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

उच्चबल अधिक होवे तो अपने बंशमें मुख्य हो। नैसर्गिकबल अधिक हो तो स्वजाति धर्म का व्याख्याता हो॥४६॥

इस प्रकार भाव और ग्रहों का फल बहा गया। जहा जैसा उचित हो बहा वैसे फल का निर्देश करे॥४७॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्रका० रश्मि, इष्ट, षष्ट्यादि  
वर्णन नाम अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

अथ लोकयात्रावर्णनाह

मूलस्थानाधिके स्थाने स भावः शुभ इष्यते ॥ न्यूनैःशुभः समे मातृपितृबंधून्वरिष्यते ॥१॥

स्ववेश्म धर्मकर्मयिलप्रैर्द्युं पतिं वदेत् ॥ मृतिव्ययारिभिस्तेषां व्ययं हानिं पृथग्बदेत् ॥२॥ ये  
योगाः पूर्वभागे तु द्विग्रहाद्या नभादयः ॥ राजयोगादयः सर्वेयथान्यायं प्रयोजयेत् ॥३॥  
भरणीयकुटुंबस्य द्वितीयेन शुभाशुभे ॥ अन्येषां चैव भावानां स्वनामसदृशं फलम् ॥४॥ सूर्येण  
वेश्म स्थानेन पितुर्मृतिपदं वदेत् ॥ चंद्रेण पचमेनैव मातुर्मृतिपदं वदेत् ॥५॥

### लोकयात्रा वर्णन

अष्टक वर्ग फल कहा जाता है। जिस ग्रह की रेखा जिस भाव में कही है वहा देखना चाहिए कि  
रेखा अधिक हो तो फल शुभ जानना और कम हो तो अशुभ, सम हो तो सम जानना ॥१॥  
दूसरा, चौथा, नवा, दशवा, ग्यारहवा और लग्न ये ६ भाव अपने स्वभाव से ही श्रेष्ठ है और  
उत्तम फल देनेवाले हैं। तथा आठवा, बारहवा ये दोनों भाव हानि तथा खर्च करनेवाले हैं ॥२॥  
प्रथम जो नाभस आदि जो राजयोग कहे हैं उनका फल इष्ट, कष्ट, रश्मि तथा अष्टकबल का  
बलाबल विचार कर कहना ॥३॥ दूसरे भाव से रेखा और शून्य की न्यूनाधिकता से कुटुम्ब  
पोषण का शुभाशुभ देखना। तथा अन्य भावों का फल भी उनके नाम के अनुसार जानना  
चाहिए ॥४॥ सूर्य से तथा चतुर्थ भाव से पिता की मृत्यु का विचार करना ॥५॥

सूर्ये चद्रे सपापे च तयोश्च मरणं भवेत् ॥ तयोर्ंतरलिप्ताश्च शतद्वयविभाजिताः ॥६॥  
अब्दादयोऽशुभस्यापि दृष्ट्या संगुणयेत्ततः ॥ षष्ट्याविभज्याब्दाद्याश्च तस्मात्पापे ब्रह्मोत्तरे  
॥७॥ तदामृतिर्भवेन्न्यूनैतद्गलेनैव वर्धयेत् ॥ तदा मृत्युस्तयोर्मृत्युस्थाने पापग्रहे सति ॥८॥  
तस्याशुभस्य विन्यस्य चाष्टवर्गं ततः क्रमात् ॥ त्रिकोणेकाधिपस्यास्य कुर्वच्छोधनक मुधः  
॥९॥ त्रियु द्वयोर्वा यन्मूनमितरञ्चसम भवेत् ॥ एकस्मिन् भवनेशून्यं तत्रिकोणं न  
शोधयेत् ॥१०॥

मृत्युकाल निर्णय करने के लिये चतुर्थ और पचम भाव तथा सूर्य चन्द्रमा की राशि अग वी  
कला करके २०० का भाग देना। लब्धि अक सख्या मृत्यु के वर्षों की होती है। यह त्रिया  
समबल अवस्था में जानना। यदि न्यूनाधिक बल हो तो भिन्न त्रिया है। न्यूनाधिक बल में सूर्य  
चन्द्र से पापग्रह बलवान् हो तो पूर्व प्राप्ता फल को पापग्रह की दृष्टि से गुणा करना और ६०  
का भाग देना। लब्ध वर्षादिक जानना। पापग्रह अल्पबली हो तो सूर्यचन्द्र बल से गुणा करना  
और ६० का भाग देना। लब्ध वर्षादिक होते हैं। और यदि अष्टमभाव में पापग्रह हो तो  
उसीसे माता पिता का अरिष्ट कहना ॥६॥७॥८॥

अष्टक वर्ग के विन्दु और रेखा में भावफल का निर्णय—

सूर्य, चन्द्र तथा ४५५८ भावस्थित पापग्रह इनका अष्टकवर्ग रत्नकर त्रिकोणशोधन तथा  
एकाधिपत्यशोधन करना ॥९॥ त्रिकोण शोधन में जिन स्थान की मर्याद कम हो वह पटाना  
तीन स्थानों में एक स्थान शून्य हो तो शोधन नहीं होता और तीनों स्थान में बराबर मर्याद  
हो तो सब स्थान में शून्य रचना ॥१०॥

समत्वे सर्वगोहेषु सर्वं संशोधयेद्बुधः ॥ क्षीणेन सह चान्यस्मिच्छोदयेद्ग्रहवर्जितम् ॥११॥  
ग्रहमुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ॥ अनेन सह चान्यस्मिच्छोदयेद्ग्रहवर्जिते ॥१२॥

फलाधिके ग्रहयुक्ते चान्यस्मिन्सर्वपुत्सुजेत् ॥ उभयोर्ग्रहसंपुक्ते न सरोधयः कदाचन ॥१३॥  
 उभयोर्ग्रहहीनान्यां समत्वं सकलं त्यजेत् ॥ सग्रहाग्रहसुत्पत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात् ॥१४॥  
 एकत्र नास्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र कीर्तितः ॥ कर्णोरसिहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक्  
 फलम् ॥१५॥

एकाधिपत्य शोधन—

जहां एक ग्रह की दो राशि हो वहां यह विचार करना होता है। एक राशि में रेखा कम और दूसरी में अधिक हो, और दोनों राशि ग्रह रहित हो तो-रेखाधिक में न्यूनरेखा की सख्या कम करके शेष अंक रखना। न्यून रेखास्थान में शून्य रखना। यदि दोनों राशियों में समान रेखा हो तो दोनों स्थान में शून्य होगा। एक राशि ग्रहयुक्त रेखाधिक हो तो अन्य राशि का फल त्याग करना। दोनों राशि ग्रह युक्त हों तो सशोधन नहीं होता। दोनों राशि ग्रहहीन हों रेखा सम हो तो दोनों स्थान में शून्य होगा। सग्रह राशि ग्रह के समान होने से ग्रहरहित से हीन होती है। एक राशि में रेखा नहीं हो तो दूसरी राशि की सख्या का भी त्याग करना। कर्क मिह राशि में एकाधिपत्य शोधन नहीं होता ॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥

ग्रहयोगेन हानिः स्यात्-वर्गणां पृथक् ततः ॥ सयोज्य सप्तभिर्हृत्वा सप्तविंशतिर्नाजिताः ॥१६॥  
 अब्दादयस्तदा देहनाशः करणदे सति ॥ तस्मिन् पापे ग्रहे तस्माद्दलिन्येव विधिः स्मृतः ॥१७॥  
 बलहीने तु त हन्यात्तानभिः पचभिर्भजेत् ॥ आयुस्तयोः स्यात्स्थानस्य प्रवे चेदशुभे सति ॥१८॥  
 मुनिभक्त यमुद्र स्यान्नैव चेन्नैतयोर्मतिः ॥ वक्ष्यमाणेन विधिना बदेदाह पराशरः ॥१९॥  
 सूर्यादायुः करौ भूपा मनवोर्का नवार्णवाः ॥ वेदास्त्रीणि तु लग्नस्य वक्ष्याम्यायुस्तथैव तत् ॥२०॥ ।

एकाधिपत्यशोधन के अंको से माता पिता का स्पष्ट मरणकाल जानने की रीति—

मेपादि राशियों में जो एक एकाधिपत्य शोधन द्वारा प्राप्त हुए हैं सो चतुर्थ भाव से अष्टम भाव के बल को तथा ग्रह बल को मेपादि राशि के वर्गणांको से गुणा करे तथा ग्रह ध्रुवांको से भी गुणा करके अलग २ योग करके फिर दोनों का योग करे पश्चात् ७ से गुणा कर २७ का भाग दे, लब्धांक वर्ष, मास, दिनादि एक माता पिता के अस्पष्ट काल का होगा। या उनकी आयु का अंक समझना। यह रीति कारण (विन्दु) से कही गई है। यदि पापग्रह बलवान् हो तो पूर्वोक्त रीति से निश्चय करना। और पापग्रह बलहीन हो तो ७ से गुणा कर ५ से भाग देना। लब्ध वर्षादिक माता पिता की आयु जानना यदि रेखाग्रह पापग्रह बलवान् हो तो पिण्ड को आठ से गुणा करके ७ का भाग देना, लब्ध सख्या माता पिता की आयु होती है। शून्य गणित से प्राप्त आयु से रेखा गणित का प्रमाण अधिक हो तो माता पिता को कोई भय नहीं समझना। ऐसा भयवान् पराशरजी का मत है ॥१६॥१७॥१८॥१९॥ (कारण का त्रिकोणैकाधिपत्य शोधित चक्र आगे देखें।)

प्रथम सूर्य, चतुर्थ और अष्टमभाव में आयु विचार कथन करके अब सूर्य तथा चतुर्थ भाव में आयु विचार करने के लिए सूर्यादि ग्रहों के ब्रह्मणः २१६११४१२११४१२ तथा अंतिम ध्रुवांक लग्न का जानना ॥२०॥

## अथ रवेस्त्रिकोणैकाधिपत्यशोधितकरणचक्रम्

र०गु०	शु०म०	स०								च०	श०	बु०
कु०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	राशय
३	४	६	५	४	५	५	१	२	४	४	५	मूलप्राप्त करणविश्व
१	०	२	४	२	१	१	०	०	०	०	४	त्रिकोणशोधनेना कशिष्टा
१	०	०	०	०	१	१	०	०	०	०	३	एकाधिपत्यशोध नाकशिष्टा

स्वोच्चे नीचे तु पात स्याद्वरणादिविधिस्तत ॥ आयुस्तयो स्वाती तस्मिन् भवने तु तथा स्थितौ ॥२१॥ न कश्चित्स्थानद स्याच्चेत्तत्काले च भृतिर्भवेत् ॥ शुभयोगे शुभा प्रोक्ता तयो स्याद्रश्मिसम्भव ॥२२॥ अष्टभिर्गुणयेत्यङ्गिर्विभज्यायु पर भवेत् ॥ येऽमनि स्थानदा न स्युर्जन्मकाले स्फुटीकृत ॥२३॥

यदि ग्रह उच्चराशि का हो तो उक्त ध्रुवाक ही स्पष्ट आयु समझना चाहिए। यदि ग्रह नीच राशि का हो तो त्रैराशिक गणित से स्पष्ट आयु लाना चाहिए। ॥२१॥ और यदि कोई ग्रह रेखा दाता नहीं हो तो उसी समय मृत्युकाल जाने। शुभग्रह वा सम्बन्ध या योग हो तो उत्तम रीति से और पापग्रह का योग हो तो निकृष्टरीति से मृत्यु जानना। ॥२२॥ रश्मि से आयुसाधन सूर्य तथा चतुर्थ भाव की रश्मिको ८ से गुणा करके ६ में भाग देना। लब्ध वर्ष आदि माता पिता की आयु की अवधि समझना। ॥२३॥

कलीकृतश्च सततैर्विभज्याभ्यादय क्रमात् ॥ एव शुभागुम ब्रूयान्मातापित्रोर्द्विजोत्तर ॥२४॥ करणस्थानदातार पापपुण्यफलप्रदा ॥ पुनश्चोच्चादिषु तथा त्रिगुणाटास्तु पूर्ववत् ॥२५॥ शत्रुनीचाधिशात्रूणा स्थानेष्वपि तु पूर्ववत् ॥ राशि हित्वा तु भावाना सर्वत्रैव श्रिया भवेत् ॥२६॥ द्वितीयभावलिप्ताश्च राशिलिप्ता विभाजिता ॥ स्ववर्गणाहतास्तत्पलेटाना वर्गणाहता ॥२७॥ भावरश्मिभिराहन्यात्सप्तभिश्च विभाजयेत् ॥ मूलरश्मिसमूहेन शिष्ट हन्यात्तथैव तान् ॥२८॥ इष्टानिष्टफलाभ्या च हत्वातरमय द्वयो ॥ सप्तदशरतिभिर्हत्वा सप्तभिश्च विभाजयेत् ॥२९॥

हे द्विजोत्तम! चतुर्थ भाव में रसाप्रद ग्रह नहीं हा तो चतुर्थ भाव स्पष्ट की कक्षा (पत्नी) करके २०० का भाग देना। लब्ध वर्ष मामादि माता पिता वा शुभ या अशुभ योग

समझना ॥२४॥ सो इस प्रकार समझना कि-शून्यप्रदग्रह पापफल देते हैं और वे ग्रह उच्चादि स्थान में हों तो त्रिगुण, द्विगुण आदि पूर्वोक्त (उच्चे च त्रिगुण प्रोक्त स्वत्रिकोणे द्विसगुणम् इत्यादि) रीति से आयु विचार करना ॥२५॥ जहां भाव स्पष्ट से आयु का विचार करना हो वहां भावस्पष्ट की राशि छोड़कर केवल अशादिक से पूर्व कही रीति से संस्कार करना ॥२६॥

मूलकार का ही उदाहरण

यथा द्वितीय भाव की राशि त्यागकर अशादि की लिप्ता (घटी) की गई। पश्चात् द्वितीय भावराशि की वर्गणा से गुणा किया बाद द्वितीयभावस्थ ग्रह की वर्गणा से गुणा किया, और भाव की रश्मि में गुणा करके ७ से भाग दिया शेष अंक की मूलरश्मि योग से गुणा किया पश्चात् इष्ट, कष्ट फल से गुणा करना (अलग २) बाद दोनों के अन्तर को २७ से गुणा करके ७ का भाग दिया तो भाव द्वितीय का फल (भरणीय कुटुम्बीजनों की) सख्या प्राप्त हुई ॥२७॥२८॥२९॥

भरणीयकुटुम्बाना पुस्त्रियस्तत्समा विदु ॥ राशीन् हित्वा तु लग्नादिभावभागादिकान् पृथक् ॥३०॥ गुणयेद्विश्विभि स्वैश्च भावभागादयो विदु ॥ कर्त्तृकृत्य भलिप्ताभिर्विभज्याप्त फल तत ॥३१॥ सूर्यभक्तावशिष्ट तु भावाना साधन विदु ॥ राशीन् हित्वा ततो लिप्ता खलनेत्रविभाजिता ॥३२॥ साधनघ्ना विभक्ताश्च वर्गणाभि फलहता ॥ उच्चादिवृद्धिहानि च कुर्यात्तत्सख्यका भवेत् ॥३३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेलोकप्रवेशर्षणं  
नाम नवमोऽध्याय ॥९॥

इसी प्रकार राशि त्याग करके लग्न आदि भाव के अलग २ अशादि की भावस्वामी की रश्मि से गुणा करो पुन घटी करो। पश्चात् दो जगह रखकर १२ का भाग देना तो भावसाधन फल होता है ॥३०॥३१॥

पूर्वोक्त गणित की सुलभ रीति-

भाव की राशि त्यागकर अशादि की घटी करके २०० का भाग दे। जो लब्ध हो उसको भावसाधन से गुणा करके ध्रुवाक का भाग देना। बाद फल में गुणा करना तो भरणीय कुटुम्ब पोषण की सख्या होती है ॥३२॥३३॥

इति श्रीबृ० पा० हं० शा० उत्तरखण्डे भावप्रका० लोचयात्रावर्णनं  
नाम नवमोऽध्याय ॥९॥

पुन लोकप्रवेशर्षणनाह

भाग्योत्कर्ष भाग्यहानि कुटुम्ब दुःख हानि शत्रुमाय व्यय च ॥ उद्वाह स्त्रीपुत्रलाभादिक च घृणामेव चाब्दचर्चाक्रमेण ॥१॥ अर्धमासदिनचर्चविधानं बध्यते तनु मया मुमते ते ॥ पञ्चभागाधिना परमायु सख्ययेव विदधीत महात्मन् ॥२॥ भावाना साधन हत्वा दृष्टिमिश्च बलेन च ॥ पञ्चवर्गादिपतीना च भावे भावे पृथक् पृथक् ॥३॥ सेया च दृग्बलाना च

सहत्या भाजयेव्य ॥ स्वामिदृष्टिस्थितानां तु काले भावफल विदु ॥४॥ ज्ञानसमयकालस्तु  
जन्मकालादला यदा ॥ लग्नादिव्ययपर्यन्ता भावा काले तथा विदु ॥५॥

छठे अध्याय मे वर्षचर्यास्ति से भाग्योदय, अवनति, परिवार का सुख दुःख, शत्रुचिन्ता  
लाभ, खर्च पुत्रादि का विवाह आदि कहा जाता है ॥१॥ है मंत्रेय! अब वर्षचर्या, मासचर्या,  
तथा दिनचर्या और आयु का निश्चय भी उत्तररूप से कहते है ॥२॥  
द्वादश भावो मे भावफल के समय का निर्णय

जिस भाव के फल का समय निर्देश करना हो उस भाव को प्रथमदृष्टि से पश्चात् भावबल  
से गुणा करे बाद षड् वर्ग के स्वामी की दृष्टि तथा बल का योग (जोड़) करके भाग दे सब्ध  
वर्षादि अक उस भाव के फल का समय होगा। इस प्रकार सप्तमभाव से स्थी, पचमभाव से  
पुत्रादिको आदि तत् २ भाव से फल का समय निर्देश करना ॥३॥४॥५॥

लग्नषड्वर्गहोराणा भोक्तार पतय स्मृता ॥ त्रिपचवेददिकसप्तमुनिरामाशके फलम् ॥६॥  
शुभग्रहास्तु द्रष्टार स्थानदा सकलग्रहा ॥ युक्ता सदा तु सद्ग्रावा सज्ञानुफलदास्तदा ॥७॥  
पापान् हानिकरान्हित्या स्वोच्चै कोणसुहृत्स्वितान् ॥ तद्राशिर्वस्य शत्रुर्वा नीचयोर्वा ग्रहो यदि  
॥८॥ हानि कुपतिदा तस्य दृष्टियोगानुपातत ॥ उद्ग्रहकारकौ चद्रशुक्रौ शो वा तपोऽव वा ॥९॥  
शनिर्मृतिकरो भीमरवी नीचासतीपती ॥ गुरु शुभकर पुत्रे कुजो भ्रातरि शत्रुमे ॥१०॥ मद्राग्ये  
शुभासर्वे स्वोच्चगौ भीमसूर्यजौ ॥ भाग्येऽशुभाशुभापापा अशुभा स्वपति विना ॥११॥

भावो के षड्वर्गपति की दशा मे भावोक्त फल होता है। भावराशीष अपनी दशा के तृतीयांश  
मे तथा इसी प्रकार होरापति त्रेष्काणपति सप्ताशपति नवाशपति, द्वादशाशपति और  
त्रिशाशपति क्रमश अपनी २ दशा के ५।४।१०।७।७।३ के अंश मे अपना २ फल देते है। यह  
शुभग्रहो की अवधि कही। आष्टक वर्ग मे रेखा दाता शुभ या पाप कोई भी दोनो का शुभाशुभ  
फल होता है। जिस २ भाव मे उस भाव का पति उच्च मूलत्रिकोण आदि शुभ स्थान युक्त हो  
उनका शुभफल और शत्रु राशि आदिवा हो तो अशुभ फल होता है ॥६॥७॥८॥  
ग्रहो की नैसर्गिक कारकता—

शुक्र और चन्द्रमा विवाह कारक है। मतान्तर से बुध गुरु भी विवाह कारक है। शनि मृत्यु  
कारक है। मंगल कुलटा कारक तथा सूर्य पतिव्रता कारक है ॥९॥ कौन ग्रह किस भाव मे  
निसर्गत शुभ है, यह कहा जाता है। गुरु ५ भाव मे शुभ है। मंगल ३ मे शुभा। शनि ६ मे तथा  
अन्य ग्रह एकादश भाव मे शुभ है। मंगल शनि उच्च के शुभ तथा नवमभाव मे शुभग्रह शुभ  
होते है। पापग्रह हो तो अशुभ होते है किन्तु नवमभाव मे पापग्रह स्वगृही हो तो शुभ है और  
भाग्य वृद्धिकारक है ॥१०॥११॥

पूर्वभागे समुद्दिष्टदृग्बलेन फलानि तु ॥ विद्वानि परित्यज्य समीचीनानिसग्रहेत् ॥१२॥  
ग्रहराशिस्वभावेन पुस्त्रियोराशिमेव च ॥ स्वभाव च यदेद्वुदधा देशकालकुलानुग ॥१३॥  
तेषामिष्टफले वृद्धिस्त्वगुभास्यफलोदय ॥ अन्यथा त्वसदेवप्यातस्वतस्मान्मूर्तोफलम् ॥१४॥  
रविस्तु पाचको भेयश्चद्रमा दोषक सदा ॥ पाचको दोषश्चैव कारको वेधक  
क्रमात् ॥१५॥

पूर्व भागमें जो वृष्टि से फल बहता है। उसमें से पापवृष्टिका फल त्यागकर शुभ ग्रहण करना चाहिए॥१२॥ तथा मनुष्यों का स्वभाव और रूप रंग आदि भी देश, काल, कुल आदि के अनुसार ग्रह, भाव, स्थिति का ध्यान रखते हुए सूक्ष्म विचार कर निर्देश करता॥१३॥ जिस भाव का इष्ट बल (शुभवल) अधिक हो उस भाव की उत्तरोत्तर वृद्धि और जिस भाव का कष्ट बल अधिक हो उस भाव की उत्तरोत्तर हानि होती है॥१४॥ सूर्य पाचक सजक है। चन्द्रमा बोधक सजक है। तथा सूर्य कारक सजक एव चन्द्रमा वेधक सजक भी है। यह इतकी नैसर्गिक (स्वाभाविक) सजा है॥१५॥

रध्यादीनाञ्च विज्ञेया मदारेज्यसितास्तथा ॥ शुक्रारमबरवयो रवीन्दुशनिचन्द्रजा ॥१६॥  
चदेज्यसितभौमाश्च मदारेन्दुदिनेश्वरा ॥ भौमजसूर्यमदा स्यु सितेन्दुगुरुभूमिजा ॥१७॥  
पद्सप्तनवरद्रेषु सप्त मवभवत्रिषु ॥ द्विषडाप्यव्येवद्विवेदेन्द्रियवह्निषु॥१८॥ पद्पचसप्त  
रिष्केषुद्विषडव्ययचतुष्पि ॥ त्रिष्टदपद्सप्तमेषु स्थिता स्थानेषु ते ग्रहा ॥१९॥ पाचका-  
द्यास्तु चत्वार सूर्यादिभ्य क्रमादिह ॥ पीडसं बाप्यपीडसं केद्रेलप्र विना तथा ॥२०॥ पद्  
सप्तधर्मकमायमृतिष्वेव गता क्रमात् ॥ पाचकाद्याश्रतुर्थं च बलवत् समोरिता ॥२१॥  
कारको मद फलदो वेधको विप्रकृत्स्नुत ॥ बोधक शीघ्रफलद पाचको विफलप्रद  
॥२२॥ तदशकालस्थान्ते बाप्यादावत्याशकेऽपि च ॥ अत्याशकेऽपि फलदा पाचकाद्या  
क्रमादिह ॥२३॥

अब आगे सूर्यादि सातों ग्रहों की स्थानभेद से पाचक बोधक कारक वेधक सजा यही जाती है-

१-सूर्यादि सातों ही ग्रह चतुर्थ सप्तम दशम भाव में हो तो बलवान् होत है।  
२-तथा सूर्य ६ठे भाव में, चन्द्रमा ७ में म० ९ में बुध १० में गुरु ११ में शु० ८ में, श० ४ भाव में बलवान् होते हैं। अन्यथा समान है। अब सूर्यादि ग्रहों से कौन ग्रह किस स्थान में होने से पाचक, बोधक, कारक तथा वेधक होता है। यह भिन्न २ कहा जाता है। सूर्य से ६ठे भाव में शनि पाचक, मंगल ७ठे भाव में बोधक तथा गुरु ९ भाव में कारक एव शुक ११ भाव में वेधक होता है। अब आगे इसी प्रकार क्रमशः समझना। चन्द्रमा से शु० म० श० गू० ७।९।११।३ स्थानों में पाचक, बोधक, कारक वेधक सजक होते हैं। मंगल म मू० च० श० शु० २।६।११।१२ स्थानों में पा० बो० का० वे० होते हैं। बुध से च० गु० शु० म० क्रमशः २।४।५।३ स्थानों में पा० बो० का० वे० होते हैं। गुरु से श० म० च० मू० क्रमशः ६।५।७।१२ भाव में पा० बो० का० वे० होते हैं। शुकसे म० बु० मू० श० २।६।१२।४ भाव में पा० बो० का० वे० होते हैं। शनि से शु० च० वृ० म० क्रमशः ३।१।६।७ भाव में पा० बो० का० वे० होते हैं। इनका फल नामानुरूप ही है। यथा-कारक ग्रह अपने नियामक ग्रह का साधारण फल कारक होता है तथा वेधक ग्रह अपने नियामक के फल में विप्रकारक होता है। बोधक ग्रह अपने नियामक का ही फल शीघ्र देता है। पाचक ग्रह नियामक के फल शीघ्र विफल करता है। ये पाचक आदि ग्रह अपने नियामक ग्रह के आदि नवाण या अन्तिम नवाण में फलदाता होते हैं। किन्तु यह नियम नहीं है, मध्य में भी फलदायक हो सकते हैं॥१६ से २३ तक॥

पाचकादि ग्रह निर्माण चक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	प०
श०	शु०	सू०	च०	श०	भी०	गु०	पाचक
६	७	२	२	६	२	३	
भी०	भी०	च०	गु०	भी०	बु०	च०	बोधक
७	९	६	४	५	६	११	
गु०	श०	श०	शु०	च०	सू०	बु०	कारक
९	११	११	५	७	१२	६	
शु०	सू०	बु०	भी०	सू०	श०	भी०	वेधक
११	३	१२	३	१२	४	७	

सूयादिपाचकादि चक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	प०
०	०	०	०	०	०	०	पाचक
०	०	०	०	०	०	०	बोधक
०	०	श०	०	०	सू०	०	कारक
शु०	सू०	०	म०	०	०	०	वेधक

आदी फलप्रदौ भीमरवौ मध्ये सितार्दकौ ॥ सर्वदा न शशी मदनवयसाने फलप्रदौ ॥२४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकन्याप्रावर्णन  
नाम दशमोऽध्याय ॥१०॥



स्वाभाविक कार्यकाल-

सूर्य, मंगल यदि राशि के प्रथम त्रिभाग में हों तो फल देते हैं। गुरु, शुक्र मध्य त्रिभाग में फलदायक होते हैं। चन्द्र, शनि अन्तिम त्रिभाग में फलदाता तथा बुध सर्वकाल फलदाता है ॥२४॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उ० ख० भावप्रका० लोकयात्राफलनियम  
वर्णन नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अथ मासचर्यादि फलमाह

धनहानिमयानां च व्याधीनां दिवसास्तथा ॥ शुभाशुभानि कर्माणि यात्रादि विजयादि च ॥१॥ मासचर्याविधानेनब्रूयादन्येनचेतरान् ॥ लक्षारिमृतिरिःकेषु वर्गणा च पत्नीस्तथा ॥२॥ करणेशान्तामातोष्य कथं न्मुनिपुत्रव ॥ रसेष्वेव भुक्तिः खाष्टो रविभूपा दिगस्तथा ॥३॥ द्विशतचक्रमात्सूर्यादिवसाश्चाष्टमे स्थिताः द्वितीयार्धे त्वतरे च त्रैराशिकवशेन तु ॥४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे मासचर्यादिवशात्फलज्ञानकथनं  
नाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥

धनहानि, भय, रोग इनका विचार दिनचर्या से करना तथा शुभाशुभ कर्म, यात्रा, विजय इनका विचार मास चर्या विधि से कहना ॥१॥ लग्न, पण्ड, अष्टम और व्ययभाव की वर्गणा सख्या तथा इन भावों के स्वामियों की वर्गणा सख्या ॥२॥ तथा करण- (विन्दु) दाता ग्रहों की सख्या अर्थात् किस भाव में कितनी है आदि विचार करने फल बहना ॥ सूर्यादि ग्रहों की दिन सख्या कही जाती है। सू० ५६। च० ७। म० ८०। बु० १२। गु० १६। शु० १०। श० २०० यह सख्या अष्टम भाव की है। द्वितीय भाव की इससे आधी जानना। मध्यराशियों की सख्या त्रैराशिक से जानना ॥३॥४॥

इति श्रीवृ०पा०हो०शा०उ०ख० भाव प्रकीर्णककथननाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥

अथ लोकयात्रामाह

तेषां भगवतो वक्ष्ये यथाह कमलासनः ॥ गार्गाय भगवान्सोऽपि ममाहाह तव द्विज ॥१॥ तथा च रिःफण्डाष्टस्थानानां करणाधिपाः ॥ तत्तद्भावस्य भगवस्य वतरिः सति सभवे ॥२॥ तत्तद्भावच्छर्यात्पत्न्यसख्या तद्गर्गणाहता ॥ रविभक्ता तत् शिष्टा राशिर्भेषादिका भवेत् ॥३॥ पण्डारिःके राशिश्चेद्भूग एष प्रकीर्तितः ॥ फलं च मुनिसदृशं रविभक्तं तथा भवेत् ॥४॥

हे मैत्रेय! अब योगभग बहना जाता है। यह रीति ब्रह्माजी ने गर्गजी को बही थी और गर्गजी ने हमें कही सो वही रीति अब तुम्हें बहते हैं ॥१॥ लग्न से ६।८।१२ भावों में विन्दु देनेवाले ग्रहविचारणीयभावों में हों या ६।८।१० के स्वामी के साथ मयोग हों तो उन भावों के

भग करनेवाले होते है।२॥ जिस भाव का फल विचार करना हो उस भाव की अष्टक वर्ग की विन्दु सख्या को उस भाव की वर्गणा से गुणा करना और १२ का भाग देना जो अक शेष रहे वह मेपादि क्रम से राशि जानना। वह राशि यदि ६।८।१२ भाव मे हो तो उस भाव का भग (हानि) होता है।३॥ और लब्धाक को सात (७) से गुणा कर १२ से भाग देना जो शेष रहे वहराशि यदि ६।८।१२ भाव मे हो तो भी उस भाव का भग होता है।४॥

शिष्टमेव यदि तदा शत्रुभ वाय भगवम् ॥ तद्भ्रावानिष्टफलक तच्छत्रुफलसगुणम् ॥ ५ ॥ सप्तान्त शिष्टमेवात्र पापरश्मिगुण तत ॥ अर्कशिष्ट यदि भवेत्पष्टरिफाष्टमेऽपि वा ॥ ६ ॥ शत्रुभ वापि भगर्ष हानिस्तस्य प्रकीर्तिता ॥ ययोत्तरमितीवाप्त क्षयवृद्धिस्ततो भवेत् ॥ ७ ॥ षष्ठशो च कलाशे च त्वप्रकाराग्रहोदये ॥ राहुकालसमायोग तद्भावफलभगद ॥ ८ ॥ अनिष्टाल्य च रश्मि च तद्भावफलसगुणम् ॥ द्वादशाप्तावशेष च पूर्ववत्फलमीरितम् ॥ ९ ॥

और दूसरी बार जो शेष रहे वह यदि पष्टभाव राशि हो तो भावफल की भगकारक है। तथा इसी प्रकार षष्टफल से गुणाकर ७ से भाग देना जो शेष रहे तो शत्रु ग्रह की रश्मि से गुणा करना और १२ का भाग देना तो शेष राशि यदि ६।८।१२ मे हो तो उस भाव का भग करती है। यहा अनेक भगकारक रीति दिखाने का यह प्रयोजन है कि जितनी बार भग प्रद राशि प्राप्त हो उतनी अधिक हानिकारी है।५॥६॥७॥

अन्य प्रकार-विचारणीय भाव के षोडशांश या पष्टघण मे धूम, पात, परिधि, चाप, ध्वज इनमे से किसी का उदय हो तो उस भाव का भग होता है।८॥

प्रकारान्तर-विचारणीय भाव की अनिष्ट रश्मि को इष्टबलाक से गुणा कर १२ से भाग देना जो राशि प्राप्त हो उसका पूर्ववत् फल जानना।९॥

यद्यत्फल प्रोक्तमथोत्तरत्र तत्सर्वमन्यत्र च योजनीयम् ॥ भग च भग च भुनिश्च गर्ग प्रोवाच यद्वन्मुनिपुगवाहम् ॥ १० ॥ पष्टघशे च कलाशे च त्रिष्वेकोऽपि पदा न चेत् ॥ अधिमित्र च मित्र च भगभग प्रकीर्तित ॥ ११ ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकयात्राय  
भावभगोपदेशेद्वादशोऽध्याय ॥१२॥

यह जो भग विचार कहा गया है, वह हर एक भाव मे देलना चाहिए।१०॥ इस भग का लडक योग भी है। यदि षोडशांश या पष्टघण अथवा शत्रुराशि मे धूमादि ग्रहो का (अप्रवाण ग्रहो का) योग अथवा काल राहु का योग न हो और राशि मित्र, अधिमित्र हो तो भग का भी भग योग होता है।११॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उ० स० भा० प्र० भगादियांग कथन  
नाम द्वादशोऽध्याय ॥१२॥

## अथ लोकयात्राया ग्रहभावफलमाह

आत्मा शरीर होरा च कल्प-लग्ने च मूर्तय ॥ स्व कुटुम्ब च दुश्चिक्य विक्रम सहज सहः ॥१॥  
 पाताल हिवुक वैश्व मित्रबधूदक सुखम् ॥ त्रिकोण प्रतिभा बुद्धिमातृविद्यामुतास्ततः ॥२॥  
 व्याधिक्षतारिभगाश्च क्रोधो लामोऽथ मत्सर ॥ कामो विवाहो पात्रा स्त्री रतिचून मदोऽजता  
 ॥३॥ परामर्षो मृतिर्बधो रध्यायुर्निघन च्युति ॥ शुभ धर्मस्ततो भाग्य त्रिकोण च गुरुर्बिभुः  
 ॥४॥ व्यापारास्पदमेपूरणमानाज्ञा च कर्म लम् ॥ भावाय लाभाय तपो रिःफ हानिर्व्ययः  
 स्मृत ॥५॥ यात्राया दशमेनैव निवृत्ति सप्तमेन तु ॥ वृद्धिश्चतुर्थलग्नेन त्रितय सप्तकीर्तितम्  
 ॥६॥ स्वोच्चमित्रस्ववर्गस्या एवमर्थाश्च सप्तति ॥ नीचार्थिर्वर्गगात्रान्यत्पुष्ट चापुष्टमेव  
 च ॥७॥

अब अन्वर्थक नामोसे १२ भावोके विचारणीय पदार्थ कहे जाते हैं। लग्न सजा आत्मा, शरीर, होरा, कल्प, लग्न, मूर्ति, (अग) द्वितीयभावसजा-स्व, कुटुम्ब। तृतीयभावसजा-दुश्चिक्य, विक्रम, सहज, सह।

चतुर्थभावसजा पाताल, हिवुक वैश्व, मित्र, बन्धु, उदक, सुख। पञ्चमभाव के नाम त्रिकोण प्रतिभा, बुद्धि, मातृ विद्या, सुता पण्डभाव के नाम-व्याधि, धत, अरि, भग, क्रोध, लोभ मत्सर। सप्तमभाव के नाम-काम विवाह स्त्री, रति चून मद, अजता। अष्टमभाव के नाम परामर्ष, मृति, बध, रध, आयु, निघन, च्युति। नवमभाव के नाम-शुभ धर्म, भाग्य त्रिकोण, गुरु, विभु। दशमभाव के नाम- व्यापार, आस्पद, मेपूरण, मान, आज्ञा, कर्म रव। एकादशभाव के नाम भाव आय, लाभ, अप, तपा व्ययभाव के नाम-रिःफ, हानि, व्यय। इस प्रकार वे ६७ सजाएँ नामानुरूप तात्पर्यवाली हैं। दशमभाव से यात्रा भ्रमन्धी विचार करना तथा सप्तमभाव से निवृत्ति और चतुर्थभाव से वृद्धि का विचार करना चाहिये इस प्रकार यात्रा, निवृत्ति, वृद्धि ये तीन नाम और मिलाने से ७७ नाम सख्या होती है। जो ग्रह उच्च मित्र या स्ववर्ग में हो तो पूर्वोक्त फल उत्तम और नीच शत्रु आदि में हो तो नेष्ट फल होता है। इस प्रकार कलावल का विचार करके फल कहना चाहिए। १ से तक।

रवि शरीरे होराया स्वे च भ्रातरिवेऽमनि ॥ सुते व्याधी अते शत्रौ मृती तपसि कर्मणि ॥८॥  
 आये व्यये फल दद्याच्छीतगुर्विज्ञे सुले ॥ कुटुबे भ्रातरि क्रोधे प्रतिभाया शुभे मृती ॥९॥  
 भाग्ये त्रिकोणे व्यापारे लाभे रिःफे फलप्रद ॥ कुस शरीरे होराया कल्पविक्रमबधुषु ॥१०॥  
 सहजे च सहे शत्रौ क्रोधे लोभे च रध्वके ॥ क्रियायामापती हानी जये भगे फलप्रद ॥११॥  
 बुधो मनसि विद्याया बुद्धौ हिवुकवैश्वनि ॥ लाभे शिल्पे च गानादिप्रिये स्वे लाभरि  
 फयो ॥१२॥

जैसे लक्षादिभावो से तत् २ फल का विचार होता है, इसी प्रकार सूर्यादि ग्रहो से भी फल विषयक विचार होता है। यही कहा जाता है। सूर्य से शरीर का विचार, धनभाव में हो तो धन का और भाई, मकान, पुत्र, व्याधि, शत्रु, मृत्यु, धर्म, कर्म, लाभ, सर्व आदि का विचार सूर्य में करना। चन्द्रमा से परामर्ष, सुख, कुटुम्ब, भ्राता, क्रोध, प्रतिभा, शुभ, मृत्यु, भाग्य, व्यापार, लाभ, सर्व का विचार चन्द्र से भी करना। मंगल से लग्नभाव का फल, विक्रम प्रताप, बन्धु, भ्राता, शत्रु, क्रोध, लोभ, प्रभाव आदि का विचार। बुध से मानसिक चेट्टा, विद्या, मुय, लाभ, शिल्प, गायन विद्या, धन, लाभ, व्यय आदि का विचार। ८ से १२ तक।

गुरुधर्मं च तपसि त्रित्रिकोणे त्रिकोणके ॥ आज्ञायां च मुते हानौ कारागृहनिवेशने ॥१३॥  
अभिशापे तथा व्याधौ स्वे कल्पे मूर्तिवेशमसु ॥ विद्याबुद्धिसुखे भावे शांत्यादिषु फलप्रदः  
॥१४॥ कामान्यस्त्रीविवाहेषु गीतनृत्यप्रियादिषु ॥ सुखे वेश्मनि दुश्चिक्ख्ये स्वे कुटुंबे च  
वेश्मनि ॥१५॥ आज्ञाक्रियातपोभाग्ये लाभापव्ययहानिषु वदान्यत्वे दयायां च भार्गवः फलदः  
सदा ॥१६॥ शनिमृती व्यये रिःफे दुश्चिक्ख्ये क्षतचेतसि ॥ सहजे च सहे भावे बंधने फलदो  
भवेत् ॥१७॥

बृहस्पति से नवम भाव तथा पचमभाव आज्ञा, पुत्र, हानि, कारागृह प्रवेश, अभिशाप,  
व्याधि, सकल्प, गृह, विद्या चतुर्थ भाव शान्ति, पुष्टि, कर्म आदि का विचार  
करना ॥१३॥१४॥ शुक से काम, अन्य स्त्री समागम, विवाह, गायन, नृत्य, प्रिय, सुख, गृह,  
तृतीय भाव, धन, द्वितीयभाव, चतुर्थ भाव, आज्ञा, क्रिया, तप, भाग्य, लाभ, व्यय, हानि, दान,  
दया आदि का विचार करना। शनि से मृत्यु, नाश, व्यय भाव, तृतीय भाव, चित्त, सहजभाव,  
बन्धु, बन्धन का विचार करना ॥१५॥१६॥१७॥

कालहोरावृत्तेशः क्षत्रार्कनवमागपाः ॥ सप्ताशत्रिसादशेशा होरेशाष्टमौ भवेत् ॥१८॥  
क्रमादावृत्तितः प्रोक्ता बलिष्ठः पूर्वतो यथा ॥ सूर्यादयो ग्रहा लघ्नपतिश्चावृत्तितः क्रमात् ॥१९॥

श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकयात्राया  
ग्रहभावफलविचारे त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

सूर्यादिग्रहो से होरा, द्रेष्णाण, भावेश, नवमाश, द्वादशाश, त्रिशाश, होरेश यह क्रम से  
अधिकाधिक बलवान् है। सूर्यादिग्रह तथा अष्टम और लघ्नपति इनमे जो बलवान् हो वह प्रथम  
फल देगा, बाद उससे हीन उसमे हीन फल दाता होते है ॥१८॥१९॥

इति धीनृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० लोकयात्रा

ग्रहभावफल विचारे त्रयोदशोऽध्याय ॥१३॥

अथ आयुर्दायाह

वक्ष्येऽहमथ दायोत्थ नृणामायुः पर मुने ॥ षडथो द्वादशथा प्रोक्तो ध्रुवरश्मिसमुद्भवा ॥१॥  
अशाकाष्टकवर्गोत्थी प्रत्येक तु चतुर्विधम् ॥ विपयोक्ती द्विधा प्रोक्ती नक्षत्राशकतभवौ ॥२॥  
द्वात्रिंशद्भेदभिन्न स्यात्परमायुर्नृणामिह ॥ अतिधृतिरकस्तेन्दोस्तत्त्वानि भूमिमुत्तम्य पचदश  
॥३॥ द्वादश बुधस्य च गुरोस्तिथिः क्वेर्मूर्धना नक्षत्रार्कः ॥ परमोच्छे नीचेर्ध परेषु भावेषु  
वा तथा प्रोक्ताः ॥४॥ अनुपातः कर्तव्यस्त्वतः सत्येषु सेतेषु ॥ ललभूमे. लपुर्मेदोः स्वांशा  
पूर्ववत् कृती च विजेयी ॥५॥ कृतिरेको यमी रत्नमष्टादश नक्षः क्रमात् ॥ रीकतानमिनादीनां  
दाये नैसर्गिके स्मृतम् ॥६॥ षोडश विंशतिरेको नवाष्टनवपंचविंशतिः क्रमशः ॥ षड्विंशतिस्त-  
थोच्छे नीचे चार्ध त्वमेऽय इतरे वा ॥७॥

आयुर्दायि विचार

हे मेनेय! अब आयु का निर्णय कहा जाता है। हमने निर्णय की गति के प्रधानतया ३०

भेद है। उनमें पैण्ड्यायुर्दायि १२ प्रकार का है। अशायु, ध्रुवायु, निसर्गायु, रश्मिवायु, स्वराशायु, अष्टकवर्गायु। इनके ४-४ भेद हैं। नक्षत्रायु, अशायु को कालचक्रायु भी कहते हैं। इनके २-२ भेद हैं। इस प्रकार यह सब ३२ भेद होते हैं॥१॥२॥

पिण्डायु के ध्रुवाङ्क-सूर्य १९, चन्द्र २५, मंगल १५, बुध १२, गुरु १५, शुक्र २१, शनि २० ये ध्रुवाङ्क परमोच्च ग्रह के जानना। परम नीच के अर्ध भाग लेना। मध्य में त्रैराशिक से समझना। यह शतायु अथवा १२० वर्ष की आयु के लिये कहा गया है॥३॥४॥५॥

ध्रुवायुर्दायि के ध्रुवाङ्क-सूर्य २०, चन्द्र १, मंगल २, बुध ९, गुरु १८, शुक्र २०, शनि ५०, इसको निसर्गायुर्दायि या स्वाभाविक आयुर्दायि भी कहते हैं॥६॥

रश्मियायुर्दायि के ध्रुवाङ्क-सूर्य १६, चन्द्रमा २०, मंगल १, बुध ९, गुरु ८, शुक्र ९, शनि २५, अथवा २६ ये ध्रुवाङ्क उच्च के हैं। नीच राशि में आधा और मध्य में अनुपात से जानना॥७॥

कलीकृतं ग्रहं व्योमलाब्धिनेत्रावशेषितम् ॥ शतद्वयेनाभिभजेदम्बमासादयः क्रमात् ॥८॥

### मध्यमपिंडायुश्चक्रमाह

सू०	ष०	म०	बु०	गु०	शु०	म०	शो०
१२	१९	१२	२	१७	८	२०	१३
१	३	९	०	८	७	९	४
२९	१७	१९	१७	६	२२	०	२३
२०	४४	४८	३८	३	५५	०	३१
२४	३६	०	२४	३६	१३	०	२

### मध्यमध्रुवायुर्निसर्गायुश्चक्रम्

सू०	ष०	म०	बु०	गु०	शु०	म०	शो०
१२	७	११	१	२२	८	३५	१९
५	७	२	६	६	५	४	३
७	२३	२६	१३	२६	२०	१५	१९
१३	२	३८	१३	९	२४	०	३९
०	३४	२४	४८	१८	०	०	५४

म० सत्तायुनमिस्वरांशायुश्चक्रम्							
सू०	घ०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	घो०
११	१९	१२	१	१५	६	२३	९१
४	११	५	६	७	६	८	१
५	१०	९	१३	१	२२	३	६
४५	४८	५०	१३	४०	४०	०	५९
३६	०	२४	४८	४८	४८	०	२४

ऊपर बताई हुई तीनों आयु के वर्षादिक लाने की रीति सूर्यादि ग्रह के स्पष्ट की बत्ता करके २४०० का भाग देकर शेष में २०० का भाग देना। लब्धि वर्ग होते हैं। अब जो शेष रहे उसको पिण्डायु प्रकरण में कहे हुए ग्रह के ध्रुवाङ्क से गुणाकर २०० का भाग देकर प्राप्त हुए लब्धि अङ्क पूर्व वर्ष सख्या में नियुक्त करें। शेष अङ्क को १२ से गुणाकर २०० का भाग देने से मासाङ्क मिलेगा। शेषाङ्क को ३० से गुणा कर २०० का भाग देने से दिनाङ्क प्राप्त होगा। शेष को ६० से गुणा कर २०० का भाग देने से घटी और इसी प्रकार पल प्राप्त करना। इस रीति से सूर्यादि ७ ग्रहों की पिण्डायु, ध्रुवायु तथा रश्म्यायु स्पष्ट करना ॥८॥

सूर्यादिगुणिताच्छेषाद्बृद्धिं कुर्याद्यथोत्तरम् ॥ स्वोच्चहीन ग्रहं ज्ञात्वा कर्कादि च मृगादि च ॥९॥ गृहीत्वा तु भुजं कोटिं कृत्वा लिप्तीकृतं तु तम् ॥ हत्वा नवाशदायेन भजेद्भ्रमपलित्तिभिः ॥१०॥ यत्सराद्या भवत्येते दर्शयेन्मकरादिके ॥ केन्द्रे नवाशदाये स्वे त्रिभे कर्कादिकादिके ॥११॥

कोटी करना। (भुज को ३ राशि में घटाने से कोटी होती है।) जो शेष बचे उसकी बत्ता करना। नवाश के ध्रुवाङ्क से गुणा करना। ५४०० का भाग देना। जो लब्धि हो वह वर्ष सख्या होगी। शेष की १२ से गुणाकर ५४०० का भाग देना। लब्धि मास सख्या। शेष को ३० से गुणा कर ५४०० का भाग देना। लब्धि दिन सख्या। शेष को ६० से गुणाकर ५४०० का भाग देना। लब्धि घटी सख्या। और इसी प्रकार पल सख्या लेना। अब जो प्राप्त हुआ वर्ष, मास, दिन घटी, पल अब उसको ग्रह यदि मकर आदि ६ राशियों में हो तो ऋण और कर्कादि ६ राशियों में हो तो धन होता है। इसमें मकर आदि केन्द्र हो तो ध्रुवाङ्क को ३ गुणा करके वर्ष सख्या में घटाना और कर्कादि केन्द्र हो तो ध्रुवाङ्क का आधा वर्ष सख्या में जोड़ना तो नवाश आयु स्पष्ट होती है ॥९॥१०॥११॥

युज्यावधोक्तै तस्मिन् प्रक्रमानुगतो मत् ॥१२॥ द्विभे त्वपनयेत्तस्मिन्युज्यादेव इतीदृते ॥ निक्षिप्याष्टकयर्गे तु राशिचक्रे तु पूर्ववत् ॥ त्रिकोणेषुपशुद्धिं च कृत्वा तु गुणयेद्गुणैः ॥१३॥

मध्यम अंशायुश्रक्रम							
सु०	च०	म०	सु०	गु०	शु०	श०	मौ०
३	१९	१८	७	१०	२५	११	११६
८	३	७	०	५	६	५	०
१	०	१	२९	२३	४	२३	१६
५२	४४	५३	९	३२	७	२०	९
४०	४८	५२	२४	०	४	२	८

सर्वद्विमत्कमब्दाद्या रुमाङ्गुल्लाष्टवर्गजा ॥ एवकृत्वा तु सपोत्थ भाप्तमब्दाद्य स्मृता ॥१४॥ कृत्वा करणदैरेव स्वोत्पन्नौ दायसन्तितौ ॥ प्रत्येक मिश्रदापोत्था एव त्रिशाङ्गिदा मता ॥१५॥

इसी प्रकार क्रमानुगत आर्युदाय स्पष्ट करना। नवाश आयु प्राप्त आयु मकर आदि ६ राशि मे हो तो मूल ध्रुवाङ्क को द्विगुण करके हीन करना। कर्कादि ६ राशि मे हो तो मूल ध्रुवाङ्क को आधा करके जोड़ना चाहिए॥१२॥

अष्टक वर्गयु प्रकार प्रथम अष्टक वर्ग सिद्ध करके त्रिकोण शोधन और एकाधिगत्य शोधन करना। और पूर्वोक्त रीति न प्रत्येक राशि गुणक मे गुणाकर पिण्ड सम्या स्पष्ट करना। शब्द ३० का भाग देना तो वर्षादिव भिन्नाष्टक वर्गयु होती है।

समुदायाष्टक वर्गयु की रीति भिन्नाष्टक वर्गयु के अब जोड़कर २७ का भाग देना तो वर्ष, मास, दिनादिक समुदायाष्टक वर्गयु होती है। इस प्रकार रेखा पिण्ड मे तथा त्रिन्दु पिण्ड मे रेखाष्टक वर्गयु तथा वर्षाष्टक वर्गयु होती है। इस प्रकार अब तक ३० भेद सिद्ध हुए जिसमे पिण्डायु ७ प्रकार की ध्रुवायु ७ रश्मायु ७ और अज्ञायु ७ रश्माष्टक वर्गयु १ और वर्षाष्टक वर्गयु १ व ३० भेद स्पष्ट हुए॥१३ १५॥

पच भूच्छा सप्त रत्न दश धोइश वारिधि ॥ नवाग्ना विधिंत प्रोक्ता अत्पारप्रोक्तास्तु भादित ॥१६॥ रवीन्द्रराहिजीवार्बिबुधकेतुसिता वभात् ॥ आग्नेयाङ्गुणोरा स्पु स्वामिनो वत्सरा रुमात् ॥१७॥ घडारा सप्त धृतयो नृपो एकीनविशति ॥ अत्यष्टि सप्त च मथा उच्चै नोचेर्धमुच्यते ॥१८॥ अस्मिन् हरण तस्मात्पूर्वस्मिन्सु द्वय हितम् ॥ अनयो पापदायादावते पुरपमृत्यव ॥१९॥ द्वारिगाङ्गेदभिप्रोषमायुषो निर्णय कृत ॥ सोऽप्यापारित्तानहेतवे ऽपनिर्णय ॥२०॥ भावाना सप्रवक्ष्यामि मृणुष्व मुनिपुगव ॥ आयुश्च परम ह्वा स्वेन स्वेन त्नेन च ॥२१॥ विमजेट्टसपोनेन भावाना दाय एव म ॥ अय वारापदायेन वाग्गाना वत्नेन तु ॥२२॥ स्थानात्तत्र समुद्भूत पर्वविधो दाय उच्यते ॥२३॥

इति श्रीबृहस्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे आयुर्दायखण्डे चतुर्विंशोऽध्याय ॥१४॥

नवाशायुर्दाय के ध्रुवाङ्क- (इनको कालचक्र भी कहते हैं।) सूर्य ५, चन्द्र २१, मंगल ७, बुध ९, बृहस्पति १०, शुक १६, शनि ४ यह सूर्यादि ग्रहों के ध्रुवाङ्क हैं ॥१६॥

नक्षत्र आयुर्दाय प्रकार-कृत्तिका नक्षत्र से ३ बार आवृत्ति करने से सूर्यादि ग्रहों के नक्षत्र होते हैं। ग्रहों के वर्ष-सूर्य के ६, चन्द्रमा के १०, मंगल के ७, राहु के १८, गुरु के १६, शनि के १९, बुध के १७, केतु के ७ तथा शुक के २०। ये ध्रुव परमोच्च के हैं। ग्रह नीच राशि का हो तो पूर्वोक्त ध्रुवों का आधा लेना। बीच की राशियों में त्रैराशिक से समझना। पापग्रहों की आयु में आदि या अन्त में अपमृत्यु होती है। शुभग्रहों की आयुर्दाय शुभफल कारक है ॥१७॥१८॥१९॥ पूर्वोक्त ३० प्रकार की आयु तथा नवाश आयु और नक्षत्र आयु ये सब ३२ प्रकार के आयुर्दाय हुए। इस तरह यह आयु का निर्णय लोक्यात्रा के ज्ञान के लिये कहा गया। इसमें कुछ विशेष कहते हैं। प्रथम जो ७ प्रकार का आयुर्दाय कहा उनमें प्रत्येक आयुर्दाय को अपने भावबल से गुण कर भावबल योग से भाग देना। लब्ध वर्षादि आयुर्दाय होती है। दूसरा प्रकार-नवाश आयुर्दाय से परमायु को गुणकर पद्वर्ष पति बल योग से भाग देना। लब्ध वर्षादि भावायु होती है। इस प्रकार ६ भेद होते हैं। भावायु, नक्षत्रायु, नवाशायु, अष्टवर्षायु, अशायु तथा पैण्ड्यायु। अर्थात् अनेक भेद होते हुए भी सभी भेद इन ६ भेदों के अन्तर्गत हैं। हे मित्रेय! इस आयुर्दाय विचार को स्पष्ट रीति से जानना चाहिए ॥१६ से २३ तक॥

इति धीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्रका० आयुर्दाय  
वर्णनाय चतुर्दशोऽध्याय ॥१४॥

अथदायवर्णनाह

आराकीं वक्रिणीं मृत्युश्रान्त्वोन्यभवनस्थितौ ॥ वेश्मणमृत्युरिःफस्याः क्षीणेन्द्रत्यतिपाटमा-  
॥१॥अष्टमस्या ग्रहा सर्वे पापदृष्टियुतास्तु वा ॥ भीममवर्षागाश्रेणु शुभदृष्टिविवर्जिताः ॥२॥  
केन्द्रत्रिकोणे च शुभाश्र पापाः पठे तृतीये न च मृत्युसस्याः ॥ अष्टोत्तर जीवति वर्षमावर्तुरो  
गुणाढधो नवतिः सुशीलः ॥३॥ तत्रे पुरी दैत्यपुरी चतुर्थे बुधे सुते पठ्यते च सूर्ये ॥ स्यात्त च  
शत्रोश्च मृति च हित्वा त्वन्ये ।स्थिताश्रेभवतिश्चा पट् च ॥४॥

इस एकादश अध्याय में मारक योग में आयु में हानि तथा कारक योग में वृद्धि होती है। उन योगों में प्रथम मारक योग कहे जाते हैं। शनि, मंगल वक्री होकर परस्पर एक दूसरे के भाव में हो, तो मृत्युकारक होते हैं। क्षीण चन्द्र, लग्नेश तथा अष्टमेश ये तीनों ४।६।८।१२ स्थानों में हों तो मृत्युकारक होते हैं। अथवा सब अष्टमभाव में हो तो मृत्युकारक होते हैं। अथवा सब मृत्युकारक ग्रह १।८।१०।११ राशियों में हो तो मृत्युकारक होते हैं ॥१॥२॥

आयुर्दायक योग-शुभग्रह केन्द्रत्रिकोण में हो तो १०८ वर्ष की आयु तथा कोई भी पापग्रह ३।६।८ में न हो तो ९० वर्ष की आयु हो तथा सुशील, सुखभाव एवं गुणमय हो ॥३॥ लग्न में गुरु, चतुर्थभाव में शुक, पञ्चम में बुध तथा अष्टमभाव में सूर्य हो तो ९० वर्ष की आयु होती है। चन्द्र, मंगल शनि ये तीनों ग्रह शत्रुराशि तथा अष्टमभाव में न हो तो ९६ वर्ष की आयु होती है ॥४॥



सुखाधिकेऽप्येभु गुरु स्थितश्रेष्ठतपचमे ज्ञे तु भृगौ तु षष्ठे ॥ षडुत्तरा सप्ततिरष्टयुक्ता  
 त्वशातिरेकोत्तरत प्रदिष्टा ॥५॥ केन्द्रादिस्या शत द्युर्नवाष्टादींश्च दिग्गुणान् ॥ मिथ  
 सयुष्य दलिता अनुपातेन वत्सरा ॥६॥ शत्रुनीचसमाशेषु दिग्बिधेषु न चेत्स्थिता ॥  
 शतायुष्येर्गहोनास्तु सर्वे प्रोक्ता कलौ युगे ॥७॥ वायाना हरण वक्ष्ये भृगुभ्य मुनिपुंगव ॥  
 आयुदधि तु हरण षड्विध सप्रकीर्त्यते ॥८॥ व्ययादिहरण पूर्वमस्तारिहरणे तथा ॥  
 क्रूरोदयस्थहरण चद्रयुक्ततमस्तथा ॥९॥

सप्त से ४ भाव मे गुरु हो गुरु से पंचम बुध हो और छठे घर मे शुक्र हो तो ७६ वर्ष की आयु होती है। सप्त से सप्तमभाव मे गुरु गुरु से ५ बुध और छठे शुक्र हो तो ८८ वर्ष की आयु अथवा सप्त से १० भाव मे गुरु और गुरु स ५ भाव मे बुध और छठे शुक्र हो तो ८१ वर्ष की आयु होती है ॥५॥

केन्द्रादिभाववशा से आयुनिर्णय—यदि सभी ग्रह केन्द्र मे हो तो १०० वर्ष की आयु होती है। और पणकर मे हो तो ९० वर्ष की आयु एव आयुक्लिम मे हो तो ८० वर्ष की आयु होती है। और यदि केन्द्र पणकर आदि आदि स्थानों मे ग्रह हों तो दो स्थानों की आयु जोड़ कर आधा करता तो आयु जाने। और तीन स्थानों मे ग्रह हो तो तीनों सख्या जोड़ कर तृतीयांश आयु प्रमाण जानना। इस प्रकार जो दशयोग जन्म आयु का प्रमाण कहा अर्थात् १०८।९०।९०।९६।९६।७६।८८।८१।१००।९०।८०। इन दशयोगोंके कर्ता ग्रह शत्रु नीच,सम आदि अशो मे न हो तो पूर्ण आयु होती है नहीं तो उक्त योगों का भग होता है। प्राय कलियुग मे शतायुहीन ही मनुष्य होते हैं ॥६॥७॥

उक्त आयुयोगों मे कमीकारक योग—चारहवे घर से सातवे घर तक हरक योग १, अस्तंगत योग २ शत्रुक्षेत्र गत ग्रहयोग ३ क्रूरोदयस्थ योग ४ राहुयुक्त चन्द्र ५ द्वादश भावगत पापयोग ६ ये छ योग हैं इनसे आयु का हरण होता है ॥८॥९॥

पापों व्ययस्थो हरति सर्वबाय द्विजोत्तम ॥ अपद्वित्रिचतुःपचषडशोन क्रमादमी ॥१०॥

अथ स्वष्टायापुत्रक्रमं								
सू०	च	म०	बु०	गु०	शु०	श०	स०	यो०
६	१६	०	३	५	१७	७	१	५९
१०	३०	०	६	२	९	७	९	८
०	४	०	१४	२६	२	२५	२४	८
५६	२४	०	३४	४६	३	३३	१९	३७
२०	१२	०	४२	०	३२	०	३६	३२

लाभादिसंस्थिता शेटा वामत प्रक्रिया भृगु ॥ हरति सौम्या प्रोक्तार्थ सप्रदादशसधियु ॥११॥ पापश्रेत्सकल हति शुभो दलमयोत्तरम् ॥ सप्रदाद्वादशसधौ च पदान्यापान्विबर्जयेत्

॥१२॥ राश्यभावे तु भागादीन् दायघ्नान् पष्टिभाजितान् ॥ दाये द्विघ्ने तु सौम्यस्य राशिरैको  
 वलंपदि ॥१३॥ अधिकेनापहस्तनु क्रमाद्राशिंबिना कृतम् ॥ दायद्विगुणया सौम्यो लब्ध्वा  
 वाऽपचये समाः ॥१४॥

द्वादश भाव में पापग्रह हो तो उसकी सम्पूर्ण आयु का हारा होता है। ११ भाव में अर्धभाग का ह्रास होता है। दशमभाव में पापग्रह हो तो तृतीयांश, नवमभाव में पापग्रह हो तो चतुर्थांश, आठवें भाव में पंचमांश, सातवें में षष्ठांश, आयु का भाग हरण करता है। और शुभग्रह हो तो उक्त भाग का आधा भाग हरण करते हैं ॥१०॥ सधिगत ग्रह यदि पाप हो तो उक्त मान आयु और शुभ हो तो आधा हरण करते हैं ॥११॥ बारहो सधियो में स्थित शुभ या पापग्रहों के अशादि को अपने अपने आयुवर्ष सख्या से गुणा करके ६० का भाग देने से जो लब्धि प्राप्त हो वह सधि में कम करने से जो शेष रहे वह आयु का हरण फल हुआ। यह सस्कार ग्रह के स्पष्ट में राशि होने पर ही करना चाहिए। राशि न होने पर पापग्रह का तो यही सस्कार है। शुभग्रह में आयु के अको को द्विगुणित करके उससे अशादि को गुणा करना। बाद ६० का भाग देकर लब्धि को सधि में घटाना तो आयु का हरण फल होता है। अथवा एक जगह राशि हो अन्यत्र नहीं हो तो अधिक में से कम को घटाकर शेष बचे सो आयु हरणफल होता है ॥१२॥१३॥१४॥

बहवो बलिनो घ्नति समाश्रेत्प्रथमो मतः ॥ अशकं ग्रहयोगे च द्वयोः पापे हरन्त्युत ॥१५॥  
 सौम्योपि पापवर्गे च स्थितो रिफाद्विपदसु चेत् ॥ त्रिपुभावगतानां च पापानां करणं स्मृतम् ॥१६॥  
 कुटुंबभरणं चापि दुश्चित्त लाभमेव च ॥ मेधां च प्रतिभा शान्ति मंदक्रोधं करिष्यति ॥१७॥  
 अस्तगतानां सर्वेषां दत्त दायः स्मृतस्तदा ॥ राशिसख्यासमाश्रान्वा सप्रेऽब्जे  
 बलवत्तरम् ॥१८॥ अशान् लिप्ताहतान् कृत्वा खखालिम्यां समाहृताः ॥ शेषा मासादय-  
 प्रोक्ता वर्तमानाब्दयोजने ॥१९॥

इस प्रकार सधिगत एक एक ग्रह का फल कहा गया। यदि एक ही सधि में अनेक ग्रह हो तो उनमें पाप ग्रह आयु का हरण करता है, शुभग्रह नहीं ॥१५॥ दो शुभग्रहों का योग हो तो जो ग्रह पापवर्ग में हो अथवा ७वें से १२वें भाव तक हो तो आयु का हरण (हरण करने वाला) होता है। इसी प्रकार ७वें से १२वें घर तक रवि, मंगल, शनि हो तो भी आयु का हरण करते हैं ॥१६॥

बिन्दु के सम्बन्ध में विचार—पापग्रह १२वें भाव में हो तो बुटुम्ब का पीपण वाग्ब होता है। ११ वें भाव में हो तो दुश्चित्त करे। १०वें घर में लग्ना। ९वें घर में ज्ञान का उदय। ८वें घर में शान्ति। ७वें घर में क्रोध का कारण होता है ॥१७॥ जो ग्रह अस्त हो उनका जो फल प्राप्त हो उसका आधा भाग हरण होता है। यदि लग्न में चन्द्रमा वलवान् हो तो लग्न की राशि की मर्या ही आयु के वर्ष जानना। लग्न में चन्द्रमा वलहीन हो या न हो तो अशो वी ६० में गुणा कर २०० में भाग देकर मध्य वर्षादिक आयु जानना ॥१८॥१९॥

कूरेकूरोदयधं समध्योत्तरशतैर्हृतम् ॥ मध्य चापचये द्वाये स्वे तथा परमायुषि ॥२०॥ स्वोच्चे

मूलत्रिकोणे च लब्धस्यार्थं विवर्जयेत् ॥ मित्रैर्दधिमुहृदि प्रोक्त पादोनेनापनायनम् ॥२१॥  
 भावेष्वेव विधिं प्रोक्तो वर्गाणामधिपेषु च ॥ तिष्ठतीं शुभपापीं चेत्यापोदयविधिः स्मृतः ॥२२॥  
 क्रूरेष्टमेऽष्टमाशेन भावस्याप्यनुपातत ॥ लग्नाधिपेतराष्टाश पापो हरति मृत्युगं ॥२३॥  
 बहवश्चेद्वृत्तीसौम्यपापेष्वेवविधिः स्मृतः ॥ तयोर्दायातर दाय केन्द्रस्य च विधीयते ॥२४॥

लग्न में पापग्रह हो तो लग्न के अशादि को पापग्रह की नवाश राशि से गुणा करके १०८ का भाग देना। जो लब्ध हो सो आयु में से कम करना तो स्पष्ट आयुर्दाय होती है। लग्न में पापग्रह उच्च राशि या मूल त्रिकोण में हो तो पूर्वोक्त रीति से जो लब्धाङ्क प्राप्त हुआ है उसको आधा करके परमायु में घटाना। यदि पाग्रह मित्र या अधिमित्र का हो तो चतुर्थांश कम करके बाकी स्पष्ट आयु जानना। यदि लग्न में शुभ और पाप दोनों ग्रह हो तो जो बलवान हो उसके अनुसार क्रिया करना ॥२० २२॥

आठवे भाव में पापग्रह हो तो लग्नेश को छोड़कर और भावों के स्वामी की अष्टमाश आयु का हरण करता है ॥२३॥ यदि अनेक पापग्रह हो तो जो बलवान हो उसमें पूर्वोक्त विधि से आयु हरण करे। अथवा शुभ पाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो दोनों ग्रहों के आयुफल का अन्तर करके जो बाकी रहे वह आयुफल होता है। इसी प्रकार केन्द्रस्थित ग्रहों के लिये भी समझना चाहिए ॥२४॥

सेन्द्री राहौ दशा राहोरानीता मूलदायवत् ॥ चद्रायुपिडित शोष्या तद्राहुकरण स्मृतम् ॥२५॥  
 अशदायक्रमेणैव तमसोऽब्दा समीरिता ॥ तस्मिन्सचन्द्रे तत्त्वप्रभावसाधनतस्तत ॥२६॥  
 तत्तद्दृष्टिहत कृत्वा पष्ट्याप्त धनशोधने ॥ सौदये च सराहिदादेव न्यायः समीरित ॥२७॥  
 स्थानवृद्धिं क्षय कार्षोऽद्रेष्काणर्क्ष सराशिकम् ॥ अस्तगतानामर्ध स्याद्विना मृगुसुत शनिम् ॥२८॥  
 तपोर्वेदागहीन स्यात्प्रशोनशत्रुगतस्य तु ॥ अगारक वर्जयित्वा शत्रुक्षेत्रगतैर्ग्रहैः ॥२९॥

अब चन्द्रयुक्त राहु का विचार कहते हैं चन्द्रयुक्त राहु हो तो पूर्वोक्त रीति से दशा स्पष्ट करके चन्द्रमाकी आयु घटाना जो शेष रहे वह राहु का वषादि स्पष्ट होता है ॥२५॥ यदि चन्द्र सहित राहु लग्न में हो तो लग्न के आयु स्पष्ट से राहु दृष्टि और चन्द्र दृष्टि को गुणाकर ६० से भाग देना। शेष मकरादि में धन तथा कर्कादि में ऋण करना तो आयु स्पष्ट होती है ॥२६॥२७॥

द्रेष्काण योग से आयु की वृद्धि तथा ह्रास—द्रेष्काण तथा भाव की राशि एक हो तो भाव स्थान फल की वृद्धि होती है। मित्र हो तो क्षय होता है। अस्तगत ग्रहों का आयुर्दाय आधा होता है ॥२८॥ शुक्र शनि अस्तगत हो तो ३/४ (पौना) होता है ॥२८॥ शत्रु क्षेत्री ग्रह का आयुर्दाय मगल बिना तृतीयांश कम होता है। मित्र क्षेत्रीग्रह का पष्टांश कम होता है ॥२९॥

सुहृद्वर्गगताना तु तद्वल हरति त्वकम् ॥ एव भावेषु सर्वेषु यद्द्विधं हरण न हि ॥३०॥ हरण नैव कर्तव्यमशदापेऽष्टवर्गजे ॥ स्वोच्चे च त्रिगुणे प्रोक्त स्वयमर्धं द्विगुण तथा ॥३१॥ अधिमित्रग्रहे सार्धं त्र्यश मित्रग्रहे युतम् ॥ अरावध्यरिभावे च त्र्यशखडविकर्जितम् ॥३२॥ अष्टवर्गोत्पदापेषु प्रोक्तोऽप्य विधिरजसा ॥ भावदापेषु सर्वेषु प्रोक्तोऽप्य विधिरुत्तम ॥३३॥ दायगत्य तु सर्वस्य सहास्य दत्त भवेत् ॥ सुतधर्मगतोऽस्त्रघरा पाद मृतिमुखस्थयो ॥३४॥

पूर्वोक्त ६ प्रकार के जो आयु हरण की रीति बही है वह ग्रहा क विषय में जानना भावा

के विषय में नहीं। ३०॥ अष्टक वर्गोत्पन्न अशायु में हरण नहीं होता। प्रत्युत योग करना। उच्च का ग्रह हो तो प्राप्त आयु को त्रिगुणित करना। स्व राशि का हो तो द्विगुणित। अधिमित्र का हो तो अर्धाधिक (डचोढा)। मित्र राशि का हो तो तृतीयांश युक्त। शत्रु राशि अथवा अधिशत्रु राशि का हो तो तृतीयांश हीन करना। यह रीति अष्टकवर्गोत्पन्न आयु तथा भावायु में भी समान रीति से करना। आयुर्दायि का जो स्वामी है उसका जो दाय भाग है उसका आधा भाग दायपति के साथ रहनेवाला ग्रह लेता है। दायेश से त्रिकोण में स्थित ग्रह तृतीयांश हरण करता है। राप्तमस्थ ग्रह सप्तमांश हरण करता है। ३४॥

सप्तांशं सप्तमस्यस्य प्रक्रिया प्रोच्यतेऽधुना ॥ अशान्तरस्वरहताञ्छेदेनैव विभाजितम् ॥ ३५॥  
तत्तदंशविभक्तं च स्वस्य स्वस्य समं भवेत् ॥ नीचार्धपक्षे सर्वत्र विधिरेव विधीयते ॥ ३६॥  
नीचाभावेष्टवर्गोत्थ भावदायेऽशकृमे ॥ नाय विधिः स्मृतस्तत्र बहवश्चेत्तु तेऽखिलम् ॥ ३७॥  
केन्द्रादिगा ग्रहाः सर्वे ददत्येवापहत्य च ॥ अर्धत्रयशच पाद च हरणाभावसम्मती ॥ ३८॥

अन्तरदशा का प्रकार—अशच्छेद और समच्छेद करके मूल दशा को गुणा करना और अशच्छेद तथा समच्छेद का भाग देना। तो स्पष्ट अन्तरदशा प्राप्त होगी। ३५॥ ३६॥ यह पूर्वोक्त प्रकार वही होगा जहा ग्रह नीच का न हो। तथा अष्टक वर्गस्य और अशायु में भी नहीं होता। ३७॥ सम्पूर्ण ग्रह केन्द्र में अर्ध, पणफर में तृतीयांश तथा आपोक्लिप्त में चतुर्थांश आयु देते हैं। ३८॥

अथ दशाक्रमवक्रमाह								
शु०	म०	पु०	म०	ल०	शु०	शु०	च०	योग
१७	७	५१	०	१	६	३	६	५९
९	७	२	०	९	९	६	१०	८
२	२५	२६	०	२४	२७	१४	४	७
३	३३	४६	०	१९	३८	३४	२४	३४
३२	०	०	०	३६	०	४२	१२	१२
१९००	१९१८	१९२६	१९३१	१९३१	१९३३	१९४०	१९४३	१९६०
१०	७	३	५	५	३	१	८	६
४	६	१	२८	२८	२२	२५	५	९
१४	१७	५०	३६	३६	५६	३४	९	३३
२२	५४	५४	५४	५४	३०	३२	१२	२४

अशान्तेदशकम्				घटान्तरदशाचक्रम्				
च०	स०	शु०	मौ०	च	स०	शु०	मौ०	योग
१	१	१	१	९	३	२	२	१६
१	३	४	४	७	०	३	३	१०
				५१	२२	१६	१६	४
				२३	३७	५७	५७	२४
					१	५४	५४	१२
सप्तशतेदशकमाह								
च०	स०	शु०	मौ०	१९४३	१९५२	१९५५	१९५८	१९६०
				८	१०	११	२	६
४८	१६	१२	१२	८	१६	८	२५	१२
४८	४८	४८	४८	२७	१८	५५	५३	५१
				३२	५५	५६	५०	४४

सर्वद्वित्रिंशद्वेवाश्च त्रिपदसप्तपञ्चपाणय ॥ स्वर्कहोरादकाणेशास्त्रिशशशशद्विभागया ॥३९॥  
 नवार्ककालहोरेशा षष्ट्यशशकलाशयी ॥ भुजते च क्रमात्सर्वे त्वतर्दायविधी तथा ॥४०॥  
 ग्रहाङ्गावात्ततस्तस्मात्स्थिताना द्वादशस्वपि ॥ भावान च क्रमात्प्रोक्ता भागाशाश्च स्वयभुवा  
 ॥४१॥ सर्वद्विवेदसप्तपञ्चद्वित्रिरत्नदिशाऽत्रय ॥ वेदागा हारका एव ग्रहाणा समुदीरिता  
 ॥४२॥ हत्वा वाय बले स्वैस्तु बल योगेन भाजयेत् ॥ आपव्यये तु भावाना ग्रहाणा  
 विपदाविपु ॥४३॥सर्वाद्वित्रीपुवेदत्रिपव सप्त तत क्रमात् ॥ स्थानातरे तु भागाशा सर्वभावेपु  
 कीर्तिता ॥४४॥सर्वत्रिसप्तरामेपुपद्व्याप्रिद्वियमा क्रमात् ॥ कालाशा अर्धहोराशा पतयोग्य  
 हरा यथा ॥४५॥

इति श्रीबृहस्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेदायवर्णन नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

अन्तरदशा का स्वामी स्वराशि मे हो तो पूर्ण आयु, होरा मे आधा, द्वेष्याज मे तृतीयाज कम तथा त्रिशाज मे तीसरा भाग, सप्ताशक मे चतुर्थाज भोगता है। नवाज मे तृतीयाज तथा द्वादशाज मे हो तो छठा अंश, होरापति हो तो सातवा भाग, षष्ट्यज का स्वामी हो तो आठवा भाग भोगता है। षोडशाज मे आधा भाग भोगता है। यह अन्तरदशा का पाचव क्रम कहा गया है। ३९॥४०॥ ग्रहों के और भावों के भागाज जो ग्रहा ने बड़े हैं मौ कहे जाते है। ४१॥ प्रथम भाव का गपूर्ण आयु, दूसरे भाव की आधी, तीसरे भाव की चतुर्थाज, चौथे की सप्तमाज, पंचम की अष्टमाज, छठे की षष्ट्याज, सातवे की तृतीयाज आठव की नवमाज, नवम की दशमाज, दशम की ग्पतमाज, ग्यारहवे की चतुर्थाज, बारहवे भाव की आयु का षष्ट्याज भाग हात्व जानना। ४२॥

भावो के भागाश—११, १२ भाव का निर्णय यह है कि पूर्वोक्त रीति से हरण करके जो शेष रहा उसको अपने अपने बल से गुणा करे, सर्व बलयोग से भाग देना जो लब्ध हो, वह स्पष्ट अन्तरदशा है। इसी प्रकार तीसरे भाव का सर्वांश, चौथे भाव का आधा, पाचवे का तीसरा, छठे का पाचवा, सातवे का चौथा, आठवे का तीसरा, नवे का पाचवा, दशवे का ७ वा. भाग, भागाश कहे जाते हैं तथा प्रथम भाव का सम्पूर्ण भाग, दूसरे भाव का आधा भाग भागाश होता है। कालाश तथा अर्ध होराश पति कहते हैं— सम्पूर्ण, तृतीयांश, सप्ताश, तृतीयाश, पचमाश, षष्ठाश, तृतीयाश, द्वितीयाश और द्वितीयाश ये अधिपति और हारक होते हैं॥ ३९-४५॥

इति श्रीबृहत्सारासहोराशात्रेउत्तरखण्डे भावप्रकाशिकायादायवर्णन पञ्चदशोऽध्याय ॥१५॥

### पुनः दायवर्णनाह

ग्रहेषु सर्वेषु बलोत्तरेषु स्वोच्चाशयेषु प्रबलस्य वर्गो ॥ दिग्वीर्यचेष्टाबलपूर्तिपुक्ते षण्डयेषु नीचार्थकृतापहाराः ॥१॥ अष्टत्रिंशद्भूदा सति ता. स्वोच्चादिसुसंकृताः ॥ लग्नादिभावगानां च ग्रहाणा स्थितिभेदतः ॥२॥ द्विद्वाश्रतुरशोतिश्रमिदा संतिद्विजोत्तम ॥ स्वोच्चादिस्थितिभेदेन भिन्नाः सूर्येषुभूमयः ॥३॥

### पुनः दायवर्णन

पिंडायु की विविध भेद प्रकार सख्या—पहले पिण्डायु प्रकरण में पिण्डायु के १२ भावों की आधा, तिहाई, चौथाई घटाने से  $१२ \times ३ = ३६$  तथा २ अन्य भेद, इस प्रकार ३८ भेद यह आये हैं। ये ३८ भेद उच्च सस्कार होने से  $३८ \times २ = ७६$  भेद होते हैं। तथा १२ भावों में उच्चाश, अधिक बल, दिग्बल, चेष्टाबल, वर्ग बल आदिक ७ ग्रहों के भेद में  $१२ \times ७ = ८४$  भेद होते हैं। और हे मैत्रेय! इन ७ ग्रहों के स्वराश, उच्च, मूल, त्रिकोण आदि ९ शुभयोग तथा ९ अशुभ योग गिनाकर  $१८$  गुणित होने पर  $८४ \times १८ = १५१२$  भेद होते हैं। इस प्रकार ७६ और १५१२ भेद पिण्डायु के होते हैं॥ १॥२॥३॥

सलप्रानां बलैः सर्वैरधिकाना क्रमाद्द्विज ॥ अगोऽवस्तया षण्डयो निसर्गोत्थामिधः परः ॥४॥ शतस्वरांशो भौमाच्च नक्षत्रांशकसजको ॥ स्वरांशश्चेतरो दायः करदायस्तथेतरः ॥५॥ स्वोच्चवनीचमुहुच्छत्रुवर्गीश्र नतुर्विध ॥ अतिनीचातिशयोश्च भागराशिगतस्य च ॥६॥ समुदायाष्टवर्गश्च भिन्नाष्टक उदीरितः ॥ तत्र भूलत्रिकोणे च भिन्नवर्गं च वृद्धिकृत् ॥७॥ तथा समारिवर्गं च न वृद्धिहरणे तथा ॥ सूर्यादयः क्रमाल्लप्रगताश्चेदलवन्तराः ॥८॥

बिन्दु बल से कौनसी आयु लेना, यह कहा जाता है। है मैत्रेय! लग्न बलवान् हो तो अशायु लेना, सूर्य बलवान् हो तो पिंडायु लेना, चन्द्र बलवान् हो तो निमर्गायु लेना, मंगल बलवान् हो तो स्वराशायु लेना, बुध बलवान् हो तो नक्षत्रायु, गुरु बलवान् हो तो नवामायु, शुक बलवान् हो तो स्वराशायु, शनि बलवान् हो तो वर दाय आयु लेना॥ ६॥५॥

उच्चादि बल के कारण आयु के ग्रहण या विचार—उच्च वर्ग में हो तो पिण्डायु, नीच वर्ग

मे हो तो निसर्गायु, त्रिवर्ग मे हो तो स्वराशायु, शत्रुवर्ग मे हो तो नक्षत्रायु, अति नीच नवाश मे हो तो समुदायाष्टक वर्गायु, अति शत्रु नवाशक वर्ग मे हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु लेना ॥६॥ जो ग्रह मूल त्रिकोण के त्रिवर्ग मे हो तो पूर्वोक्त रीति से वृद्धि करना। नीच तथा शत्रु वर्ग मे हो तो कम करना। सम शत्रु वर्ग मे हो तो कम करना। सम शत्रुवर्ग मे यथा प्राप्त आयु ग्रहण करना ॥७॥ सूर्यादिग्रह बलवान होकर लग्न मे स्थित हो तो उनके बल के अनुसार आयु लेना। यथा सूर्य से पिण्डायु, चन्द्र से ध्रुवायु, मंगल से समुदायाष्टक वर्गायु, बुध से भिन्नाष्टक वर्गायु, गुरु से क्रमानुगत आयु, शुक्र से अशायु, शनि से करदायु आयु ग्रहण करना ॥८॥

पैडघो ध्रुवोऽष्टवर्षोत्थं प्रक्रमानुगतोऽशकः ॥ करदायुःकमाल्लग्नै रव्यादीं तु स्थिते सति ॥९॥  
पैडघः स्वरांशो ध्रुवोय एव तत्प्रक्रमांशश्च तयोशकोत्थः ॥ भिन्नाष्टवर्गः समुदायतंत्रः करोत्य उच्चादिषु योजनीयः ॥१०॥ ध्रुवः सुप्तस्यस्य तु सप्तमस्य पैडघः स्वरांशः सतु कर्मगतस्य ॥ द्वितीयसस्यस्य च पैडघ उक्तस्तृतीयधीर्धर्मगतस्य चैव ॥११॥ षष्ठव्ययस्यस्य तु भिन्नतजस्त-  
थेतरो मृत्युगतस्य चैवम् ॥ पैडघः स्वरांशो ध्रुव आयु उक्तं पैडघौ भवेदाद्यगतस्य चैव ॥१२॥

लग्न मे उच्चादि भेद से स्थित ग्रह से आयु का ग्रहण लग्न मे उच्चराशि का ग्रह हो पिण्डायु लेना। त्रिकोण मे उच्चराशि का ग्रह हो तो स्वरायु लेना। स्वराशि का हो तो ध्रुवायु लेना। अधिमित्र का हो तो प्रक्रमाश आयु। मित्रक्षेत्री हो तो अशायु। शत्रु क्षेत्री हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु। अधिशत्रु क्षेत्री हो तो समुदायाष्टक वर्गायु। नीच का हो तो अशायु लेना चाहिए ॥९॥१०॥

मतान्तर-लग्न से चौथे घर मे ग्रह हो तो ध्रुवायु, ७वे हो तो पिण्डायु, २,१०वे घर मे स्वराशायु, ३,५,९वे घर मे हो तो पिण्डायु, ६ठे घर मे हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु ८वें घर मे हो तो समुदायाष्टक वर्गायु, लग्न मे हो तो पिण्डायु, ११ वे घर मे हो तो पिण्ड, स्वर, ध्रुव इन ३ आयु मे से एक आयु लेना ॥११॥१२॥

लाभेरवीं द्वारबुधेज्यशुक्रमदा. स्थिताः प्रक्रमदाय एव ॥ लग्नार्थमीमजरवीन्दुमन्दशुक्रास्तृतीये सुतमे च धर्मे ॥१३॥ स्वेशुक्रमदार्यबुधार्थमीमचद्रा. सुतेजस्ते निधनेऽपिचैव ॥ बुधात्क्रमाद्व्यु-  
त्क्रमतश्च चंद्राद्भूमार्थमदार्यमितजचद्राः ॥१४॥ घटे व्यथे कर्मणि लाभगा वा रवीन्दुपुक्रा-  
र्किकुजार्थसौम्याः ॥ सौम्यात्कुजाद्भार्यवतः क्रमात्पुमिन्त्रे तु दाये क्रमशः प्रदिष्टम् ॥१५॥  
नक्षत्रदापोऽशकपिडदायो भिन्नाष्टवर्गः समुदायतंत्रः ॥ स्वराशदापो क्रमशः प्रदिष्टो विशेष-  
तस्तत्र वदामि यस्मात् ॥१६॥

वारह भावो मे मित्रायु लेने का प्रकार-एकादश स्थान मे ७ ग्रहो की आयु लेना। लग्न तथा ३,५,९ भाव मे गुरु, मंगल, बुध, सूर्य, चन्द्र, शनि, शुक्र, इस क्रम से आयु लेना। २७े भाव मे शु० श० गु० बु० सू० म० च० इस क्रम से आयु लेना। ४थे घर में बुध, सू० म० च० शु० श० गु० इस क्रम से, ७ वे भाव मे च० म० सू० बु० गु० श० शु० इस क्रम से, ८वे भाव में म० सू०

श० गु० शु० बु० च० इस क्रम से, ६ठे भाव मे सू० च० शु० श० म० गु० बु० क्रम से, १२वे भाव मे बु० सू० च० शु० श० म० गु० क्रम से, १०वे भाव मे म० गु० बु० सू० च० शु० श० क्रम से, ११वे भाव मे शु० श० म० गु० बु० सू० च० इस क्रम से आयु देने वाले कहे गये हैं॥१३॥१४॥१५॥

आयुर्दाय की गणना—नक्षत्रायु अशायु, पिण्डायु भिन्नाष्टक, वर्गायु, समुदायाष्टक वर्गायु, स्वराशायु, इनके भेद आगे कहे जाते हैं॥१६॥

अष्टत्रिंशदभिधे तु अकसूर्यकलाशकं ॥ मूर्च्छाक्षिणी भिदा सति रश्मिजास्त्रिंशदेव हि ॥१७॥  
 एकस्य विषये द्वौ चेदाययोगदत्त भवेत् ॥ ज्यादयश्रेष्ठुतास्त्रघादिसख्याप्ताश्रवशा भवेत् ॥१८॥  
 रवावुच्चगते चान्ये बलिष्ठाभूलकोणगा ॥ स्वोच्चस्वेषु बलिष्ठेषु सर्वेषु शशहसके ॥१९॥  
 एव चिरायुष्या योगेष्वन्येषु गणितेषु च ॥ चद्रयोगेषु त्रिषु च चद्रे तु बलवत्तरे ॥२०॥  
 राजयोगेषु सर्वेषु पैडघमाह पराशर ॥ लग्न गुरौ कर्मगते च भानी चद्रे सुख वाऽस्तगते बलिष्ठे ॥ पूर्णे त्रिकोणोपचये शुभेषु पापेष्व्यात्रोक्तमसस्वितेषु ॥२१॥  
 शुभाश्र केद्रे त्रिषडायभेदये विपर्यये पैडघमत प्रदिष्टम् ॥ रि फाष्टघष्ठेषु सहस्ररश्मौ भौमे क्रमाच्छ्रीतकरे तु पैडघ ॥२२॥  
 पापाल्लग्रे चाष्टमे सप्तमे वा सौम्या षष्ठे कर्मभिरिफभेवा ॥ नीचाभावे पैडघाय प्रदिष्टो मदे लग्ने स्वोच्चगते च ध्रुवास्य ॥२३॥

अभिधित आयु के भेद ३८ होते है उनमे नवाश, द्वादशाश, पौडशाश के भेद मे २२१ भेद होते है। रश्मि आयु के ३० भेद है॥१७॥ एक भाव मे २ ग्रह आयु दाता हो तो दोनो वा योग करने उसका आधा लेना। ३ आदि अधिक ग्रह हो तो सबकी आयु का योग करके ग्रह सख्या से भाग देना। जो लब्धि हो सो वही आयु भाव की होती है॥१८॥

पिण्डायु ग्रहण मे विचार—सूर्य उच्च वा हो और ग्रह बलवान् हो तथा शश योग हस योग, दीर्घायु योग, सुनका योग अमफा, दुर्धरा चन्द्र राज आदि योग हो तथा चन्द्रमा बलवान् हो तो पिण्डायु ग्रहण करना ऐसा परावर भगवान् कहते हैं॥१९॥२०॥२१॥२२॥

प्रकारान्तर से पिण्डायु ग्रहण वा विचार—गुरु लग्न म सूर्य १० चन्द्र ४ अथवा ७, शुभग्रह त्रिकोण या त्रिषडाय मे, १, २, ७, ८, १२ मे अथवा शुभग्रह केन्द्र, त्रिषडाय मे, गुरु १२, मंगल ८, चन्द्र ६ अथवा पापग्रह १, ७, ८ शुभ ग्रह ६, १०, १२ इन भावो मे नीच वर्जित हो तो पिण्डायु लेना॥२१॥२२॥ जन्म लग्न म तुलारानि वा जनि स्थित हो तो ध्रुवायु लेना॥२३॥

वीणाया कार्मुके चक्रे गदायामर्धचन्द्रके ॥ रवौ पैडघोऽशको लग्ने ध्रुवश्रन्द्रे च भूमिजे ॥२४॥  
 भिन्नाष्टवर्ग सौम्ये तु नक्षत्राशसमुद्भूच ॥ गुरौ नक्षत्रदाय स्यात्प्रश्मानुगत सिते ॥२५॥  
 समुदायाष्टवर्गस्तु मदे तु बलवत्तरे ॥ वाप्या पासो शरे पये समुद्रार्कादिषु जमात् ॥२६॥  
 बलिष्ठेषु नवाशोत्थो ध्रुव पैडघस्वराशक ॥ भिन्नाष्टवर्गो ह्यशोत्थो नक्षत्राशक ईरित ॥२७॥  
 रज्जो विह मे मालाया नले च मुसले जमात् ॥ पैडघो ध्रुव जमात्प्रोक्तो रथ्यादौ तु बलोत्तरे ॥२८॥  
 गडे शक्ती च मकटे पूषे केदारशूलयो ॥ प्रश्मानुगतश्राय रश्मिजौ ध्रुवसजितौ ॥२९॥  
 अष्टवर्गसमुद्भूतौ क्रमादेव बलोत्तरे ॥ नौदप्रवच्छदामान्ये



स्वरदायोऽतिनीचगे ॥३०॥ कूटे गडे शरे नागे गोले शृगाटकं पुनः ॥ कालकूटे क्रमात्प्रोक्ता  
पैडचाद्याः सप्त वै द्विज ॥३१॥ पैडचास्त्रयो ध्रुवाभ्रांशवायाभ्राष्टकवर्तकौ ॥ द्वेष्काणेषु  
नवांशेषु द्वादशांशेषु च क्रमात् ॥ कलांशेषु नव प्रोक्ता दायार्थेव पुनः पुनः ॥३२॥

योग विशेष से आयु ग्रहण—वीणा, कार्मुक, चक्र, गदा, अर्धचन्द्र योग हो, सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु लेना। केवल सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु लेना। लग्न की बलवत्ता में अशायु। चन्द्र बलवान् हो तो ध्रुवायु। मंगल बली हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, बुध बली हो तो नक्षत्रायु, गुरु बली हो तो नक्षत्रायु, शुक्र बली हो तो क्रमानुगतायु, शनि बली हो तो समुदायाष्टक वर्गायु लेना ॥२४॥२५॥

प्रकारान्तर—बापी, पाश, शर, पद्म, समुद्र, इनमें से कोई योग हो तथा सूर्य बली हो तो नवाशायु। चन्द्र में ध्रुवायु, मंगल में पिण्डायु, बुध में स्वराशकायु, गुरु में भिन्नाष्टक वर्गायु, शुक्र में अशायु, शनि में नक्षत्राशायु लेना ॥२६॥२७॥

अन्य प्रकार—जन्म कुण्डली में रज्जु योग हो तो पिण्डायु, विहग योग हो तो ध्रुवायु, माला हो तो पिण्डायु, नलयोग हो तो ध्रुवायु, मुगल योग हो तो पिण्डायु, गण्ड योग हो तो क्रमायु, शक्ति में रश्म्यायु, शकट में ध्रुवायु, यूप में अशायु, केदार में भिन्नाष्टक वर्गायु, शूल में समुदायाष्टक वर्गायु लेना तथा सूर्यादिग्रह की बलवत्ता भी होनी चाहिए ॥२८॥२९॥ नौका, छत्र, वज्र, दामयोग हो, सूर्यादि ग्रह नीच के हो तो स्वराशायु लेना ॥३०॥ हे मैत्रेय! कूट योग में पिण्ड, गण्ड योग में ध्रुव, शर में अष्टक वर्ग, नाग में प्रक्रम, गोल में अशायु, शृगाटक में स्वराशायु तथा कालकूट में रश्म्यायु लेना ॥३१॥

प्रकारान्तर—लग्न में प्रथम द्वेष्काण हो तो पिण्ड, दूसरे द्वेष्काण में ध्रुव, तीसरे में स्वराश आयु लेना। नवाश में ध्रुवादिक क्रम से ९ आयु लेना। द्वादशांश में अशादि क्रम से लेना। उच्च आदिक ९ स्थानों में ग्रह हो तो भिन्नाष्टक, समुदायाष्टक, आदि क्रम से आयु ग्रहण करना ॥३२॥

त्रिंशत्सवेदाः स्वरपावकाश्च सुराश्च दत्ताः क्षितिपावकाश्च ॥ षट्त्रिंशद्विध्वप्रय एव भानि  
छदासि भूर्क्षाश्च जिनाः कराश्चेत् ॥३३॥ पैडचस्तया द्वादशांश प्रभिन्नः क्रमेण दायो न्यतः  
प्रविष्टः ॥ तत्त्वाग्निदाप्रय एव रत्नबन्नास्त्रिदत्ता ध्रुवदाग्नेदाः ॥३४॥ एकस्त्रयश्चेत्समु-  
दाय सप्तस्तस्तु वेदा इतरोऽष्टवर्गः ॥ पचादिकेष्वशकदाय उक्तो द्वादश सूर्या यदि पैडच  
आद्यः ॥३५॥ विंशे मनुश्चेत्स्वरभागदायो नक्षत्रागामस्थितिसज्ञकश्चेत् ॥३६॥ नृपेत्पाष्टित्रये  
प्रोक्ता आद्यपैडचभिदास्तथा ॥ प्रक्रमानुगतो विशत्याष्टत्रिंशेऽष्टवर्गज ॥३७॥ तत्त्वारिमात्रये  
पैडचो नक्षत्राशस्त्रये ततः ॥ शेषेषु षट्सुपैडचः स्यादाद्यो वर्गोपमाह च ॥३८॥ इष्टरश्म्यधिक  
प्रोक्तक्रम एव कराधिके ॥ कैट्रादिषु ग्रहाणां च बलीतरवशात्क्रमः ॥३९॥

अब रश्मि के भेद से आयु का भेद कहा जाता है। रश्मि के योग की संख्या २१, २४, २६, २७ तथा ३० से ३७ तक हो तो पिण्डायु लेना। और २५, २९, २३, २९ योग हो तो ध्रुवायु लेना। तथा १, २, ३ योग हो तो समुदायाष्टक वर्गायु लेना। ४ का योग हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, ५ से १० तक योग हो तो अशायु, ११, १२ में पिण्डायु, १३, १४ में

स्वरानायु, १५ मे नक्षत्रायु, १६ से १९ तक पिण्डायु, २० मे प्रक्रम आयु, ३८ मे अष्ट वर्गायु, ४०।४१।४२ मे पिण्डायु, ४३।४४।४५ मे नक्षत्रायु, २२।२८ तथा ४६ से ४९ तक रश्मि योग हो तो पिण्डायु लेना। यह गर्ग ऋषि का कथन है। ३३ से ३९ तक।

बलौत्तरवशादेव स्थानेतरवशात्तथा ॥ इष्टात्फलक्रमादेव रश्म्युक्तविधिना क्रमात् ॥४०॥  
कल्पादौ भगवान् गर्ग प्रादुर्भूय महामुनि ॥ ऋषिभ्यो जातक सर्वमुवाच कलिमाश्रित ॥४१॥  
अस्मिन्नुत्तरभागे तु मयानुक्तं च यद्भवेत् ॥ तत्सर्वं गर्गहोराया मैत्रेय त्व विलोक्य ॥४२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे दायप्रकरण नाम षोडशोऽध्याय ॥१६॥

यह आयुर्दाय के भेद बल की न्यूनाधिकता से तथा मित्रादि भेद एव स्थान बल के तारतम्य से इष्ट, कष्ट, बल योग से एव रश्मि के निमित्त से कहे गये हैं। ४०॥ बलियुग के प्रारम्भ मे गर्ग मुनि ने अपने शिष्यों को बहा था। जो इस विषय मे हमने नहीं बहा है वह गर्ग होरा मे देख लेना। ४१॥ ४२॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उ० ग० भावप्रवा० आयुर्दायप्रवरणे

षोडशोऽध्याय ॥१६॥

अथ कलांशादि फलमाह

भाग्य कर्म च यक्ष्यामि मैत्रेय भृशु सुप्रत ॥ भाग्यादेव नृणा सिद्धिर्भाग्यदेव धनायती ॥१॥  
यशासि भाग्यतो भाग्यविषयासाद्विपर्यय ॥ ऋरिष्यमाणकर्मणि ज्ञातव्यानि प्रयत्नत ॥२॥  
लप्रादिन्वोश्च नवम भाग्य बलवगाद्भवेत् ॥ शुभपापारिमित्रात्सर्वप्रहेरेव शुभाशुभे ॥३॥  
उच्चादिपक्षकाद्बुद्धिरन्यत्पाद्वारिरेष्यते ॥ स्वस्मिन्नन्यत्र विषये स्वदेशेतरदेशयो ॥४॥

कलांशादि फल

हे मैत्रेय! ऐश्वर्य तथा शुभाशुभ व्यापार का माघन घन, तथा यशप्राप्ति यह सब भाग्योदय से होती है अतः भाग्योदय का लक्षण कहा जाता है। १॥ २॥ नक्ष तथा चन्द्रमा में नवम भाव, भाग्य का स्थान है। इसमे वनादल के अनुसार भाग्य की वृद्धि या हानि का विचार करना। उच्च स्वर्गही, मित्र देशी अतिमित्रदेशी भूतमित्रदेशी होकर जो उच्च भाग्यभाव मे स्थित हो तो भाग्य की वृद्धि होती है। नीच भूभूदेशी अतिभूभूदेशी तथा समराणि मे होकर भाग्यम्भान मे हो तो भाग्य की हानि करता है। भाग्येन स्ववर्म मे हो तो स्वदेज मे एव परवर्ग मे हो तो परदेज मे भाग्योदय होता है। ३॥ ४॥

स्वेव्यन्वेषु तु वर्णेषु ज्योतिर्विद्भागु स्थिते ॥ अष्टानो रागिनिप्लवा मन्त्राग मप्रकीर्तित ॥५॥  
अष्टादशार्शकांशास्तु बन्नास इति कीर्तित ॥ चन्द्रपम एव चन्द्रपम इमे पतय स्मृता ॥६॥  
भाग्यप्रिबोणोपगतैः शुभ स्याद्भाग्य तु वेन्द्रोपगतैः शुभम् ॥७॥  
पारैयनया स्यादशुभं च भाग्य मित्रादिभिः स्यात्प्रियमो विगिष्टान् ॥८॥ एव भाग्यविपर्ययौ भाग्यात् च वदंतया ॥

भावग्रहातरकला द्विशत्यान्ता समादय ॥९॥ द्विधाद्विधा करद्वाश्र षष्टधाप्ताश्र समादय  
॥ अयेष्टादिकलत्र च समयो भाग्यभावयो ॥१०॥

सप्ताश्र षोडशाश्र, षष्ठ्यश्र-राशि, अश्र की कला करके ७ का भाग देना, लब्ध सप्तमाश्र, १८ १२ का भाग षोडशाश्र तथा ६० का भाग षष्ठ्यश्र कहाता है। अथवा राशिचक्र की २९ से भाग देना तो षोडशाश्र होता है ॥५-७॥

लत्र तथा चन्द्रमा से जो नवम् स्थान हो उससे केन्द्र १।४।७।१०) त्रिकोण (५।९) भाव में शुभग्रह हो तो भाग्य उत्तम और पापग्रह हो तो अशुभ होता है। परन्तु मह विशेष है कि उपर्युक्त राशिपौ में स्थित ग्रह स्वराशि मित्रराशि आदि के होने चाहिये। नीचादि होने से नेष्ट फल समझना चाहिये ॥८॥

भाग्योदय वर्ष-भावस्पष्ट और ग्रहस्पष्ट राश्यादि का अन्तर करना। पश्चात् कला करके २०० का भाग देना। लब्ध वर्ष, मासादिक जानना, पश्चात् द्विगुणित करके दो जगह रखना। एक जगह के अंक को द्विगुण करके ६० का भाग देकर दूसरी जगह के अंक में कम करना। शेष रहे वह भाग्योदय का वर्षादि समय होगा ॥९॥१०॥

फलेन च दशमेन रश्मिना च हुतास्तया ॥११॥ भावाष्टवर्गोत्थसमाहिततद्ग्रहान्तरोत्थास्तु  
समादय स्यु तत्तद्ग्रहोत्थाब्दहतास्तया स्युरेव तथा भाग्यफलानि तत्र ॥१२॥ स्थानानि  
नववर्गाश्र तेषा भाग्यफल शृणु ॥ रव्यादीना क्रमाच्छृण्वामरादेश्र विक्रये ॥ कृषिकर्मणि  
सेवाया पैशुन्ये लिपिकर्मणि ॥१३॥ धनार्जने व्यये व्याधौ गमनागमनविक्रये ॥ विवादे प्रेतकार्ये  
च भ्रातृणा , कलहे तथा ॥१४॥ धनार्जने सुते दारग्रहणे लिपिकर्मणि ॥ उन्वादिस्थानवर्गेषु  
लाभदश्र रवि क्रमात् ॥१५॥

प्रकारान्तर-ग्रह, भाव के अन्तर को १० से गुणा करना। बाद उसी ग्रह की रश्मि से भाग देना। शेष वर्ष मासादि भाग्योदय का समय होता है ॥११॥ इस प्रकार प्रत्येक भाव के फलप्राप्ति का ऊपर कही रीति से जानना और भाव के फल का विशेष निर्णय आगे कहे अनुसार नी वर्ग से कहना ॥१२॥

अब ग्रहों के उच्चरदि वर्ग बिचार से फलविशेष का निर्देश किया जाता है।

सूर्य का फल-सूर्य यदि उच्च, त्रिकोण, स्वगृही, मित्रराशि, अतिमित्रराशि अथवा इनके वर्ग में हो तो निम्नलिखित वस्तुओं के व्यापार से लाभ होगा। शृण, चामर, कृषिकर्म, सेवा दुर्जनकर्म, लिपिकर्म, व्याज, वैद्यक वणिज, बकालत, प्रेतकार्य, भ्रातृकलह, पुत्र से विवाह आदि कार्य से लाभ होगा ॥१३-१५॥

शशमाणिक्यमुक्तानां लाभे तत्कथविक्रये ॥ सुरते स्त्रीषु मैत्रे च राज्ञ पुरुषमित्रता ॥१६॥  
धनार्थतस्तया तत्र मैत्र च कृषिकर्मणि ॥ वस्त्रादिधनसिद्धिश्च ब्राह्मणेन विरोधता ॥१७॥  
धननाशो भवेच्छुद्धे पराजयपरामवी ॥ कलासाधार्थहोराणाकलानिक्रमरा स्थिते ॥१८॥  
स्वर्णसिद्धिर्जयो वस्त्रतामो मित्रसमागम , ॥ विवादे भ्रातृभिः शत्रुकर्म स्त्रीचवलादार-

॥१९॥ स्त्रीलाभो दासलाभश्च कृत्स्नेहा च बलक्षयः ॥ बलैर्घनायतिः स्वोच्चे क्षेत्राद्यैर्न्यायितो भवेत् ॥२०॥ मूलत्रिकोणे क्षेत्रेण राज्ञो वाय धनायतिः ॥ स्वर्गे वस्त्रं काचनादिसिद्धिश्चाय सुदृढफलम् ॥२१॥ धान्यायतिश्च मैत्री च क्रूर कर्मप्रवर्तनम् ॥ कुष्ठ चाप्यग्निमीतिश्च गृह्वाहोर्जतिशत्रुभे ॥२२॥

चन्द्रमा उच्चादि राशि या वर्ग (उच्चादि) मे हो तो क्रम से शत्रु, मैथुन, स्त्रीमैत्री, राजपुरुष मित्रता, धननियोग, कृषिकर्म, वस्त्रव्यापार, द्विजविरोध, नीचकर्म से हानि, स्वदेश त्याग, धनहानि, बलहानि यह फल होता है। (यहा शत्रु से तात्पर्य शस्त्रनिर्मित वस्तु और मणि मुक्तादि है) ॥१६-१८॥

यदि मंगल उच्चादि राशि या वर्ग मे हो तो क्रमशः सुवर्ण सिद्धि, जय, वस्त्रलाभ मित्रसमागम, बन्धुविवाद, शत्रुविद्वेष, चाञ्चल्य, स्त्रीलाभ, दासलाभ, इच्छापूर्ति, बलक्षय, बलप्रयोग से लाभ, यह फल जानना। यदि मंगल भाग्य स्थान मे मूलत्रिकोणी हो तो राज से धनप्राप्ति, स्वराशि का भाग्यभाव मे हो तो वस्त्रादि की प्राप्ति, मित्रराशिगत हो तो अन्नादि की प्राप्ति, यदि अतिशत्रु राशिगत होकर भाग्यभाव मे हो तो क्रूर कर्म प्रवृत्ति, अग्निभय, कुष्ठ, सग्रहणी, गुल्म आदि रोग हो ॥१९-२२॥

ग्रहणी गुल्मरोगश्च धननाशश्च तत्र तु ॥ विद्यार्जने सुखे स्त्रीभिः कलहश्च धनायतिः ॥२३॥ क्षेत्रदासादिलाभं च कृषिकृत्यं धनायतिः ॥ विवादो बहुभिर्पुद्गे जयश्चैव पराजयः ॥२४॥ विद्याबुद्धिधनक्षेत्रव्यशांति च फलंति च ॥ राजस्तत्पुरुषेषैव स्वर्णक्षेत्रायतिस्तथा ॥२५॥ स्वर्गे धनायतिः प्रोक्ता लिपिना शिल्पकर्मणा ॥ वस्त्रस्वर्णादिसिद्धिश्च राजस्त्रीभिर्धनायतिः ॥२६॥ कायस्य कर्मणा त्वाप्यो विद्यानाशः स्वकर्मणा ॥ धननाशोऽश्मरी कुष्ठं कलांशादिफलं ततः ॥२७॥ विद्यादाद्बुधिर्दाप्यो वेशपर्यटनाद्धनम् ॥ क्षेत्रसिद्धिर्जयो विद्यालाभो धान्य-विबर्धनम् ॥२८॥

बुध का फल कहा जाता है। यदि बुध भाग्यभाव मे उच्चराशि का हो तो विद्या तथा सुख प्राप्त हो। शत्रुराशि का हो तो स्त्रियों से कलह, मित्रराशि मे धन लाभ, भूमि आदि लाभ, कृषि से लाभ। नीचराशि का हो तो बहुविरोध, कलह, हानि, पराजय, आदि हो। यदि उच्चादिगत हो तो विद्या, बुद्धि, धन, यश, सुवर्ण, भूमि तथा राजपुरुष से लाभ हो। स्वराशि का हो तो लेखन, शिल्पकर्म, राजस्त्रीनियोग, वस्त्र, सुवर्ण आदि से लाभ। समराशि मे हो तो शारीरिक परिश्रम से, अति शत्रुधेत्री हो तो विद्याविस्मृति, व्यापारनाश, अश्मरी (पथरी) रोग, कुष्ठ आदि रोग हो। अपने पौडशाश मे हो तो बन्धुविद्रोह मे धनप्राप्ति, दैकाटन से लाभ तथा भूमि, विद्या, धन, जय लाभ हो। श्वेती से लाभ, विद्याप्राप्ति के सुयोग की प्राप्ति हो ॥२३-२८॥

कृषिकर्मसमुद्योगः सेवाकरणकौशलम् ॥ विद्यार्जनमथ प्रोक्तं गुरोः श्रोमान् गुप्तो गुणी ॥२९॥ बह्नायतिरमात्यत्वं सर्वसंपत्समन्वितः ॥ धननाशः प्रमोहेण क्षेत्रनाशः परामवः ॥३०॥

विद्यार्जन तथा सेवाकरण सपदस्तया ॥ पुत्रैर्घनापत्तिर्मित्रै स्त्रीभिश्च कृतकर्मणा ॥३१॥  
 विवाहो धनलाभश्च क्रमादेवफल भवेत् ॥ राज्ञा कृत्यकर श्रीमान्पुत्रबधुसमन्वित ॥३२॥  
 सेनानापस्तभामात्यो विद्यार्जनपरो धनी ॥ पाठको याजकश्चाथ बहुस्त्रीकोऽतिशत्रुभे ॥३३॥  
 स्त्रीसक्तो निर्धनो मूर्ख पातकी भारको भवेत् ॥ सेनाधिकारी राज्ञश्च प्रियैर्बधुभिरापत्ति-  
 ॥३४॥ सेवावृत्त्या च कृप्या च विद्यायाः पूर्वकर्मणा ॥ सर्वसपद्युत श्रीमान् गुरुस्यैव फल  
 लभेत् ॥३५॥

गुरु भाग्य स्थान मे हो तो धनी गुणी, सुखी, प्रधान, सर्वसंपत्तिमान् हो। शत्रुक्षेत्री हो तो धन, क्षेत्र नाश, पराजय ही। मित्रगृही हो तो विद्याप्राप्ति सेवक ही और अतिमित्र हो तो ऐश्वर्य प्राप्ति, पुत्रादि से लाभ, धनप्राप्ति, स्त्रीजाति से लाभ, विवाह आदि होता है॥२९॥३०॥३१॥

शुक्रफल-शुक्र उच्चादि स्थानगत भाग्यभाव मे हो तो राजसेवी, श्रीमान्, परिवार से सुखी, सेनापति, प्रधान, विद्यासेवी, धनी, अध्यापक, ऋत्विक्, अनेक स्त्रीभोगी होता है। अतिशत्रु राशि मे हो तो कामातुर, दरिद्री, बुद्धिहीन, पातकी, भारवाहक होता है। स्वक्षेत्री हो तो सेनाधिकारी, बन्धुओं से लाभ, सेवा से लाभ, कृपीकर्मों, विद्यासेवी, इष्टापूर्त, दत्त, वापी, फूप, तालाब आदि युक्त सर्वसम्पत्तिमान् होता है॥२९-३५॥

कुजोच्चादिफल चाकें कलाशादिफल भवेत् ॥ कलाशादिषु यत्प्रोक्त कलाशादि फल त्विदम् ॥३६॥ उच्चादिषु तथा प्रोक्त फलमेव विचिंतयेत् ॥ स्वभाग्यक्षंगतानृक्षान्यूनान्प्राप्यधि-  
 कास्तत ॥३७॥ स्वरश्मिध्रान् ग्रहे युक्ते तद्दक्षिमाप्रास्तयोत्तरम् ॥ त्रिभिर्विभज्य निशेये  
 त्वोजराशी नवाशके ॥३८॥ आदिमध्यावसाने स्याद्युग्मे तत्र नवाशके ॥ आदौ मध्येऽवसाने  
 स्याद्युग्मे चौजे नवाशके ॥३९॥ मध्येऽवसाने चाद्ये च युग्मे मध्यातिमादिमे ॥ आदौ  
 मध्येऽवसाने स्यादेव चेद्भाग्यलक्षणम् ॥४०॥ ओजराशी नवाशे चेत्युग्मे मध्यातिमादिमे ॥  
 युग्मे राशी नवाशे चेदोजे मध्येऽन्तिमेऽपि च॥४१॥प्रथमेऽपि त्रयस्येव युग्मे मध्येऽतिमादिमे।  
 शेष द्वय चेदेक स्यात्कालोव्यत्यासतो भवेत्॥४२॥ कलाभ्या चाहते तद्वच्चराशे चरे च भे ॥  
 आदौ मध्येऽवसाने स्यात्स्वरेऽन्ते मध्यमादिमे ॥४३॥

शनिग्रह का फल मंगल के समान जानना॥३६॥

पूर्वोक्त फल प्राप्ति समय जान-भाग्यभाव की नवमाश राशि को भाग्यभाव की रश्मि से गुणा करना, बाद भाग्यभाव स्थितग्रह रश्मि से गुणा करना, पश्चात् ३ का भाग देना, भाग देने पर शून्य शेष रहे तो नीचे लिखे अनुसार फल की अवधि जानना। भाग्यराशि विषम तथा नवाश राशि भी विषम हो तो चर, स्थिर, द्वि स्वभाव के अनुरार क्रम से आदि, मध्य अंत में फल होता है। नवाश राशि सम हो और भावराशि विषम ही हो तो चरादि राश्वनुसार आदि, मध्य, अंत में फल होता है। और भाग्यराशि सम हो तथा नवाश राशि विषम हो तो चरादि के अनुसार क्रमश मध्य, अन्त, आदि में फल होता है। नवाश राशि भी सम हो तो चरादि के अनुसार मध्य, अन्त, आदि या आदि, मध्य, अन्त में फल होता है। अथवा विषम

राशि नवाश सम हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल होता है और सम राशि में विपम नवाश हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल होता है। कुमार या युवावस्था में भी इसी प्रकार दोनो युग्म राशि हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल जानना। यदि ३ के भाग देने पर १ या २ शेष रहे तो पूर्वोक्त समय विपरीत जानना। ३७-४३॥

उभये मध्यमे ऽन्ते च आदावेव प्रकीर्तिता ॥ भावाना चैव सर्वेषा चद्रलघासु लग्नत ॥४४॥  
अशदाद्योक्तवत्कृत्वा शुभपापदगाहृतम् ॥ पष्ट्याप्त सद्रुलाप्त स्याद्भ्रात्रादीना च सख्यका ॥४५॥ रश्मिघ्न च बलाप्त च त्वनिष्टमपवादगम् ॥४६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे कलाशादिफले सप्तदशोऽध्याय ॥१७॥

बारहो भावों का विचार जन्म लग्न स तथा चन्द्र लग्न स इस रीति स करना कि प्रथम पूर्वोक्त रीति के अनुसार अंशामुदाय की गणित करके दो स्थान में रखना। एक जगह शुभ दृष्टि योग से दूसरी जगह पापदृष्टि योग से गुणा करना और ६० का भाग देना तथा इसी प्रकार भाव बल से गुणा कर ६० का भाग देना। शेष रह वह भावबलकी सख्या समझना। अथवा रश्मि योग से गुणा कर भावबल से भाग देना। शेष शुभाशुभ फल जानना। ॥४४-४६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकाया सप्तदशोऽध्याय ॥१७॥

अथ अन्दवर्णनाह

नाडीद्वय मुहूर्तं स्याद्दिनाडीद्वयमेव च ॥ रवेरुदयतो मेधात्कृमात्सर्वजितं स्मृतं ॥१॥ आर्द्रां  
श्लेषनुराधाश्च मघाश्चाप धनिष्ठिका ॥ उत्तराषाढसजश्च सर्वजिद्रोहिणी तथा ॥२॥  
विशाखा च ततो ज्येष्ठा मूल च शततारकम् ॥ भरणीपूर्वाफाल्गुनी विश्वजिच्च ततो भवेत् ॥३॥  
उत्तराश्लेषाश्चैव रेवती च तत परम् ॥ अभिजिच्चोत्तरा चाथ कृत्तिका रोहिणी तत ॥४॥  
मूल च रोहिणी चाथ मृगशीर्षं च हस्तकम् ॥ पुष्यश्च श्रवणो हस्तवित्रे स्वाति क्रमात्स्मृता ॥५॥

अन्दवर्णन

मुहूर्त लक्षण २ घटी का एक मुहूर्त होता है। पूरे दिन के १५ मुहूर्त। इसी प्रकार पूरी रात्रि के १५ मुहूर्त होते हैं। दिनमान तथा रात्रिमान के न्यूनाधिक होने से मुहूर्त काल की २ घटी में भी न्यूनाधिकता होती है। सूर्य जिस राशि का होता है प्रातः काल वही लग्न होता है। बाद अपने २ क्रम से दूसरे दिन के प्रातः काल तक १२ लग्न भुक्त होते हैं। दिन रात्रि के ३० मुहूर्त हैं उनमें दिन के १५ मुहूर्तों के नाम क्रम से—आर्द्रा १, आश्लेषा २, अनुराधा ३, मघा ४, धनिष्ठा ५, उत्तराषाढा ६, सर्वजित् या अभिजित् ७, रोहिणी ८, विशाखा ९, ज्येष्ठा १०, मूल ११, शतभिषा १२, भरणी १३, पूर्वाफाल्गुनी १४, अभिजित् १५। ये दिन के मुहूर्त हैं। रात्रिके मुहूर्त—उत्तरा भाद्रपद १, रेवती २, अभिजित् ३, उत्तरा ४, कृत्तिका ५, रोहिणी ६, मूल ७, रोहिणी ८, मृगशिर ९, हस्त १०, पुष्य ११, श्रवण १२, हस्त १३, चित्रा १४, स्वाती १५। १ से ५ तक॥

नाडीद्वयमुहूर्तानां सप्ता एता क्रमादिहृज ॥ सर्वजिह्वरणीहस्तविश्वजिह्वोहिणी तथा ॥६॥  
 दक्षश्च मृगशीर्षश्च शर्व पुष्योऽथ हृदभम् ॥ उत्तरा विश्वजिह्वोणी चित्रा पुष्यश्च वायुमन्  
 ॥७॥ अभिजित्तुभ्रम पीण्य कृत्तिका च पुनर्वसु ॥ पूर्वोत्तरप्रोष्ठपदौ शततारा च विश्वभम् ॥८॥  
 ज्येष्ठा सूर्यं च मूलं च भाग्यश्च क्रमशः स्मृता ॥ ज्येष्ठा चाथ विशाखा च मूलं च शततारका  
 ॥९॥ नागानि च मुहूर्तानां विनाडीद्वयरूपिणाम् ॥ आवृत्या दष्टि ता प्रोक्ता कालाशा  
 नादिरूपिण ॥१०॥

दिनाडी मुहूर्त-दिन-रात के ३२ मुहूर्त होते हैं। भरणी १ हस्त २, विश्वजित् पूर्वाषाढा ३, रोहिणी ४, दक्ष-अश्विनी ५ मृगशीर्ष ६ (शर्व) आर्द्रा ७ पुष्य ८, (हृदभम्), आर्द्रा ९, उत्तरा १०, (विश्वजित्) पूर्वाषाढा ११ (शोणी) ध्रुवण १२ चित्रा १३, पुष्य १४, (वायु) स्वाती १५, अभिजित् १६, (वसु) धनिष्ठा १७ (पीण्य) रेवती १८, कृत्तिका १९, पुनर्वसु २०, (पूर्वप्रोष्ठपत्) पूर्वाभाद्रपद २१, (उत्तरप्रोष्ठपत्) उत्तराभाद्रपद २२, शततारका २३, (विश्वभ), स्वाती २४, ज्येष्ठा २५ (सूर्य) हस्त २६ मूल २७ (भाग्य) पूर्वा फाल्गुनी २८, ज्येष्ठा २९, विशाखा ३० मूल ३१ शततारका ३२ ये विनाडी मुहूर्त कहे गये ॥६॥७॥८॥९॥

१ एक नाडी मुहूर्त-प्रथम जो दिन रात के ३० मुहूर्त कहे गये हैं उन्हीं की २ आवृत्ति करने से ११ घटी का १-१ मुहूर्त होता है। इसी का दूसरा नाम कला मुहूर्त भी है ॥१०॥

नक्षत्रसंज्ञया प्रोक्ता यद्यथावृत्या कलाशका ॥ मेघो यमो मृदकुभो शपो जूकश्च कर्कट  
 ॥११॥ सिंहोऽथ घृत्रिकश्चापो मृग कन्या क्रमाद्भवेत् ॥ राशिचक्रकालो तु क्रमादेव  
 प्रकीर्तितः ॥१२॥ मेघो गौरीमर्कको च लेपकन्यातुलालय ॥ धनुर्मृगघटोमीनमुदयाद्-  
 घटिकासु च ॥१३॥

१ कलाश मुहूर्त-जो प्रथम ३२ मुहूर्त कहे हैं उन्हीं की द्वितीयावृत्ति करने से ६४ मुहूर्त नक्षत्र के ६४ भाग करके १-१ भाग का ११ मुहूर्त जानना।

१ राशिचक्र कलाश मुहूर्त-सूर्योदय से ५-५ घटी पर १-१ राशि का मुहूर्त समझना। मेघ १, मियुन २, वृष ३, कुम्भ ४, मीन ५, तुला ६, कर्क ७, सिंह ८, वृश्चिक ९, धनु १०, मकर ११, कन्या १२, इस क्रम से राशि कलाश मुहूर्त होते हैं ॥११॥१२॥

१ नित्योदय लग्नक्रम-मेघ, वृष, मियुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन ये बारह राशियां अपने २ स्वान के पलायक भोग के अनुसार (पूर्वसंख्य में कहा गया है) नित्य उदय होती हैं ॥१३॥

सिंहान्मेघाच्च चापाच्च नक्षत्रक्रम ईरित ॥ चन्द्रज्युक्तप्रामार्कपरिवेपारकार्मुका ॥१४॥ गुरु  
 पातः शनिः केतुर्दहा स्युर्द्विदशमनात् ॥ चक्रान्तिस्तारके चैव केत्वादिस्तारकाशके ॥१५॥

कालनिक नक्षत्रक्रम प्रदत्तकाल में दृष्ट घटी मन्था तब यह ग्रह ग्रहण करना और जो ग्रह भावे उसके अनुसार फल जानना। यदि दृष्ट पर आया हुआ लग्न सिंहदि ४ राशियों में हो तो





पटु ॥३४॥ प्रेष्यो गोमयविक्रेता वदान्यो धनवचक ॥ सेनानी क्षेत्रवाञ्छीरो लेखवृत्त्या च  
 जीवति ॥३५॥ मूर्खं जितेन्द्रियो वाग्मी सदा कृत्यपर सुखी ॥ अन्नदाता च मिष्टाशी  
 शिवभक्तो जितेन्द्रिय ॥३६॥ कुञ्जो वक्रशरीरश्च जात्यधो बधिर शठ ॥ अमर्षो नर्तक कुट्टो  
 दुर्जनो वेदपारग ॥३७॥ वक्ता च गायक श्रीमान् सर्वदा च धनार्जक तालज्ञो विद्यया युक्त  
 पचपचाशदुत्तरम् ॥३८॥ शत गुणाश्च श्रीयोगा एकयोगवसानकम् ॥ पूर्वपूर्वयुता ओजे युग्मे  
 राशौ तु वामत ॥३९॥ चरे क्रम स्थिरे वाममुभयोर्धपदादित ॥ आदौ त्रिसद्गुणा अते  
 वामतस्त्रिंशदेव हि ॥४०॥

अब १५५ योग कहे जाते हैं। इनका फल नामानुरूप ही है। श्रीमान् १। रिक्त २। मूर्ख ३।  
 कुशल ४। वचन ५। पटु ६। स्त्रीसक्त ७। वेदवित् ८। धीर ९। मदाग्नि १०। क्रोधी ११।  
 अतिक्रोधी ११। मूलरोगी १२। पिशुन १३। भ्रमणशील १४। शुचि १५। दास १६। सुभाषी  
 १७। धनी १८। लोभी १९। विद्वान् २०। भीरु २१। बुद्धिधन २२। सुशील २३। पारदागामी  
 २४। श्रीमान् २५। सुशील २६। बलवान् २७। गुणी २८। भ्रमणशील २९। वेदाभ्यासी ३०।  
 पात की ३१। तपस्वी ३२। परदारगामी ३३। वेश्यागामी ३४। मनमोदकी ३५। पदाधिकारी  
 ३६। निरुद्योगी ३७। जटाधारी ३८। नीच ३९। योगी ४०। प्रबुद्ध ४१। सन्यासी ४२।  
 सेनापति ४३। बुद्ध ४४। सुखी ४५। कोटी ४६। सेवडा ४७। धनी ४८। एक पुत्रवाला ४९।  
 शास्त्रज्ञ ५०। दास ५१। महाक्रोधी ५२। कामी ५३। परस्त्रीसक्त ५४। नौकर ५५। चतुर ५६।  
 नीरोगी ५७। कुरूप ५८। कुशल ५९। जितशत्रु ६०। पुत्ररहित ६१। शूर ६२। वीर ६३।  
 अतिकोपी ६४। कुशल ६५। जठररोगी ६६। ग्रामणी ६७। स्वैज्ञ ६८। धूर्त ६९। सतीपति ७०।  
 शत्रुहर्ता ७१। वन्द्यवापति ७२। मुरायी ७३। कुलटारत ७४। सुखी ७५। विजयी ७६। युद्धभीरु  
 ७७। चोर ७८। क्रोधी ७९। उपार्जनरत ८०। पाप उपार्जन रत ८१। शूद्रस्त्रीसेवी ८२। इन्द्र  
 ८३। सेनानी ८४। सत्यवादी ८५। शुचि ८६। शिरोरोगी ८७। कुट्टी ८८। प्रमेही ८९।  
 चुगलखोर ९०। सुखी ९१। जलोदरी ९२। कुतज ९३। निर्दय ९४। घृणी ९५। झगडालू ९६।  
 सुमुख ९७। क्रोधी ९८। कामी ९९। कुशल १००। चंचल १०१। धनी २। वक्ता ३। विद्यासेवी  
 ४। सुखी ५। अपुत्र ६। सेतीहर ७। परदारत ८। शुचि ९। विद्याहीन ११०। मूर्ख ११।  
 बुद्धिमान् १२। शास्त्रज्ञ १३। सदाभीरु १४। मूर्ख १५। वाग्मी १६। कार्यपुट १७। सुखी १८।  
 नीति चतुर १९। लेखक १२०। नीच कार्यरत २१। चतुर २२। दूत २३। गोमयविक्रेता २४।  
 दानी २५। वचक २६। सेनानी २७। क्षेत्रवान् २८। वीर २९। लेखक १३०। मूर्ख ३१।  
 जितेन्द्रिय ३२। वाग्मी ३३। उद्योगी ३४। सुखी ३५। अन्नदाता ३६। मिष्टभाषी ३७।  
 शिवभक्त ३८। जितेन्द्रिय ३९। कुबडा १४०। कुञ्ज ४१। क्रोधी ४२। वधिर ४३। धूर्त  
 ४४। क्रोधी ४५। नट ४६। सदाशी ४७। दुष्ट ४८। वेदपारगामी ४९। व्याख्याता १५०।  
 गायक ५१। श्रीमान् ५२। सर्वजनप्रेमी ५३। तालज्ञ ५४। विद्वान् १५५। ये १५५ श्रीयोग नाम  
 के योग हैं। विषमराशि के नवाश में क्रम से, समराशि के नवाश में विपरीत क्रमसे जानना। चर  
 राशि में क्रम से, स्थिर राशि में विपरीत क्रम से द्विस्वभाव राशि में अर्द्धभाष में गणना  
 करनी चाहिए। श्लोक २१ से ४० तक।

षष्ठ्यो तु गुणा प्रोक्ता प्राग्ज्योत्तरादिका ॥ मेयादृक्मते राह केतुर्पाति द्यात्कना

॥४१॥ ऋक्षसंध्यंतरे जातः प्रष्टाऽसौ त्रिपते मृशम् ॥ केतुराहुस्तियते राशौ भसंधी मरणं  
 भवेत् ॥४२॥ इतरैषां त्रयाणां च प्रकाशे व्याधिपीडितः ॥ दुर्बलो बुद्धिहीनश्च जायते न मृतो  
 यदि ॥४३॥ कलाशराशितोऽरिष्टे नक्षत्रारिष्टसंभवे ॥ पित्रादीनां सुतस्यापि तद्वशाच्चिंतयेत्सुधीः  
 ॥४४॥ पापशत्रुप्रहाक्रांता भावास्तद्वृष्टिसंयुताः ॥ सौम्यपापादयश्चैवं शुभाशुभफलप्रदाः ॥४५॥  
 एकद्वित्रिचतुः पंचपदसप्ताष्टाकदिग्धराः ॥ सूर्येन्दुनृपमूर्च्छेन्द्रनृपमार्कनृपा जिनाः ॥४६॥  
 पंचाष्टवसुमृतेषु सुरदंताजिनाद्वयः ॥ नखास्त्रिंशत्सखेदाः षट्सप्ततिः षष्टिरद्विपुक् ॥४७॥  
 नवतिश्च शत मूर्च्छाजिना दंता जिना दिशः ॥ एव नवशत प्रोक्ताः क्रमादेवं तु तत्र तु ॥४८॥  
 पूर्वपूर्वयुता संख्या लक्ष्मीयोगफलप्रदा ॥ नक्षत्रे राशिचक्रे तु दिवसे वामतः स्मृता ॥४९॥

(प्रश्नकालिक कल्पित राहु केतु की गति)

राहु मेष से विपरीत क्रम से तथा केतु वृष से क्रम से चलता है ॥४१॥ राहु केतु का प्रश्नकाल के लग्न में योग हो तो प्रश्नकर्ता का मरण जानना। धूम, कार्मुक, परिवेष का भी यही फल जानना ॥४२॥४३॥

पिता भ्राता आदि का शुभाशुभ विचार कहा जाता है-

षोडशांश से या नक्षत्र (पूर्वकथित) से अथवा भावग्रह सम्बन्ध से नीचे लिखी सख्या के योग में शुभग्रह सम्बन्ध से शुभ और अशुभग्रह सम्बन्ध से अशुभ फल समझना चाहिए। योग सख्या ये हैं १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २१, २२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६९, ७०, ७१, ७२, ७३, ७४, ७५, ७६, ७७, ७८, ७९, ८०, ८१, ८२, ८३, ८४, ८५, ८६, ८७, ८८, ८९, ९०, ९१, ९२, ९३, ९४, ९५, ९६, ९७, ९८, ९९, १००, १०१, १०२, १०३, १०४, १०५, १०६, १०७, १०८, १०९, ११०, १११, ११२, ११३, ११४, ११५, ११६, ११७, ११८, ११९, १२०, १२१, १२२, १२३, १२४, १२५, १२६, १२७, १२८, १२९, १३०, १३१, १३२, १३३, १३४, १३५, १३६, १३७, १३८, १३९, १४०, १४१, १४२, १४३, १४४, १४५, १४६, १४७, १४८, १४९, १५०, १५१, १५२, १५३, १५४, १५५, १५६, १५७, १५८, १५९, १६०, १६१, १६२, १६३, १६४, १६५, १६६, १६७, १६८, १६९, १७०, १७१, १७२, १७३, १७४, १७५, १७६, १७७, १७८, १७९, १८०, १८१, १८२, १८३, १८४, १८५, १८६, १८७, १८८, १८९, १९०, १९१, १९२, १९३, १९४, १९५, १९६, १९७, १९८, १९९, २००, २०१, २०२, २०३, २०४, २०५, २०६, २०७, २०८, २०९, २१०, २११, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २१९, २२०, २२१, २२२, २२३, २२४, २२५, २२६, २२७, २२८, २२९, २३०, २३१, २३२, २३३, २३४, २३५, २३६, २३७, २३८, २३९, २४०, २४१, २४२, २४३, २४४, २४५, २४६, २४७, २४८, २४९, २५०, २५१, २५२, २५३, २५४, २५५, २५६, २५७, २५८, २५९, २६०, २६१, २६२, २६३, २६४, २६५, २६६, २६७, २६८, २६९, २७०, २७१, २७२, २७३, २७४, २७५, २७६, २७७, २७८, २७९, २८०, २८१, २८२, २८३, २८४, २८५, २८६, २८७, २८८, २८९, २९०, २९१, २९२, २९३, २९४, २९५, २९६, २९७, २९८, २९९, ३००, ३०१, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३०६, ३०७, ३०८, ३०९, ३१०, ३११, ३१२, ३१३, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३१८, ३१९, ३२०, ३२१, ३२२, ३२३, ३२४, ३२५, ३२६, ३२७, ३२८, ३२९, ३३०, ३३१, ३३२, ३३३, ३३४, ३३५, ३३६, ३३७, ३३८, ३३९, ३४०, ३४१, ३४२, ३४३, ३४४, ३४५, ३४६, ३४७, ३४८, ३४९, ३५०, ३५१, ३५२, ३५३, ३५४, ३५५, ३५६, ३५७, ३५८, ३५९, ३६०, ३६१, ३६२, ३६३, ३६४, ३६५, ३६६, ३६७, ३६८, ३६९, ३७०, ३७१, ३७२, ३७३, ३७४, ३७५, ३७६, ३७७, ३७८, ३७९, ३८०, ३८१, ३८२, ३८३, ३८४, ३८५, ३८६, ३८७, ३८८, ३८९, ३९०, ३९१, ३९२, ३९३, ३९४, ३९५, ३९६, ३९७, ३९८, ३९९, ४००, ४०१, ४०२, ४०३, ४०४, ४०५, ४०६, ४०७, ४०८, ४०९, ४१०, ४११, ४१२, ४१३, ४१४, ४१५, ४१६, ४१७, ४१८, ४१९, ४२०, ४२१, ४२२, ४२३, ४२४, ४२५, ४२६, ४२७, ४२८, ४२९, ४३०, ४३१, ४३२, ४३३, ४३४, ४३५, ४३६, ४३७, ४३८, ४३९, ४४०, ४४१, ४४२, ४४३, ४४४, ४४५, ४४६, ४४७, ४४८, ४४९, ४५०, ४५१, ४५२, ४५३, ४५४, ४५५, ४५६, ४५७, ४५८, ४५९, ४६०, ४६१, ४६२, ४६३, ४६४, ४६५, ४६६, ४६७, ४६८, ४६९, ४७०, ४७१, ४७२, ४७३, ४७४, ४७५, ४७६, ४७७, ४७८, ४७९, ४८०, ४८१, ४८२, ४८३, ४८४, ४८५, ४८६, ४८७, ४८८, ४८९, ४९०, ४९१, ४९२, ४९३, ४९४, ४९५, ४९६, ४९७, ४९८, ४९९, ५००, ५०१, ५०२, ५०३, ५०४, ५०५, ५०६, ५०७, ५०८, ५०९, ५१०, ५११, ५१२, ५१३, ५१४, ५१५, ५१६, ५१७, ५१८, ५१९, ५२०, ५२१, ५२२, ५२३, ५२४, ५२५, ५२६, ५२७, ५२८, ५२९, ५३०, ५३१, ५३२, ५३३, ५३४, ५३५, ५३६, ५३७, ५३८, ५३९, ५४०, ५४१, ५४२, ५४३, ५४४, ५४५, ५४६, ५४७, ५४८, ५४९, ५५०, ५५१, ५५२, ५५३, ५५४, ५५५, ५५६, ५५७, ५५८, ५५९, ५६०, ५६१, ५६२, ५६३, ५६४, ५६५, ५६६, ५६७, ५६८, ५६९, ५७०, ५७१, ५७२, ५७३, ५७४, ५७५, ५७६, ५७७, ५७८, ५७९, ५८०, ५८१, ५८२, ५८३, ५८४, ५८५, ५८६, ५८७, ५८८, ५८९, ५९०, ५९१, ५९२, ५९३, ५९४, ५९५, ५९६, ५९७, ५९८, ५९९, ६००, ६०१, ६०२, ६०३, ६०४, ६०५, ६०६, ६०७, ६०८, ६०९, ६१०, ६११, ६१२, ६१३, ६१४, ६१५, ६१६, ६१७, ६१८, ६१९, ६२०, ६२१, ६२२, ६२३, ६२४, ६२५, ६२६, ६२७, ६२८, ६२९, ६३०, ६३१, ६३२, ६३३, ६३४, ६३५, ६३६, ६३७, ६३८, ६३९, ६४०, ६४१, ६४२, ६४३, ६४४, ६४५, ६४६, ६४७, ६४८, ६४९, ६५०, ६५१, ६५२, ६५३, ६५४, ६५५, ६५६, ६५७, ६५८, ६५९, ६६०, ६६१, ६६२, ६६३, ६६४, ६६५, ६६६, ६६७, ६६८, ६६९, ६७०, ६७१, ६७२, ६७३, ६७४, ६७५, ६७६, ६७७, ६७८, ६७९, ६८०, ६८१, ६८२, ६८३, ६८४, ६८५, ६८६, ६८७, ६८८, ६८९, ६९०, ६९१, ६९२, ६९३, ६९४, ६९५, ६९६, ६९७, ६९८, ६९९, ७००, ७०१, ७०२, ७०३, ७०४, ७०५, ७०६, ७०७, ७०८, ७०९, ७१०, ७११, ७१२, ७१३, ७१४, ७१५, ७१६, ७१७, ७१८, ७१९, ७२०, ७२१, ७२२, ७२३, ७२४, ७२५, ७२६, ७२७, ७२८, ७२९, ७३०, ७३१, ७३२, ७३३, ७३४, ७३५, ७३६, ७३७, ७३८, ७३९, ७४०, ७४१, ७४२, ७४३, ७४४, ७४५, ७४६, ७४७, ७४८, ७४९, ७५०, ७५१, ७५२, ७५३, ७५४, ७५५, ७५६, ७५७, ७५८, ७५९, ७६०, ७६१, ७६२, ७६३, ७६४, ७६५, ७६६, ७६७, ७६८, ७६९, ७७०, ७७१, ७७२, ७७३, ७७४, ७७५, ७७६, ७७७, ७७८, ७७९, ७८०, ७८१, ७८२, ७८३, ७८४, ७८५, ७८६, ७८७, ७८८, ७८९, ७९०, ७९१, ७९२, ७९३, ७९४, ७९५, ७९६, ७९७, ७९८, ७९९, ८००, ८०१, ८०२, ८०३, ८०४, ८०५, ८०६, ८०७, ८०८, ८०९, ८१०, ८११, ८१२, ८१३, ८१४, ८१५, ८१६, ८१७, ८१८, ८१९, ८२०, ८२१, ८२२, ८२३, ८२४, ८२५, ८२६, ८२७, ८२८, ८२९, ८३०, ८३१, ८३२, ८३३, ८३४, ८३५, ८३६, ८३७, ८३८, ८३९, ८४०, ८४१, ८४२, ८४३, ८४४, ८४५, ८४६, ८४७, ८४८, ८४९, ८५०, ८५१, ८५२, ८५३, ८५४, ८५५, ८५६, ८५७, ८५८, ८५९, ८६०, ८६१, ८६२, ८६३, ८६४, ८६५, ८६६, ८६७, ८६८, ८६९, ८७०, ८७१, ८७२, ८७३, ८७४, ८७५, ८७६, ८७७, ८७८, ८७९, ८८०, ८८१, ८८२, ८८३, ८८४, ८८५, ८८६, ८८७, ८८८, ८८९, ८९०, ८९१, ८९२, ८९३, ८९४, ८९५, ८९६, ८९७, ८९८, ८९९, ९००, ९०१, ९०२, ९०३, ९०४, ९०५, ९०६, ९०७, ९०८, ९०९, ९१०, ९११, ९१२, ९१३, ९१४, ९१५, ९१६, ९१७, ९१८, ९१९, ९२०, ९२१, ९२२, ९२३, ९२४, ९२५, ९२६, ९२७, ९२८, ९२९, ९३०, ९३१, ९३२, ९३३, ९३४, ९३५, ९३६, ९३७, ९३८, ९३९, ९४०, ९४१, ९४२, ९४३, ९४४, ९४५, ९४६, ९४७, ९४८, ९४९, ९५०, ९५१, ९५२, ९५३, ९५४, ९५५, ९५६, ९५७, ९५८, ९५९, ९६०, ९६१, ९६२, ९६३, ९६४, ९६५, ९६६, ९६७, ९६८, ९६९, ९७०, ९७१, ९७२, ९७३, ९७४, ९७५, ९७६, ९७७, ९७८, ९७९, ९८०, ९८१, ९८२, ९८३, ९८४, ९८५, ९८६, ९८७, ९८८, ९८९, ९९०, ९९१, ९९२, ९९३, ९९४, ९९५, ९९६, ९९७, ९९८, ९९९, १०००।

शुभनित्रप्रहाक्रांता भावास्तद्वृष्टिसंयुताः ॥ द्वित्रिपच च षट् सप्त वसुनंददिशोऽद्वयः ॥५०॥  
 त्रिशदिशो नखाः षष्टिसूर्यमूर्च्छाजिनाजिना ॥ आकृतिभानिभाकारिप्रनखाश्चद. शत नखाः  
 ॥५१॥ त्रिंशत्सखेदा दिग्विधे शतं षष्टिः शत जिना. ॥ वेदाः सखेदाः पूर्वार्द्धे परार्द्धे प्राग्बदत्र  
 तु ॥५२॥

तथा ये योग भी विचारणीय है, २, ३, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ७, ३०, १०, २०, ६०, १२, २१, २४, २४, २१, २७, १२, ३, २०, २६, १००, २०, ३०, ४०, १०, १३, १००, ६०, १००, २४, ४, ४० राशि के पूर्वार्द्ध में क्रम से, और परार्द्ध में उत्क्रम से यदि उपर्युक्त योगसख्या प्राप्त हो तो अशुभ है ॥५० से ५२ तक ॥

एते योगबलाच्चैव केवल दुर्गतिप्रदाः ॥ दिनर्क्षं चक्रसख्याः स्युरादिनाध्यायसानिकाः ॥५३॥  
 सप्तविंशतिसप्तत्यां शते षट्पथा शतद्वये ॥५४॥ कुब्जः कलाशा मूकस्तु शतद्वयशतत्रये ॥५५॥  
 संहभे द्विशते जातः पंचमे पापसंयुते ॥ द्वित्रिपचाष्टदिग्विधेनृपतिपृतिभूमय. ॥५६॥  
 नवदिग्मसुरैस्तानैस्तिपिविभाष्टकेः क्रमात् ॥ गुणेन वामतः प्रोक्तो सध्वयो श्रीसमन्वितः ॥५७॥

दिन की मूर्हत सख्या, नक्षत्र सख्या तथा राशिसख्या के योग से निम्नलिखित योग सख्या प्राप्त हो तो कुब्ज कुबडा होगा। योग सख्या ये हैं - २७, ७०, १००, ६०, २००, ६, ५०, २०, १६.

८०, ६०, २०, १००, ६०, २००॥ ये सख्या कुब्ज की और २००, ३००, १०००, २००० ये सख्या तथा पचमभाव पर पापदृष्टि हो तो मूक हो॥ और २, ३, ५, ८, १०, १३, १६, १८, १, ९, १०, २७, ३३, ४९, १५, १३, ८ ये सख्या हो तो धनी हो॥५३-५७॥

रविचंद्रतम पातकालेष्वरिभवेषु च ॥ पचाशीतिशते वेदे मनी द्वित्रिशते पुन ॥५८॥  
 खाब्धिपचसु दिग्भागे सहस्रे चात्रिचद्रे ॥ खणानि रूप विश्वाष्टत्रिचद्रक्षलूमिभे ॥५९॥  
 शताधिके च जातोस्मिन्बधिर पण्डितपुते ॥ कर्किवृश्चिकमीनागे तद्वाशीशाशके तथा ॥६०॥  
 पातकेत्वोश्च शत्रुसगतयोरशके पुन ॥ एकाद्वित्रिशतैर्वाविक्रमात्तस्तु सुमाजिता ॥६१॥  
 आकाशापूर्णधृतयो नि शेष सव्यसत्यके ॥ सदोषेऽन्तराशे तु जातस्यैतेऽपमृत्यव ॥६२॥

सूर्य, चन्द्र, राहु काल पात मे ६, ११ ८५, १००, ४ १४, २, ३, १००, ४०, ५, १०, १०००, ३०, १००, १३, ८, ३, १, इन योगो मे बधिर हो॥५८॥५९॥

कर्क, वृश्चिक, मीन के च० म० गु० स्वामी है, अत च० म० गु० की राशि मेप, कर्क वृश्चिक, धन मीन इन राशियो मे तथा पात मे एव शत्रुराशि के अश मे तीन सौ तक के अको से १८०० मे भाग देना, जब तक नि शेष न हो तब तक भाग देना। सव्य अक तुल्य अश यदि पापग्रह युक्त हो तो अपमृत्यु जानना॥६०॥६१॥६२ ॥

पचाशत षडावृत्या स्वल्पमाध्यचिरामुष ॥ क्रमेणोत्क्रमशस्ते तु धैराशिकविधानत ॥६३॥  
 खाक्ष्यद्वयस्तु षट्चराशस्त्रिशाशा खरसाप्रथ ॥६४॥ अष्टपद्ममेष कालहोरा सप्तदिनेषु च ॥  
 वेदेद्वा द्वादशाशा स्युर्नवाशा गजलेन्दव ॥६५॥ सप्ताशा वेदनागास्तु द्वेष्काणास्तु षड्द्वय ॥  
 अर्द्धहोरा जिना प्रोक्ता नक्षत्राणि च राशय ॥६६॥ भुजते च प्रहाश्रैव मनुसख्याश्च भुजते ॥  
 राशयश्च प्रहाश्रैव नक्षत्राणि च भुजते । रव्यादिसिधिसिपर्यतानव भूमेद्रकार्मुकी ॥पातश्चपरिवेषश्च  
 कालश्चेति चतुर्दश ॥६८॥

पचास की सख्या से ६ बार आवृत्ति करना। प्रथमावृत्ति मे अल्प मध्य, दीर्घ और वाद २ आवृत्ति मे दीर्घ, मध्य, अल्प अथवा प्रथमावृत्ति मे अल्पायु द्वितीयावृत्ति मे मध्यायु एव तृतीयावृत्ति मे दीर्घायु वाद दीर्घ मध्य अल्प क्रम से आयु का निर्णय करना॥६३॥

चौदह ग्रहो के तथा नवग्रहो के अश कहते हैं -

षट्चरण को १२ राशि सख्या से गुणा करने से ७२० होते हैं। इसी प्रकार त्रिशाश वे ३६०, कालहोरा के १६८, द्वादशाश के १४४, नवाश के १०८, सप्ताश के ८४, द्वेष्काणके ३६, होरा के २४, यह क्रम से नवग्र, राशि सू० १ च० २ म० ३ बु० ४ वृ० ५ शु० ६ श० ७ रा० ८ के० ९ धूम १० इन्द्रचाप ११ पात १२ परिवेष १३ काल १४ इनके अगो मे पूर्वोक्त फल जानना॥६४॥६५॥६६॥६७॥६८॥

तेषां प्रादुर्भवे क्षेममन्यदा तु नवग्रहाः। दिवात्पच मगात् षट् च पचाद्रद्वादशादपि ॥६९॥ स्युस्तत्त  
 क्रमात्प्रोक्तास्तत्तदशेषु सर्वदा ॥ अशिनो पचदश च नखास्तत्त्व तयामरा ॥७०॥ सभ्यशाश्र  
 षडशोनाश्रवारिराश्रक्रमादथ ॥ रात खेष्विदथ प्रोक्ता विनादीतनयोऽपि च ॥७१॥

अब नक्षत्रों से सख्या कहते हैं, अश्विनी से ५ पूर्वा से ६ आर्द्रा से ५ शतभिषा से ४ अनुराधा से ७ इस क्रम से तारासख्या जानना। कलाश सख्या २, १५, २०, २५, ३३, ३३, ३३, ४०, १००, १५०, यह भाग काल के ध्रुवाक है ॥६९॥७०॥७१॥

कलाशास्त्रार्थहोराशभोगकाल प्रकीर्तित ॥ प्रमाणराशयश्चैते भागहारा कलात्मका ॥७२॥  
तत्तदशकला इच्छाराशयो गुणराशय ॥ कटुको मधुरस्तिक्त कषायो लवणाम्बु ॥७३॥ कलाशे  
क्रमशो गण्था षष्ट्यशे व्युत्क्रमात्स्मृताः ॥ त्रिंशशे तु कषायादि कालहोराशके पुन ॥७४॥  
तिक्तानि द्वादशाशेषु मधुरानि नवाशके ॥ अम्लादि मुनिभागे तु द्रेष्काणे मधुरादित ॥७५॥

अब इन अंशों में उत्पन्न जातक का फल कहते हैं -

क्रम से-कटुक, मिष्ट, तिक्त कषाय, लवण, अम्ल ये ब्रह्म से रस कहे हैं। त्रिंशश में कषाय से तिक्त तक गणना करना, कालहोरा में तिक्त से, द्वादशाश में मधुर से नवाश में अम्ल से सप्ताश, होरा तथा द्रेष्काणमें मधुर से गणना करना। फल जातककी प्राप्ति रखते शक्ति का ज्ञान ॥७२ से ७५ तक ॥

अर्धहोराशके तद्वज्जातस्यैवैव जायते ॥ वेदाष्टदशभैराने प्रपष्ट्यशे च भास्करे ॥७६॥  
त्रिपट्नवत्रिंशत्कार्थिजिनदत्तसुरा क्रमात् ॥ नवदिग्भैर्जिनार्कश्च सूर्यस्तानैस्त्रिपचभि ॥७७॥  
पचाशद्भू क्रमाद्गुण्या वष्यावध्या प्रकीर्तिता ॥ त्रिवेदाद्यकविश्वेद्रनखच्छदोजिनायमा ॥७८॥  
पचाशच्च शत पूर्वयुता मृतमुता स्मृता ॥ पुत्राणां तु कलाशे तु शेषे जाता मृता द्विज ॥७९॥ द्वादशे  
च चतुर्विंशे चतुस्त्रिंशे सुराशके ॥ द्विसप्तशे नवाशशेषे षष्ट्युत्तरशताशके ॥८०॥ षट्शते च सहस्रे  
च सखाहीन्द्रशके पुन ॥ द्वाशतिष्यशके जातो भवेत्प्रजितो नर ॥८१॥

षष्ट्यश सजात कन्या का बन्ध्यायोग ४८ १२ २७ ३ इन अंशों में सूर्य हो तो बन्ध्या जानना। तथा ३१६।९।३।०।१२।१४।२४।३२।३३ इनमें ब्रह्मण ९।१०।२७।२४।१२।१२।४९।३।५।५० इन षष्ट्यश में उत्पन्न कन्या बन्धनीया होती है ॥७६॥७७॥ तथा ३।४।७।९।१३।१४।२०।२६।२४।२।५०।१०० इन अंशों में पूर्वोक्त मख्या योग प्राप्त सूर्य में मृतवत्मा जानना ॥७८॥

मृत पुत्रज्ञान के लिए-षोडशाश में इन अंशों पर सूर्य में विचार करना ॥७९॥  
सन्यासयोग-१२।२४।३३।७२।९।१६०।६००।१०००।१८००।१५।१० इन सख्या तुल्य अंशों में जन्म हो तो सन्यासी होता है ॥८०॥८१॥

गुरुशुक्रोदये राशौ परमहसक ॥ शत्रुराशिगती ती चेदप्रकाशयुती तु वा ॥८२॥ अष्ट स्वातु  
तपा नै तु त्रिदशौ वा बहूवक ॥ रवौ जटाधर शैव कुजे नप्रोत्तन स्मृत ॥८३॥ मदे बीडोऽय  
यागमी स्याद्वाही केती तथैव च ॥ धूमै वापालिकश्रापे काले तु परिवेषने ॥८४॥ गूढपायो यथा  
लिपी कुलमार्गगतस्तथा ॥ षष्ट्यशे ऋत्तसप्तशे सार्ये पीण्डेद्रभाशके ॥८५॥ त्रिंशशे कालहोराशे  
तत्तदशाशकेऽपि च ॥ नव मूर्च्छागुराशे तु यथा दण्डितमे युत ॥८६॥ मुताशे क्षाम्प्रित्थिभ्यो

द्वादशारि नवांशके ॥ राश्यतारो तु सप्तारो ऋजसधृमांतिके ॥८७॥  
 मृगश्रुक्तिसिंहादिमीनतूलांशकादिभे ॥ अत्याशेषि च जातस्य षडर्थांशं जिते रवे ॥८८॥  
 द्वेष्कापेनार्थहोरायां त्रिसन्नेन नखेषु तु ॥ जातः प्रवर्जितश्रेषु सर्वत्रैक्युतेष्वपि ॥८९॥

(श्लोक ४४ से ८१ तक का भाग अनुपगुक्त है)

परमहंस योग-लग्न (जन्मलग्न में) गुरु या शुक्र हो तो जातक परमहंस होता है, यदि गुरु, शुक्र 'धूम' आदि अप्रकाश ग्रहयुक्त हो तो 'धर्मभ्रष्ट परमहंस' होता है। यदि गुरु, शुक्र, बुध ये तीनों जन्मलग्न में हों तो त्रिदण्डी सन्यासी होता है, अथवा बहूदक होता है। सूर्य हो तो शिवभक्त, मंगल हो तो दिग्म्बर, शनि हो तो बौद्ध तथा केतुयोग से भी बौद्ध और 'धूम' योग हो तो कापालिक एव चाप, कास, परिवेष हो तो क्रमशः गुप्तपापी, पावण्ड्री, कौतिक (वाममार्गी) होता है ॥८२॥८३॥८४॥

सन्यासी के अन्य योग-जन्मलग्न के पाठ्यश में आश्लेषा, रेवती, ज्येष्ठा, नक्षत्रों के अश में और विशाख में या कालहोरा, नवाश में अथवा राशि के अन्तिम अश में, सप्ताश में नक्षत्रसंधि में (इन उपर्युक्त अशों में) यदि मकर, कर्क, वृश्चिक, सिंह, मेष, मीन, तुला के भादि या अन्त के अश में जन्म हो तो सन्यासी होता है। अथवा २५।१६।२४।३२ इन अशों में इनकी होरा या द्वेषकाण में या इन पूर्वोक्त सख्या में एक योग करने से जो अंक हो उस सख्या में जन्म हो तो सन्यासी होता है ॥८५ से ८९ तक॥

पापप्रकाशासंयोगे कलत्रे त्वष्टुम भवेत् ॥ रघौ वध्या तु शीतानी क्षीणे तु व्यभिचारिणी ॥९०॥ कुजे तु श्रियते भन्दे दुर्भगा राहस्यपुते ॥ परदाररतिः स्वैयनियेकाभावतोऽमुता ॥९१॥ धूमे विवाहहीनः सन श्रियते कार्मुके सति ॥ परिवेषे तु दुःशीता केली वध्याऽसती भवेत् ॥९२॥ कालेऽभावस्तु पापे तु गर्भदावेण समुता ॥ सुशीता स्त्रीप्रसूता च पूर्यमाणे तु शीतानी ॥९३॥ बुधे त्वपुत्रा जीवे तु पुण्युक्ता सुपुत्रिणी ॥ शुके सौभाग्यसयुक्ता श्रीमती पुत्रिणी भवेत् ॥९४॥

स्त्रीके लक्षण-सप्तमभावमें पापग्रह या धूमादि नेष्ट ग्रह हो तो स्त्री दुष्टा होती है। अब प्रत्येक ग्रह के अनुसार अलग ० फल कहा जाता है। सूर्य से बन्ध्या, शीथ चन्द्रमा सं व्यभिचारिणी, मंगल से स्वीनाश, शनि से दुभागिनी, राहु से परदार रति, धूम हो तो अभिवाहित मृत्यु, कार्मुक हो तो पूर्वोक्त फल, परिवेष हो तो दुःशीता, पात हो तो गर्भश्राविनी, केतु हो तो बन्ध्या या दुष्टा, काल हो तो स्त्री हानि, पूर्ण चन्द्र मन्थन स्थान में हो तो कन्या प्रजावती, बुध हो तो अपुत्रा, गुरु हो तो मुपुत्रा, शुक्र हो तो सौभाग्यवती होती है ॥९० में ९४ तक॥

एव्येयं दशमे पापपुण्यकर्मरतो भवेत् ॥ पवासङ्गिः सुरैस्तत्त्वैर्नृपैश्च मुनिभिर्हैः ॥९५॥ अष्टमि षड्भिरैवाथ सत्तादिभिरनुकमात् ॥ पत्नारिभिश्च होराः स्युरैकोत्तरचरैरथ ॥९६॥ पापपुण्यक्रियाकर्ता क्रमात्सन्ध्यातरराजः ॥ आर्षतिरक्षरा शोक्ता पापपुण्यक्रिया रतिः ॥९७॥

दशमभाव का विशेष फल-दशम भाव शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो शुभ फल, पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल होता है। शुभ, पाप, समान हो तो मिश्र फल, न्यूनाधिक हो तो जो अधिक हो उसका विशेष फल होता है। तथा जो अश्रु दिये जाते हैं ५०, ३३, २५, १६, ७, ८, ९, ६, ५ और इनमें १ १ जोड़ने पर जो सख्या हो उसमें पापग्रह आदि के योग से शुभाशुभ कर्मफल जानना ॥१५॥१६॥१७॥

मिथे तु मिथ त्वधिकबशादेव तु निर्णय ॥ वर्णाश्रमाचारविहीनबुद्धि स्त्रिया च पापी परदारसक्त ॥ क्षेत्रापहारी च परस्वसर्वं निहत्य योग सकल करोति ॥१८॥ परस्य चोत्कर्षविघातकारी विपाश्रिद पातककर्मकृच्च ॥१९॥ ग्रामस्य देशस्य च विप्रबर्षघनापहारी व्यसने कृतार्थ ॥ मृत्तिप्रद कर्म करोति सूर्यात्पाप्यप्रकाशा सितशीतयोश्च ॥१००॥ दयारतो दानरत मुतेजा स्वाचारपाती विजितेत्रियश्च ॥ इष्ट च पूर्त च करोति जीवे शुके वदान्य कृतदारशील ॥१०१॥

शुभ योग में शुभ फल अशुभ योग में अशुभ फल होता है। अशुभ योग का फल दिखाते हैं-वर्ण और आश्रम के धर्म से हीन परम्परी नगद, दूसरे का धन तथा भूमि हरण करनेवाला, पर निन्दक विप देनेवाला ग्राम जलानेवाला, ब्राह्मणों का धन हरनेवाला मूर्ख के योग में हत्यापारी युध में पापकर्मी होता है। चन्द्र योग से विख्यात और यशस्वी भाल ग दयावान् गुरु में इष्टापूर्त बर्म करी शुक्र से दानी मनि से स्त्री स्वभाव वाला होता है ॥१८ ग १०१ तव ॥

मेरे त्याग्यागमनप्रियश्च त्वभक्ष्यभक्ष्यो वृषभे सुशील ॥ देवेशदेवालवधर्मधारी युग्मे विरक्तोऽप्यघनैर्विहीन ॥१०२॥ छात्रे च तोत्र च करोति पाप परस्वहृतापि च पूर्तशरी ॥ सिंहे तु देवस्य विघातकारी पापोनके धर्मरति मुहृत्य ॥१०३॥ जूके परेषा धनदश्च पूर्त करोति चापैरपि च वृशिके तु ॥ परस्वहर्ता परदारमक्तो मृगेऽपि चैव घटभे वृत्त ॥१०४॥

मेघ राशि में जन्म हो तो अगम्यागामी अभक्ष्य भक्षणशील। वृष राशि में जन्म हो तो श्रेष्ठ स्वभाव देवभक्त। मिथुन में वैराग्य गम्यग्र दग्दि। बर्ष में पापी और पौर तथा यावडी, बूवा बनाने। मित्र में दवस्थान का नाश कर। कन्या में धर्म बर्मन्त। नृत्ता में दानी। धन में महादानी। वृशिक में पर मन्तोपी परम्परी नगद। मकर में दानी। कुम्भ में दक्षिणा तथा उपवागी। मीन में तान्त्र आदिक श्रेष्ठ बर्म पर्ता हो ॥१०० ग १०६ तव ॥

पक्षस्य कर्ता श्रपभेतर्षेव पुतादिबारी बहूयोजक स्यात् ॥ नर्तको गायको बदी गिन्यो याश्चापरस्तत ॥१०५॥ गायको नर्तको भारवाही प्रणतिपोजक ॥ प्रेष्यश्च भाग्यो बदी यावको घातुवादक ॥१०६॥ वेदाध्यायी स्मृतिगान् शीघ्रश्रमत्रतधम ॥ शिष्यतेतनकर्ता च मीमांसान्यायतर्षवित् ॥१०७॥ पक्षरात्र्यर्षगास्त्रज्ञ इन्द्रिगामपुराणविन् ॥ आपुत्र्यपमेतुश्च आपुर्वेदवृत्तधम ॥१०८॥

सूर्यादि ग्रहो का कलाश अनुसार फल-क्रम से प्रति अण नर्तक १, गायक २, बदी ३, शिल्पी ४, याचक ५, गायक ६, नर्तक ७, भारवाही ८, नम्र ९, दूत १०, भारवाही ११, बदी १२, याचक १३, धातुवादी १४, वेदाध्ययनशील १५, स्मृति शास्त्रज्ञ १६, शिवभक्त १७, शिल्पी अथवा लेखक १८, मीमांसक या नैयायिक १९, आगम तनी २०, पौराणिक २१, शस्त्र करनेवाला २२, वैद्य २३, यह फल सूर्य से शनि पर्यन्त ग्रहो के कालाश क्रम से जानना ॥१०५ मे १०८ तक॥

अर्ककालाशतश्चैव क्रमादेव प्रकीर्तिता ॥ अध्यापकस्तु वेदाना सेवक शास्त्रपाठकः ॥१०९॥  
 अश्वसादीमसादी च लिपिलेखनतत्पर ॥ मद्रुराजघको नद्यो देशिको याज्ञिको गुरुः ॥११०॥  
 दानशीलस्तु तृणको ग्रामणीर्व्यसनाधिप ॥ आरामकरणीद्युक्तः पुष्पविक्रयतत्परः ॥१११॥  
 राजकार्यरत सेनालतापुष्पफलकपी ॥ नृत्यगीते च कुशलस्ताम्रफलविक्रयी ॥११२॥  
 निर्यद्विविक्रयकरो ग्रामाणामधिकारकुत् ॥ बदी च देशिक प्राज्ञो धूपकश्रीवधिक्रिय ॥११३॥  
 कायस्य करणोद्युक्तो भारको भाठविक्रयी ॥ कृषिकृच्च वणिग्धातुचर्मकारी च कर्षकः ॥११४॥  
 शास्त्राधिकारी विज्ञानो पुस्तको रजको वणिक् ॥ वेदवेदागवेता च शास्त्रज्ञो बदिपाठकः ॥११५॥  
 ग्रामणोरधिकारी च गणको दडकारक ॥ मारकश्रेष्ठनाहारी फलमूलादिविक्रयी ॥११६॥  
 शातकृत्यवर्णकारी च कृषिकृत्पलविक्रयी ॥ याज्ञकोऽध्यापकोऽध्यक्ष प्रतिग्रहपरफली ॥११७॥

षष्ठ्यण फल-वेद पढ़ना १, सेवा करना २, शास्त्र पढ़ना ३, पुंडसवार ४, पीलवान ५, लेखक ६, साहीम ७, नर्तक ८ अध्यापक ९, ऋत्विज १०, गुरु ११, दानी १२, विक्रयकारी १३, चौधरी १४, दुसदाता १५, माली १६, माली १७, राजकर्मचारी १८, बनस्पति व्यवसायी १९, नृत्यगीत कुशल २०, फल व्यापारी २१, निन्दित व्यापारी २२, ग्रामाधिकारी २३, राजसेवक २४, देशिक २५, बुद्धिमान २६, मौगन्धिव २७, पसारी २८, बहुरूपिया २९, भारवाही ३०, धातु व्यापारी ३१, कृषक ३२, व्यापारी ३३, धातुचर्म व्यापारी ३४, कृषक ३५, शास्त्राधिकारी ३६, अनुभवी ३७, ग्रन्थ चुम्बक ३८, गगरेज ३९, व्यापारी ४०, महाविद्वान ४१, शास्त्री ४२, राजसेवक ४३, चौधरी ४४, ग्रामाधिकारी ४५, गतिगज ४६, जज ४७, जल्लाद ४८, काष्ठ चोर ४९, फल विक्रयी ५०, ज्ञानकर्मी ५१, मुनार ५२, कृषक ५३, नाम विक्रयी ५४, ऋषिष् ५५, अध्यापक ५६, हाकिम ५७, दानी ५८, अन्वेषणारी ५९, मम्मनित ६०। विषम राशि मे ब्रम से और सम राशि मे उत्क्रम मे यह फल होने है ॥ १०९-११७॥

इमाद्गुप्तक्रमतश्चैव षष्टिः स्यादश्वेषु तु ॥ रवीसहरिविष्ण्वीशदुर्गाणपतिष्वया ॥११८॥  
 चन्द्रिकाया च चट्टेराचद्रविष्णवीशपाववे ॥ त्रिपुरावेदिराविष्णुहरिशकराश्वसु ॥११९॥  
 सेत्रेणे गण्डे स्वदे शास्त्ररि चतुणोऽधरे ॥ विद्यापहरणोद्युक्ते त्रिने मुष्टे इमातया ॥१२०॥  
 ज्वरभ्रूष्मातिसारागुजडरम्याधिभूतरक्षु ॥ मेरुग्रहणिपटिहापावकावनिगस्त्रन ॥१२१॥  
 बाह्यरविद्यान्वां तु सूर्यात्कामेतिमे मृतिः ॥ रागी पहायवे नितवानभ्रूष्मत्र-  
 रोगत ॥१२२॥

त्रिशाश फल—त्रिशाश मे क्रमानुसार प्रत्येक अश मे जातक किस देवता का भक्त होगा यह कहा जाता है। प्रथम अश मे सूर्य भक्त। द्वितीय मे महादेव। तृतीय मे हरि। चतुर्थ मे विष्णु, पंचम मे ब्रह्मा। षष्ठ मे दुर्गा। सप्तम मे गणपति। अष्टम मे चण्डिका। नवम् मे चण्डिका। दशम मे महादेव। ग्यारहवे मे चन्द्र। १२ मे विष्णु। १३ मे ईश। १४मे अग्नि। १५ मे त्रिपुरा। १६ मे इन्दिरा। १७ मे विष्णु। १८ मे हरि। १९ मे तथा २० मे शंकर। २१ मे क्षेत्रपाल। २२ मे गरुडा। २३ मे स्कन्द। २४ मे सरस्वती। २५ मे ब्रह्मा, २६ मे ईश्वर। २७ मे गरुडा। २८ मे जैना। २९ मे बौद्ध। ३० मे सर्वमतावलम्बी होता है॥११८॥११९॥१२०॥

मरण निमित्त—सूर्य से काल नामक ग्रह तक १४ ग्रह होते है। जन्मराशि मे जो ग्रह हो उसके अनुसार क्रम से ये रोग जानना। सूर्य से ज्वर, चन्द्र से कफ, अतिसार ३, रक्तव्याधि ४, उदरव्याधि ५, मूलव्याधि ६, प्रमेह ७, सप्रहिणी ८, पित्तक रोग ९, अग्नि १०, अबनी ११, वास्य १२, अग्नि १३, ज्वर या विष १४ ॥१२१॥

प्रकारान्तर—सूर्य से पित्त, चन्द्र से वायु, मंगल से कफ, बुध से पित्त, गुरु से वायु, शुक्र से कफ, शनि से कफ, राहु से पित्त, केतु से वायु रोग से मृत्यु होती है॥१२२॥

पित्तवातकफश्लेष्मपित्तवातः क्रमात्स्मृतः ॥ ज्वरसन्निपातजठरामयात्रफणामप्रमेहजलकाज्जलाग्निः ॥ ज्वरसन्निपाततोत्रभवेन्मृतिः क्रियपूर्वकस्तु निघ्ननाशकेषु तु ॥१२३॥गुल्मोदरज्वरविषाग्निजलादिपातरास्त्रादिपातगुदकीलभगदरोत्या ॥रक्तातिसारजठरज्वरमेहगुल्मकुष्ठान्तिसारपित्तकादिभिरऽमरीयै ॥१२४॥ शूलाशनिक्षतजपित्तसमावृतानि शीतज्वरप्रभृतिराशिघनात्क्रमेण ॥१२५॥ कालादिरव्यतसगोक्तजाता चेद्गुर्गपातपतनज्वरसन्निपातात् ॥ गोपातसत्वजनिता च मृतिः क्रमेण वामेन चापि पुनरेवमर्थाशकेषु ॥१२६॥

नवाश के कारण मृत्यु के निमित्त—प्रथम नवाश मे जन्म हो तो ज्वर से मृत्यु। २ मे सन्निपात से। ३ मे उदर रोग से। ४ मे अन्त्र रोग से। ५ मे प्रमेह मे, ६ मे जल से, ७ मे अग्नि से, ८ मे ज्वर से, ९वे नवाश मे सन्निपात से मृत्यु होती है॥१२३॥

जन्मलग्नराशि से मरणनिमित्त—मेघ मे गुल्मरोग से, वृष मे ज्वर या उदररोग से, (आगे क्रम से) विष, अग्नि, जल से ३, शस्त्र से ४, गुदरोग या भगदर से ५, रक्तातिमार, ज्वर या उदररोग से ६, प्रमेह या गुल्मरोग से ७, कुष्ठ या अतिसार से ८, पित्तक या अबमरी से ९, शूल या वक्षपात से १०, पित्तरोग से ११, शीतज्वर मे १२ मृत्यु होती है॥१२४॥१२५॥

कालादि सूर्यान्त व्युत्क्रम गणना मे मरणनिमित्त—कालग्रह के अश मे दुर्गपात से १ (आगे क्रम से) पतन से २, ज्वर से ३, सन्निपात से ४, वृषभनिमित्त मे ५, पतन मे ६, प्राणीनिमित्त से ७।८, वृषभनिमित्त से ९।१०, सन्निपात से ११, ज्वर मे १२, पतन मे १३, दुर्गपात से १४, ये १४ कारण ग्रह तथा उनके नवाश के भी जानना चाहिए॥१२६॥

आचतुर्यात्सिन्धूतानि त्रयो द्वादश हारकाः ॥ अथ स्वादष्टमात्पट्टिः पंचाष्टौ दशमाततः ॥१२७॥ पञ्चपञ्चाशदन्त्याः स्युस्त्रयोरत्रानि हारकाः ॥ एषादशोऽष्टपट्टिः स्वाताप्तकाष्ठाश्च



हारका ॥१२८॥ त्रयोदशे च ताना स्युर्द्विसप्ततिरथो मनौ ॥ रश्मय पञ्चदश  
चेत्यचसप्ततिरेव च ॥१२९॥ वेदपचरसा हारा दश द्वादशरश्मय ॥ आश्रितः क्रमादब्दा  
अशीतिरथ सप्तति ॥१३०॥ सैषत्र द्वादश्य द्वादशिवेदसप्तति ॥ षष्टिरष्टाद्विरष्टेषु  
पञ्चसप्ततिरद्विभुक् ॥१३१॥ एकाशीतिश्चतुर्भुक्ता चत्वारिंशत्समृता समा ॥ सप्ताकरसतर्केषु  
नवाद्विरसपट्करा ॥१३२॥

रश्मिसंख्या से वर्णनियम- तथा हार-रश्मिसंख्या ४ से ३० तक वर्ष संख्या तथा  
हारसंख्या-चक्र में देखे ॥श्लोक १२७ से १३२ तक॥

### अथ रश्मिवर्षाहाराज्ञानचक्रम्

रश्मय	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
वर्षा०	०	०	०	५०	५०	५०	५०	६०	०	५५	६८	०	४९	७५	७५
हार- कोका	०	०	०	३	३	३	३	५	०	३	७	०	७२	५४	१०
०	०	०	०	१२	१२	१२	१२	८	०	९	१०	०	०	६	११
रश्मय	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
वर्षाणि	८०	७०	५०	४०	७	७४	७४	६०	७८	५८	७५	७७	८१	८५	४०
हार- कोका	७	९	६	६	५	९	७	६	६	२	११	१०	९	६	१२

यदा विद्वन्वतर्काकां अष्टहारा प्रमादमौ ॥ यदाकंमनुविश्वष्टिः सप्तारैध्वर्चदिवसरा  
॥१३३॥ वेदेषुर्बेदकाका स्युरगहारा प्रकीर्तिता ॥ पचाना च चतुर्षा च ततत्पण्यवति  
गतम् ॥१३४॥ दश यदा नवा मूर्छा हारा स्यु क्रमशः स्मृता ॥ जते रसाईरद्वारा  
दशविशोत्तर शतम् ॥१३५॥ एते हारा प्रमात्प्रोक्ता केवाचित्परमापुष ॥  
केवाचिदमयोयोगदलमब्दा विशेषत ॥१३६॥

अमायु के हाराक-१११२११३१३३१३५७१५९१२११०१५१५१९४४ ये अमायु के  
हाराक है ॥१३३॥

नवाणायु के हाराक-५१४६१९०११००१०१११००१२१ य प्रम न हाराक है ॥१३४॥  
जहा आयुयोग में १०० वर्ष की आयु हो यहा १२११११०११२० इन हाराको का प्रयोग  
करना ॥१३५॥ मनानार-हार, शतानु का योग करके आधा करना, वह वर्षमग्या होनी  
है ॥१३६॥

दशम यावदायात स्वकुटुंब विभर्ति च ॥ कृच्छ्रेण दशमे पुत्रबाहुल्यानेकसयुत ॥१३७॥  
एकादशे तु विद्वांसो निर्धना जगती सदा ॥ अटति द्वादशे नित्य निर्धना कुलपासना ॥१३८॥  
स्वदेहार्थधना दासा अतो यावत्तु विशति ॥ अत पर मृति याता बाल्य एव  
प्रयागता ॥१३९॥

रश्मिफल-रश्मियोग १० हो तो बहुत पुत्र हो और कठिनाई से परिवार का भरण पोषण करे।  
११ रश्मि योग हो तो पुत्र विद्वान् तो हो परन्तु दरिद्री हो। १२ हो तो जातक दरिद्र और  
नीचवृत्ति होता है। १३ रश्मि से २० तक योग हो तो कठिनाई से या नोकरी से आजीवन हो  
या बाल्य अवस्था में ही मृत्यु हो ॥१३७-१३९॥

एव प्राग्वत्सारा प्रोक्ता प्रथमेचोत्तरेस्मृता ॥१४०॥ केन्द्रत्रिकोणेष्वशुभा ग्रहास्तु  
त्रिलाभयष्टाष्टमगा शुभाश्रेत् ॥ द्वितीयवेऽमास्तगताश्च भौमक्षीणेबुमदा यदि धा च वामम्  
॥१४१॥ स्थानेषु धनदेष्वेव शत्रुवर्गगता यदि ॥ रव्याराकिंम क्षीणचन्द्रा स्यू रेकदा इमे ॥  
एव त्रिकादियोगाना सयोगो रेकदो गुणै ॥१४२॥ अन्यथा तारतम्येन कादाचित्तो भवेद्द्विज  
॥ लघे द्विधर्मकर्मसुखपुत्रास्तविक्रमे ॥१४३॥ स्थित स्थितौ स्थितासेटा शत्रु  
ग्रहनिरीक्षिता ॥ आदौ वयसि मध्येऽजे दरिद्राः स्यू क्रमाद्भवेत् ॥१४४॥

शुभाशुभ योग-केन्द्र या त्रिकोण में पापग्रह तथा त्रिपट्टाय और आठवे में शुभग्रह हो अथवा  
२।४।७ में क्षीणचन्द्र मंगल शनि हो या सू० म० श० रा० क्षीणचन्द्र हो तो दरिद्र योग होता  
है। अथवा १।२।९।१०।११।४।५।७।३ अर्थात् १ से ५ तक तथा ७ तथा ९ से ११ तक के भावों में १-१  
ग्रहो हो शत्रु या पापदृष्टि हो तो प्रथम अवस्था में दरिद्र और दो ग्रह हो तो मध्य अवस्था में  
तथा तीन आदि ग्रह हो तो अन्तिम अवस्था में दरिद्र योग होता है ॥१४०-१४४॥

नव योगा इमे प्रोक्तास्त्रिषु स्थानेषु रेकदा ॥ कर्कटाद्वृश्चिकान्भीनाच्चतुर्वैष्व क्रमास्थिता  
॥१४५॥ शत्रुगेहे स्थिता पापा मध्येऽजे प्रथमे क्रमात् ॥ मुखान्मृत्योर्ध्वयात्पुत्राद्बर्मास्तप्रातये-  
व च ॥१४६॥ एवमज्ञा यदि न्यूनश्राष्टवर्गसमुद्भवा ॥ केद्रेषु च त्रिकोणेषु शुभा उपचये परे  
॥१४७॥ धनदेषु शुभाश्रान्ये परेषु च यदि स्थिता ॥ इष्टरश्मिफलाधिप्यैकश्च द्वौ च त्रयोऽपि  
वा ॥१४८॥ उच्चादिपचकस्थाने नवाशेष्वेव वा यदि ॥ लक्ष्मीयोगा इमे  
प्रोक्तास्सुहृद्दृष्टास्तथा परे ॥१४९॥

अन्य योग-वर्ष राशि से ४ राशियों में शुभ पापग्रह हों तथा शत्रुदृष्टि हो तो मध्य अवस्था में  
फल हो और वृश्चिक आदि ४ राशियों में शुभ पाप ग्रह हो तो अन्त्य अवस्था में योगफल,  
भीतादि चार राशियों में शुभ पापयोग हो तो प्रथम अवस्था में योगफल होता  
है ॥१४५॥१४६॥

शुभयोगविचार-केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह और त्रिपट्टाय में पापग्रह हो तथा धनस्थान में  
शुभग्रह हो और इष्टरश्मियोग अधिक हो उच्च और मूलत्रिकोण में १ या २-३ ग्रह हो अथवा  
उच्चादि नवाश में हो तो लक्ष्मीवान् योग होता है ॥१४७ १४९॥

रेके प्रोक्ताधिकांशांश शुभार्ति फाष्टपद्विना ॥ उच्चो द्वीवा त्रय कोणे  
 चत्वारोऽंशिसुहृत्स्मिता ॥१५०॥ मित्रेण पञ्च पद् सप्त खेटाश्रेच्छीप्रदा स्मृता ॥ द्विर्द्विदशे  
 शुभौ चद्रात्सप्तमे वा तनोस्तथा ॥१५१॥ गुरौ लग्ने द्वितीये जे व्यये शुक्रेऽप्यवा भवेत् ॥  
 भावदृग्बलकष्टेष्टफलभावस्वभावत ॥१५२॥ दापाना च फलैरेव भाववर्गेशस्युते ॥  
 रदम्भशासमवादेव वर्षचर्या तु दैववित् ॥१५३॥ एयामशाश्च समूता शारकादिग्रहैरपि ॥  
 मासचर्यां दिनोत्था चाप्यष्टवर्गसमुद्भवात् ॥१५४॥

अन्य योग-दरिद्र योग मे जो अक्षाण कह है, वे ६।८।१२ भावो के विना हों और उच्च या  
 त्रिकोण के १ से ४ तक ग्रह हो तथा ५।६।७ ग्रह अतिमित्र राशि या वर्गगत हो तो धनी योग  
 होता है ॥१५०॥

अन्य योग-चन्द्रमा से २।१२ मे शुभग्रह हो, लग्न से ७ चन्द्र हो, लग्न मे गुरु हो २ मे बुध तथा  
 १२ भाव मे शुक्र हो तो श्रीमान् योग होता है, परन्तु भावबल दृष्टिबल इष्टकष्ट बल के  
 न्यूनधिक्य से फल में तारतम्य होता है ॥१५१॥१५२॥

अन्य योगान्तर- आयुर्दायि फल भावफल वर्गफल रश्मिफल इन सबके विचार में वर्ष तथा  
 रश्मिविचार से मासफल अष्टवर्ग में दिनचर्या कहना ॥१५३॥१५४॥

भावदृष्टयो प्रधानत्वात्कारको बोधको बले ॥ इष्टकष्टफले त्वन्ये पाचको रश्मिसमवे  
 ॥१५५॥ अतर्दायि तु भावाना प्रधानो वेधक स्मृत ॥ अन्तर्दायि दशाना तु कारको  
 बोधकस्तथा ॥१५६॥ भावस्वभावविषये पाचकस्त्वन्यथा भवेत् ॥ पाचकस्त्वन्यथा  
 सूर्यश्रदमा बोधक स्मृत ॥१५७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तररुण्डे अष्टवर्षवर्णन

नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

वसायत ग्रहण विचार-भाव तथा दृष्टिविचार में मुख्य कारक ग्रहण करना वसायत विचार  
 में 'बोधक' लेना ॥ इष्टकष्ट विचार में पाचक लेना ॥ अन्तर्दशा विचार में वधक लेना ॥ दशा के  
 अन्तर्दायि विचार में बोधक कारक लेना ॥ भावविचार में पाचक लेना ॥ सूर्य स्वभाव में ही  
 पाचक और चन्द्रमा बोधक है ॥१५५-१५७॥

इति श्रीवृ०पा०हो०ना०उ०स०भावप्रवा० योगवर्णनाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

पुन अष्टवर्षनाह

यद्यादिरश्मिप्राप्तोऽतो जनको जन्मतोभृशम् ॥ धनादिहीनो रितश्च द्वितीयोऽपि नृपुर्भूति ॥१॥  
 निस्वस्तुतोये दामश्च चतुर्ये रश्मिपुत ॥ प्याधिभि पीहितमन्त्रन्दरुचये भृगुदुर्गित ॥२॥ त्रयमे  
 दगमे चैवदल्लोऽतो सप्तमेऽपि च ॥ प्याधिपुतो हरिश्च यदि जीवति तौवति ॥३॥ एषादोऽपि  
 रश्मौ चेदाद्योऽपि नृसामिन ॥ पितृर्षतप्यपश्चरो द्वितीये वधरपीतिः ॥४॥ वेदपागसन्तुतोये

स्याग्निर्धनं कुलपासन ॥ मृतपुत्रोऽथ वाऽभाग्यश्चतुर्थे स्त्रीविमानित ॥५॥ पचमे त्वल्पपुत्र  
स्यात्पृष्ठे चाप्यरुजा पुत्र ॥ श्रीयोगे धनवान्कश्चित्तप्तमे दु खितोऽधन ॥६॥ आद्येऽंशे द्वादशे  
रश्मौ नैव तस्य शुभाशुभौ ॥ द्वितीये बलवान्मूर्खश्चौरद्रव्येण जीवति ॥७॥ तृतीये च चतुर्थे च  
वेश्यापतिररिदम ॥ नृपपूरुषमृत्युश्च भार्याहीनोऽसुतोऽधनी ॥८॥

रश्मिफल तथा वर्षचर्या-छठी रश्मि के प्रथमांश में जन्म हो तो पिता दरिद्र हो, द्वितीयांश में  
पिता की मृत्यु हो। तीसरी में दरिद्र और नीकर हो, चौथी में दरिद्री और रोगी, पाचवी में  
अति पीडित, ६।७।८।९।१० में रोगी, दरिद्री तथा जीवन में भी सशय हो। ११ वी रश्मि के  
आद्यंश में मातृहीन तथा दरिद्र, द्वितीयांश में 'पुत्रहीनपति, वेश्यागामी, ३ में निर्धन, कुलहीन,  
अभागी या मृतपुत्र हो, चौथे में स्त्रीजित, पाचवे में अल्पपुत्र, छठे में नीरोगी, स्त्रीयोग से  
धनी, ७वे में दु खी निर्धन हो। १२ रश्मि के प्रथमांश में शुभाशुभ समान हो, दूसरे में बलवान्  
तथा मूर्ख चोर हो, तीसरे चौथे में वेश्यापति, शत्रुनाश हो तथा राजपुरुष के द्वारा मृत्यु हो या  
जीवित रहे तो धन, पुत्र, भार्याहीन हो॥१८॥

विद्वाश्चतुर्दशे त्वाद्ये पितृभ्या लालित-सुखी॥ द्वितीये बलेशभाग्वापि शत्रुजिच्च रणाजिरे ॥९॥  
पितृभ्या हीन एवाथ लब्धकिञ्चिद्वनार्जक ॥ देशादेशमटत्येव तृतीये धनतत्पर ॥१०॥  
सद्भिरोड्य सुखी स्यात् शतबुद्धिररिदम ॥ चतुर्थे धनवान् क्षत्री विद्ययार्जितपोषक  
॥११॥ सतिश्रीयोगसयुक्त पचमे दु खभागधनी ॥ पुत्रादिसप्तसयुक्त एव पचदशे भवेत् ॥१२॥  
अस्मिन्यष्टे धनी प्राज्ञो विद्यया सद्यशो भवेत् ॥ एव च दोडशे चाशे त्वतीवधनवान्भवेत्  
॥१३॥ स्वबधुभ्योऽधिकोऽन्येऽंशे विद्ययाऽथ धनेन वा ॥ पुत्रादिसयुक्त श्रीमास्थशो  
स्यात्स्वजनेश्वर ॥१४॥ इष्टापूरतेन सयुक्तस्त्वष्टादशोतविशके ॥ पूर्ववद्विशरश्मौ तु  
लब्धधामपरायण ॥१५॥ बदान्य पूर्वधर्माणा मनुबद्धपुत्रक ॥ एकविशे धनेयुक्तमाद्येऽनतर  
भागके ॥१६॥ तृतीये तु भुवि स्यातो दानेन च धनेन च ॥ दिनामत्व तु वा यज्वा  
यानवाहनसयुक्त ॥१७॥ श्रीमान्वद्दुघनाना च साधकश्च चतुर्थके ॥ अग्निमाद्येन रोगार्तश्चतुर्थे  
धनवान्सुखी ॥१८॥ पचमे देशयोर्धिद्वान्वदान्यो हतुरोऽथवा ॥ तप्तमे धनहानि  
स्याद्वाजयोगैश्च मृत्युपुक् ॥१९॥ अष्टमे निर्धनस्थाना जनाना पोषणे रत ॥ द्वाविशे प्रथमेशे  
तु पितु पुत्रो धनस्थ तु ॥२०॥

चौदहवी रश्मि के १ अंश में विद्वान् २ में मातृ पितृयुक्त सुखी। ३ में क्लेश, शत्रुजित्,  
मातृपितृ हीन, भ्रमणशील, चौथे में धनी, सुखी, प्रसिद्ध, शान्तबुद्धि, शत्रुनाशवागी,  
गज्जतानुरक्त, ५वे धनी भूमिपति, विशोपजीवि, धेष्ठभार्यापति, छठे में दु खी, आगे धन पुत्र  
में सुखी हो। १५वी रश्मि का फल ५ अंश तक उपर्युक्तानुसार है, छठे में बुद्धिमान् धनवान् हो।  
१६-१७ रश्मि में प्रथम अंश में अतिधनी, दूसरे में प्रनापी, तीसरे में धन, विद्या पुत्र में सुखी,  
चौथे में पदाधिकारी, ५-६ में यज्ञ, पुण्य, कृपादि का वर्ता हो। १८-१९ रश्मि का फलमयहवी  
रश्मि के समान जानना। बीसवी रश्मि में वासभूमिसुब्ध, दानी, पुत्रवान् हो। २१ रश्मि में  
१-२ अंश में धनी, ३ में दान धर्म में विन्यात, वाहनवान, यज्ञवर्ता, धनी, सुखी हो, चौथे में

अधिमास्य का रोगी, धनी हो। ५ मे प्रतिष्ठित, दन्तुर हो, ७ मे धनहीन हो, राजनिमित्त से मृत्यु हो। ८वे अश मे निर्धन दरिद्रो का पोषण कर्ता हो॥१-२०॥

द्वितीये धनहीनश्च किञ्चित्कृषिकर सुखी ॥ तृतीये राजकार्याणि तत्कर्मार्जितवित्तक ॥२१॥  
चतुर्थे तु प्रभुश्रान्यनामभगद्वद्वधनात् ॥ पचमे तद्भवेव स्यात्पठे कार्यस्य हानिक ॥२२॥  
सर्वव्ययश्च रिक्तश्च सप्तमे रोगपुरघ्नो ॥ त्रयोविंशे तु जनकलालितश्च सुखी भवेत् ॥२३॥  
तृतीये मूर्खकृत्येन परामवसमन्वित ॥ चतुर्थे चौरकृत्येन पचमे व्याधिसभव ॥२४॥ पठे  
दरिद्र पुरुषो व्याधिना पीडितो भवेत् ॥ श्रीमान्पुत्रश्रुतिर्विशे प्रथमे लालितो भृशम् ॥२५॥  
स्वजात्यनुगुणो विद्वान्प्रथमे च द्वितीयके ॥ तेन स्यात्तस्तृतीये स्यात्स्वतत्र सर्वसमत ॥२६॥  
क्षेत्रदारसुहृत्पुत्रकलत्रैर्बहुभिर्वृत ॥ पचमे व्याधित पठे बहुव्ययपरायण ॥२७॥

बाईसवी रश्मि के प्रथम अश मे पितृघन से धनी, दूसरे मे निर्धन, वृषक, सुखी हो, तीसरे मे राजसेवी चौथे मे समर्थ,अन्यनाम से प्रसिद्ध, पाचवे मे चौथे फल के अनुसार, छठे मे कार्य हानिकर, ७वे मे रोगी और धनी हो॥ तेईसवी रश्मि के प्रथमाश मे पितृमुख, २मे मुखी, तीन मे मूर्खता से हार, चौथे मे घोर, पाच मे रोगी, ६मे दरिद्री,रोगी हो॥ चौबीसवी रश्मि के प्रथम अश मे धनी, विद्वान् पिता से सुख स्वजाति गुणयुक्त हो, दूसरे अश मे प्रथम के समान ही फल है। तीसरे अश मे स्वतंत्र तथा सर्वसम्मत हो। चौथे अश मे पूर्ण परिवार वाला सुखी ५वे मे रोगी, छठे मे अधिब व्ययशील हो॥२१-२७॥

पचविंशे तु पृथगशे फलहीनस्तु जीर्यति ॥ षड्विंशे प्रथमाशे तु दरिद्रस्यात्सुतोऽपि मन् ॥२८॥ पितु कार्ये तु वृद्धिं स्याद्द्वितीये पितृवेश्मत ॥ अन्यत्र गत्वा तत्रैव स्वद्योग्येन च कर्मणा ॥२९॥ स्वदेहपोषकोन्म्येजो धनी च कृत्यवित् स्थित ॥ चतुर्थे पचमे चैव पट्टवधादिसपुत ॥३०॥ अतोव धनवान्स स्यात्पठे त्वशे स्वदेहभाक् ॥ क्षेत्रदारदिवृद्धया तु व्याध्याव्याधिसमन्वित ॥३१॥ नवमे धनहानि स्यात्पुत्रदारविवर्जित ॥ यावद्ग्न नवाशाश्च षड्विंशवदय द्वये ॥३२॥

एक्यासवी रश्मि के छठे अश मे जीवन निष्पन्न हा, छब्बीसवी रश्मि के १ अश मे अन्य देश मे जीवनयापन हो तीसरे अश मे धनी चतुर हो, ४-५ मे दीक्षित, छठे मे धनी मानवे मे साधारण आजीवन ८वे मे भूमि स्त्री का मुख ९वे मे मानसो चिन्ता रोगी हो। १० वे अश मे स्त्री, पुत्र, धनहीन हो २७ २८ रश्मियोग मे भी पूर्वोक्त फल होना है॥शाव २८ मे ३० तक॥

राजप्रियस्ततश्चः शुद्धं स्यादशके तत ॥ एकोनविंशे रश्मौ तु सुखी स्याच्च द्वितीयके ॥३३॥ राजसेवी तृतीयेषु कृत्वाकृत्यविदीश्वर ॥ बहुबपुपुत श्रीमान्मानवाहनमपुन ॥३४॥ देशधामाधिकारो च विंशे त्वेतै समन्वित ॥ सेनानीनीतिमालूर पचमाशे भवेद्विदम् ॥३५॥ पठे तु वित्रयो मुठे सप्तमेऽपि रुजा युत ॥ न्यूनापतिस्तु वस्त्रगे नवाशे त्वधिशक्तिः ॥३६॥ प्रवृत्तिरशे तु राजान पृथगशे वा तृतीये ॥ अभिपिक्तो भवेच्छत्रा पट्टबपुम्तु धोगन ॥३७॥ रश्मौ तथा चतुस्त्रिंशे चतुर्विंशे पराजय ॥ तृतीये पचमे पठे मुठे तु वित्रयो भवेत् ॥३८॥ अष्टमे नवमेऽशे तु वृद्धिं स्याद्गामे च हि ॥ पट्टेऽपि पचमे यस्माच्चत्वारिंशतपर ॥३९॥

द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे चाद्यके तथा ॥ राजा स्यात्पंचमे षष्ठे सप्तषष्ठेनवमे ततः ॥४०॥  
दशमे च क्रमाद्युद्धव्याधिर्वाज्य पराजयः॥ इतरांशेषु संख्यातः सर्वसंपत्समन्वितः ॥४१॥  
ततः परं च सम्राट् स्यात्चतुर्थे षष्ठे जयी ॥ अशास्तुत्यास्तु तेष्वेवं विपरीतफल  
विदुः ॥४२॥ व्याधिरुक्तदेव स्याद्वावद्विंशतिरश्मयः ॥ यद्यप्यंशाः पर नाज्य अधिकारं भजन्ति  
ते ॥४३॥

२९वी रश्मि के प्रथमांश मे सुखी, दूसरे मे राजसेवी, ३ मे सत्कर्मी, ४ मे पदाधिकारी, ५ मे बन्धु समागम, छठे मे श्रीमान्, ७ मे सम्मान पावे, वाहन हो, ८वे मे देशाधिपति हो, नवम मे ग्रामाधिपति हो, इसी प्रकार ३०वी रश्मि का भी फल है। ३१वी रश्मि के ५वे अंश मे सेनाधीश, नीतिमान्, शूर हो। छठे मे युद्ध मे विजयी, ७ मे रोगी, ८ मे किञ्चित् लाभवान्, नवम मे बहुलाभवान् होता है। ३२ वी रश्मि मे पूर्वोक्त फल जानना। ३३वी रश्मि मे तीसरे, छठे, अंश मे राजा होता है। ३४वी रश्मि के ४ थे अंश मे पराजया ३।५।६ मे जय हो। ८।९ मे वृद्धि हो। ३५ वी रश्मि से ४० वी रश्मि तक के १।२।३।४ अंशो मे राजा होता है। ७ मे युद्ध, ८ मे व्याधि, ९वे मे व्याधि, तथा दशम अंश मे पराजय होती है। बाकी के अंशो मे सर्व सम्पत्तिवान् होता है। श्लोक ३३ से ४३ तक॥

अथ स्थानगताना तु रव्यादीना क्रमात्फलम् ॥ ततो रवि शिरोरोग बधूना च विरोधताम्  
॥४४॥ द्वितीये धनहानिश्च तृतीये मित्रवर्द्धनम् ॥ धनलाभ सुखे सौख्य शत्रुभिश्च समागमम्  
॥४५॥ षष्ठे पुत्रलाभ च बुद्धिमुञ्जमसिद्धिकृत् ॥ षष्ठे धन जय कुर्यात्सप्तमे स्त्रीविरोधनम्  
॥४६॥ अष्टमे व्याधि हानि च नवमे मित्रवधनम् ॥ भाग्यहानि च दशमे धनलाभं सुखं जयम्  
॥४७॥ एकादशे धनाना च सिद्धि मित्रसमागमम् ॥ द्वादशे धनहानि च व्यय वा कुक्षिर्क्  
क्रमात् ॥४८॥ चद्रे लग्ने च क्तह द्वितीये धनयोजनम् ॥ तृतीये भ्रातृभित्तम  
धनवस्त्राविसंग्रहम् ॥४९॥ चतुर्थे धनवस्त्रादिवाहनादिगुप्तपुत्रम् ॥५०॥ तीक्ष्णे धनी सुतपुत्रः  
परिपूर्णसपत्यष्टे तु रोगसहित कुमति च कामे ॥ विद्याधनक्षितिसुखादिसमन्विश्च मृत्यौ च  
मृत्युविषयः खलु कुक्षिरोगी ॥५१॥ स्त्रीस्वर्णदास्यतिरेव धर्मं माने मुचारित्रगुण धन च ॥  
लाभे तु चैतत्सकल व्यये तु धनस्य रिफ कुरुते शशी तु ॥५२॥

सूर्यादि ग्रहो का १२ भावो का फल-सूर्य १ भाव मे-शिरोरोग, विरोधा २ मे धन हानि। ३ मे मित्र, धनलाभ, ४ भाव मे सौख्या ५ मे पुत्रवृद्धि, बुद्धि का विकास, उद्योग की सिद्धि। ६ मे जय धन, ७ मे स्त्री विरोधा ८ मे व्याधि, हानि। ९ मे मित्र वधन, भाग्यहानि। ९ मे धनलाभ, सुख, जय, १० मे भाग्यहानि, ११ मे धनसिद्धि, मित्रसमागम। १२ मे धनहानि, व्यय, कुक्षिरोग कारक होता है॥४४ से ४८ तक॥

चन्द्रफल-१ भाव मे कजह। २-धनलाभ। ३-भ्राता से बन्ध्यादि का लाभ। ४ मे धन, बन्धु, वाहन प्राप्ति। ५ मे धन, पुत्र, सम्पत्तिवी प्राप्ति। ६ मे रोग, वृद्धि। ७ मे विद्या, धन, भूमि,

सुख प्राप्तिः, ८ मे मृत्यु दुःख, कुधिरोग। ९ मे स्त्री, सुवर्ण, दास प्राप्ति। १० मे उत्तमगुण धन की प्राप्ति। ११वे मे दसके समान फल। १२ वे मे द्रव्यनाश होता है॥४९-५२॥

कुजे लग्ने तु चापत्यात्कृत स्वे धननाशनम् ॥ विक्रमे भ्रातृमरण धनलाभ सुख यश ॥ चतुर्थे बहुमरण शत्रुवृद्धिर्धनव्ययम् ॥५३॥ पञ्चमे पितृहानि च धनापतिगुती यशः ॥ षष्ठे रिपुसमृद्धि च जय बहुसमागमम् ॥५४॥ अर्थवृद्धि तित्रया दारमरण नीचतेवनम् ॥ नीचस्त्रीलग्नो मृत्यौ धननाश पराभवम् ॥५५॥ पराभवमनर्थं च धर्मं पापकचिक्रिया ॥ धनव्यय च दशमे धनलाभ कुर्म च ॥५६॥ लाभे धन सुख वस्त्र स्वर्णक्षेत्रादिसंग्रहम् ॥ व्यये नेत्ररुज भ्रातृनाश च कुल्ले कुज ॥५७॥

मंगल का फल-१मे क्षपलतावश क्षता २मे धनहानि। ३मे भ्रातृनाश, धनलाभ, सुख, यश। ४मे वन्धुमरण, शत्रुवृद्धि, धन का लर्चा। ५ मे पितृहानि, धनसुख, पुत्र, यश प्राप्ति। ६ मे-शत्रुवृद्धि, जय, वन्धु-समागम, धनवृद्धि। ७ मे-स्त्री की मृत्यु, नीच सेवा नीच स्त्रीसगा। ८ मे धनहानि, पराजय, अनर्थ। ९ मे पापवृद्धि पापकर्म धनव्यय। १० मे-धनलाभ कुर्म। ११ मे धन सुख सुवर्णलाभ, भूमिलाभा। १२ मे नेत्ररोग, भ्रातृनाश करता है॥ श्लोक ५३ से ५७ तक॥

बुधः षष्ठेऽरिवृद्धि च युद्धे सति पराजयम् ॥ मृती बधुबिहीनत्व बधन व्ययमे व्ययम् ॥५८॥ भावोक्तफलवृद्धि तु परे तु कुल्ले तथा ॥ गुरुशुक्रौ तृतीये तु शत्रुवृद्धि धनक्षयम् ॥५९॥ षष्ठे पराजय व्याधिमष्टमे बन्धन तथा ॥ रिफे चौरहृतस्व तु नेत्ररोगपराजयम् ॥६०॥ सप्तमे च चतुर्थे च सेनापत्यधनापति ॥ सर्वसप्तमृद्धि च नवमे राजमपदम् ॥६१॥

बुध का फल-बुध ६ठे भाव मे शत्रुवृद्धि और मर्दाई होने पर पराजय। अष्टमभाव मे वन्धुहानि, वन्धना। १० भाव मे सर्व करता है। अन्यभावो मे अन्यभावो की वृद्धि करता है॥५८॥

गुरु और शुक्र का फल-गुरु, शुक्र, तीसरे भाव मे हो तो शत्रुवृद्धि और धनक्षय करते हैं। छठे भाव मे पराजय तथा व्याधि। आठवे मे बधन करते है। १२वे मे चोरी नेत्ररोग पराजय कारक है। ४ तथा ७ मे सेनापतित्व, धनलाभ, सर्वगम्पति वृद्धि और नवम भाव मे राजममान गम्पति देते है। अन्य भावो मे भावोक्त फल की वृद्धि करते है॥५९, मे ६१ तक॥

पूर्वाक्तफलतपोगमन्येष्वपि सम भवेत् ॥ कुजबद्धिविबन्धन पापप्रयश दल गत ॥६२॥ पादोनमेक मित्राधिभिरस्वर्षं च बोणभे ॥ उल्ले तु नोवे त्रिगुणमध्यरी द्विगुण तत ॥६३॥ अतो साधं जमात्वात्फलतस्त्वेष्व निर्णय ॥ शुभेर्दृष्टो रवी राजसेवाफलधनापति ॥६४॥ राश्रमि बहू दुःख रुज जठरनेत्रयो ॥ भिन्नदृष्टी जय बहुलाभ पापप्र रोगिणाम् ॥६५॥

जति ता पञ्च मूर्ख, मगल के गमान ही जानना। इनमे से कोई भी एक मित्रधत्री होने मे

चतुर्धाश फल, अतिमित्रक्षेत्री तृतीयाशफल, स्वक्षेत्री हो तो ३ पाद, इसी प्रकार त्रिकोणी भी ३ पाद फल, उच्चराशि में सम्पूर्णफल समझना। नीचराशि का त्रिगुण हीन फल अधिशत्रु में द्विगुण और शत्रुक्षेत्री हो तो आधा फल करता है॥६२॥६३॥

दृष्टिफल-सूर्य पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो राजरोबा तथा धनप्राप्ति होती है। शत्रुग्रहों की दृष्टि हो तो कलह दुःख नेत्ररोग हों। मित्रग्रहों की दृष्टि हो तो जय, बहु-लाभ हों। पापग्रहों की दृष्टि हो तो रोगी हों॥६४॥६५॥

धनहानि शशी पापै शिरोनेत्ररुज तथा ॥ शत्रुभि पापकरण धननाश गमागमी ॥६६॥  
शुभरोगता सौख्य धनलाभ च बंधुभि ॥ मित्रलाभ जय क्षेत्रदेशलाभ करोति हि ॥६७॥  
पार्षदृष्ट कुज क्षेत्रधनधान्यादिनाशनम् ॥ शत्रुभिर्वन्धन रोग चाह्व दूरवासनम् ॥६८॥  
शुभेस्तु विजय देशक्षेत्रलाभ सुहृच्छुभम् ॥ मित्रैश्च धनसंसिद्धि करोति हि न सशय ॥६९॥  
शुभैर्बुधो लिपिज्ञान विद्यालाभ च कौशलम् ॥ मित्रैर्भूपाधनक्षीमरत्नलाभ च शत्रुभि ॥७०॥  
अतिसार च दुर्बुद्धि प्रतीकेषु सदोद्यमम्॥ पार्षन्हाविपाद च कुक्षी शूल च चर्द्धते ॥७१॥

चन्द्र पर दृष्टिफल-चन्द्रमा पर पापदृष्टि हो तो सिर में नेत्र में पीडा, धनहानि हो। शत्रुदृष्टि हो तो पापकर्म करता है धनहानि भ्रमण हो। (शुभाशुभमिश्रित दृष्टि हो तो मिश्रित फल हों) शुभदृष्टि हो तो नीरोगता सुख बन्धुतागायम धनलाभ मित्रलाभ, जय, भूमि आदि का लाभ करे॥६६॥६७॥

मंगल पर दृष्टिफल मंगल पर पापदृष्टि से भूमि धन धान्यहानि तथा शत्रुदृष्टि हो तो वधन, रोग कलह करे। शुभदृष्टि हो तो विजय पराक्रम दश भूमि मित्रवर्ग से सुख हों। मित्रगृहदृष्टि होतो धनप्राप्ति हो॥६८॥६९॥

बुध पर दृष्टिफल बुध पर शुभदृष्टि हो तो विद्यालाभ लिपिज्ञान हो। मित्रदृष्टि से धन वस्त्र रत्न लाभ हों। शत्रुदृष्टि हो तो अतिमार रोग दुर्बुद्धि उद्योग तत्पर रहें। पापग्रह दृष्टि से महाक्लेश तथा कुक्षिशूल हों॥७०॥७१॥

गुरु शभेस्तु सदृष्टो धर्मकार्योद्यमं सुखम् ॥ जय धनायतिर्मित्रैदारक्षेत्रादिसग्रहम् ॥७२॥ शत्रुभि कुष्ठरोग च त्वग्दोषकलह रणम् ॥ पापै पराजय बुद्धे केदारदिबिषयोजनम् ॥७३॥ शुभे शुक्र सुख योषालाभ भूया धनायतिम् ॥ मित्रैस्तु पट्टवधादि देशलाभादि चातिलम् ॥७४॥ पापै पराजय योषावियोग धननाराणम् ॥ शत्रुभिर्भ्याप्यरोग च मूत्रकृच्छ्रादिक तथा ॥७५॥ मव पार्षस्तया कुक्षिरोग बन्धनफ क्षयम् ॥ शत्रुभि शत्रुबाधा च पराभवमथाभयम् ॥७६॥

गुरु पर दृष्टिफल गुरु पर शुभ दृष्टि हो तो उद्योग सुख जय धन प्राप्ति हों। मित्रदृष्टि से स्त्री भूमिका लाभ हों। शत्रुदृष्टि हो तो कुष्ठ त्वचारोग, कलह सग्राम हों॥७२॥७३॥

शुक्र फल-शुक्र पर शुभदृष्टि से सुख, स्त्रीलाभ, अन्न धन की प्राप्ति करे। मित्रदृष्टि से भूमि आदि का लाभ हों। पापदृष्टि हो तो पराजय, स्त्रीवियोग, धननाश हों। शत्रुदृष्टि हो तो कष्टसाध्य रोग मूत्रकृच्छ्रादि हों॥७४॥७५॥



शनि फल-पापदृष्टि से-कुक्षिरोग, बन्धन, क्षय हो। शत्रुदृष्टि से बाधा, पराभव, रोग हो। शुभदृष्टि से रोग दूर हो। मित्रदृष्टि से बन्धु समागम हो॥७६॥

शुभैररोगतां मित्रैर्दृष्टो बंधुसमागमम् ॥ रवौ स्थानबले पूर्णं स्वदेशे विद्यया बली ॥७७॥ चंद्रे प्रभुतया भौमे ग्रामण्येन बुधे सति ॥ श्रौतया विद्यया वाऽऽर्षलिपिलेखनकर्मणा ॥७८॥ जनैर्धनैरभात्येषु बुद्ध्या च बलवान्गुरौ ॥ यद्वा स्वदेशराजस्तु कार्येणैव बली मतः ॥७९॥ शुके स्वदेशमुख्यो वा त्वाधिपत्येन योषिताम् ॥ मदे भृतकदासानां मुख्यः स्याद्वलवानपि ॥८०॥ उक्तैस्तु पीडितः प्रेष्यः स्थानवर्षोन्तिषु तु ॥ समन्यूनाधिकार्द्धीर्षद्दृष्टोत्कर्षात्फलं बवेत् ॥८१॥

सूर्यादि ग्रहों का स्थान बल से फल-सूर्य स्थान बल से पूर्ण बली हो तो अपने देश में ही विश्वाबल से प्रख्यात हो। चन्द्रमा बली हो तो अधिकारी पद प्राप्त हो। मंगल बली हो तो ग्रामाधिकारी हो। बुध बली हो तो वेदविद्या तथा लेखन कर्म से प्रसिद्ध हो। गुरु बली हो तो निज देश में प्रतिष्ठित हो। शुक बली हो तो स्वदेश में प्रधान हो। शनि बली हो तो शरीर से पुष्ट तथा वैतनिकों में मुख्य हो, बलहीन हो तो दासत्व करे॥७७ से ८१॥ तका॥

दिग्बलेनाधिके सूर्ये वाणिज्येन धनायतिः ॥ यशश्च धनवृद्धिश्च चन्द्रे तु राजसेवया ॥८२॥ भौमे तु सेवया ख्यातिर्वेदान्यासेन सर्वदा ॥ बुधे धनायतिः कृष्या यशः स्याद्बुद्धिमत्तया ॥८३॥ गुरौ धनायतिस्तेन वीर्येण धनशुभ्रता ॥ राजकार्येण शुके च बदान्यत्वेन वा यशः ॥८४॥ मदे दासाधिपत्येन धनायतिररिब्रह्मात् ॥ कालापनबलाधिक्ये रवौ भौमे शनैश्चरे ॥८५॥ मंत्रोपदेश-विधिना पातद्विपदसंप्रपात् ॥ दासभावेन कृष्णादौ कृषितो विद्ययान्यया ॥८६॥ गुरौ शुके बुधे पायोनिधिजे चात्रिसभवे ॥ विद्याया बाधने सप्त्याबलदिग्बलवृद्धितः ॥८७॥ नानाविधायतिः प्रोक्ता इति चेष्टाधिकेषु तु ॥ कविद्वयो यथापूर्वं विशेषादेव निर्णयः ॥८८॥ बलिष्ठो दापरश्म्युक्तफल सर्व करोति वै ॥ न्यूनाधिकेनुपातेन फलमेव विचिन्त्यताम् ॥८९॥

सूर्यादिग्रहों का दिग्बल से फल-सूर्य दिग्बल से पूर्ण बली हो तो व्यापार से धनी और यशस्वी होता है। चन्द्रमा दिग्बल में पूर्णबली हो तो राजसेवा से प्रतिष्ठित और मंगल पूर्णबली हो तो वेदान्यास तथा सेवा से सुखी हो। बुध पूर्णबली हो तो बुद्धिमत्ता से यशस्वी हो और गुरु पूर्णबली हो तो धनी और कीर्तिमान् हो। शुक दिग्बल में पूर्णबली हो तो दानशीलता से यशस्वी हो। शनि पूर्णबली हो तो शूरवीरता से ख्यातिमान् होता है। कालबल तथा अपनबल में अधिक होने का फल-सूर्य, मंगल, शनि, कालबल तथा अपन बल में अधिक हो तो पातपड तथा दास्य वृत्ति से निर्वाह हो। क्षीण चन्द्र बली हो तो सेती से निर्वाह। बुध, बृहस्पति, शुक तथा पूर्ण चन्द्र बली हो तो विद्या, धन से निर्वाह हो। सूर्यादि सभी ग्रह चेष्टाबल में बलवान् हो तो अनेक विद्या से धन की प्राप्ति होती है॥८२-८९॥

सौम्येऽप्यष्टफलाधिकेषु नितरा श्रीमान्शुशीलो गुणी। भित्रेष्वेवमतीव धर्मनिरतो दाता सुता सत्ववान् ॥ पापेष्वेवमथापि पापनिरतः शत्रुष्वयो शत्रुभिर्बोर्षेणाय पराजयो जय इमान्य-यतिः प्राप्नुयात् ॥९०॥

ईष्ट, कष्ट बलाधिक का फल बुध गुरु शुक तथा चन्द्रमा ईष्ट बल म अधिक हो तो महाधनी, सुशील धर्मरत दानशील सुखी और बलवान् होता है। पापग्रह ईष्टबल मे अधिक हो तो पापबुद्धि शत्रुओं से पराजय पाता है ॥१०॥

अधिकेष्वशुभेष्वेवमनिष्टाख्यफलानि तु ॥११॥ व्याधिभि कलहैर्मित्रे पीड्यते नात्र सशय ॥ एव पापेषु दुश्चेष्ट पातकी भवति ध्रुवम् ॥१२॥ शत्रुष्वेव सदा रोगी मित्रैर्बन्धुविवर्जित ॥ सर्वद्वेष्यलाघिस्ये सर्वत्राफलदो ग्रह ॥१३॥ शुभेषु च फलेष्वेव स्पष्टमेव फलप्रद ॥ अत्यनिष्टफल खेट शुभेषु त्वफलप्रद ॥१४॥ अनिष्टफलदोऽन्येषु खेट सर्वत्र सर्वदा ॥ स्योच्चादिस्थानपदस्था स्युस्तथा दिग्बर्गगा अपि ॥१५॥ क्षेत्रपुत्रकलत्रादिधनधान्यसमृद्धिदा ॥ यदि मित्रादिबर्गस्था धनधान्यविवर्द्धना ॥१६॥

अन्य फल पापग्रह बलाधिक हो ता रोगी पातकी दुश्चेष्टावान होता है। शत्रुगृही हो तो सदा रोगी मित्र-बन्धु रहित सर्व द्वेषी होता है। उच्च राशि मूल त्रिकाण स्वक्षेत्र मित्रक्षेत्र अतिमित्र क्षेत्र अथवा समक्षेत्री हो ता स्त्रीपुत्र धनधान्य की समृद्धि होती है ॥१६॥

व्याधिदुर्गतिदा प्रोक्तादशारम्भे तु शीतलो ॥ स्वोच्चादि सस्थिता दायप्रारभे शुभदा दशा ॥१७॥ अन्यथाऽशुभदा प्रोक्ता प्रारभे ज्योतिषा दशा ॥ केन्द्रधूम्रगता खेटा दशाया शुभदा सदा ॥१८॥ द्रव्यकर्मगुणा यस्य स्वभावा कथिता पुरा ॥ ते सर्वे स्वदशाकाले योन्या भावद्गादियु ॥१९॥ भावदृष्टिबलेष्टानि फलानि कथितानि च ॥ भावाध्यायोत्तरव्यादि-फलान्यत्रैव योजयेत् ॥१००॥

दशा का फल चन्द्रमा की दशा आरम्भ म व्याधि दुर्गति दती है। इसी प्रकार उच्चादि ६ स्थानों मे जो ग्रह हा उनकी दशा आरम्भ म शुभ फल देनेवाली होती है। अन्यथा अनिष्टफल देनेवाली होती है। केन्द्रादि शुभ स्थान म स्थित ग्रह की दशा अपनी दशा के सम्पूर्ण काल म शुभ फल देनेवाली है। सूर्यादिग्रहों के गुण कर्म स्वभाव द्रव्य जा पूर्व वह है उनका विचार करके अपने २ दशाकाल म फल की योजना करनी चाहिए। भावबल पदबर्ग बल इष्टकष्टबल का फल भी दशाकाल म ही होता है ॥१७ से १०० तक॥

आदी बलफल प्रोक्त ततो दृष्टिफल स्मृतम् ॥ ततो भावफल प्रोक्तमिष्टानिष्टफलावहम् ॥१०१॥ खेटाबलफल चादी स्थानवीर्य ततो भवेत् ॥ दिग्बल च तत प्रोक्त कालायनबले तत ॥१०२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अब्धचर्यादि फलवर्णन  
नाम जलविशोऽध्याय ॥१९॥

बला का क्रम प्रथम निमगंबल मुख्य है। तदनन्तर दृष्टि बल बाद भावजन इष्टानिष्ट

बल, चेष्टा बल, स्थान बल, कालबल, अयनबल ये उत्तरोत्तर बलवान्  
है॥१०१॥१०२॥

इति श्रीद्व० षा० हो० शा० उत्तरखण्डे भाव प्रका० फलवर्णननाम  
ऊनविंशोऽध्याय ॥१९॥

अथ मासचर्याफलमाह

भावाशौ समता गत खलु छग पूर्ण विधत्ते फल सधिस्यो न फलप्रदोऽन्तरगतैस्त्रैराशिकैर्नैव च  
॥ भावन्यूनमथ ग्रहस्य गुणपेदशादिक चार्णवैर्हित्वा चास्य च सधितोऽधिकमयो प्रोक्त फल  
भावजम् ॥१॥ ऊर्ध्वमुखो रविपुक्तो राशिसमेतस्त्वधोमुखो ज्ञेय ॥ तीर्षद्मुखोऽखिलपुतो  
राशिभावा परोऽप्येवम् ॥२॥

मासचर्याफल

भावफल-जो ग्रह जिस भाव म है उम भाव के अश के समान ग्रह के अश हो तो पूर्ण फल  
होता है। सधि के अश के समान अश हो तो निष्फल जानना। भाव के अन्य अशो भे ग्रह हो तो  
अनुपातसे फलकी न्यूनताधिकता जानना। भावाशसे ग्रहाश कम हों तो ४ से गुणा करना। भावाश से  
ग्रहाश अधिक हो तो ऋण, नहीं तो धन करना, तो भावफल रपट होता है। जो भाव सूर्यपुक्त हो वह  
भाव ऊर्ध्व मुख, ग्रह रहित हो तो अधोमुख अन्य ग्रहपुक्त हो तो तीर्षद्मुख होता है॥१-२॥

अन्यजातीययोगे तु तत्तद्भावफल वदेत् ॥ स्वजातीयेषु योगेषु त्रिशाद्यशा भवत्युत ॥३॥  
तत्त्वमाकृतिरेकाक्षिच्छदस्तस्य चतुष्टय ॥ एकोनविंशतिच्छन्दो नवाक्षी यद् उपस्तथा ॥४॥  
वेदेयवो नृपा स्थाने भावसख्या प्रकीर्तिता ॥ एकत्रिंशत्त्रयस्त्रिंशद्भूतानि त्रिंशत्तथैव च ॥५॥  
एकत्रिंशद्दिनेत्रे च मुनिरामा खपावका ॥ भानि त्रिंशत्तिरेकद्वौ खवेदा करणस्य  
तु ॥६॥

भाव का जो शुभाशुभ फल भाव दृष्टि के अनुसार पूर्णफल होन पर ३० अश  
जानना॥३॥

वारह भावों के स्थानाङ्क-क्रम से १२ भावों के ये स्थानाङ्क हैं  
३१२२२१२६२२५३४१९२६२२९३६१५४१६॥४॥

भावों के कर्णाङ्क क्रम से ३१३३२७३०३१२२३७३०२७२०२१४०॥  
श्लो० ५॥६॥

धियमाया क्रमादोजे युग्मे स्याता शुभायुगे ॥ समाया भयतस्तद्दत्वापसौम्यफले क्रमात् ॥७॥  
ओजे व्याधि समे हानिर्घादितु दशक भवेत् ॥ परत पचक चौजे समे व्याधिरथान्यथा ॥८॥  
पावतु दशक प्रभवत्तत्तद्दत्तफल वदेत् ॥ क्षिरोरोगाक्षिरोगाश्च रक्तातृक्कामलात्वर ॥ ग्रहणो  
घातको मेहप्लोहो पुत्तमसत क्रमात् ॥९॥ रत्नैर्घर्मिष्वं हेमैश्च गोभि क्षेत्रैश्च राजभि ॥  
दासैश्च महिषैरुर्ध्वैर्गजाश्वैर्बृह्दय स्मृता ॥१०॥जात्या देशस्य कालस्य स्वानुरूप फल वदेत् ॥  
तत्तद्भावानुसस च ग्रहद्भूग्याफल वदेत् ॥११॥ उच्चगदियु नवस्त्रेव कलाशादियु यत्फलम् ॥  
भाग्याध्यायोक्तमप्यथ योजयेत् विभेदत ॥१२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे मासचर्याफल  
वर्णननाम विंशोऽध्याय ॥२०॥

स्थानकरण के सम विपम सख्या के अनुसार शुभाशुभ फल-विपम राशि मे स्थान सख्या विपम हो तो शुभ होती है। सम राशि मे स्थान सख्या सम हो तो अशुभ होती है। और विपम राशि मे कर्ण सख्या सम हो तो अशुभ और विपम हो तो शुभ होती है।॥७॥ विपम राशि मे स्थान करण सख्या १० तक हो तो व्याधि का नाश हो। सम राशि मे १० तक हो तो हानि। १५ तक व्याधि, २५ तक सम राशि मे व्याधि, विपम राशि मे हानि।॥८॥ विपम राशि मे स्थान करण सख्या २६ हो तो सिरदर्द, २७ मे नेत्र रोग, २८ मे रक्त विकार, २९ मे कामला ज्वर, ३० मे ज्वर, ३१ मे राग्रहिणी, ३२ मे शीतज्वर, ३३ मे प्रमेह, ३४ मे प्लीहा, ३५ मे गुल्म रोग होता है।॥९॥ सम राशि मे स्थान करण सख्या ३६ हो तो रत्न वृद्धि, ३७ मे धान्य वृद्धि, ३८ मे सुवर्ण वृद्धि, ३९ मे पशु वृद्धि, ४० मे भूमिवृद्धि, ४१ मे राजा से लाभ, ४२ मे दास वृद्धि, ४३ मे पशु वृद्धि, ४४ मे निकृष्ट पशुवृद्धि, ४५ मे उत्कृष्ट पशु वृद्धि ॥१०॥ स्थान करण सख्या का फल देश, काल, जाति, स्वरूप, स्वभाव आदि के अनुसार समझना चाहिए। पूर्वोक्त उच्चादि स्थानगत फल, कलाशादि स्थित ग्रह फल, भाग्याध्यायोक्त सर्व फल स्थान करण विचार मे भी युक्त करना चाहिए ॥७-१२॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० मासचर्याफल

वर्णन नाम विशाखाय ॥२०॥

अथ दिनचर्यादिफलमाह

अर्केन्दुगुरुः शुक्रः क्रमादन्ये बलक्रमात् ॥ भवति स्थानदाः खेटाश्रित्वारश्च पदैकदा ॥१॥  
धनादीनां यथा लब्धिः पच चेत्युज्यतायुतः ॥ आरोग्य वस्त्रलाभश्च पद्सु पदस्य बन्धनम् ॥२॥  
सप्त चेद्राज्यलाभः स्यादेव करणदा यदि ॥ धनहानिस्ततो व्याधिस्ततस्तु विपदादयः ॥३॥  
सप्तभिर्मरण प्रोक्तमज्ञाभावे मृतिर्भवेत् ॥ तत्र तिष्ठति चेत्येते त्वन्यस्मिन्यदि वामतः ॥४॥  
उच्चसख्याधिका अराश्रदस्य स्थानदा परे ॥ शुभाख्या. शुभदाः प्रोक्ता राशिनात्र क्रमात्फलम् ॥५॥

स्थानादिवल से ग्रहो का फल-सूर्य, चन्द्रमा, गुरु, शुक्र और मंगल, बुध, शनि, एक समय स्थानप्रद हो तो धन प्राप्ति। पचम भाव मे स्थानप्रद हो तो पूज्य, लाभ, धन प्राप्ति होती है। ६ ग्रह स्थानप्रद हो तो राजा होता है। ७ ग्रह रेखाप्रद हो तो राज्य लाभ होता है। करणफल-४ ग्रह करणप्रद हो तो धन हानि ५ हो तो व्याधि, ६ हो तो विपत्ति, ७ हो तो मृत्यु, करण का सर्वथा अभाव हो तो भी मृत्यु। चन्द्रमा वा उच्चाश ३ है। इनमे अधिक हो तो स्थानफल दायक जानना।१ से ५ तक।

होराशास्त्रमिद सर्वं भाषितं तव सुव्रत ॥ पुण्यं यशस्य धन्यं च त्रिकालज्ञानकारणम् ॥६॥  
विनामनुतपस्ये च शास्त्रज्ञानेन केवलम् ॥ हस्तामलकबलतां जगता लोकपेत्फलम् ॥७॥  
पुत्राय शिष्याय च धीमते च तपस्विने मन्त्रविदे च दात्रे दद्यादिमशास्त्रमहासमुद्रं पर्येषान्भु  
शिष्यवेपथोधिम् ॥८॥ बुद्धिहीनाय दाम्भाय दाम्भिकाय त्वमर्षिणे ॥ न दद्याद्यदि दद्याच्चेद्विद्या  
स्वस्य विनश्यति ॥९॥ एव ते कथितं शास्त्रं त्वयि श्रेहाद्विजोत्तम ॥ जातकांशं विद्यात् किं  
भूपस्त्वं श्रोतुमिच्छसि ॥१०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे दिनचर्यादिफलवर्णनं

नाम एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

शास्त्र का फल और उपमहार-हे मैत्रेय! यह होराशास्त्र तुमको कहा, यह पवित्र, कीर्तिदाता, धनधान्य सम्पादक, भूत, भविष्य, वर्तमान काल का शुभाशुभ सूचक है। इसका ज्ञान प्राप्त करके मन्त्रादि द्वारा देवता की आराधना करो। हथेली पर रखे हुए आवले के समान सम्पूर्ण जगत् का शुभाशुभ फल इस शास्त्र से जाना जाता है। यह शास्त्र आशाकारी पुत्र को, योग्य शिष्य को, मन्त्रवेत्ता पुरुष को देना चाहिए। यह शास्त्र समुद्र के समान अगाध है। यह शास्त्र दम्भी, क्रोधी, दुष्ट को नहीं देना चाहिए, देने से विद्या नष्ट होती है। पूर्वोक्त दोष रहित बालक भी हो तो यत्न से पढ़ाना चाहिए। जैसे कि शिवजी ने तपस्वी अभिमन्यु को दिया। हे मैत्रेय! तुम्हारे श्रेष्ठ से यह जातकाश तुमको कहा और क्या सुनने की इच्छा है तो कहो ॥६-१०॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० दिनचर्याफलवर्णन  
नाम एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

अथ प्रश्नप्रकरणाह

मैत्रेय उवाच-भगवन्प्रश्नशास्त्रं तु सूचिकानांप्रकाशितम् ॥ कलौ युगे तु मदाना यज्जानु  
तद्ददस्व मे ॥१॥ कृते युगे तु धर्मस्य पूर्णत्वात्तपसान्विता ॥ सर्वे जानति सूत च भवद्भ्रावि  
द्विजोत्तम ॥२॥ त्रेताया तपसा युक्ता केचिज्जानन्ति वै द्विजा ॥ पश्यन्ति द्वापरे शास्त्रज्ञानेन  
तपसाऽपि च ॥३॥ कलौ युगे तु धर्मस्य पादमात्रव्यवस्थिति ॥ तप. शक्त्या तु तज्जानु न  
शक्ता मानवा भुवि ॥४॥

प्रश्नप्रकरण

मैत्रेयजी ने कहा-हे भगवन्! आपन जो प्रश्नज्ञान का उपाय कहा वह अतिदूरूह सूक्ष्मबुद्धि  
गम्य है, अतः इस कलियुग में उसका ज्ञान होना कठिन है। जो मरल प्रश्नशास्त्र विषयक ज्ञान  
हो सो कहिये ॥१॥ धीपराशरजी ने कहा-हे मैत्रेय! सत्ययुग में धर्मपूर्ण होने से प्रायः सभी  
तपस्वी होते थे, अतः भूत भविष्य का ज्ञान रहता था। त्रेता में भी कुछ तपस्वी शास्त्र यत्न से  
भूत भविष्य जानते थे, द्वापरे में कुछ तपोचल और शास्त्रज्ञान से युक्त थे अतः सूत भविष्य  
ज्ञान से समर्थ थे, परन्तु इस कलियुग में धर्म की तो १ पादमात्र स्थिति है, अतः तपोचल और  
ज्ञानबल क्षीण हुए मनुष्य शास्त्रज्ञान में कुशल नहीं हैं। अतः तुम्हारा यह प्रश्न उचित ही  
है ॥२॥३॥४॥

तथाऽत्र परम शमुलोकानुग्रहकाक्षया ॥ सक्षोकृत्य निजा शक्ति विलासाद्यत्स ईश्वरः ॥५॥  
कलावधि च मत्काना प्रिकालज्ञानदायिनी ॥ वेदादि वाग्वस्व गौरिवद्वद्वयमयो गिरि ॥६॥  
परमैश्वर्यसिद्धयर्थं वाग्वक्त्रं स्यादयं मनु ॥ सर्वज्ञेति पद पूर्वं नाय त पार्वतीपते ॥७॥  
सर्वलोकगुरो पञ्चाच्छिबेति द्वयमसरम् ॥ शरणं तु पद पञ्चात्त्वा प्रपन्नोऽस्मि  
तत्परम् ॥८॥

अतः शास्त्रज्ञान के लिये उपाय बहूते हैं कि इस पृथ्वी में मन्दबुद्धि पुरयो के ज्ञान के लिए  
महादेवजी के परोपकारार्थे शिव शक्ति दोनों के मन्त्र वा निर्माण किया। वे मन्त्र ये हैं—<sup>५</sup>  
“ॐ गौरि वद २ गिरि परमैश्वर्यं सिद्धयर्थे ऐ ॥” यह शक्ति मन्त्र और <sup>६</sup> “ॐ सर्वज्ञ नाय पार्वती  
पते शिव, शरणं त्वा प्रपन्नोऽस्मि पालय ज्ञान प्रदायका” यह शिव मन्त्र है ॥५-८॥

पालयेति पदं ज्ञानं प्रवापय ततः परम् ॥ ऋषिस्तु दक्षिणामूर्तिर्गौरी परमेश्वरी तथा ॥९॥  
 सर्वज्ञश्च शिवो देवो गायत्री च्छद ईरितम् ॥ अनुष्टुप् च षडंग स्याद्भागभवेन हृदादि च ॥१०॥  
 अनेनाभ्या द्विजश्रेष्ठ बुद्धिस्तु विमला भवेत् ॥ जपमारेण सिद्धिः स्यादैवजत्व प्रकाशते ॥११॥  
 उद्यानस्यैकवृक्षाद्य परे हेमवते द्विज ॥ क्रीडतौ भूपिता गौरी शुक्लवस्त्रा शुचिस्मिताम् ॥१२॥  
 देवदारुवने तत्र ध्यानस्तिमितलोचनम् ॥ चतुर्भुज त्रिनेत्र च जटिल  
 चद्रशेखरम् ॥१३॥

दोनो मन्त्रो के छन्द आदि "अनयो मंत्रयो दक्षिणा मूर्तिं ऋषि गौरी परमेश्वरी सर्वज्ञ शिवश्च देवते गायत्र्यनुष्टुभौ छन्दसी मम त्रिकालदर्शक ज्योतिः शास्त्रज्ञानप्राप्तये जपे विनियोगः ॥" यह विनियोग करके 'ऐ' इस बीज मन्त्र से ही करन्यास, अगन्यास करो। इन दोनो मन्त्रो के पुरश्चरण करने से बुद्धि निर्मल होकर इस शास्त्र का वयार्थ ज्ञान होगा ॥९॥१०॥११॥ न्यास के बाद मूलोक्त श्लोक पाठ करके ध्यान करो। यथा-हिमालय पर्वत पर अति सुन्दर बगीचे में बट वृक्ष के नीचे उत्तम आसन पर स्थित जोभायुक्त, श्वेतवस्त्र सम्पन्न, हंसमुख, श्रीभगवती गौरी तथा ध्यानस्थ त्रिनेत्र चतुर्भुज भालचन्द्र, जटाधारी, सर्वजगन्निपता, देवाधिदेव महादेव साक्षात् परब्रह्मस्वरूप शिव का ध्यान करो ॥१२॥१३॥

शुक्लवर्ण महादेव ध्यायेत्परमेश्वरम् ॥ द्विविध गणित ज्ञात्वा शाखास्कन्ध विमृश्य च ॥१४॥  
 होरास्कन्धस्य शकले श्रुत्वायमवधार्य च ॥ वागीशो द्विजवरो य स्यान्न वध्या तस्य भारती ॥१५॥  
 अनुष्टुभो नैष्ठिक शुद्धो विनयप्रथयान्वित ॥ रत्न स्वर्ण धन वस्त्र पुण्यमूतफलानि तु ॥१६॥  
 दैवजपुरतो दत्त्वा पृच्छेदपिष्ट प्रियान्वित ॥ अथ प्राङ्मुख आसीन शुचिर्द्वैविद्यप्रत ॥१७॥  
 तिर्यग्ध्वाश्रितस्तु रेखा रज्जुसमा लिखेत् ॥ एकीकुर्वाणो चत्वारि मध्यस्थानि पदानि च ॥१८॥  
 तत्र पश्च लिखेद्वैशाखप्रमध्य सर्गणिकम् ॥ ईशान्यकोष्ठादारभ्य मोनाद्या राशय क्रमात् ॥१९॥  
 मेघवीथी वृषाद्यास्तु कौर्ष्याद्या मियुनस्य तु ॥ वीथयो मोनमेघी तु तुलाकन्ये वृषस्य तु ॥२०॥  
 आरुढाद्दीपिभ यावत्तावच्छत्रं तु तत्रत ॥ आरुढराशिर्लघु चेच्छत्रं चाऽपि भवेत्तथा ॥२१॥  
 जन्मलग्न समासाद्य यद्यत्प्रोक्तं तु जातके ॥ तत्सर्वं प्रश्नलग्नेन प्रश्नकालाद्देवदुष्ट ॥२२॥

इस प्रकार उपासना करके गुरुद्वारा भूगोल मंगोल की गणित का अभ्यास करके इन होराशास्त्रका जातकफल सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करे वह सर्वहितैषी, मिष्टभाषी ब्राह्मण दैवज और त्रिकालदर्शी होता है। जगकी वाणी मिथ्या नहीं होती ॥१४॥१५॥ इसी प्रकार पृच्छनेवाला भी निष्ठावान्, निष्कपट, नम्र लोभरहित होकर द्रव्य (शेट) रमकर, यदि दग्ध हो तो पत्र पुण्य आदि दैवज को पूजित करके प्रमत्त चित्त में प्रश्न करे ॥१६॥ दैवज को चाहिये कि-पूर्वाभिमुख बैठकर प्रथम राशिचक्र लिखे और आरुढ लग्न का विचार करे। मों इन रीति से कि-पृच्छक जिस दिशा में बैठा हो वह आरुढ लग्न जाने या पृच्छक जिस राशि का मर्ग करे वह आरुढ लग्न जाने और वृषादि चार राशि में मेघवीथी और वृश्चिवादि चार राशि मियुन

बीधी तथा शेष राशि वृषबीधी में जानना। आरुढ लग्न से प्रश्नलग्न तक जो सख्या हो उतनी सख्या की राशि बीधी में देखना, उस बीधी की राशि छत्र सजक होती है। श्लोक १७ से २२ तक।

बीधीतानवरम्			अथ राशितरम्			
२	८	१	१२	१	२	३
३	९	१२	११			४
४	१०	७	१०			५
५	११	६	९	८	७	६
मेघ	मिथुन	वृष				

यत्कालावधि लग्न तत्कालावधि चेत्स्थिते ॥ तेषा बलवता चैव निर्णय स्वायुष स्मृत ॥२३॥ आद्यद्रेष्काणमत्य च मृत्युद च क्रमाद्भवेत् ॥ मृगादिकर्कटाता च मीनस्यारुढतग्रत ॥२४॥ लग्ने पृष्ठोदये क्रूरवेश्मास्तध्ययाग यदि ॥ धने धर्मं कुजे मदे चद्रे रघ्रे भृतिर्भवेत् ॥२५॥ पार्ष्वर्षुघरे जाते लग्नकाममुहन्तिस्थिते ॥ चद्रेऽर्के च विलग्नस्थे प्रियते व्याधिना मृगम् ॥२६॥

आरुढलग्न से आयु निर्णय तथा द्रेष्काण पाल-तत्काल लग्न से आयु का निर्णय करे। मकर, वृश्चिक, कर्क, मीन इनका आरुढ लग्न से आद्यन्त द्रेष्काण हो वह लग्न मृत्युकारक होता है। २३। २४। प्रश्नकाल में पृष्ठोदय लग्न हो लग्न से पापग्रह ४।७। १२ स्थान में या २।९ में शनि मंगल हो और ८ में चन्द्रमा हो तो मृत्युकारक होता है। २५।

अन्य योग-पापग्रही से दुरुधरा योग हो, ४।७ में चन्द्रमा और लग्न में सूर्य हो तथा प्रश्न समय में राहुकाल का समायोग हो तो व्याधि से मृत्यु होती है। २६।

राहुकालसमायोगे मरण निश्चित भवेत् ॥ मेघाद्गुल्फमतो राहुर्वृषात्काल क्रमाच्चरेत् ॥२७॥ राशी राशी तु पक्ष्वाद्भोगकाले विनाडिका ॥ अर्कोदयादितभ्रोभौ मुजाते च पुन पुन ॥२८॥ एकहृत्चञ्चिरामेषु पड्यौ नाडिका क्रमात् ॥ अर्कवारावितो राहु रात्रावेवमूर्दरित ॥२९॥ राहुएत्कमश प्राच्या कालश्च क्रमशश्चरेत् ॥ उभौ सार्धविनाडयेन राशिषु द्वादशस्थपि ॥३०॥ इद्वेद्विप्रिनशाचरशमवारीशवायव ॥ हृत्चञ्चजतेशेषापकेद्रममस्थित ॥३१॥ रक्षो वायुस्ततोऽप्रीशयमवारणराजसा ॥ वायुसोमशचीनाधरजोप्रिजल्पेदध ॥३२॥ चाप्यीशोद्रयमा पश्चाद्युत्तमैर्दौ च निशाचर ॥ मरुद्दृष्टनचद्रेशपावको वरगो यम ॥३३॥ वायुहृत्तशार्धोद्राप्रिरास्ततश्च तत परम् ॥ वायुरक्ष शशीवेशपावकतकवारणर ॥३४॥

राहु काल समायोग का विचार-‘राहु’ की गति वक्र है और ‘वाज’ की गति मार्गी है। मृत्योदय

से ५०-५० पल प्रतिराशि का भोग करते हैं। अत एव राशि पर दिन रात में वारम्बार समायोग होता है। सूर्यादि चारों में १।२।३।४।५।६।८ घटिकाओं के हिसाब से 'राहु' पूर्व आदि दिशाओं में विपरीत क्रम से 'काल' ग्रह मार्गी क्रम से २॥-२॥ घटी (या १-१ घटा) चलते हैं। वारके क्रम से दिशा का संचार क्रम--रविवार को पूर्व से, सोमवार को उत्तर से, मंगल को आग्नेय से, बुध को नैर्ऋत्य से, गुरु को दक्षिण से, शुक्र को पश्चिम से, शनि को वायु कोण से १-१ घटा क्रम, व्युत्क्रम से चलते हैं। रविवार को पूर्व उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, दक्षिण, पश्चिम। सोमवार को ईशान, उत्तर, पश्चिम ईशान दक्षिण। मंगल को नै० वा० आग्ने० ईशा० दक्षि० क्रम से। बुध को--वा० उत्त० पू० नै० द० अग्नि० प० उत्त० क्रम से। गुरुवार को वा० ई० पू० द० प० नै० इस क्रम से। शुक्रवार को वा० प० उ० ई० अ० प० द० इस क्रम से, शनिवार को वा० ई० उ० पू० अग्नि० नै० वा० इस क्रम से अथवा-उ० पू० ई० आग्ने० द० प० इस क्रम से चलते हैं। २७-३४॥

अर्कवारादितो वाम राहु सचरति क्रमात् ॥ रुद्र समीर सोमाग्नी यमोऽथ निर्ऋतिर्जलम् ॥  
नक्षत्रेऽपि च वारे च तिथौ चोत्क्रमत क्रमात् ॥३५॥ अतिमादादिमाद्राहु कालश्च चरतस्तथा ॥  
द्वयोयोगे तु मरणमेकस्मिन्व्याधिरुच्यते ॥३६॥

नक्षत्र, तिथि, वार क्रम से संचरण--

संचरण दिशाओं का क्रम--ईशान वायु उत्तर आग्नेय दक्षिण नैर्ऋत्य, पश्चिम इन ७ दिशा विदिशाओं में अश्विनी से वर्तमान नक्षत्र तक जानना। राहु अतिम दिशा में उलटा और काल आरंभ से क्रम से चलता है। नक्षत्र तिथि वार पर चलाना। यदि वर्तमान (प्रश्न दिन) दोनों का संयोग हो तो मृत्यु तथा एक वा योग हो तो व्याधि जानना ॥३५॥३६॥

नृपा मूर्च्छा शरास्तत्त्व तिथियोद्भवा पञ्च च ॥ द्वितीये त्वष्टमे भावस्त्वबतरे त्वनुपातत ॥३७॥  
नागाब्देयु गुणा रुद्रा बाजिवेदागपत्स्य ॥ दशपचाष्टका मेपाद्रश्मय सप्रकीर्तिता ॥३८॥  
एकयोगे तु सर्वेषु व्याधिर्द्विभ्या भवेन्मृति ॥ लक्ष्मीयोगेषु सर्वेषु व्याधिस्तस्य नबाऽपि वा ॥३९॥  
वैधृती च व्यतीपाते सार्पभेतिमलजिते ॥ कुलीरे विपनाडीसु सूर्यदुष्टेषु पञ्चसु ॥४०॥  
पापयुक्ते च नक्षत्रे राशौ तत्सपुतेऽपि च ॥ सधौ च मातशून्यर्क्षे तिविरागिषु जन्मभे ॥४१॥  
व्यापष्टमे च क्षीणेदौ शत्रुप्रहृनिरीक्षिते ॥ पाद षष्ठे च जघा च जानु नाभि च गुल्फके ॥४२॥  
कर्णौ च चक्षुषी भालमास्थ कठ स्पृशेद्यदा ॥ व्याधिर्वा म्रियते तद्वन्मृति राशि स्पृशेत्तु वा ॥४३॥  
अष्टमर्क्षे स्पृशेद्यदा कलाशादियु वा तथा ॥ विपद्रुघप्रत्यक्षे च वेनास प्रक्षमेव वा ॥४४॥  
सस्पृशेत्प्रश्नकाले तु व्याधिर्वा तस्य वा मृति ॥४५॥

१२ भावों की रश्मि- द्वि० १६, तृ० २१, च० ५, ष० २५, प० १५, म० १६, अ० ५ रश्मि है, अन्य भावों की पूर्व कथित वेना। बाग्रह राशियों की रश्मि-क्रम से-८।८।५।३।११।७।४।६।१०।१०।५।८ है। अथवादा। ये जो मृत्युयोग बने गये हैं इनमें यदि प्रश्नलग्न में शुभयोग या धनयोग भी हों तो मृत्यु न होकर केवल व्याधि या मुग ही होता है। ३७॥३८॥३९॥ यदि प्रश्नकाल में वैधृति, व्यनिरात, आग्नेया, रेवती, कर्क नवाग,



विषघटी तथा म० बु० गु० शु० श० पापग्रह युक्त नक्षत्र सध्या, प्रात या मध्याह्न काल, मास शून्य तिथि, वार, नक्षत्र, या जन्म नक्षत्र हो अथवा प्रश्नलग्न से ८।१२ में चन्द्र हो या शत्रुदृष्टि हो। काल—राहु समायोग हो, तो व्याधि या मृत्यु होती है। अथवा राहु अष्टम राशि में या पौडशाश में हो या 'विपत्' तारा हो वैनाशिक नक्षत्र में हो व्याधि या मृत्यु हो॥४०-४५॥

शिरोललाटभूनेत्रनासाकर्णकपोलकाः ॥ ओष्ठ च त्रिबुक्तं कठमसौ हृदयमेव च ॥४६॥ पार्श्वौ च वक्षः कुक्षिश्च नाभिश्च कटिरेव च ॥ जघन च नितंब च लिङ्गमड च वस्ति च ॥४७॥

नक्षत्र क्रम से श्लोकोक्त २७ अग-सिर, ललाट, भू, नेत्र, नासिका, कर्ण, कपोल, ओष्ठ, ठोडी, कठ, कंधे हृदय॥४६॥ पांसू, वक्ष, कुक्षि, नाभि, कटि, जाघ, नितंब, उपस्थ, अड और वस्ति, ये अग नक्षत्र पर से जानना॥४७॥

ऊरू च जानू जंघा च गुल्फांघ्नौ चाश्विभातक्रमात् ॥ तैलाभ्यक्तोऽथ वा शुद्धो जलगर्तसमीपगः ॥ प्रष्टा देवविदे वाय मरण तस्य निर्दिशत् ॥४८॥ लग्नत्रिसुतकामारिधर्मकर्मायगः शुभः ॥ रोगशांतिकरा नोचेद्रिपुनोवग्रहस्थिताः ॥४९॥ एषु पापा मृतिकरा नोचेत्स्वर्षोच्चमित्रगाः ॥ यस्य यस्य शुभं वाय रिःफस्यानागताः शुभाः ॥५०॥ यदा त्रिकोणकेद्रस्थास्तस्य तस्य शुभप्रदाः ॥ मृगकन्यार्थादितः सूर्यो राशिपूर्वापरार्धतः ॥ शनियुक्कारचंद्रतगुरवः शिशिरादिषु ॥५१॥

यदि प्रश्नकर्ता तैलाभ्यक्त, मृतकवाला, तालाब के पाम बैठा हुआ हो तो पृच्छक की मृत्यु होती है॥४८॥ प्रश्नलग्न से ५।३।६।९।१०।११ इन भावों में शुभग्रह होतो रोग-शान्ति होगी और पापग्रह हो तो मृत्यु होगी। परन्तु शुभग्रह बलहीन तथा पापग्रह बलवान न हो॥४९॥ जन्मलग्न या प्रश्नलग्न में १।५।७।९।१०।११ स्थानों में शुभग्रह हो तो शुभदायक होते हैं॥५०॥ प्रश्नलग्न या जन्म-लग्न से जन्मसमयकाजान-कुडली में सूर्य मकर से ६ राशि तक हो तो उत्तरायण कर्कादि ६ राशि तक हो तो दक्षिणायन जानना। इसी प्रकार मकर आदि ६ राशि के पूर्वार्द्ध में जनि हो तो शिशिर, शुक्र हो तो वसंत, मंगल हो तो ग्रीष्म, चन्द्र हो तो वर्षा, बुध हो तो शरद, गुरु हो तो हेमन्त जानना, कर्कादि ६ राशि के उत्तरार्द्ध में पूर्वोक्त ग्रहों में पूर्वोक्त ऋतु जानना॥५१॥

अर्के प्रोष्मस्ततोऽन्यैर्वा वाऽयनाऽतुरेव च ॥ शुक्रारमदचंद्रशनीवाश्च परिवर्तिताः ॥५२॥ लग्नद्रेष्काणपाः प्रोक्ता नवांशैर्नैव चापरे ॥ तत्पूर्वपरतो मासौ तिथिः स्यात्सुपाततः ॥५३॥ लग्नत्रिकोणगो जीयो नवांशस्योऽथ वा भवेत् ॥ ज्ञात्वा यद्येतुत्पेण ह्यनुमानयशात्समाः ॥५४॥ सूर्यस्थितानुतुल्यां वा तिथिं प्रोवाच भार्गवः ॥ रासौ रात्रिदिवात्ये च जन्म स्यात्तु वित्तोमतः ॥५५॥

प्रश्नलग्न में—लग्न में मूर्ध से प्रोष्म, चन्द्र से वर्षा, मंगल से शरद, बुध से हेमन्त, गुरु से शिशिर, शुक्र से यमन्त जानना। अथवा शु० म० श० ब० बु० गु० ये ग्रह लग्न के द्रेष्काणपति हो तो क्रम में प्रोष्म आदि ऋतु या नवांश में ऋतु लेना॥५२॥

मास तिथिज्ञान—पूर्व मे जो ऋतुज्ञान कहा गया है उसके पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध के विभाग से पूर्वोत्तर मास ज्ञान होगा। इसी अनुपात से तिथि जानना॥५३॥

वर्षज्ञान—प्रश्नलग्न से त्रिकोणस्थान गुरु हो तो जिस राशि का गुरु हो उस राशि का गुरु पूर्वकाल मे जिस वर्ष म हो वह जन्म का वर्ष पृच्छक की अवस्था देखकर अनुमान से जानना यदि १२ वर्ष के गुरुराशि भ्रमण म बीच म बही हा ता नवाश से वर्ष जानना॥५४॥

तिथिज्ञान—सूर्य के अशक अनुरूप (तुल्य) तिथि और लग्न (प्रश्न) राशि का हा तो दिन का जन्म और दिन का प्रश्नलग्न हो तो राशि का जन्म जानना॥५५॥

गतप्राणैर्जन्मकाले ते च प्राणा भवत्यथ ॥ यदाशिश शशी माससम वाऽस्युशदगकम् ॥५६॥  
तत्रिकोणवलाधिक्य राशिर्लगात्तु यावति ॥ चद्रस्तावतिभ चापि जन्मलग्न विनिर्दिशेत् ॥५७॥  
मीने मीन तु लग्न वा तथा न्यैस्त्वन्यत्वलग्नम् ॥ छापय्या सयुता यामवारर्क्षतिथिराशय ॥५८॥  
यावतस्तु धनिष्ठादिजन्मर्क्ष तद्विनिर्दिशेत् ॥ कलाशादिपु पत्प्रोक्तमूल तद्वा भवेद्विदम् ॥५९॥

प्रश्नकाल म जिस राशि का चन्द्रमा हा वह मास (शेनादि) चन्द्रमा सम या विषम जिस राशि मे हो उसस ५।९ राशि बलवान हो तो प्रश्नलग्न से उतनी ही सख्या राशि म जन्मलग्न जानना॥५६॥५७॥

जन्मनक्षत्रज्ञान—प्रश्नसमय के छायापादकी सख्या म ग्रहन वार नक्षत्र सख्या का योग करना २७ का भाग देना जो शेष रह वह धनिष्ठादि नक्षत्र होता है॥५८॥  
प्रकारान्तर—कलाश से हारा तक की मख्या म जानना॥५९॥

कलाशाद्यर्धहोरात् प्रोक्तहौरैर्विभावयेत् ॥ पृथग्विप्रीकृत लग्न वर्गणाभिहत पुन ॥६०॥  
आरुद्धच्छत्रयोर्वीर्यबलस्य वर्गणाहतम् ॥ ओजे योग समे हानिरिति तस्य विशीयते ॥६१॥  
स्वै स्वभागेश्च भक्त तत्तथा मासादय स्मृता ॥ यद्वा कलीकृत लग्न तथा कुर्याद्विचक्षण ॥६२॥  
भावकस्य च शुद्धि च योग चैव करोत्यत ॥ नवभिश्च कलाशाद्यैस्तथैवोच्चार्दिभि क्रमात् ॥६३॥  
एकाशीतिभिदा सति नयकाद्यशशोधने ॥ येषां योगगते काने समातेषु सता पत ॥६४॥

मासज्ञान म प्रवागन्त—लग्नराशि की क्या करण द्वा जगह ग्यना। एवंस्थान म स्ववर्ग म गुणा वर आरुद्ध छत्र म जा बलवान हा उमक वर्ग म गुणा करना पश्चात् लग्नराशि विषम हा तो दूसरी जगह र्ग हूण म युक्त करना। मम हा ता हीन करना। १२ का भाग देना ता माम तथा ३० क भाग म दिन हाता है॥६०॥६१॥  
अथवा पूर्वोक्त गीति क पश्चात् नव कलाशरीति म ९ क भाग म जहा अवमान हा वह लग्न जाना॥६२ ६४॥

राशिस्तु बलवान्त्वामिगुरज्जप्रेषणान्वित ॥ अन्यैः पारैररष्टः स्याच्छुभरष्ट्या प्रयोजयत ॥६५॥  
चद्रार्काचार्यशुभज्ञा पाद मित्रमकर्मणी ॥ पश्यति च भानि पूर्णमय धर्ममुती गुद ॥६६॥  
सर्वैर्धवधुमुत्पू च पूर्ण पश्यति भूमिज ॥ परे त्रिपाद पूर्ण च सर्वे पश्यति सप्तमम ॥६७॥

उच्चमूलसुहृत्स्वर्कस्वद्रेष्काणनवाशके ॥ स्थितस्य स्थानवीर्यं स्यात्कुजाकीं दशमे शनिः ॥६८॥  
सप्तमे जगुरु लग्रे चन्द्रशुक्रौ तु वेश्मनि ॥ दिग्वीर्यसपुता एते नाऽन्यत्र प्रश्न कर्मणि ॥६९॥

लग्नबल ज्ञान-लग्न को गुरु, बुध पूर्णदृष्टि देखते हो तो बली किन्तु पापदृष्टि रहित हो ॥६५॥

ग्रहदृष्टि-सू० च० म० बु० गु० शु० ये ग्रह ३।१० वे भाव को १ पाद दृष्टि से और शनि पूर्णदृष्टि से देखता है। ९।५ को और सब २ पाद गुरु पूर्ण दृष्टि में तथा ४।८ को और सब ३ पाद, मंगल पूर्णदृष्टि से देखता है। सप्तमभाव को सभी ग्रह पूर्णदृष्टि से देखते हैं ॥६६॥६७॥

ग्रहों का स्थानादिबल-जो ग्रह स्वक्षेत्र, उच्च, मूलत्रिकोण मित्र अतिमित्र राशि का हो या स्वनवाश, स्वद्रेष्काण में हो तो स्थानबल से बली होता है। प्रश्नलग्न से १० भाव में सूर्य मंगल दिग्बली तथा ७ में शनि बली, प्रथम में बु० गु० बली ४ में च० शु० दिग् बल से बलवान् होते हैं। यह प्रश्न लग्न का ही बल विचारना, अन्य जातक में नहीं ॥६८॥६९॥

मृगादिराशिषट्कस्थाश्रद्धार्कज्ञार्थभार्गवा ॥ बलवत कुजाकीं तु कर्कटादिगती तथा ॥७०॥  
पूर्वपक्षे शुभे कृष्णे पापस्तु बलिनस्तथा ॥ बह्विणो बलिन खेटाश्रेष्ठाबलसमन्विता ॥७१॥  
शुभा पापा दिवा रात्रौ बलिनः स्युः क्रमात्समृता ॥ निसर्गबलिनः प्राग्बदेव स्युः प्रश्नकर्मणि ॥७२॥  
लग्नहोराद्रेष्काणार्कनवाशां सप्तमाराक ॥ कलाश कालहोरा च त्रिंशश पट्टि-  
भागक ॥७३॥

अयन बल-मकरादि ६ राशि में सू० च० बु० गु० शु० अयनबली और कर्कादि ६ में म० श० अयन बली होते हैं ॥७०॥

पशवबल-शुक्लपक्ष में शुभग्रह बलवान् तथा कृष्णपक्ष में पापग्रह बलवान् होते हैं।  
चेष्टाबल-बली ग्रह चेष्टाबली होता है। शुभग्रह दिवाबली और पापग्रह रात्रिबली होता है। निसर्ग बल पूर्ववत् जानना ॥७१॥७२॥

१० वर्ग बल-लग्न, होरा, द्रेष्काण, द्वादशांश, नवांश, सप्तांश, षोडशांश, कालहोरांश, त्रिंशश पट्टपञ्च ये उत्तरोत्तर द्वीन बल हैं ॥७३॥

पूर्वपूर्वों बली प्रोक्तो न बली चोत्तरोत्तर ॥ प्रश्नलग्न क्लीकृत्य नवम्र भेवभाजितम् ॥७४॥  
सद्य नवाशक ज्ञेय शिष्टमात्मकसंस्थिते ॥ लब्ध सप्तगुण बेवभक्त शिष्टमिहाराक ॥७५॥  
नवाशसदृश लग्न यद्वा त्रिद्वार्कभाजितम् ॥ सप्तान्तरशिष्ट लग्न च सप्तमे भासि निश्चिते ॥७६॥  
सौम्ये तदेव कर्मैर्षं जन्मैर्षं वा भवेद्भूतम् ॥ इदं शास्त्रं मया प्रोक्तमाद्यन्त त्वं भुवत ॥७७॥  
नाशिष्याय प्रदातव्यं नापुत्राय कदाचन ॥ गुणशोलपुतापैव शिष्यापैव द्विजातये ॥ दातव्यं तु  
प्रमत्नेन वेदापमिदमुच्यते ॥७८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे प्रश्नप्रकरणे नामद्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

## ज्योतिष शास्त्र संबंधी हमारे कुछ अन्य प्रकाशन

केरलीय प्रश्न रत्न—हिन्दी टीका सहित  
 केरल तत्त्व प्रश्नसंग्रह—हिन्दी टीका सहित  
 गर्ग मनोरमा—हिन्दी टीका सहित  
 ग्रह लाघव—हिन्दी टीका सहित  
 चमत्कार चिन्तामणि—हिन्दी टीका सहित  
 चमत्कार ज्योतिष—हिन्दी टीका सहित  
 जातकाभरण—हिन्दी टीका सहित  
 ज्योतिषसागर—हिन्दी टीका सहित  
 ज्योतिष श्याम संग्रह—चक्रोदाहरणयुक्त  
 हिन्दी टीका सहित  
 ज्योतिर्गणित कोमुदी—शुद्ध ग्रह गणित का  
 अपूर्व ग्रन्थ  
 प्रश्नवर्णव—हिन्दी टीका सहित  
 प्रश्न ज्ञान प्रदीप—हिन्दी टीका सहित  
 बालबोध ज्योतिष—हिन्दी टीका सहित  
 बृहद्यवन जातक—हिन्दी टीका सहित  
 भाव पुस्तूहल—हिन्दी टीका सहित  
 भुवन दीपक—संस्कृत टीका व हिन्दी  
 टीका सहित  
 भृगु सूत्र—हिन्दी टीका सहित  
 रमलरत्न—हिन्दी टीका सहित  
 सामुद्रिक शास्त्र—हिन्दी टीका सहित  
 रमल गुलजार भाषा  
 धमन्तराजशाकुन्—संस्कृत व हिन्दी  
 टीकासहित

ताजिक नीलकण्ठी—हिन्दी टीका सहित  
 पञ्चमार्ग प्रदीपिका—हिन्दी टीका सहित  
 प्रश्न चण्डेश्वर—संस्कृत व हिन्दी टीका  
 सहित  
 प्रश्न शिरोमणि—हिन्दी टीका सहित  
 श्रीवेकटेश्वर शताब्दि पचांग—विक्रम सम्वत्  
 २००१ से २१०० तक पूरे एक सौ वर्ष का  
 पचांग एक ही जिल्द में। सम्पादक  
 नवलगढ निवासी प० ईश्वरदत्तजी शर्मा  
 बृहद् यवन जातक—हिन्दी टीका सहित  
 बृहद्देवज्ञरजन—मूल मात्र  
 भविष्य फल भास्कर—हिन्दी टीका सहित  
 मानसागरी—हिन्दी टीका सहित  
 मुहूर्त चिन्तामणि—हिन्दी टीका सहित  
 मुहूर्त प्रकाश—हिन्दी टीका सहित  
 लीलावती—हिन्दी टीका सहित  
 वर्षयोग समूह—हिन्दी टीका सहित  
 वर्ष प्रबोध—हिन्दी टीका सहित  
 वाराही (बृहत्) संहिता—हिन्दी  
 टीका सहित  
 विश्वकर्माप्रकाश—हिन्दी टीका सहित  
 शम्भुहोरा प्रकाश—हिन्दी टीका सहित  
 सर्वार्थ चिन्तामणि—हिन्दी टीका सहित  
 समरसार—संस्कृत व हिन्दीटीकासहित

उक्त पुस्तकों के अलावा ज्योतिष व मंत्र, स्तोत्र वर्मकाण्ड, धर्मशास्त्र आदि विषयों के हमारे लगभग तीन हजार प्रकाशनों की विस्तृत जानकारी के लिये बृहत्सूचीपत्र मुफ्त मंगा देखिये।